

प्रस्तावना.

आ पंचमकाल समाप्तिना अवसरे छेला दूप्पसहनामा आचार्य थशे. तेमना नि र्वाणसुधी जिनधर्मरुप मानससरोवरना साधु, साध्वी, श्रावक तथा श्राविका ए चतु र्विध संघरूप चार आरा खुल्ला रहेवा जोयेछे. एवुं परमेश्वरनु वचन छे. कदाचित काल ना प्रबल प्रभावथी कोई समये कोई आरो न्यूनता पाम्या जेवुं थाय तोपण बाकीना चालु रहेला बीजा आराने प्रभावे समय पाम्याथी ते आरो पण सुधरी जाय छे.

आ समयमां पूर्वना समयना करतां घणी न्यूनता थई गएली दीठामां आवेछे. च तुर्विधसंघमां साधु तथा साध्वी तो क्वचितज दीठामां आवेछे अने श्रावक तथा श्राविकाओ नुं पण अल्प अस्तित्व छे. तेओनी उपरज धर्मवृद्धि आधार राखे छे. धर्म वृद्धि ज्ञाननी वृ द्धिथी थायछे. माटे ज्ञान वृद्धि अवश्य करवी जोयेछे. ज्ञाननी वृद्धि ज्ञानना साधनोनी वृद्धि उपर आधार राखेछे. ज्ञाननां साधनो पूर्वाचार्य कृत ग्रंथोनो जीर्णोद्धार तथा अ वलोकन, विद्याभ्यास, उत्सुकता, धर्मप्रीति, अभिरुचि, तथा उद्योग प्रमुख छे.

पूर्वाचार्योक्त ग्रंथोनो जीर्णोद्धार कस्याथी ते समयना पंडितोनुं पांडित्य जाण्या मां आवेछे; मनुष्योनी धर्मउपर केवी रुचि हती ते जणायछे. भूत कालथी ते आ वर्त्तमान कालसुधी वचगालामां धर्म तथा विद्वत्ता प्रमुखनी केटली अधिक न्यूनता थई छे ते दीठामां आवेछे. पूर्वाचार्यो अति श्रम वेठी विद्याभ्यास करी मोटा मोटा ग्रंथोनी रचना करता हता तेनो हेतु मात्र धर्मवृद्धि अथवा ज्ञानवृद्धि विना बीजो कांई ह तो के शुं ते वात स्पष्ट देखाई आवेछे. ग्रंथनी रचना कस्यामां केवल परोपकार विना बीजो कांई पण स्वार्थ होयछे के शुं? ते कलाय छे. पूर्व कालना करतां हालना वखतमां विद्याभ्यासनो उद्योग केटलो अधिक अथवा न्यून थयोछे? ते जणाई आवेछे. इत्यादि क बीजा पण घणा हेतुउ दीठामां आवेछे. माटे अवश्य प्राचीन ग्रंथोनो जीर्णोद्धार करवो जोयेछे. केमके, ए ज्ञानवृद्धिनुं मुख्य साधन छे. जो पुरातन ग्रंथोनो जीर्णोद्धा र नही थाय, तो कालांतरे विछेद थई जवानो संभव छे. अने तेवुं पएलुं हाल दीठामां आवेछे, जुवो के हरिभद्रसूरिए चौद शे ने चुमालीश ग्रंथो कस्या छे, ते बधानो जीर्णोद्धा र नही थयाथी तेउमांना केटलाएक ग्रंथोनो हाल पत्तो पण मलतो नथी, एवा बी जा पण अनेक सुविहित आचार्योना करेला ग्रंथोनो शोध मली शकतो नथी तेनुं कारण पण एज छे. ते केटलुं लखियें! यद्यपि मारुं एम कहेवुं नथी के आज दिवससुधी को ईए ग्रंथोनो जीर्णोद्धार कस्योज नथी, मोटा राजाउ तथा सद्धकारो वगेरे घ[illegible] न

नमारा करी गयाछे ते अद्यापि विद्यमान छे, अने तेथीज हाल केटलाएक पुरातन ग्रथोनु आपणने दर्शन थायछे तथापि मात्र दर्शन करवाथीज कांई वलगतु नथी, पण योग्यरीते उपयोग करवाथी कार्यसिद्धि थवानो संभवछे जेम पूर्वे धर्माभिमानी राजा वगेराउए ज्ञान नमारा कराव्याछे तेम पाछल थयु नथी ए मोटी दिलगीरीनी वात छे जो एवो चालज पडी गयो होत तो एके ग्रथ विछेद गयो न होत अने आटली ज्ञाननी न्यूनता पण थई न होत जुवोके, देरासरनो जीर्णोद्धार करवानो चाल पडी गयोछे तो तेनी संतति विछेद गएली देखाती नथी तेमज ग्रथोविषे चाल पडवो जोयेछे केमके ग्रथोनो जीर्णोद्धार तो ज्ञाननी वृद्धिनु एक मुख्य कारण छे

हालना समयमां ग्रथोनो जीर्णोद्धार करवाना जेवां साधनो मली आवेछे तेवां आगल कोई वखते पण नहोतां पहेलां प्रथम ग्रथोनो जीर्णोद्धार तालपत्र उपर थएलो देखायछे, ने त्यार पछी कागल उपर थयो छे ते अद्यापि सिद्ध छे परंतु ते हस्तक्रिया विना यंत्रादिकनी सहायताथी थएलो नथी ने हाल तो मुद्रायंत्रनी अति उत्कृष्ट सहायता मली आवेछे, तेनो उपयोग करवानु मूकी दईने आलस करी बेशी रहेशु तो ग्रथो केम कायम रहेशे ? हाल विद्याभ्यास करीने नवा नवा ग्रथोनी रचना करवी तो एक कोरे रही, पण छतीशक्तिये पुरातन ग्रथोनी रक्षा करवानो यत्न नही करशु तो आपणेज ज्ञानना विरोधी ठरशु केमके जे जेनी रक्षा करे नही ते तेनो विरोधी अथवा अहितकर होयछे ए साधारण नियम आपणी उपर लागु पडशे

श्रावक भाईयो, पुरातन ग्रथोनो जीर्णोद्धार कराथी ते ग्रथोनु अवलोकन थशे. प्रयासविना केटलोएक विद्याभ्यास थशे, रस उत्पन्न थईने ज्ञान संपादन करवानी अंत करणमां उत्कंठा थशे शुद्ध धर्म उपर प्रीति वधशे, अभिरुचि एटले पुन पुन ज्ञान मेळववानी इच्छा थशे, अने उद्योग प्रमुख सर्व ज्ञानना साधनोनो सहज प्राप्त थशे उद्योग ए सर्व पदार्थ मेलववानु अथवा वृद्धि करवानु मुख्य साधन छे, परंतु असत्ता उद्यमथीज कांई थई शकतु नथी तेनी साथे द्रव्यनी पण सहायता जोयेछे द्रव्य जे छे ते सर्वोपयोगी पदार्थ छे माटे द्रव्यवान पुरुषोए अवश्य ए काम उपर लक्ष देवो जोयेछे केमके, तेउनी ए फरज छे के, जेम बने तेम ज्ञाननी वृद्धि करवी जोयेछे ते आप्रमाणे — सारा सारा पण्डितोनी मारफते प्राचीन ग्रथो सुधारी लखावी अथवा छपावीने प्रसिद्ध करवा तेनो भाविक लोकोने अभ्यास करावबो इत्यादिक शास्त्रोमा कह्या प्रमाणे सर्व प्रकारे ज्ञाननी वृद्धि करवी एवा हेतुथीज में आ ग्रथो छपाववानु काम हाथमां लीधु छे, परतु कोईनी सहायता विना स्वतंत्र मारी मरजी प्रमाणे हु ग्रथो छपावी शकु एवी मारीपासे द्रव्यनी शक्ति नही

होवाने लीधे आ 'प्रकरण रत्नाकर' नामनुं मोटुं पुस्तक कहाडवानी थागमज मारा स्व धर्मी भाइयोनी मने मदत लेवी पडीछे. सारा भाग्यजोगे योग्य रीते मदत पण मली आवी, तेथी आ पुस्तकनो प्रथम भाग समाप्त करी ते गया जेष्ट मासमां प्रसिद्ध कर्यो अने आ बीजो भाग पण हमणा पूर्ण थयो छे तेथी हुं मने कृतकृत्य समजुं छुं.

आ ग्रंथ प्रसिद्ध करवाने मुख्य मदत करनार शेठ. केशवजी नायकछे.

हरेक पदार्थने सम योग्यतावान वा अधिक योग्यतावान रक्षण करी शकेछे एवुं बहुधा दीठामां आवेछे. जेम ग्रीष्म ऋतुना तापथी तप्त थएला पर्वतने मेघज रक्षण करेछे, तेम ज्ञाननुं रक्षण ते उत्तम योग्यतावान पुरुषथीज थई शकेछे. यद्यपि सकल चतुर्विध संघने ज्ञाननी रक्षा करवानो अधिकार छे, तथापि सर्वने तेवुं सामर्थ्य होतुं नथी. माटे योग्यतावानज रक्षण करी शके छे. तेवी योग्यता कोई विरलानेज होय छे, केमके, बाह्य सर्व लक्ष्म्यादि समृद्धि छतां अंतरनेविषे जिन वचन श्रद्धानरूप समृद्धि पण जोये छे. तेमांनी बाह्य समृद्धि तो घणाओने होयछे तेम छतां जिनवचन श्रद्धान होतुं नथी तो तेनाथी कोई पण एवुं शुभ कृत्य थई शकतुं नथी. तेथी बाह्य संपत्ति सहित प्रवचनश्रद्धान पण जोये छे. बाह्य उत्तम संपदा अने अंतर स्वधर्म निष्टा ए उत्कृष्ट पुण्यानुबंधीपुण्यनुं फल छे. तेवुं कोईएकनेज होय छे. एनुं प्रत्यक्ष उदाहरण आ वर्त्तमान छिशतकरूप कालनेविषे श्रेष्ट केशवजी नायक छे. केमके, एवी योग्यतावान बीजो कोई पुरुष हाल दीठामां आवतो नथी. एओ बाह्य लक्ष्म्यादि संपत्तियुक्त छतां आंतर धर्म सम्यक्त्व श्रद्धानरूप अत्युत्तम संपत्तिए करीने पण युक्त छे. जेनेविषे पंच प्रकृतिरूप अंतराय कर्मनो क्षयोपशम आधुनिक सर्व संघ जनोना कर्त्ताधिक दीठामां आवेछे; एमना जेवुं आतप नाम कर्म तो कोई भूपने पण क्वचित् उदय थयलुं दृष्टि गोचर थशे! तेमज आदेय नामकर्म, अंगोपांग नाम कर्म, यशः कीर्त्तिनाम कर्म, प्रमुख शुभ प्रकृतिओनुं एमणे एवो तो उत्कृष्टबंध कर्योछे के, तेवो हाल दक्षणभरत्तार्द्धमां कोई बीजानेविषे क्वचित् दीठामां आवशे एवा पुरुषने शुं अशक्य होय? अने कीयुं कार्य करवाने समर्थ न थाय! अर्थात् सर्व कार्य करवाने शक्तिमान छे. पूर्वे थईगएला संप्रति राजा तथा वस्तुपाल तेजपाल अने कुमारपाल प्रमुख महत् प्रभाविक पुरुषोनी पठे एमणे पण वर्त्तमान कालानुसार धर्म दीपनार्थे तथा स्वश्रद्धान दर्शनार्थे श्री अर्हद्देवालयो तथा अंजन शलाका प्रमुख उत्तम धर्म कृत्यो कर्यां छे; ते बधाओथी पण अ

त्युत्तम ज्ञानवृद्धिनी उत्कंठा पूर्वक तद्युक्त पुरुषोने अतिशय आश्रय दियेछे, माटे नि
श्चय करी एमने पूर्वभूत धर्म श्रद्धावान कुमारपाल राजा प्रमुखनी पंक्तिमा गणाशे
न गणाय किंतु तेमनी तुलना करे तेवाज छे आ लखाणमा कोईए अतिशयोक्ति स
मजवी नही, पण निर्पक्षपात बुद्धिथी विचार करी जोवु के, शेठ केशवजी नायक
सर्व उपमान योग्य छे के नही! जुओ के अमे अंकित करवाने आरंभ करेला आ
क लक्ष सव्वाक महत् चतुर्नागात्मक पुस्तकना अकनीय खर्चनेविषे एवी युक्ति
आश्रय आप्याने के जेथकी केटलाएक समयोद्धरित पूर्व गीतार्थोए करी रचित प्रक
पातु सूत्ररूप पुन जीर्णोद्धार थई शकशे माटे एमने जेटली उपमादेये तेटली थोडीछे

रावबहादूर बाबुसाहेब लक्ष्मीपति सिंहजी छत्रपति सिंहजी

शेठ केशवजी नायकविषे लखतां आ प्रसगे श्रीमक्सुदाबाद निवासी सप्रांत गु
णमान, लक्ष्म्यादि बाह्य अमित समृद्धि युक्त, उत्तम यश कीर्ति नाम कर्मोदयवा
द्वारा उदपुरवासान अतिशय, प्रतापी, स्वधर्म दीपक, पूर्वोक्त पंक्ति अनिराजनीय,
साध सिवाय नृन तथा श्रावक गुण सहित्यादि अपूर्व कल्यालकार भूषित रावबहा
दुरविरुद पदक धारक बाबुसाहेब लक्ष्मीपति सिंहजी छत्रपति सिंहजी पोताना ना
म्रमाणेज पाम्यतावान होवाथी अधुना अनुपमेयज छे

उभय श्रेष्ठ वि पीवाग्य नृपतिदत्त पदक धारक शेठ केशवजी नायक तथा
रावबहादुरनाम्न नृपतिदत्त पदक धारक शेठ लक्ष्मीपतिसिंहजी छत्रपतिसिंहजी जेवा
जिन धर्म दीपक पुरुषो श्रावक मंडननेविषे हमेश उत्पन्नथता रहो, अने आवा
वृद्धिकर धर्मकृत्यो कर्या रहो एवो अमारो अंत करण पूर्वक आशिर्वाद छे

आ ज्ञानवृद्धिक उत्तम कृत्यने सारो आश्रय आपनार प्रभाविक पुरुषोनी पं
क्तिमा, अपेक्षा तथा उपेक्षा रहित, सारासार ग्राहक, परम रहस्यज्ञ, परोपका
रिभार, करुणा, दया, क्षमा तथा शीलादि गुणगुण युक्त, श्री वीतरागपद कमल
रत उत्तमतर प्रभावयवान् महात्मा महत मुनी महिमा सागरजी तथा सुमति
जी, एमनो उत्तम प्रार्थना पूर्वक अयुपकार युक्त नाम स्मरण अत्र गुथित कर

श्री सुवर्णमा श्रावक मंडनमाना श्रेष्ट दरजाम नरसिंह, श्रेष्ट पेजा भाई
श्रेष्ट वर्धमान पुत्रनी श्रेष्ट जोगराज देमन, एमणे ज्ञान वृद्धि विषयक पोतानी
उदारता दर्शावी छे माटे तेमना उपकार पूर्वक हु नाम गुथित करु छु

श्रीमक्शुदाबाद निवासी परम ज्ञान प्रसारोयुक्त मतिमान स्वज्येष्ट भ्राता तुल्य ल
ची तथा गुण युक्त नृप दत्तक रायबाहादूर पद धारक बाबुसाहेब धनपति सिंहजी
त्रपति सिंहजी एमने पण पोतानी उत्कृष्ट ज्ञान वृद्धिक कृत्यने सारी उदारता दर्शावी
े तेथी तथा बीजो पण ज्ञान वृद्धिने अर्थे पुस्तक अंकित करवानो हमेश उद्योग
ालुं राखेछे तेथी अति सत्कार पूर्वक तथा मान्यता युक्त नामस्मरण गुंथित करुंछुं.

श्री मुंबईना श्रावक मंडलमांना शेठ परवत लधा, शेठ मूलजी देवजी, शेठ जादव
जी परवत, सा. भोजराज नरपाल, तथा शेठ कीकाभाई फूलचंद तथा शा. गाकरसी
ेवजी एओए पण यथाश्रद्धान प्रमाणे आ ज्ञानवृद्धिना कृत्यने आश्रय आप्योछे
तेथी तेओनुं उपकार सहित नामस्मरण गुंथित करुं छुं.

श्री अहमदाबादना श्रावक मंडल माहेला शेठ दलपत भाई भगुभाई, तथा
शेठ मयाभाई प्रेमाभाई, एउनी ज्ञाननी प्रशस्ति थवानेविषे अति उत्कंठा जोईने मोटा
आभार सहित नामस्मरण गुंथित करुं छुं;

श्री साणदवाला शेठ साकलचंद हुकमचंद तथा श्री भरूचवाला शेठ अनूपचंद मलु
कचंद, एओए पोतानी धर्मप्रभावना अधिक दर्शाववाने अर्थे ज्ञाननी वृद्धि थवा सारु
जे उत्सुकता बतावी छे ते जोईने मोटा उपकार साथे नामस्मरण गुंथित करुं छुं.

श्री कच्छ मुंदराना रहेवाशी शेठ कस्तुरचंद सिंघजी पारेख एमनी अद्भुत धर्म प्री
ति, वैराग्यता तथा ज्ञानवृद्धिनी अतिशय चाहना जोईने मोटा आदर पूर्वक आ पु
स्तकनी साथे नाम गुंथित करुं छुं.

साधुमंडल मार्गमार्गित संवेगी साधु वर्य, अति विवेकी, ज्ञान पीयूष बुभुक्षुक
जिनप्रवचन श्रवण श्रद्धावान श्रावक जन मन कर्णने परमामृत रहस्य पान कराव
नार; साधु गुण भूषणालंकृत; ज्ञानवृद्धि कर्त्ता पुरुषरूप वृक्षोने मेघवृष्टि समान अत्यु
त्कृष्ट साधन भूत, महाराज श्री मूलचंदजी तथा जवेर सागरजीना, नामस्मरण प्रेम
पूर्वक गुंथित करुं छुं.

साधु मंडलमां साधु गुण संपन्न, ज्ञानरूप सूर्यना प्रकाशने आवरण करनारा जे
नाना प्रकारना संशयो, कुतर्को, द्वेष, मान, ईर्षा तथा कुसंग प्रमुख वादल समूहरूप
घनघटानो सम्यक् प्रकारे विध्वंश करवाने बलवान पवन समान; धर्म तथा धर्मांग
ज्ञानादिकनी वृद्धि करवाने पूर्वना अत्युत्तम सुविहित शास्त्रपारग आचार्यादि आर्य
मन तुल्य स्याद्वाद सेवीना जाण बहुधा पंजाबाख्य देश निवाशी संवेगी साधु श्री
आत्माराम समान आत्मारामजी एमनुं अति भावपूर्वक नामस्मरण गुंथित करुंछुं.

संवेगी साधु श्री नितीविजयजी महाराज एउंनो ज्ञान वृद्धि अर्थे सारो उद्योग होवाथी प्रथम भागनी पठे नामस्मरण गुंथित करु छु,

संवेगी साधु साध्य वस्तु साधनोद्युक्त युक्त मतिमान, जिनवचन समुद्रमांथी जलद वत ग्रहीत धर्माकाशस्थित जलवृष्टि वत् ज्ञान वृद्धि कर्त्ता, सवेगी साधु शुद्ध सम्यक्त्व पदारथ, परम सुविहित सुसाधु मण्डल माल प्रोहीत, ज्ञानादि शुद्ध जिनधर्मांगवृद्धि प्रयत्नवान श्री शांति सागरजी महाराजनु नामस्मरण गुंथित करुंछुं,

जन वृद्ध वय अचल गच्छाचार्य भट्टारक श्रीविवेक सागर सूरि, एमनु पूर्वभागनी पठे नाम स्मरण गुंथित करुं छुं,

मनुष्य पुज पूज्य तप गच्छाधिपति भट्टारक श्री धरणेंद्रसूरि, एमनु नाम स्मरण गुंथित करु छु;

श्री हुकमचंदजी महाराजनु में प्रथम भागमां नाम स्मरण गुथन कर्यु छे तेमज अत्रे पण गुंथित करु छु

आगम रहस्य ज्ञाता, कोविद मतिमान, अद्भुत चपल वक्तृत्वशक्तियुक्त, स्वरूपसा गरवित् श्रीरूपसागरजीनु नाम स्मरण गुंथित करु छु,

शुद्ध वीतराग परुपित, जिनधर्म विभूति युक्त श्रीअहमदावाद नगर निवाशी सर्व श्रावक मण्डल जन भूप समान अत्यंत ऋद्धि संपत्तिवान पूर्वज परंपरा श्रेणि आगत श्रीमान उत्तम श्रद्धान सद्वर्तमान तथा धर्मदीपक श्रेष्ट मयाभाई प्रे माभाईनु नामस्मरण पुन गुंथित करुं छु

बीजा पण जे जे सद्बुद्धिमान पुरुषोए धर्म प्रभावना दर्शाववा निमित्ते स्वसामर्थ्या नुसार ज्ञानवृद्धि हेतुथी जे उदारता दर्शावी छे तेओनां नामस्मरणार्थे पुस्तकना अंत भेविषे गुंथित थशे

क्षमापना

प्रथम भाग मध्ये मतिदोषथी तत्वानुजोग नामनो ग्रंथ जे पृष्ट ७३१ थी ७५६ सुधीनां भागमां छाप्यु छे ते स्थानकवासी रतनचंदनो करेलो हतां संवेगी मतमां तेनु न लखवाथी भूलथी छपाई गयो छे एटला माटे हु सर्व सुबुद्धिवान वाचको पासे थी क्षमा मांगु छु के अत्रेथि प्रथम पुस्तकमां सुविहित गीतार्थे रचित ग्रंथो ज भागवतनी मे प्रसिद्ध करेली छे तेने कोई दूषण आपशो नही केम के, हरेक

काम जूलथी थाय. ते क्षमा करवा योग्य छे ढुंढिया यद्यपि जिनधर्मी नामधरावनारा तो छे पण जाते मूर्खज होय छे तेथी तेउ जिनोक्त मार्गनी विपरीत परुपणा करता दरता नथी एवात सर्व सुज्ञ जनोने सम्मत छे माटे ते मूर्ख होवाथी गीतार्थ कहेवाय नही तेथी ए ग्रंथ अवश्य जैन सैलीथी विपरीतजछे एवुं जाणी त्याग करवा योग्य छे; कोईए सुविहित गीतार्थकृत जाणीने वांचवो जणवो नही ए वात हुं श्री जावनगरमां साधु श्री आत्मारामजी महाराजने मलवा गयो हतो त्यारे तेमणे मारी पासे कही ए रतनचंद थानकवासी साथे आत्मारामजी महाराजनो मलाप थयलो हतो इत्यादिक बहुवातो मे एमना मुखथी सांजलीने तेथी में घणो पश्चात्ताप कर्यो पण पछी थाय शुं? माटे मूलथी मारी प्रतिज्ञामां में जूल कीधी तेनी मुनि श्री आत्मारामजी महाराजना उपकार सहित सर्व सज्जनो पासेथी क्षमापना मागुं छुं.

शा. जीमसिंह माणक.

विनती.

समस्त जैन धर्म रागी, नाना ग्रंथ विचार बुजुत्सुक, जिनवचन पीयूषपान कर्त्ता, शरल चित्तवाला जनोने अति प्रार्थना पूर्वक विनति करुं छुं के, जेम जननी अथवा जनक स्वपुत्रना दोषविषे रंचमात्र विचार न करतां मात्र गुणपुंज ग्रहण करेछे. तेम आ अंकित पुस्तकनेविषे कोईने कांई दोष दृष्टिगोचर थाय तो मऊ ऊपर रंचमात्र रोष करवो नही. केमके, सर्व प्रकारे निर्दोषता एक केवलीविना बीजा कोईनेविषे पण संजवे नही एटला माटेज पूर्वे थई गयला महत् आचार्य प्रमुख श्रुतज्ञान पारग अत्युत्कृष्ट पंमितो पण स्वरचित ग्रंथोमां बुद्धि दोषनेविषे क्षमा मागी गयला दीगामां आवेछे; त्यारे आधुनिक साधारण जननी वात शुं कहेवी? आ पुस्तकनुं शोधन करतां मति दोष अथवा दृष्टिदोष अवश्य दीगामां आवशे; ते जोईने रोष न करतां क्षमा करवी. केमके, वाचता अथवा लखतां जूल थायज छे एवो नियम छे. एविषे जे गर्व करे ते मूर्ख कहेवाय. माटे ए विषे हुं सर्व सत्पुरुषोनो विनय करुंछुं के, आपनी हंसना चंचू जेवी मतिथी सारासार विचार पूर्वक जलरूप दोषनुं निवारण करीने पयरूप गुणनुं ग्रहण करवुं. अने असत् पुरुषोनो पण अधिक विनय करुं छुं के, आपनी चंचू जेवी मतिवडे गुण तजीने दोषनुं ग्रहण करीने ते लखेचो प्रसिद्ध करवो;

यत्कषायजनितं तव सौख्यं यत्कषायपरिहाणि भवति ॥
तद्विशेषमथवैतदुदर्कं संविभाव्य भज धीर विशिष्ट ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ वळीप्रकारांतरे कषायत्यजवु उपदेशेछे हेआत्मा तुजनेकषायथी उपनुजेसु ख अनेकषायना परित्यागथी उपनुजेसुख एबेनुविशेषजे अधिकपणु तथा उदर्कके० निदानो विपाकजेफळ तेसम्यक् प्रकारे विचारीने पछे हेधीरपमित एमाजेतुजने विशि ष्टउत्तमजाणवामांआवे तेनेतुंआदरअंगीकारकर ॥ ६ ॥

सुखेन साध्या तपसा प्रवृत्ति र्यथातथा नैव तु मानमुक्तिः ॥
आद्या न दत्तेपि शिवं परा तु निदर्शनाद्बाहुबलेः प्रदत्ते ॥७॥
सम्यग् विचार्येति विहाय मानं रक्षन् दुरापाणि तपांसि यत्नात् ॥
मुदा मनीषी सहतेऽभिभूती शूरः क्षमायामपिनीचजाताः ॥८॥

अर्थ ॥ तेतपकरवाथी मानत्यागनी दुष्करता देखाडेछे हेआत्मा जेम तपनीप्रवृ तितसुखेसाध्यछे तेममानमुक्तिजे मानतुत्यजवु तेसुखेसाध्यनथी तो आद्याके० पहेली करीजे तपप्रवृत्तितेमुक्तिआपवा समर्थनथी अने बीजीजेमानमुक्ति तेयद्यपिदु साध्यछे तापणते मुक्तिआपवाने समर्थछे बाहुबळजनेदृष्टांते जेमबाहुबळजने मानमुक्तिविना मात्र तपकरीने केवळज्ञान उपनुनही अनेमानमुक्यु तेवारे तत्काळज्ञानउपनुं एवुसम्यग् विचारीने मानत्यजीनेपछे करीदुःखे पळावोजेतप तेनेराखतोथको क्षमानेविषे शूर एवाजे मनीषीके० पंडित ते नीच जननो करेलो अभिभूति जेपराभव तेनेपण मुदा के० हर्षकरीनेसहेछे ॥ ७ ॥ ८ ॥ एनेकाव्यनोअर्थएकछे

पराभिभूत्याल्पिकयापि कुप्यस्यघैरपीमां प्रतिकर्तुमिच्छन् ॥
न वेत्सि तिर्यङ्नरकादिकेषु तास्तैरनंतास्त्वतुला भवित्री ॥९॥

अर्थ ॥ वळीएमहिज सहेवाथीज उपदेशेछे हेआत्मातु थोडीपण परनीकरे लीजे अभिभूति पीडादिक तणेकरी अभिभूतिना करनारजे पुरुषतेउपर कोपेछे अने वळी पापकरीने तेहना प्रतिकारने वांछेछे एटले पूर्वजन्मांतरना पापविपाकथकी प राभवपामेछे वळीपानीतेहनो प्रतिकारपण पापेकरीनेज वांछेछे परंतुतेपापेकरीने तु ज्ञानेनिश्चेनाथी तेतिर्यंचनरकादिक गतिनेविषे अनंततथाअतुल मोहोटी एवि अभिभूतिना पीडापामे एवुंजाणतोनथी ॥ ९ ॥

धत्से कृतिन् यद्यपकारकेषु क्रोधं ततो धेह्यरिषट्कएव ॥
अथोपकारिष्वपि तन्नवार्तिकृत्कर्महृन्मित्रवहिर्द्धिपत्सु ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेक्रोधकरवो तेवैरीनेज वियुक्तछे तेकहेछे हेपंमितआत्मा जोतुं अपकारक शत्रुनेविषे क्रोधधरेछेतो तेनेवदलेताहृश अंतरंगनाजे क्रोध मान माया लोभ राग अनेद्वेष मलीछशत्रुछे तेहनेविषेज क्रोधधर केमकेएछशत्रुथी बीजोकोइ तुजने वधारेदुःखदाइनथी अथवा उपकारक मित्रनेविषे जोतुंक्रोधधरतोनथी तेवारेतुं संसारमां अतिकारी एहवाज्ञानावर्णादिक कर्म तेनोहरणकरनाराजे उपसर्गादिकना करनार शत्रु तेनाउपसर्गनेकरवेकरी वाह्यदृष्टियेंतोते ताहृशशत्रूछे पणकर्मक्षयकरवामां अनेपरलोकना अनंतसुखनीप्राप्तिकरवामां साह्यकारीथया माटे तत्वदृष्टिये जोतां अभ्यंतरपणे तेमित्रभावेज परिणम्या तेथी उपसर्गकारकशत्रुने तत्वदृष्टीये मित्रतुल्य जोइने तेमित्रनेविषे क्रोधनधरवो एभावार्थछे ॥ १० ॥

अधीत्यनुष्टानतपःशमाद्यान् धर्मान् विचित्रान् विदधत्समायान् ॥
न लप्स्यसे तत्फलमात्मदेहक्लेशाधिकं तांश्च भवांतरेषु ॥ ११ ॥

अर्थ ॥ हवेमायात्यजवा आश्रीउपदेशछे हेआत्मातुं अधीतिके० भणवुं तथाअनुष्टानजे क्रियाआवश्यकादिक तथातपउपशमादिक नानाविधधर्म ते मायाके० कपटसहित करतोथको मात्रतुं पोतानादेहने कष्टजआपेछे पणतेथी व्यतिरिक्तके० बीजूंफलकांइ भवांतरनेविषे पामीसनही वली भवांतरनेविषे तेधर्मनेपणपामीसनही केमकेमायावीने वोधीपामवीदुर्लभहोय ॥ ११ ॥

सुखाय धत्से यदि लोभमात्मनो ज्ञानादिरत्नत्रितये विधेहि तत् ॥
दुःखाय चेदत्र परत्र वा कृतिन् परिग्रहे तद्बहिरांतरेपि च ॥ १२ ॥

अर्थ ॥ हवेलोभत्यजवाआश्री उपदेशकरेछे हेआत्माजोतुं पोतानासुखनेअर्थे लोभकरेछे तोज्ञानादिक जे ज्ञानदर्शनअनेचारित्र एत्रणरत्ननेविषे लोभकरवी जीधनधान्यादिक असारवस्तुथी कांहिसुखनथाय माटेहेचतुरआत्मा तुंआलोके दुखनेअर्थे वाह्यथीधनधान्यादिक अने अंतरंगथी क्रोधमानादिक परिग्रहनेविषे लोभ करिसनही ॥ १२ ॥

करोषि यत्प्रेत्य हिताय किंचित्कदाचिदल्पं सुकृतं कथंचित् ॥
माजीहरस्तन्मदमत्सराद्यैर्विना च तन्मां नरकातिथिर्भूः ॥ १३ ॥

अर्थ॥हवेजीवने सुकृतराखवाआश्रयी उपदेशछे हेआत्मातुं कोइकाले कथंचित् थ

यत्कषायजनितं तव सौख्यं यत्कषायपरिहाणि नवति ॥
तद्विशेषमथवैतदुदर्कं संविनाव्य नज धीर विशिष्टं ॥ ६ ॥

अर्थ॥वलीप्रकारांतरे कषायत्यजवु उपदेशेछे हेआत्मा तुजनेकषायथी उपर्तुजेसु ख अनेकषायना परित्यागथी उपनुजेसुख एबेनुविशेषजे अधिकपणु तथा उदर्केके० निदानो विपाकजेफल तेसम्यक प्रकारे विचारीने पछे हेधीरपंमित एमाजेतुजने विशिष्टउत्तमजाणवामाआवे तेनेतुआदरअंगीकारकर ॥ ६ ॥

सुखेन साध्या तपसां प्रवृत्ति र्यथातथा नैव तु मानमुक्तिः ॥
आद्या न दत्तेपि शिवं परा तु निदर्शनाद्बाहुबलेः प्रदत्ते॥७॥
सम्यग् विचार्येति विहाय मानं रक्षन् डुरापाणि तपांसि यत्नात्॥
मुदा मनीषी सहतेऽनिनूतीः शूरः क्षमायामपिनीचजाताः ॥८॥

अर्थ॥हवेतपकरवाथी मानत्यागनी डुष्करता देखाडेछे हेआत्मा जेम तपनीप्रवृत्तितेसुखेसाध्यछे तेममानमुक्तिजे मानतुत्यजवु तेसुखेसाध्यनथी तो आद्याके० पहेली कहीजे तपप्रवृत्तितेमुक्तिआपवा समर्थनथी अने बीजीजेमानमुक्ति तेयद्यपिडु साध्यछे तोपणते मुक्तिआपवाने समर्थछे बाहुबलनेदृष्टांतें जेमबाहुबलने मानमुक्तिविना, मात्र तपथकीज केवलज्ञान उपनुनही अनेमानमुक्युं तेवारे तत्कालज्ञानउपनुं एवुसम्यग विचारीने मानत्यजीनेयत्ने करीडुर्नन एह्वोजेतप तेनेराखतोथको क्षमानेविषे शूर एवोजे मनीषीके० पंमित ते नीच जननो करेलो अनिनूति जेपरानव तेनेपण मुदाके० हर्षकरीनेसहेछे ॥ ७ ॥ ८ ॥ एबेकाव्यनोअर्थएकठोछे

परानिनूत्याल्पिकयापि कुप्यस्यघैरपीमां प्रतिकर्त्तुमिछन् ॥
न वेत्सि तिर्यङ्नरकादिकेषु तास्तैरनंतास्त्वतुला नवित्री ॥९॥

अर्थ ॥ वलीएपरिसह सहेवाआश्रीज उपदेशेछे हेआत्मातु थोडीपण परनीकरेलीजे अनिनूति पीडादिक तेणेकरी अनिनूतिना करनारजे पुरुषतेउपर कोपेछे अने वली पापकरीने तेह्ना प्रतिकारने वांछेछे एटले पूर्वजन्मांतरना पापविपाकथकी परानवपामेछे अनेवलीतेह्नो प्रतिकारपण पापेकरीनेज वांछेछे परतुतेपापेकरीने तु अनिनूतिजेपीडाओ तेतिर्यंचनरकादिक गतिनेविषे अनंततथाअतुल मोह्योटी एवि नवित्रीकेह्ता पीडाथाशे एवुकानथीजाणतो ॥ ९ ॥

धत्से कृतिन् यद्यपकारकेषु क्रोधं ततो धेह्यरिषट्कएव ॥
अथोपकारिष्वपि तन्नवार्तिकृत्कर्महन्मित्रबहिर्द्विषत्सु ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेक्रोधकरवो तेवैरीनेज विघुक्तछे तेकहेछे हेपंडितआत्मा जोतुं अपकारक शत्रुनेविषे क्रोधधरेछेतो तेनेवढलेताहरा अंतरंगनाजे क्रोध मान माया लोभ राग अनेद्वेष मलीछशत्रुछे तेहनेविषेज क्रोधधर केमकेएछशत्रुथी वीजोकोइ तुजने वधारेदुःखदाइनथी अथवा उपकारक मित्रनेविषे जोतुंक्रोधधरतोनथी तेवारेतुं संसारमां आर्तिकारी एहवाज्ञानावर्णादिक कर्म तेनोहरणकरनाराजे उपसर्गादिकना करनार शत्रु तेनाउपसर्गनेकरवेकरी बाह्यदृष्टियेंतोते ताहराशत्रूछे पणकर्मक्षयकरवामां अनेपरलोकना अनंतसुखनीप्राप्तिकरवामां साह्यकारीथया माटे तत्वदृष्टियें जोतां अभ्यंतरपणें तेमित्रभावेज परिणम्या तेथी उपसर्गकारकशत्रुने तत्वदृष्टीयें मित्रतुल्य जोइने तेमित्रनेविषे क्रोधनधरवो एभावार्थछे ॥ १० ॥

अधीत्यनुष्ठानतपःशमाद्यान् धर्मान् विचित्रान् विदधत्समायान् ॥
न लप्स्यसे तत्फलमात्मदेहक्लेशाधिकं तांश्च भवांतरेषु ॥ ११ ॥

अर्थ ॥ हवेमायात्यजवा आश्रीउपदेशछे हेआत्मातुं अधीतिके०भणवुं तथाअनुष्ठानजे क्रियाआवश्यकादिक तथातपउपशमादिक नानाविधधर्म ते मायाके० कपटसहित करतोथको मात्रतुं पोतानादेहने कष्टजआपेछे पणतेथी व्यतिरिक्तके० बीजूंफलकांइ भवांतरनेविषे पामीशनही वली भवांतरनेविषे तेधर्मनेपणपामीशनही केमकेमायावीने बोधीपामवीदुर्लभहोय ॥ ११ ॥

सुखाय धत्मे यदि लोभमात्मनो ज्ञानादिरत्नत्रितये विधेहि तत् ॥
दुःखाय चेदत्र परत्र वा कृतिन् परिग्रहे तद्बहिरांतरेपि च ॥ १२ ॥

अर्थ ॥ हवेलोभत्यजवाआश्री उपदेशकरेछे हेआत्माजोतुं पोतानासुखनेअर्थे लोभकरेछे तोज्ञानादिक जे ज्ञानदर्शनअनेचारित्र एत्रणरत्ननेविषे लोभकर वी जीधनधान्यादिक असारवस्तुथी कांइसुखनथाय माटेहेचतुरआत्मा तुंआलोके दुःखनेअर्थे बाह्यधीधनधान्यादिक अने अंतरगथी क्रोधमानादिक परिग्रहनेविषे लोभ करिशनही ॥ १२ ॥

करोषि यत्प्रेत्य हिताय किंचित्कदाचिदल्पं सुकृतं कथंचित् ॥
माजीहरस्तन्मदमत्सराद्यैर्विना च तन्मा नरकादिदुःखैः ॥ १३ ॥

अर्थ॥हवेजीवने सुकृतरक्षवाआश्री उपदेशछे हेआत्मातुं कांइकाले कथंचित प

यत्कषायजनितं तव सौख्यं यत्कषायपरिहाणि नवति ॥
तद्विशेषमथवैतदुदर्कं सविनाव्य नज धीर विशिष्टं ॥६॥

अर्थ॥वलीप्रकारांतरे कषायत्यजवु उपदेशेछे हेआत्मा तुजनेकषायथी उपनुंजेसु ख अनेकषायना परित्यागथी उपनुंजेसुख एवेनुविशेषजे अधिकपणु तथा उदर्कके० निदानो विपाकजेफल तेसम्यक प्रकारे विचारीने पछे हेधीरपंमित एमाजेतुजने विशि ष्टउत्तमजाणवामांआवे तेनेतुंआदरअंगीकारकर ॥ ६ ॥

सुखेन साध्या तपसां प्रवृत्ति यथातथा नैव तु मानमुक्ति ॥
आद्या न दत्तेपि शिवं परा तु निदर्शनाद्बाहुबलेः प्रदत्ते॥७॥
सम्यग् विचार्येति विहाय मानं रक्षन् डुरापाणि तपांसि यत्नात्॥
मुदा मनीषी सहतेऽनिनूतीः शूरः क्षमायामपिनीचजाताः ॥८॥

अर्थ॥हवेतपकरवाथी मानत्यागनी डुष्करता देखाडेछे हेआत्मा जेम तपनीप्र वृत्तितेसुखेसाध्यछे तेममानमुक्तिजे मानतुत्यजवु तेसुखेसाध्यनथी तो आद्याके० पहेलं कहीजे तपप्रवृत्तितेमुक्तिआपवा समर्थनथी अने बीजीजेमानमुक्ति तेयद्यपिडु साध्य तोपणते मुक्तिआपवाने समर्थछे बाहुबलनेदृष्टांतें जेमबाहुबलने मानमुक्तिविना,मा तपथकीज केवलज्ञान उपनुंनही अनेमानमुक्यु तेवारे तत्कालज्ञानउपनुं एवुसम्य विचारीने मानत्यजीनेयत्ने करीडुर्नन एहवोजेतप तेनेराखतोथको क्षमानेविषे अ एवोजे मनीषीके० पंमित ते नीच जननो करेलो अनिनूति जेपरानव तेनेपण मु के० हर्षेकरीनेसहेछे ॥ ७ ॥ ८ ॥ एबेकाव्यनोअर्थएकछे

परानिनूत्याल्पिकयापि कुप्यस्यघैरपीमां प्रतिकर्तुमिच्छन् ॥
न वेत्सि तिर्यङ्नरकादिकेषु तास्तैरनंतास्त्वतुला नवित्री ॥९॥

अर्थ ॥ वलीएपरिसह सहेवाआश्रीज उपदेशेछे हेआत्मातु थोडीपण परनीक लीजे अनिनूति पीडादिक तेणेकरी अनिनूतिना करनारजे पुरुषतेउपर कोपेछे अ वली पापकरीने तेहना प्रतिकारने वांछेछे एटले पूर्वजन्मांतरना पापविपाकथकी रानरपामेछे अनेवलीतेहनो प्रतिकारपण पापेकरीनेज वांछेछे परंतुतेपापेकरीने अनिनूतिजेपीडाओ तेतिर्यचनरकादिक गतिनेविषे अनंततथाअतुल मोहोटी ए नवित्रीकहेता पीडाथाशे एवुकानथीजाणतो ॥ ९ ॥

धत्से कृतिन् यद्यपकारकेषु क्रोधं ततो धेह्यरिपट्कएव ॥
अथोपकारिष्वपि तज्जवार्त्तिकृत्कर्मह्न्मित्रवहिर्द्विपत्सु ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेक्रोधकरवो तेवर्गीनेज वियुक्तने तेकहेछे हेपंमितआत्मा जोतुं अपकारक शत्रुनेविषे क्रोधधरेछेतो तेनेबदलेताहरा अंतरगनाजे क्रोध मान माया लोभ राग अनेद्वेष मलीवशत्रुछे तेहनेविषेज क्रोधधर केमकेएहशत्रुथी बीजोकोइ तुझने वधारेडुःखदाइनथी अथवा उपकारक मित्रनेविषे जोतुंक्रोधधरतोनथी तेवारेतुं सं सारमां अतिकारी एहवाज्ञानावर्णादिक कर्म तेनोहरणकरनाराजे उपसर्गादिकना करनार शत्रु तेनाउपसर्गनेकरवेकरी बाह्यदृष्टियेंतोते ताहराशत्रुछे पणकर्मक्षयकर वामां अनेपरलोकना अनंतसुखनीप्राप्तिकरवामां साह्यकारीथया माटे तत्वदृष्टियें जोतां अभ्यंतरपणे तेमित्रनावेज परिणम्या तेथी उपसर्गकारकशत्रुने तत्वदृष्टीयें मित्रतुल्य जोइने तेमित्रनेविषे क्रोधनधरवो एभावार्थछे ॥ १० ॥

अधीत्यनुष्ठानतपःशमाद्यान् धर्मान् विचित्रान् विदधत्समायान् ॥
न लप्स्यसे तत्फलमात्मदेहक्लेशाधिकं तांश्च भवांतरेषु ॥ ११ ॥

अर्थ ॥ हवेमायात्यजवा आश्रीउपदेशोछे हेआत्मातुं अधीतिके०भणवुं तथाअ नुष्टानजे क्रियाआवश्यकादिक तथातपउपशमादिक नानाविधधर्म ते मायाके० कपटसहित करतोथको मात्रतुं पोतानादेहने कष्टजआपेछे पणतेथी व्यतिरिक्तके० बीजूंफलकांइ भवातरनेविषे पामीशनही वली भवांतरनेविषे तेधर्मनेपणपामीशन ही केमकेमायावीने बोधीपामवीदुर्लभहोय ॥ ११ ॥

सुखाय धत्से यदि लोभमात्मनो ज्ञानादिरत्नत्रितये विधेहि तत् ॥
दुःखाय चेदत्र परत्र वा कृतिन् परिग्रहे तद्बहिरांतरेपि च ॥ १२ ॥

अर्थ ॥ हवेलोभत्यजवाआश्री उपदेशकरेछे हेआत्माजोतुं पोतानासुखनेअ र्थे लोभकरेछे तोज्ञानादिक जे ज्ञानदर्शनअनेचारित्र एत्रणरत्ननेविषे लोभकर वी जीधनधान्यादिक असारवस्तुथी कांहिसुखनथाय माटेहेचतुरआत्मा तुंआलोके दुःखनेअर्थे बाह्यथीधनधान्यादिक अने अंतरंगथी क्रोधमानादिक परिग्रहनेविषे लोभ करिसनही ॥ १२ ॥

करोषि यत्प्रेत्य हिताय किंचित्कदाचिदल्पं सुकृतं कथंचित् ॥
माजीहरस्तन्मदमत्सराद्यैर्विना च तन्मा नरकातिथिर्भूः ॥ १३ ॥

अर्थ॥हवेजीवने सुकृतराखवाआश्री उपदेशोछे हेआत्मातुं कोइकाले कथंचित् प

एकटेकरीने काइएक अल्पके० थोडुंपणसुकृत जेदानादिक तथातपसयमादिकते प्रेत्यके० परलोकना हितनेअर्थकरेछे तेसुकृतने मद मत्सर क्रोध लोनादिके करीने हारिसनही अनेवली तेसुकृतविना सातनरकनो अतिथिके० परोणो थइशनही एटने तेसुकृत खोयाथी नरकगतिथशे तेमाटे मदमत्सरादिकने निवारीनेसुकृतराखजे॥१३

पुरापि पापै पतितोसि ससृतो दधासि रे किं गुणिमत्सर पुन ॥
न वेत्सि किं घोरजले निपात्यसे नियत्र्यसे शृंखलया च सर्वत ॥१४॥

अर्थ॥वली मत्सरत्यजवाआश्री उपदेशछे हेआत्मातु पूर्वपण पापेकरीने ससारमा पडयोछे अनेवलीगुणवतने विपे शुमत्सरधरेछे एमकानथीजाणनोजे एमत्सरतोमु जने घोरके० अगाधड खरुपियु जेमा जलछे एहवा ससाररूपीया समुद्रमानाखेछे अनेवली ताहरा सर्वांगने निकाचित कर्मरुप साकलेकरीबाधेछे ॥ १४ ॥

कष्टेन धर्मो लवशो मिलत्यय क्षय कषायैर्युगपत्प्रयाति च ॥
अतिप्रयत्नार्जितमर्जुन तत किमङ्ग ही हारयसे नन्नस्वता ॥ १५॥

अर्थ॥हवेआत्माने कष्टेउपार्जितधर्म राखवानो उपदेशकहेछे हेआत्मातुधर्मनु एकन वलेशमात्रपण कष्टेकरीने सचयकर केजेथकीताहरो कषायेकरीने युगपतके०समकाले घणाकालनो सचित करेलुजेक्षेत्रगते एकवारेज क्षयपामे तेमाटेहेमूर्ख घणाउद्यमे उपा र्ज्युएहवु अर्जुनजे सुवर्ण ते वायुएकरीने हाइतिखेदे शुहारी जायछे एटलेसुवर्णसम वायुये हारवानीपरे कष्टेउपार्ज्योजेधर्म तेनेकषायरूपवायुये हरावेछेतेयुक्तनथी ॥१५

शत्रूनवति सुहृद कलुषीन्नवति धर्मो यशासि नि
चिता यशसीन्नवंति ॥ स्निह्यति नैव पितरोपि च बाध
वाश्च लोकद्वयेपि विपदो न्नविना कषायै ॥ १६ ॥

अर्थ ॥हवेकषायथी इयाइयाअवगुणथायछे तेकहेछे ससारीजीवने कषायेकरी ने मित्रतेशत्रूथाय वलीधर्मजे तपदानादिक तेमेलाथाय वलीचिरकालनोसचेलोयश तेपण अपयशसरखोथाय वलीमातापिता तथा बीजासजनादिक तेपणकोइ स्नेह नकरे तेमाटेप्राणीने कषायेकरी आलोके अनेपरलोकेपण आपदाथाय ॥ १६ ॥

रूपलान्नकुलविक्रमविद्या श्रीतपोवितरणप्रन्नुताद्यै ॥
किं मद वहसि वेत्सि न मूढानतश स्वन्नृशलाघवडु ख ॥१७॥

अर्थ ॥ हवेजीवने मदनिवारवाआश्री उपदेशकहेछे हेआत्मातुं रूप लान कु ल पराक्रम विद्या लक्ष्मी तप दान ऐश्वर्य तथाआदिशब्दथी जाति परिवार स्त्री म

इत्यादिकें करीने मद अहंकार शुंवहेछे? हेमूर्खअनंतिवार पोताना अतिशये घवपणानुजे दुःख तेकेमनथी विचारतो? तुंपोतेंज अनंतिवार कुरूप जातरहित हीनकुल निर्बल मूर्ख दरिद्री तपकरवाने अशक्त कृपण दास किंकर एहवो थतथो हतो त्यांपणसर्ववातें हीनपणुं अनुभव्युं तोआजऽहां शुंमदकरेछे ॥१७॥

विना कषायान्नभवार्त्तिराशि र्नभवेद्भवे देव च तेषु सत्सु ॥ मूलं हि संसारतरोः कषायास्तत्तान् विहायैव सुखी भवात्मन् ॥१८॥

अर्थ ॥ वलीफरीने कषायनुंत्यजवुंज दृढेछे. हेआत्मासंसारमां कषायविना संसार नेथीनी आर्तिनोसमूह होयजनही अनेतेकषायेंकरी विद्यमानछते भवार्त्तिनीराशि ायज केमके संसाररूपीया वृक्षनुमूल तेकषायजछे. माटेतेकषायनेछांडीनेसुखीया. ातिसुखनेपाम. ॥ १८ ॥

समीक्ष्य तिर्यङ्नरकादिवेदनाः श्रुतेक्षणैर्धर्मदुरापतां तथा ॥ प्रमोदसे यद्विषयैः सकौतुकै स्ततस्तवात्मन् विफलैव चेतना ॥१९॥

अर्थ ॥ हवेजेविषयने त्यजीशक्तोनथी तेप्राणीने शास्त्रभणवो तेपणअफलछे ते ाश्रीकहेछे हेआत्मा श्रुतजेसिद्धांत तेनेजोवेकरीने तिर्यंच नरक प्रमुखनी वेदनाने घासर्वज्ञभाषित धर्मनुंदुर्लभपणुंछे एमतेंसम्यक्प्रकारेंजाणीने पणजोतुं कौतुकस हितथको विषयमांराचेछे तेवारें ताहारो चेतनाजे ज्ञानदृष्टि तेनिस्फलछे केमके तुंन कादिकनादुःखने जाणतोछतोपण दुर्लभधर्मपामिने धर्मकरतोनथी ॥ १९ ॥

चौरैस्तथाः कर्मकरैर्गृहीते दुष्टैः स्वमात्रेप्युपतप्यसे त्वं ॥ पुष्टैः प्रमादैस्तनुभिश्च पुण्यधनं न किंवेत्स्यसि लुठ्यमानं ॥ २० ॥

अर्थ ॥ हवेधर्मरूपधन तेलुटातुंनथी तेआश्रीजीवने उपदेशकहेछे हेआत्माचोर ोको तथा दुष्टकुलक्षणकर्मकर जदासादिकतेणे स्वमात्रके० मात्रबाह्यधनने अप हृत्यावतां तुंपरितापकरेछे पणपोतानापोष्या एवाजेप्रमाद तथा तनुके० शरीर तेणेचो नीपेठें लुटयुं एहवुंजे ताहरुं पुण्यरूप धन तेसर्वलुंटाऽजायछे माटेतेहनी रक्षाकर ाजेथीतुं भवांतरेंसुखीथाय ॥ २० ॥

मृत्योः कोपि न रक्षितो न जगतो दारिद्र्यमुत्त्रासितं रोगास्तेननृपादि जा न च भियोनिर्णाशिताः षोडश॥ विध्वस्ता नरका न नापि सुखिता धर्मैस्त्रिलोकी सदा तत्कोनाम गुणोमदश्च विभुता का ते स्तुतीच्छा च का२१

अर्थ ॥ वलीआत्माने गुणरहितपणुदेखाडी मदरहितवा उपदेशकरेछे हेआत्मा जोतें मृत्युनामुखथी कोइप्राणीराख्योनथी तथा जगतजेविश्वतेनु दारिद्रनाशपमा डयुनथी वलीसोलेरोगजे कासादिक तथाराजाअने चोरप्रमुखनानय तेनाशपमाड्या नथी वलीसातजेनरक तेपणनिवारयानथी तथाधर्मकरीने त्रिभुवनने सदासुखीकीधुन थी इत्यादिकगुणमाहेलो एकगुणजोताहरामानथी तेवारेताहारोगुणतेम्यो, अनेतेगु णविना मदतेश्यो, तथा विभुताके० मोहोटाइतेशी, तथास्तुति प्रशंसानीराग तेप णशी, एटलेपूर्वोक्त तथाविध कोइगुणजोताहरामाहोयतो मदकरवोपणघटेछे पण तेविना तोजेमदकरवोतेसर्वे निरर्थकछे तेमाटे मदमत्सरादिकत्यजवा २१ इतिश्री अध्यात्मकल्पद्रुमेविषयकषायादवशताधिकार सप्तम संपूर्णम्म ॥

अथशास्त्राभ्यासोपदेश ॥शिलातलाभे हृदि ते वहति विशति सिद्धांत रसा न चात ॥यदत्र नो जीवदयार्द्रता ते न भावनांकूरततिश्च लभ्या॥१॥

अर्थ ॥ हवेआठमेअधिकारे शास्त्रगुणकेहेछे त्यांप्रथमउपमानेशिक्षातरेचित्तनुक ठिणपणुदेखाडेछे हेआत्माशिलाना तलियासरखा ताहराहृदयमा सिद्धांतरूपिया रसवहेछे पणतेथीताराअंतःकरण लिगारेभेदातोनथी केमकेएहृदयमा जीवदया रूप णीकोमलता तथाभावनाजे अनित्यत्वादिक तेरूपीयाअंकूरनी श्रेणी देखातीन थी कोमलपृथ्वी जेम जलप्रवाहनेयोगे आर्द्रतापामे तथात्यां अनेकअंकुरादिप्रग टेमआसनसिद्धिकजीवने सिद्धांतनायोगथी हृदयमा कोमलताथाय तथाभावनाप्र मुख शुभपरिणामपणउपजे अनेदूरसिद्धिकजीवने तोए शिलातलनुदृष्टांतजाणवु

यस्यागमाभोदरसैर्न धौत प्रमादपंक स कथ शिवेच्छु ॥
रसायनैर्यस्य गदा क्षता नो सुदुर्लभ जीवितमस्य नून ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेउक्तिविशेषेकरी सिद्धांतनु माहात्म्यकहेछे जेप्राणिने आगमजेसिद्धांत तेरूपीया मेघनेरसेकरी प्रमादरूपीयो पंकजेकचरो तेधोवाणोनथी तेवाप्राणिमुक्ति शुंवांछेछे एटले जेने सिद्धांतजाणवाथीपण प्रमादमटयोनही तेप्राणिपछे क्याथीप्र मादरहितथइ मुक्तिपामशे केमके सिद्धांतथीअधिक बीजोकोइ प्रमाद परिहारनो उपायनथी तेउपरदृष्टांतकहेछे जेपुरुषने रसायनजेपारदादिक तेथीपण रोगक्षयन पाम्यो तेनेजिवतव्य तेपणुजदुर्लभछे एमइहांपणजे सिद्धांतजाणीने प्रमादरहितन थाय तोतेनेमुक्तिपामवी पणीज दुर्लभछे ॥ २ ॥

अधीतिनोर्चादिकृते जिनागमः प्रमादिनो डुर्गतिपापतेर्मुधा ॥
ज्योतिर्विमूढस्य हि दीपपातिनो गुणाय कस्मै शलनस्य चक्षुपी॥३॥

अर्थ ॥ हवेजेपुरुपसिद्धांतनणिनेपण प्रमादवंतछे तोतेहनुंनणवुं वृथाछेते कहेछे जेपुरुपप्रमादवंत सर्वथा डुर्गतिनोपडनार तेअर्चादिके० केवलपूजासत्कारादिकनेजअर्थें सिद्धांतनणे एवोहोयतेहनु नण्युं मुधाके० निष्फलजाणवुं तेउपर दृष्टांतकहेछे ज्योतिके० प्रकाशेंकरीनेज मुंझाणोथकोदीवामांजइपडे एवोजे शलनके० पतंग तेहनांच क्षूजेनेत्र तेकेवागुणनाअर्थेंहोय एतोउलटाअवगुणकारीजथाय तेमप्रमादिजीवरूपजे पतंगते अर्चासत्कारादिक ज्योतिमां मुंझाणोथको डुर्गतिरूप दीपज्वालामांपडेछे त्यांसिद्धांतरूपचक्षुतेकांईकामनआवे सामोमोहकारीथाय ॥ ३ ॥

मोदंते बहुतर्कतर्कणचणाः केचिज्जयाद्वादिनां काव्यैः केचन कल्पि
तार्थघटनैस्तुष्टाः कविख्यातितः ॥ ज्योतिर्नाटकनीतिलक्षणधनुर्वे
दादिशास्त्रैःपरे ब्रूम. प्रेत्य हिते तु कर्मणि जडान् कुक्षिंनरीनेव तान्॥४॥

अर्थ ॥ हवेतत्वज्ञानविना घणुंनण्योपण व्यर्थछे तेदेखाडेछे केटलाएकपुरुप घणातर्कजेप्रमाण प्रमेयादिन्याय तेहनातर्कविचारनेविपे चणके० प्रतिष्टित एवाछतां परवादिने जीपवाथकी हर्पपामेछे तथावलीकेटलाक चिंतव्याअर्थनी रचनाएरच्यां एहवेकाव्येंकरीने कवीपणानीप्रसिद्धिथकी संतोपपामेछे वलीकेटलाएक ज्योतिप नाटक नीतिके० व्यवहार शास्त्र लक्षणके० सामुद्रिक तथाअश्व गजलक्षणादिक धनुर्वेदके०आयुध अभ्यासनांशास्त्र आदिशब्दथी शकुन गारुडि इत्यादिक शास्त्रेंकरीने संतोपपामेछे पणपरलोकनेविपे हितकारीएवाजे संयमादिककर्मतेहनेविपेजो जडके० अज्ञानछेतोतेसर्वेने अध्यात्मशास्त्रने अनुसारे अमेंपेटनरा कहियें छैयें एटलेअध्यात्मशास्त्रनेमूकीबीजासर्वजे पापश्रुतादिशास्त्र तेपेटनराडनाजछे ॥ ४ ॥

किं मोदसे पंडितनाममात्रात् शास्त्रेप्वधीती जनरंजकेपु ॥ तत्किं
चनाधीप्व कुरुप्व चाशु न ते नवेद्येन नवाब्धिपातः ॥५॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजदढछे हेपंडितनुं जनके० लोकनेरंजनना करनार एहवाजे शृंगार नाटककाव्यादिशास्त्र तेहनेविपेप्रवीणथको नाममात्रपंडितपणाथी शुंदर्पपामेछे एलोकरंजकशास्त्रथी कांइआत्मार्थनीसिद्धिनथी पणतुंशास्त्रनेजाणिने शीघ्रपणे कांइकएहवीकरणीकर केजेणेकरीने तुजनेसंसार समुद्रमां बुडवुंनथाय एटलेजिनागमनणिने तेहनेअनुसारें संयमआराध ॥ ५ ॥

धिगागमैर्माद्यसि रंजयन् जनान् नोद्यच्छसि प्रेत्य हिताय संयमे॥
दधासि कुक्षिंभरिमात्रतां मुने क्व ते क्व तत् क्वैष च ते भवांतरे ॥६॥

अर्थ ॥ इवेक्रियाविना केवल आगमनुंजणवु तेपण अर्थसाधकनथी तेकहेछे हेमुनितनेधिक्कारछे केमकेतु आगमसिद्धांत तेणेकरीने लोकने रीजवेछे पणपरलोकना हितनेमाटे संयमनविषेउद्यमवंत नथीयातो तेमाटेतुकेवल पेटभराइजकरेछे पणतारुंयादराखवुंके भवांतरनेविषे तेजिनागमकिहां अनेलोकनुंरीझववुपणकिहां तथासंयमपणकिहां एटले भवातरेएवीगतिपामिश केजिहांएमांहेलोएकेतुजनेनहोय

धन्याः केप्यनधीतिनोपि सदनुष्ठानेषु बद्धादरा दुःसाध्येषु परोपदेशलवतः श्रद्धानशुद्धाशयाः ॥ केचित्त्वागमपाठिनोपि दधतस्तत्पुस्तकान् येऽलसा अत्रामुत्र हितेषु कर्मसु कथं ते भाविनः प्रेत्यहा ॥७॥

अर्थ ॥ [illegible] किहांक क्रियानो उत्कर्षदेखामेछे केटलाक [illegible] श्रद्धानजे सम्यक्ततेणेकरीने शुद्धाशयके० निर्मल [illegible] उपदेशना लेशमात्रथीपण दुःखेसाध्य [illegible] आदरवंतछे [illegible] आगमना पुस्तकधरताछतांपण आलोक [illegible] जेसंयमादिक तेहनेविषे निरादरकरेछे [illegible] एटलेसंसारमांशीगतीथाशे अर्थात् ते मांहादुःखपामशे ॥ ७ ॥

धन्यः [illegible] सृजति पुण्यं [illegible] किं व्यसनतोस्य तु दुर्विकल्पैः यो दुःस्थितोत्र सदनुष्ठितिषु प्रमादी॥८॥ इतिवापाठ ॥

अर्थ ॥ [illegible] जेअल्पश्रुतवंतथको पणकदाग्रहरहितहोयते [illegible] तेपणजनुंजाणवु केमकेजे उदितके० सिद्धांतोक्त एहवीजे [illegible] करीने तेनेजिनाज्ञानोभंगथाय एवीबुद्धिये कुविकल्परहित [illegible] पणकदाग्रहयस्तहोयतो तेनेघणुंजाण्येपण शास्त्र [illegible] कुविकल्पेंकरी दुःखितछे एटलेकाइक पूजासत्कारादि [illegible] आलसकपणेकरी कुविकल्पचिंतवे एटलेकहनी [illegible] परीग्रहमेनवु एवीबुद्धियें रात्रदिवस दुःखितथकारहे

ानेनलाअनुष्टान जेशुनक्रियातेनेविषे प्रमादवंतछे तोतेहनुंनणवुंपण निष्फलछे आ
ाव्यपेहेलाकाव्यनुं पाठांतरछे ॥ ७ ॥

अधीतिमात्रेण फलंति नागमाः समीहितैर्जीवसुखैर्भवांतरे ॥
स्वनुष्ठितैः किंतु तदीरितैः खरो न यत्सिताया वहनश्रमात्सुखी॥७॥

अर्थ ॥ वलीतेजदृढकरेछे हेआत्मा केवलनणवामात्रथकीज आगमसिद्धांतते
रवांतरनेविषे वांछितसुखेकरी फलेनही इष्टफलदायकनहोय पणतेसिद्धांतनेविषे
कह्यांजे स्वनुष्टितके० नलाअनुष्टान तपसंयमादिक तेनेआराध्येछते आगमफलदायक
होय तेउपरदृष्टांतकहेछे जेमखरजेरासन तेसाकरनोनार उपाडवामात्रथी सुखीउं
नहोय साकरनापरिनोगनुं सुखनपामे तेम आगमनणवामात्रथीज आगमोक्त क्रिया
जनित फलपामेनही॥७॥इतिश्री अध्यात्मकल्पद्रुमे शास्त्रगुणाधिकारोऽष्टमःसंपूर्णः॥

अथचतुर्गत्याश्रितोपदेशः॥ दुर्गंधतो यदणुतोपि पुरस्य मृत्युरायूं
षिसागरमितान्यनुपक्रमाणि ॥ स्पर्शः खरः क्रकचतोतितमामित
श्च दुःखावनंतगुणितौ भृशशैत्यतापौ ॥१॥ तीव्रा व्यथाः सुरकृता
विविधाश्च यत्राक्रंदारवैः सततमभ्रभृतोप्यमुष्मात् ॥ किं भाविनो
न नरकान् कुमते बिभेषि यन्मोदसे क्षणसुखैर्विषयैः कषायी॥२॥युग्मं

अर्थ॥हवे एपूर्वोक्तशास्त्रधारांतर्गत चतुर्गत्याश्रीत उपदेशकहेछे तेमांप्रथम शास्त्रोक्त
नरकगतिनादुःखकहेछे निश्चेकरी नरकना एकपरमाणुमात्रना दुर्गंधथी पुरवासिस
मस्तलोकनुं मृत्युथाय एहवामहादुर्गंधमय नरकनापुजलछे वलीजिहां निरुपक्रमके०
अपवर्तनरहित निकांचित् अने सागरोपमेप्रमित एकसागरोपमथी मांमीने तेत्रीस
सागरोपम पर्यंत एहवाआउपाछे केमके देवताअने नारकीनाआउपा सदाइ निरु
पक्रमहोय वलीजिहां स्पर्शतेपण करवतनीधाराथी कर्कशछे वलीइहांथकी अनंत
गुणदुःखदायी महाशीत तथा महातापछे एमक्षत्रवेदनाकहीने हवेपरमाधामीनी
करेलीवेदनाकहेछे वलीजिहां देवताजे पन्नरभेदें परमाधामीतेहुनीकरेली अतितीव्र
कठोरजे वेदना तेविविधप्रकारना छेदन विदारणादिकहोय एप्रकारे निरंतर आक्रंद
रुदनने शब्देंकरी आकाशनेपुरतो एहवोजे भविष्यमाण नरक तेहथकी हेकुमतिवं
तआत्मातुं केमनथीबिहितो जेमाटे कषायसहितथको क्षणमात्रसुखनाकारक एह
वाविषयजे शब्दादिक तेणेकरी हर्षनेपामेछे एवेकाव्यनो अर्थएकठोछे ॥ १ ॥ २ ॥

वधोऽनिशं वाहनताडनानि क्षुत्तृड्दुरामातपशीतवाताः ॥
निजान्यजातीयभयापमृत्यु दुःखानि तिर्यग्ध्विति दुःसहानि॥३॥

अर्थ ॥ हवेतिर्यंचगतिआश्री दुःखदेखाडेछे अनिशके० नित्यवधन तथा वाहन के० भारनुउपाडवु तथापराणादिकना प्रहारेकरी ताडन वली क्षुधा तृषा दुरामके० दुष्टरोग आतप तडको तथाटाढ्य वायुइत्यादिक तथावलीस्वजातीनोभय जेम म हिषने महिषनोभय तथाहस्तिने हस्तिनोभय तथाअन्यजातीयभय ते जेम मृगादि कने व्याघ्रादिकनोभय तथाअपमृत्युजे कुमरण खड्गप्रहारथी तथाआहेडीप्रमुख थी तथाजल दावानल विषमादिकयोगथी क्षुधातृषादिक गाढवेदना आक्रांतपणे अकालमृत्यु इत्यादिकप्रकारे तिर्यचगतिमां भयकरकवीन दुःखछोयछे ॥ ३ ॥

सुधान्यदास्याभिभवाभ्यसूया भियोतगर्भस्थितदुर्गतीनां ॥
एवं सुरेष्वप्यसुखानि नित्यं किंतत्सुखैर्वा परिणामदुःखैः ॥४॥

अर्थ ॥ हवेदेवगतिआश्रीदुःखकहेछे नित्यप्रतें मुधाके० फोकट अन्यके० पारकी सेवा करवी केमकेमनुष्यतो धननालोभे तथाआजीविकादिक कारणथी परनीसेवा करे अनेदेवतानेतो तेवोकोइनिमित्तनथी तोपणसदाकालें इंद्रादिकनीसेवाकरवी त थाअभिभवेवज्रप्रहारादिकनी पीडा अने अभिसूयाके० परस्परे ईर्षा देवादिकमां वलि अंतके० चयननुभय केमके सरवार्थसिद्धिना देवतानेपण चवननुभयछे तथागर्भा वासनुभय वलीदुर्गतिजे चांमालादिककुलें अथवातिर्यंचनुअवतारलेवु तेसबधीभय इत्यादिक प्रकारें देवतानानवमापण घणाप्रकारे असुखछे तेमाटेपरिणामें दुःखकारी एहवाजे देवतासंबंधीसुख तो तेसुखेंसुंथाय माटेतेसुखनेपण असुखकरीजाणवा॥४॥

सप्तत्रीन्यभिभवेष्टविश्वानिष्टयोगगदहुःसुतादिभिः ॥
स्याच्चिरं विरमता नृजन्मनः पुण्यतः सरसता तदानयः ॥ ५ ॥

इति चतुर्गतिदुःखततीः कृतिन्ननिन्नयास्त्वमनंतमनेहसं ॥ हृदि
विभाव्य जिनोक्तकृतांततः कुरु तथा न यथास्युरिमास्तव ॥६॥

अर्थ ॥ हवे उपसंहार करेछे हे पंडित आत्मा एप्रकारें अनंतकालसुधी अतिशय भयनीकरनार एहवी चारगतिसंबंधीजे दुःखनीश्रेणी तेप्रते जिनोक्त श्रीसर्वज्ञप्रणित कृतांतजे सिद्धांत तेथकी हृदयमां विचारीने जेम ए चारगतिना दुःखनीश्रेणीओ तुजने कोइवारें प्राप्तनथाय तेवो उपाय कर ॥ ६ ॥

आत्मन् परस्त्वमसि साहसिकः श्रुताक्षैर्यं भाविनं चिरचतुर्गतिदुःखराशिं॥
पश्यन्नपीह न बिभेषि ततो न तस्य विच्छित्तये च यतसे विपरीतकारी॥७॥

अर्थ ॥ हवे आत्मा चारगतीना दुःखजाणतोथकोपण धर्मनेविषे तत्परथातुं नथी तेवात्तपरमअविचारीपणुं देखाडेछे हे आत्मातुं अविचारमांहेमुख्यछो केमके आसंसारमां चिरकालसगें भावीएहवोजे चारगतिनादुःखनोसमूहतेहने श्रुतसिद्धांत रूपनेत्रेकरी देखतोछतोपण बीकपामतोनथी वलीतेदुःखना समूहनोविछेद करवा नेपण उजमालथातुनथी माटेतुं उपरांठंकर्मनुकरनारछो केमके दुःखछेद कर्मकर वानेबदले ए खवृद्धिकारीकर्मकरेछे॥७॥इति शास्त्रोपदेशांतरगतचतुर्गत्याधिकारसमाप्त

...कर्मजालैः कुविकल्पसूत्रजै निबध्य गाढं नरकाग्निभिश्चिरं॥
...ने जीव हे मनः कैवर्तकस्त्वामिति मास्य विश्वसीः ॥१॥

...मन नामानवनमोछार कहेछे तेमांप्रथम आत्माने मनरूपशत्रु
...रे हेजीवतुजने मनरूपी धीवर तेकुविकल्परूप सूत्रेगुंथ्या ए
...ओ तेणेकरीगाढोबांधीने नरकरूप अग्निएंकरी मत्स्योनीपरें चि
...मधीवरपण मत्स्यने सूत्रनीजाले गाढोबांधीनेपछे अग्नीमांप
...उपनयजाणवुं माटेतुंताहरामनरूप धीवरनोविश्वासकरीशनही
...वरनावचनावडे कुकर्मरूपजालमांपडेनही एवीरीतेंवर्त्तजे ॥ १ ॥

...यं चिरत्नसख प्रसीद किं दुर्विकल्पनिकरैः क्षिपसे भवे मां॥
...कुरु कृपां भज सद्विकल्पान् मैत्रीं कृतार्थय यतोनरकाद्बिभेमि॥

हवेआत्मावीहितोथको मनरूपमित्रने विनंतीकरेछे हेचिरकालनामित्रतुं
...मांहे हेघणाकालना सहचारीतुं महाराउपर प्रसादकरीने एमाठा विकल्पने
करीने मुजने आसंसारमां शुंनमावेछे तुजनेहुं हाथजोडीने कहुंछुं जेतुंमहारा

अपर कृपाकरीने शुनविकल्पजे धर्म ध्यानलक्षण तेहनी भजनाकरी आपणीमैत्री स फलकर केमकेहु हवे नरकना दुःखथी बीहुंछु ॥ २ ॥

स्वर्गापवर्गौ नरकं तथांतर्मुहूर्त्तमात्रेण वशावशं यत् ॥
ददाति जंतोः सततं प्रयत्नाद्वशं तदंतःकरणं कुरुष्व ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने मनवशकरवाआश्री उपदेशआपेछे हेआत्माजे अंतःकरण वशतथा अवशथको जीवने अंतरमुहूर्त्तमात्रमांज स्वर्गमोक्षादिकना सुखप्रतेआपे अनेनरकनी प्राप्तिपणकरावे एटलेमनवशथको जीर्णशेठ तथाप्रश्नचंदराजर्षि इत्या दिकनीपरे स्वर्गमोक्षादिकआपे अने मनअवशथको तंदुलमत्स्यादिकनीपरे अंतर मुहूर्त्तमात्रमा नरकप्रतेआपे तेमाटेतुंताहरा अंतःकरणनेज सर्वथाप्रकारेवशकर ॥३॥

सुखाय दुःखाय च नैव देवा न चापि कालः सुहृदोरयो वा ॥
भवेत्परं मानसमेव जंतोः संसारचक्रभ्रमणैकहेतुः ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेतेहिजकहेछे जीवने देवता तथा वर्षा शीत ग्रीष्मादिककाल तथा मित्र शत्रुतेकोइपण सुखदायी तथादुःखदाइनहोय पणएकमन तेहिजजीवने सुख दायी तथा दुःखदायीहोय हवे तेमनकहेवुछे तेकहेछे ...समुद्रमा न्ममरणादिक तेहनुएकहेतुछे एवचन सझीपचेइ अ... मनना अभावें पण संसारमा भ्रमण देखायछे ॥ ४

योगछे अने तेहिज अष्टांग योगनुं सर्वस्वछे ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जीवनेएक मनवशथयाविना दानतथा श्रुतसिद्धांतनुंजणवुं तथाध्यान तथा अर्चनजे देवपूजा आदिशब्दथी प्रासाद देवप्रतिष्ठादिक क्रिया तेसर्ववृथाजा णवी पण तेमोक्षफळनी देनारनथाय केमके कषायजेक्रोधादिक तेसंबंधीनीचिंता थकी उपनीजे असाता तेणेकरीरहित एहवुंजेमन तेहनुंवशवर्त्तिपणुं तेहिजपरम

जपो न मुक्त्यै न तपोद्विभेदं न संयमो नापि दमो न मौनं ॥
न साधनाद्यं पवनादिकस्य किं त्वेकमंतःकरणं सुदांतं ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ जीवने नवकारादिकनोजप तथा बाह्य अभ्यंतर बेप्रकारनुंतप तथासंयम चारित्र तथा दमजे इंद्रियदमन तथामौनजे वचननुंसंवर तथा पवनादिकनुंसाधन आदिशब्दथी चोरासी योगासनप्रमुख तेकांइमुक्तिना देवावाळा थायनही तेवारे तुजने किंतुके० मुक्तिप्राप्तिनो शोउपायछे तेकहेछे जेणेरुडीरीते पोतानुंअंतःकरणजे मनतेहने वशकर्युं तोतेहिज एकमुक्तिनुं दातार होय ॥ ७ ॥

लब्ध्वापि धर्मं सकलं जिनोदितं सुदुर्लभं पोतनिभं विहाय च ॥
मनःपिशाचग्रहिलीकृतः पतन् भवांबुधौ नायतिदृग्जडो जनः॥८

अर्थ ॥ जडके० हेअज्ञानीप्राणी अतिशयेंकरीपामवुंदुर्लभ प्रवहणसरिखो एह वोएसर्वज्ञप्रणीत संपूर्णधर्म तेप्रतेंपामिने वळीतेहनेछांडिने मनरूपिओ पिशाचके० भूततेणेवहेलोकर्योथको संसारसमुद्रमांपडता आयतिदृगके० उत्तरकाळनो विचार करतोनथी एटलेएमनथी विचारतोजे प्रवहणरूप धर्मनेछांडी संसारसमुद्रमां जंपाप तखाछुं तेथी आगळें हवे म्हारी शीगति थासे ॥ ८ ॥

सुदुर्जयं ही रिपवत्यदोमनो रिपूकरोत्येव च वाक्तनू अपि ॥
त्रिभिर्हतस्तद्रिपुभिः करोतु किं पदीभवन्दुर्विपदां पदे पदे॥ ९

अर्थ ॥ हेआत्माअतिशय दुर्जयएहवुंजे ताहरुंमन तेपोतेंशत्रुपणुं आचरेछे नेवळी वचनतथाकायानेपण शत्रुकरेछे मनदुष्टथके वचनतथा कायानाव्यापार दुष्टथाय तेकारणमाटे मन वचन तथाकाया एत्रणेशत्रुयें पराभव्यो एहवोतुंपगेंपगें विपदा जे नरकादिक तेहनुं भाजनथातोथको तुंसुंकरे एटलेताहरोकांइचालतुं नथी

रे चित्त वैरि तव किं नु मया ऽपराद्धं यद्दुर्गतौ क्षिपसि मां कुविकल्पजालैः
नासि मामयमपास्य शिवेऽस्ति गंता तत्किं न संति तव वासपदं ह्यसंख्या

अथ सामान्यतो वैराग्यधर्मोपदेश ॥ किं जीव माद्यसि हसस्य यमीहसेऽर्थान् कामाश्च खेलसि तथा कुतुकैरशङ्कः ॥ चिक्षिप्सु घोरनरकावटकोटरे त्वां मन्यापतन्ननु विभावय मृत्युरक्षः ॥१॥

अर्थ ॥ हवेसामान्यथी वैरागोपदेशनामा दसमोअधिकारकहेछे तेमांप्रथमजीवने मरणसबधीनयदेखाडेछे हेजीवतु मदशानोकरेछे तथाशुहसेछे वली अर्थजेसुवर्णरूपादिक तेहनेसुवाछेछे तथावली निःशंकथतो कौतुकेकरीने कामजे शब्दादिक विषय तेप्रतेसुरमेछे तुजनेतो नयकर नरकरूपजे खाड तेमानाखवावाछतो एवो मृत्युरूपजे राक्षस तेछतावछु तारेसन्मुखआवतु सांजलीने निःशंकरहिशनही॥१॥

आलंबनं तव लवादिकुठारघाताश्छिदति जीविततरुर्न हि यावदात्मन् ॥ तावद्यतस्व परिणामहिताय तस्मिन् छिन्ने हि कः क्व च कथं भविता स्वतंत्रः ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेआउपुविद्यमानछते जीवनेधर्मकरवुं उपदेशेछे हेआत्मातादृशो आलंबनआधारभूत एहवोजे जीवितव्यरूपवृक्ष तेप्रते लवादिकजे लव लेश क्षण घडी मुहूर्त्तप्रमुखकालमान तेरूपीया कुहाडानाघाव ज्याहालगेछेदेनही तेहथीपहेलांज परिणामहितजे निदानहितकारी तपसयमादिक तेहनेअर्थेउद्यमकर, जेथकीतादृशो जीवतव्यरूप वृक्षछेद्यापछि फरीतेहने नवपल्लवकरवाने किह्णाक कोइप्रकारें पण मत्रउपायथासे जेणेकरीतु जीवतव्यरूपतरुने नवपल्लवकरीस एटलेढ़ीलक्षणे जीवतव्यरूप वृक्षछेदातुजायछे तेछेदाइगयापछि फरीसज्जकरवानु कोइउपायनथी तेमाटे आत्महितनेविषे तत्परथावु एहिजश्रेष्ठउपायछे ॥ २ ॥

त्वमेव मोग्धा मतिमान् त्वमात्मन्नेष्टाप्यनेष्टा सुखदुःखयोस्त्वं ॥ दाता च भोक्ता च तयोस्त्वमेव तच्चेष्टसे किं न यथाहिताप्तिः ॥३॥

अर्थ ॥ हवेसर्वकरणीते आत्मानेआधीनछे एहवुकहिने विशेषेंप्रेरेछे हेआत्मातु मोग्धाके० मूढतासहितछो अने मतिमान्के० ज्ञातापणतुछो वलीसुखनु वांछक अनेडुःखनुअग्राहकपणतुछो तथासुखअनेडुःखनुदाता अनेभोक्तापणतुजछो केमके सुखदुःखते स्वकृतकर्मथीजथायछे यडक्त श्रीउत्तराध्ययने अप्पानईवेअरणि अप्पामेकूडसामली अप्पाकामडुवाधेणु अप्पामेनंदणवण अप्पाकत्ताविकत्ताय इत्यादिक माटे जेरीतें तादृशीआत्माने हितनीपजे तेमजकानथीकरतो ॥ ३ ॥

कस्ते निरंजन चिरं जनरंजनेन धीमन् गणोस्ति परमार्थदृशेति पश्य ॥
तं रंजयाशु चरितैर्विशदैर्भवाब्धौ यस्त्वां पतंतमबलं परिपातुमीष्टे ॥४॥

अर्थ ॥ हवेलोकनेरीजवतोथको आत्मापोतानुं हितकांइकरतोनथी तेआश्रयीउ पदेशेछे हेनिरंजन हेनिरलेपआत्मा हेबुद्धिवंत हेहिताहितविवेकनाजाण चिरकाल जावजीवलगें लोकनुंरीजववुं एटलेमलीनवस्त्र धारणकरी बाह्यक्रिया देखाडीने शू न्यचित्तें गामेगामें उपदेशआपीने लोकनुंमनरीजववुं तेथीतुजने शोगुणछे एटलुंत त्वदृष्टे विचारी परमार्थदृष्टीयेजोतां लोकरीजव्याथी आत्माने अर्थसिद्धिकांइनथी तेमाटे लोकरंजनत्यजीने उत्तावलोथयो विशदके० निर्मलजे चारित्र तपसंयमादिक आचरण तेणेकरीने श्रीवीतराग तथातेमनाभापेलाधर्मनेरीजव जेथकीतुजने अ बलके० परभवें संबलेंरहित संसारसमुद्रमांपडताथकां राखवानेसमर्थथाय केमके संसारमांपडता एकधर्मजआधार आपशे पणलोककोइ आधारआपशेनही ॥४॥

विद्वानहं सकललब्धिरहं नृपोहं दाताहमद्भुतगुणोहमहं गरीयान् ॥
इत्याद्यहंकृतिवशात् परितोषमेषि नो वेत्सि किं परभवे लघुतां भवित्री ॥५॥

अर्थ ॥ हवेअहंकारनिवारवा उपदेशेछे हेआत्मा हुंपंडितछुं हुंसर्वलब्धीयें स हितछुं हुंराजाछुं हुंदातारछुं हुंअद्भुतगुणवंतछुं तथाहुंमहोटोछुं इत्यादिकजे पोता नामनकल्पित अहंकार तेहनावशथकी तुं परितोषके० हर्षपामेछे पणजन्मांतरें भाविनी एहवीतेपदार्थोनी लघुताप्रते कांविचारतोनथी जेजेपदार्थनेतुं आभवमां हुंपदंकरेछे तेतेपदार्थनीतुं परभवेंहीनतापामिस इतिभावः॥यदुक्तं योगशास्त्रे ॥जाति लाभकुलैश्वर्य बलरूपतपःश्रुतैः ॥ कुर्वन् मदं पुनस्तानि हीनानि लभ्यते जन इति ॥५॥

वेत्सि स्वरूपफलसाधनबाधनानि धर्मस्य तं प्रभवसि
स्ववशश्च कर्तुं॥तस्मिन् यतस्व मतिमन्नधुनेत्यमुत्र
किंचित्त्वया हि नहि सेत्स्यति भोत्स्यते वा ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने इहभवेंधर्मकरवानी प्रेरणाकरेछे हेबुद्धिवंतप्राणी तुंधर्मनुं स्वरूपजे क्षांत्यादिकदशविध लक्षण तथाधर्मनुंफलजे मोक्षादिक तथाधर्मनुंसाधन जे मनुष्यजन्म आर्यक्षेत्रादिक तथाधर्मना बाधकजे कुजन्म कुक्षेत्र प्रमाद मिथ्या त्व इत्यादिकसर्वप्रकारने वेत्सिके० जाणेछे अनेवली स्ववशके० पोतानेवशेंथको ध र्मकरवाने समर्थपणछो पणतिर्यंच नारकीनीपरें परवश तथाधर्मकरवाने असमर्थ

नथी तेमाटे आनवमाज धर्मनेविषे उद्यमकर केमकेफरी परननंते कांइ लीजेनही तथा तुजने तेवा धर्मनु फरीकांइ जाणपणुपण नहीथाशे माटे ॥ ६ ॥

धर्मस्यावसरोस्ति पुद्गलपरावर्त्तैरनंतैस्तथा यात संप्रति जीव हे प्रमहतो दुःखान्यनंतान्ययम् ॥ स्वल्पाहः पुनरेष दुर्लभतमश्चास्मिन् यतस्वार्हतो धर्मं कर्त्तुमिमं विना हि नहि ते दुःखक्षयः कर्हिचित् ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने धर्मनुअवसरजणावेछे हेजीवअनंताडुःख सहित तुजने अनंते पुद्गलपरावर्त्ते ससारमाजटकता सप्रतिके० हमणा आनवमा धर्म करवानुअवसरआव्योछे अनतउत्सर्पिणी अने अवसर्पिणी प्रमाण एकपुद्गलपरावर्त्त थाय ते हनुस्वरूप ग्रथातरथीजाणवु एधर्मनुअवसरते थोडाजदिवसलगणछे फरीपामवु घणुडुर्लभछे तेमाटेएअवसरे श्रीजिनोक्तधर्म करवाने उद्यमकर केमके एजिनोक्तधर्म विना ताहरे किवारेपण जन्ममरणादिकना डुःखनो क्षयथवानुनथी माटेजोडुःखनु अतकरवाने वाछतोहोयतो एअवसर पामिने धर्मकरवाने तत्परथा ॥ ७ ॥

गुणस्तुतिर्वांछसि निर्गुणोपि सुखप्रतिष्ठादि विनापि पुण्य ॥
अष्टांगयोगं च विनापि सिद्धिर्वातूलता कापि न वा तवास्मन् ॥८॥

अर्थ ॥ हवेअयुक्तवाछकपणाथी जीवनुवाडुलापणुदेखाडेछे हेआत्मातुज्ञानदर्शन चारित्रादिकगुणेरहितथकोपण गुणस्तुतिजे पोतानीप्रशसा लोकनामुखथी कीर्त्तिना वरणनने वाछेछे तथापुण्यविनापण सुखने तथा प्रतिष्ठाके० गौरवपणानेवांछेछे वली अष्टांगजेयोग यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि एआठयोगविना पण सिद्धिअष्टकर्मक्षयलक्षण सिद्धनाआठगुण अथवा सिद्धिते अष्टमहासिद्धि लघिमा वशिता ईशिता प्राकाम्य महिमा अणिमा यत्रकामावसायिता प्राप्ति तेप्रतेतुवाछेछे माटेहेआत्मा एताहरो वाडुलापणुते कोइअपूर्वनवुजदेखायछे केमके कारणनी सामग्रीविनाज कार्य नीपजाववानी अभिलाषाकरेछे ॥ ८ ॥

पदे पदे जीव पराभिभूतीः पश्यन् किमीर्ष्यस्यधम परेभ्यः ॥
अपुण्यमात्मानमवैपि किं न तनोपि किंवा न हि पुण्यमेव ॥९॥

अर्थ ॥ हवेबीजानाकरेला अपमानथी जीवईर्षाकरेछे तेआश्रीउपदेशकरेछे हे जीवतु पुण्यरहितपणाथी अधमके० नीचअवस्थापाम्योथकोपण पगेपगे बीजानी करेली जे अभिभूतिके० अपमान आक्रोशादिकते देखीने परेभ्य के० तेलोकउपरें सु ईर्षाके० क्रोधकरेछे पणपोताना आत्मानेज पुण्यहीन केमजाणतोनथी जेपुण्यर

छितहोय तेहनेतो परंपरें परजवथाय तेमांजं महोटीवातछे एमकांविचारतोनथी अ
थवानिश्चेथी पुण्यजकेमकरतोनथी केजेथकी कोइपराजवनथाय ॥ ९ ॥

किमर्दयन्निर्दयमंगिनो लघून् विचेष्टसे कर्मसु हि प्रमोदतः ॥
यदेकशोऽप्यन्यकृतार्दनः सहत्यनंतशोऽप्ययमर्दनं भवे ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेआत्माप्रते परनेपीडानुं फलकहेछे हेआत्मातुं निर्दयपणेकरी तारा
थकी लघुके० निर्बल एहवाजे अंगीके० प्राणी तेहनेपीडतोथको तु प्रमोदतःके०
हर्षेकरी पापकर्मविषे तुंप्रवर्त्तेछे केमके एकवारपण जेप्राणियें अन्यजीवने पीडाउ
पजावीहोय तेप्राणीअनंतिवार संसारमांपीडासहे यडुक्तं निवयरंउपर्टने लयगुणि
उत्तयसहस्सकोडिगुणा ॥ कोडाकोडिगुणोवाहुज्ज विवागो बहुतरो वा ऽति ॥१०॥

यथा सर्पमुखस्थोपि भेको जंतून् भक्षयेत् ॥
तथा मृत्युमुखस्थोपि किमात्मन्नार्दसेऽगिनः ॥ ११ ॥

अर्थ ॥ हवेतेउपर दृष्टांतकहेछे जेम भेकजे मेडको तेसर्पनामुखमां रह्यो अर्थग्रसित
थको पण जंतुजेन्हाना क्षुद्रजीवतेप्रतेंखाय तेम हेआत्मा तुंपणमृत्युना मुखमां र
ह्योथको पण अन्यप्राणीओने तुंपीडाआपेछे ॥ ११ ॥

आत्मानमल्पैरिह वंचयित्वा प्रकल्पितैर्वा तनुचित्तसौख्यैः ॥
भवाधमे किं जन सागराणि सोढासि ही नारकदुःखराशीन् ॥ १२॥

अर्थ ॥ हवेइहभवें क्लिनाजनित अल्पमात्रसुखथी परजवें अनंतादुःख सहेवा
पडशे तेकहेछे हेजन हेसंसारीप्राणी प्रकल्पितके० तेंतारी कल्पनामात्रथी दुःख
नेज सुखकरीमान्या तेपणवली अल्प तुच्छ क्षण स्थायी एहवाजे मनवचनकाया
संबंधीसुख तेणेकरी इहभवें तुंठगायोहतो हाहाऽतिखेदे भवजे चारगतिरूपसंसार
तेमां अधमजे नरकतेहनेविषे घणाक सागरोपमसुधी नारकीनाजेदुःखसमूह तेसहे
वाने तुंतत्परथायछे ए विषय सुखते दुःखजछे पणकल्पनामात्रथी एनेजीवसुख
करीमानेछे ॥१२॥ यदाह भर्तृहरिः ॥ तृषा शुष्यत्यास्ये पिबति सलिलं स्वादु सुरभि
क्षुधार्तः सन् शालीन् कवलयति मांसाज्यकवलान् ॥ प्रदीप्ते रागाग्नौ सुदृढतरमा
श्लिष्यति वधूं प्रतीकारो व्याधेः सुखमिति विपर्यस्यति जनः ॥ १ ॥

उरभ्रकाकिण्युदविंदुकाम्र वणिक्त्रयीशाकटभिक्षुकाद्यैः ॥
निदर्शनैर्हारितमर्त्यजन्मा दुःखी प्रमादैर्बहु शोचिताऽसि ॥ १३ ॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजअर्थ उत्तराध्ययनसूत्रना दृष्टांतेकरी दृढकरेछे हेआत्मातुं प्रमादजे मद्यादिकपांच तेनावशथकी मनुष्यअवतारहारीने पछेपरजन्मेउ गीओथका उरभ्रजेबोकडो कागिणी उदकबिंदु आम्रखातफीराजा वणिकत्रयीजे त्रणव्यापारी शाकटजे गाडावाहक निक्षुकजेराक इत्यादिकोनाद्दष्टांतेतुंपण घणुशोचनाकरीस॥१३

इहासंक्षेपथी उरभ्रादिकना दृष्टांतलिखेछे तेमांप्रथम उरभ्रनुंदृष्टांतकहेछे जेम कोइगाममां कोइकनाघरमध्ये एकबोकडोहतो तेकोइक प्राहुणोआवसे तेवारें ए हनुमांस काममांआवशे एमचितवीने तेघरनामाणसो तेबोकडाने अन्नादिकपाषेछे अनुक्रमेंते बोकडो घणुपुष्टथयोथयो हवेतेहनेतेहवोदेखीने एकवाछडो मनमांखेद पाम्योथको क्रोधधरीने दोहतांजेपरह्युजे पोतानीमातानुंदुध तेहनेखानेनहीं तेवारें मातायें क्रोधनुंकारणपुछेथके कहेवालागो हेमाताजूओने आबोकडो यथेष्ट अन्नादिकखायछे तेथीकहेवो पुष्टथइरह्योछे एहनेपुत्रनीपरेपालेछे नानाप्रकारना अलंकारपहेरावेछे अनेमुजनेतो पोतानीमातानुदुध तेपणकोइ पीवादेतोनथी तथामुक तृणतेपण वखतउपर पूरामलतानथी एहवुसांभली मातायेकह्यु आउरचिणाइ पया जाइचरसिन दिजे॥सुक्कतिणेहलांगेहि एय दीहाउलरक्कण ।।१॥हेवत्स जेमरोगीजे मरवापडयोहोय तेहनेजेकांइ खावामागे तेआपे तथाफांसीनीमाला प्रमुखपहेरावे तेम एबोकडानेपण वध्यमंडननीपरे शृंगारादिककरेछे पोषेछे पणकोइप्राहुणोआवसे तवा रेपरीक्षाजणासे तेसांभली वत्सवाछरोरह्यो पछेकोइकदिवशे तेहनेघरप्राहुणोआव्या तेवारेंतेबोकडानेबांधी उचूकरी घणुतडफडतो जीभकाढतो दीनस्वरे आरडतो मस्तुप माडयो तेहनामांसने खडोखडकरी पचावीने प्राहुणासहितसकुटुंबे घरधणिये नह पाकीधु तेवृत्तांतदेखीने वाछडो भयपाम्योथको धुज्योतरस्योथकोपण मातानुदुधपीवें नहीं तेवारेंमातायें पुछेथके वत्सबोल्यो हेमातामें बोकडानीएहवी जूमीअवस्थादीठी तेथीमुजने धाववानीपण वांछायातिनथी एमइहांपणएउपनय जोडवो जेमतेबोकडोजीवतव्यनीवांछाये निर्भयपणे यथेष्टपुष्टथातुथको प्राहुणाआवे मृत्युपाम्यो तेमहेआत्मातुंपण प्रमादेपुष्टथको यथाइच्छायेविचरेछे पणमृत्युआवेथके मनुष्य जन्महारीनेनरकादिकना दुःखपामि घणुशोचपामीस

हवेबीजुकांगणीनुंदृष्टांतकहेछे जेमकोइकरांक परदेशेजइ मजूरीकरीने एकहजार सोनैया कमायो पछेपोतानादेश तरफचाल्यो तेवारेंरस्तामांखरचीसारु एकरुपकवटा वी तेहनो (८०) कागणीसाथेराखी बीजासर्वेद्रव्यनी वासलीनरी सीवीनेराखी एक दिवसे किहांकमार्गमां विश्रामस्थानके एककागणीवीसरी ते सथवारासाथें आगले

जानीनाखी तेवारेरंकविचार्युं के एककांगणीनीखोट स्वेनेथी छुं एक वटाववुं पडे
शे माटे तेनी नथवारीमूकी ऽस्यनीबांधेली कित्यांकगोपवीने तेकांगणीलेवा पाछोव
ल्यो आवीनेजुएछेतो कांगणीकोइकलइगयुं अनेपाछोफरीनेजूएछेतो बांधेलीरुपैया
कोइलेइगयुं पछेनिरानंदथयो अनोखह तेतीव्रदुःखपाम्यो पश्चात्ताप करवालाग्यो तेमतेओ
के एककांगणीनालोभथी हजारसोनैयानीवांसली अनेतेकांगणी बेउहे खोइने प
स्तावोकर्याजनथयो तेमआत्मापणपूर्वे अप्राप्तकामभोगथको बहुमूल्यचारित्रपा
मीने वलतुंकांगणीतुल्य कामभोगनीलालचे चारित्रत्यजीने कामभोगनेवशथायथको
कामभोगपणनपामे अनेचारित्रपणनपामे एमउभयभ्रष्टथयोथको तेरंकनीपेरे प
स्तावोपामे इहां कांगणी ते एक मासानुं चोथोभाग अथवा वीसकोडी अथवा
एकरुपैयानुं (८०) मुंभागजाणवो.

हवेबीजुं देवताविषेदृष्टांतकहेछे कोइकवनमां कोइकपथिकने कोइकदेवतायें क
रुणाकरीने कोइनमुद्रिकालइमुक्यो तेभूखेनिद्रापामीपीयुंनही अनेदेवतानेकह्युं के
हेस्वामि मनुष्यनाभोगनीलालसामांकुटुंबने तेडवाकहो मानवअर्थेजेवमान एकलाखि
छुं तेनगरीएडगां भाटेमुजनेनिद्रामुकातो विखुंआपीछे तेसांभली तेदेवेमूर्खनिरागि
जाणी देवतायेनिद्रामुक्यो देवतानोलाभ स्थानकेंगयो पछेतेविचारीपण स्वर्गेपड्यो
तेदेवीनेमूर्ख उभयभ्रष्टथयो थको शोचकरवालाग्यो तेमइहांमूर्खनुंतेजीवकोइमनु
ष्यनेचारित्र देवतानेस्थाने जाणवुंअने कामभोगनास्थाने एम उपनयजाणवुं.

हवेचोथुंआम्रदृष्टांतकहेछे कोइकराजाने आंबानाफलखवाथी घणुंमनहता एकदिव
सें घणाआम्रफलखावाथकी अजीर्णविसुचिकाथयी पछेवैद्यअनेक औषधकरी।व
गीकरीनेनिरोगीकीधो वलतुंवैद्यकह्युं केहवेआम्रफलखावानो मरणपामनो एमकही
नेवैद्यचाल्यो राजायेंपणपोतानादेशमांथी आंबानाववनकढावीनाख्या हवेकोइक
दिवसराजा आवेदेनिकल्यो नित्यपूर्वकअश्वें अपहर्यो एकवायवान अनेराजावहुजण
घणुंदूरवेगें किंचितयटवीमांजइयडयो तेन्यनवपाठजगरहुं राजानथान वडनीचे अ
स्वयीउतरी आंबानीछायायेंबेठो तेत्यांबानेफलअभयथायेंखी राजानेघणादिवसे अ
भिलाषथयो प्रधानेघणुवार्यो तोपण तेकजखायुं एटलेतत्काल मृत्युअवस्थानुंलक्ष
णथयो वयुंथोडुंवाजाणो तेमतेराजा आम्रनाम्हाडेलुब्ध्योथको प्रधानेवार्योथकोपण
नरहे फलखाइ राजा जीवितव्यनी आशानजीने मरणांतदशाभोगवाम्यो तेमकोइक
विषयलुब्धकजीव विषयने वशथयो जिनाज्ञाउल्लंघनकरी कामभोगानुंभवथी
संयम अने मनुष्यजन्म बेहुहारीने पछे पश्चात्ताप करशे.

हवेपांचमुंवणिकनु दृष्टांतकहेछे एकवणिकनेत्रणपुत्रहता तेत्रणेनेहजार हजार सोनैया थापणआपीनेकह्युजे एटलाद्रव्यंतमेव्यापारकरीने अवधिउपरेआववु हवे तेत्रणेजण नीमे नीमे मूललेइने जूदेजूदेनगरेचाल्या तेमापहेलोनाइसर्वव्यसनरहित अल्पव्ययकरतो थको व्यापारकरवालागोतेमा घणोकमाणु अनेबीजो हजारसोनै याकायमराखीने लाभआवेतेवावरे एरीतेंते मूलद्रव्यनेराखीरह्यु अनेत्रीजेव्यापारकी धुनहीं अनेवेश्यादिकनाव्यसनमा सर्वमूलद्रव्यवावरीनाख्यु अनुक्रमेंतेत्रणेजण पो तानाघरेंआव्या तेहोनुव्यतिकरजाणीने त्रीजापुत्रने मूलनीमेपणनराख्योमाटे पि तायें घरथीबारकाढीमूक्यो लोकमानिंदनिकथयो दासपणुपाम्यो जेमतेत्रीजोपुत्र नीमेमूननेहारीने निंदाअवस्थापाम्यो तेमआत्माविषयलुब्धथको पूर्वजन्मपुण्यरूप मूल नीमेहारीने जन्मातरदुर्गतिना दुःखपाम्योथको घणुशोचपामेछे

हवेछठो शाकटनु दृष्टांतकहेछे जेमकोइक गाडानुवाहक सम विषम मार्गेजाणतो थको पण विषममार्गे गाडानेलेइगयो पछेधुसरूभागेथके शोचकरवामाड्यु तेमइ हांपण जीवपुण्यपापादिक मार्गनेजाणतोथको पण प्रमादना परवशपणाथकी कु मार्गे चालनो कुगतीमांपडसे तेवारेशोच पामसे

हवेसातमु भिक्षुकनु दृष्टांतकहेछे कोइकगामडीआनो रहेवासी पुरुषदारिद्रेंपरा जयथोथको देशांतरेंजइ भिक्षामांगे पणपुण्यरहितपणाथकी भिक्षानपाम्यो तेवारे फरीतोवातो थकतरफचालतानिकल्यो मार्गमांकोइकगामे पाण पाटकपाडो एकदेवनदे तेमां रात्रेजइसुतो तेदेव तमांथी एकचित्रवचित्रेकुंभकुंनहाथमालेइ निकल्यो पछेएक पाहुंपणनोकरी घडानेरहेवानागो लेकुंनइनामदिरकर एटलेतिहां मदिरथयु एम नि भोगपदार्थ भोगमामग्रीमरेकीरी पछेस्त्रीसहित रात्रेभोगभोगवी प्रभातेसर्व स हर्यु तेदरीने भिक्षुकेंचितव्युं जेयाजनगणदु फोकट पृथ्वीमाभम्यो हवेजोढुएसि वनसेवुतो मारीमनेआश्रयाकने एमचितवीतें पाणनीसेवाकरी एकदिवसेते पाणप सन्नथइने तेनुमुमांगेछे तेवारेंभिक्षुबोल्यु जेताहरापसायथीहुपण एहवोभोगपाहु पाणेकुंभनुगमने गमतो एकुंभनेइला अनेगमेतो एकुंभप्रतिष्टानी विद्यालेइजा तें वारे भिक्षुकेंबोल्यो जेहमामीविद्यातो कष्टकरीसाधु तेवारेफले तेमाटेविद्यामिद्ध गमें तेदिनमने आपो तोरूडमिगारिनान भोगसिद्धिपामु पछेतेपाणेघडोआप्या ह वेते नदीओरडलेइने घरआव्यो घटनेप्रतापें उचजघरनीपजावी विविधभोगसामग्री मेनवी घणानामदंडकुटुंबसहित मनोवांछित विलास भोगवशलागो पोताना सज्ज नादिकने घेरीदमुद आजीविकाना उपाय सर्वमूकाव्या ढोरप्रमुखचतुष्पद सर्वनो

डीमूक्या एकदिवशे ते ग्रामीणमद्यपाने शकटोयऽने मनमांहर्षधरतो तेविद्याकुंभ खांधाऽपरलेऽने नाचवालागो मद्यपानना परवशपणायकी घटपडीने भांगीगयो तेथी विद्याये करेलुं वैभव सर्वमटीगयो पछेग्रामीणकुटुंबसहित आजीविकायें दुःखीथयोथको शोचकरवालागोके हाहाऽतिखेदे जोमेघटनिछिनी विद्यालीधीहती तोसुखीथात एरीते जेमतेग्रामिकभिक्षु परिभ्रटनकरतां दैववशात् कामकुंभपामिने वलीमद्यपाननी परवशताथकी कुंभभागीनाखीने विद्यानुशोचपाम्यु तेमएजीवपण दुर्लभ जिनधर्म पामिने प्रमादपरवशताथी धर्महारीने कुगतीयेंगयोथको धर्मसा मग्रीविना शोचपामे एतातदृष्टांतना संबंधजाणवा तेमांपहेलापांचदृष्टांतलो श्रीउ त्तराध्ययनना सातमां अध्ययनथी तथाछठोदृष्टांत पांचमांअध्ययनथी अने सा तमोदृष्टांत छठाअध्ययनथी लख्युंछे श्लोकमां आद्यशब्दकह्योछे तेथीबीजापण द रिद्रिकुटुंबादिक एहवादृष्टांत घणाछे तेग्रंथांतरथी जाणवा.

पतंगभृंगेणखगाहिमीनद्विपद्विपारिप्रमुखाः प्रमादैः ॥ शोच्या यथा स्युर्मृतिबंधदुःखैश्चिरायभावी त्वमपीति जंतो ॥ १४ ॥

अर्थ॥हवेवली ग्रंथकार प्रमादीजीवने दृष्टांतेकरी भावीदुःखदेखाडेछे हेआत्मा जेम पतंगीयो तथा भमरो मृग तथा खगके० पारेवाप्रमुखपक्षी तथासर्पअने माछलो तथा हस्तिव्याघ्रइत्यादिक सर्वजीवते प्रमादजे शब्दादिकविषय तेहनावशथकी मरणसंबं धीदुःखेकरीने शोचनीयथायछे तेमांपतंगते नेत्रनाविषयथी दीपशिखायेंमोह्योथको मृत्युपामेछे अने भमरोघ्राणेंद्रियनाविषयथकी कमलमध्येमुआइमरेछे मृगशब्दविष यथी नादनुमोह्यो पाराधीथकी मरणपामेछे पक्षीजालप्रमुखकणनेलोभें रसनेंद्रियना वशथकी जालमांपडेछे सर्पकानना विषयथी मद्धुअरनानादनोमोह्यो बंधनपामेछे अने मत्स्य बडिशनामांसनीलालचे रसनेंद्रियना वशथीमरेछे हस्तिहस्तणीनामोहथी स्प र्शनेंद्रियनावशे बंधनमरणादिपामेछे व्याघ्रपिंजरामांरहेला बोकडानामांसनीला लचें रसनेंद्रियनावशेमृत्यु बंधनादिकपामेछे इत्यादिकबीजापण चित्राप्रमुखना दृ ष्टांतजाणवा तेमाटेहेआत्मा तुंपणतेपतंगादिकनीपरें प्रमादनावशथकी चिरकालल गें शोचनीय थाइस. ॥ १४ ॥

पुरापि पापैः पतितोसि दुःखराशौ पुनर्मूढ करोषि तानि ॥ मज्ज न्महापंकिलवारिपूरे शिला निजे मूर्ध्नि गले च धत्से ॥ १५ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रमादनुं पापरूपपणुंदेखाडी तेहनोपरिहारकरेछे हेमूर्खतुंपूर्वेपण पा

पेकरीनेजडु खसमूहमांपडयोठे अनेफरीपण तेहिजपापनेकरेठे तेथीतुरणाकदिवस
हितजलनापूरमा बुडतोथको पोतानामस्तकनेविषे अने गळानेविषे शिलाधरेठे॥१५

पुन पुनर्जीव तवोपदिश्यते बिन्नेपि दु खात् सुखमीहसे चेत् ॥
कुरुष्व तत्किंचन येन वांछित नवेत्तवास्तेऽवसरोयमेव यत ॥१६॥

अर्थ ॥ हवेजीवने प्रमादपरिहारनुएहिजअवसरठे तेकहेठे हेजीवतुजने फरीफ
रीने उपदेशकहुंबु केजोतुडु खथीबीहेठे अनेसुखनेराढेठे तोतु एवुकाइक सुकृत
करके जेथकीताहरु वांछेलुसुख तुजनेमिले अनेतेसुकृतकरवानो अवसर एहिजठे
हांफरीनेउपदेशदीधो माटेपुनरुक्तदोपनही यडुक्त सज्झायझाणतवउं सहेसुउवएस
थुईपयाणेसु ॥ सतगुणकित्तणेसु न हुति पुणरुत्तदोसाउं ॥ १६ ॥

धनांगसौख्यस्वजनानसूनपि त्यज त्यजेक न च धर्ममार्हतं ॥
नवति धर्मांद्धि नवे नवे थिता न्यमून्यमीन्नि पुनरेप डुर्लन्न ॥१७॥

अर्थ॥हवेधर्मनीडुर्लनतादेखाडीने धर्मावसरनेज दृढकरेठे हेनीवतु धनतथाशरीर
अनेसुख तथास्वजनकुटुंब तथाप्राणजे जीवितव्यपणु तेसर्वनोत्यागकर पणएकश्रीस
र्वज्ञप्रणीतजे धर्म तेहनेकोइवारेपण त्यजीशनही केमकेएधनादिक सर्ववस्तुतेधर्मथकी
जतुजनेनवनवनेविषे वांछितमलशे पणधनादिकेकरी जिनोक्तधर्ममलवु डुर्लनठे॥१७

दु ख यथा बहुविध सहसेप्यकाम काम तथा सहसि चेत्करुणादिन्नांवैं॥
अल्पीयसापि तव तेन नवातरेस्या हात्यतिकी सकलदु खनिवृत्तिरेव १८

अर्थ॥हवेआत्माने अकामडु खनासहेवाने बदले सकामडु खसहेवुते नलुएमकहे
ठे हेआत्मातुजेम अकामके०इछारहित परवशथको बहुविध डुख तृषा वध बधनादि
कडु खप्रतेसहेठे तेमज जोकरुणादिक जेमैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थ एपरिणामेकरी
ने सकामके० निर्जरानीबुद्धियें तुडु खसहनकरे तो तेवायोडापणडु खने सहवेकरीने
तकीके० पुन प्राडुर्नावरहित एहवी समस्तडु खनी निवृत्तिते नि
पद पामे ॥ १८ ॥

कर्मसु पापकेष्वरे यदाशया शर्म न तद्विनानित ॥
च विनश्वर कृतं बिन्नेपि किं दुर्गतिदु खतो न हि॥१९॥

जीने आत्मापापकर्ममां निपुणताकरेठे तेआश्रीकहेठे अरेमू
ायेंकरी पापनाउत्पादकजेकर्म तेहनेविषे प्रगल्नसेके० महा
ाजनादिकनासुख तो प्राणितके० जीवतव्यविना नोगवायनही

अने तादृशो जीवतव्यतो शीघ्रके० उतावळुं विनाशशीलछे एवीरीतेजाणतोथकोपण तुं दुर्गतीनादुःखथी केमबीहितोनथी ॥ १९ ॥

कर्माणि रे जीव करोपि तानि यैस्ते भवित्र्यो विपदो ह्यनंताः ॥
ताभ्यो भिया तद्दधसे ऽधुना किं संभाविताभ्योपि भृशाकुलत्वं॥२०॥

अर्थ॥वळीप्रकारांतरेतेहितकहेछे हेजीवजोतुं तेहवाज हिंसा मृपावादादिककर्म करेछे जेकर्मेकरीतुजने अनंतिआपदाओथाशे तेवारेंहमणाजते आपदाओसंभारेथके रण अतिशेंभयेकरीने आकुळताकेमपामेछे जोपापनाफलजाणतोथकोपण तुंपापक र्मकरवानेप्रवर्त्तेछे तेवारेवळी नरकादिकनादुःखसांभळीनेसावास्ते भयपामेछे निश्चेंतु जनेतेदुःखभोगवाजपडशे एमांसंशयसुछे एभावार्थछे ॥ २० ॥

ये पालिता वृद्धिमिताः सहैव स्निग्धा भृशस्नेहपदं च ये ते ॥
यमेन तानप्यदयं गृहीतान् ज्ञात्वापि कि न त्वरसे हिताय॥२१॥

अर्थ ॥ वळीजीवने हीतार्थेनेविपेप्रेरेछे हेजीवजेस्वजन मित्रादिक तथापुत्रादिक तेपाळ्यापोष्या तथाजे तुजसाथेंवृद्धिपाम्या महोटाथया वळीतेतादृश अतिशयस्नेह पात्रथया तेहुनेपण यमराजायें निर्दयपणेग्रस्या तेजाणीनेपणतु आत्महितकरवानेके मउत्तमाळथतुंनथी केमके तेहुनेजो यमेंग्रस्यतो तुशीरीतेस्थिररहिस एभावार्थ ॥२१॥

यैः क्लिश्यसे त्वं धनबंध्वपत्य यशःप्रभुत्वादिभिराशयस्थैः ॥
कियानिह प्रेत्य च तैर्गुणस्ते साध्यः किमायुश्च विचारयैवं ॥२२॥

अर्थ ॥ हवेजेतुक्लेशसहेछे तेहथीतुजने काइगुणनथी तेकहेछे हेआत्मनतुं आ शयस्थके० केवळकल्पिनमात्र एहवाजेधन बंधु स्वजन अपत्यके० संतान तथा य श कीर्ति अने प्रभुत्व स्वामिपणुं इत्यादिकनिमित्तेकरी क्लिश्यसेके० कष्टभोगवेछे ते धनस्वजनादिकेंरी तुजनेइहभवे तथा परभवें केटलुंक गुणसाधशुंछेएटले ते तुजने सुंगुणकरसे अनेआजपोते केटलुंकछे एमविचारी धनादिकनुं ममत्व करतां करतांज आयुष पुरोथइजाशे अने भवांतरेंकोइपण ताहरेकामेआवसेनही ॥ २२ ॥

किमु मुह्यसि गत्वरैः पृथक् कृपणैर्बंधुवपुःपरिग्रहैः॥ विमृश
स्व हितोपयोगिनो ऽवसरेऽस्मिन् परलोकपांथ रे ॥ २३ ॥

अर्थ॥ हेपरलोकेजनार पंथीजीव तुं कृपण दीन शरणदेवाने असमर्थ एहवा अ ने पृथगत्वरके० जुदाजुदावेगइजाय एहवाजे बंधु स्वजन तथा वपुजेशरीर तथा ध नधान्यादिक परिग्रह तेणेकरी सुंमुंजायछे एकोइपण तादृशनाथे ॥

थने माटेएधर्मकरवायोग अवसरनेविषे पोतानाहितोपयोगी परलोकना सहायभूत एह्याजे ज्ञानादिकगुण तेहोने चित्तमाराख ॥ २३ ॥

सुखमास्से सुखं शेषे भुंक्षे पिबसि खेलसि ॥ न
जाने त्वग्रत पुण्यैर्विना ते किं भविष्यति ॥ २४ ॥

अर्थ ॥ हवे दमणातुसुखेविलगेछे पण आगलताहरी सीगतिथासे तेकहेछे हेआत्मातु दमणापूर्वोपार्जित पुण्यफलना उपायथी सुखसुखेबेशीरहेछे तथासुखेनोजनकरेछे सुखेमद्यादिकपानकरेछे सुखेद्यूतादिकेरमेछे पणआगल परभवे तुजनेपुण्यविना सुथानुंछे तसुनथीनाणतो एटलेपुण्यविना घणुंजडखीथइस ॥ २४ ॥

शीतात्तापान्मक्षिकाकत्तृणादि स्पर्शाद्युत्थात्कष्टतोल्पाद्बिभेषि ॥ ता
न्नाश्चिन्ति कर्मभि स्वीकरोषि श्वभ्रादीना वेदना धिग् धिय ते॥२५॥

अर्थ ॥ थोडोकष्टथी बीहतोथको घणुंकष्टअंगीकारकरेछे तेकहेछे हेआत्मातु टाढथी तापथी तथामाखीप्रमुख तृण मालप्रमुखना स्पर्शादिकथी उपनुंजे अपमात्रकष्ट तेथीबीहेछे तापरथापने अनएवापापकर्मकरीने श्वभ्रके० नरकादिकना प्राप्तीनी मलादेनाओ तेप्रतेअंगीकारकरेछे ताताहरीबुद्धिने धि कारछे ॥२५॥

घ्नन्सि कषायैः क्वचन प्रमादैः कदाग्रहैः क्वापि च मत्सराद्यैः ॥ आ
त्मानमात्मन् कलुषीकरोषि बिभेषि धिङ् नो नरकादधर्मा ॥२६॥

अर्थ ॥ मनीनभिरसेछे हेआत्मातु क्रियाक परीषहादिकमा कषायेकरीने वनी क्रियाक क्रियानुष्ठानादिकनेविषे प्रमादेकरीने मनीक्रियाक उपदेशादिकमा कदाग्रहकरीने क्रियाकगुणवननी अनुमोदनानेविषे मत्सरादिकेकरीने पोतानीआत्माने मलीन करेछे तोनु अधर्मनिवर्ती नरकथीबीहितोनथी माटेतुजने धि कारछे ॥ २६ ॥ इति श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे सामान्यतो वैराग्योपदेशाख्यो दशमोधिकार समाप्त

अथ धर्मशुध्युपदेश ॥ भवेकदापायविनाशनाय तमज्ञ धर्मं कलुषीकरोषि ॥ प्रमा दमानोपधिमत्सरादिभिर्मिश्रित ह्यौपधमामयापहं ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवे धर्मशुद्धिउपदेशनामें इग्यारमो अधिकारकहेछे तिहांप्रथम धर्मनीशुद्धता कहेछे जेधर्मने भवके० संसारनेविषे अपायजे जन्ममरणादिक तेहना विनाशकरवाने मलपरिहार माहारधर्मने हेमूर्खआत्मा प्रमादजे मद्यादिक तथामान अहंकार उपधि कपट तथामत्सर इत्यादिककरीने तु मलीनकरेछे हवेतेउपर दृष्टांतकहेछे जिमरोगनेदूरके० निवर्तवाभणी आमनापहरनउत्पात् एटले निरवद्यभेषजमिश्रित

जे औषध तेकांइरोगनिवारकनहोय अनेतेमजतेऔषधनीपरें धर्मपणजोप्रमादादि कें मिश्रितहोयतो संसारना अपायजे दुःखतेनो निवारकनहोय ॥ १ ॥

यतः॥ शैथिल्यमात्सर्यकदाग्रहक्रुधोनुतापदंभाविधिगौरवाणि च ॥
प्रमादमानौ कुगुरुः कुसंगतिः श्लाघार्थिता वा सुकृते मला इमे ॥२॥

अर्थ ॥ हवेधर्मनेविषे मलसरिखाजेटलादोषछे तेटलापूर्वाचार्यना वचनथीदेखाडे छे सुकृतजेधर्मकार्यतेमां शैथिल्यके० धर्मनेविषे अनादरता मात्सर्यके० गुणवंतनेविषे द्वेषनुंधरवुं तथाकदाग्रहके० जूठावचननुंहठ क्रुधके० क्रोध वली अनुतापके० सुकृतकरीनेपछे हाइनिर्वेदमें फोकटदानदीधुं फोकटतपस्याकीधी इत्यादिकपश्चात्तापनुं करवुं तथादंभके० कपट अने अविधिके० शास्त्रोक्तविधियें रहित क्रियानुंकरवुं तथागौरवके० हुंमहार्धमिष्ट इत्यादिक महोटाइअनुचितवदुं वलीप्रमादजे धर्ममां असावधानपणुं अने मानजेअहंकार वलीकुगुरुजे लोहशिलातुल्य अने कुसंगतिजे उत्सूत्रभाषी एहवामिथ्यात्वी प्रमुखनोसंग तथा श्लाघार्थिताके० लोकनामुखथी पोतानी कीर्तिनुंवांछवुं एटलाप्रकारेंकरी धर्ममलीनथाये धर्मनुंयथोक्तफलनथाय ॥ २ ॥

यथा तवेष्टा स्वगुणप्रशंसा तथा परेषामिति मत्सरोज्झी ॥
तेषामिमां संतनु यल्लभेथास्तां नेष्टदानादिविनेष्टलाभः ॥३॥

अर्थ ॥ हवेअद्.त्मापोतानागुणनी प्रशंसावांछेछे तेआश्री उपदेशछे हेआत्माजेम तुजने पोतानागुणनी प्रशंसावल्लभछे तेमपरजे अन्यजन तेहने पोताना गुणनीप्रशंसावल्लभछे एहवुंजाणीने मत्सररहितथको तेअन्यजननी इमांके० गुणनीप्रशंसाप्रतें विस्तारीनेकहे जमतुपणतेप्रशंसाप्रतेंपामें केमके कोइने वांछितदानदीधाविनापोताने पण वांछितलाभनथाय एटलेपारकागुणनी प्रशंसाकरीयें तो पोतेपण प्रशंसनीयथैये

जनेषु गृह्णत्सु गुणान् प्रमोदसे ततो भवित्री गुणरिक्तता तव॥गृह्णत्सु
दोषान् परितप्यसे चरे भवंतु दोषास्त्वयि सुस्थिरास्ततः ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेकेटलाक काव्यनेविषे गुणप्रशंसानीवांछायकी अवगुणदेखाडेछे हे आत्माजोताहरागुण लोकेंग्रहणकरायका तुंहर्षपामेछे तोतेहर्षपामवाथी ताहरे गुणनी रिक्तताथासे अनेजोलोकें अवगुणग्रहणकरायकाछतेतुं परितापके० खेदपामेछे तो तेखेदपामवाथी ताहराविषे अवगुणते निश्चलथइरहेसे तेमाटे गुणकह्याथी हर्ष अनेदोषकह्याथी खेद एवेंकुवाना तुंकरीसनही ॥ ४ ॥

प्रमोदसे स्वस्य यथाऽन्यनिर्मितै स्तवैस्तथा चेत्प्रतिपंथिनामपि ॥
विगर्हणे स्वस्य यथोपतप्यसे तथा रिपूणामपि चेत्ततोसि वित्॥५॥

अर्थ ॥ हेआत्मातु जेमलोकनामुखें पोतानागुण स्तवसांजळीने प्रमोदपामेछे तेम शत्रुनापण गुणस्तवसांभळीने जोप्रमोदपामें अने पोताने विगर्हणे के० अवर्णवादे करीने जेमपरीतापकरेछे तेमजजो शत्रुनापण अवर्णवाद सांजळीने तुपरीताप करे तेवारे एम जाणियेजे तुझाताछो ॥ ५ ॥

अथवा ॥ स्तवैर्यथा स्वस्य विगर्हणैश्च प्रमोदतापौ जजसे तथा चेत्॥
इमौ परेषामपि तैश्चतुर्ष्वप्युदासतो वासि ततोऽर्थवेदी ॥६॥ इतिवापाठः

अर्थ ॥ वळी पाठांतरेकरी एहिजअर्थकहेछे हेआत्मातुजेम पोतानीस्तुतियेकरीने तथापोतानेविगर्हणेकरीने प्रमोदतापौके० हर्षअनेशोकप्रतेजजेछे तेमज पोतानी स्तवना तथा निंदा अने परनीस्तवना तथा परनीनिंदा एचारेनेविषेजो उदासताके० मध्यस्थनावनेजजे तेवारेतु अर्थवेदीके० परमार्थनुजाणछो एमजाणिवुं एकाव्य पहेलाकाव्यनु पाठांतरजाणवु ॥ ६ ॥

जवेन्न कोपि स्तुतिमात्रतो गुणी ख्यात्या न वह्व्यापि हितं परत्र च॥
तदिच्छुरीर्ष्यादिभिरायतिं ततो मुधाभिमानग्रहिलो निहंसि किं॥७॥

अर्थ ॥ हेआत्माकेवल एकजीस्तुतिमात्रथीज कोइगुणवतनथाय अनेवळी अ...तिकीर्तिजोघणीहोय तोपण तेथी कांइपरजववु हितनथाय तेमाटेपर...क एहवुजेतुते सुखाके० फोकट अभिमानेकरी घहेलोययो थको ई...जे उत्तरकाळ तेहने सावास्ते वगाडेछे एटलेईर्षा करवाथी तारो ...ायछे इतिजाव ॥ ७ ॥

...हिर्मुखा जना प्रमादमात्सर्यकुबोधविप्लुता ॥
...समान्यमू न्युपेक्ष्यशुद्धं सुकृतं चराण्वपि ॥ ८ ॥

...जीनकरेछे तेहनेकहेछे हेआत्मा प्रमादजे मद्य...
...ारकीसंपदानी अदेखाइ तथाकुबोधजे मि...
...के० पराजव्या एहवा बहिरमुखजे सचित्त...
...कते मलीमसके० महाआरंजादिके दू षत एह...
...णकोणनथीकरता अर्थात्मिथ्यात्वीलोकपण सर्वपो...

मंत्रप्रभारत्नरसायनादि निदर्शनादल्पमपीह शुद्धं ॥ दाना
र्चनावश्यकपोषधादि महाफलं पुण्यमितोन्यथाऽन्यत् ॥१२॥

अर्थ ॥ वलीप्रकारांतरे तेहिजकहेछे इहांश्रीजिनशासनमां दान देवपूजा आवश्य
क पोसहप्रमुखजे पुन्य तेथोडुपण शुद्ध दोषरहितकीधोहोयतो मंत्रजे जांगुलीप्र
मुख तथा रत्नजे सूर्यकांत चंद्रकांतादिक तथा रसायनजे पारादिक तेहनीपरे म
हाफलकारीथाय जेममंत्रथोडाअक्षरनुहोय तोपण विषप्रहारादिकनेटाळी महागुणक
रे तथासूर्यकांतादिक रत्नन्हानुहोयतोपण महाप्रकाशकरे अने रसायणथोडुपण म
होटारोगहरे तेमदोषरहितपुन्यजो थोडुहोयतोपण महाफलदायकथाय अनेतेहथी
विपरीतजे अशुद्धपुन्यकार्य तेअन्यथाके॰ घणुंहोयतोपण अल्पफलदायकथाय॥१२॥

दीपो यथाल्पोपि तमांसि हंति लवोपि रोगान् हरते सुधाया ॥
तृणं दहत्याशु कणोपि चाग्नेर्धर्मस्य लेशोप्यमलस्तथांहः ॥१३॥

अर्थ ॥ जेमदीपक अल्पके॰ न्हानोहोयतोपण अंधकारटाळेछे वलीजेम अमृ
तनो एकबिंदुमात्रतेपण सर्वरोगनेहरे वलीजेम अग्नीनुएककणीयुमात्रतेपण तृण
नेबालीनाखे तेमनिर्मलदोषरहित एहवोधर्मनु लेशमात्रतेपण पापनेटाळे ॥१३॥

भावोपयोगशून्या कुर्वन्नावश्यकी क्रिया सर्वा ॥
देहक्लेशं लभसे फलमाप्स्यसि नैव पुनरासां ॥१४॥

अर्थ ॥ हवेसर्वक्रियानी सफलताते भावसहितकरवाथीजहोय तेकहेछे हेआ
त्मातु भावजे श्रद्धा तेहनाउपयोगेकरी शून्यके॰ रहित एहवासर्वए अवश्यकरवा
योग्य जे पडिकमणु पडिलेहणप्रमुखक्रिया तेप्रते करतोथको पणतेथीकेवल शरीरनं
क्लेशमात्रउपजाववु तेहिजफलपामेछे पणतेक्रियानुं मुख्यफलजे मोक्षलक्षण तेनं
पामनहीजपामे केमके भावथकी शून्यक्रियाजो घणीकरीतोपण निःफलथाय ॥१४
इतिश्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे धर्मशुध्द्युपदेशाख्य एकादशोऽधिकार समाप्त ॥ ११ ॥

अथ श्रीदेवगुरुधर्मशुद्धिमधिकृत्य किंचिदुपदेश ॥

तत्वेषु सर्वेषु गुरुः प्रधानं हितार्थधर्मा हि तदुक्तिसाध्या ॥
श्रयस्तमेवेत्यपरीक्ष्य मूढ धर्मप्रयासान् कुरुषे वृथैव ॥१॥

अर्थ ॥ हवेबारमेंअधिकारे देव गुरु धर्म एत्रणतत्वनीशुद्धिकहेसे तिहांप्रथमतो
जो शुद्धगुरुमले तोज शुद्धदेव तथाशुद्धधर्मपामियें तेमाटेप्रथम गुरुतत्वनी शुद्धि
कहेछे हेआत्मासर्वतत्वमां मुख्यतत्वते गुरुछे केमके हितार्थके॰ मोक्षनेअर्थे धर्म

थवोहोयतो ते गुरुनावचनथकीलधाय तेमाटेतुं मूढथको परीक्षाकस्याविनाज गु
ने आश्रयतोथको धर्मनेनिमित्तेजे प्रयासकरेछे तेवृथाके० फोकटछे ॥ १ ॥

नवी न धर्मैरविधिप्रयुक्तै र्गमी शिवं येषु गुरुर्न शुद्धः ॥
रोगी हि कल्पो न रसायनैस्तै र्येषां प्रयोक्ता भिषगेव मूढः॥२॥

अर्थ ॥ हवेगुरुअशुद्धहोयतोधर्मपण अशुद्धथाय तेकहेछे नवीजे संसारीजीव
तेणे अविधियेंकीधाएहवाजे दानादिकधर्म तेहथीजीव मोक्षगामीनथाय केमकेजे
धर्मनेविषे शुद्धके० निर्दोषपणुं नथी तेधर्मवृथाछे तेउपरदृष्टांत कहेछे जेमरसायनतुं
करनार वैद्यते गुणागुणनुं अजाणमूर्खहोयतो रोगीपुरुष ते रसायनेकरी निरोगीन
थाय तेमइहांरोगी तेआत्मा औषधतेधर्म मूर्खवैद्य ते कुगुरु जाणवो ॥ २ ॥

समाश्रितस्तारकबुद्धितो यो यस्यास्त्यहो मज्जयिता स एव ॥
ओघं तरीता विषमं कथं स तथैव जंतुः कुगुरोर्भवाब्धिं ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ हवेकुगुरुअने कुतारकनुंदृष्टांतकहेछे जेप्राणियें तारकबुद्धियेंकरीने तार
कनेआश्रयोछे अनेतेतारकज आश्रीतप्राणीने बुमाडनारहोय तोतेप्राणी विषमदु
स्तर एहवो उघजे समुद्रनापाणीनो प्रवाह तेशीरीतेंतरसे तेमज जेथकी तरवानीआ
शाराखियें तेहिज जेवारें वोडे तिवारें समुद्रनुं पारते केमपामियें तेमज कुगुरुथी
भवसमुद्रपण जाणवुं केमके जेगुरुप्रतें तारकजाणीने संसारसमुद्र तरवानी आशा
यें तेहने आश्रयियें अनेतेगुरुतो उन्मार्गने देखाडवेकरी आश्रीतप्राणीने संसारसमु
द्रमां वोडे तेवारें ते प्राणी संसारसमुद्रनो पारकेमपामे एनावार्थछे ॥ ३ ॥

गजाश्वपोतोक्षरथान् यथेष्टपदाप्तये भद्र निजान् परान् वा ॥
भजंति विज्ञाः सुगुणान् भजैवं शिवाय शुद्धान् गुरुदेवधर्मान् ॥४॥

अर्थ ॥ तेमाटेशुद्धदेवगुरुधर्मने आदरवुंतेकहेछे जेमविज्ञजे निपुणपुरुष तेवा
छितस्थानके पहोचवानेअर्थे पोताना अथवापारका हाथी घोडा तथा वाहण उठ व
लद रथ तेआपआपणेगुणेसहितसुलक्षणाजोइने आदरे केमकेजो निर्लक्षण वाहन
होयतो तेहथीवांछित स्थानकेपहोचायनही माटेहेसरलप्राणी एरीतेंतुंपण मोक्षस्था
नक पामवानेअर्थे शुद्धगुणोपेत एवाजे देव गुरु धर्मतेप्रतेंभज जेथकीमोक्षपदपामे

फलाद्वृथा स्युः कुगुरूपदेशातः कृताहि धर्मार्थमपीह सूद्यमाः ॥
तद्दृष्टिरागं परिमुच्य भद्र हे गुरुं विशुद्धं भज चेद्धिताथ्यसि ॥५॥

अर्थ ॥ हवेकुगुरुनाउपदेशथाधर्म फलदायकनहोय तेकहेछे इहांश्रीजिनशासन

मंत्रप्रभावरत्नरसायनादि निदर्शनादल्पमपीह शुद्धं ॥ दाना
र्चनावश्यकपौषधादि महाफलं पुण्यमितोन्यथाऽन्यत् ॥१२॥

अर्थ ॥ वलीप्रकारांतरे तेहिज कहेछे हेआत्मा श्रीजिनशासनमां दान देवपूजा आवश्य
क पोसहप्रमुखजे पुण्य तेथोडुंपण शुद्ध दोषरहितकीधोहोयतो मंत्रजे जाणुनीप्र
मुख तथा रत्नजे सूर्यकांत चंद्रकांतादिक तथा रसायनजे पारादिक तेहनीपरे म
हाफलकारीथाय जेममंत्रथोडाअक्षरनुहोय तोपण विषप्रहारादिकनेटरी महागुणक
रे तथासूर्यकांतादिक रत्नन्हानुहोयतोपण महाप्रकाशकरे अने रसायणथोडुंपण म
होटारोगहरे तेमदोषरहितपुण्यजो थोडुहोयतोपण महाफलदायकथाय अनेतेहथी
विपरीतजे अशुद्धपुण्यकार्य तेअन्यथाके० घणुहोयतोपण अल्पफलदायकथाय॥१२॥

दीपो यथाल्पोपि तमांसि हंति लवोपि रोगान् हरते सुधाया ॥
तृणं दहत्याशु कणोपि चाग्नेर्धर्मस्य लेशोप्यमलस्तथाद्यं ॥१३॥

अर्थ ॥ जेमदीपक अल्पके० न्हानोहोयतोपण अंधकारटालेछे वलीजेम अमृ
तनो एकबिंदुमात्रतेपण सर्वरोगनेहरे वलीजेम अग्नीनुएककणीयुमात्रतेपण तृण
नेबालीनाखे तेमनिर्मलदोषरहित एहवोधर्मनु लेशमात्रतेपण पापनेटाले ॥१३॥

भावोपयोगशून्याः कुर्वन्नावश्यकीः क्रियाः सर्वाः ॥
देहक्लेशं लभसे फलमाप्स्यसि नैव पुनरासां ॥ १४॥

अर्थ ॥ हवेसर्वक्रियानी सफलताते भावसहितकरवाथीजहोय तेकहेछे हेआ
त्मातु भावजे श्रद्धा तेहनाउपयोगेकरी शून्यके० रहित एहवासर्वए अवश्यकरवा
योग्य जे पडिक्कमणु पडिलेहणप्रमुखक्रिया तेप्रते करतोथको पणतेथीकेवल शरीरनं
क्लेशमात्रउपजाववु तेहिजफलपामेछे पणतेक्रियानु मुख्यफलजे मोक्षलक्षण तसं
धानहीनपामे केमके भावथकी शून्यक्रियाजो घणीकरीतोपण निःफलथाय ॥ १४

इतिश्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे धर्मशुध्युपदेशाख्य एकादशोऽधिकार समाप्त ॥ ११ ॥

अथ श्रीदेवगुरुधर्मशुद्धिमधिकृत्य किंचिदुपदेश ॥

तत्वेषु सर्वेषु गुरुः प्रधानं हितार्थधर्मा हि तदुक्तिसाध्याः ॥
श्रयंस्तमेवेत्यपरीक्ष्य मूढ धर्मप्रयासान् कुरुषे वृथैव ॥१॥

अर्थ ॥ हवेबारमेंअधिकारे देव गुरु धर्म एत्रणतत्वनीशुद्धिकहेछे तिहांप्रथमतो
जो शुद्धगुरुमलेतोज शुद्धदेव तथाशुद्धधर्मपामियें तेमाटेप्रथम गुरुतत्वनी शुद्धि
कहेछे हेआत्मासर्वतत्वमां मुख्यतत्वते गुरुछे केमके हितार्थके० मोक्षनेअर्थे धर्म

साधवोह्योयतो ते गुरुनावचनथकीतथाय तेमाटेतुं मूढथको परीक्षाकस्याविनाज गुरुने आश्रयतोयको धर्मनेनिमित्तेजे प्रयासकरेछे तेवृथाके० फोकटछे ॥ १ ॥

भवी न धर्मैरविधिप्रयुक्तै र्गमी शिवं येषु गुरुर्न शुद्धः ॥
रोगी हि कल्पो न रसायनैस्तै र्येषां प्रयोक्ता भिषगेव मूढः॥२॥

अर्थ ॥ हवेगुरुअशुद्धहोयतोधर्मपण अशुद्धथाय तेकहेछे भवीजे संसारीजीव तेणे अविधियेंकीधाएहवाजे दानादिकधर्म तेहथीजीव मोक्षगामीनथाय केमकेजे धर्मनेविषे शुद्धके० निर्दोषपणुं नथी तेधर्मवृथाछे तेउपरदृष्टांत कहेछे जेमरसायननुं करनार वैद्यते गुणागुणनुं अजाणमूर्खहोयतो रोगीपुरुष ते रसायनेकरी निरोगीन थाय तेमइहांरोगी तेआत्मा औषधतेधर्म मूर्खवैद्य ते कुगुरु जाणवो ॥ २ ॥

समाश्रितस्तारकबुद्धितो यो यस्यास्त्यहो मज्जयिता स एव ॥
ओघं तरीता विषमं कथं स तथैव जंतुः कुगुरोर्भवाब्धिं ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ हवेकुगुरुअने कुतारकनुंदृष्टांतकहेछे जेप्राणियें तारकबुद्धियेंकरीने तारकनेआश्रयोछे अनेतेतारकज आश्रीतप्राणीने बुमाडनारहोय तोतेप्राणी विषमदुस्तर एहवो उघजे समुद्रनापाणीनो प्रवाह तेशीरीतेंतरसे तेमज जेथकी तरवानीआशारावियें तेहिज जेवारें बोडे तिवारें समुद्रनुं पारते केमपामिये तेमज कुगुरुथी भवसमुद्रपण जाणवुं केमके जेगुरुप्रतें तारकजाणीने संसारसमुद्र तरवानी आशायें तेहने आश्रयियें अनेतेगुरुतो उन्मार्गने देखाडवेकरी आश्रीतप्राणीने संसारसमुद्रमां बोडे तेवारें ते प्राणी संसारसमुद्रनो पारकेमपामे एभावार्थछे ॥ ३ ॥

गजाश्वपोतोक्षरथान् यथेष्टपदाप्तये भद्र निजान् परान् वा ॥
भजंति विज्ञाः सुगुणान् भजैवं शिवाय शुद्धान् गुरुदेवधर्मान् ॥४॥

अर्थ ॥ तेमाटेशुद्धदेवगुरुधर्मने आदरवुंतेकहेछे जेमविज्ञजे निपुणपुरुष तेवांछितस्थानके पहोचवानेअर्थे पोताना अथवापारका हाथी घोडा तथा वाहण उठ वलद रथ तेआपआपणेगुणेसहितसुलक्षणाजोइने आदरे केमकेजो निर्लक्षण वाहन होयतो तेहथीवांछित स्थानकेपहोचायनही माटेहेसरलप्राणी एरीतेंतुंपण मोक्षस्थानक पामवानेअर्थे शुद्धगुणोपेत एवाजे देव गुरु धर्मतेप्रतेंभज जेथकीमोक्षपदपामे

फलाद्वृथा स्युः कुगुरूपदेशतः कृताहि धर्मार्थमपीह सूद्यमाः ॥
तद्दृष्टिरागं परिमुच्य भद्र हे गुरुं विशुद्धं भज चेद्धितार्थ्यसि ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेकुगुरुनाउपदेशथाधर्म फलदायकनहोय तेकहेछे इहांश्रीजिनशासनने

यथाविरुद्धयमिते मिथ्यात्वी कुमतिप्रमुख तेह्नीमित्राइते विवाद्व्यापार प्रमुखेंकरी परिचयकरवु तथापिताप्रमुखनी अवगणना अनेपरने कुमालेख कुमानामा कुडा माप कुडातोलप्रमुखेंकरीने ठगवु एटलासर्वप्रकारेकरी पुरुषनेआपदाउपजे ॥ १ २॥

नत्त्यैव नार्चसि जिन सुगुरोश्च धर्म नाकर्णयस्यविरत विरतिर्न धत्से॥
सार्थं निरर्थमपि च प्रचिनोष्यघानि मूल्येन केन तदमुत्र समीहसे श॥१३

अर्थ॥ वलीप्रकारांतरेकहेले हेआत्मातु नक्तियेंकरी जिनपूजाकरतोनथी अने कदापिपूजेछेतोपण कुलकर्मादिक परवशपणायकी पूजेछे पणनक्तिथीपूजतोनथी तथासद्गुरुस्पासेथी धर्मसांनलतोनथी तथानिरतर अढारपापस्थानक पन्नरकर्मादान प्रमुखथीमवरनुकरवु इत्यादिकविरतीपणु तेपणनथीआदरतो तथासार्थककेण्पोताने अथवापराकुटुंबादिकनेअर्थं अनेनिरर्थककेण्स्वार्थविनापण अपध्य अनाचरित पापोपदेश हिंसाप्रदान प्रमादाचरित एपाचप्रकारेकरी कारणविना पापनेमेलवेछे तोपरलोकेंतुं शामूलेंकरी सुखनी वाञ्छाकरेछे इहां मूलरूपते पुण्यजाणवु ॥ १३ ॥

चतुष्पदे सिंहइव स्वजात्येंमिलन्निमास्तारयतीहि कश्चित्॥
सदैव तैर्मज्जति कोपि डुर्गे शृगालवच्चेत्यमिलन् वर स ॥१४॥

अर्थ ॥ हवेसुगुरुनेसिंहनीउपमा अनेकुगुरुने सीयालनीउपमाकहीने उपदेशेछे पोतानीजातीनाजे चतु पदमृगप्रमुख तेसाथेमल्या सिंहनीपरे एसंसारमाजे सद्गुरु तेपोतानी जातीना नव्यपचेंडियसंज्ञीमनुष्यइत्यादिकसाथे मल्योथको आश्रीतजीवनेंतारे जेमसिंहनिजाश्रितचतु पदने कूपगर्त्तादिकथीतारे तेमसुगुरुपण निजाश्रितनव्यजीवने संसारसमुद्रथीतारे अनेकुगुरुतेसीयालनीपरे स्वजातीयजे मनुष्यादिक अनेविजातीयजे चतु पद तेहनेंसाथेंनेडूबइने डुर्गजेनरकप्रमुख वलीडुर्गजे कृपादिकतेमांबुडाडे तेमाटेंजकुगुरुतेनमल्योथकोजसारा जेमपचाख्यानमां कोइकवनमा वीनावाघसिंहादिकनुनयहतोनथी अर्थं सर्वचतु पदमली एकवलवतसिंहने गजाकरीथाप्यो अनेसर्वचतु पद तेहनीसेवाकरतारहतागा एकदिवसेतेवनमां अग्नीलागी तेवारेतेमसर्वचतु पद सिंहनेसरणेगया तेसर्वनेलिहेपोताने पुठबेसाडगामी एकफालेकरी कोइकमहानदी उतरीरहेलेपार पहोंचाडया वलीकेटलाकदिवसे दावानलमिटयो वनमवपल्लवयपु तेवारेतेमसर्वचतु पदने पाछापोतानेगामे पहोंचाडया एहवोते सिंहनोगककमदपने कोइक बुद्धिमीयालेपण केटलाक हीनसत्व निगेग्य ससलाप्रमुखजीवनेपोतानासेवककरीया वनीकानातरे दवनागो तेवारे सीयाले निजाश्रित सर्वचतु पदने

पुंठडेयजगामी फालनरीनदी उतरवा लागो तेवारे सर्वजीवसहित पोतेंपण अ गाधजलमांबुमो ऽहांसिंहते सुगुरु अनेसीयालते कुगुरु महानदीते दुर्गति अने आश्रितजीवते धर्मार्थी मनुष्य एमउपनयलेवो ॥ १४ ॥

पूर्णे तटाके तृषितः सदैव भूतेपि गेहे क्षुधितः स मूढः ॥ क
ल्पद्रुमे सत्यपि ही दरिद्रो गुर्वादियोगेपि हि यः प्रमादी ॥१५॥

अर्थ ॥ हवेगुर्वादिकनुं योगछतेप्रमाद करवुंनही तेदृष्टांतदेऽनेकहेछे निश्चेंकरीजे प्राणी देवगुरुधर्मनुं योगछतेपण प्रमादवतथायछे तो हाहाऽतिखेदेतेप्राणी भरयातला वेंपण सदाऽतरस्योछे वली ते पुरुष सुखडी प्रमुखे भरायका घरमां पण भुख्योछे वली घरमांछते कल्पवृक्षें पण दरिद्रीछे तेमाटे गुर्वादिकनो योगछते प्रमादत्यजीने धर्मसाधनकरवु तेहिजसार्थकछे ॥ १५ ॥

न धर्मचिंता गुरुदेवभक्ति र्येषां न वैराग्यलवोपि चित्ते ॥ तेषां
प्रसूक्लेशफलः पशूना मिवोद्भवः स्यादुदरंभरीणां ॥ १६ ॥

अर्थ ॥हवेप्रकारांतरेंतेहिजकहेछे आजसेंशुं धर्मकीधो अनेहवे नित्य प्रत्येंशोधर्म करवानुंछे एहवीजेने विचारणानथी यदुक्तं उत्थायोत्थाय चिंतेयं किमद्य सुकृत कृतं॥ आयुषः खंममादाय रविरस्तमयं गतः ॥१॥ तथा जेने गुरुअने देवनीभक्तिनथी वली वैरागनुंलेशमात्रपणनथी एहवाजेपेटभराप्राणी तेहोनुंजन्मते पशु भुंम कुतराप्रमु खनीपरे केवल माताने गर्भधारणादिकक्लेश करवामात्रज फलहोय ॥ १६ ॥

न देवकार्ये न च संघकार्ये येषां धनं नश्वरमाशु तेषां ॥ तदर्ज
नाद्यैर्वृजिनैर्भवांधौ पतिष्यतां किं लवलंबनं स्यात् ॥ १७ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रकारांतरें सुपात्रेधनवावरवानी सफलतादेखाडेछे जेधनवतप्राणीनुं धन देवकार्यजे प्रासादकरावववा अथवाजीर्णोद्धार बिंबप्रतिष्टा इत्यादिकनेविषे तथा संघकार्यजे चतुर्विधसंघनुंपोषवुं तथासाधर्मिनीवत्सलताते हीन अने दीनजे साधर्मि कहोयतेनीचिंताकरवी तथा पुस्तकलखववा इत्यादिक कार्योमांउपयोगीनहोय तेप्रा णीनुं विनाशशील एहवुंजेधन तेउपार्जनादिकनापापेकरी संसारकूपमांपडताने तेधन शुंकाइ आधारभूतथाय अर्थातकांइनथाय एटलेसुपात्रेंव्ययविना अन्यथाकोइकामेना वे॥१७इ॥ति श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमेदेवगुरुधर्मशुद्धीनामा द्वादशोधिकारः समाप्त॥१२॥

ते तीर्णा भववारिधिं मुनिवरास्तेभ्यो नमस्कुर्महे येषां नो विषयेषु गृ
ध्यति मनो नो वा कषायैः प्लुतं ॥ रागद्वेषविमुक् प्रशांतकलुषं साम्याप्त
शर्माद्वयं नित्यं खेलति चात्मसंयमगुणाक्रीडे भजद्भावनाः ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेयतिशिक्षोपदेशनामा तेरमोअधिकारकहेछे तेमांप्रथमयतिनुं स्वरूपक हेछे जेमुनीनुंमन विषयमां आसक्तपामतुंनथी तथाक्रोधादिककषायमां व्याप्तुं नथी एहवाजेमहात्मा ते संसारसमुद्रथीतरया तेहनेनमस्कारकरियेंछैये जेमुनिराज रागद्वेषरहित थइने कलुषताजे पापाचरणतेहने शांतपमाडयोछे वलीसमतायेंकरी अनुपमसुखपाम्यांछे एहवाथइने पांचमहाव्रतनी पचवीसभावना तथा अनित्यादिक बारभावनानेभजेछे वलीजिनप्रणीतजे संयमनागुण क्षमादिकरूप उद्याननेविषे खेलेछे एहवुंजेहनुंमनहोय तेहनेज तत्त्वथकी मुनिकहियें एभावार्थछे ॥ १ ॥

स्वाध्यायमाधित्ससि नो प्रमादैः शुद्धा न गुप्तीः समितीश्च धत्से ॥ त
पोद्विधा नार्जसि देहमोहा दल्पे हि हेतो दधसे कषायान् ॥२॥ प
रीषहान्नो सहसे न चोप सर्गान्न शीलांगधरोपि वाऽसि॥तन्मोक्षमा
णोपि भवाब्धि पारं मुने कथं यास्यसि वेषमात्रात् ॥३॥ युग्मं ॥

अर्थ ॥ हवेसाधुनावेषमात्रथकीज अर्थसिद्धिनथाय तेकहेछे हेमुनितुंप्रमादेंक रीसिद्धांतपभ्यासकरवा वांछतोनथी तथाशुद्धनिर्मळ मनादिकत्रणगुप्ति अने ईर्यादि कपांचसुमतिने धारणकरतोनथी वलीशरीरनामोहथी बाह्यअभ्यंतर बेप्रकारेंतपप ण करतोनथी तथाथोडापण कषायनुंकारणउपनाथी कषायधरेछे ॥ २ ॥ तथाक्षुधा दिक बावीसपरिसह अने देवता प्रमुखनाकरेला उपसर्ग तेप्रतेनथीसहेतो तथा अ ढारसहस्रकर शीलांगरथने पणधरतोनथी अनेकेवळ वेषमात्रथीज मोक्षनेवांछेछे प णतोंहेमुनितुं संसारसमुद्रनोपारकेमपामीस ॥ ३ ॥ एबेकाव्यनोअर्थ एकठोछे

आजीविकार्थमिदं यद्यतिवेषमेषं धत्से चरित्रममलं न तु कष्टभीरुः ॥ तद्वे
त्सि किं न न बिभेति जगज्जिघृक्षुर्मृत्युः कुतोपि नरकश्च न वेषमात्रात् ॥४

अर्थ॥ वलीनेहितकहेछे हेसाधुतुंआमसामा आजीविकानेअर्थें जे यतिनावेष धरेछे अनेकष्टकरवाथी बीहितायका निर्मळनिरतिचार जेचारित्रतेप्रतें धरतानथी तो तेथारेंतुं एमकेमनथीजाणतो जे जगतनुंग्रासकरनार एहवोजेमृत्युते कोइथीबीहतोन थी वलीनरकनोवेषमात्र धर्मथकी तो नरकपणबीहितोनथी एटले मृत्यु अने नरक एबेहना भयथी तुंछुटवानो नथी पण ताहारायी डरवानथी इतिभाव ॥ ४ ॥

वेषेण माद्यसि यते चरणं विनात्मन् पूजां च वांछसि जनाद्बहुधोपधिं च॥
मुग्धप्रतारणभवे नरके ऽसि गंता न्यायं बिभर्षि तदजागलकर्तरीयं॥५॥

अर्थ ॥ हेआत्मातुंचारित्रविना यतिनेवेषेकरीहर्षपामेछे अनेलोकथकी बहुप्रकार नीपूजा वंदन सत्कारप्रमुख तथाउपधिजे वस्त्रपात्र पुस्तकादिकप्रतेंवांछेछे पणपछेतुं एमुग्धलोकने प्रतारणके० कपटक्रियाये ठगाडकरी तेहथीउपार्ज्योजेनरकतिहांज रहीश तेमाटेतुं अजागले कर्त्तरीना न्यायप्रतेंधरेछे जेमकोइ खाटकियें एकबकरीहण वानेअर्थे वधकरवानेस्थानकेआणी कातीयेंधारचडावी सज्जकरी तेबकरीनेपासेका तिमूकी एटलामांकोइकामनेअर्थे पोतेघरमांगयो पछवाडेबकरीयें पोतानापगेंकरीनू मीखोदितेमाकातिदाटी नेविचार्युंजे रखेखाटकीआवेतिवारेंदेखे एमजाणीतेहनाउ परस्तुती दैवयोगथी कंठतलेकातीनीधारआवी तेथीगलुंदबाइगयुं अनेमृत्युपामि तेमहे आत्मातुंपण तेबकरीनीपरें अज्ञानीथइने कातीरूपनरकने ढांकिराखेछे पणतेअवश्य भाविपणाथी उदयआव्याविना रहेसेजनही तेमाटेप्रथमथीज अज्ञानत्यजीने साव धानरहेजे एन्यायग्रंथांतरें बीजेप्रकारेंपण लख्युंछे ॥ ५ ॥

जानेऽस्ति संयमतपोभिरमीभिरात्मन्नस्यप्रतिग्रहभरस्य न निष्क्रियोपि ॥
किंदुर्गतौ निपततः शरणं तवास्ते सौख्यं च दास्यति परत्र किमित्यवेहि॥६

अर्थ ॥ हेआत्माएलोकरंजन निमित्तेंजे संयमतथातप तेणेकरीने गृहस्थोपा सेंथी अहार औषध वस्त्रपात्रादिकनुंलेवुं ते तो संयमतपादिकना समूहनुं वक्रयके० मूलपणनथयुं तेवारेंतुजने दुर्गतिमांपडतां शरणतेसुंछे अनेपरलोके सुखतें कोणआ पसे तेविचारीजो एतोलोकोनाप्रतिग्रहनुं मूलमात्रपण ताहरुंसुकृतनथी माटेतुजने नरकेपडतां उद्धार अनेपरलोकनेविषे सुखतेशाथकीथासे एभावार्थछे ॥ ६ ॥

किं लोकसत्कृतिनमस्करणार्चनाद्यै रे मुग्ध तुष्यसि विनापि विशुद्धयोगान्
कृंतन् भवांधुपतने तव यत्प्रमादो बोधिद्रुमाश्रयमिमानि करोति पर्शून्॥७

अर्थ ॥ हवेलोकसत्कारादिकदेखी राचवुंनहीतेकहेछे हेमूढआत्मा शुद्धनिर्मल दोषरहित एहवाजे मनवचनकायानायोग तेविनालोकोनो सत्कारजे अभ्युत्थाना दिक तथानमस्कारवंदना अर्चना जेनवांगपूजा विलेपनादिक तेणेकरीने सुंहर्षपामे छे केमकेएप्रमादते ताहरेसंसारकूपमां पडतांबोधरूप वृक्षनाआलंबनने छेदवाने ए लोकसत्कारते कुहाडारूपछे एटलेताहरोप्रमादरूपवैरीते तुजने संसाररूपकुवामां

नारकवासारुं बोधआलंबनरूपवृक्षने लोकसत्काररूप कुहाडेकरीछेदेछे एटलेह्मणा
तो सत्कारपामिमनमां हर्षधरेछे पणआगले बोधपामशो दुर्लभयासे ॥ ७ ॥

गुणास्तवाश्रित्य नमत्यमी जना ददत्युपध्यालयभैक्ष्यशिष्यकान् ॥
विना गुणान् वेषमृषेर्बिभर्षि चेत् त तष्ठकाना तव भाविनी गति ॥८॥

अर्थ॥हेसाधो धर्मार्थिलोकतो तह्यारागुणआश्रीने तुजनेनमेछे तथा उपधि वस्त्र
पात्रादिक आलय वस्ति भैक्षज अन्नपानादिक अनेशिष्य तुजनेआपेछे अनेतुजोगुण
विनाज मात्र वेषधरेछे तेवारे ताहरीधूर्त्तनी गति थाशे जेमठगारा कृत्रिम नवानवा
वेष करीलोकना धनठगीलिये पछेकोइकदिवसे तेह्नाविपाकथी वध बधनादिक पा
मे तेम ताहरा हवालपण तेह्नीपरे थासे ॥ ८ ॥

नाजीविकाप्रणयिनी तनयादिचिता नो राजभीश्च भगवत्समय च वे
त्सि॥ नो राजभीर्धरसि वाऽऽगमपुस्तकानि इत्यपि पाठ ॥शुद्धे तथा
पि चरणे यतसे न भिक्षो तत्ते प्रतिग्रहभरो नरकार्थमेव ॥९॥

अर्थ ॥ हवेसाधुपणातु सुखदेखाडेछे हेभिक्षुकतेंघरबारपरिग्रहतोमूक्यो माटे
आजीविका तथापुत्रादिकनी चितानथी तेमराजासबधीभयपणनथी वलीजिनप्रणी
त सिद्धांतपणजाणेछे अथवाजैनसिद्धातना पुस्तकधरेछे तोपणशुद्धचारित्रनेविषे
उद्यमकरतोनथी तेवारेताहरु वस्त्रपात्रादिकनुलेवु तेह्नुभारते नरकनेअर्थजछे ॥९

शास्त्रज्ञोपि दृढव्रतोपि गृहिणीपुत्रादिबधोज्झितोप्यंगी यद्यतते
प्रमादवशगो न प्रेत्य सौख्यश्रिये॥तन्मोहद्विपतस्त्रिलोकजयिन
श्चा काचित् परा दुष्टता बद्धायुष्कतया स वा नरपशुर्नून गमी दुर्गतौ॥१०

एवर्हार्थ ॥ हवेठतेयोगेपणजीव धर्मकरतोनथी तेह्नाबेकारणदेखाडेछे लौकिकअ
आर्हतरशास्त्रने जाणतोथको तथा पचमहाव्रतधारीथको तथास्त्रीपुत्रादिकना
त्सि किं न्नथको पण जेप्राणीप्रमादवशे पड्योथको परलोकनासुखनी सपदारूप ध
अर्थे॥वलीतेम करतोनथी तोतिहां त्रणलोकनुं जीपनारजे मोहरूपशत्रु तेह्नी
रेछे अनेकष्टकरवारमहाडष्टताजाणवी अथवाते नररूपपशुबापडो पूर्वेनरकादिकना
तेवारेंतुं एमकानथीजकी दुर्गतिमाज जनारछे एमजाणीयेंछेये ॥ १० ॥

थी यतीसाधुनोवेषमात्र न करोमि सर्व सावद्यमित्यसकृदेतदथो करोपि ॥
एवेवाना सर्वथा तुजनेआवचनभारिता तत्सावद्यतो नरकमेव विभावये ते११

वेषेण माद्यसि यते चरणं विनात्मन् पूजां च वांछसि जनाद्बहुधोपधिं च ॥
मुग्धप्रतारणभवे नरके ऽसि गंता न्यायं बिभर्षि तदजानतरक्तकर्व ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हेआत्मातुंचारित्रविना यतिनेवेषेकरीहर्षपामेछे अनेलोकथकी वंदनप्रणा नीपूजा वंदन सत्कारप्रमुख तथाउपधिजे वस्त्रपात्र पुस्तकादिकतेनेलोकने पासेथी एमुग्धलोकने प्रतारणके० कपटक्रियायें ठगाइने नेहवाछेन्दिन् निरंतर रहीश तेमाटेतुं अजाणछे कर्त्तरीना न्यायप्रतेयरेछे जेमरांड कातर बकरो वानेअर्थे वधकरवानेस्थानकेंआणी कातीयेंधारघडावी तकरीने तेकर्तारी माटी मूकी एटलामांकोइकामनेअर्थे पोतेरनमांगयो पनतारेबकरेंपें पोतानापगेकरी मीखोदितेमांकातिदाटी नेविचार्युंजे रखेरबाटकीअत्रेनिगर्दंने एमजाणीनिमवा परसुती दैवयोगथी कंवतलेकातीनीधारआवी तेथीगलुंकपाइगयुं अनेमृत्युपामि तेमतें आत्मातुंपण तेवकरीनीपरे अज्ञानीथइने कातीरूपनरकने दोचिगयोछे पणतेनरकाय नाविपणाथी उदयआव्याविना रहेछेजनहीं तेमाटेप्रथमथीज अज्ञानन्यायजांने सावधानरहेजे एन्यायग्रंथातरें बीजेप्रकारेंपण लख्युंछे ॥ ५ ॥

जानेऽस्ति संयमतपोभिरमीभिरात्मन्नस्य प्रतिग्रहभरस्य न निष्क्रियापि ॥
किंदुर्गतो निपततः शरणं तवास्ते सौख्यं च दास्यति परत्र किमित्यवेहि ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हेआत्माएलोकरंजन निमित्तेंजे संयमतथातप तेणेकरीने गृहस्थोपा सेंथी अहार औषध वस्त्रपात्रादिकनुंलेवुं ते तो संयमतपादिकना समूहनु वस्त्रादिक मूलपणनथयुं तेवारेंतुजने दुर्गतिमांपडतां शरणतेसुंछे अनेपरलोके सुखतें कोणआ ॥ पस तेविचारीजो एतोलोकोनाप्रतिग्रहनुं मूलमात्रपण तारेसंयमतनथी माटेनरक तेसं नरकेपडतां उद्धार अनेपरलोकनेविषे सुखतेशाथकीथासे एजाणवायोग्यछे ॥ ६ ॥ प्राणियें तु

किं लोकसत्कृतिनमस्करणार्चनाद्यै रे मुग्ध तुष्यसि विनापि विशुद्धयोगान् ॥
कृंतन् भवांधुपतने तव यत्प्रमादो बोधिद्रुमाश्रयमिमानि करोति ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेलोकसत्कारादिकदेखी राचवुंनहीतेकहेछे हेमूढआत्मतुष्यसि ॥ प्र दोषरहित एहवाजे मनवचनकायानायोग तेविनालोकोनो सत्कारपामीसंतोषपामेंछे ॥ १७ ॥ दिक तथानमस्कारवंदना अर्चना जेनवांगपूजा विलेपनादिक भक्तजे सेवकलोक तेने छे केमकेएप्रमादते ताहरेसंसारकूपमां पडतांबोधरूप वृक्षनेत्र सरलजे मोक्षार्थिलोक ते लोकसत्कारते कुहाडारूपछे एटलेताहरोप्रमादरूपछेनरीते

ह्नेवचतोयको तुफरेछे एटलेपोताना प्रमादाचरणथी अनेबीजोजोकने ठगवाथी एवन्नेप्रकारना पापेकरीने तुलोपायछे ॥ १५ ॥

गृह्णासि शय्याहृतिपुस्तकोपधीन् सदा परेभ्यस्तपसस्त्वियं स्थिति ॥
तत्ते प्रमादाद्भरितात्प्रतिग्रहै ऋणार्णमग्नस्य परत्र का गति ॥ १६॥

अर्थ ॥ हे वेषना धरनारयति तु लोकोपासेथी शय्या वस्ति अहार तथापुस्तक ज्ञानोपकरण तथाउपधि वस्त्रपात्रादिकजे नित्यलियेछे तेतो तपसीलोकनी स्थिति छे परतु तुतो प्रत्यक्षप्रमादमा मग्नथको काइपणतपस्यादिक करतोनथी तेमाटे प्र तिग्रहने निग्रवेकरी नारीथयु एहवुजेप्रमाद तेथकीउपार्ज्युजे लेणो ते लेणानेविषे मग्नथको खुलोगेएहवुगतो ताहरीपरज्नवे सीअवस्थाथासे एटलेप्रथमतु चारित्रने इने प्रमादसेवेछे तेलेणोकरेछे तेवारपछे तपसयमादिकविना लोकोपासेथीशय्यादि क प्रतेलीयेछे तेबीजोलेणो एमएवेप्रकारना लेणामाखूतोथको ताहरीसी अव स्थायासे अर्थात डष्टअवस्थाज पामीस इतिजाव ॥ १६ ॥

न कापि सिद्धिर्न च तेतिशायि मुने क्रियायोगतप श्रुतादि ॥ तथा
प्यहकारकदर्थितस्त्व ख्यातीच्छया ताम्यसि धिड् मुधा कि ॥१७॥

अर्थ ॥ हवेतथाविधगुणविना कीर्त्तिनेसुवाछेछे हेमुनिताहरेविषेकोइ वियामत्रा दिक सिद्धिनथी वलीवादणा खमासमणाप्रमुख उत्कृष्टक्रियानथी तथामनवचन कायाना योगनी शुभप्रवृत्तिनथी तथाबाह्याभ्यतरतपनथीकरतो तथाश्रुतज्ञान आ दिशब्दथी प्रजाविकपणु राजाप्रमुखनु प्रतिबोधवु इत्यादिकगुणतेपणनथी तोपणतु अहकारे कदर्थितथको ख्यातिजे प्रसिद्धितेहनी वाछायेकरीने फोकटशोपरीतापकरे छे माटेतुजने धि कारथाउताहरामा जो कोइ अतिशयगुणहोय तेवारेतो ख्यातिनी वाछापणयुक्तछे अनेतेविनाज प्रख्यातीनेवाछेछे माटेतु धिक्कारवायोग्यछो ॥ १७ ॥

हीनोप्यरे जाग्यगुणैर्मुधात्मन् वाछस्तवार्चाद्यनवाप्नुवश्च ॥
ईर्ष्यन् परेभ्यो लजसेऽतितापमिहापि यातो कुगतिं परत्र॥१८॥

अर्थ ॥ फरीतेहिजकहेछे अरेनिर्जाग्य नि पुण्यकआत्मातु गुणरहितथको फो कटस्तवनापूजाप्रमुखने वाछतो जोपूजास्तवनानथायतो वलीलोकोउपरक्रोधकरतो थको इहलोकेपण अतिशय तापसतापपामेछे अनेपरलोकेपणकुगतियेजइश॥१८॥

गुणैर्विहीनोपि जनानतिस्तुति प्रतिग्रहान् यन्मुदित प्रतीछसि ॥
लुलायगोश्वोष्ट्रखरादिजन्मभि विना ततस्ते जविता न निष्क्रय ॥१९॥

अर्थ ॥ हवेकुगनिमांपडवाविषे उपदेशकरीने प्रतिवोधेने हेयतिवेषनाधारक तुं गुणरहितथको पणहर्षवतथयीने लोकथी नमस्कारादिक स्तवना वस्त्रपात्रअन्नादि कलेवावांनेने तेहथीतुजने लुजायजे पामोपाणीवहेवायोग्य अथवागोजेवलदीओ हल गाडा यंत्र कोल प्रमुख वहेवायोग्य अथवाअश्वते असवारीकरवायोग्य तथा उंट खरगलन अनेकविधनारवहेवायोग्य इत्यादिकअवतार पाम्याविना तेप्रतिग्रहादि कनुं मूलनथाय केमकेगुणविनापण लोकोपासेथी प्रतिग्रहादिक कल्पेने तेहनुंलेणो पामाप्रमुखना अवतारपामि नारवहीनेछूटवुंने एजावार्थ ॥ १९ ॥

गुणेषु नोद्यच्छसि चेन्मुने ततः प्रगीयसे यैरपि वंद्यसेऽर्च्यसे॥जु
गुप्सितां प्रेत्य गतिं गतोऽपि तैर्हसिष्यसे चाऽभिभविष्यसेऽपि
वा॥२०॥ दानमाननुतिवंदनापरैः मोदसे निकृतिरंजितैर्जनैः ॥
नवेत्सि सुकृतस्य चेल्लव. कोपि सोपि तव लुंठ्यते हि तैः॥२१॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजप्रकारांतरेकहेने हेमुनिजोतुंगुणनेविषे उद्यमकरतोनथी ते वारेइहनवेंजे तुजने श्रावकादिक गीतनासप्रमुखेकरीगायने तथावलीद्वादशावर्त्त वांदणायेंकरीवांदेने सुगंधलेपनादिकेंकरीपूजेने तेतुंपरनवें निंदनीक कुरूप दरिद्रतादि क पाम्याथका तेहिजलोकहरानपर हससे तथानानाप्रकारनीपीमा उपजावसे एटले ते स्वामिपणे अवतरसे अनेतुंदासपणेथाइस तिहां लातो लाठीप्रमुखना प्रहारेंकरी तुजनेपीडस्ये ॥ २० ॥ हेमुनितुं कपटक्रियायेंकरी लोकरीजवीने तेहोने दानसन्मान स्तवन वंदनानेविषे तत्परदेखीने हर्षपामेने पण एम नथीजाणतो जे ताहरो लेश मात्रसुकृतने तेहनेएलोकलुटेने ॥ २१ ॥

नवेगुणी मुग्धकृतैर्नहि स्तवै र्न ख्यातिदानार्चनवंदनादिभिः ॥ वि
ना गुणान्नो नवदुःखसंक्षय स्ततो गुणानर्जय किं स्तवादिभिः॥२२

अर्थ॥हवेस्तवनादिकनी वांढामूकीने गुणनुंपोषकरवुंतेकहेने हेमुनितुं विशेषाविशे षनाअजाण एहवामुग्धलोकनीकरेलीजे स्तुतितथाख्याति प्रशंसादिक तेणेकरीगुणवं तनथाय वलीगुणजे ज्ञानादिक तेहनीप्राप्तिविना संसारनोविनाश अनेमुक्तिनीप्राप्तिन थाय तेमाटेकेवल गुणनेजउपार्जनकर पणस्तुतिकराववाथी कांइअर्थसिद्धिनथी२२

अध्येषि शास्त्रं सदसद्विचित्रा लापादिभिस्ताम्यसि वा समा
यैः॥येषां जनानामिह रंजनाय नवांतरे ते क मुने क च त्वं॥२३॥

अर्थ ॥ हवेलोकरीजववामाटेतुं शास्त्रनणेने पणनवांतरेतुंकिहां अनेरीजनारलो

कविद्वा तेदेखाडेछे हेमुनितुजे लोकरीजवयानिमित्तें सत्के० नज्ञोजिनागम तथा असत्के० विरुद्धबोधादिकनुशास्त्रते प्रतेंनणेछे अनेवली कपटसहित नानाप्रकार नाआलापसलापादिक तेणेकरीने घणुप्रयासकरेछे पणनवांतरे तेलोककिहांगतिमां जशे अनेतु केइगतियेजइश एटलेआजने जावजीवशुद्धीजे जीव तें रीजव्याहशे तेपरजवेकोइपण ताहरे कामेआवेसेनही ॥ २३ ॥

परिग्रह त्व्यजहाकृहादे स्तत्किं न धर्मोपकृतिच्छलात्त ॥
करोपि शय्योपधिपुस्तकादे र्गरोपि नामातरतोपि हता॥२४॥

अर्थ ॥ हवेपरिग्रहत्यजवा आश्रीउपदेशेछे हेमुनितेंपूर्वं घरप्रमुखवलुपरिग्रहछा ड्यु अनेवली धर्मोपकरणने मीसेकरीने शय्या वस्ति उपधि वस्त्र पात्रादिक पुस्त क आदिशब्दथी पाटा चावली पोथी बांधणा जपमाला प्रमुखउपकरणनो परिग्रह शुंकरेछे धर्मोपकरणजेकाइ बहुमूलो ममतानावशयकी वधारेराखियेते परिग्रहजा णजो केमके० गरके० विष तेहनेनामातरकरवायकी एटलेनामफेरवीनाख्यायीप ण हताके० मृत्युकारकहोयज जोविषने साकर अमृत इत्यादिककहियेतोपण खाय थकु प्राणहरणकरे तेमपरिग्रहने धर्मोपकरण निमित्ते राख्योयकोपण दुर्गतिआपे

परिग्रहात्स्वीकृतधर्मसाधनाभिधानमात्राल्किमु मूढ तुष्यसि ॥
न वेत्सि हेम्नाप्यतिभारिता तरी निमज्जयत्यगिनमबुधो द्रुत ॥२५॥

अर्थ ॥वलीतेहिजकहेछे हेमूर्खसाधोतु स्वीकृतके० प्रमाणकिधुंछे धर्मसाधनके० धर्मोपकरण एहवुनाममात्रजेहतु एहवोपरिग्रह पाम्याथी सुहर्षपामेछे हेमूर्खतुन थीजाणतोजे अतिशयभारी एहवोजेसुवर्ण तेणेकरीनरी एहवीतरीजे होडी तेजेम अगीनके० नेशनारमनुष्यने बोडेछे तेमतुजनेपण धर्मोपकरणनेमीसे मल्योएहवो जे अतिपरिग्रहतेभवसमुद्रमा बोडशे इतिभाव ॥ २५ ॥

येहं कपायकलिकर्मनिबंधभाजन स्यु पुस्तकादिभिरपीहितधर्मसाधनै ॥
तेपा रसायनवरैरपि सर्पदामये रार्त्तात्मना गदल्हते सुखकृत्तु किं भवेत् २६

अर्थ ॥ जेमुनियें हितके० वांछ्युछे धर्मनुंसाधनजेथकी एहवाजे पुस्तकादिकते णेकरीनेपण अहजेपाप तथाकषायजे क्रोधादिक तथा कलिजेकजहतेना करवा थकी कर्मजे ज्ञानावरणियादिक तेनानिकाचितबधनुभाजनथाय तेहनेबीजोकोइ सुखकार्य निवृत्तिनुकरनारनथाय एटलेजेहनेधर्मोपकरणतेहिज ममत्वनावशथकी परिग्रहपणे परिणम्याछे तोतेहनेअर्थे क्लेशकषायादिकने करवेकरीकर्मवृद्धिकरेछे

तोतेह्नेसंतोषपते पछे फरीबीजाशायकीथासे एनावार्थ तेह्नुंदृष्टांतकहेछे जेम रसा
यनजे मृगांगपारादिक तेह्नोसेवनकरवाथीज उलटोमांदापडयो एटलेरसायनथ
कीपण जेह्नेरोगवध्यो तोपछेतेह्नारोगनुं निवारकबीजोसुखकारी कोइनथी ॥२६॥

रक्षार्थं खलु संयमस्य गदिता येऽर्था यतीनां जिनै र्वास:पुस्तकपात्र
कप्रभृतयो धर्मोपकृत्यात्मकाः ॥ मूर्छन्मोहवशात्त एव कुधिया संसा
रपाताय धिक् स्वं स्वस्यैव वधाय शस्त्रमधियां यद्दुःप्रयुक्तं भवेत्॥२७

अर्थ ॥ निश्चेंकरीनेजे वस्त्रपुस्तकप्रमुख पदार्थतेश्रीजिनेश्वरें साधुनेसंयमनी रक्षा
नेअर्थे धर्मोपकरण स्वरुपेकह्याछे तोहाहा इतिखेदे तेहिजपदार्थ कुबुद्धिनाधणीने
अतिशय मोह्नावशथकी उलटासंसारमांबूडावनारनाकारण थइपडेछे तेह्नुंदृष्टां
त जेम बुद्धिहीनपुरुषनुं पोतानुं अस्त्रजेखड्गादिक तेविपरीतपणे राख्युंहोय तोपो
तानेजवधकारीथाय तेह्नीपरे जाणवुं ॥ २७ ॥

संयमोपकरणच्छलात्परान् भारयन् यदसि पुस्तकादिभिः ॥
गोखरोष्ट्रमहिषादिरूपभृत्तच्चिरं त्वमपि भारयिष्यसे॥२८॥

अर्थ ॥ हेमुनितुं जे परप्राणीभारवाह्क पोटी बलद उंटप्रमुखने संयमनाउपकरण
नेमीसेकरी पुस्तकादिकनुं भारवह्वरावेछे तेमाटेतेप्राणीतुजनेपण बलद उंट रास
भ पाडाप्रमुखना अवतारपाम्यायका चिरकालभर्गे भारवह्वरावशे ॥ २८ ॥

वस्त्रपात्रतनुपुस्तकादिभिः शोभया न खलु संयमस्य सा ॥
आदिमा च ददते भवं परा मुक्तिमाश्रय तदिच्छयैकिका॥२९॥

अर्थ ॥ हवेवस्त्रपात्रादिकथी संयमनीशोभानथीनेकहेछे हेमुनि वस्त्रपात्रतथाश
रीर पुस्तकइत्यादिकनी शोभाकीधेथके निश्चेकरी संयमनीशोभानथाय एटलेवस्त्रादि
कनीशोभाते संयमने अशोभाकारणीछे तेमांपणवली आदिमके० पहेलीजे वस्त्रादि
कनीशोभाते भवभ्रमणजआपे अने परके० बीजीजे संयमनीशोभाते मोक्षजआपे ते
माटेजोसंसारनी वांछाहोयतो वस्त्रादिकनी शोभाआदर अनेजो मुक्तिनीवांछा तुजने
होय तो संयमनीशोभाआदर ॥ २९ ॥

वस्त्रपात्रतनुपुस्तकादिभिः शोभया न खलु संयमस्य सा ॥ तां तदत्र प
रिहाय संयमं किं यते न यतसे शिवाप्त्यपि ॥ इतिचोत्तरार्द्धपाठ ॥३०॥

अर्थ ॥ वस्त्रपात्रेति एपाठांतर एश्लोकनुंपूर्वार्द्ध पूर्वनीपरेंजाणवुं अनेउत्तरार्द्धनो

व्याख्याकहेछे तस्मात्कारणात् तेकारणमाटेहेसाधो ते वस्त्रादिकनी शोनाशमीने जोमुक्तिनोअर्थीहोतो जिनप्रणीत चारित्रनेंविषे केमउद्यमकरतोनथी ॥ ३० ॥

शीतातपाद्यान्नमनागपीह परीषहांश्चेत्क्षमसे विसोढु ॥
कथं ततोनारकगर्भवास दुःखानिसोढासि भवांतरे त्वं ॥३१॥

अर्थ ॥ हवेपरीषह सहेवाआश्री उपदेशआपेछे हेमुनिजोतु संयमनेविषे टाढाइ तापप्रमुख थोडापणपरीषह सहेवानेसमर्थनथी अनेकायरथायछे तोभवांतरेनेविषे नरकतथा गर्भवासनाडुःख केम सहीस एटले नरकादिकना दुःखसहेवाथीतो परीषहनाडुःखतुं सहेवुंभलुंछे एमजाण ॥ ३१ ॥

मुने न किं नश्वरमस्वदेहं मृत्पिंडमेनं सुतपोव्रताद्यैः ॥ निपी
ड्य भीतीर्भवदुःखराशे र्हित्वात्मसाच्छैवसुखं करोषि ॥ ३२॥

अर्थ ॥ हवेसाधुने तपप्रमुखनुं उद्यमकरवुंकहेछे हेसाधु एविनाशशील तथाआ स्वरपोतानुनही एहवोजेदेहरूप माटिनुपिंड तेहने भलाजिनाज्ञासहित तपव्रतप्रमुखे करी दमीने संसारनादुःखसंबंधी सर्वभयटालिने मुक्तिसंबंधी सुखतें पोतानेवश केमनथीकरतो ॥ ३२ ॥

यदत्र कष्टं चरणस्य पालने परत्र तिर्यङ्नरकेषु यत्पुनः ॥तयोर्मि
थः सप्रतिपक्षता स्थिता विशेषदृष्ट्यान्यतरं जहीहि तत् ॥३३॥

अर्थ ॥ हेसाधुजेइहां श्रीजिनशासनेविषे चारित्रपालवानीकष्टछे अनेपरभवे तिर्यंचनरकादिकनेविषेजे कष्टछे तेबेहुकष्टने परस्परे प्रतिपक्षपणुरहेछे एटलेजिहां चारित्रकष्टछे तिहांतिर्यंचनरकनुं कष्टनथी अनेजिहां तिर्यंचनरकादिकना कष्टछे तिहां चारित्र कष्टनथी तेमाटेविशेषदृष्टियें विचारी तेबेमाथी एककष्टनेमूक ॥ ३३ ॥

शमत्र यद्विभिरिव प्रमादजं परत्र यच्चाब्धिरिव द्युमुक्तिगं ॥ तयोर्मि
थः सप्रतिपक्षता स्थिता विशेषदृष्ट्यान्यतरद्गृहाण तत् ॥३४॥

अर्थ ॥ हवेसुखनुंग्रहवुंकहेछे हेसाधोइहां चारित्रमांप्रमादकरवाथीजे सुख ते बिंदुमात्रछे अनेभवमना पालवायकीजे देवलोकमुक्तिनासुख तेसमुद्रसरखाछे तेबन्हेसुखने परस्परप्रतिपक्षपणुछे जिहांप्रमादसुखतिहां मुक्तिसुखनथी अने जिहां मुक्तिसुख तिहांप्रमादसुखनथी माटेविशेषविचारी बेमांथी सारजाणेतेने आदर॥३४॥

अथवा॥नियंत्रणायाचरणेऽत्र तिर्यक् स्त्रीगर्भकुंभीनरकेषु या च ॥
तयोर्मिथः सप्रतिपक्षभावा द्विशेषदृष्ट्याऽन्यतरां गृहाण ॥३५॥

अर्थ ॥ हवेगुरुपारतंत्र्यआश्रयीकहेछे हेसाधु५हांजिनशासनमां चारित्रनेविषेजे गुरुपारतंत्र्यादिकत्रणप्रकारनो परवशपणुंछे अने तिर्यंचनाअवतारमां तथास्त्रीनागर्भ मां तथा कुंभीतेघणोजसांकमामुखनुंनारकीने उपजवानुंस्थानकतेमां उपनाजेनार कीते खंडोखंडथयी वाहेरनिकले तेहनेविषेजे परवशतापणुंछे तेवेहुने परस्परंप्रति पक्षीपणुंछे एटले जिहांचारित्रनी नियंत्रणाहोय तिहांतिर्यंच स्त्रीअने नरकादिकनी नियंत्रणानहोय अनेजिहां तिर्यंचस्त्रीनरकादिकनी नियंत्रणाहोय तिहां चारित्रनी नियंत्रणानहोय माटेविशेषदृष्टियेंविचारीने तेवेमांथी एकनियंत्रणानेआदर ॥३५॥

सहतपोयमसंयमयंत्रणां स्ववशतासहने हि गुणो
महान्॥शिवं गुण इति वा पाठः ॥ परवशस्त्वतिभूरि स
हिष्यसे न च गुणं वहुमाप्स्यसि कं च न ॥ ३६ ॥

अर्थ ॥ हवेपरवशेदुःखसहेवाकरता पोतानावशेंदुःखसहेवुंभलुंछे तेकहेछे हेसा धुतुं चोथप्रमुखतप तथा नियमअभिग्रहादिक ते यम तथासत्तरभेदें संयमसंबंधी एत्रण नियंत्रणाछेतेनुंसहनकर केमके एत्रण नियंत्रणाओते पोताने स्वाधीनपणे सहनकरवीछेते महोटो गुणछे तथापाठांतरे एथकी शिवगुणके० मुक्तिरूपीओगुण होय अने जे अतिपरवशपणे एकेंद्रियादिकमां पराधीनथको घणीजनियंत्रणाओ सहीस तिहां अकामनिर्जरासिवाय अधिकुंगुणमात्र कांइपणपामीसनहीं ॥ ३६ ॥

अणीयसासाम्यनियंत्रणाभुवा मुनेऽत्र कष्टेन चरित्रजेन च॥ यदि
क्षयो दुर्गतिगर्भवासगा सुखावलेस्तत्किमवापि नार्थितं॥ ३७ ॥

अर्थ ॥ वलीप्रकांतरेतेहिजकहेछे हेसाधो आजन्ममां समतारूपनियंत्रणातेसं वंधीकष्ट तथाचारित्रसंवंधीजे अल्पमात्रकष्ट तेणेकरी दुर्गति अने गर्भावाससंवंधी असुखनासमूह क्षयथायछे तोतेथी सुवांछितपणुंतुंनपाम्यो अर्थात्पाम्योज ॥३७॥

त्यज स्पृहां स्वः शिवशर्मलाभे स्वीकृत्य तिर्यङ्नरकादि दुःखं ॥
सुखाणुभिश्चेद्विषयादिजातैः संतोष्यते संयमकष्टभीरुः ॥ ३८ ॥

अर्थ ॥ हवेप्रमादवंतने रीसेकरीकहेछे हेसाधुतुं जो विषयादिकथीउपनोजे सुख नोलेश तेणेकरी संतोषपामेछे अने संयमनाकष्टथीवीहेछे एरीतेंतो तें तिर्यंच तथा

नरकनुं दुःखवु नकरीने स्वर्गमोक्षनासुखपामवानी वांछामूकीदीधी एटलेअणुमात्र सुख उपर राच्योथको स्वर्गमोक्षनुं अतुल्यसुखहारेछे एनावार्थछे ॥ ३८ ॥

समग्रचिंतार्तिहतेरिहापि यस्मिन् सुखं स्यात्परमं रतानां ॥
परत्र चेंद्रादिमहोदयश्रीः प्रमाद्यसीहापि कथं चरित्रे ॥३९॥

अर्थ ॥ हवेचारित्रथी इहलोकेतथा परलोकेसुखछे तेकहेछे चारित्रमारक्तथयेला एहवाजेनावसाधु तेहने सर्वचिंताना निवारवाथकी इहलोकेपण परमअनुपमसुख होय अनेपरलोकेपण इंद्रादिकनीसंपदा तथा मोक्षनीसंपदाहोय तोहेसाधो एहवुजे चारित्रतेनेविषे रह्योथकोतुं सुप्रमादकरेछे यतः देवलोकसमाणोय्य परियाउमहेसि ण ॥ रयाणअरयाणय महाणरयसारिसा ॥ १ ॥ पुनः नच राजभयं नच चोरभयं न च वृत्तिभयं न वियोगभयं॥इहलोकसुखं परलोकहितं श्रमणत्वमिदं रमणीयतरं॥२॥

महातपोध्यानपरीषहादि न सत्वसाध्यं यदि धर्तुमीश ॥ तद्भावना
किं समितीश्च गुप्ती धत्से शिवार्थिन् न मनःप्रसाध्याः ॥ ४० ॥
अनित्यताद्या भज भावनाः सदा यतस्व दुःसाध्यगुणेऽपि संयमे॥जि
घत्सया ते त्वरते ह्ययं यमः श्रयन् प्रमादान्न भवाद्विभेषि किं॥४१॥

अर्थ ॥ हवेजेनदुःकष्टकरीशकेनहीतोते सुखसाध्यधर्मकरे तेकहेछे हेसाधु तुं पराक्रमवतपुरुषने साधवायोग्य एहवाजे मासखमणप्रमुख महातप तथा प्राणायामादिक ध्यान तथाक्षुधादिकपरिसह धरवानेसमर्थनथी तोहेमोक्षनावांछक केवलमनेकरीज साधितरीपेंडकरीजे अनित्यादिकभावनातेनुसेवनकर ॥ ४० ॥ तथावलीप्रकारांतरकहछे हेसाधोतुंअनित्यताप्रमुख बारभावना ने सदाभज अनेदुःखें साधवायोग्य मूलोत्तरगुणछे जेना एहवासंयमनेविषेपण सुकुमालपणुंवामीउद्यमकर केमके मृत्युते तुजने भक्षणकरवानीवांछायें उतावलुथायछे दिनदिनप्रतं ढुकडुआवेछे माटेप्रमादसेवतोथकोपण मनेकरीभयभावतकी बीहितोरहेजे ॥ ४१ ॥

हतं मनस्ते कुविकल्पजालै र्वचोप्यवद्यैश्च वपुः प्रमादैः ॥ लब्धी
श्च सिद्धीश्च तथापि वांछन् मनोरथैरेव हहा हतोसि॥४२॥दग्धं
मनो मे कुविकल्पजालै र्वचोप्यवद्यैश्च वपुः प्रमादैः ॥लब्धीश्च सि
द्धीश्च तथापि वांछन् मनोरथै रेव हहा विहन्ये ॥ इतिवापाठः ॥४३॥

अर्थ ॥ हवेमाममीविनाशण महोटामहोटा मनोरथकरवा अफलछे तेकहेछे हे

साधुताहरोमनतें मागविकल्पनासमूहें विणसाड्युं अनेवचनपण मृषाजापणादि क पापेकरीविणसाड्युं वलीशरीरपण प्रमादजेमद्यादिकतेणेकरी विणसाड्युं एरीतें मनवचनकायारूप त्रणगुप्तिविणसाडी तोपण आमोसहीप्रमुखलब्धि तथामंत्रवि द्यादिकसिद्धिने वांछेछे माटे हाइतिखेदे मनोरथेंकरीज पीडायछे जेमशाली दुध खां मप्रमुख सामग्रीविनापण कोइमूर्खक्षीरनाजोजननुं मनोरथधरतो अहर्निशविकल्पें ज पीडाय तेमतुंपणपीडायछे ॥ ४१ ॥ तथावलीपाठांतरें माहरुंमन कुविकल्पजालें विणास्युं तथा अवद्यके० मृषाजापणादिकपापें वचनविणास्युं अनेप्रमादेकरीशरीर विणास्युं तोपण लब्धि अने सिद्धि प्रतें वांछतो थको हाइतिखेदे हुं मनोरथमात्रें ज सुंपीडाउंछुं इत्यादिक पहेलाकाव्यनुं पाठांतर काव्यजाणवुं ॥ ४३ ॥

मनोवशस्ते सुखदुःखसंगमो मनो मिलेद्यैस्तु तदात्मकं भवेत् ॥
प्रमादचोरैरिति वार्यतां मिलच्छीलांगमित्रैरनुपंजयानिशं ॥ ४४ ॥

अर्थ ॥ हवेमननेसततसंगमांजोडवुं तेकहेछे हेसाधुताहरे सुखअने दुःखनोजे मि लाप तेमननेवशछे केमकेमनजेहनीसाथेंमिले तेरूपीथाय जेम तलने जेहवाफुलनो संगमिले तेहवीवासनामयथाय माटेमननेप्रमादरूपचोरसाथेंमलतो वारीने नित्ये शी लांगरथरूपजेमित्र तेनीसाथेंमेलव जेथकीतुजने सर्वथासुखसाथेंज मिलापथाय ॥ ४४

ध्रुवः प्रमादैर्भववारिधौ मुने तव प्रपातः परमत्सरः पुनः॥ गले
न बद्धोरुशिलोपमोऽस्ति चे त्कथं तदोन्मज्जनमप्यवाप्स्यसि॥४५॥

अर्थ ॥ हवेयुक्तिविशेषेंकरी प्रमादनोपरिहारकहेछे हेसाधुप्रमादनाहेतुयेंकरी तु जनेसंसारमांपडवुंतो निश्चय थकीछे केमकेप्रमाद अनेसंसारने अग्निधुमादिकनीपरें नित्यबंधछे अनेवलीजो गलेबांधिमोटी शिलासरिखुं परप्राणीउपरमत्सरतुजनेछे तेवा रे संसारसमुद्रमांथी तरीनिकलवुं केमपामिस माटेप्रमादअने मत्सरबेहुत्यज॥४५॥

महर्षयः केपि सहंत्युदीर्या प्युग्रातपादीन्यदि निर्जरार्थं ॥
कष्टं प्रसंगागतमप्यणीयोपीछन् शिवं किं सहसे न भिक्षो॥ ४६ ॥

अर्थ ॥ हवेकष्टसहेवाथाश्री उपदेशआपेछे केटलाकमहाऋषी तेमढंढणकुमा र मी दीक्षितचार व्यवहारीपुत्रनीपरें शीतादिक परिसहनासहनारा वली उग्रके० प णोकठिण आतपके० तडकाप्रमुख कष्टने उदरीनेपण निर्जरानेअर्थेंसहेछे तेवारेंहे साधुतुं मुक्तिनेतोवांछेछे तेवारें प्रसंगथी उदयआव्युं एहवोअल्पमात्र कष्टप्रतेकांन थीसहेतो अनेकष्टसह्याविना मुक्तिकेमपामिस एभावार्थ ॥ ४६ ॥

योदानमानस्तुतिवंदनाभिर्न मोदतेऽन्यैर्न तु दुर्मनायते ॥ अला
भलाभादिपरीषहान् जयन् यतिः सतत्त्वादपरो विडंबकः ॥ ४७॥

अर्थ ॥ हवेअसाधुपणा तथा साधुपणानो नेददेखाडेछे जेलाभअलाभादिक परिषहनेजीपतोथको ग्रहस्थनुआप्यो अहारउपधिप्रमुखदान तथासत्कारस्तुतिप्रमुखमान इत्यादिकेकरी हर्षपामेनही अनेअलाभ अपमान प्रहारादिके दुहवायनही तेहिजपरमार्थथी यतिजाणवो अने अपरके० बीजाजेदान वदनादिकथी हर्षपामे तथा अलाभनदादिकथी दुहवाय तेयतिनावेषे विडबकके० नटरूपजाणवा ॥४७॥

दधगृहस्थेषु ममत्वबुद्धिं तदीय तप्त्या परितप्यमानः ॥ अ
निर्वृतांतःकरणः सदा स्वैस्तेषां च पापैर्भ्रमिता भवेऽसि॥४८॥

अर्थ ॥ हवेमनोगुप्तिराखवानेअर्थें यतियें ग्रहस्थनी चिताकरवीनही तेकहेछे हेसाधुतुग्रहस्थनेविषे ममत्वनीबुद्धिधरतोथको अनेग्रहस्थनीचितायें तपतोथको पोतानापापें तथाग्रहस्थनापापें निरतरव्याकुलचित्तवतथको ससारमांभमीस॥४८॥

त्यक्त्वा गृहं स्वं परगेहचिंता तप्तस्य को नाम गुणस्तवर्षे ॥
आजीविकाऽस्ते यतिवेषतोऽत्र सुदुर्गतिः प्रेत्य तु दुर्निवारा ॥४९॥

अर्थ ॥ हेसाधु पोतानुघरमूकीने वलीपारका श्रावकादिकनाघरनी चितायेंकरी तपतानागुणने एकघरमूकी पणापरनीचितायें कोइगुणनथी आभवमांतोतुजने यतिवेषनाप्रतापथी आजीविकाचालेछे पणपरभवेंतो तुजने अतिशयदुर्गतिदुर्निवारक एटला नरकादिकने पणपरभवें दुर्गतिनोवारनारकोइनथी एभावार्थ ॥ ४९ ॥

करेमि सामायिकमिति प्रतिज्ञां वदन्नकुर्वन्नपि देहमात्रात् ॥ शय्या
दिकृत्येषु नुदन् गृहस्थान् हृदा गिरा वाऽसि कथं मुमुक्षुः ॥ ५०॥

अर्थ ॥ हवेतुकायामात्रथीसाधुछो पणमनवचनथीसाधुनथी तेकहेछे हेमुनिवर्य हेसाधुतु नित्यप्रतें आवश्यककरतां सव्वं सावज्जजोग पच्चखामि जा जीवाए तिविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं इत्यादिकपाठकहीने हुसर्वसावद्यकरुनही एहवीप्रतिज्ञाकरतोथको तेमासावद्यमात्र शरीरथीज अणकरतोथकोथयो पणशय्या जेउपाश्रय प्रमुख कार्यनेविषे ग्रहस्थनेप्रेरतोथकोछो तो तेमांमनथी अनेवचनथी मुमुक्षु तेशानोछे एटले मन वचन कायायेंकरी सावद्यमूके तेहनेमुमुक्षु कहियें अनेतुतोकायामात्रथीज सावद्यकरतोनथी पणमनथी सावद्यचिंतवेछे अनेवचनथी सावद्यकर्मप्रेरेछे तेमाटेमनथी तथा वचनथी मुमुक्षुनथी मात्रकायायीज मुमुक्षुछे एभावार्थ इत्यंतर

णाते आदेशदेवामात्रजजाणवी वीजीप्रवर्त्तनरूपप्रकरण इत्यादिकप्रेरणीयछे एटले पूर्वेंपणश्रावकें एकृतकस्यांछे जाजनुंकारणछे इत्यादिकप्रेरणाकरवानुंतो साधुनेव्यवहा रछेज यथाश्रीरायप्रश्नीयसूत्रे छुत्तमेयंसुरियाजा पुराणमेयंसुरियाजा किच्चमेयंसुरिया जा करणिज्जमेयंसुरियाजा आइणमेयंसुरियाजा अप्पणुनायमेयंसुरियाजा इत्यादिक विधिवाक्यदेखायछे तेप्रेरणाजाणवी ॥ ५० ॥

कथं ममत्वाय ममत्वतोवा सावद्यमिच्छस्यपि संघलोके ॥ न हे ममप्यप्युदरे हि शस्त्री क्षिप्ता क्षिणोति क्षणतोप्यसून् किं॥५१॥

अर्थ ॥ वलीतेहजकहेछे हेसाधोतु साधुसाध्वी श्रावकश्राविकारूप चतुर्विधसंघ मां असुकागीतार्थेनावखतमां आचैत्यकराव्युं एहवीमहोटाइपामवानेअर्थें तथाआ अमारागछनो चैत्यउपाश्रयादिकछे इत्यादिकममत्वथकी शुंसावद्यकर्मवांछेछे संसा रीनीपरे सारंभकार्यसर्वेमायेलेइने करवाशुंवांछेछे अथवासंघमां महत्वपामवानेअर्थें तथाममत्वथकीज सावद्यजे धनप्राप्ति प्रमुखतेशुंवांछेछे जेमाटे सोनानीछुरीपण पे टमांचापीथकी शुंप्राणहरणनथीकरतीके. एटलेसोनानीछुरीपण पेटमांमारीथकी प्रा णहरेछे तेमसंघनिमित्तपण अविधियें सावद्यकर्मकीधुंते संयमरूपप्राणनेहरेछे५१॥

रंकः कोपि जनाभिभूतिपदवीं त्यक्त्वा प्रसादा गुरोर्वेषं प्राप्य यतेः कथंचन कियच्छास्त्रं पदं कोपि च ॥ मौखर्यादिवशीकृतर्जुजनतादा नार्चनैर्गर्वभा गात्मानं गणयन्नरेंद्रमिव धिग्गंता द्रुतं दुर्गतौ ॥५२॥

अर्थ ॥ हवेआत्मानें उद्धतपणुंनिवारवा उपदेशछे कोइकपुरुषपूर्वें ग्रहस्थाव स्थायें रांकहोय अनेलोकोने उपहास्यकरवायोग्य निंदाकरवायोग्य विविधप्रकारनी लोकोनीसेवा करवायोग्यहोय पछेगुरुनापसायथी तेअवस्थात्यजी यतिनोवेषपा मीतथायणाकष्टें कांइकशास्त्रनुंजणवुंपामी तथातेमांवली कोइकआचार्यउपाध्याया दिकपदवीपामिने वाचालपणा प्रमुखकजार्यें भोलालोकोनेवशकरी तेहनाकरेला जे दानपूजा सत्कारादिक तेपोकरीने अहंकारधरतो थको पोताना आत्माने राजातु ल्यगणे पण एमनजाणेजे हुंते शीगणतिमांछुं एसर्वे दानपूजादिक जे थायछे तेतो श्रीजिनेश्वरना मार्गने थायछे तेमाटेहाइतिखेदे तेप्राणी उतावलुं दुर्गतिजे नरकादिक तेमांजाशे माटेगर्वनकरवुं ॥ ५२ ॥

प्राप्यापि चारित्रमिदं दुरापं स्वदोषजैर्श्वेविषयप्रमादैः ॥ भवां बुधौ धिक् पतितासि भिक्षो हतोऽसि दुःखैस्तदनंतकालं॥५३॥

त्यक्तहृदयमान जेहनु महाफलअनुभवपणे एहवा सयमनेविषे तु कांउद्यम नथी करतो सर्वथा उद्यमकरवोज युक्तछे ॥५८॥ इति श्री अध्यात्मकल्पद्रुमे यतिशिक्षानिधानोनाम त्रयोदशोधिकार सपूर्ण ॥

अथ सामन्यतो यतीन् विशेषधर्मस्यगृहिणश्चाश्रित्य मिथ्यात्वादिसंवरोपदेश ॥ मिथ्यात्वयोगा विरतिप्रमादा नात्मन्सदा संवृणु सौख्य मिच्छन् ॥ असंवृता यच्चवतापमेते सुसवृता मुक्तिरमा च दद्यु ॥१॥

अर्थ॥ हवे यतिने तथासम्यक्त्वमूलबारव्रतधारक श्रावकने साधारण मिथ्यात्वाविरति कषाय योग निरोधोपदेश तथा सवरोपदेश नामा चौदमो अधिकारकहेछे तिहांप्रथम कर्मबधनाहेतुजे मिथ्यात्वादिक तेहनुंसवरकहेछे हेआत्मातु सुखनेवांछतो होयतामिथ्यात्वजे अभिग्रहिकादिकपाच तेमाअभिग्रहिक तेपोतानाशास्त्रादिकना ममत्वथी कदाग्रहकरवो तेकुतीर्थिपाखडादिक बीजुअनाभिग्रहिक ते सर्वे देवा सर्वे गुरुव सर्वे धर्म आराध्या एहवोअभिप्राय जेसामान्यप्राकृतलोकोनोते त्रीजुआभिनिवेशिक ते वस्तुनु यथास्थित स्वरूपजाणेथके पण कोइदुष्टाभिनिवेशना वशथी पोतानु मनथापवानेअर्थे गोष्टीमाहिलादिकनीपेठे असत्यरूपणानुकरवु चोथोसांशयिक त देवादिकतत्वनेविषे आसाचुके आसाचु एमसदेहधरवो पाचमु अनाभोगिकते अनानाभोगवशथकी एकेंद्रियादिकनेविषे जीवादिकतत्वनु अणजाणवु ए एपांचमिथ्यात्व तथा अशुभमनोयोगादिकत्रण अनेअविरतिते प्राणातिपातादिकपाच तथाप्रमाद जे मद्यादिक पाच एचारेनेसदाकाललगे सवरवुकेमके एचारेने अणसवरवाथकी संसारनातापप्रत्ये आपे अने सवरवाथकी मुक्तिरूपिणी लक्ष्मीनेआपे ॥ १ ॥

मन सवृणु हे विद्वन्नसंवृतमना यत ॥
याति तडुलमत्स्यो द्राक् सप्तमी नरकावनी ॥ २ ॥

अर्थ॥ हवेप्रथमथी मननुसवरउपदेशेछे हेपंडितआत्मा तुतारामननेसवर केमके मनने सवरे रहित एवुजे तडुलमत्स्य तेउतावलु थोडाकालमाज सातमानरकपृथ्वीये जइअवतरे एमत्स्यसमुद्रमाहेला महोटामत्स्योनी आखनीपापणमाहे सूक्ष्मपणे गर्भे सातमीनरकथीचवीनेअवतरेछे तेमत्स्य तडुलप्रमाणगर्भजथाय पछेतेमहामत्स्यना मुखनाफाडमा पेसता निकलता एहवाअनेकन्हाना मत्स्यादिकदेखीने तेतडुलमत्स्यएहवुचितवेजे हाहाइतिखेदेजो माहारी आवडीमोहोटी कायाथइहोततो हुयसर्वजीवनाकोळियाकरु पणएमाथीएकेनेजावानआपु एवुमहादुर्ध्यान चितवतोथको अतर्मुहूर्तप्रमाण आयुभोगवीने एकमुहूर्तने अतरेवली सातमीनरकपृथ्वीयें जइ अ

वली एरीतें जीव ते वचन तथा कायायें अशक्य कोहोय तो पण मात्र एक मनना ज अ
संवरथकी तंडुलमत्स्यनी पेठें दुर्गतिगामी थाय ॥ २ ॥

प्रसन्नचंद्रराजर्षे र्मनःप्रसरसंवरौ ॥ नरक
स्य शिवस्यापि हेतुभूतौ क्षणादपि ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ वली ते उपरज दृष्टांत कहे छे ह्वाणि मननुं प्रसरजे दुर्ध्याननी प्रवृत्ति अने संवरजे दुर्ध्यानथी निवृत्ति ते बेहु एक क्षणमात्रमां जेम प्रसन्नचंद्रराजऋषिने नरकनां अने मुक्तिनां पण कारण थया केमके तेने मनना दुर्ध्यानथी एक क्षणमात्रमां सातमां नरकनुं दल मेलव्युं अने तेज मनना संवरथी एक क्षणमां केवलज्ञान पण उपार्ज्युं. ॥ ३ ॥

हवे संक्षेपथी ते प्रसन्नचंद्रराजऋषिनो संबंध लखीयें छैयें क्षितिप्रतिष्ठितपुरमां प्रसन्नचंद्रराजा राज्य करता हता अन्यदा तिहां श्रीवीरस्वामी समोसर्या प्रसन्नचंद्रराजा सह परिवारें वांदवा आव्यो देशना सांभली वैराग्य पाम्यो पुत्रने राज्ये स्थापी श्रीवीरपासे पोते दीक्षा लीधी अनुक्रमे गीतार्थ थयो अन्यदा विहार करतो राजगृहनगरें आव्यो तिहां जिनकल्पीनी तुलनाने अर्थे स्मशानमां काउस्सग्ग धरी रह्यो छे एटलामां श्रीवीरस्वामी राजगृहनगरें समोसर्या ते नगरलोक सर्व भगवंतने वांदवा जाय छे एटलामां कोइएक बे वणिक ते क्षितिप्रतिष्ठितनगरथी आव्या ते मांथी एक वणिक प्रसन्नचंद्रराजर्षिने जोइ बोल्यो के धन्य छे आपणा राजाने जे राज्यलक्ष्मी तृणनी माफक त्यजीने ध्यानाधिरूढ थको उग्रतप करे छे ते सांभली बीजो वणिक बोल्यो के अहो धिःकार छे एना तपने एनुं मुख जोवा योग्य नथी केमके एणे बापडा बालकपुत्रने राज्य आपी मूढ थइ निकल्यो अने पाछलतो सीमाडे बीजा राजायें आवीने बालकनुं राज्य हरी लेवा नगर घेर्युं छे नगर तथा देशना लोक सर्वे अनाथ थया थका बहुत लपे छे माटे अभागीए घणुं अनर्थ थाशे तेथी एलेंशुं धर्म अधर्म छे ते सांभली प्रसन्नचंद्रराजर्षि ध्यानथी चूकीने चिंतववा लागो के अहो मुज बेठां माहारूं राज्य ले एवो कोण छे एम रौद्रध्यानमां व्याप्त थइने मनना योगें ज महा संग्राम करवा मांड्यो ते समयें श्रेणिकराजा श्रीवीरने वांदवा जातां मार्गमां ते काउस्सग्गधर साधु देखी भक्ति पूर्वक वांदी तेहनी उग्रतपस्याने अनुमोदतो समोसरणे पहोतो त्यां श्रीवीरने वांदीने पूछ्युं जे स्वामी ए प्रसन्नचंद्रराजर्षि ध्यानारूढ अवस्थामां में वांद्यो ते अवस्थाने समयें काल करे तो कोण गति पामें भगवंतें कह्यु सातमी नरक पामें ते सांभली श्रेणिक संभ्रांत थयो हवे प्रसन्नचंद्रराजर्षि पण मनथी संग्राम करतां सर्व शस्त्र खूट्यां अने एक कोइ महोटा शत्रुनी साथे युद्ध करतां आयुध सर्व नष्ट थयां छे त्यारे जाण्युं जे माथे लोढानो टोप पहेर्यो छे ते लइने शत्रुने मारूं एम चिंतवी माथे हाथ नाख्यो एटले मस्तक तो लोचितमुंडेलुं

डदेवालागो एवामाफरीश्रेणीके वीरनेपुठ्यु हेस्वामीआसमये राजर्षिकाळकरेतोगी
तिपामे नगवतेअनुत्तरविमानकह्यु तेसान्नळीविस्मितथइने श्रेणिकेपुठ्युं कहोस्वा
मी पहेलेप्रश्नेतोतमे नरककह्यो तेएतपस्वीनेकेमसन्नवे अनेएकमुहूर्तनेआतरे अनु
त्तरविमानकह्यु तेपणअसमजस अथवा न्नातेकरीनेमे अन्यथासान्नळ्यु तेवारेन
गवते यथास्थित सर्ववृत्तातेंकरी श्रेणिकनोसदेह टाळ्यो एटलामा देवडुंदुनिना
नादसान्नळीने श्रेणीके पुठ्यु हेस्वामि आमहोत्सवक्याथायछे न्नगवतेकह्युजे प्रस
न्नचंद्रराजर्षिने केवलज्ञानउपनु त्यादेवता महोत्सवकरेछे एमएप्रसन्नचंद्रराजर्षिने
एकमुहूर्त्तनेअतरे मननोव्यापार नरकहेते अनेमुक्तिहेतेपणथयो ॥

मनोऽप्रवृत्तिमात्रेण ध्यानं नैकेंडियादिपु ॥ धर्म्य
शुक्लमन स्थैर्य न्नाजस्तु ध्यायिन स्तुम ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवेपवनसाधनादिकथी मननोरोधनिरर्थकछे तेकहेछे केवळमननीअप्र
वृत्तिजे मनोव्यापाररहितपणु तेणेकरीने एकेंडियादिकजे एकेंडिय बेंडिय तेंडिय चौ
रेंडिय असंज्ञिपचेंडिय तेहनेविषे ध्यानजे मनोरोध लक्षण तेथुनथी एटलेपवनसा
धनादिक मनोरोधकरवाथी जोध्यानथायतो एकेंडियादिकनेविषेथाय केमकेतेहनेम
न्नावथीन मननेअन्नावेकरी मनोव्यापारनीप्रवृत्तिनथी तेथीपवनसाधनादिकतेकोइस
माधिलक्षण ध्याननोउपयोगीनथी श्वासरोधादिक क्लिष्टकर्मथी साह्मु मनव्यातिव
व्याकुलथाय पणजेधर्मध्यान अनेशुक्लध्यान तेणेकरीने मननीस्थिरतानेन्नजे एवाजे
ध्याननाकरनार तेनेज स्तवियेंछेयें एटलेध्यानते तेनुजप्रमाणछे इतिन्नाव ॥ ४ ॥

सार्थं निरर्थकं वा यन्मन सुध्यानयन्त्रित ॥ विरत
डुर्विकल्पेन्य पारगास्ता स्तुवे यतीन् ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेध्यानेकरी जेहनुमनसार्थकके०सफलछे अथवानिरर्थकके०निष्फलछे
तोपण शुनध्यानेकरियंत्रित एटलेसारुन्नूथकु डुर्विकल्पजे अशुन्नकार्यनामनोरथत
ह्यीविरम्युंछेतोतेमहाध्यानजछे एहवाजे ससारनापारगामी साधुतेहने हुस्तवुठु ॥ ५ ॥

वचोऽप्रवृत्तिमात्रेण मौन के के न बिभ्रते ॥ निर
वद्य वचा येषा वचोगुप्तास्तु तास्तुवे ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेवचनयोगनु सवरउपदेशेछे केवलवचननीअप्रवृत्ति एटलेमात्र वच
ननेज अणउचरवेकरीने कोणकोणएकेंडियादिक तथा पचेंडियमांपण रोगवि

थयो तथा मनुष्यमांपण मुंगाबोबडाप्रमुखप्राणी मौनपणानेनथीवरतातुं एटलेतेसर्वेमौनपणोजधरेछे तोतेथी तेहने वचनगुप्तिवंतनकहियें पण जेहनुंवचन निरवद्यके० पाप रहितहोय एटलेवचनबोलवानी शक्तिछतांपण सर्वथासावद्यवचननबोले तेनेवचनगुप्ति वंतकहियें तेवानेदुंःखवुंतुं पणमात्रमौनपणोज धरवाथी वचनगुप्तिवंतनकहियें ॥६॥

निरवद्यं वचो ब्रूहि सावद्यवचनैर्यतः ॥ प्रया

ता नरकं घोरं वसुराजादयोद्रुतं ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेदृष्टांतेकरीने सावद्यवचननुं अनिष्टफलदेखाडेछे हेप्राणितुं पापरहितवचनबोल केमके सावद्यवचनेकरीने वसुराजा प्रमुख ते घोररौद्र एहवोजे नरक तेने पाम्यां तेवसुराजानोसंबंध श्रीहेमाचार्यकृत रामचरित्रमांथी विस्तारेंजोइलेवो एमजाणी असत्यवचन सावद्यवचननो परिहारकरवो ॥ ७ ॥

इहामुत्र च वैराय दुर्वाचो नरकाय च ॥ अग्निद

ग्धा. प्ररोहंति दुर्वागदग्धाः पुनर्नहि ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ वलीतेहिजकहेछे जेदुर्वचनो तेआनवमां अनेपरनवमांपण वैरकारीयाय अनेवलीनरकदाइपणथाय जेमाटेअग्नियेंकरीदाधाजेवृक्षादिक तेफरीनवपल्लवथाय पण दुर्वचननादाधाजेमनुष्य तेनवपल्लवनथाय एटलेस्नेहांकुर तेनेप्रगटेनहीं केमके दुरवचनथी उपनोजे वैरनाव तेजन्मांतरेंपणनमटे इतिनावः ॥ ८ ॥

अतएव जिना दीक्षा कालादाकेवलोनवं ॥ अव

द्यादिनिया ब्रूयु र्ज्ञानत्रयभृतोपि न ॥ ९ ॥

अर्थ॥ एटलामाटे दीक्षालीधापछे केवलज्ञानउपजेंतिहांलगें जिनजेतीर्थंकरदेव तेमति श्रुत अवधि एत्रणज्ञानना धारकछतांपण अवद्यजपाप तथाआदिशब्दथी वचनते ध्यानविघातादिकछे एमजाणी तेहनाजयथी बोलेनहीं यद्यपि नगवंतने छद्मस्थपणे मनपर्यवज्ञाननी सत्ताहोय तथा पिइहांत्रणज्ञानना धारककह्या तेजाणियेंछेयेंजे मनपर्यवज्ञानतुंतो मात्र मननो पर्यायजाणवानुंज सामर्थ्यछे तेमाटेआचार्यें इहांकह्युनहीं अनेउपाध्यायश्री रत्नचंद्रगणिकृत एजग्रंथनी टीकामांपण एमजलख्युंछे वलीविशेषबुद्धिवंतेविचारवुं ॥ ९ ॥

कृपया संवृणु स्वांगं कूर्मा ज्ञाननिदर्शनात् ॥ सं

वृतासंवृतांगा यत् सुखदुःखान्यवाप्नुयुः ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेकायसंवरकहेछे हेप्राणि तुंकरुणायेंकरीने कांचबानादृष्टांतनाजि

जेमहापुरुपछे ते तो विषयादिकनो योगछतापण रागद्वेष अने मनयोगना अनावथी एटलेजेमनथकी रागद्वेषरहितपणे सवरवतछे तेओनेहुंस्तवुंछु ॥ १८ ॥

कपायान् संवृणु प्राज्ञ नरक यदसंवरात्॥
महातपस्विनोप्यापु करटोत्करटादय ॥१९॥

अर्थ ॥ एमइंद्रियआश्रित संवरकहीने हवेकषायआश्रितकहेछे प्राज्ञके० हेवि वेकीप्राणी कषायजे क्रोधादिक तेनुतुसवरकर केमकेएककपायना असवरथकी करट अने उक्करम प्रमुख महातपस्वी महानुनाव तेपणनरकनेपाम्या एकरड अनेउक्करड बे ब्राह्मणमासीयाइ नाइहता ते वैराग्यथकी दीक्षालइ उग्रतपकरी अन्यदाकुणाला नगरियें कोटनाघरनालामा चोमासुरह्या तिहानगरना जलप्रवाहनेपूरें साधुरखेतण इजाय एमजाणीदेवताये कुणालानगरीउपर वरसादयनाव्यो कुणालागिवायवीजे सर्वत्रवर्षादवरस्युं केटलेक दहाडे तेवातजाणी नगरलोके ताडनातर्जनाकरी तेसाधु नेकाढ्या तेवारे क्रोधजेखर करमबोल्यो वर्षमेघकुणालाया तेवारे उकरमबोल्यो दि नानि दश पच च वलीकरमबोल्यो मुशलप्रमाणधारानि वलीउक्करमबोल्यो यथारात्रा तथा दिवा तेवचनथी अहोरात्रमुशलधाराये कुणालानगरीउपर मेघवूठो तेहथीकु णालानगरी लोकसहिततणाइगइ महाअनर्थथयो तेवारपछें त्रीजेवर्षे साकेतपुरें त पापनेअणआलोवेछते करमअनेउक्करडवेमरीने सातमीनरके कालनामा नरकावास मां बत्रीससागरोपमनेआयुपे नारकीपणे अवतर्या एमजाणी कपायनोसवरकरवो

यस्यास्ति किंचिन्न तपोयमादि ब्रूयात् स य तत्तुदता परान् वा॥ य
स्यास्तिकष्टाप्तमिदं तु किं न तद्भ्रंशनी सद्गुणते स योगान् ॥२०॥

अर्थ॥हवेवलीमनोयोगादिकनो सवरकहेछे जेप्राणिनेकाइ तपसयमादिकनथी अ विरतिछे तेप्राणिजेमतेम असबधबोले तथाअन्यजीवनेपीडाकरे एटले अव्रती जेजेअ रुत्यकरे तेतेघटेछे पणविरतिवतप्राणितो एतपसयमादिक घणुजकष्टेंप्राप्तिथायछे ए मजाणी तद्भ्रंशनी के० रखेमहारांतपसयमनो विनाशथाय एमवीहीतोथको मनोयो गादिकने केमनसवरे एटलेविरतिवतने सर्वथासवरकरवुज एनावार्थछे ॥ २० ॥

भवेत्समग्रेष्वपि सवरेपु पर निदान शिवसपदा य ॥ त्यजन्
कपायादिजदुर्विकल्पान् कुर्यान्मन संवरमिद्धधीस्त ॥ २१ ॥

अर्थ ॥ हवेवलीमननासवरनु आधिक्यतापणुकहेछे जेमननो सवरछे ते वीना जेटला सवरछे तेसर्वमा मोक्षसपदानु परमकारणछे ते माटे विशेषबुद्धिवत

पुरुषतो कषायादिकथीउपनाजे कुविकल्पते त्यजतोथको मननोसंवरकरे एटले मु क्तिनुं मुख्यकारणजाणीने विवेकीपुरुषें प्रथममननुं संवरकरवुं इतिभावः ॥ २१ ॥

तदेवमात्मा कृतसंवरः स्यात् निःसंगताभाक् सततं सुखेन॥
निःसंगभावादथ संवरस्तद्द्वयं शिवार्थी युगपद्भजेत ॥२२॥

अर्थ॥हवे ए अधिकारनो उपसंहारकहेछे तेमाटे एमपूर्वोप्रकारें कृतसंवरके० संव रवंतजे आत्मा तेसदाकालें सुखेकरीने नि.संगपणानेभजे अथवा वली निःसंगपणाथी संवरथाय एटले एवेहुनो अन्योन्यकार्यकारण भावजाणवो केमके कोइकनेनिःसंग पणाथी संवरआवे अनेकोइनेसंवरथी नि.संगतापणुंआवे माटेमोक्षार्थीपुरुष तेसंव र अनेनिःसंगता एवेनेसमकालेसेवे ॥ २२ ॥ इति श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमे मिथ्यात्वादि संवरोपदेशाख्य श्चतुर्दशोऽधिकार समाप्त ॥ १४ ॥

अथ शुभवृत्तिशिक्षोपदेशः॥आवश्यकेष्वातनु यत्नमाप्तो दितेषु शुद्धेषु त मोपहेषु ॥ न हंत्यभुक्तं हि न चाप्यशुद्धं वैद्योक्तमप्यौषधमामयापदं॥१॥

अर्थ ॥हवेशुभप्रवृत्तिशिक्षा एहवेनामे पन्नरमोअधिकारकहेछे एअधिकारमां य तियोग्यशिक्षा यतीनेजाणवी अनेश्रावकयोग्यशिक्षा श्रावकनेजाणवी इहांप्रथम आ वश्यक करवायोग्यजाणीने आवश्यकआश्रयी उपदेशकहेछे हेसाधु तथा हेश्रावक तुं पापनानिवारक अनेसर्वज्ञभाषित एवांजेशुद्धनिर्मल आवश्यक सामायिकादिक तथाअवश्यकरणीय पोसह उपवास आलोयणादिक तेहनेविषेउद्यमकर तेनाउपर दृष्टांतकहेछे जेम वैद्यनुकह्युजेऔषध तेनखाधुंथकुं तथाअशुद्धजेकाचुं हरितालप्रमुख तेखाधुंथकुंपण रोगनिवारक नथाय तेम सर्वज्ञभाषित आवश्यकजाणीनेपण तेह नीक्रियानकरीयें अथवाअशुद्धक्रियाकरियें तोतेहथीकर्मक्षयनथाय तेमाटेदोषरहित शुद्धक्रियायेंकरी आवश्यकादिकनो उद्यमकरवो एउपनयछे इहांप्रसंगथी सामायिकना दोषलखियेछैयें १ वस्त्रेंतथाजानुजायेकरीने पलांठीबांधे २ आसनआघुपाछुफेरवे ३ चपलपणेसर्वदिशायेंजोवे ४ गृहसंबंधीसावद्यकर्मकरें ५ भितीस्थंभादिकेओठंगीने से ६ अंगोपांगमोडे ७ आलसमोडे तथाधर्मकार्येआलसकरे ८ हाथपगेंकरकडा व जाडे ९ शरीरनोमेलउतारे १० खाजिखणे ११ विसामणकरावे १२ निद्राकरे ए बारदोषकायथकीजाणवा तथा १ कुवचन कोइनुंमर्मनिंदादिकबोले २ सहसात्कारे अविचार्युंबोले ३ आर्तिमयविसंस्थलवचनबोले ४ आपछंदेबोले ५ सूत्रभणतो अ

थवानवकारगुणतो वचनसंक्षेपकरे ६ कलहविवादकरे ७ राजकथादिकविकथाकरे ८ हास्यनावचनकहे ९ सपदारहितसूत्रनणे १० जावाआवरनाआवेश आपे ए दशदोषवचनथीजाणवा वली १ निर्विवेकीमनेकरे २ यशकीर्तिनीवांछायेकरे ३ धननाजनेअर्थेकरे ४ गर्वथीकरे ५ जयथीकरे ६ धनपुत्रादिनेअर्थेनियाणुकरे ७ सामायिकनाफलनो संदेहकरे ८ रीसधरीसामायिककरे ९ विनयरहितसामायिककरे १० नक्तिरहितसामायिककरे एदशदोषमनथीउपजे एम मन वचन अने कायाना मलीने बत्रीशदोषसामायिकनात्यजवा तथावांदणाना ३२ दोष अने काउसग्गना १९ दोष ते नाष्यादिक ग्रंथथी जाणीने त्यजवा ॥ १ ॥

तपांसि तन्याद्विविधानि नित्यं मुखे कटून्यायतिसुंदराणि ॥ विघ्नति तान्येव कुकर्मराशिं रसायनानीव दुरामयान् यत् ॥७॥

अर्थ ॥ हवेतपप्रवृत्तिआश्रयीउपदेशछे मुखके० प्रथमकरतीवेलायेतो दुःखदायिकसहेवापडे तेमाटे कडवाछे पण आयतिके० उत्तरकालें सुखनाकरनार एहवाजेविधप्रकारना छठ अठम दशमादिक तप तेनित्येंकरवा केमकेतेतपज कर्मनासमूहनेनिवारेछे तेउपरदृष्टांतकहेछे जेमरसायन पारो हरिताल सुवर्णादिक औषधिओतेहिज ज्वरअनेक्षयादिक दुष्टरोगोनेनिवारे तेम इहांपण उपनयलेवु ॥ २ ॥

विशुद्धशीलांगसहस्रधारी जवानिशं निर्मितयोगसिद्धिः ॥ सहोपसर्गांस्तनुनिर्ममः सन् जजस्व गुप्तीः समितीश्च सम्यक्॥८॥

अर्थ ॥ हवेतपकरनार प्रायेशीलवतजोइये तेमाटेशीलआश्रयीउपदेशछे हेसाधु तुविशुद्धनिर्मलएवाजे अढारसहस्र शीलांगरथतेने धरतोथको नित्ये निर्मित योगसिद्धिके० निपजावीछे अष्टांगयोगनीसिद्धिजेणे अथवायोगजे मनोयोगादिक तेहना दुःप्रणिधानना निवारवारूप समाधिनी सिद्धिकर एटलेशीलांगधरतोथको मनवचनकायाना योगवशकर एनावार्थछे वलीदेहनेविषे ममत्वरहितथको देवादिकनाकरेला उपसर्ग तेनेसहनकर अनेपांचसमिति तथात्रणगुप्ती तेहनेजज ॥ ३ ॥

स्वाध्याययोगेषु दधस्व यत्नं मध्यस्थवृत्त्यानुसरागमार्थान् ॥ अगारवो जैक्षमटान्विषादी हेतौ विशुद्धे वशितेंद्रियौघः ॥९॥

अर्थ ॥ हवेशीलवतने मनस्थिरकरवानिमित्त जेसिद्धांतादिकनुं स्वाध्याय नणवु

जणाववुं तेहनुं योगजे मनवचनकायायेंकरी नित्यअन्यास करवानेविषे उद्यमकरे वलीआगमनाजे अर्थ तेमध्यस्थवृत्तियें कदाग्रहरहितपणे अनुसरे एटले कदाग्रहें करीने जिनवचननाअर्थनी परुपणाजूठीनकरे वली अगारवके० रुद्धिगारव रसगारव सातागारव तेणेरहितथकुं अनेविशुद्धिनिर्मलहेतुजे मोक्षसाधन तेहनेविषे विषादरहितथकुं एटलेशुद्धक्रियाकरतां अविषिन्नचित्तथकुं अनेवलीवशकीधांछे इंद्रिय जोतमूहजेणे एहवुंथकुं नैक्षेजेउंचनीचकुल शुद्धमानआहारतेहनी गवेषणाकरे ॥४

ददस्व धर्मार्थितयैव धर्म्यान् सदोपदेशान् स्वपरादिसाम्यात् ॥
जगद्धितैषी नवभिश्च कल्पै ग्रामे कुले वा विहराप्रमत्तः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेसज्झायनुंफलतो शुभउपदेशछे तेमाटेशुभोपदेशआश्रीकहेछे हेसाधो तुं पोताना अनेपारकानेविषे समानपणे उपदेशकर एटले आमाहारोभक्तछे दाताछे धनाढ्यछे एहवानेधर्मकहुं अथवा आ मिथ्यात्वी कृपणदरिद्रीछे एहवानेउपदेशको णकहे इत्यादिककल्पना त्यजी केवलधर्मार्थीपणेकरीनेज पण आहारवस्त्रादिकने अर्थेनही एप्रकारें नित्यधर्मसंबंधीयाजे उपदेशतो कहेतोरहे अनेवली सर्वसंसारीजीवने हितवांछतोथको नवकल्पेकरीने ग्रामनगरादिकनेविषे शुभ उपदेशकरतोरहे तथाविहारकरवानी अशक्तें कुलके० ग्रामनगरादिकनो एकप्रदेशतेनेविषे प्रमादरहित थकुं विहारकर इहांकल्पतो मागसिरप्रमुख आठमास जेऋतुबद्धकाल तेहनाआठकल्प अनेश्रावणादिक चारमास चोमासना तेनोएककल्प एरीतें सर्वमलीने नवकल्प जाणवा

कृताकृतं स्वस्य तपोजपादि शक्तीरशक्तीः सुकृतेतरे च॥ सदा
समीक्षस्व हृदाऽथ साध्ये यतस्व हेयं त्यज चाव्ययार्थी ॥६॥

अर्थ ॥ हवेशुभोपदेशनाकहेनारने कृत्याकृत्यनोविचारजोइयें तेमाटेतेआश्रयीकहेछे हेसाधु तथाहेश्रावक तुंपोतानुं तप जप प्रमुखजेकर्म ते कृत्याकृत्यकहेतां एटलुंमेंकीधुं एटलुंमेनथीकीधुं एहवुंविवेचन तथाशक्ति अनेअशक्ति तथापोतानुंसुकृत अनेदुःकृत एटलांवाना पोतानामनसाथेंसदायविचारीने तेवारपछे मोक्षार्थीथकुं साध्यजे साधवायोग्य तपोनुष्ठानादिक तेहनेविषेउद्यमकर अनेवली हेयकहेतां त्यजवायोग्य जेविषयकषायादिक तेहनेत्यज सत्पुरुषने चित्तरूपिणीभूमिनेविषे गुरुपदेश तेबीज वृद्धिरूपक्षोप पछेतेमां विचाररूप जलनासिंचवाथी सुकृतरूपवृक्ष विस्तारपामेछे माटे मोक्षार्थियें हेयउपादेयज्ञेपना विचारपूर्वक धर्मोद्यमकरवो ॥ ६ ॥

परस्य पीडापरिवर्जनात्ते त्रिधा त्रियोग्यप्यमला सदाऽस्तु ॥
साम्यैकलीन गतदुर्विकल्प मनोवचश्चाप्यनघप्रवृत्ति ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेजेविचारवतहोयते त्रियोगीनिर्मलजोऽये तेमाटेतेआश्रयीकहेछे हेआ त्मात्रियोगीजे मनवचनकायाना त्रणेयोगतेणेकरी सदाऽनिर्मलथा एटलेसर्वजीवउप रे हितबुद्धिराखीने मनवचनकायानायोग निर्मलकर एजावार्थछे केमके परनेपीडाव र्जवायकी काययोगतो निर्मलथयोज अनेतेकाययोगनी निर्मलताथी मनपणसमता येलीन अनेदुर्विकल्परहितथाय तथावचनपण पापव्यवहाररहितथाय इहांआत्मा यें काययोग सुगमछे माटे जुदोकरीने नकह्यो ॥ ७ ॥

मैत्री प्रमोद करुणा च सम्यक् मध्यस्थताचानय साम्यमात्मन् ॥
सद्भावनास्वात्मलय प्रयत्नात् कृताविराम रमयस्व चेत ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ हवेएत्रियोगीनेनिर्मलताते मैत्र्यादिजावनाथीथाय तेमाटेतेकहेछे हेआ त्मातु मैत्रीतथाप्रमोद तथाकारुण्य अनेमध्यस्थता ए चारजावना तेआत्मानेविषे आण अनेवलीतेजावनायेंकरी सम्यक्प्रकारें समताआण वली प्रयत्नात्के० पवि त्रवीर्यफोरववाथी चित्तने आत्मलयके० ध्यानलीन अनेध्यानथी अविछिन्न एहवु थ यकु शुजजावनाजे अनित्यादिक तेहनेविषेरमाड ॥ ८ ॥

कुर्यान्न कुत्रापि ममत्वजाव न च प्रजो रत्यरती कषायान् ॥ इहापि
सौख्य लजसेप्यनीहो ह्यनुत्तरामर्त्यसुखाजमात्मन् ॥ ९ ॥

अर्थ ॥ हवेएजावनाओते ममत्वनात्यागथीहोय तेमाटेतेआश्रयीकहेछे हेसमर्थ आत्मा जोतुकोइवस्तुनेविषे ममत्वनकरे अनेवली रति अरति अनेकषाय नकरे ए हवोतु वाछनारहितथको रहेतो आजवेंज अनुत्तरविमानवासी देवतानाजेवु सुखपा में केमके अनुत्तरवासी देवतामां स्वामिसेवकनो व्यवहारनथी तेमाटे ससारिक सुख जोतां अनुत्तरविमाननो सुखते सर्वोत्कृष्टजाणवु ॥ ९ ॥

इति यतिवरशिक्षा योऽवधार्य व्रतस्थश्चरणकरणयो
गानेकचित्त श्रयेत ॥ सपदि जवमहाब्धिक्लेशराशि
स तीर्त्वा विलसति शिवसौख्यानन्त्यसायुज्यमाप्य ॥ १० ॥

अर्थ ॥ हवेएअधिकारनो उपसहारकहेछे एप्रकारें यतिवरजे जलासाधु उपलक्ष

णथी नजाश्रावकपणसेवा तेनसंबंधीनीजेशिक्षा तेनेचित्तमांधरीने एकाग्रचित्तथकुं चरणकरणयोगजे चरणसित्तरी अनेकरणसित्तरीनागुण तेनेजेसेवे तेसाधु तथा ते श्रावक शीघ्रके० उतावळुं क्लेशडुःखना समूहरुपजे संसारमहासमुद्र तेथकीतरीने मोक्षसुखनुं अनंतपणुं तेहनुं सायुज्यके० जेसहचारीपणुं तेपामीने वळीमोक्षनाअविनाशीसुखनीपरे पोतेपणत्यां अविनाशीनावपामी विलसतिके० सर्वदासुखनेअनुनवे ॥१०॥

इति श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमेऽशुनप्रवृत्तिशिक्षोपदेशाख्यः पंचदशोअधिकारसमाप्त.

अथ ग्रंथोपसंहाराय साम्यसर्वस्वं ॥ एवं सदाज्या
सवशेन सात्म्यं नयस्व साम्यं परमार्थवेदिन् ॥ यतः
करस्थाः शिवसंपदस्ते नवंति सद्यो नवनीतिनेतुः ॥ १॥

अर्थ ॥ हवेग्रंथनाउपसंहारनेअर्थें साम्यसर्वस्वनामें सोळमोअधिकारकहेछे हेपरमार्थनाजाण विवेकीपुरुष तुंएमपूर्वोक्तप्रकारें अन्यासवशेंकरीने साम्यजेसमता तेहने सात्म्यकहेतां आत्मासाथे ऐक्यपमाड जेसमताथी नवनीतजे संसारसंबंधी नय तेहनेजेदवावांछतो एवोजेतु तेतुजने मोक्षनी संपदाओ ते तत्कालमात्र करस्था कहेतां हस्तप्राप्तथाय ॥ १ ॥

त्वमेव डुःखं नरकस्त्वमेव त्वमेव शर्मापि शिवं त्वमेव ॥ त्व
मेव कर्माणि मनस्त्वमेव जहीह्यवज्ञा मवधेहि चात्मन् ॥२॥

अर्थ ॥ हवेआत्माने अविद्यानोपरिहार अनेसमतानुंधरवुं कहेछे हेआत्मातुंडुःखनेकारणें प्रवर्त्त्यो माटे डुखतेतुंजछे एमआगळपण सगळीवस्तुनुं आत्माजकारणरूपजाणवुं वळीनरकनुंकारणतेपणतुंजछे वळीसुखपणतुंछे अनेमुक्तिपणतुंछे वळीकर्मपणतुंछे अने मनोव्यापारना प्रकाशकपणाथी मनपणतुंछे तेकारणमाटे अवज्ञाजेधर्मकार्यनेविषे अनादरकरवो एटलेहमणा धर्मनथीथातो तोपछेकरीश इत्यादिक कल्पना त्यजीने अवधेहिकहेतां धर्मकार्यनेविषे सावधानरहे ॥ २ ॥

निःसंगतामेहि सदा तदात्मन्नर्थेष्वशेषेष्वपि साम्यनावात् ॥
अवेहि विद्वन्ममतैव मूलं शुचां सुखानां समतैव चेति ॥ ३॥

अर्थ ॥ हवेसर्वत्रपणे निःसंगपणानुं प्राधान्यपणुंकहेछे हेआत्मा तेकारणमाटे सकळपदार्थनेविषे समतानावथी सदाय निःसंगपणाने पाम अनेवळी हेनिपुणप्राणि

सकलशोकनुमूल ते ममताजछे अनेसकलसुखनुंमूलते समताजछे एहवु जाणीने म
मताने त्यज अने समताने आदर इतिजाव ॥ ३ ॥

स्त्रीषु धूलिषु निजे च परे वा सपदि प्रसरदापदि चात्मन् ॥ त
त्त्वमेहि समता ममतामुक् येन शाश्वतसुखाद्वयमेषि ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जेनि समताते ममत्वमुकवाथीजथायछे तेमाटेममतात्यजवातु उपदेश
छे हेआत्मा ते पूर्वोक्तकारणथी तुममतारहितथको स्त्रीनेविषे अनेधूलिनेविषे वली
स्वजननेविषे अनेपरजनूनेविषे तथा वलि संपत्तिनेविषे अने विस्तारपामतीआपदाने
विषे समतानेपामरेकरीने सरखोपरिणामराखजे एटलेमोक्षसुखनोजोक्ताथाइश ॥४

तमेव सेवस्व गुरु प्रयत्ना दधीष्व शास्त्राण्यपि तानि विद्वन् ॥ न दे
यतत्त्व परिजावयात्मन् येभ्यो जवेत्साम्यसुधोपजोग ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ जेसमतातेज सकलपदार्थनो सारकरीनेउपदेशेछे हेविद्वन् हेआत्मन्
तुंप्रयत्नकरीने तेनिजगुरुनेसेव अनेगुरुसेवनाकरीनेशास्त्रपण तेहिजनण तथाशास्त्र
नणीने तत्त्वरहस्यपण तेजचित्तमांचितव केजेगुरुथी अनेशास्त्रथी तथाजेतत्त्वथी सम
तारूपीयुं जेअमृत तेनोउपजोग आस्वादपामे एटलेजेजेपदार्थनेतु समतानुकारणजा
ण तेतेपदार्थनुमरूपकर केमकेबीजासर्वपदार्थ तेनिरर्थकछे ॥ ५ ॥

समग्रसच्छास्त्रमहार्णवेन्य समुद्धृत साम्यसुधारसोऽय ॥ निपी
यता हे विबुधा लजेध्व मिहापि मुक्ते सुखवर्णिका यत् ॥६॥

अर्थ ॥ हवेआचार्यमयनें उपसहरतो ग्रयनीउपादेयतादेखाडेछे हेपंडितजनो
तमेसमग्र जलाने धर्मशास्त्र तेरूपीयो जेमहासमुद्र तेहथीउधखुजे एसमतारूपि
सुधारसरूप अमृतरसनेप्रत्यें तुमे पीयताकहेतां आदरसहितसानजो तयानणो ने
पीनसंघानोंकरण मुक्तिनासुखनी वर्णिकाकहेता वानगीनेपामो केमकेसमताना
मय जीवते आनोंकरण मुक्तिसुखने अनुनवेछे ॥ ६ ॥

शान्तरसजावनात्मा मुनिसुंदरसूरिजि कृतो ग्रंथ ॥
ब्रह्मस्पृहया ध्येय स्वपरहितोध्यात्मकल्पतरुरेष ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हवेग्रंथनेछेडे आचार्यपोतानानुनाम अनेग्रंथनुनाम जणाववाकहेछे स
र्वहितकरहेता मंदकरनाने नयापरजेश्रोतारमुख एवंदूनेहितकारी एवोजेआध्य

त्मकल्पद्रुमनामेग्रंथ तेतपगछाधिराज श्रीमुनिसुंदरसूरियेंकीधो ते एग्रंथ पंमितें ब्र ह्मजेज्ञान तेहनी वांछायें नणवुं अथवा ब्रह्मजे मुक्ति तेहनीवांछायें चिंतववुं.॥ ७ ॥

इममिति मतिमानधीत्य चित्ते रमयति यो विरमत्ययं नवाद्राक्॥स च नियतमतो रमेत चास्मिन् सह नववैरिजयश्रिया शिवश्रीः॥८॥

अर्थ ॥ हवेफलोपदर्शन द्वारें मंगलगर्नित उपसंहार वाक्यकहेछे जेमतिवंत पुरुष अध्यात्मकल्पद्रुमनामे ग्रंथनेनणि पोताना चित्तनेविपेरमाडे रात्रदिवसचिंतवे तेपुरुष संसारथकी थोडाकालमां विरक्तथाय अनेवलीएहनाज चितनथी तेपुरुषनेविपे सं साररूपीया शत्रुनीजे जयलक्ष्मी तेणेसहित शिवश्रीजेमोक्षलक्ष्मी तेमां रमिके० आश्र यीनेरहे एटलेतेसंसाररूप शत्रुनेजीतीने मोक्षरूपलक्ष्मीपामे. इतिअध्यात्मकल्पद्रुमे साम्यसर्वस्वनामा षोडशोधिकारः समाप्तः॥ १६ ॥

ए श्रीअध्यात्मकल्पद्रुमनामे ग्रंथनो बालाववोधार्थे उपाध्यायश्री रत्नचंद्रगणिकृत तथाउपाध्यायश्री विद्यासागरगणिकृत एबेटीकाजोइने में महारीबुद्धिने अनुसारें मुज सरखा स्वल्पबुद्धिवंत प्राणिना उपकारने अर्थें लेशमात्र लख्योछे तेमां अनाजोगथी तथाअज्ञानथी तथाभ्रांतिथी जेकांइसूत्रना तथाटीकाना अनुसारथी ओछुंअधकुं अयुक्त लखाणुंहोय तेहनुं मिछामीडुक्कडं अथवाकिहांएक सुगमपणानेअर्थे किहांएक साहचर्यथी किहांएकरूढिथी जेकांइ विनक्ति वचन लिंग कारक अन्वय प्रमुखनो विपर्यास कीधो होय तेअपराध बहुश्रुत गीतार्थेखमवो तथा उपकारबुद्धें अशुद्ध टालिने शुद्धकरवुं.

अथ प्रशस्तिः॥ श्रीमत्तपगणगगनां गणनासनतरुणतरणिनिनः॥श्रीराजविजयसू रिर्बभूव भुवि भूरि वितानयशाः ॥ १ ॥ योल्याक्षीद्भवं घनं सुविहितानुष्टानबद्धादरो लोकं कोकमिव प्रबोधमनयज्ञोभिश्च गोस्वामिवत ॥छित्वाटीकिटदर्पमुज्ज्वलपटांश्चक्रे वि शेषोज्ज्वलान् यो वाचाजितमालवेश्वरसितछत्रप्रभावोज्ज्वलः ॥२॥ रत्नत्रयप्रथितसंय मभृत्तदीय पट्टेश्वरत्नविजयाह्वयसूरिरासीत् ॥ येन प्रशांतरजसा प्रशमार्णवेन रत्ना करायितमनल्पगुणौघरत्नैः ॥ ३ ॥ तस्यान्वये निखिलभूतलगीतकीर्तिः श्रीहीररत्न इतिसूरिवरो विरेजे ॥ स्वर्गं गतोप्यखिलभक्तसमीहितानि योद्यापि पूरयति भव्य इवाम रद्रुः ॥४॥ तत्पट्टभूषणमणिर्जयरत्नसूरिः सर्वाग्रणीर्गुणिषु भूरिगुणाश्रयोऽभूत् ॥ श्री भावरत्न इति भावविदां वरेण्य स्तत्पट्टभूर्जयति संप्रति सूरिराजः ॥५॥ श्रीहीररत्नभृ

मुख्या शिष्या सुनिर्मलाभिख्या ॥ श्रीलब्धिरत्नविबुधा शास्त्रार्णवपारदृश्वान ॥६॥
श्रीसिद्धिरत्ननाम्ना पाठकवर्यास्तदन्वये तदनु ॥ श्रीहर्षरत्नवाचक, वरा वरीयोगुणैर्व
या ॥ ७ ॥ लक्ष्मीरत्नगणीशा आसन् दुर्वादिदनुजलक्ष्मीशा ॥ श्रीज्ञानरत्नगणपम
दाश्रवा साम्प्रतं जयंतु चिर ॥८॥ तच्चरणकमलसेवा भृंगस्तत्संगसमयतरग ॥ सुविदि
तकल्याणविमल गणिवरविहितार्थिनीनुन्न ॥ ९ ॥ बालावबोधवार्त्ता मध्यात्मसुद्रु
माख्यशास्त्रस्य ॥ मुनिहंसरत्न एता मतनोत्तनुबुद्धिसत्वहिता ॥१०॥ शोध्य सुतत्वैर्
निर्मथो ऽयं धीरनै प्रवाच्यमानश्च॥ सद्भावसपदाढर्य राचङ्गार्के चिर जयतात्॥११॥

इति श्रीमुनिसुदरसूरिकृतअऽध्यात्म
कल्पद्रुमो बालावबोधसहित मपूर्ण

॥ अथ श्री सीतलनाथष्टक ॥

वृषनतुयगर्नि वृपद सदा व्यजितदर्प्पकदर्प्पकच्छेदक ॥ अमितशजवनीतिविवर्नितं
जिनमहं प्रणमामि सुशीतल ॥ १ ॥ दृढरथाख्यकुलागनिनदन सुमतिधाम विचक्ष
णपुगव ॥ ठनिनिनिर्जितपद्मप्रभ वर जिनमहं० ॥ २ ॥ यमसुपार्श्वविभूषितविग्रह
विशदचद्रप्रभाननबंधुर ॥ सुविधिरजितभव्यजनव्रज जिन० ॥ ३ ॥ विबुधमोदकशि
तलवाग्भर म[illegible] कामकुटोपम ॥ सुवसुपूज्यपद शिवदायक जिन० ॥ ४ ॥ वि
गृहमनतगुणस्य रूपापर ॥ सदयधर्म्मप्रवृत्ति प्ररूपक॥
तिवितानविपादक धृतशम किल कुन्थमनिदितं ॥ विगतरो
०॥६॥पुगकपायजयप्रतिमल्लच कनकवर्णधर मुनिसुव्रतं॥
जिन० ॥ ७ ॥ विततधर्म्मरथांगकनेमिक निखिनविष्टप
नाशनवीरक ॥ जिन० ॥ ८ ॥ इति स्तुत श्रीजिनशीत
निधाने ॥ श्रीवीरचद्रस्य मजूकचद्र नाम्ना विनेयेन वशी
शीतलनाथाख्यदशमतीर्थाधिपतेरष्टक समाप्तम् ॥

॥ अथ श्री कल्याणसागरसूरिकृत माणिक्यस्वामिस्तवनप्रारंभः ॥

नमः सिद्धेभ्यः॥स्रग्धराछंदः॥स्वामी माणिक्यपूर्वस्त्रिभुवनतिलकश्चिंतितश्रीसुराद्रि स्त्रै लोक्योद्योतकर्ता प्रथिततरयशा श्चित्रकृन्नाममंत्रः ॥ श्रीमन्नोनाभिभूपान्वयगगनरवि र्मञ्जुकल्याणकांती राष्ट्रे तद्दक्षिणाख्ये निरुपममहिमा ख्यातिकारिप्रतापः ॥ १ ॥ द्रुतविलंबितछंदः॥ प्रवरधर्मधनार्पणकामगौ रमृतवाग्गुणरंजितनागरः॥रिपुसमूहनिवारणतत्परो वृषभचिन्हितपादकुशेशयः॥२॥ हरिणीछंदः॥ शुभमतिकरश्चंद्रादित्याधिको तरभास्वर स्त्रिभुवनमणि र्विश्वाधारो धरेश्वरकीर्तितः ॥ उपशमरसासक्तस्वांतोप्यनंत चतुष्टयी गुणमणिखनिर्नष्टारिष्टामयाधिजराव्ययः ॥ ३ ॥ पंचचामरछंदः ॥ अखर्वदेहराजितो यतीश्वरो घृणाप्रशीतमानसः कलाधरः ॥ अनेकलब्धिमंडितो कृपाकरः शिवाब्धिवृद्धिचंद्रमा नतासुरः ॥ ४ ॥ भुजंगप्रयातछंदः ॥ प्रभुर्मारुदेवश्चिदाल्हादली नः सदाचारलीलाविलासातिशाली ॥ महामोहमातंगपंचास्यकल्पो हितार्थी कलाभिल्पविज्ञानभावी ॥ ५ ॥ मालिनीछंदः॥ जलधिनिभगभीरः मारसारंगयोधो जितविषयविकारो ज्ञानबुद्धिप्रदाता॥ खलसमिरघनाकुर्देवदेवाधिराजः समवसरणशोभासिंधुपूर्णैधमेघः ॥६॥ नाराचछंदः ॥ श्वेतातपत्रचामरैर्युक्तो मनोज्ञपुद्गलैः ॥ भव्यांगिराशि वंदितो धर्मार्थमोक्षसाधक. ॥ ७ ॥ आर्याछंदः॥ देवध्येयो विमलः सुंदरवंशो नृपूत्तरात्मापि ॥ मान्य. सतामजस्रं सदोदयो वरातिशयधरः ॥८॥ गीतिछंदः ॥ त्रैलोक्यावासविभु. समस्तगुणरत्नकलितसाधुमनाः ॥ एनस्तमोनिशेशः सुश्लोकैर्धवलिताश आशादः ॥ ९ ॥ नगस्वरूपिणीछंद. ॥ सदार्थमार्गदेशको प्यमेयभाग्यधारकः ॥ प्रभूतसत्वपालको विवेकनीतिकारकः ॥१०॥ माणवकछंदः॥ दुःखहरो नाकिनुत स्त्यक्तमहादोषभर. ॥ पारगतस्तीर्थकरः शीलशाली ज्ञानधनः ॥११॥ तोटकछंदः॥ कमलाननमोहितसभ्यजन' समयार्थनिरूपणरम्यसुधीः ॥ नृशिलीमुखखेलनतामरस' पुरुषोत्तमपुण्यनिधिर्वरद ॥ १२ ॥ मणिमध्यछंदः॥ लक्षणपंक्तया सारतनु र्निर्जितमायालोभकलि ॥ आहतभाग्याचाररतिः सादरदेवाधीशपतिः ॥ १३ ॥ चंपकमालाछंदः॥ केवलयुग्मालोकितलोका लोकविभाग. संयमिसेव्यः ॥ इंद्रियवाणाभेदितचेता श्चंपकमालामंडितगात्र.॥१४॥ हंसीछंद.॥ प्राप्तानंदो भुवनमुकुट स्तीर्थस्वामी विस्तृतनयन. ॥ सश्रीकात्मा सुकृतनिलयो योगींद्रो वै विजितकपटः ॥ १५ ॥ शालिनीछंद.॥ आद्याख्यो मुक्तिलक्ष्मीसंख्यो विश्वोत्तंसो दुष्टकर्मारिहंता ॥ चक्रेश्वर्याराधितो गोमुखेशः कांताकारश्चोनधर्माधिकारः ॥१६॥ ककीरवछंद.॥जगतीशपूज्यो जयताद्भि

नेश कुशग्रार्यवह्नीततिवारिधार ॥ विशदावदातावलिचित्तनामा नववार्द्धिपोत इ लपाकनाय ॥१७॥ कुलका॥इन्द्रवज्रावृत्त ॥एव मया संस्तुत आदिदेवो भूयात् सदा सघगणस्य भूत्यै ॥ क्षेमकरो विश्वजगत्सुदीप कल्याणमागत्यकलापकोश ॥१८॥

॥ अथ सूर्यपुरीयश्रीसम्भवजिनस्तवनप्रारम्भ ॥

वसततिलकावृत्त ॥ काम नमोऽस्तु सततं जिनसम्भवाय चन्द्राननाय कमलामल लोचनाय ॥ देहप्रभास्थगितलोकचमत्कराय दुर्ध्यानपादपविभेदनसिंधुराय ॥१॥ देवै स्तुताय भवसागरपारगाय कीर्तिप्रसूनसुरभीकृतविष्टपाय ॥ सन्मूर्तिकांतितिरस्कृ नितमानदाय सेनागकुक्षिवरशुक्तिकमौक्तिकाय ॥ २ ॥ अब्जोपमाय जिनशासनदीप काय सूर्याख्यबंदरमनोरममंडनाय ॥ भव्याब्जकाननविकासनभास्कराय नानार्थ दानमुचिदनसन्निभाय॥३॥आदेयनामकलिताय शुभाशयाय सिध्यंगनामिलनलालस लोलुपाय ॥ गर्भातदार्ढ्यकथनोत्तरकोविदाय तेज प्रभावयशसामवनीश्वराय ॥४॥ अज्ञानमोहनपसञ्ज्वरभेषजाय सौभाग्यभाग्यगुणरत्नकरंडकाय ॥ अष्टापदाभनतुवर्णविराजिताय निर्मोहहृसरतिखेलनमानसाय ॥५॥ आह्वानमत्रविनिवारितपातकाय कल्याणसागरतरंगरगाधराय ॥ दुष्टारिचक्रलवणाबुधरोपमाय वाचासुधाश्रवणहर्षितनागराय॥ ६ ॥ सद्धर्ममार्गविधिदेशनदेशिकाय दुर्बोधवारणमृगेन्द्रपराक्रमाय॥ भोगानिशाधिमहिमाचञ्चूर्णाय गर्वेनदनसुशोभितपत्कजाय॥७॥ सत्यायदृक्करणाय निर्तेद्रिाय शुद्धान्वयोन्नतिकराय कृपालयाय॥मिथ्यात्वतापशशिचन्दनपादपाय दुष्कर्मरागपुनुनगाय नरार्चिताय॥८॥ सकल्पकल्पनविवर्जितमानसाय गांभीर्यधैर्यमणिमनरागहृणाय ॥सज्ज्ञानबुद्धिवरदाय गुणाकराय कौशल्यवल्लिपरिवर्द्धनमंडपाय ॥ ९ ॥ इन्द्रवावृत्त ॥ स्तोत्र चतुर्थ्यंतविभक्तियुक्तं ध्यायति ये सभवदेवराग्र ॥ नित्यं नतं मोक्षसुना समृध्य कल्याणसपादनकामनेन ॥ १० ॥ शार्दूलविक्रीडितवृत्त ॥ लक्ष्मीकेलिगृह सदावलिनतं श्रीसम्भवाख्य जिन सन्मार्तंडयुग मनायनरगज्ञोरे नगरं तट । देवाधीशनरेशनागपटलैः ससेवितं कामद मुक्तिश्री सुरसम्भोगमनिश सेवे मुदा सिद्धये॥ ११ ॥

॥ अथ श्रीसुविधिजिनस्तवनप्रारम्भ ॥

द्रुतविलम्बितवृत्त ॥ सुविधिनाथजिनं नयनामृतं सुविधिनाथजिन महिमानयं॥ सुविधिनाथजिनं नरशंकरं सुविधिनाथजिन वरकेवलं ॥ १ ॥ सुविधिनाथजिन कम लाकरं सुविधिनाथजिन भवदं परं ॥ सुविधिनाथजिन द्युतिकीर्तिदं सुविधिनाथजिन

सुविधिप्रदं ॥ २ ॥ सुविधिनाथजिनं रजतद्युतिं सुविधिनाथजिनं जडतापहं ॥ सुवि
धिनाथजिनं मकरांकितंसुविधिनाथजिनं जगदंचितं ॥ ३ ॥ सुविधिनाथजिनं रजतां
हितं सुविधिनाथजिनं परमेश्वरं ॥ सुविधिनाथजिनं श्रुतसूरिणं सुविधिनाथजिनं शि
वपाग्गं ॥ ४ ॥ सुविधिनाथजिनं शुभदर्शनं सुविधिनाथजिनं जनतानन ॥सुविधिना
थजिनं वरद विच्चुं सुविधिनाथजिनं नमितासुरं ॥ ५ ॥ अनुष्टुपछंदः ॥ सितेतरपुरा
धीशः सुविधिर्नवमो जिनः ॥ संयम्य सुखदो नूयात् कल्याणसूरिणा स्तुतः ॥६॥

॥ अथ श्रीशांतिनाथजिनस्तवनप्रारंभः ॥

द्रुतविलंबितछंदः॥सकलदेवनरेश्वरवंदितं विबुधमानवसंस्तुतपूजितं॥कमललोचनरंजि
तनागरंनविकपातकतामसनास्करं॥१॥ निखिलवांछितदानसुरागमं विहितशास्त्रविचा
रनयागमं॥कठिनकर्मदवानलनीरदं परमशांतिरदामृतशांतिदं॥२॥विविधलक्षणरंजित
संचरं सुविधिमार्गप्रकाशनतत्पर॥चपलमत्तमतंगजगामिनं कमलकोमलमांसलपाणि
नं॥३॥ दलितदंजमहाधृतिविग्रहं विहितमोहमहावलिनिग्रहं॥ दृढपरीषहवायुनुजंग
मं किल शुनंयुमनीष्टसमागमं ॥ ४ ॥ नविचकोरसुखाय कलानिधिं विनयधैर्यगुणो
त्करजेवधिं ॥ मुनिपडंह्रिनिवासकुशेशयं विबुधसुधामधुसारतराशयं ॥ ५ ॥ कुसुमस
न्निनदंतविराजितं सुनगनाग्यसुखाकरशोनितं ॥ निजनुजाबलसाधितराष्ट्रकं जित
विपक्षगणं नतराजकं ॥ ६ ॥ कुशलकेलिविलासनुवं परं विशदकीर्त्तिविकाशिदिगंत
रं॥कुमतसिंधुरसिंधुरवैरिणं सुमतिकामितसत्कृतिकारणं ॥७॥ वरसुवर्णसवर्णसुवर्णकं
जितहृषीकमथर्मनिवारकं ॥ हरिणसेवितपादकजं जिनं हितकरं स्तुतनिर्जरसज्ज
नं ॥ ८ ॥ प्रवरवार्षिकदानगुणैर्वरं हृतदरिद्रपर परमेश्वरं ॥ समधरीकृतमेरुसुरद्रुमैः
प्रचुरसर्वगुणादधिकोत्तमः ॥ ९ ॥ विकटडुर्जयमन्मथशंकरं जनकलापिघनं विगतां
तर ॥ तपननिर्जितचंद्रमसं नृशं विगतदोषकलिं च महौजसं ॥ १० ॥ अशिवविघ्न
घनाघनमारुतं विषयतापवशं जनतामत ॥ शिववधूपरिरंनणलोलुपं विमलकेवलि
साधुकुलाधिपं ॥ ११ ॥ नजत शांतिजिनं तु शिवंकरं कुशलसागरवृद्धिकलाधरं ॥अ
तुलरूपवशीकृतमानवं प्रणतसादरकिन्नरदानवं ॥ १२ ॥ द्वादशनिः कुलकम् ॥ मा
लिनीछंदः॥नुवननलिननानोः शांतिदेवस्य नर्तुर्नवजलनिधिसेतो र्डःखदारिद्र्यहर्त्तुः॥
निजहृदयविशुद्ध्या स्तोत्रमेतत्पठंति प्रतिदिनमपि ये ते संपदः प्राप्नुवंति ॥१३॥

॥ अथ श्रीशांतिजिनस्तवनप्रारंभः ॥

स्रग्धराछंदः ॥ दद्याच्छ्रीशांतिदेवो वरकनकतनुः सारसौख्यानि -

जाजां त्रिभुवननगरे स्फारकोटीरहीर॰ ॥ चार्वाकारे॰ प्रणेता प्रणतहितकर
वो मारिवार सर्वज्ञाख्यातनामा प्रकटितमहिमा प्राप्तकर्मारिपार १ ॥ तोटकछंद॥
सुरमानवपूजितपादपंकज कमलोदयकारकधर्म्मधन ॥ विगतामयदृगण नम्मननि
शुभसागरसोमजिनो विमल॰ ॥ २ ॥ इति प्रथमांतविभक्तिकाव्ययुग्म ॥ भुजंगप्रयात
छंद ॥ अजय्यं विभुं विश्वपूज्यं प्रसन्नं जिनं सत्प्रभं शंकरं देवदेवं ॥ सदानंद
स्तीतनौ मैषमेक स्तुवे शांतिनाथं कर्त्ता कामकुंभं॥३॥ हरिणीछंद ॥ कमलनयन प्र
मानदं नताशुभवचनं गजपतिगतिं विश्वाधारं सुरेश्वरवदितं॥सदयहृदयं त्यक्तातंकवि
निर्जितशोचनं परमपददं ज्ञातार्थौघं त्रिकालविदर्चितं ॥ ४ ॥ इंद्रवंशाछंद ॥ अर्च
ति देवा भवपारगं जिनं कल्याणकारं मुनिवृंदसेवितं ॥ छत्रादिसल्लक्षणलक्षितं हि
तावानवसदोह्कर सुधामय ॥ ५ ॥ इति द्वितीयांतविभक्तिकाव्यत्रिक ॥ शालिनीछं
द ॥ प्राज्यं राज्य चक्रवर्त्तित्वसंगं त्यक्त्वा दत्वा स्वर्णरूप्यादिदानं॥श्रुत्वा वाक्यं ब्रह्म
लोकांतिकानां येनावाप्तं संयमं मुक्तियोग्यं ॥ ६ ॥ द्रुतविलंबितछंद ॥ अमितपुण्य
वता जनतावता कुगतिवारणतत्परसज्जिना ॥ नतनरामरकिन्नरशालिना भगवता
भुवि शर्म विधायिना॥७॥इति तृतीयांतविभक्तिकाव्य द्वय॥इंद्रवज्राछंद ॥श्रीशांतिदेवाय
नमोऽस्तु नेत्रे विघ्नौघहर्त्रे शिवमार्गदात्रे ॥ चक्रांकहस्ताय समस्तभर्त्रे शर्वेडहारो भ
वशुक्ककर्त्रे ॥ ८ ॥ रथोद्धताछंद ॥ दर्शनामृतनिलीनजंतवे विश्वशास्त्रनयनीतिहेत
वे॥लोभसागरसुवेलसेतवे द्वापरावजितमिस्त्रभानवे ॥९॥ इति चतुर्थीविभक्तिकाव्ययु
ग्म ॥ उपेंद्रवज्राछंद ॥ अघानि नश्यति पुराकृतानि प्रशस्तनाम्नातिशयप्रसत ॥
अनेकसंसारनिबंधितानि प्रगाढबधस्थितिसंचितानि ॥ १० ॥ मालिनीछंद ॥ भव
ति सुखमनंतं शांतिनाथप्रसादाद्धरिणशरणदातुर्विश्वसेनांगजातात् ॥ नतभविक
जनानां प्रीतिराजत्प्रकामं निरवधिजिनरागे लग्नसन्मानसानां ॥ ११ ॥ इति पंचम्य
ंतविभक्तिकाव्यद्वयं ॥ शिखरिणीछंद ॥ सदा ध्यानं शांतेरखिलगुणधाम्न शुभवतो
दूरीकार सुमतिमतिकारं नयहरं ॥ नरा भव्या शक्त्या विगतमदतद्रा श्रुतप
मलावलव सद्ध्यानं प्रबलतरभाग्योदय[illegible] ॥ १२ ॥ विद्युन्मालाछंद ॥ शांते शांते
सुखरंगलीनम नत्वा सश्रीका स्यु ॥ [illegible]सा द्वा आयुष्मतस्तुष्ट्यानंद कृत्वा कृत्वा॥
विभक्तिकाव्य[illegible]क ॥ [illegible]लकाछंद ॥ चेतोस्ति चेद्भवपयोनिधि
द्रुतविलंबितछंद भनपतं कि[illegible] शांति[illegible] कि कुरुष्व सततं विपुलामुदारां
सुविधिनाथजिन नररंजनशोपजन्यं । १४ [illegible]छंद ॥ दुर्गतिसागरपोतसमुद्रे नि
सुविधिनाथजिन भग्यदद्धसुख [illegible]निरजनचित्ते ॥ १५ ॥ ना

णीछंदः॥ अमृतरसताधिक्यान्नीष्टान्नरोत्तमसंगतान्नुवनसुन्नगात्पार्श्वान्निख्यान्निनश्यति पातकं ॥ प्रसरति च वै कीर्त्तिर्दिक्षु प्रसूनवडुज्वला प्रनवति पुनः शीघ्रं लीलाजयो न्नतिवर्द्धनं ॥६॥ शार्दूलविक्रीडितछंदः ॥ आकृत्या नरदेवदेवमनुपा संतुष्टिकर्तुस्तदा चेतोवञ्चनकामसाधिदृढतः कर्मारिहर्तुर्नृगं ॥ आनंदौघसरःप्रवृद्धिकरणे पानीयदा तुर्मुदा पार्श्वस्यास्ति नतिः समृद्धिजननी कल्याणविस्तारिणी ॥७॥तोटकछंदः॥नरल क्ष्णनूपितवप्पुपुरे सुखनीरजरजितविश्वजने॥श्रुतदेशनदर्शितधर्मपथे जिननेतरि ति ष्ठति नाग्यरमा॥८॥नुजंगप्रयातछंदः॥ सुराधीशचक्रैः स्तुत ज्ञानसिंधो जगन्नाथ नेतः कृपालोकबंधो ॥ विनो पाहि मां सर्वदा नक्तिनाजं स्मरं तं चिरं त्वत्पदांनोजनृंगं ॥ ए ॥ शार्दूलविक्रीडतछंदः ॥ स्तोत्रं पार्श्वजिनेश्वरस्य सततं ये प्राणिनो ना वतः सद्बुद्ध्यापि पठंति हृद्यमनलस्तेषां गृहे संपदः ॥ स्युर्नित्यं स्थिरन्नावशोन नतरा धर्म्मार्थनिष्पादिकाः कल्याणार्णवसूरिनिर्विरचितं मांगल्यमालाकरं ॥१०॥ शिखरिणीछंदः॥ सदा धार्य्यं चित्ते स्तवनमनवद्यं नयहरं नरैर्नूनं सिद्ध्यै कुशलवन राजौ वननिनं ॥ अवंध्यं नक्तानां जिनगुणरतानां स्मृतिमतां समेषां नव्यानां प्रमु दकरणं कामितकरं ॥ ११ ॥

॥ अथ श्रीदादापार्श्वनाथस्तवनप्रारंन्नः ॥

॥ इंद्रवज्राछंदः ॥ कल्याणगेहं गुणरत्नराजं सदेहकांत्याजितनीलरत्नं ॥ स्तोष्ये सुदागकरमंगिवंद्यं दादाजिधं श्रीवरपार्श्वनाथं ॥ १ ॥ सद्धर्मलीनाशयमाशु विज्ञं कर्म्माष्टदावानलवारिधारं ॥ संसारपाथोनिधिकर्णधारं दादा० ॥ २ ॥ आचारव ल्लीततिवृद्धिनीरं सत्कीर्त्तिपुष्पद्रुतवासितांगं ॥ नानार्थराद्धांतविचारदक्षं दादा० ॥ ॥ ३ ॥ वैराग्यरंगार्पितचारुचित्तं सद्बोधिदातारमनीहसेव्यं ॥ नागेंद्रसंसेवि तपादपद्मं दादा० ॥ ४ ॥त्रैलोक्यचूडामणिमृद्धिशोनं सौनाग्यनाग्यावलिपूर्ण देहं ॥ नव्यौघराजीवदिनेशमेकं ॥ दादा० ॥ ५ ॥ सर्वांगिनेतारमनीष्टवाचं विश्वे श्वर रजितसत्त्वलोकं॥ लोकार्त्तिचिंतानयदुःखवारं दादा० ॥६॥ हृद्याकृतिं कृत्तजरा धिदोषं नरामरेंद्रैः स्तुतमर्त्यसत्वं॥ सन्नागचिन्हं कुशलार्थकारं दादा० ॥७॥ सर्वत्र वि ख्याततरप्रतापं कारुण्यसत्रं नुवि शिष्टगोत्रं ॥ अज्ञानमिथ्यात्वतमिस्रदीपं दादा० ॥ ८ ॥ अष्टन्निः कुलकं ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद. ॥ श्रीमन्नीवटपद्रनद्रनगरे शृंगार हारोपमं कल्याणांबुजनानुचंद्रमसमं वामांगजातं परं ॥ दादाख्यं जिनपार्श्वदेवमन घं ध्यायंति ये नित्यशस्तेषां धाम्नि रमा निवासमनिशं कुर्वंति कल्याणतः ॥ ए ॥

ज्वलं श्रीमह्रीं० ॥ २ ॥ संपद्रेणिसुदानकामकलशं त्रैलोक्यचिंतामणिं सद्भावामृतवर्षिता मरनर सद्धर्म्मबोधप्रद ॥ सौभाग्याद्भुतकांतकीर्त्तियशसा सपूरिताशातटं श्रीमह्रीं० ॥ ३ ॥ मार्गे चातरजीतिवारिनिचिते क्षेमकर सर्वदा दारिद्र्यादिनिपातनाशकुनिश चिंतानिरोगापद ॥ दुःखत्रासमीरणौघभुजग नागाक्रमक्षोमद श्रीमह्रीं० ॥ ४ ॥ कारुण्यांचितचारुचित्तकमल सत्वेषु ससारिषु सल्लक्ष्यादिगुणैरलंकृततनु लावण्यलीलास्पद ॥ ससारार्णवपीतवारिधिसम मुक्त्यगनावल्लभ श्रीमह्रीं० ॥ ५ ॥ त्रैलोक्ये तिलकायितं निरुपम भव्यैर्नृभि पूजितं दुष्टानां निजसत्वदर्शनपरं क्षिप्र सतां कामद ॥ नाम्ना ध्वस्तसमस्तवैरिनिचयं राद्धांतनिर्देशकं श्रीमह्रीं० ॥ ६ ॥ भूयिष्टामनजनशक्तिकलितैर्देवैश्चतुर्द्धा नत सर्वाशाकरणैककल्पफलद सर्वांगिचूडामणिं ॥ शिष्टानंतचतुष्टयीवरतर श्रीमेरुतुंग जिन श्रीमह्रीं० ॥ ७ ॥ स्फाराकारनिराजितांगमतुलं सद्वर्णहेमाकर विश्वव्यापतर प्रवाससदनं गभीरतासागर ॥ भासोद्योतितविश्वविभमवनी कल्याणसिंधौ विधु श्रीमह्रीं० ॥ ८ ॥ अष्टभि कुलकं ॥ अनुष्टुप्वृत्त ॥ जिनमाले सदा श्रेष्ठे गुणवद्धद्भूपिते॥पुष्पमालेऽतरानिस्त्वे नेकवीहारसयुते ॥ ९ ॥ श्रीमत पार्श्वनाथस्य स्तवन जगतोऽवन॥कल्याणसागराधीशैः सूरिभी रचितं मुदा॥१०॥ ॥ स्रग्धरावृत्त ॥ ध्येय श्रीपार्श्वदेव भजत किल जना गोभिकग्रामराज शश्वत्सर्वार्थसिद्ध्यै विहितशुभहितं विष्टपे चैत्रपूर्वे॥सानंदोल्लासलष्टा कुशलगविबुधा सर्वलोके विशिष्टा निर्दोषाचारपुष्टा जिनपपतिषु रता आप्तकल्याणतुष्टा ॥ ११ ॥

॥ अथ श्रीगोभीपार्श्वनाथस्तवनप्रारंभ ॥

मालिनीवृत्त ॥ जयति जगति चंद्र पार्श्वनामा जिनेंद्रो विकचकमलदृष्ट्या नंदितामर्त्यमर्त्य ॥ अकलितमहिमौघस्तीर्णससारसिंधुर्भुजगकलितपाद पुण्यपीयूषपुष्ट ॥ १ ॥ स्रग्धरावृत्त ॥ श्रीपार्श्व गोडिकाख्य भजत भविगणे कल्पवृक्ष सुगोत्र नानादेशेषु लब्धातिशयमहिततायूहवार सुमूर्ति ॥ श्रीमत भीजरत्नाधिकतरवपुष स्फारलावण्यशाल मोहान्नोराशिकुंभोद्भवममरनुत पार्श्वयक्षार्चितांह्रि ॥ २ ॥ पंचचामरछंद ॥ नमंति पार्श्वमंगिनो नरालसा धृतातपत्रचामरं सुरं स्तुतं ॥ अनंतशक्तिमाजिनं गतामयं विवेकरत्नरोहणं दयाकर ॥ ३ ॥ वसंततिलकावृत्त ॥ करीकृत व्रतमनुत्तरमंगिनेत्रा दत्वा ऽथ येन वरवार्षिकदानराशि ॥ वामोद्भवेन मुनिनायकनायकेन कल्याणकेलिनिलयेन शुभाशयेन ॥ ४ ॥ द्रुतविलंबितछंद ॥ मम नमोस्त्ववते परमात्मने भगवते शिवशर्म्मविधायिने ॥ अमितशौर्य्यतिरस्कृतमेरवे शुभदशेरकमंडलमौलये ॥ ५ ॥ हरि

णीछंद॥ अमृतरसतावितस्यान्नीष्टान्नरोत्तमसंगतानुवनत्तुनगात्पार्श्वानिरख्यान्निनश्यति पातकं ॥ प्रसरति च वै कीर्त्तिर्दिक्षु प्रसूनवदुज्वला प्रनवति पुनः शीघ्रं लीलाजयो न्नतिवर्द्धनं ॥६॥ शार्दूलविक्रीडितछंद. ॥ आकृत्या नरदेवदेवमनुयां संतुष्टिकर्तुस्सदा चेतोवांछितकामसार्थददतः कर्मारिदुर्तुर्भृगं ॥ आनंदौघमरःप्रवृद्धिकरणे पानीयदा तुर्मुदा पार्श्वस्यास्ति नतिः समृद्धिजननी कल्याणविस्तारिणी॥७॥तोटकछंदः॥नरल क्षणनूषितवछुपुरे मुखनीरजरंजितविश्वजने॥श्रुतदेशनदर्शितधर्मपथे जिननेतरि ति ष्ठति नाग्यरमा॥८॥नुजंगप्रयातछंदः॥ सुराधीशचक्रैः स्तुत ज्ञानसिंधो जगन्नाथ नेतः कृपालोकबंधो ॥ विनो पाहि मां सर्वदा नक्तिनाजं स्मरं ते चिरं त्वत्पदांनोजभृंगं ॥ ए ॥ शार्दूलविक्रीडतछंदः ॥ स्तोत्रं पार्श्वजिनेश्वरस्य सतत ये प्राणिनो ना वत. सहुद्ध्यापि पठंति हृद्यमनसस्तेशां गृहे संपदः ॥ स्युर्नित्यं स्थिरनावशोन नतरा धर्म्मार्थनिष्पादिकाः कल्याणार्णवसूरिनिर्विरचितं मांगल्यमालाकरं ॥१०॥ शिखरिणीछंदः॥ सदा धार्य्यं चित्ते स्तवनमनवद्यं नयहरं नरैर्नूनं सिद्ध्यै कुशलवन राजौ घननिन्नं ॥ अवंध्यं नक्तानां जिनगुणरतानां स्मृतिमतां समेषां नव्यानां प्रमु दकरण कामितकरं ॥ १२ ॥

॥ अथ श्रीदादापार्श्वनाथस्तवनप्रारंनः॥

॥ इंद्रवज्राछंदः ॥ कल्याणगेहं गुणरत्नराज सद्देहकांत्याजितनीलरत्नं ॥स्तोष्ये मुदाशकरमंगिवद्यं दादानिधं श्रीवरपार्श्वनाथं ॥ १ ॥ सद्धर्मलीनाशयमाशु विघ्नं कर्म्माष्टदावानलवारिधारं ॥ संसारपाथोनिधिकर्णधारं दादा० ॥ २ ॥ आचारव ल्लीततिवृद्धिनीर सत्कीर्त्तिपुष्पद्रुतवासिताशं ॥ नानार्थराद्धांतविचारदक्षं दाद० ॥ ॥ ३ ॥ वैराग्यरंगार्पितचारुचित्तं सद्बोधिदातारमनीहसेव्यं ॥ नागेंद्रसंसेवि तपादपद्मं दादा० ॥ ४ ॥त्रैलोक्यचूडामणिमृद्धिशोनं सौनाग्यनाग्यावलिपूर्ण देहं ॥ नव्यौघराजीवदिनेशमेकं ॥ दादा० ॥ ५ ॥ सर्वांगिनेतारमनीष्टवाचं विश्वे श्वर रंजितसन्यलोकं॥ लोकार्त्तिचिंतानयदुःखवारं दादा० ॥६॥ हृद्याकृति क्तजरा थिदोष नरामरेंद्रैः स्तुतमर्त्यसर्वं॥ सन्नागचिन्हं कुशलार्थकारं दादा० ॥७॥ सर्वत्र वि ख्याततरप्रतापं कारुण्यसत्रं नुवि शिष्टगोत्रं ॥ अज्ञानमिथ्यात्वतमिस्रदीपं दादा० ॥ ८ ॥ अष्टनिः कुलकं ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद. ॥ श्रीमद्वीवटपद्रनद्रनगरे शृंगार हारोपमं कल्याणांबुजनानुचंद्रमसमं वामांगजातं परं ॥ दादाख्यं जिनपार्श्वदेवमन घं ध्यायंति ये नित्यशस्तेषां धाम्नि रमा निवासमनिशं कुर्वंति कल्याणतः ॥ ए ॥

॥ अथ श्रीकलिकुंडपार्श्वाष्टकप्रारंभ ॥

॥ विबुधादिराजनतपादपद्म बहुजाग्यसौजाग्यलतांघमेघं ॥ कमठोपसर्गाब्ध धैर्यजित्ति कलिकुमपार्श्वं सुचिरं जजेऽहं ॥ १ ॥ कमलाप्रदाने हरिचंदनाभ सपयोधिदेशाद्भुतलब्धकीर्त्ति ॥ रुचिराकृतौ रंजितविश्वविश्व कलिकुम० ॥ २ ॥ महिमावदातोत्तमनाममंत्रं समतानिराम कमलानिनेत्रं ॥ अनिलापद लिखि विलासयंत्र कलि० ॥ ३ ॥ दुरितान्धकारारुणसन्निकाश करुणाशय दुःखवने सु दाव ॥ नरदेवपूज्य सुखद सुमूर्त्ति कलि० ॥ ४ ॥ कनकादिदातारमनंतसौख्यं वरनीलरत्नाधिकदेहवर्णं ॥ शिवशर्मराज जनतानिवद्य कलि० ॥ ५ ॥ अनद्य तत्र सगुणकेलिपाल अनलक्ष्णालरुतवर्यगात्र ॥ कुजचूषण शत्रुतृणौघदात्रं कलि० ॥ ६ ॥ जगतीश्वर कर्मविमुक्तसंग विषमायुधालयमन.स्वरूप ॥ धरणेंद्रपार्श्वार्चित पादयुग्म कलि० ॥ ७ ॥ अनर्सिधुशृद्धौ शशिन वरेण्य वचसा सुधाजेन सदर्थ न्यं ॥ श्रुतसूरिण पुण्यविराजमान कलि० ॥ ८ ॥ अष्टनि कुलक ॥ इंद्रवज्रावृत्तं एव स्तुत श्रीकलिकुंडपार्श्वे कल्याणनाम्ना मयका नितांतं ॥ ये प्राणिन स्तोत्रमि पठति तद्धाम्नि लक्ष्मीर्विलसत्यवश्य ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीरावणपार्श्वाष्टकप्रारम्भ ॥

॥ इंद्रवज्राछंद ॥ देवाधिदेव कृतपार्श्वसेव नागाधिराजेन नतांह्रिपद्मं पद्मावतीसंस्तुतनामधेय सेवे सदा रावणपार्श्वनाथ ॥ १ ॥ आनंदकारी वृद्धिमेव मेघध्वनिध्यानविशेषराज ॥ जितारिवृंद विगताधिमोह सेवे० ॥ २ ॥ वामांगजातं कुजनदिकार ध्वस्तोपसर्गोत्कटदुष्टरोग ॥ प्रख्यातिमंतं जुवने वे सेवे० ॥ ३ ॥ सन्नीलनासा हसितेंद्नील सत्कांतकात्या रमणीयरूप ॥ प्राप्ती नातिशयं प्रधान सेवे० ॥ ४ ॥ सन्नीतिहर्तारमनंतसौख्य विश्वेश्वर यातिता नोव ॥ पद्मार्यदाने सुररत्नवृक्ष सेवे० ॥ ५ ॥ अज्ञानमिथ्यात्वतमिस्रनाशु मनानंरुतमोलिष्टम्र ॥ वाणीसुधामोदितसत्यसंघं सेवे० ॥ ६ ॥ कौशल्यमार्गम सगेहं पूर्णारुतानीष्टपदार्थराशि त्रैलोक्यवीर्य वरसिद्धिराज सेवे० ॥ ७ ॥ रत्नाकरपानपात्र नि शेषदोषोज्झितधर्ममार्गं ॥ आदेयसौजाग्ययश सुपात्र सेवे० ॥ ८ ॥ अष्टभि कुलक ॥ मालिनीवृंद ॥ अजवरपुररत्न रावण पार्श्वदेव प्रणतजन कामद देवदेव ॥ अमितगुणनिधाना ये नर संस्तुवंति जगति विदितसौभाग्यवंतो जवंति ॥ ९ ॥

॥ अथ श्री गोडीपुरपार्श्वजिनस्तवनप्रारंभः ॥

रागेणगीयते॥गौडिपुरप्रभुपार्श्वममंदं दर्शनदर्शनपरमानंदं नमितसुरासुरवृंदं॥१॥ श्रीजिनशासनचारुशृंगार अंतरंगरिपुवृंदकुठारं सकलजगदाधारं॥२॥निरुपमरूपविराजितदेहं विदलितनानाजनसंदेहं अमितगुणधनगेहं॥३॥दुरितकाननछेदनदात्रं रुचिरलक्षणविभूषितगात्रं वारितकुमतकुपात्रं ॥४॥ अनघजिनवरगोत्रसुगोत्रं कामकुंभमणिनिर्जरगोत्रं संयमदृढतागोत्रं ॥५॥छेदितभवभयमरणारिष्टं प्रकटितमहिमातिशयवरिष्ठं जगदैश्वर्यगरिष्ठं ॥६॥ विहिताखिलभविजनकल्याणं पालितयथाख्यातकल्याणं दत्तमार्गणकल्याणं ॥ ७ ॥ आधिबंधवधगदहर्त्तारं वांछितकुशलसौख्यकर्त्तारं भुवनत्रयभर्त्तारं ॥ ८ ॥ विकटकष्टनिवारणशूरं आगमनयप्रकाशनसूरं भारतीगंगापूरं ॥ ९ ॥ धृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्मीगणविश्वं केवलयुगलालोकितविश्व प्राप्तजनेप्सितविश्व ॥ १० ॥ सेवकमनोभीष्टदातारं रंजितदेवनरनेतार अनुभूतकुलत्रातारं ॥ ११ ॥ इंद्रनीलमणिवर्णसुवर्णं निखिलदेशविख्यातसुवर्णं वाक्सुधासारसुवर्णं ॥ १२ ॥ मुक्तिसीमंतिनीसंगमलुब्धं चंचलविषयसुखसंगालुब्धं कर्मपराविप्रलुब्धं ॥१३॥ वदितामरमौलिकुटीर विषमकषायदवानलनीर उत्कटपरीषहधीर ॥१४॥ अंचलगणनीरधिसारंगं कीर्तिलतावर्द्धनमारंगं दुर्जनगजभसारंगं ॥ १५ ॥ वंदेऽनंतचतुष्टयिराजं पूजितसुरपतिमानवराजं प्रवरतीर्थाधिराजं॥१६॥ षोडशभि॰ कुलकं॥ शिवतातिपार्श्वं वरदवरपार्श्वं मोहतमिस्रसवितारं नागराजराजं त्रिभुवनपूज्यं लब्धभवोदधिपारं ॥ शुभसागरनित्यप्रथितगरिमाणं ये ध्यायंति विभुं मुदा लक्ष्मीस्तान् समुपैति सत्वरमतुला सर्वार्थसिद्धिप्रदा ॥ १७ ॥

॥ अथ श्रीपार्श्वजिनस्तवनप्रारंभः ॥

तोटकछंदः ॥ भविकांबुजभासनभानुनिभं भवतापसमावनवारिधरं ॥रचितागमशास्त्रविचारनयं जय मंगलकीर्तियशोनिचयं ॥ १ ॥ कमलामलकेलिगृहं विमलं ललदाशयमुज्झितसंतमसं ॥ शुभसागरवर्द्धनचंद्रमसं सकलामरपूजितपादकजं ॥२॥ विकटोत्कटकर्म्ममृगेंद्ररिपुं खगनागनरेश्वरदेवनत ॥ तरसा जितमोहरिपुं विभयं यमसंवरसंहितसाधुहित ॥ ३ ॥ शुभलक्षणलक्षितहस्तयुगं गजराजगति गतविघ्नरुज ॥ जडतामयभेषजमोशवरं दशनद्युतिद्योतितचारुमुखं ॥४॥ कनकाचलधीरमभीष्टतरं रसनारसरंजितसर्वजनं ॥भुवनत्रयमंडलमोघतरं रुचिराकृतिमोहितदेवजनं ॥५॥अरिहंतमनुत्तरतीर्थकरं रचित वरबुद्धिधनं जिनपं ॥पुरुषोत्तममम्मरमर्थनिधिं धृ

निकातिनिकेतनमगिनुत ॥६॥ निजवशवतसकमार्तिहर ग्वनिर्जितमेगनद शिवा॥ दयितं नुवि विश्वजनीनतम नतनूतगण जितजोनमट ॥ ७ ॥ शरणाश्रितपानकशु क्तिपद वधनं वरशातरस नवम ॥ महसेइमणिप्रननेदह रग धरणेइनिषेवितपार्श्वयुग ॥८॥ श्रमम नुतपार्श्वजिन सतत तपसा हतसिध्मनतबल ॥ ललनाजनमगविन मत्र मजवर्जितमुत्तरसाख्यपर ॥९॥ नवनि कुलक ॥ सुरराजखेचरनागपुरदरधरणिश जसुसेवित श्रीपार्श्वजिनेश्वर नमितसुरेश्वरपद्मावतीसस्तुत॥ येऽनतनततया विशुध त्या सस्तुवति जिन मुदा ग्रुनसागरपवनाब्रविकरमासमेत ते लभति सुख सदा॥१०॥

॥ अथ श्रीमहुरपार्श्वाष्टकप्रारम्भ ॥

द्रुतविलम्बितछद ॥ विबुधमानवमानसनदन विनवदानविर्जीं हरिचदन ॥ नि खिलसत्यजनं रुतवदन नजत पार्श्वजिन महुरानिध ॥ १ ॥ युगलकौशिकमा म्यतराशय भुवननानुनिवासघनाश्रय ॥ विषयिवारणकेसरिसन्निभ नजत० ॥२॥ अरुणकोटिविनाधिकनास्वर कुमुदबाधवशुभ्रतरानन ॥ वरगभीरगुणात्तमसागर नजत० ॥३॥ नविकपद्मविनासननास्कर जगति नावप्रकाशनदीपक ॥ नयनपाश्व पावनतत्रक नजत० ॥४॥ रचितकामवशारिदसचयैरखिलधैर्यसमन्वितचेतस॥ विकट कर्मसमीरणनोगिन नजत० ॥ ५ ॥ कमठनिर्म्मितपाशुकदर्बकै स्थिरतरात्कटनाव विराजित ॥ जगति दुर्जनसर्पविषापह नजत० ॥६॥ प्रशमनूषणनूषणनूषन सुनग नाग्यगुणावनिमदिर ॥ धवलकीर्तियशोवरधासित नजत० ॥ ७ ॥ सकलसघसमीहि तकल्पक निचितविघ्नपराजयदर्पक ॥ अतिशयाद्भुतचारुचरित्रक नजत० ॥ ८ ॥ द्रु णीवद ॥ महुरजिनप नित्य वदे शिवोदधिवर्द्धन शशिनमनिश किरणध्वांते दिनश महोदप ॥ स्तवनजणने चितात्हादे रुतादरसेवकेनिविधधनद विश्वे विश्वे निनंश नतानने ॥९॥ द्रुतविलम्बितछद ॥ महुरपार्श्वजिनेश्वरसस्तव पठति य सुधियापरि नित्यश ॥ वसति तस्य गृहे कमला ऽचिरा स्थिरतरासुमता वरदायिनी ॥ १० ॥

॥ अथ सत्यपुरीय श्रीमहावीरस्तवनप्रारम्भ ॥

द्रुतविलम्बितछद ॥ त्वमसि सद्गुणनदनमदरस्त्वमसिमेरुलतावनिमप त्वमसि वैरग्नाश्निरस्तुतस्त्वमसि रूपवशीरुतविष्टप ॥ १ ॥ त्वमसि योगिजन घनिगेमणिस्त्वमसि कांतिविकाशितदिग्गण ॥ त्वमसि नावितरजितनागर स्वम सि सिद्धिवशार्तिमोहित ॥ २ ॥ त्वमसि नङ्कर करुणाजयस्त्वमसि नकचको निशाकर ॥ त्वमसि दर्शनदर्पितमानवस्त्वमसि ससृतिसागरपोतक ॥ ३ ॥ त्वमसि मोहमदोम्हमुक्तस्त्वमसि धर्मरतो धनकामद ॥ त्वमसि सशयरायुतुगग

स्त्वमसि दर्शितजीवदयापथः ॥ ४ ॥ त्वमसि धारितशीलविभूषणस्त्वमसि कामि तदामसुरद्रुमः ॥ त्वमसि देवनराधिपवंदितस्त्वमसि जाड्यतमिस्रनभोमणिः ॥ ५ ॥ त्वमसि कर्मवनावनिपावकस्त्वमसि सेवकपूजितपंकजः ॥ त्वमसि जन्मजरामृतिवारणस्त्वमसि शाश्वतमोक्षपदस्थितः ॥ ६ ॥ त्वमसि मंजुलमंगलदीपकस्त्वमसि सर्वपदार्थविशारद. ॥ त्वमसि लोकनतो नतवत्सल स्त्वमसि देवशिलीमुखपुष्कर. ॥ ७ ॥ त्वमसि नाथमनोहरलक्षणस्त्वमसि समतजीवगणः सदा ॥ त्वमसि संवरमार्गविधायकस्त्वमसि दानगुणार्पितकल्पकः ॥ ८ ॥ त्वमसि चित्रकरातिशयांचितस्त्वमसि सूरितती॰वरसेवित.॥ त्वमसि दुःखिजनावनतत्परस्त्वमसि हारनिभ. क्षितिमंडले ॥ ९ ॥ त्वमसि शिष्टनरामरसंगतस्त्वमसि लोकचमत्कृतनिर्ममः ॥ त्वमसि केवलिसाधुनतो मुदा त्वमसि कुग्रहदोषनिवारकः ॥ १० ॥ त्वमसि सद्गतभारवृषोपमस्त्वमसि वीतमदो विशदाशय. ॥ त्वमसि तीर्थपते रुचिराक्षयस्त्वमसि शुतिपवित्रितमानसः ॥ ११ ॥ त्वमसि बुद्धिपराजितगी.पति स्त्वमसि हाटकसन्निभविग्रहः ॥ त्वमसि भाग्यविनाशनिकेतनस्त्वमसिलोभमहीधरवज्रकः ॥ १२ ॥ त्वमसि सप्तभयार्णवतारकस्त्वमसि दुर्घटसत्यनयाध्वग ॥ त्वमसि सम्मदसंततिकारकस्त्वमसि सिद्धिकरो वरदायकः॥१३॥ त्वमसि विश्वजगज्जनवल्लभस्त्वमसि रक्षितभूतकदंबकः ॥ त्वमसि दुर्जनदुस्थहरोनिशं त्वमसि विस्तृतलोचनरंजक. ॥१४॥ त्वमसि विश्वपति. श्रितबांधवस्त्वमसि वक्रतिरस्कृतचंद्रमा ॥ त्वमसि वैरिमुदघटोद्भवस्त्वमसि तीर्थकरः प्रतिबोधदः ॥ १५ ॥ त्वमसि भव्यशिखंडिवलाहकस्त्वमसि बंधुरमूर्तिधरोऽजरः ॥ त्वमसि सर्वविशुर्विंगतातुरस्त्वमसि संयममंडनमंडित ॥ १६ ॥ त्वमसि शांतरसाश्रितचेतनस्त्वमसि पौरुषनिर्जितकार्मणः ॥ त्वमसि दुर्लभबोधिनिबंधनस्त्वमसि कामदुघाधिकदानदः ॥ १७ ॥ त्वमसि संचितपुण्यनिधिः परस्त्वमसि विघ्नसरीसृपगारुडः ॥ त्वमसि शुभ्रयशोभरमंदिरस्त्वमसि संघजयोन्नतिदर्पदः ॥ १८ ॥ त्वमसि सत्वहितो मतिवर्धनस्त्वमसि धर्मसरोजसर समः ॥ त्वमसि चक्रिनतो भविशेखरस्त्वमसि पारगतः परमेश्वरः ॥ १९ ॥ त्वमसि सत्यपुरामलभूषणस्त्वमसि संश्रितपादमृगाधिपः ॥ त्वमसि केवलयुग्मविराजितस्त्वमसि वीरजिनो जिननायकः ॥ २० ॥ त्वमसि शासनपोतनियामकस्त्वमसि साधुदयाकुलनामक.॥त्वमसि सौख्यकरत्रिशलांगजस्त्वमसि विश्वगुरुः शुभसागरः ॥ २१॥ हरिणीछंदः॥ जयति सततं वीरः शंभुर्भवोदधिपारगो जगति तिलक. पापध्वांते गभस्तिरनुत्तरः ॥ कुशलनिलयस्तीर्थस्वा

मी सुरासुरसंस्तुतो निवितमक्तिना विश्वे विश्वेश्वरार्चितपङ्कज ॥ २२ ॥ उगरचम
कृजारनंस यतिधर्म्मैकैणक कल्पद्रिकाशाग्गमंगिणाक ॥ नमामि वीरं मनिदं जिन
चद मनोर्थसंपादनकामकुंजक ॥ २३ ॥ भुजंगप्रयातवृत्त ॥ प्रनुं देवदेव जिनवि
श्वनाथं जगच्चारुचूडामणि वीरनाथं ॥ स्तुतेऽहं जितारि नतमाऽगिनाथ सदा भक्ति
कारं नरेंद्राधिनाथ ॥ २४ ॥ स्रग्धरावृत्त ॥ श्रीगर्जं नीरेन्द्र प्रणतसुरमणि देवमन्दा
धिराजं कल्याणाम्भोधिचन्द्रं विमलगणधरं नाग्यमानाम्यकारं ॥ ये नव्या मन्य
ति प्रतिदिनमनवं चारुनतया त्रिसन्ध्य प्रयान्ति ते लनते त्रिभुवनविदितां कीर्तिश्री
गुजारकर्त्री ॥ २५ ॥ तुभ्य नम समयधर्म्मनिवेदकाय तुभ्य नमस्त्रिभुवनैकगभ
राय ॥ तुभ्य नम सुरनरामरसेविताय तुभ्य नमो जिनजनार्चितपङ्कजाय ॥ १ ॥ तु
भ्य नमोऽनिलपते हरिचंदनाय तुभ्य नमो वरकृपाम्बुजनाम्बुजाय ॥ तुभ्यं नम प्रणत
चनराधिपाय तुभ्यं नम प्रवररूपमनोहराय ॥ २ ॥ तुभ्य नमो रूगिणनायकनाय
काय तुभ्य नमो यतिततिप्रतिपालकाय ॥ तुभ्य नमो विकचनीरजलोचनाय तुभ्य
नमस्तनितनादविराजिताय ॥ ३ ॥ तुभ्य नम कुशलमार्गविधायकाय तुभ्य नमोऽति
कटकष्टनिषेधकाय ॥ तुभ्य नमो दुरितरोगचिकित्सकाय तुभ्य नमस्त्रिजगता हरि
भूषणाय ॥ ४ ॥ तुभ्य नमो दलितमोहतमोभराय तुभ्य नम कनकसन्निभभूषणा
य ॥ तुभ्य नमोऽप्यखिलसद्गुणमंदिराय तुभ्य नमो मुखकलाविजितचन्द्रिकाय ॥ ५ ॥
तुभ्य नमोऽतिशयराजिविभूषिताय तुभ्य नम कुमतितापसुजनाय ॥ तुभ्य न
मो सुखपयोधिनदित्रकाय तुभ्य नमो विगतकैतवमत्सराय ॥ ६ ॥ तुभ्य नमा विदि
तनव्यजनाशयाय तुभ्य नमो निखिलसंशयहारकाय ॥ तुभ्य नम प्रथितकीर्तिय
शोन्विताय तुभ्य नमो जितहृषीकमुनीश्वराय ॥ ७ ॥ तुभ्य नमोऽमितपुण्यनिर्मि
ताय तुभ्य नम सकलवाङ्मयपारगाय ॥ तुभ्य नमो भविकचातकनीरदाय तुभ्य
नमश्चरणवेनवदायकाय ॥ ८ ॥ कलशम् ॥ वीराष्टक पठति य सततं त्रिसध्य स
त्वा सदा प्रबलमीहजड प्रमाद ॥ तद्धाम्नि मङ्क्षु कुरुते कमला निवास कल्याणसा
गर सुवामसतामभीष्ट ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीलोडणपार्श्वनाथस्तवनप्रारम्भ ॥

श्रीकरं कष्टहर्तारं विधिवादप्रकाशक ॥ धिया तर्जितवागीश परमात्मानमन्वह ॥ १ ॥
क्षमागारं कृपापात्रं गताधिव्याधिदूषण ॥ लोके तु सर्वकार्येषु श्रीप्रद दलितामय ॥ २ ॥
धनधान्यकरं लोके रमाकेलिपद परं ॥ मर्मतामदमानोरुमूर्खतादोषवर्जितं ॥ ३ ॥
श्रासिसतापनेतारं सूरिश्रेणिशिरोमणि ॥ रिपुसारंगसारंग मणिनाथनिषेवितं ॥ ४ ॥

तेजसां मंदिरं रम्यं वाग्मिताशेषसज्जनं ॥ निःसीमं सर्वगोत्राणां श्रीमंतं गुणसागरं ॥ ७ ॥ कथिताचारमार्गीयं कल्याणकमले विधुं ॥ प्रणताशेषदेवेशं शासनं कांतभूषणं ॥ ८ ॥ गर्जितागमगंदोहं रसनामृतसुंदरं ॥ सुराधिकप्रतापाढ्यं रिक्थदं दमितेंद्रियं ॥ ३ ॥ नागेंद्रविबुधैः सेव्यं लोकानां शांतिकारकं॥ जडताया विछेत्तारं नयनाल्हादकारणं ॥७॥ पालकं सर्वसत्वानां पार्श्वयक्षेण पूजितं ॥ नाकिमानववंद्यांह्रिं नाथनाथं जगत्प्रभुं ॥ ९ ॥ क्रियासंतनिनेतारं त्रासितानेकदोषकं ॥ कृतांतार्थविचारज्ञं तारतारुण्यगर्जितं ॥ १०॥ संसारसागरे पोतं घस्मरायिविवर्जितं ॥ सर्वज्ञं मेघगंभीरध्वनि विश्ववन्द्य सर्वदा ॥ ११ ॥ तेजोनिधिं मुदा पार्श्वं नवीमि लोमणानिधं ॥ कल्याणसागराख्येन संस्तुतं ह्यादिमाक्षरैः ॥ १२ ॥ द्वादशभिः कुलकं ॥ श्रीमल्लोडणपार्श्वनाथभवनो विख्यातगोत्रानिधं ये भव्या वरभावभक्तिसहिताः पूजंति सौख्यार्थिनः॥ ते सत्वा सुखमानकीर्तिकलिताः कल्याणतुंगाः परा जायंते भुवने प्रतापरुचिरा आदेयवाचः सदा ॥ १३ ॥

॥ अथ श्रीसेरीशपार्श्वाष्टकप्रारंभः ॥

कामांधकर्त्तारमशेषदेवाधीशैस्सदार्चितपादपद्मं॥ कल्याणकारं वरनीलवर्णं सेरीशपार्श्वं भुथ लोडणाख्यं ॥ १ ॥ सत्पुण्यवल्लीवनवारिधारं निःशेषभव्यावलिपूरिताशं ॥ त्रैलोक्यछत्रं भुवनाधिनाथं सेरी० ॥२॥ सारंगवाणीजितचित्तदार्ढ्यं सारगगंभीरनिनादकांतं ॥ सारंगसारांबकयुग्मराजं सेरी० ॥३॥ विश्वेषु सत्वेषु कृपानिधानं सम्यक्त्वरत्नाभरणांकितांगं॥ दुःखांगपशु दलितारिवर्गं सेरी० ॥४॥ अपारसंसारसमुद्रपोतं सर्वज्ञमाचारपवित्रवंगं॥राद्धांतशास्त्रार्थरहस्यदक्षं सेरी०॥५॥ वाणीरसानंदितविश्वविश्वं तीर्थंकरं नागपुरेशपूज्यं ॥ सर्वत्र विख्यातयशोभिरामं सेरी० ॥६॥ तेजोनिधिं कामितकामकुंभं सौजन्यसौहार्दविलासपात्रं ॥ कल्याणसूर्यादिवितानहेतुं सेरी० ॥ ॥ ७ ॥ आदित्यचंडाधिकदेहभासं सत्प्रातिहार्याष्टकराजिराजं ॥ स्फाराकृतौ मोहितदेवदेव सेरी० ॥८॥ कलशः ॥ एवं कल्याणवद्यं त्रिभुवनतिलकं लोडणार्हं सुपार्श्वं कृत्वैकाग्र्यं स्वचित्ते भवसफलकृते ज्ञानसंपत्तिसिद्ध्यै॥नित्यं ध्यायंति भव्याजिनसमयरता शुभ्रलेश्याभिरामास्तेषां हर्षात्प्रकामं भवति च सदने मंजुपद्मानिवासः ॥ ९ ॥

॥ अथ श्रीसंभवनाथाष्टकप्रारंभः॥

लावण्यगेहं कलहेमवर्णं ह्यश्वाभिधं सुंदरवाहचिन्हं ॥ लक्ष्मीकलापार्णवधिष्ण्यनाथं देवैर्नतं संभवनाथमीडे ॥ १ ॥ श्येनांगजं दारुणकर्मशत्रौ वीरं वरं पूतचरित्रशोभं ॥ क्षेमास्पदं सद्गुणरत्नखानिं देवै० ॥२॥ इक्ष्वाकुवंशं वरतिग्मरश्मि

राकेडुरक्क गतवक्रमाय ॥ अज्ञानवश्वानरशांतिनीरं देवै० ॥ ३ ॥ दुःखोदधौ पीत समुद्मिव ॥ सत्प्रातिहार्याष्टकराजिराज ॥ क्षमानिधि विस्तृतपुण्यमूर्त्ति ॥ देवै० ॥ ४ ॥ नर्व्यमुदा सेवितपादपद्मं सद्ज्ञानरज्ञाहतमोहचूरं ॥ ससागदावाकुन मर्त्यमेव देवै०॥५॥सत्कीर्त्तिपात्र डुरितारिसेव्य जगज्ञानानदकरं शरण्य ॥ कारुण्यस युक्तपवित्रचित्त देवै० ॥६॥ कुदाद्दृदतं कजलोचन ं वपु श्रियाताजितसूर्यकांति ॥ पापाधकारे ऽमलदीपक त देवै० ॥ ७ ॥ प्रसादनातत्परसेवकस्येप्सितार्थदाने सुर देववृक्ष ॥ सुखरनेकैर्युतचारुदेह देवै० ॥८॥ कलश ॥ इत्यष्टक श्रीजिनसनवस्य पठति ये मजुनवावयुक्त्या॥तेपा गृहे पुण्यनिधानलव्या कल्याणकाराश्च नवति क्ष क्षय ॥९॥इति श्रीमज्जिननायकस्य श्रीसूर्यपुरजूपणस्य श्रीसनवनायस्याष्टक सपूर्ण॥

॥ अथ श्रीसूक्तमुक्तावली प्रारभ ॥

मालिनी छद ॥ सकलसुरुतवल्लीवृदजीमूतमाला निजमनसि निधाय श्रीजिनइस्य मूर्त्ति ॥ ललितवचनलीलालोकलापानिवर्इरिह कतिपयपद्यै सूक्तमाला तनोमि ॥ १ ॥ अथक्रमसग्रहकाव्य ॥ शार्दूलविक्रीडितछद ॥ तत्त्वज्ञानमनुष्यसज्जनगुणान्यायप्रतिज्ञाक्षमा चित्ताद्य च कुल विवेकविनयो विद्योपकारोद्यमा ॥ दानक्रोधदयादितोपविपया साक्षात्प्रमादस्तथा साधुश्रावकधर्मवर्गविपये ज्ञेया प्रसगाद्यमी ॥ २ ॥ अथदेवतत्त्वविपे मालिनीछद ॥ सकल करमवारी मोक्षमार्गाधिकारी ॥ त्रिभुवनउपगारी केवलज्ञानधारी ॥नविजन नित सेवो देव ए नक्तिनावे ॥ इहिज जिन नजता सर्व सपत्ति आवे ॥ ३ ॥ जिनवरपदसेवा सर्वसपत्तिदाई ॥ निशिदिन सुखदाई कल्पवल्ली सहाई ॥नमि विनमि लहीजे सर्व विद्या वडाई ॥ क्षपन जिनह सेवा साधता तेह पाई ॥ ४ ॥ अथगुरुविपे ॥ स्वपरसमयजाणे धर्मवाणी वखाणे ॥ परम गुरुकह्यायो तत्त्व नीशक माणे॥ नविककज विकाशे नानुज्यू तेज नासे ॥ इहज गुरु नजो जे शुद्धमार्ग प्रकाशे ॥ ५ ॥ सुगुरुवचनसगे निस्तरेजीवरगे ॥ निरमल नर थाए जेम गगाप्रसगे ॥ सुणिय सुगुरु केशी॥ वाणि रायप्रदेशी ॥ लहि सुरनव वासी जे हसे मोक्षवाशी ॥ ६ ॥ अथधर्मविपे ॥ जलनिधि जलवेला चड्थी जेम वाधे ॥ सकल विनवलीला धर्मथी तेम साधे ॥ मनुअ जनमकेरो सार ते धर्म जाणी ॥ नजिनजि नवि नावे धर्म ते सौख्य खाणी ॥७॥ इह धरम पसाये विक्रमे सत्य साध्यो ॥ इह धरम पसाये शालिनो साक वाध्यो॥ जस नर गज वाजी मृत्तिकाना जिकेई ॥ रणसमय थया ते जीव साचा तिकेई ॥ ॥ ८ ॥ अथज्ञानविपे ॥ तन धन ठकुराई सर्व ए जीवनेठे ॥ पण इक दुहिलू

ज्ञान संसारमां छे ॥ भवजलनिधि तारे सर्व जे दुःख वारे ॥ निजपरहित हेते ज्ञान ते कां न धारे ॥ ए ॥ यवकृपि एक गाथा बोधथी जे निवार्यो ॥ एक पदथि चिलातीपुत्र संसार वार्यो ॥ श्रुतभणत सुज्ञानी मास तुंगादि थावे ॥ श्रुतथि अभ य हाथे रोहिण्यो चोर नावे ॥ १०॥ अथमनुष्यजन्मविषेः ॥ भवजलनधि भमंतां कोइ वेला विशेषे ॥ मनुजजनम लाधो दुल्लहो रत्न लेखे ॥ सफल कर सुधर्मा ज न्म ते धर्मयोगे ॥ परभवसुख जेथी मोक्षलक्ष्मी प्रभोगे ॥ ११ ॥ मनुजजनम पा मी आलसें जे गमेछे ॥ शशिनृपतिपरे ते शोचनाथी भमेछे ॥ दुलह दश कथा यूं मानुखोजन्म ए छे ॥ जिनधरम विशेषे जोडतां सार्थ ते छे ॥ १२ ॥ अथसज्जन विषेः ॥ सदयमन सदाई दुःखियां जे सहाई ॥ परहित मतिदाई जास वाणी मि ठाई ॥ गुणकरि गहराई मेरुज्यूं धीरताई॥ सुजनजन सदाई तेह आनंददाई ॥१३॥ जइ दुर्जन लोके दूहव्या दोष देई ॥ मनमलिन न थाए सज्जना तेह तेई ॥ दुप दजनकपुत्री अंजना कष्टयोगे ॥ कनकजिम कशोटी ते तिसी शील भोगे ॥ १४ ॥ अथगुणविषेः ॥ गुणगहि गुण जेमां ते बहू मान पावे ॥ नर सुरनिगुणे ज्यूं फूल शीशे चढावे ॥ गुणकरि बहु माने लोक ज्यूं चंद्रमाने ॥अति कृश जिम माने पू र्णने त्यूं न माने ॥ १५ ॥ मलयगिरि कडे जे जबुलिंबादि सोई ॥ मलयजतरु संगे चंदना तेइ होई ॥ इम लहिय वडाइयूं कीजिये संग रंगे ॥ गजशिरचडि बेठी ज्यूं अजा सिंहसंगे ॥ १६ ॥ अथन्यायविषे ॥ जग सुजस सुवासे न्यायलक्ष्मी उपासे ॥ व्यसन दुरित नासे न्यायथी लोक वासे ॥ इम हृदय विमासी न्याय अंगी करी जे॥अनय परिहरीजे विश्वने वश्य कीजे ॥ १७ ॥ पशु पण तस सेवे न्यायथी जे न चूके ॥ अनयपथ चले जे भाइ ते तास मूके ॥ कपिकुल मिलि सेव्यो रामने शीस नामी ॥ अनयकरि तज्यो ज्यूं भाइए लंकस्वामी ॥१८॥ हय गय न सहाई युद्ध कीर्ती सदाई॥ रिपुविजय वधाई न्याय ते धर्मदाई॥ धरमनय धरे जे ते सुखे वैरि जीपे ॥ धरमनय विहूणा तेहने वैरि कोपे ॥ १९ ॥ धरमनय पसाये पांमवा पंच नेई ॥ करि युद्ध जय पाम्या राज्यलीला लहेई ॥ धरमनय विहूणा कौरवा गर्व माता रणसमय विगूता पांमवा तेह जीत्या ॥ २० ॥ अथप्रतिज्ञाविषेः ॥ शुभ अशुभ जिकांई आदर्यु जे निवाहे ॥ रवि पण तस जोवा व्योम जाणी वगाहे ॥ करिशहन निवाहे तास निस्तंत आपे ॥ मलिन तनु पखाले सिंधुमां सूर आपे ॥ २१ ॥ पुरुषरयणु मोटा जे गणीजे धगारे ॥ ज्ञिण जिम प हिवज्यूं ते न छांडे परावे ॥ गिरिश विष धर्यो जे ते न अद्यापि नाख्यो ॥ दुर

गति नर लेई विक्रमादित्य राख्यो ॥ २२ ॥ अथ उपशमविषे ॥ उपशम हित कारी सर्वदा लोकमांही ॥ उपशम धर प्राणी ए समो सौख्य नांही ॥ तप ज प सुर सेवा सर्व जे आदरे छे ॥ उपशमविण जे ते जाणि मया करे छे ॥ २३ ॥ उपशम रस लीला जास चित्ते विराजी ॥ किम नर नव केरी रिद्धिमां तह ग जी ॥ गज मुनिवर जेहा धन्य ते ज्ञान गेहा ॥ तपकरि कृश देहा शांति पीयूष मेहा ॥२४॥ अथ त्रिकरणशुद्धिविषे ॥ जग जन सुखदाई चित्त एवुं सदाई ॥ मुखे अति मधुराई साच वाचा सुहाई ॥ वपु परहित हेते त्रण्य ए शुद्ध जेने ॥ तप जप व्रत सेवा तीर्थ ते सर्व तेने ॥ २५ ॥ मण वच तनु त्रण्ये शशन्यू शुद्ध जेने ॥ निज घर निवसता निर्जरा धर्म तेने ॥ जिम त्रिकरण शुद्धे ईंश दी अब वाव्यो ॥ घर सफल फलतो शील धर्मे सुहाव्यो ॥ २६ ॥ अथ कुलविषे सहज गुण वशे ज्यूं शंखमां श्वेतताई ॥ अमृत मधुरताई चन्द्रमां शीतताई ॥ कुवलय सुरताई इक्षुमां ज्यूं मिठाई ॥ कुलज मनुजकेरी त्यूं सुनावे नताई ॥ ॥२७ ॥ जिण घर वर विद्या जो हुवे तो न ऋद्धि ॥ जिण घर ऊय लाजे ता न सौजन्य वृद्धि ॥ सुकुल जनम योगे ते त्रणे जो लहीजे ॥ अनय कुमर ज्यूं तो जन्म साफल्य कीजे ॥ २८ ॥ अथ विवेकविषे ॥ हृदय घर विवेके प्राणि जो दीप वासे ॥ सकल नव तणो तो मोह अंधार नाशे ॥ परम धरम वस्तु तत्त्व प्रत्यक्ष भासे ॥ करम नर पतंगा स्वाग तेने विधसे ॥ २९ ॥ किन नर कहीजे जे विवेके विहीना ॥ सकल गुण नव्या जे ते विवेके विलीना ॥ जिम सुम ति पुरोधा भूमि गेहे वसते ॥ उगति जुगति कीधी जे विवेके उगते ॥ ३० ॥ अथ विनय विषे ॥ निशिविण शशि सोहे ज्यू न शोभे कलाई ॥ विनयविण न सोहे त्यू न विद्या वडाई ॥ विनयवहि सदाई जेह विद्या सहाई ॥ विनय विण न काई लोकमा उच्चताई ॥ ३१ ॥ विनय गुण वहीजे जेहथी श्री वरीजे ॥ सुर नर पति लीला जेह हेला लहीजे ॥ पर तणय शरीरे पेशवा जे सुविद्या ॥ विनय गुणथि लाधी विक्रमे तेह विद्या ॥ ३२ ॥ अथ विद्याविषे ॥ अगम म ति प्रयुज्ये विद्यये कोन गजे ॥ रिपु दल वल भजे विद्ययें विश्व रजे ॥ धनथि अखय विद्या सीख एणे तमासे ॥ गुरुमुख भणि विद्या दीपका जेम भासे ॥ ३३ ॥ सुर नर सुप्रसत्से विद्यये वैरि नाशे ॥ जगि सुजस सुवासे जेह वि द्या उपासे ॥ जिणकरि नृप रज्यो भोज वाणे मयूरे ॥ जिणकरि कुमारदा रीजव्यो हेम सूरे ॥ ३४ ॥अथउपकारविषे ॥ तन धन तरुणाई आयु ए चंचला छे॥

परहित करि जे जे ताहरो ए समे छे ॥ जब जनम जरा जां लागशे कंठ साई ॥ कहि न तिण समे तो कोण थाशे सहाई ॥ ३५ ॥ नहि तरु फल खावे ना नदी नीर पीवे ॥ जस धन परअर्थे सो नले जीव जीवे ॥ नल करण नरिंदा विक्रमा राम जेवा ॥ परहित करवा जे उद्यमी दक्ष तेवा ॥३६॥ ॥अथ उद्यमविषे ॥ रयण निहितरी ने उद्यमे लक्ष्मि आणे ॥ गुरु जगति हरीने उद्यमे शास्त्र जाणे ॥ दुख समय सहाई उद्यमे छे नलाई ॥ अति अलस तजीने उद्यमे लाग नाई ॥ ३७ ॥ नृपशिर निपतंती वीज जात्कारकारी ॥ उदम करि सुबुद्धी मंत्रिए ते निवारी ॥ तिम निज सुतकेरी आवती दुर्दशाने ॥ उदम करि निवारी ज्ञानगर्न प्रधाने ॥ ३८ ॥ अथ दानविषे ॥ थिर नहि धन राख्यो तेम नाख्यो न जाए ॥ इणि पर धन जोतां एव गत्या जणाए ॥ इह सुगुण सुपात्रे जेह दे नक्ति नावे ॥ निधि जिम धन आगे साथ तेहीज आवे ॥ ३९ ॥ नल वलि हरिचंद नोज जे जे गवाए ॥ प्रह समय सदा ते दानकेरे पसाए ॥ इम हृदय विमासी सर्वथा दान दीजे ॥ धन सफल करीजे जन्मनो लाहु लीजे ॥ ४० ॥ अथ शीलविषे ॥ अशुन्न करम घाले शील शोना दिखाले ॥ गुणगण अजुआले आपदा सर्व टाले ॥ तस नर बहु जीवी रूप लावण्य देई ॥ परनव शिव होई शील पाले जिकेई ॥ ४१ ॥ इण जग जिनदास श्रेष्ट शीले सुहायो ॥ तिम निरमल शीले शील गंगेव गायो ॥ कलि करण नरिंदा ए समां छे जिकोई ॥ परन्नव शिव पामे शील पाले तिकोई ॥ ४२ ॥ अथ तपविषे ॥ तरणि किरणथी ज्यूं सर्व अंधार जाए॥ तपकरि तपथी त्यूं दुख ते दूर थाए ॥ वलि मलिन थयूं जे कर्मचमाल तीरे ॥ किम तनु न पखाले ते तपस्वर्ण नीरे. ॥ ४३ ॥ तपविण नवि थाए नाश दुकर्म केरो ॥ तपविण न टले जे जन्म संसार फेरो ॥ तप वलि लहि लब्धी गोतमे नंदिखेणे ॥ तप वलि वपु कीधुं विष्णु वैक्रीय जेणे ॥४४॥ अथ नावविषे ॥ मनविण मिलवो ज्यूं चाववो दंतहीणे ॥ गुरुविण नणवो ज्यूं जीमवो ज्यूं अलूणे ॥ जसविण बहु जीवी जीव ते ज्यूं न सोहे ॥ तिम धरम न सोहे नावना जो न होहे. ॥ ४५ ॥ नरत नृप इलाची जीरणश्रेष्ठि नावे ॥ वलि वलकल चीरी केवल ज्ञान पावे ॥ बलनद्र हरिणो जे पंचमे स्वर्ग जाए ॥ इह गुण पसाये तास निस्तार थाए ॥ ४६ ॥ अथ क्रोधविषे ॥ तृण दहन दहंतो वस्तु ज्यूं सर्व बाले ॥ गुण करण नगी त्यूं क्रोध काया प्रजाले ॥ प्रसम जलद धारा वन्हि ते क्रोध वारो ॥ तप जप व्रत सेवा प्रीतिवल्ली वधारो. ॥ ४७ ॥

धरणि परशुरामे क्रोधि निक्षत्रि कीधी ॥ धरणि सुभुमराये क्रोधि निब्रह्मि का धी ॥ नरकगति सहायी क्रोध ए दुःख दाई ॥ वरज वरज नाई प्रीति दे जे वधाई ॥ ४८ ॥ अथ मानविषे ॥ विनय वनतणी जे मूल शाखा त्रिमोडे ॥ सुगुण कनककेरी शृंखलाबंध तोडे ॥ अनमद करि दोडे मान ते मत्त हाथी ॥ निनवश करि ले जे अन्यथा दूर एथी ॥ ४९ ॥ विषद त्रिप समो ए मान ते सर्प जाणे मनुज विकल होवे एण मंके जडाणो ॥ इह न परिहर्यो जो मान कुयाधने ता निज कुल विणसाड्यो मानने जे वहतो ॥ ५० ॥ अथ मायाविषे ॥ नितुरपणु निवारी हीयडे हेज धारी ॥ परिहर छल माया जे असतोषकारी ॥ मधुर मधुर बोले तोहि विश्वास नाणे ॥ अहि गिलण प्रमाणे मायिने लोक जाणे ॥ ५१ ॥ म कर म कर माया दल दोषत्रु छाया ॥ नरय तिरिय केरा जन्म दे जेह माया ॥ बलि नृप छलवाने विष्णु माया वहतां ॥ लहुयपण लह्यूं जे वामनारूप लेतां ॥ ५२ ॥ अथ लोभविषे ॥ सुण वयण सयाणे चित्तमा लोभ माणे ॥ सकन अनर्थकेरो मार्ग ए लोभ जाणे ॥ इक खिण पण एने सग रगे म लागे ॥ नव नव दुख दे ए लोभने दूर त्यागे ॥ ५३ ॥ कनकगिरि कराया लोभथी नदराये ॥ निज अरथ न आया ते हवा देवताये ॥ सयल निगि लही जे स्वाय ते विश्व कीजे ॥ मन तनह वरीजे लोभ तृला न छीजे ॥ ५४ ॥ अथ दयाविषे ॥ सुरुत कलप वेली लच्छि विद्या सहेली ॥ विरतिरमण केली शांति राजा महेली ॥ सकल गुण नलेरी जे दया जीव केरी ॥ निज हृदय धरी ते साधिए मुक्ति सेरी ॥ ५५ ॥ निज सरण परेवो श्येनथी जेण राख्यो ॥ पट दशम जिने ते ए दया धर्म दाख्यो ॥ तिह हृदय धरीने जो दया धर्म कीजे ॥ भवजलधि तरीजे दुःख दूरे करीजे ॥ ५६ ॥ अथ सत्यविषे ॥ गरल अमृत वाणी साचथी अग्नि पाणी ॥ सज सम अहिराणी साच विश्वास खाणी ॥ सुपसन सुर कीजे साचथी ते तरीजे ॥ त्रिण अलिक तजीजे साचवाणी वदीजे ॥ ५७ ॥ जग अपजश वाधे कूडवाणी वदतां ॥ वसु नृपति कुगत्यें साख कूडी भरतां ॥ असत वचन वारी साचने चित्त धारी ॥ वद वचन विचारी जे सदा सौख्यकारी ॥ ५८ ॥ अथ चोरीविषे ॥ पर धन अपहारे सार्थपें चोर हारे ॥ कुल अजस वधारे बध घातादि धारे ॥ पर धन तिण हेते सर्प ज्यू दूर वारी ॥ जग जन हितकारी होय सतोष धारी ॥ ५९ ॥ निशिदिन नर पामे जेहथी दुःख कोडी ॥ तज तज धन चोरी कष्टनी जेह ओरी ॥ पर विभव हरतो रोहिणी चोर रगे ॥ इह अभय कुमारे ते ग्रह्यो बुद्धि सगे ॥ ६० ॥

अथ कुशीलविषे ॥ अयश पमह वागे लोकमां लीह लागे ॥ दुरजन बहु जागे
जे कुले लाज लागे ॥ सजन पण विरागे मां रमे एण रागे ॥ परतिय रस रागे दो
षनी कोडि जागे ॥ ६१ ॥ परतिय रसरागे नाश लंकेश पायो ॥ परतिय रस त्या
गे शील गंगेव गायो ॥ द्रुपद जनक पुत्री विश्व विश्वे विदीती॥ सुर नर मिलि सेवी
शीलने जे धरंती ॥ ६२ ॥ अथ परिग्रहविषे ॥ शशिउदय वधे ज्यूं सिंधु वेला नलेरी॥
धनकरि मन साए तेम वाधे घणेरी ॥ दुरित नरग सेरी तूं करे ए परेरी ॥ ममकर अधि
केरी प्रीति ए अर्थकेरी॥ ६३ ॥ मनुज जनम हारे ॥ दुःखनी कोडि धारे ॥ परिग्र
ह ममता ए स्वर्गना सोख्य वारे ॥ अधिक धरणि लेवा धातकी खंम केरी ॥ सुभुम
कुगति पामी चक्रिराये घणेरी ॥ ६४ ॥ अथ संतोषविषे ॥ सकल सुख नराए विश्व
तावश्य थाए ॥ नवजलधि तराए दुःख दूरे पलाए ॥ निज जनम सुधारे आपदा
दूर वारे ॥ निज धरम वधारे जेह संतोष धारे ॥ ६५ ॥ सकल सुखतणो ते सार
संतोष जाणो ॥ कनक रमणिकेरी जेह इछा न आणे ॥ रजनि कपिल बांध्यो स्व
र्णनी लोलताए ॥ भमर कमल बांध्यो ते असंतोषताए॥ ६६ ॥ अथ विषयविषे ॥
शिवपद यदि वांछे जेह आनंद दाई ॥ विषसम विषया तो छांमि दे दुःखदाई ॥
मधुर अमृत धारा दूधनी जो लहीजे ॥ अति विरस सदा तो कांजिका संग्रही
जे ॥ ६७ ॥ विषय विकल ताणी कीचके भीम मार्यो ॥ दशमुख अपहारी जा
नकी रामनार्या ॥ रति धरि रहनेमी क्रीडवा नेमि नार्या ॥ जिण विषय न वर्ज्या
तेह जाणो अनार्या ॥ ६८ ॥ अथ इंद्रियविषे ॥ गज मगर पतंगा जेह भृंगा कुरं
गा ॥ इक इक विषयार्थे ते लहे दुःख चंगा ॥ जस परवश पावे तेहनुं शूं कही
जे ॥ इम हृदय विमासी इंद्रि पांचे दमीजे ॥ ६९॥ विषय वन चरंतां इंद्रि जे
उंटडा ए ॥ निज वश नवि राखे तेह दे दुःखडा ए॥अवश करण मृत्यू ज्यूं अगुतें
द्रि पामे ॥ स्ववश सुख लह्या ज्यूं कूर्म गुप्तेंद्रि नामे ॥ ७० ॥ अथ प्रमादवि
षे ॥ सहु मन सुख वांछे दुःखने को न वांछे॥ नहि धरम विना ते सौख्य ए संपजे
छे ॥ इह सुधरम पामी कां प्रमादे गमीजे ॥ अति अलस तजीने उद्यमे धर्म की
जे ॥ ७१ ॥ इह दिवस गया जे तेह पाछा न आवे ॥ धरम समय आले कां प्र
मादे गमावे ॥ धरम नवि करे जे आयु आले वहावे ॥ शशि नृपतिपरे त्युं सोच
ना अंत पावे ॥ ७२ ॥ अथ साधुधर्मविषे ॥ शार्दूलविक्रीडितछंदः ॥ जे पंच व्रत मेरु
भार निवहे, निःसंग रंगे रहे ॥ पंचाचार धरे प्रमाद न करे, जे दुःपरिसा सहे ॥
पांचे इंद्रि तुरंगमा वश करे, मोक्षार्थने संग्रहे ॥ एवो दुष्कर साधु धर्म धन ते, जे

ज्यू ग्रहे त्यू वहे ॥ ७३ ॥ मालिनीछंद ॥ मयण सरव मोसी कामिनी संग तोसी तजिय कनक कोडी मुक्तिसू प्रीति जोडी ॥ नव नव नय वामी शुद्ध चारित्र पामी ॥ इह जग शिवगामी ते नमो जंबु स्वामी ॥ ७४ ॥ अथ श्रावकधर्म विषे ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ जे सम्यक्त लही सदा व्रत धरे, सर्वज्ञ सेवा करे ॥ सव्या वश्यक आदरे गुरु भजे, दानादि धर्माचरे ॥ नित्ये सद्गुरु सेवना मनधरे भाख्यो जिनाधीशरे ॥ भाख्यो श्रावकधर्म दोय दशधा, जे आदरे ते तरे ॥ ७५ ॥ मालिनी छंद ॥ निशिदिन जिनकेरी जे करे शुद्ध सेवा ॥ अणु व्रत धरि जे ते काम आनंद देवा ॥ चरम जिन वखाणे जे सुधर्मे सुवास्या ॥ समकित सतवंता श्रावका ते प्रसंस्या ॥ ७६ ॥ इम अरथ रसाला जे रची सूक्तमाला ॥ धरम नृपति वाना मालिनी छंद शाला ॥ धरम मति धरता ए इहां पुण्य वाध्यो ॥ प्रथम धरम केरा सार ए वर्ग साध्यो ॥ ७७ ॥ इति श्रीमत्सूक्त मुक्तावल्यां धर्मवर्ग प्रथम समाप्त ॥ १ ॥

॥ अथ अर्थवर्ग प्रारंभ ॥

उपेंद्रवज्राछंद ॥ अथार्थवर्गे हितचिंतनं श्रीमितपचार्थ्यस्य महीशसेवा ॥ खलादिमैत्री व्यसनादि चैव, मिहावधार्या कतिचित्प्रसंगा ॥ १ ॥ अथ अर्थ विषे मालिनी छंद ॥ अरथ अरजि जेणे स्वायते विश्व होवे ॥ जिण विण गुण विद्या रूपने कोण जोवे ॥ अभिनव सुखकेरो सार ए अर्थ जाणी ॥ सकल धरम एथी साधिए चित्त आणी ॥ २ ॥ अरथ विण कयन्नो जेह वेश्याइ नाख्यो ॥ अरथ विण वसिष्टे राम जातो उवेख्यो ॥ सुरुत सुजस कारी अर्थ ते ए उपाजो ॥ कुनयज उपजतो अर्थ ते दूर वजो ॥ ३ ॥ अथ हित चिंतनविषे ॥ परहित करवा जे चित्त उछाह धारे ॥ परकृत हितहीये जे न कांई विसारे ॥ प्रति हित परथी ते जे न वांछे कदाई ॥ पुरुष रयण सोई वंदिए सो सदाई ॥४॥ निज दुख न गणीने पारकू दुःख वारे ॥ तिहतणि बलिहारे जाइए कोडि वारे ॥ जिम जिनवर जेणे मरु पीडा सहीने ॥ विषधर जिनवीरे बूझव्या ते वहीने ॥ ५ ॥ अथ लक्ष्मीविषे ॥ हरि सुत रति रंगे जे रमे रात सारी ॥ शिवतनय कुमारो ब्रह्म पुत्री कुमारी ॥ हितकरि दृगलीला जेहने लछि जोवे ॥ सकल सुर लहे सो सोहि विख्यात होवे ॥ ६ ॥ लखमि बलि यशोदा नंदने विश्व मोहे ॥ लखमि विण विरूपी सघु भिक्षू न सोहे ॥ लखमि लहिय राके जे शिलादित्य नाम्यो ॥ लखमि लहिय शाके विक्रमे विश्व रज्यो ॥ ७ ॥ अथ कृपणविषे ॥ कृप

कण जिम संचे कीटिका धान्यकेरो ॥ मधुकर मधु संचे नोगवे को अनेरो ॥ ति म धन कृपणकेरो नोपकारे दिवाये ॥ इमहि विलय जाए अन्यथा अन्य खाए ॥ ८ ॥ कृपण पण धर्त्तां जे नवे नंद राया ॥ कनक गिरि कराया ते तिहां अर्थ नाया ॥ इम मनत करंतां इःख वाग्ने वमीजे ॥ कृपण पण तजीजे मेघज्यूं दा न दीजे ॥ ए ॥ अथ याचनविषेः ॥ निर्मल गुण राजी त्यां लगे लोक राजी ॥ तव लग कहि जीजी त्यां लगे प्रीति ताजी ॥ सुजन जन सनेही त्यां लगे मि त्र तेही ॥ मुख थकि न कहीजे ज्यां लगे देहि देही ॥ १० ॥ जइ वडपण वांछे मांगजे तो न कांई ॥ लहु पण जिण होवे केम कीजे तिकाई ॥ जिम लघु थइ सोंझे बीरथी दान लीधूं ॥ हरि बल नृप आगे वामना रुप कीधूं ॥ ११ ॥ अथ नि र्धनविषेः ॥ धनविण निज बंधू तेहने दूर छंडे ॥ धनविण गृह नार्या तेह सेवा न मंडे ॥ निरजल सरजेवो देह निर्जीव जेवो ॥ निरधन तृण जेवो लोकमें ते गणे वो ॥ १२ ॥ सरवर जिम सोहे नीर पूरे नरायो ॥ धन करि नर सोहे तेम नीते नपायो ॥ धनकरिय सुहंतो माय जे जाए छूतो ॥ धनविण पग सूजी तेह दीठो मरं तो ॥ १३ ॥ अथ राज सेवाविषेः ॥ सुजनसुं हित कीजे डुर्जना सीख दीजे ॥ जग जन वश कीजे चित्त वांछा वरीजे ॥ निज गुण प्रगटीजे विश्वना कार्य कीजे ॥ प्रभु मम विचरीजे जो प्रभूसेव कीजे ॥ १४ ॥ जगतिकरि वहाली सेव कीजे तिकाई ॥ अधिक फल न आपे कर्मथी ते तिकाई ॥ जलधि तरिय लंका सीत संदेस लावे ॥ हनुमत करमे ते राम कछोट पावे ॥ १५ ॥ अथ खलताविषे ॥ रस विर स नजे ज्यूं अंब निंब प्रसंगे ॥ खल मिलण हुवे त्यूं अंतरग प्रसंगे ॥ सुण सु ण ससनेही जाणि ले रीति जेही ॥ खल जन निसनेही तेहशूं प्रीति केही ॥ १६ मगर जल वसंतो ते कपीराय दीठो ॥ मधुर फल चखावी ते कह्यो मित्र मीठो ॥ कपि कलिज नखेवा मत्स खेली खलाई ॥ जलमहिं कपि बुद्धी छांमि दे ते नला ई ॥ १७ ॥ अथ अविश्वासविषे ॥ उपजाति छंद ॥ विश्वासिसाथे न रजे रमीजे ॥ न वैरि विश्वास कदापि कीजे ॥ जो चित्त ए धीर गुणे धरीजे ॥ तो लच्छि लीला ज गमां वरीजे ॥ १८ ॥ इंद्रवज्राछंद ॥ चाणायके ज्यूं निज काज साख्यो ॥ जे राज नागी नृप तेह माख्यो ॥ जो घूअडे काक विश्वास कीधो ॥ तो वायसे घूकने दाह दीधो ॥ १९ ॥ अथ मैत्रीविषे ॥ मालिनीछंद ॥ करि कनक सरीसी साधु मैत्री सदाई ॥ घसि कसि तप वेधे जास वाणी सवाई ॥ अहव करहि मैत्री चंद्रमां सिंधु जेही ॥ घट घट वध वाधे सारखा वे सनेही ॥ २० ॥ इह सहज सनेहे जे वधे मित्रताई ॥ रवि प

वचन निवाहे लाज ग्युंगज्य वाले ॥ व्रत नय कुलरीतें मातज्यूं लाज पाले ॥ सकल गुण सुहावे लाजथी भावदेवे ॥ व्रत नियम लह्यो जे भाइ लज्जा प्रभावे ॥३४॥ शालिनी छंद ॥ एवा जे जे रुयडा भाव राजे ॥ एणेविश्वें अर्थथी तेह छाजे ॥ एवुं जाणी सार ए सौख्य केरो ॥ ते धीरा जे अर्थ अर्जे भलेरो ॥ ३५ ॥ इतिश्री सूक्त मुक्तावल्यां अर्थवर्गो द्वितीय. समाप्त· ॥ २ ॥

॥ अथ कामवर्ग प्रारंभः ॥

उपजाति छंदः॥ ग्राह्याः कियंतः किल कामवर्गे कामो नृनार्यो गुणदोषभाजः ॥ सुलक्षणं योगवियोगयुक्तः समातृपितृप्रमुखा· प्रसंगाः ॥ १ ॥ अथ कामविषे· ॥ कंदर्प पंचानन तेज आगे ॥ कुरंग जेवा जगजीव भागे ॥ स्त्रीशस्त्र लेई जग जे व दीता ॥ तिएण देवा जनवृंद जीता ॥ २ ॥ मालिनी छंदः ॥ मनमथ जगमांहे डु र्जेयी जे अयापी ॥ त्रिभुवन सुरराजी जासशस्त्रे सतापी ॥ जलज विधि उपासे वा छिजा विष्णु सेवे ॥ हर हिम गिरिजाने जेण अर्धांग देवे ॥ ३ ॥ शार्दूलविक्रीडित छंदः ॥ भिल्लीभाव चल्यो महेश उमया, जे काम रागे करी ॥ पुत्री देखि चल्यो चतुर्मु ख हरी, आहेरिका आदरी ॥ ईंद्र गोतमनी त्रिया विलसिने, संभोग ते ओलव्या ॥ कामे एम महंत देव जग जे, ते भोलव्या रोलव्या ॥ ४ ॥ मालिनी छंद. ॥ नल नृ पद वदंती देखि चारित्र चाले ॥ अरह नरहनेमी ते तपस्या विटाले ॥ चरम जिन मुनी ते चिल्लणारूप मोहे ॥ मयण सर व्यथाना एह उन्माद सोहे ॥ ५ ॥ अथ गुणदोषोद्भावनविषे ॥ रथोद्धताछंद. ॥ उत्तमा पण नरा न संभवे॥ मध्यमा तिम न योषिता हुवे ॥ एह उत्तमिक मध्यमी पणो ॥ वेदमांहि गुणदोषनो गिणो ॥६॥ तत्र पुरुषगुणा यथा ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद·॥ जे नित्ये गुण वृंद ले परतणा, दोषां न जे दाखवे ॥ जे विश्वे उपगारिने उपकरे, वाणीसुधा जे लवे ॥ पूरा पूनिम चंद जेम सुगुणा, जे धीर मेरुसमा॥जेमा जेह गंभीर सायर जिस्या, ते मानवा उत्तमा ॥७ ॥ अनुष्टुप् छंद.॥रूप सौभाग्य संपन्नाः सत्वादिगुणशोभनाः ॥ ते लोके विरला धीराः श्रीराम सदृशा नराः ॥ ८ ॥ अथ पुरुष दोषा यथा ॥ शार्दूलविक्रीडितछंदः ॥ लंकासामि हरंति राम तजि जे, शीतातणी एवकी ॥ स्त्रीवेची हरिचंद पांमव नृपे, कृ ष्णा न राखी सकी ॥ रात्रें छंमि निज स्त्रिया नल नृपे, ए दोष मोटा भणी॥ जोवो उत्तम मांहि दोष गणना, का वात बीजातणी ॥ ए ॥ अथ स्त्रीगुणा यथा ॥ उपजा तिछंदः ॥ सुशील आले प्रिय चित्त चाले ॥ जे शील पाले गृह चिंत टाले ॥ दाना

द्दि जेणे गृहधर्म होई ॥ ते गेहि नित्ये घरलहि सोई ॥ १० ॥ अथ स्त्रीदोष
॥ उपजातिछंद ॥ नर्त्ता हण्यो जे पति मारकाये ॥ नाख्यो नदीमा शुक मा
ये ॥ सुदर्शनश्रेष्टि सुशील राख्यो ॥ ते आल देई अनयाय दाख्यो ॥ ११ ॥
ततिलका छंद ॥ माखो प्रदेशि सुरिकाति विपयावलीए ॥ राजा यशोधर हण्यो
यनावलीए ॥ दुखी कर्यो स्वसुर नूपुर पडिताए ॥ दोषी त्रिया इम ज
इण दोपताए ॥ १२ ॥ अथ सुलक्षणी स्त्रीविषे —शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ ह
रूपवती सुशील सुगुणी, लावण्य अगे लसे ॥ लज्जालु प्रियवादिनी प्रियतणे, चित्त
सदा जे वसे ॥ लीला यौवन उल्लसे उरवसी, जाणे नृलोके वशी ॥ एवी पुण्यतणे
पसाय लहिये, रामे रमा सारशी ॥१३॥ उपजातिछंद ॥ सीता सुनंदा नलराय॥
णी ॥ जे द्रोपदी शीलवती वखाणी ॥ जे एहवी शीलगुणे समाणी ॥ सुलक्षणा ते
जगमाही जाणी ॥१४॥ अथसयोगविषे ॥ मालिनी छंद प्रियसखि प्रियोगे उल्ल
से नेत्र रगे ॥ हसित मुख शशीज्यु सर्व रोमाच अगे ॥ कुच इक मुक वैरी नम्रता
जे न दाखे ॥ प्रिय मिलण समे जे अतरो तेह राखे ॥ १५ ॥ अथ वियोगविषे
दिन वरस समाणे ईणि कल्पांत जाणे ॥ हिम रज कदली जे तेह काला प्रमाणे
॥ शशिरसिकरसो जे स्वरसो सोइ लागे ॥ प्रिय विरह प्रियाने दुख शू शू न जाग
॥१६॥ अथ माताविषे॥ इन्द्रवज्राछंद ॥ जे मातनो बोल कदा न लोपे ॥ जे विश्वमां सू
रज जेम ओपे ॥ ज्या धर्म चर्या बहुधा परीखी ॥ त्या मातपूजा सहुमा सरीखी
॥१७॥ जे मात मोह जिन एम कीधो ॥ गर्भे वसता व्रत नेम लीधो ॥ जे मात न
इा वयणे प्रबुद्धो ॥ शीना तपते अरहन्न सीधो॥१८॥अथपिताविषे ॥ जे बान ला
वे सुतने रमाडे॥ विद्या भणावे सरस जमाडे॥ते तातनो प्रत्युपकार एही॥जे तेह
नी भक्ति हिये वहेही ॥ १९ ॥ मानिनीछंद ॥ निषध सगर राया जे हरीनंद भ
इा ॥ तिम दशरथ राया जे प्रसन्ना मुनिंदा ॥ मनक जनक जेते पुत्रने मोह ला
ख्या ॥ स्वसुत हित करीते तेहना काज साख्या ॥२०॥ अथ पुत्रविषे ॥स्वागताछंद
मात तातपद पकज सेवा ॥ जे करे तस सुपुत्र कहेवा॥जेह कीर्त्ति कुललाज वधा
॥ सूर्य जेम जगि तेज सधारे॥ २१ ॥ शालिनीछंद ॥ गगापुत्रे विश्वमां कीर्ति
पी ॥ आज्ञा जेणे तातकेरी न लोपी ॥ ते धन्या जे अजनापुत्र जेवा ॥ जेणे की
जानकी नाथ सेवा ॥ २२ ॥तोटकछंद ॥ इम काम विलास उल्लास तए ॥ १
ाति हदे अनुभावतए ॥ निमचदन अग विलेप तए ॥ हिय होय सदा सुख
तए ॥ २३ ॥ इति श्रीसूक्त मुक्तावल्यां काम वर्गस्तृतीय समाप्त ॥

अथ मोक्षवर्ग प्रारंभः

उपजातिछंदः ॥ ग्राह्या.कियंतः किल मोक्षवर्गे कर्मक्षमासंयमभावनाद्याः ॥ विवेकनिर्वेदनिजप्रबोधा इत्येवमेते प्रवरप्रसंगाः ॥ १ ॥ मोक्षार्थविषे मालिनीछंदः ॥ इह भव सुख हेते के प्रवर्ते भलेरा ॥ परभव सुखहेते जे प्रवर्ते अनेरा ॥ अवर अरथ छंमी मुक्ति पंथा अराधे ॥ परम पुरुष सोई जेह मोक्षार्थ साधे ॥ २ ॥ तजिय भरत केरी जेण छ खंड भूमी ॥ शिवपथ जिण साध्यो सोलमे सांति सामी ॥ गजमुनि सुप्रसिद्धा जेम प्रत्येक बुद्धा ॥ अवर अर्थ छंडी धन्य ते मोक्ष लुद्धा॥३॥ अथ कर्मविषे ॥ करम नृपति कोपे दुःख आपे घणेरा॥ नरय तिरय केरा जन्म जन्मे अनेरा ॥ शुभ परिणति होवे जीवने कर्म तेवे ॥ सुरनरपतिकेरी संपदा सोइ देवे ॥ ४ ॥ करम शशि कलंकी कर्म भिक्षू पिनाकी ॥ करम वलि नरेंद्रे प्रार्थना विष्णुरांकी ॥ करम वश विधाता इंद्र सूर्यादि होई ॥ सबल करम सोई, कर्म जेवो न कोई ॥ ५ ॥ अथ क्षमाविषे ॥दुरित भर निवारे जे क्षमा कर्म वारे ॥ सकल तप सधारे पुन्य लक्ष्मी वधारे ॥ श्रुत सकल अराधे जे क्षमा मोक्ष साधे ॥ जिण निज गुण वाधे ते क्षमा कां न साधे ॥ ६ ॥ सुगति लहि खिमाए खंध सूरीस सीसा ॥ सुगति दृढ प्रहारे कूरगडू मुनीसा ॥ गज मुनिस खिमाए मुक्ति पंथा अराधे ॥ तिम सुगति खिमाए साधु मेतार्य साधे ॥ ७ ॥ अथ संयमविषे स्वागता छंद ॥ पूर्व कर्म सवि संयम वारे ॥ जन्म वारिनिधि पार उतारे ॥ तेह संयम न केम धरीजे ॥ जेण मुक्ति रमणी वश कीजे ॥ ८ ॥ तुंग शैल बलदेव सुहायो ॥ जेण सिंह मृग वोध वतायो ॥ तेम संयम लहीय अरायो॥ जेण पंचम सुराजय पायो ॥ ९ ॥ अथ द्वादश भावनाविषे.॥तत्र प्रथम अनित्य भावना ॥मालिनी छंद॥धण कण तनु जीवी वीज झात्कार जेवी ॥ सुजन तरुण मैत्री स्वप्न जेवी गणेवी ॥ अहमत ममताए मूढता कांइ माचे ॥ अथिर अरथ जाणी एणशूं कोण राचे ॥ १० ॥ धरणि तरु गिरिंदा देखिए भाव जेई ॥ सुर धनुष परे ते भंगुरा भाव तेई इम हृदय विमासी कारमी देह छाया॥तजिय भरतराया चित्त योगे लगाया॥११॥ द्वितीय असरण भावना ॥ परम पुरुष जेवा संहर्या जे कृतांते ॥ अवर सरण केतुं लीजिये तेह अंते ॥ प्रिय सुहृद कुटंवा पाश वेवा जिकोई ॥ मरण समय राखे जीवने ते न कोई ॥ १२ ॥ सुर गण नर कोडी जे करे जास सेवा ॥ मरण भय न छूटा तेह इंद्रादि देवा ॥ जगत जन हरंतो एम जाणी अनाथी ॥ व्रत ग्रहिय विछूटा जेह संसारमांथी ॥ १३ ॥ तृतीय संसार भावना ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद. ॥

तिर्यंचादि निगोद नारकितणी, जे योनि योनी रह्यां ॥ जीवे दुःख अनेक दुर्गतिमां, कर्मप्रनावे जह्यां ॥ या संयोग वियोग रोग बहु आ, या जन्म जन्मे दुःखी ॥ ते संसार असार जाणि इहवो, जे ए तजे सो सुखी ॥ १४ ॥ इंद्रवज्रा छंद ॥ जे हीन ते उत्तम जाति जाए ॥ जे उच्च ते मध्यम जाति थाए ॥ ज्यूं मोदमेनार्य मुनींद जाए ॥ ज्यूं मथु सूरी पुरयक्ष थाए ॥ १५ ॥ चतुर्थ एकत्वनावना पुण्ये अकेलो जिव स्वर्ग जाए ॥ पापे अकेलो जिव नर्क जाए ॥ ए जीव ना आव करे अकेलो ॥ ए जाणिने ते ममता महेलो ॥ १६ ॥ उपजाति छंद ॥ ए एकना जीव कुटंब योगे ॥ सुखी दुःखी ते तस विप्रयोगे ॥ स्त्री हाथ देखी वलयो अकना ॥ नमी प्रबोध्यो तिणथी वहेलो ॥ १७ ॥ पंचम अन्यत्वनावना ॥ जो आपणो देह न होई ॥ तो अन्यको आपण मित्त कोई ॥ जे सर्व ते अन्य इहां नणीने ॥ कहां हां हर्ष विषाद कीजे ॥ १८ ॥ देहादि जे जीवथकी अनेरा ॥ श्यो दुःख कीजे नाशकेरा ॥ ते जाणिने वाघणिने प्रबोधी ॥ सुकोसले सागन सारकीधी ॥ १९ ॥ षष्ठ अशुचिनावना ॥ काया महा एह अशूचिताई ॥ जिहां नव द्वार वहे सदाई ॥ कपूर कर्पूर सुद्रव्य सोई ॥ ते काय संयोग मलीन होई ॥ २० ॥ अशूचि देही नर नारि केरी ॥ मल राच जे ए मलमूत्र सेरी ॥ ए कारमी देह असार देखी ॥ चतुर्थ चक्रिय पण ते उवेखी ॥ २१ ॥ सप्तमी आश्रवनावना ॥ मालिनीछंद ॥ इह अविरति मिथ्या योग पापानि ताजे इण उण नर जीवा आश्रवे कर्म बांधे ॥ करम जनक जेने आश्रवा जे न रुंधे ॥ समर समय आत्मा संवरी सो प्रबुद्धे ॥ २२ ॥ इंद्रवज्राछंद ॥ जेकुंडरीके व्रतगाढि दीधु ॥ नार्गतणू तेवजि राज्य लीधु ॥ ते दुःख पाम्या नरके घणेरा ॥ ते हेतु ए आश्रव दोषकेरा ॥ २३ ॥ अष्टमी संवरनावना जे सर्वथा आश्रवने निरुंधे ॥ ते संवरी संवरनाव साधे ॥ ते नाववरा गुरुराज स्वामी ॥ जेणे त्रिया कंचन कोडिवामी ॥ २४ ॥ नवमी निर्जरा नावना ॥ मालिनी छंद ॥ दुयदस तपनेदे कर्म ए निर्जराए ॥ उतपति थिति नाशे लोक नावा नराए ॥ इन्न जग बोधी इन्नना धर्मबुद्धी ॥ नर हरणि विनावो नावना एह शुद्धी ॥ २५ ॥ उपजातिछंद ॥ बे निर्जरा काम सकाम तेही ॥ अकाम जे ते मरुदेवि जेही ॥ ते ज्ञानथी कर्म हणि निर्जरीने ॥ दृढ प्रहारी परि तो तरीजे ॥ २६ ॥ दशमी लोकनावना ॥ मालिनी छंद ॥ निम पुरुष विलोये ए अधो लोक तेवो ॥ तिरिय पण विराजे थाल स्योरंग जेवा ॥ उरध मुरज जेवो लोकनाल प्रकास्यो ॥ तिमज नवन नानू केवली ज्ञान नाख्यो ॥ २७ ॥ एकादश बोधिदुर्लननावना ॥ स्वागता छंद ॥ बोधि बीन न हि जेह आराधे ॥ ते इन्नासुत परे शिव साधे ॥ धर्म नावन जही नवि नावा ॥ राग

संप्रति परे सुख पावो ॥ २८ ॥ अथ रागविषे ॥ इंद्रवज्रा छंदः ॥ रागे म राचे भव बंध जाणी॥जे जाण ते राग वशे अनाणी॥गौरी तणे राग महेस रागी॥अर्धांग देवा नि जबुद्धि जागी ॥ २९॥ अथ द्वेषविषे ॥ रे जीव विद्वेष मने म आणे ॥ विद्वेष संसार निदान जाणे ॥ सासू नणंदे मिलि कूड कीधूं ॥ जूवं सुभद्रा शिर आल दीधूं ॥३०॥ अथ संतोषविषे ॥ वसंततिलका छंदः ॥ संतोष तृप्त जनने सुख होय जेवुं ॥ ते द्रव्य लुब्ध जनने सुख नाहि तेवुं॥ संतोषवंत जनने सहु लोक सेवे ॥ राजेंद्र रंक सरि खा करि जेह जोवे ॥३१॥ अथ विवेकविषे॥ उपजाति छंदः ॥ जो जेह चित्ते सुवि वेक भासे ॥ तो मोह अंधार विकार नासे ॥ विवेक विज्ञानतणे प्रमाणे ॥ जीवादि जे वस्तु स्वभाव जाणे ॥ ३२ ॥ इंद्रवज्रा छंदः ॥ बाला पणे संयम योग धारी ॥ वर्षाकृतें कात्रलि जेण तारी ॥ श्रीवीरकेरो अयमत्त तेई ॥ सुज्ञान पाम्यो सु विवेक लेई ॥ ३३ ॥ अथ निर्वेदविषे॥शार्दूलविक्रीडितछंदः॥जे वेधूजन कर्म बंधन जि णे, भोगा भुजंगा गिणे ॥ जाणंतो विषसारिखी विषयता, संसारता ते हणे ॥ जे सं सारह रागहेतु जनने, संसार भावा हुवे ॥ भावो तेइ विरागवंत जनने, वैराग्यता दाखवे ॥ ३४ ॥ वसंततिलकाछंदः ॥ निर्वेद ते प्रबल दुर्जर वंदिखाणो ॥ जे छोडवा मनधरे बुध तेह जाणो॥ निर्वेदथी तजिय राज विवेक लीधो ॥योगींद्र भर्तृहरि सं यम योग लीधो ॥३५॥ अथ आत्मबोधविषे॥ए मोहनींद तजि केवल बोध हते॥ ते ध्यान शुद्ध रुदि भावनि एक चित्ते ॥ ज्यूं नि प्रपंच निज ज्योति स्वरूप पावे ॥ निर्बाध जे अखय मोक्ष सुखार्थे आवे ॥ ३६ ॥ मालिनी छंद.॥ नवि विषयतणा जे चंचला सौख्य जाणी ॥ प्रियतम प्रिय योगा भंगुर चित्त आणी ॥ करमदल खपे ई केवल ज्ञान लेई ॥ धन धन नर तेई मोक्ष साधे लिकेई ॥ ३७ ॥ इति मोक्षव र्गः चतुर्थः समाप्तः ॥

उपजाति वृत्त ॥ इत्येवमुक्ता किल सूक्तमाला विभूषिता वर्गचतुष्टयेन ॥ तनोतु शोभा मधिकं जनानां कंठस्थिता मौक्तिकमालिकेव ॥ १ ॥ शार्दूलविक्रीडित वृत्तं ॥ आसीन्सद्गुणसिंधुपार्वणशशी श्रीमत्तपागच्छपः सूरिः श्रीविजयप्रभाभिधगुरुर्बुद्ध्या जित स्वर्गुरुः ॥ तत्पट्टोदयभूधरे विजयते भास्वानिवोद्यत्प्रभः सूरिश्रीविजयादिर त्नसुगुरुर्विशुद्धज्ञानानंदभृः ॥ २ ॥ आर्यावृत्तं ॥ विख्यातास्तद्राज्ये, प्राज्ञाः श्रीशांतिवि मलनामान.॥ तच्छिष्या बभूवु. प्राज्ञा. श्रीकनकविमलाह्वा ॥३॥ तेषामुभे विनेयौ वि द्वान् कल्याणविमल इत्याद्यः॥तच्छिष्यो द्वितीयः केसरविमलाभिधो ऽवरज.॥४॥ तेन चतुर्भि र्व र्गे. रचिता भाषानिबद्धरचिरेयं ॥ सूक्तानामिह माला. मनोविनोदाय

वालानां ॥ ५॥ वेदेंडियर्षि चड, प्रमिते श्रीविक्रमाहृते वर्षे ॥ अग्रंथि सूक्तमाला केम विमलेन विबुधेन ॥ ६ ॥ इति श्रीसूक्तमुक्तावली संपूर्ण

॥ श्री शंखेश्वरपार्श्वनाथाय नमः ॥

अथ

श्री विनयविजयजी उपाध्यायकृत शांतसुधारस ग्रंथ अर्थसहित प्रारंभ

शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ नीरंध्रे भवकानने परिगलत्पंचाश्र
वाम्भोधरे नानाकर्मलतावितानगहने मोहांधकारोत्कुरे ॥
भ्रांतानामिह देहिनां स्थिरकृते कारुण्यपुण्यात्मभिस्तीर्थं
शैः प्रथितास्सुधारसकिरो रम्या गिरः पातु वः ॥ १ ॥

अर्थ ॥ प्रथमग्रंथकर्त्ता ग्रंथनेआदें श्रीतीर्थंकरदेवनी वाणीनी स्तुतिकरी मंगलाचरणकरेछे हेभव्यो जेमा कोइछिद्रनथी एटलेनिकलवानो बारणोनथी वलीजेमां समस्तप्रकारें पांचआश्रवरूप मेघ वरसीरह्युछे तथानानाप्रकारना ज्ञानावरणीयादिक कर्मोनीप्रकृतिरूप वेलियेंकरीव्याप्त अनेमोहरूप अंधकारेकरीयुक्त एहवोआसंसाररूपवन तेमांफिरनाराजे प्राणीओ तेने स्थिरकरवानेअर्थें करुणायेंकरीपवित्रछे अंतःकरणजेहनो एहवा चतुर्विधसंघरूप तीर्थनाईश्वरजे श्रीतीर्थंकरदेव तेणेउपदेशेली अमृतरसने वरसती एहवीरमणीयजेवाणी ते तमारु रक्षणकरो ॥ १ ॥

द्रुतविलंबित वृत्तत्रय॥स्फुरति चेतसि भावनया विना न वि
दुषामपि शांतसुधारसः ॥ न च सुखं कृशमप्यमुना विना
जगति मोहविषादविषाकुले ॥ २ ॥ यदि भवभ्रमखेदप
राङ्मुखं यदि च चित्तमनंतसुखोन्मुखं ॥ शृणुत तत्सुधि
यः शुभभावनामृतरसं मम शांतसुधारसं ॥ ३ ॥ सुम
नसो मनसि श्रुतपावना निदधता द्व्यधिका दश भावना ॥
यदिह रोहति मोहतिरोहिताद्भुतगतिर्विदिता समतालता॥४॥

अर्थ ॥ हवेजेशांतसुधारसते भावनाओविना स्फुरतोनथी तेकहेछे विद्वाननोरा

ना अंतःकरणमांपण शांतिरूपअमृतनोरस तेनावविना स्फुरतोनथी अने मोह तथा खेद तद्रूपविषेंकरीव्याप्त एहवोजेजगत तेमां शांतसुधारसविना किंचित्मात्र थोमोपणसुखनथी ॥ २॥ माटेआशांतसुधारसनामा ग्रंथमांजवानो उपदेशकरेछे हेबुद्धिमंतो जोतमारुंमन संसारभ्रमणकरवाना खेदेंकरी पराङ्मुख अपरांतूं थयोहोय अनेजेमां अनंतसुखछे एहवोजेमोक्ष तेनासुखपामवानेविषे तन्मुखथयो होय तोजेमां मनोहरभावनानो रसभरेलोछे एवोमारो आशांतसुधारसनामा ग्रंथसांभलो ॥ ३ ॥ हवे भावनाथी समताप्रगटथायतेकहेछे हेपंमितजनो आसंसारमां जेनुंश्रवणमा त्रकरवाथीज पवित्रतानेकरनारी एहवीवारभावनाछे तो तेने धारणकरनारो जेजीव तेनाहृदयमां मोहजेअज्ञान तेने आछादितकरनारी अनेजेहनी अद्भुतगतिछे एहवी प्रख्यात समतारूप वेलीप्रगटथशे ।। ४ ॥

रथोद्धतावृत्तं॥आर्तरौद्रपरिणामपावक प्लुष्टभावुकविवेकसौष्ठवे॥
मानसे विषयलोलुपात्मना क्व प्ररोहतितमां समांकुरः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवेसमतापामवाने जे अयोग्यहोयतेकहेछे जेनुंमन पांचेंद्रियना त्रेवीस विषयोनेविषे लोलुपछे एहवाप्राणीओने आर्त्त रौद्रध्यानेकरीने उत्पन्नथयेली एह वीजे माठापरिणामरूप अग्नि तेणेकरीने भावनाना रसनेविषे जे चतुरपुरुषोछे तेना विचाररूप रुडापणुं जेमांथीबलीगयुंछे एहवाप्राणीओना मनमां समतानोअंकुर किहांथी उत्पन्नथाय अर्थातनजथाय ॥ ५ ॥

वसंततिलकावृत्तं॥यस्याशयं श्रुतकृतातिशयं विवेकपी
यूषवर्षरमणीयरमं श्रयंते ॥ सद्भावना सुरलता नहि
तस्य दूरे लोकोत्तरप्रशमसौख्यफलप्रसूतिः ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवेसमतापामवाने योग्यहोयतेकहेछे सिद्धांतश्रवणादिकेकरीने अत्यं तपणे संपूर्णभरेला वृद्धिपामेला तथा विवेकरूप अमृतवृष्टीनी रमणीयजेक्रीडा ते णेकरीने रम्यके० मनोहर शोभायमान एहवांजेनां अंतःकरणछे तेवांअंतःकरणो मां सद्भावनाओ श्रयंतेके० प्रवेशकरेछे तेथीतेपुरुषने लोकोत्तरजे प्रशमके० शांतर सनासुख अर्थात्मोक्षसुख तेनाफलने प्रसवनारी एहवीजे सुरलताके० कल्पलता ते दूरनथी अर्थात् तेहने मोक्षदूरनथी ॥ ६ ॥

अनुष्टुब्वृत्तद्वय॥ अनित्यताशरणते नवमेकत्वमन्यता ॥ अशौच
माश्रव चात्मन् संवर परिनावय ॥७॥ कर्मणो निर्जरा धर्म सुख्या
लोकपद्धति ॥ बोधिडर्लनतामेता नावयन्मुच्यसे नवात् ॥८॥

अर्थ ॥ हवेवे श्लोकेकरी आग्रथमानावनानी बारनावनाओनां नामकहेछे।
अनित्यनावना २ अशरणनावना ३ संसारनावना ४ एकत्वनावना ५ अ
न्यत्वनावना ६ अशुचिनावना ७ आश्रवनावना ८ संवरनावना॥हेआत्मातु एना
वनाओनो विचारकर ॥ ७ ॥ ९ कर्मनिर्जरानावना १० धर्मनावना ११ रुडाप्रका
रनो लोकस्वरूप नावना १२ बोधिडर्लन नावना॥हेआत्मातु एबारनावनाओनो वि
चारकरतोथको संसारथकीमुक्तथइस ॥ ८ ॥

पुष्पिताग्रावृत्त ॥ वपुरवपुरिद विदभ्रलीलापरिचितमप्यतिनंगुरं नरा
णां ॥ तदतिनिडरयौवनाविनीत नवति कथं विडपां महोदयाय ॥९॥

अर्थ ॥ हवेप्रथमअनित्यनावना नावतां शरीरनुं अनित्यपणुदेखाडेछे हेविद्व
न्जन आजगतमां अभ्रलीलानीपरें क्षणनगुर अनेजेहनो जयकरवो अत्यंतकवी
णछे एह्वो तरुणअवस्थायेंकरी उन्मत्त मदनजे कामदेव तेनाजेहवु सुंदर एहवु
जे मनुष्योनुशरीरते विद्वान्जे पंमितलोक तेनापण महोटा उदयकरवानु कारण
शीरीतेंथाय अपितुनहीजथाय ॥ ९ ॥

शार्दूलविक्रीडित वृत्तद्वय॥ आयुर्वायुतरत्तरंगतरलं लग्नाप
द संपदः सर्वेपीन्द्रियगोचराश्च चटुला संध्याभ्ररागादिवत्॥
मित्रस्त्रीस्वजनादिसंगमसुखं स्वप्नेन्द्रजालोपमं तत्किं वस्तु न
वे नवेदिह मुदामालंबनं यत्सतां ॥ १० ॥ प्रातर्भ्रातरिहाव
दातरुचयो ये चेतनाचेतना दृष्टा विश्वमन प्रमोदविडुरा ना
वा स्वतः सुंदरा ॥नास्तत्रैव दिने विपाकविरमात् हा नश्य
त पश्यतश्चन प्रेतदंत जहाति न नवप्रेमानुबंध मम॥११॥

अर्थ ॥ हवेबेकाव्येंकरी संसारनो अनित्यपणुदेखाडेछे हेप्राणी आसंसारमां बा
परेंकरी चंचलथयेला एह्वाजे पाणीनातरंग तेह्नीपरें आउखपणचंचलछे वली
विचित्रप्रकारनी संपत्तिओने तेपण विपत्तियेंकरीयुक्तछे अने समस्त रूपरसादिक

विषयने ते संध्याकालना आकाशजेवासुंदरछे एटले संध्याना अभ्ररागनीपरें सुंदर तोपण अभ्ररागनीपरें थोडीवारपछि विनाशशीलछे तथा मित्र स्त्री स्वजन इत्या दिकोनोजे समागम तेणेकरीने थयेलुंजेसुख तेस्वप्नसरीखुं किंवाइंद्रजालसरखुंछे ते वारें आसंसारमां सत्पुरुषोने आश्रयकरवायोग्य कइवस्तुछेवारुं. अर्थात्कोइजनथी सर्वविनाशशील अनित्यछे इतिभाव ॥ १० ॥ वली प्रातके० हेभाई आजगतमां जे प्रभातसमयें स्वच्छकांतिवान तथा अत्यंतपणे जगतने आनंद आपनारा अने स्वतासुंदरजे चेतनपदार्थ अने अचेतनपदार्थना भावदीठाहोय तेपदार्थोनो काल परिपाक थयाथी तेहिजदिवसे शोभायेंकरी हीन थइजायछे अने नाशपामेछे ए हवापदार्थोने जोनारो एहवो महारुं हतके० नष्टथयलुं जे अंतःकरण ते संसार संबंधने मूकतुनथी ए कहेवी महोटी खेदनीवातछे ॥ ११ ॥

॥ प्रथमभावनाष्टकं रामगिरिरागेण गीयते ॥

मूढ मुह्यसि मुधा ॥ मूढ मुह्यसि मुधा ॥ ध्रुवपदं ॥ विभव मनुचिंत्य हृदि सपरिवारं ॥ कुशशिरसि नीरमिव गलद निलकंपितं ॥ विनय जानीहि जीवितमसारं ॥ मू०॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेवलीविशेषें अनित्यभावना भावतोथको संसारनुं अनित्यपणुं देखाडे छे हेमूर्खशिष्य तुं परिवारसहित पोतानीसंपत्तिनुं चिंतनकरीने शुंव्यर्थमोहपामेछे वायुयें हलाव्योथको कंपायमानथयीने गलीजनारो एहवो दर्भनाअग्रभागें रहेना रोजे पाणीनुं बिंदुओ तेनीपरें हेविनय आ तहारुंजीवितव्य असारछे एमजाण एरीतें विनयविजयजीउपाध्याय पोतेपोताने प्रतिबोधकरतो बीजानेपण उपदेशकरेछे॥१॥

पश्य भंगुरमिदं विषयसुखसौहृदं पश्यतामेव नश्यति सहासं ॥ एतदनुहरति संसाररूपं रयाज्ज्वलज्जलदबालिकारुचिविलासं॥मू०॥२

अर्थ ॥ वलीहेमित्रतु जो के आविषयसुखते क्षणभंगुरछे जेमकोई हाथतालीदेई ने हसतांहसतांज नाशीजायछे तेनीपरें विषयसुखपण जोतांजोतांज नहता एह वाथईजायछे वली आ संसारनुं स्वरूपते वेगेकरीने जनारी एहवीजे वीजली तेना जधुकानी कांतीनुं अनुकरण करेछे एटले एसंसारनुं स्वरूपते वीजलीनीपरें चंचलछे॥२

हंत हतयौवनं पुच्छमिव शौवनं ॥ कुटिलमति तदपि लघु दृष्टनष्टं ॥ तेन वत परवशा परवशा हतधियः॥ कटुकमिह किं न कलयंति कष्टम्॥मू०॥३

अर्थ ॥ आ एकमहोटी खेदनीवातछे के डप्टतारुण्यपणुंते कुतरानी पुछडीसरिखो वाको अने जेहने जोतावारज तुरतनहीएवोथईजायछे अर्थात् नाशपामीजायछे एव वा तारुण्यपणाने परवशाके० पराधीनथयला हतधियके० नष्टबुद्धिवतजे पुरुषोछे ते ससारमा परवशाके० स्त्रीओ ते कष्टकारी कडवाफलनीआपनारीछे एहवु जाण तानथी माटे बतइतिखेदे एपणएकमहोटु खेदनोज कारणछे ॥ ३ ॥

यदपि पिण्याकतामगमिदमुपगत ॥ भुवनदुर्जयजरापीतसार ॥ तदपि गतलज्जमुज्झतिमनो नांगिना वितथमतिकुथितमन्मथविकार ॥ मू० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जोपण त्रणेलोकना प्राणीओ जेने जीतवाने अत्यतअसमर्थ एहवीछे जराअवस्था तेणेकरीने जेपुरुपनुं सारके० सत्वपणु जतुरह्युछे एटले जरायेकरी शरीरक्षीणथईगयुंछे एहवु एशरीर डुर्बल थयु होय तोपण निर्लज्जप्राणीओनां मन निष्फल बुद्धिथी उत्पन्नथयला कामविकारने मूकतानथी ॥ ४ ॥

सुखमनुत्तरसुरावधि यदतिमेडुर ॥ कालतस्तदपि कलयति विराम ॥ क तरदितरत्तदा वस्तु सासारिक ॥ स्थिरतरं भवति चिंतय निकाम ॥ मू० ५ ॥

अर्थ ॥ जुओके पाचअनुत्तरविमानना घणाज पुष्टकारीसुखछे तेनीपण मर्यादा छे ते पणकालेंकरी मर्यादापुरीथयाथी विरामपामेछे तो पाच अनुत्तरविमान करतां एवी बीजीकईवस्तुछे जेससारमा वधारेस्थिरीभूतथसे एवातनो तु महोटोविचारकरय

यैः सम क्रीडिता ये च भृशमीडिता यैः सहाकृष्महि प्रीतिवाद ॥ तान् जनान्वीक्ष्य बत भस्मभूयगतान्निर्विशका स्म इति धिक्प्रमाद ॥ मू० ६ ॥

अर्थ ॥ जेनीसाथे आपणे हरहमेस रमता खेलता क्रीडाकरता तथा जेनीआ पणे अत्यंत स्तुतिकरता अने जेनीसाथे आपणेप्रीतीयेकरी बोलताहता तेहिजप्रा णीने भस्मभूत थईगयला देखीने पण जोअमे निशक रहियेंछैये तो बतइतिखेदे एवोजे अमारो प्रमाद तेप्रमादने धि कारहोजो ॥ ६ ॥

असकृदुन्मिष्य निमिपति सिधूर्मिवच्चेतनाचेतना सर्वभावा ॥ इन्द्रजा लोपमा स्वजनधनसगमास्तेषु रज्यति मूढस्वभावा ॥ मू० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ जेम समुद्रना कल्लोल वारवार उत्पन्नथयीने नाशपामेछे तेमज जगत मां स्थावर अने जगमपदार्थोना भावछे एमजाणवु अने जगतमां द्रव्यादिकनो जेस बधछे तेसर्व इन्द्रजाल सरिखोछे तो एहवा पदार्थोउपर हेमूर्खप्राणीतु शूरीजपामेछे ।

कवलयन्नविरतं जंगमाजंगमं जगदहो नैव तृप्यति कृतांतः ॥ मुखग
तान् खादतस्तस्य करतलगतैर्न कथमुपलप्स्यतेऽस्माभिरंतः ॥ मू०॥८॥

अर्थ ॥ वली स्थावर अने जंगमात्मक जगतने निरंतर नक्षणकरनारो एहवोजे कृ तांतके० यमते तृप्तथातोनथी। एमहोटोआश्चर्यछे तोमुखमां आव्याप्राणीनो नक्षणक रनारोजे कालतेनाजहाथमां रहेनारा अमेछैये ते अमारोमृत्यु केवीरीतेनथाय॥८॥

नित्यमेकं चिदानंदमयमात्मनोरूपमभिरूप्यसुखमनुभवेयं ॥
प्रशमरसनवसुधापानविनयोत्सवो भवतु सततं सतामिह भ
वेऽयं ॥ ९ ॥ इतिमहोपाध्यायश्रीकीर्तिविजयगणिशिष्योपा
ध्यायश्रीविनयविजयगणिविरचिते शांतसुधारसगेयकाव्ये
अनित्यभावनाविभावनो नाम प्रथमः प्रकाश. ॥

अर्थ ॥ तेमाटे नित्य एकचिदानंदमय जे महारोआत्मा तेहनुं स्वरूपजोईने सु खनो अनुभव हुंकरीश इहां विनयविजयजी उपाध्यायकहेछेके आ मनुष्यभवमां शांतिरसरूपजे नूतनअमृत तेहनेपानकरवानो उत्साह सत्पुरुषोने निरतरहोजो ॥९ इतिश्रीमन्महोपाध्याय श्रीकीर्त्तिविजयगणिशिष्योपाध्याय श्रीविनयविजयगणि विरचिते शांतसुधारसेगेयकाव्ये अनित्यभावनाविभावनोनाम प्रथमःप्रकाश ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं॥ये षट्खंडमहीमहीनतरसा निर्जित्य बभ्राजिरे ये च स्वर्गभुजो भुजोर्जितमदा मेदुर्मुदामेदुराः ॥ तेपि क्रूरकृतांतवक्त्ररदनैर्निर्द ल्यमाना हठादत्राणाः शरणाय हा दश दिशः प्रेक्षंत दीनानना ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेबीजी अशरणभावना भावेछे आसंसारमां मृत्युआवेथकेकोईने को ईनुं शरणनथी एमदेखाडेछे हाऽतिखेदे जेपुरुष महोटापराक्रमेकरी छखंडपृथ्वी जीति शोभानेपाम्या एहवा चक्रवर्त्ती तथा जेहर्षेकरीपुष्टथयला अने जेहनी भु जाओमां उत्कृष्टबलछे एटले स्वर्गनासुखभोगवीने आनंदपाम्याछे एहवा देवताओ नेपण जेवारे क्रूरहृदयवंत जे यम तेपोताना मुखमांलेई दांतोनाबलात्कारेकरी भ क्षणकरे तेवारे तेअशरण थयाथका दीनमुखकरी कोईनुंशरणलेवानेअर्थे दशे दिशायें जुएछे तोपणतेने कालनादांतमांथी मूकाववाने कोई समर्थनथाय ॥ १ ॥

स्वागतावृत्तं ॥ तावदेव मदविभ्रममाली तावदेव गुणगौरवशा
ली ॥ यावदक्षमकृतांतकटाक्षैर्नेक्षितो विशरणो नरकीटः ॥ २ ॥

अर्थ ॥ माटेजेनो रक्षणकरनार कोईनथी एहवो एमनुष्यरूपीओ कीडजेकीडोत द्दनेलिहांसुधि सहनकरवाने ङुर्जन एहवोजेकाल तेणे पोताना कटाक्षगी नाखुन थी तिहांसुधी मदजे अहंकार तेनाविलागेकरी शोजेछे अने तिहांसुधीज गुणोना गौरवपणुं धारणकरेछे ॥ २ ॥

शिखरिणीवृत्त ॥ प्रतापैर्व्यापन्नं गलितमथ तेजोभिरुदितैर्गत
धैर्योद्योगै श्लथितमथ पुष्टेन वपुषा॥प्रवृत्त तद्द्रव्यग्रहणविषय
बाधवजनैर्जने कीनाशेन प्रसन्नमुपनीते निजवशं ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ पण जेप्राणीने जेवारे यमराजाये पोताने स्वाधीनकर्यो तेवारें तेप्राणी नो प्रतापपण नाशपाम्यो अने उदितथयलुजेतेज हतु तेपणगलीगयु तथा धैर्य अ ने उद्योग पण जतुरह्यु वली शरीरपुष्टहतो तेपण शिथिलथईगयु अनेतेपुरुषनुं एकठुं करेलु ड्व्य लेवाने अर्थे बाधवजन जे नाईओ प्रमुख हता ते प्रवर्त्तयया ॥ ३ ॥

द्वीतीयनावनाष्टक मारुणीरागेण गीयते

स्वजनजनो बहुधा हितकाम प्रीतिरसैरभिराम॥मरणदशावशमुपगत
वत रक्षति कोपि न सत ॥१॥ विनय विधीयता रे श्रीजिनधर्म शरण॥
अनुसधीयता रे शुचितरचरणस्मरण ॥ वि० ॥ १ ॥ ध्रुवपद ॥

अर्थ ॥ फिरि सम्यक्दृष्टीजीवें विशेपेकरी अशरणनावनाने आवीरीते नाववी कहेछे जेपोताना स्वजनलोकछे तेघणुज हितनावाछक तथा प्रीतिनाराखनार इत्या दिकरीते घणाप्रकारे रुडाछे पणतेसर्व स्वार्थनिमित्तेजाणवा ए तात्पर्यछे परतु हेस त्पुरुपो जेवारें जीव मरणअवस्था पामवाने तैयारथयो तेवारेतेनु सरक्षण करना र कोईनथी ॥ १ ॥ तेमाटेग्रथनाकर्त्ता श्रीविनयविजयजी उपाध्यायकहेछे के हेवि नय तु श्रीजिनधर्मनु शरणकर अने पवित्र एहवुजे चारित्रतेनु स्मरणकर ॥ १ ॥

तुरगरथेभनराद्यतिकलित दधत बलमस्खलित ॥ हर
ति यमो नरपतिमपि दीनं मैनिकइव लघुमीन ॥ वि० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ घोडा रथ हाथी पायदल एचतुरगणी सेनायेकरीयुक्त तथा पातेपण अस्खलित बलने धारणकरनारो एटलेकोईकालें खलनापामेनही एहवो महापरा क्रमवत राजा तेनेपण जेरीतें मैनिकके० माछलानोमारनार जटदेईने लघुमी नके० न्हाना दीनमाछलाओने पकडीलियेछे तेरीतें यम पकडीलियेछे॥ २ ॥

प्रविशति वज्रमये यदि सदने तृणमथ घटयति वदने ॥
तदपि न मुंचति हतसमवर्ती निर्दयपौरुषनर्ती ॥ वि० ॥ ४ ॥

अर्थ॥जो वज्रमय एटले वज्रनाज परमाणुयें बनावेला घरमांप्रवेशकरे अथवा मुखमां तृणपलाधारणकरे परंतु निर्दय अने पराक्रमेंकरी नाचनारो तथाजेह्नी सर्वेनेविषें समानघातकरवानीजवृत्तिछे एह्वोजेयम ते तेनेपण मूकतोनथी ॥४॥

विद्यामंत्रमहौषधिसेवां सृजतु वशीकृतदेवां ॥ रसतु
रसायनमुपचयकरणं तदपि न मुंचति मरणं॥ वि० ॥ ५॥

अर्थ ॥ हेप्राणी जो देवतानुंसाधनकरी पोतानेस्वाधीनकरो अथवा महोटीम होटी विद्याओ साधनकरो मंत्रसाधनकरो तथा महोटी औषधिओसाधी शरीरपु ष्टी करवानेअर्थें आरोगो तोपण मरण मूकतुंनथी ॥ ५ ॥

वपुषि चिरं निरुणद्धि समीरं पतति जलधिपरतीरं ॥ शिर
सि गिरेरधिरोहति तरसा तदपि स जीर्यति जरसा॥वि०॥ ६॥

अर्थ ॥हेजव्यो जो समाधीचडावी शरीरने घणाकालसुधी वायुनोरोधकरो अथ वा समुद्रने पहेलाकांठे जईनेशो अथवा बलात्कारें पर्वतनाशिखरउपर चडीजेशो तोपण जराअवस्थाथी क्षीणथवुं ते कांईबंधथतुनथी ॥ ६ ॥

सृजतीमसितशिरोरुहललितं मनुजशिरोवलिपलितं ॥ को
विदधानां भूघनमरसं प्रभवति रोद्धुं जरसं ॥ वि० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ कालाकेशेंकरीने घणोजसुंदर एह्वो मनुष्यनो कालोमस्तक तेने सपेतप णानी करनारी तथा शरीरना मांसनोनाशकरनारी खोखरासरीखोकरी नशोनसने लूखी करीदेखाडनारी पृथवीउपर मेघसमान शरीरतेने शुष्ककरीनाखनारी एह्वीजरा अवस्था जेवारें प्राणीने आवशे तेवारें तेनोरोधकरवाने कोण सहायभूतथसे अ र्थात् कोईपण वृद्धावस्थानो रोधकरवाने समर्थनथाय ॥ ७ ॥

उद्यत उग्ररुजा जनकायः कः स्यात्तत्र सहायः ॥ एकोऽ
नुभवति विधुरुपरागं विभजति कोपि न भागं ॥ वि० ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ हेआत्मा जेवखतें ताह्रंशरीर उग्ररोगेंकरी व्याप्तथाशे तेवखतें तुजने कोणसहायथाशे ! जुओ जेमचंद्रमा एकलोपोतेज राहुना ग्रहणनी पीडानोगवेछे प

रतु नक्षत्र अथवा ताराकोईपण तेनाडु खमांविन्नागलेतानथी तेम तुजनेपण जेवा रोगादिक डु खप्रासथशे तेवारे ताह्रोकोईपण सवंधी तेडु खमांविन्नागन्नेनारनथी॥

शरणमेकमनुसर चतुरगं परिह्र ममतासग ॥ विनय रचय शिव सौख्यनिधान शातसुधारसपान ॥ वि० ॥ए॥ इति श्रीशांतिसुधार स गेयकाव्ये अशरणन्नावनाविन्नावनो नाम द्वितीय प्रकाश ॥

अर्थ ॥ माटे दान शील तप अने नाव एचार अग जेह्नाछे एह्वाएक धर्मतुं तु शरणकर अने ममत्वनो सग परिह्र हेविनय तु शिवसुखनो निधान एह्वा जे शातसुधारस तेनुपानकर ॥ ए ॥ इति श्री शातसुधारसगेयकाव्ये अशरणन्ना वना विनावनोनाम द्वितीय प्रकाश ॥

शिखरिणीवृत्तत्रय ॥ इतो लोन्न क्षोन्न जनयति डुरतो दवश्वो ल्लसल्लान्नान्नोन्नि कथमपि न शक्य शमयितु ॥ इतस्तृष्णाऽक्षा णा तुदति मृगतृष्णेव विफला कथ स्वस्थै स्थेय विविधन्नयन्नी मे न्नववने ॥ १ ॥ गलत्येका चिंता न्नवति पुनरन्या तदधिका मनोवाक्काये ह्वा विकृतिरतिरोपात्तरजस ॥ विपन्नर्तावर्तें ऊटिति पतयालो प्रतिपद न जतो· ससारे न्नवति कथमप्यार्तिविरति ॥ ॥ २ ॥ सहित्त्वा सतापानशुचिजननीकुक्षिकुहरे ततो जन्म प्राप्य प्रचुरतरकष्टक्रमहत ॥ सुखान्नासैर्यावत्स्पृशति कथमप्यार्तिवि रति जरा तावत्काय कवलयति मृत्यो सह्चरी ॥ ३ ॥

॥ ह्वे त्रीजी ससारन्नावना नावेछे आ ससारमा डुरतके० घणोमह्वोटो जेह्नो अतनथी अनेदावानल सरिखो अर्थात् वनअग्नीसरखो एह्वोजेलोन तेनेकोईपणी तें उदयनेपामनारो जे लोन्नरूप अन्नोन्नि के० उदकते शातकरी शक्तोनथी पणउन्न ्रोन्नने उत्पन्नकरेछे न्नलीइहां ससारमा मृगतृष्णा जेवीरीतेविफलछे तेवीरीतेइंड्रियानी ...· प्रेरणाकरेछे तेपणनिफलछे तोएह्वा अनेकप्रकारना नानाविधन्नयेंकरी न्निह्व ...नो ...ससारूप अरण्यमा शीरीतें स्वस्थपणे रह्निशकिये ॥ १ ॥ आससारमा एक ...णा सनत ह्वयने तोफरी तेकरतापण अधिक बीजीचिताआवी उत्पन्नथायछे वलीम ...तामन्निताजा शायानाव्यापारेंकरी विकारथायछे तथाअत्यतक्रोधना योगकरी रना ...वचन अने द्या दीनमात्तथायछे एरीतेंससारमां विपत्तिरूप खाईनापाणीनी भ्रमरीमां ...ने ...

ाले पडनारा प्राणीओने कोईवारेंदुःखनो अंतआवतोनथी ॥२॥ वली पहे
त्रपवित्रमाताना उदरनेविषे नानाप्रकारना उदरसंबंधी संतापोने सहनकर
नीपरंपरायेंकरी तामनतजेनायेयुक्तथको रहेछे अने जन्मपाम्यापछे जेटलामां
म करवानेअर्थे कोइपणपोताने थतीपीमाओ दूरकरेछे परतु एटलामांतो मृ
हचारिणी एहवीजे जराअवस्था ते आवीने प्राणीनादेहनो ग्रासकरेछे ते
ारमां सुखतेसुंछे अर्थात् काईजनथी ॥ ३ ॥

जातिवृत्तं ॥ विभ्रांतचित्तो बत बंभ्रमीति पक्षीव रुद्धस्तनु
रेंऽगी ॥ नुन्नो नियत्याऽतनुकर्मतंतुसंदानितः सन्निहितां
तुः ॥ ४ ॥ अनुष्टुब्वृत्तं ॥ अनंतान् पुद्गलावर्ताननंतान
पभृत् ॥ अनंतशो भ्रमत्येव जीवोऽनादिभवार्णवे ॥ ५ ॥

॥ प्रारब्धे प्रेरणाकरेलो महोटाकर्मरूप तंतुयेंकरी बांधेलो कालरूप बिला
: वेरेलो एहवोप्राणी बतऽतिखेदे शरीररूप पिंजरामां पक्षीनीपरें रुंध्योथ
वंत चित्तेकरीफिरेछे ॥ ४ ॥ एरीतेंअनंतानंत शरीरोनोधारणकरनारो एजी
ार अनादिकालनो संसारसमुद्रमा अनंता पुद्गलपरावर्त्तरूप पाणीनी भ्र
तिभ्रमण करतोथको फिरेछे ॥ ५ ॥

तृतीयभावनाष्टकं केदारारागेण गीयते शांतसुधारसकुंभेमां एदेशी ॥

कलय संसारमतिदारुणं जन्ममरणादिभयभीत रे ॥ मो
हरिपुणेह सगलग्रहं प्रतिपदं विपदमुपनीत रे ॥ क० ॥ १ ॥

॥ वलीविशेषप्रकारें संसारभावनाभावतो संसारनीबीकदेखाडेछे मोहरूप
नोथोदेइने पकडयुंछे तेणेकरी पगले पगले विपत्तीनेपामेला अरेजीव आ
जन्ममरणादिकना भयेंकरी अत्यंतभयंकरछे एवुं तुं जाण ॥ १ ॥

वजनतनयादिपरिचयगुणैरिह मुधा बध्यसे मूढरे ॥ प्रति
दं नवनवं रनुभवैः परिभवै रसकृदुपगूढ रे ॥ क० ॥ २ ॥

। हेमूर्खआत्मातुं स्वजन अने पुत्र इत्यादिकोनां परिचयगुणेकरीने शुंआ
व्यर्थेबंधायछे वली पगलेपगले नवानवा अनुभवेकरी अने नवानवा परा
ारंवारतुं आलिंगितछो एटले युक्तछो ॥ २ ॥

घटयसि क्वचन मदमुदितं क्वचिदहो हीनतादीन रे ॥ प्र
तिभव रूपमपरापर वहसि बत कर्मणाधीन रे ॥ क० ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ हे आत्मा तुं किहांकना राजानकर्मीप्रमुख संपत्तीनामदने धारणकरे
वलीकिहांकना हीनतापणामां गरूडना जीव्यारीयडे हीनतापणाने धारणकरेछे
वाश्चर्य हेजीव तुं कर्माधीनपणे जन्मजन्मप्रते अपरअपर रू० नवानवा रूप
नेवे कोईनवनीव्यार। काइनरागाना काइनरनियच काइनरनारकी एनीएकनवमांप
रानारूपपणुप्रमुख अनेकरूप धारणकरेछे ए हेवा मठाटा खेदनाहेतुछे ॥ ३ ॥

जातु शैशवदशापरवशो ॥ जातु तारुण्यमदमत्त रे ॥ जातु
दुर्जयजराजर्जरो ॥ जातु पितृपतिकरायत्त रे ॥ क० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ अरेजीव तुं एकजन्ममांपण काइकवारना बालकअवस्थाने आधीन
रहे अने काईकवारना तारुण्यअवस्थाना मदकरी उन्मत्तथायछे वलीकाईकवारे
दुर्जय जरा अवस्थाए करी दु ग्रस्तथायछे अनेकाइकवार यमराजाना हाथमां त
डाइजायछे एहवी अवस्थाओने पामछे ॥ ४ ॥

व्रजति तनयोपि ननु जनकतां ॥ तनयतां व्रजति पुनरेष रे ॥ भाव
यन विकृतिमिति भवगतेः ॥ स्त्यजतमां नृभवशुभशेष रे ॥ क० ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हे आत्मा आजमारमां काइनरमाना जीवरात आपथायछे फरीकांइ
नरमां बापनरगुरु थायछे एहवी ममारा पुत्रपानी गतिओनी फेरफारीनाइन मनु
ष्यजन्ममां रहता पृथगवस्थाने एहवा तु आत्मभावने मुक्तीआप ॥ ५ ॥

यत्र दुःखार्तिगदवलवैरनुदिनं दह्यसे जीव रे ॥ हन्त
तत्र रज्यसि चिरं मोहमदिरामदक्षीब रे ॥ क० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ अरे जीव आजमारमां दुःख तथा आर्तिचिंता अने रोगरूप दावान
लेकरीने निरंतरप्रते बालेछे तापमांहरूप मदिराना मदकरी। उन्मत्तथयो
छपणाकारमां। अनेकथायछे मारवानडनिरगं मोहनाकर्मना जीवडा थायछे

दर्शयन् किमपि सुखवैभवं ॥ संहरंस्तदथ सहसैव रे ॥ विप्र
लम्भयति शिशुमिव जनं ॥ कालबटुकोयमत्रैव रे ॥ क० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ आजमारमांकाइनतुजानकने बतावीमाने काइकचानतनोहाथमां श्री
पीताडी डीनवीनडप तेम जनडनिरगं आजगतमां कालरूपाआ बटुक० एम ने

तुजने कांइकसुख ऐश्वर्यादिक देखाडीने अकस्मात् तेसुखने जाएेनजद्दता तेवा करीनाखेछे एम ठोकराने ठगवानी रीतें कालरूपवटुक लोकोने ठगेछे ॥ ७ ॥

सकल संसारजयजेदकं ॥ जिनवचो मनसि निबधान रे ॥
विनय परिण मय निःश्रेयसं ॥ विहितशमरससुधापान रे ॥८॥
इति श्री शांतसुधारस गेयकाव्ये संसारजावना विजावनो
नाम तृतीयः प्रकाशः ॥

अर्थ ॥ तेमाटे अरेविनयतुं शांतिसुधारसनुंपानकरी समस्तसंसारिकजयना नाशकरनार एद्दवा जिन श्री वीतरागनावचनने मनमांधारणकर अने मोक्षपाम एरीतें विनयविजयजीउपाध्याय पोतेजपोताना आत्मानेसीखामण आपेछे ॥ इतिश्रीशांतसुधारसगेयकाव्ये संसारजावना विजावनोनाम तृतीयःप्रकाशः ॥ ३ ॥

स्वागतावृत्तं॥एक एव जगवानयमात्मा ज्ञानदर्शनतरंगसरंगः ॥
सर्वमन्यडपकल्पितमेतत् व्याकुलीकरणमेव ममत्वम् ॥ १ ॥

अर्थ॥ हवेचोथी एकत्वजावना जावेछे एकज जगवानते आआत्माछे अने ज्ञानदर्शन तथा चारित्ररूप तरंगेकरीने सरंगके० विलासीछे पणते आत्मासिवाय बीजाजे कांइ कल्पितपुजलादिकछे तेसर्व ममतास्पदमांज व्याकुलकरनाराछे ॥ १ ॥

प्रबोधतावृत्तत्रयं॥अबुधैः परजावलालसालसदज्ञानदशा
वशात्मजिः॥ परवस्तुषु हा स्वकीयता विषयावेशवशाद्वि
कल्प्यते ॥ २ ॥ कृतिनां दयितेति चिंतनं परदारेषु यथा
विपत्तये॥विविधार्त्तिजयावहं तथा परजावेषु ममत्वजावनं॥
३ ॥अधुना परजावसंवृतिं हर चेतः परितोवगुंठिनं॥ क्षण
मात्मविचारचंदनद्रुमवातोर्मिरमाः स्पृशंतु मां ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ परवस्तुउपर रहेलीअत्यंतइछाना योगेकरी उपनीजे अज्ञानअवस्थानी आधीनता ते जेना अंतःकरणमां व्यापीछे एहवामूर्खोने जे परकीयवस्तुउपर स्वकीयपणुंकल्पेछे तेमात्र शब्द रूप रसादिकविषयोना आवेशेकरीजकल्प्योजायछे ए एक महोटुं खेदनुंकारणछे ॥ २ ॥ पुण्यवानपुरुषें परस्त्रीने पोतानीस्त्रीकरी चिंतवनकरवुं तेजेमविपत्तीनुं कारणथायछे तेमज परकीयवस्तुउपर जे ममत्वकरवुं तेपण नानाप्रकारनीपीडानुं अने अनेकप्रकारना जयनुं कारणथायछे ॥ ३ ॥ माटेहेआ

घटयसि कचन मदमुन्नते कचिदहो हीनतादीन रे ॥ प्र
तिभव रूपमपरापर वहसि वत कर्मणाधीन रे ॥क०॥३॥
अर्थ ॥ हेआत्मातु किहांकतो राजलक्ष्मीप्रमुख सपत्तीनामदने धारणकरें
वलीकिहांकतो हीनतापामी रांकजेवो भीखारीथई दीनतापणाने धारणकरे ए
वाश्चार्य हेजीवतु कर्माधीनथको जन्मजन्मप्रते अपरअपरके० नवानवाजरूप
रेने कोईनवेभीखारी कोईनवेराजा कोईनवेतिर्यंच कोईनवेनारकी वलीएकनवमांपण
राजारंकपणुप्रमुख अनेकरुपधारणकरेछे ए केहेवो महोटो खेदनोहेतुछे ॥ ३ ॥
जातु शैशवदशापरवशो ॥ जातु तारुण्यमदमत्त रे॥ जातु
दुर्जयजराजर्जरो ॥ जातु पितृपतिकरायत्तरे ॥क०॥ ४ ॥
अर्थ ॥ अरेजीवतु एकजनममांपण कोईकवारेतो बालकअवस्थाने आधीन
थैने वने कोईकवारेतो तारुण्यअवस्थाना मदेकरी उन्मत्तथायछे वलीकोईकवारें
दुर्जय जरा अवस्थायें करी दुःखीतथायछे अनेकोईकवारें यमराजाना हाथमांतप
डांतापछे एवी अवस्थाओने पामेछे ॥ ४ ॥
व्रजति तनयोपि ननु जनकतां ॥ तनयतां व्रजति पुनरेष रे ॥ भाव
यन् विकृतिमिति भवगते ॥ स्त्यजतमां नृभवशुभशेष रे॥क०॥५॥
अर्थ ॥ हेआत्मा आसंसारमां कोईनवमांतो दीकरोते बापथायछे फरीतेज
भवमां बापनेदीकरो थायछे एहवी संसारी पुरुषोनी गतिओनी फजेतीजोईने मनु
ष्य जन्मना बाकी पुण्यशेषरह्याछे एहवो तु आसंसारने मूकीआप ॥ ५ ॥
यत्र दुःखार्तिगददवलवैरनुदिन दह्यसे जीव रे॥ हंत
तत्रैव रज्यसि चिर मोहमदिरामदक्षीव रे ॥ क०॥ ६ ॥
अर्थ ॥ अरेजीव आसंसारमां दुःख तथा आरतिजेचिंता अने रोगरूप दावा
नलना लवजेकणीयाछे तेणेकरी निरंतर बलेछे अने मोहरूप मदिराना मदेकरी उन्मत्तथईने तेज
संसारमां [illegible] मोहनाफंदमां जीवतु लीपायछे
दर्शयन् किमपि सुखवैभव ॥ संहरंस्तदथ सहसैव रे ॥ विप्र
लंभयति शिशुमिव जन ॥ कालवटुकोऽयमत्रैव रे ॥क०॥७॥
अर्थ ॥ आकाल [illegible] करीने वगरावाने [illegible] नादापमां [illegible]
[illegible] आजगतमां कालरूपीओ बटुक० [illegible]

तुजने कांइकसुख ऐश्वर्यादिक देखाडीने अकस्मात् तेसुखने जाणेनजहता तेवा करीनाखेछे एम छोकराने छगवानी रीतें काळरूपवटुक लोकोने छगेछे ॥ ७ ॥

सकल संसारभयभेदकं ॥ जिनवचो मनसि निवधान रे ॥
विनय परिण मय निःश्रेयसं ॥ विहितशमरससुधापान रे ॥८॥
इति श्री शांतसुधारस गेयकाव्ये संसारभावना विभावनो
नाम तृतीयः प्रकाशः ॥

अर्थ ॥ तेमाटे अरेविनयतुं शांतिसुधारसनुंपानकरी समस्तसंसारिकभयना नाशकरनार एहवा जिन श्री वीतरागनावचनने मनमांधारणकर अने मोक्षपाम एरीतें विनयविजयजीउपाध्याय पोतेजपोताना आत्मानेसीखामण आपेछे ॥ इतिश्रीशातसुधारसगेयकाव्ये संसारभावना विभावनोनाम तृतीयःप्रकाशः ॥ ३ ॥

स्वागतावृत्तं॥एक एव भगवानयमात्मा ज्ञानदर्शनतरंगसरंगः ॥
सर्वमन्यदुपकल्पितमेतत् व्याकुलीकरणमेव ममत्वम् ॥ १ ॥

अर्थ॥ हवेचोथी एकत्वभावना भावेछे एकज भगवानते आआत्माछे अने ज्ञानदर्शन तथा चारित्ररूप तरंगेकरीने सरगके० विलासीछे पणते आत्मासिवाय बीजाजे कांई कल्पितपुद्गलादिकछे तेसर्व ममतास्पदमांज व्याकुळकरनाराछे ॥ १ ॥

प्रबोधतावृत्तत्रयं॥अबुधैः परभावलालसालसदज्ञानदशा
वशात्मभिः॥ परवस्तुषु हा स्वकीयता विषयावेशवशाद्वि
कल्प्यते ॥ २ ॥ कृतिनां दयितेति चिंतनं परदारेषु यथा
विपत्तये॥विविधार्त्तिभयावहं तथा परभावेषु ममत्वभावनं॥
३ ॥अधुना परभावसंवृतिं हर चेतः परितोवगुंठितं॥ क्षण
मात्मविचारचंदनद्रुमवातोर्मिरसाः स्पृशंतु मां ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ परवस्तुउपर रहेलीअत्यंतइच्छाना योगेकरी उपनीजे अज्ञानअवस्थानी आधीनता ते जेना अंत करणमां व्यापीछे एहवामूर्खोने जे परकीयवस्तुउपर स्वकीयपणंकल्पेछे तेमात्र शब्द रूप रसादिकविषयोना आवेशेकरीजकल्प्योजायछे ए एक महोटुं खेदनुंकारणछे ॥ २ ॥ पुण्यवानपुरुषें परस्त्रीने पोतानीस्त्रीरखी चिंतवनकरवुं तेजेमविपत्तीनुं कारणथायछे तेमज परकीयवस्तुउपर जे ममत्वकरवुं तेपण नानाप्रकारनीपीडानुं अने अनेकप्रकारना भयनुं कारणथायछे ॥ ३ ॥ माटेअरे

जीवछे तेपणपुज़लजछे तथा नवविधपरिग्रह तेपणपुज़लछे एहवापुज़लना समुदायऊप र व्यर्थ ममता रूप ताप धारण करीने संताप सहन करेछे ॥ ६ ॥

त्यज संयोग नियतवियोग ॥ कुरु निर्मलमवधान ॥ नहिविद धान कथमपि तृप्यसि॥मृगतृष्णाघनरसपानं॥वि०॥७॥ भज जिनपतिमसहायसहाय ॥ शिवगतिसुगमोपाय ॥ पिब गद शमन परिहृतवमन॥शांतसुधारसमनपाय ॥ वि० ॥ ८ ॥

इ०शांतसुधारसगेय काव्ये अन्यत्वभावनाविभावनो नाम पंचम प्रकाश

अर्थ ॥ माटेनिश्चयेकरी जेहनो वियोगथवानोछे एहवापुज़लादिकसाथे जे तें संयोगकर्युछे तेनोत्यागकर अनेनिर्मल एहवोजेपोतानो शुद्धात्मभावतेनेविषे अवधान के० स्वस्थथइ एकाग्रपणेलक्षराख केमकेकोइपणप्राणी मृगतृष्णारूप जलनुपानक रीने कदापिकालें तृप्तथवानोनथी तेमतुंपण परवस्तुउपर ममत्वराखी कांइकालें आत्मरतिमां तृप्तिपामिनारनथी ॥ ७ ॥ माटेरेआत्मा तुं असहायने सहायनाकर नार एटलेअशरणने शरणभूत एहवातीर्थंकरदेव तेनुंसेवनकर अनेनिरदोष मोक्ष गतिमांजवानु जे सुगमोपाय अथवा जेमाथी परिहृतके० नाशपाम्युछे वमनके० मोक्षनासुखनो वमवापणु वली गदशमनके० संसाररूप रोगनो समावनार एहवो जे शांतनामा सुधारसके० अमृतरस तेनो पिबके० पानकर ॥ ८ ॥ इतिश्रीशांतसु धारसगेयकाव्ये अन्यत्वभावनाविभावनो नाम पंचम प्रकाश

शार्दूलविक्रीडित वृत्त ॥ सच्छिद्रो मदिराघट परिगलत्तल्लेश संगाशुचि शुच्या मृद्यमृदा बहि स बहुशो धौतोपि गंगो दकै ॥ नाधत्ते शुचिता यथा तनुभृता कायो निकायो महावी भत्सास्थिपुरीषमूत्ररजसा नाय तथा शुद्ध्यति ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेछठी अशुचि भावना भावेछे जेम मदिरा गालवानुपात्र कारीनीमाफ क छिद्रेंकरी सहितथायछे तेछिद्रोमाथी मदिरागलावेछे तेथी तेछिद्रोमा मदिराना कणिआनु अशरहीजायछे तेलेशमात्र पण मदिरानासंगेकरीने अपवित्रथयछु एहवोजे मदिराना भाजननो छिद्र तेनेपवित्रकरवाने अर्थें बाहिरथी माटीसाथें गसी ने पछे गंगानदीना पाणीयेंकरी घणावखत धोइधोइने साफकरवामांहियें तोपणते मदिरागालवाना छिद्रो कोइवारें पवित्र थायनही तेमज मनुष्यनो अत्यंत बीभत्स

दुगंछाकरवायोग्य हाम रक्त मल मूत्रनोस्थानकरूप शरीर तेने माटीयेंगसवाथी अथवा गंगादिकनापाणीये नवराव्याथी पणपूर्वोक्त दृष्टांतेकोइवारें शुद्धथातुंनथी।

मंदाक्रांतावृत्तं॥स्नायं स्नायं पुनरपि पुनः स्नांति शुद्धाभिरद्भि र्वा रं वारं वत मलतनुं चंदनैरर्चयंते॥ मूढात्मानो वय मपमलाः प्री तिमित्याश्रयंते नो शुद्ध्यंते कथमवकरः शक्यते शोद्धुमेवं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ माटेजगतमां जेनुंअंत:करण मूढथयुंछे एहवालोक स्नानकरीने वा रंवार शरीरशुद्धि करवानेअर्थे फरिपण स्नानकरेछे तथा वारंवार मलनास्थानकरू प शरीरने चंदनेकरीचर्चेछे अने अमेंनिर्मलथया एवुंकहीने प्रीतिकरेछे पण एम न थी जाणताजे एशरीर तो किवारेपण शुद्धथातुंनथी केमके खात्रनुं उकरडो तेको इरीते शुद्ध थायकेसुं अर्थात्नजथाय ॥ २ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं ॥ कर्पूरादिभिरर्चितोपि लशुनो नो गाहते सौरभं नाजन्मोपकृतोपि हंत पिशुनः सौजन्यमा लंबते॥ देहोप्येष तथा जहाति न नृणां स्वाभाविकीं विस्र तां नाभ्यक्तोपि विभूषितोपि बहुधा पुष्टोपि विश्वस्यते॥३॥

अर्थ ॥ जेमलसणमां कर्पूरादिकपदार्थोनो भेलकर्यो तोपण लसणकांइ सुगंधी वंत थायनही तथा जन्मपर्यंत उपकारकर्योहोय तोपण दुर्जनपुरुष कांइ सौजन्यता ने धारणकरतोनथी तो हंतइतिखेदे आमनुष्यनुंशरीर तेपण स्वभावसिद्ध दुर्गंधने मूकतुंनथी आशरीरने विविधप्रकारनासुगंधीतेलेंकरीमसल्यो अनेवस्त्रालंकारेकरी भूषितकर्यो तथा खवरावी पीवरावीने अत्यंतपुष्टकर्यो तोपण विश्वासनोपात्र था यनही एटले एशरीर हवेसारुंथयुं एहवोविश्वास कदापिआवेनही ॥ ३ ॥

उपेंद्रवज्रावृत्तं ॥ यदीयसंसर्गमवाप्य सद्यो भवेच्छुचीनामशुचित्वमु च्चैः॥अमेध्ययोनेर्वपुषोस्य शौचसंकल्पमोहोयमहो महीयान्॥४॥

अर्थ ॥ शरीरनोसंबंधपामिने पवित्रपदार्थोने पण अपवित्रतापणुं आवेछे केम के आशरीरने उत्तमजातिना चंदनादिकें मर्दनकरो तो तेचंदनादिक थोडीजवारमां पोतानुं सुगंधतापणुंमूकीने दुर्गंधतानेधारणकरेछे तेमज उत्तमप्रकारनाभोजन खव राव्याथी तेपण तुरत नरगमय थयीजायछे एवो आ अपवित्रवस्तुने उत्पत्तिनुकार ण जेशरीर तेनेपवित्रपणुं करवाना संकल्पनो मोहराखवुं एमहोटोआश्चर्यकारीछे४

स्वागतावृत्त॥इत्यवेत्य शुचिवादमतथ्यं पथ्यमेव जगदेकपवित्रं॥
शोधनं सकलदोषमलाना धर्ममेव हृदये निदधीथा ॥ ५ ॥
अर्थ ॥ एरीतें शरीरने पवित्रकरवानोवाद खोटोजाणीने जगतमा एकपवित्र पथ्य तो समस्तदोपरूपमलानो शोधक एह्वोजेधर्म तेह्नेहृदयमाधरो ॥ ५ ॥
॥ पट्नावनाष्टक आसावरीरागेण गीयते कागारेतनुचुनिचुनिजावे एदेशी ॥
नावय रे वपुरिदमतिमलिन विनय विबोधय मानसनलिन॥
पावनमनुचिंतय विभुमेक॥परममहोमयमुदितविवेक॥ना०॥१॥
दम्पतिरेतोरुधिरविवर्त्ते किं शुभमिह मलकश्मलगर्त्ते॥ नृशम पि पिहित स्रवति विरूप को वहुमनुतेऽ वस्करकूप ॥ना०॥२॥
अर्थ ॥ हेविनयविजयजी उपाध्याय पोतेपोताने उपदेशकरतो अशुचिपणुं भावेछे हेविनय आशरीरनेतु घणुजमलीनजाणीने पोतानुंमनरूपकमल प्रफुल्लित कर वलीजे परमतेजस्वी अनेजेनायको उत्तमविचार उत्पन्नथाय एह्वो एकपवित्र परमात्मानु चितवनकर ॥ १ ॥ स्त्रीनोरक्त अने पुरुपनो रेत तेनापरिणाम रूपथी उपन्नथयु एह्वु मलमयजे कश्मलके० चीखलतेनी गर्ताके० खाइ रूप आ शरीर तेमांशुसारछे जोआशरीरने अत्यतढांकीराख्यु तोपणतेमाथी विरूपपणे मालोदुर्गंधज स्रवेछे तोएवाकचराना कूवाने कोणरुडोकरी माननारछे अर्थात् कोइपण अररदारूप कचरायेनरी नरेला कूवाने नत्नुमानसेनही ॥ २ ॥
भजति सचन्द शुचि ताम्बूल ॥ कर्तुं मुखमारुतमनुकूल ॥तिष्ठ ति सुरभि कियन्त काल॥मुखमसुगन्धि जुगुप्सितलाल॥ ना० ॥३॥असुरभिगन्धवहान्तरचारी॥आवरितु शक्यो न विकारी॥ वपुरुप जिघ्रसि वारंवार॥हसति बुधस्तव शौचाचार ॥ना० ४॥
अर्थ ॥ मुखरनावूनमा रवुंरुमुखनावीने सुगन्धवसीवापु अनुकूलकरवानेअर्थे खायछे पनु निदाकरवायोग्य अनेगलीन हुगंधकरवायोग्यछे लालजेनी वली आ शरीरनेअंदर रहेला तडागमुखनी सुगंधीने केटलोक वखतरहेसे ॥३॥ शरीरमांवान रुगो विविधवायुना विकारकरीनहित असुगनिगघनां वहेनारो जे ताडागमुखना वायुतेने ढांकीराखवाने तुमसमर्थथयोनही तोनाहगअगने सुगंधीपदार्थोना सेवनकरी वारवार तेह्नो सुगन्धनिसेवेछे ए तारो पवित्रतानो आचारजोइने पंडितनारहसछे ॥४॥

घादृश नव रंध्राणि निकामं॥ गलदशुचीनि न यांति विरामं॥
यत्र वपुषि तत्कलयसि पूतं॥मन्ये तव नूतनमाकूतं॥ज्ञा०॥५॥
अशितमुपस्करसंस्कृतमन्नं जगति जुगुप्सां जनयति हन्नं॥ पुं
सवनं धैनवमपि लीढं भवति विगर्हितमति जनमीढं॥ज्ञा०॥६॥

अर्थ ॥ अतिशयेकरी जेमांथी रात्रदिवस अपवित्रवस्तुश्रवेछे पणकोइवारें विरामपामतिनथी एहवास्त्रीना बारछिद्र अने पुरुषनानवछिद्र तेछिद्रेकरीसहित एहवा शरीरने तुंपवित्रपणोजाणेछे माटेए ताहरोकोइ नवोज आचारजणायछे ॥ ५ ॥ नानाप्रकारे वगारप्रमुखना संस्कारेकरी संस्कृतकरेलुं पचावेलुं एहवुंजे अन्न तेपण आ शरीरमां आरोग्याथकी हन्नके० विष्टारूपथइजायछे तेणेकरी जगतमां जुगुप्सा के० दुगछाउत्पन्नकरेछे वली आशरीरने वीर्यनीवृद्धिकरनारुं गायनुंदुध प्राशनकरीने फरीतेपुरुषें मूत्रितकर्योथको तेपणअत्यंत निंदाकरवायोग्य थइपडेछे ॥ ६ ॥

केवलमलमयपुद्गलनिचये अशुचीकृतशुचिभोजनसिचये ॥ वपुषि विचिंतय परमिहसारं शिवसाधनसामर्थ्यमुदारं॥ ज्ञा०॥७॥
येन विराजितमिदमतिपुण्यं तच्चिंतय चेतननैपुण्यं॥विशदागमम धिगम्य निपानं विरचय शांतसुधारसपानं ॥ ज्ञा०॥८॥इतिश्री शांतसुधारसगेयकाव्ये अशौचभावनाविभावनोनाम षष्ठः प्रकाशः

अर्थ ॥ माटे केवलमलरूप पुद्गलनोसमूह अने पवित्रभोजनने अपवित्रपणु आपनार एहवाशरीरमां मात्रएक मोक्षसाधन करवानुंजे सामर्थ्यछे एहिजमहोटो सारभूतजाण ॥ ७ ॥ मोक्षसाधनेकरी भूषितकर्योथको ए शरीरपवित्रथायछे तेचेतनानीज चातुर्यताजाणवी पणजेमां निर्मलसिद्धांतरूप जलमिलेछे एहवो जलस्थानकजोइने शांतसुधारसनोपानकर ॥ ८ ॥ इतिश्री शातसुधारसगेयकाव्ये अशुचिभावनाविभावनोनाम षष्टः प्रकाशः

भुजंगप्रयातं वृत्तं॥यथा सर्वतो निर्झरै रापतद्भिः प्रपूर्येत सद्यः पयोभिस्तटाकः॥तथैवाश्रवैः कर्मभिःसंभृतांगी भवेद्व्याकुलश्चंचलः पंकिलश्च ॥१॥

अर्थ ॥ हवेसातमी आश्रवभावना भावेछे जेम सर्ववाजुथी पडता पाणीना निजरणायेंकरी तत्कालतलाव भराइजायछे पछे पाणीनातरंगेकरी चंचलथायछे ते

मज कादववधेने इत्यादिके व्याकुलथायछे तेम आश्रवेकरीयुक्तप्राणी कर्मरूपपाणी थी नरपूरयई व्याकुल अने चचलथको पापरूपकादवे सहितथायछे ॥ १ ॥

शार्दूलविक्रीडित वृत्त ॥ यावत्किंचिदिवानुभूय तरसा कर्मेह निर्जीर्यते तावच्चाश्रवशत्रवोऽनुसमय सिंचति भूयोपि तत् ॥ हा कष्ट कथमाश्रवप्रतिभटा शक्या निरोद्धुं मया संसाराद‌तिभीपणान्मम हहा मुक्तिं कथं भाविनी ॥ २ ॥

अर्थ ॥ ते जेटलामा अनुभवलेइने बलात्कारेकरी म्हारा आत्मामाथी कांइक मेंने कर्म शुष्ककरुंतु तेटलामावली आश्रवरूपशत्रु समयसमयप्रते कर्मोने फरी सींचनकरेछे माटे हाइतिखेदे मने एवु कष्टलागेछे के हुं आश्रवरूपशत्रुने केवीरीते जीतिशकु अने एरीतेतो अत्यतभयकर ससारथकी म्हारोछूटको पण सीरीतेथसे॥२॥

प्रहर्पणीवृत्तं॥ मिथ्यात्वाविरतिकषाययोगसंज्ञाश्चत्वार सुकृतिभिराश्रवा प्रदिष्टा ॥ कर्माणि प्रतिसमय स्फुटैरमीभिर्बध्नतो भ्रमवशतो भ्रमति जीवा ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ पुण्यवतपुरुषोए १ मिथ्यात्व २ अव्रति ३ कषाय ४ योग एचारनाम ना चारआश्रवकह्याछे ते समयसमयप्रते एचारआश्रवना योगेकरी कर्मोने बांध नारा जीवो ते भ्रमेकरी चारगतिरूप ससारमाभमेछे ॥ ३ ॥

रथोद्धतावृत्त॥ इंद्रियाव्रतकषाययोगजा पंच पंच चतुरन्वितास्त्र य ॥ पंचविंशतिरसत्क्रिया इति नेत्रवेदपरिसंख्यया ऽप्यमी॥४॥

अर्थ ॥ पांचइंद्रियो तथा प्राणातिपातादिक पांचअव्रत अने क्रोधादिक चार कषाय तथा मनादिक त्रणयोग तथा कायिकादिक पचीस असत्क्रिया एरीते सर्व मलीने आश्रव बेतालीस प्रकारनुछे ॥ ४ ॥

इंद्रवज्रावृत्तं॥ इत्याश्रवाणामधिगम्य तत्त्व निश्चित्य सत्त्व श्रुतिसन्निधा नात्॥ एषां निरोधे विगलद्विरोधे सर्वात्मना द्राग् यतितव्यमात्मन्॥५॥

अर्थ ॥ एहवु आश्रवनु तत्त्वजाणीने निश्चयथकी शास्त्रसन्निधानपणु एटले आगम सिद्धांतरूप शास्त्रनु जाणपणु तेजेनाथकी निरोधगयुछे एहवा आश्रवरूप शत्रुनो निरोधकरवा विषे हेआत्मातुं तुरत यत्नकर ॥ ५ ॥

सप्तमभावनाष्टकं धनाश्रीरागेण गीयते ॥ जोलीमारेहंसारेविषयनराचियें एदेशी ॥

परिहरणीया रे सुकृतिभिराश्रवा हृदि शमतामवधाय॥प्रभवं
त्येत रे भृशमुच्छृंखला विभुगुणविभववधाय ॥ परि० ॥ १ ॥
कुगुरुनियुक्ता रे कुमतिपरिप्लुताः ॥ शिवपुरपथमपहाय
प्रयतंतेऽमी रे क्रियया डुष्टया प्रत्युत शिवविरहाय ॥ परि०॥२॥

अर्थ ॥ सुकृतवंतपुरुषें हृदयमां समताधारणकरी आश्रवनोपरिहारकरवो अरे जीव आ लोखंडना शांकलनीपरें बांधीराखनारो जे आश्रव ते विभुजे परमात्मा तेनागुणरूप ऐश्वर्यतानो नाशकरवाने समर्थथायछे ॥ १ ॥ कुगुरुयेंकरेलीप्रेरणा अने कुमतियेंकरी युक्तथयला हेडुष्टजीव तुं कायिकादिक डुष्टक्रियाउमां प्रवर्त्तवे करी मोक्षपुरीये जवानो मार्गमूकीने उलटोमोक्षमार्गनो नाशकरवानुंज यत्नकरेछे॥२॥

अविरतचित्ता रे विषयवशीकृता विषहंते विततानि ॥ इह
परलोके रे कर्मविपाकजान्यविरलडुःखशतानि ॥ परि०॥ ३ ॥
करिझषमधुपा रे शलभमृगादयो विषयविनोदरसेन ॥ हंत
लभंते रे विविधा वेदना बत परिणतिविरसेन ॥ परि० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जेनाचित्तमां वैराग्यनथी एहवा विषयने पराधीनथयलाप्राणी इहलोके तथा परलोकेपण निरंतरपणे कर्मनापरिणामोथी उत्पन्नथयलां सैकडोडुःखोनुं सहनकरेछे ॥ ३ ॥ हस्ति मत्स्य भ्रमर पतंग अने मृग एवा पांचजातना प्राणीओ अनुक्रमेंस्पर्श रस गंध रूप शब्द ए एकेकाविषयना विनोदरसेकरी नानाप्रकारनी वेदनाओने एविषयोना परिणाम जे विरस एटले माठोरस तेणेकरीपामेछे ए महो टुंखेदनुं कारणछे ॥ ४ ॥

उदितकषाया रे विषयवशीकृता यांति महानरकेषु परिव
र्त्तंते रे नियतमनंतशो जन्मजरामरणेषु ॥ परि० ॥ ५ ॥
मनसा वाचा रे वपुषा चंचला डुर्जयडुरितभरेण ॥ उपलि
प्यंते रे तत आश्रवजये यततां कृतमपरेण ॥ परि० ॥६ ॥

अर्थ ॥ जेने क्रोधादिक कषाय उदयमांआव्याछे तेप्राणीओ पांचइंद्रिओना विषयोने स्वाधीनथयलाछे तेणेकरी महोटा नरकमां जायछे अने अनंतिवार जन्म जरामरणकरेछे ॥५॥ आश्रवेंकरी चंचल थयला प्राणी मन वचन अने कायाना

योगें डुर्जय एहवुजेपाप तेणेकरी शुक्तथायछे माटे चतुरपुरुषे आश्रवने जीतवा प्रयत्नकरवु अने नवा कर्म बांधवानही ॥ ६ ॥

शुभायोगा रे यदपि यतात्मना स्रवते शुभकर्माणि ॥ कांचन निगडास्तान्यपि जानीयात् हतनिर्वृतिशर्माणि ॥ परि० ॥ ७ ॥ मोदस्वैव रे साश्रवपाप्मना रोधे धियमाधाय ॥ शांतसुधारसपानमनारत विनय विधाय विधाय ॥ ८ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये आश्रवभावनाविभावनोनाम सप्तम प्रकाश

अर्थ ॥ जेणेपोतानु मनस्वाधीनकयु तेनाशुभयोगजेछे ते शुभयोग जोपण शुभकर्मोनेज स्रवेछे एटले शुभकर्मोनीज प्राप्तिकरावेछे परतु तेकर्मोपण मोक्षसुखना नाशकरवाने सोनानीबेडीसरखा जाणवा ॥७॥ माटे विनयविजयजी उपाध्याय पोते पोतानेकहेछे के अरेविनय आवाप्रकारेकरी आश्रवसहित जेपाप तेनोनिरोधकरवा उपर बुद्धिराखी वारवार शांतिसुधारसनो पानकरीकरीने आनदपाम॥८॥ इतिश्रीशांतसुधारस गेयकाव्ये आश्रवभावनाविभावनो नाम सप्तम प्रकाश

स्वागतावृत्तद्वयं ॥ येन येन य इहाश्रवरोध सभवेन्नियतमौपयिकेन ॥ आद्रियस्व विनयोद्यतचेतास्तत्तदांतरदृशा परिभाव्य ॥ १ ॥ संयमेन विषयाविरतत्वे दर्शनेन वितथाभिनिवेशं ॥ ध्यानमार्तमथ रौद्रमजस्र चेतस स्थिरतया च निरुध्या ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवेआश्रवनो सवरभावनाकहेछे अरेविनय आजगतमां जे जे उपायेकरी निश्चयथी आश्रवना रोधथतोहोय ते ते उपाय तारी अतरदृष्टियेजोइ तेनेविचार करीने तेनेस्वीकारकर ॥ १ ॥ एटले सयमेकरीने विषयउपर वैराग्य सम्यक दर्शनेकरीने अभिनिवेशके० मिथ्यात्वनो आग्रहमूकीआप अने चित्तना स्थिरपणाथी आर्त तथा रौद्र एबे ध्यानवु निरतर रुधनकर ॥ २ ॥

शालिनीवृत्त ॥ क्रोधं क्षांत्या मार्दवेनाभिमान हन्या मायामार्जवेनोज्वलेन ॥ लोभं वारांराशिरौद्र निरुध्या सतोषेण प्राशुना सेतुनेव ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ क्षमायेकरी क्रोधनो जयकर मार्दवेकरी अभिमाननो जयकर सरलताकरी मायानोकपट तेने हणीनाख वलीसमुद्रजेवो दुस्कर जे लोभ तेहना उंचा सतोषरूपी सेतुवडे तेनोजय कर ॥ ३ ॥

स्वागतावृत्तं॥ गुप्तिभिस्तिसृभिरेवमजय्यान् त्रीन् विजित्य तरसाऽधमयोगान् ॥ साधुसंवरपथे प्रयतेथा लप्स्यसे हितमनीहितमिद्धं ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ एमज मनगुप्ति वचनगुप्ति अने कायगुप्ति एत्रण गुप्तियेंकरीने जे जीतवाने घणाजदुर्जेय निंदनीक एहवा त्रण दुष्टयोग्य तेने जीती रुडासंवर मार्गनेविषे यत्नकर एटले प्रकाशवत देदीप्यमान अने कोइकालें विनाशने न पामनारा एहवा जे हितार्थ तेने पामीस अर्थात् मोक्षसुखने पामीस ॥ ४ ॥

मंदाक्रांतावृत्तं ॥ एवं रुद्धेष्वमलहृदयैराश्रवेष्वाप्तवाक्यश्रद्धाचंचत्सितपटपटुः सुप्रतिष्ठानशाली ॥ शुद्धैर्योगैर्जवनपवनैः प्रेरितो जीवपोतः स्त्रोतस्तीर्त्वा भवजलनिधेर्याति निर्वाणपुर्यां ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ एवाप्रकारेंकरी स्वच्छहृदयवंत पुरुषें आश्रवनो रोधकरवो पछे आसके० पोतानाहितवांछक तीर्थंकरादिक पुरुषोना वाक्योउपर जेश्रद्धाराखवी तेजाणीयें वाहणनेविषे एकसुंदर अनेउज्वल वावटोचडाव्यो एहवो नूतनपीठबंध थयो थको शुद्धमनोयोग शुद्धवचनयोग शुद्धकाययोग एत्रणयोग तेहिज जाणियें कोइक वेगवानवायरो तेणेकरी प्रेर्योथको जीवरूपीओ जहाज तेसंसारसमुद्रनो प्रवाहतरीने तुरत मोक्षरूप नगरियें जइपहोचेछे ॥ ५ ॥

॥ अष्टमभावनाष्टकं नटरागेण गीयते महावीरमेरो लालन एदेशी ॥

शृणु शिवसुखसाधनसदुपायं सदुपायं रे सदुपायं॥ शृणु शिवसुखसाधनसदुपायं ॥ ज्ञानादिकपावनरत्नत्रयपरमाराधनमनपायं ॥ शृ० ॥१ ॥ ॥ विषयविकारमपाकुरु दूरं क्रोधं मानं सहमायं॥ लोभं रिपुंच विजित्य सहेलं॥ भज संयमगुणमकषायं॥ शृ० ॥२॥

अर्थ ॥ हे विनय तुं मोक्षसाधननो रुडोउपाय सांभल एकतो निर्दोषपवित्र ज्ञानादिक रत्नत्रयनुं आराधनकर बीजो पांचेद्रियोना विषयसंबंधीजे विकारोछे तेहनेदूरकर त्रीजोमायासहित क्रोध मान अनेलोभरूप शत्रुओनी हेलनाकरी सहेजमां श्रमविना एचारेकषायने हलकटजेवा जाणी जीतीलेइने कषायथी शून्यथयलो एहवोजे संयमरूप गुण तेनुंसेवनकर ॥ २ ॥

उपशमरसमनुशीलय मनसा रोषदहनजलदप्राय ॥ कलय
विरागं धृतपरभागं हृदि विनय नायं ॥ शृ० ॥ ३ ॥
आर्त रौद्र ध्यान मार्जय ॥ दह विकल्परचनानाय ॥
यदियमरुद्ध मानसवीथी॥ तत्वविद पथा नाय ॥शृ० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ क्रोधरूपअग्नीने शमाववा मेघनीपरें शांतिनोकरनार एहवोजे उपशम रस तेहने तु मनमा धारणकर हे विनय हृदयमा धारणकरेलोजे परपुद्गलादिक थकी नाश तेहने तहाराहृदयमाथी नीत्वानीत्वाके० काढीकाढीने अत्यंत गुणकारी जे वैराग्य तेने धारणकर वली आर्त्तध्यान अनेरौद्रध्याननें धारणकरीमनहीं॥ ३॥ तथा मनना विकल्पनीजेजालके तेने बाली भस्मकरीनाख कारणके मना योगना मार्गने रुधी न राखशो एवोकाइ तत्व वेत्तानो मार्गनथी तत्ववेत्ता पुरुषोना मनायोग मोकला राखवुज नही ॥ ४ ॥

संयमयोगैरवहितमानसशुद्ध्या चरितार्थयकाय ॥ नानामत
रुचिगहने भुवने निश्चिनु शुद्धपथ नाय ॥ शृ०॥५॥ ब्रह्म
व्रतमंगीकुरु विमल बिभ्राण गुणसमवाय ॥ उदित
गुरुवदनादुपदेशं संगृहाण शुचिमिव राय ॥ शृ० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ संयमनायोगथी थयलीजेमननीशुद्धि तेणेकरीने कांइपण कृतार्थपणु करनारनो रुचिगहीन विचित्रप्रकारना मतेकरी गहन एटलेव्यास एहवा आ जगतमा नयरुप शुद्धमार्ग एटले स्याद्वाद शैलीरूपजे जैनमार्ग तेनाशोधकर ॥ ५॥ वली गुणना समुदायने धरनार अत्यंतनिर्मल एहवाब्रह्मचर्यव्रत ने स्वीकार अने गुरुवदनथकी ग्रहणकरेलो उपदेश तेने मनमा समयलगीतसरदार ॥६॥

संयमवाङ्मयकुसुमरसैरति सुरभय निजमध्यवसाय ॥ चेतन
मुपलक्षय कृतलक्षणज्ञानचरणगुणपर्याय ॥ शृ० ॥ ७ ॥ वदन
मलंकुरु पावनरसन जिनचरितं गाय गाय ॥ सविनय शांतिसु
धारसमेनं चिरं नंद पाय पाय ॥ शृ० ॥ ८ ॥ इति श्रीशांतसुधा
रसगेयकाव्ये संवरभावनाविभावनो नाम अष्टम प्रकाश

अर्थ ॥ संयमना उत्तरोत्तर करनार एहवा परमेश्वरनी वाणीमय उत्तम इत्यादि समरने सुगंधी पुष्पोना अध्यवसायनेअत्यंतसुगंधीकर अने ज्ञानादिक गुणपर्याय

थोफुजले केमके दृढप्रहारी जेवा पुरुषोए महोटा कठोर कर्म करीने अत्यंत पापोनो सपादान कर्युहतो तेपण तपस्याना प्रनावें समस्त पापोनो नाशकरीने थोडाज कालमां मोक्ष प्रतें पाम्या ॥ ५ ॥ जेम प्रदीप्तअग्नि सुवर्णनु पवित्रस्वरूप प्रगटकरेछे तेमज तपजेछे तेपण आत्मामांथी कर्मरूप रजनो नाशकरीने साक्षात् आत्मानु ज्योतिस्वरूप प्रगटकरेछे ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्त॥ बाह्येनाभ्यंतरेण प्रथितबहुभिदा जीयते येन
शत्रुश्रेणी बाह्यांतरगा भरतनृपतिवत् भावलब्धद्रढिम्ना॥
यस्मात्प्रादुर्भवेयुः प्रकटितविभवा लब्धयः सिद्धयश्च व
दे स्वर्गापवर्गार्पणपटु सतत तत्तपो विश्ववंद्य ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ जेना बाह्य अने अभ्यंतर नेदेकरी घणानेद प्रख्यातछे एहवा तपना उपर विशेषनावना योगेकरी जेहने दृढपणु लब्धके॰ प्राप्तथायतो ते तपेंकरी कुश मनादिक बाह्यशत्रु अने रागादिक अतरग शत्रु तेनीजे श्रेणीके॰ पंक्ति तेने भरत राजानीपरें जीतीजवायछे वली जेतपथकी ऐश्वर्यताने प्रगटकरनारी अष्टावीशन ब्धीओ अने आठसिद्धिओ प्रगटथायछे तथा जे स्वर्ग अने मोक्षना सुखआपवामां कुशल वलीजगतने पूजवायोग्य एहवोजेतप तेहनेहु निरतर नमस्कारकरुंछु ॥ ७ ॥

अथनवमभावनाष्टक सारगरागेण गीयते ॥ जिणदरायसरण तिहारे आयोएदेशी॥

विभावय विनय तपोमहिमान ॥ ध्रुवपद ॥ बहुभवसंचितदु
ष्कृतममुना ॥ लभतेलघुलघिमान ॥ वि० ॥ १ ॥ याति
घनापि घनाघनपटली ॥ खरपवनेन विराम ॥ भजति त
था तपसा दुरितालो ॥ क्षणभगुरपरिणाम वि० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ विनयविजयजी पोताने उपदेशकरेछेके अरेविनय तु तपनामहिमानी नावनाकर जेनायोगथकी घणानवलुं संचितकरेलु पाप तुरतज हलकापणुपामे छे ॥ १ ॥जेम तीक्ष्णवायुयें करी महोटी महोटी मेघनीपंक्तिओ नाशपामेछे तेमज तपेंकरीने महोटीमहोटी पापनीपंक्तिओ एक क्षणमात्रमां नष्टथइजायछे ॥ २ ॥

वाञ्छितमाकर्षति दूरादपि रिपुमपि व्रजति वयस्य॥ तप इदमाश्र
य निर्मलभावादागमपरमरहस्य॥३॥अनशनमूनोदरता वृत्तिन्हा
सं रसपरिहार भज सालीन्य कायक्लेश तप इति बाह्यमुदार॥४॥

अर्थ ॥ वळी जे वांछितार्थ घणुंदूरहोय तेनेपण नजीकआणीआपेछे तथाशत्रु तेनेपण मित्रकरेछे एहवाएतपने शास्त्रनुं परमरहस्य जाणीने निर्मळजावें आदर ॥ ॥ ३ ॥ तेतपनाबारजेदछे १ अनशन २ ऊनोदरी ३ वृत्तिन्हास एटले वृत्तिसं क्षेप ४ रसपरिहार ५ सांलीनता एटले इंद्रियोनोरोधवुं एकांतेंबेसवुं ६ कायक्लेश एछप्रकारनुं महोटुं बाह्यतपछे तेनुं तुं सेवनकर ॥ ४ ॥

प्रायश्चित्तं वैयावृत्यं स्वाध्यायं विनयं च ॥ कायोत्सर्गं शुभध्यानं आभ्यंतरमिदमंच॥वि०॥५॥शमयति तापं गमयति पापं रमयति मानसहंसं॥हरति विमोहं दूरारोहं तप इति विगताशंसं॥वि०॥६॥

अर्थ ॥ १ प्रायश्चित्त २ वेयावच्च ३ स्वाध्याय ४ विनय ५ कायोत्सर्ग ६ शुभ ध्यान एछप्रकारना आभ्यंतर तपछे तेनेसेव ॥ ५ ॥ एतप अनेकप्रकारना संसारी कतापनी शांतिकरेछे अनेपापनोनाशकरेछे तथा मनरूपहंसने रमाडेछे वळी निःसं शयपणे आजगतमां दुःखोनेंदूरकरवा असमर्थ एहवोजे मोहतेनो नाशकरेछे ॥६॥

संयमकमलाकार्मणमुज्वलशिवसुखसत्यंकारं चिंतितचिंतामणिमाराध य तप इह वारं वारं ॥वि०॥७॥ कर्मगदौषधमिदमिदमस्य च जिनपति मतमनुपानं॥विनय समाचर सौख्यनिधानं शांतिसुधारसपानं॥वि०॥८॥

इतिश्रीशांतसुधारसगेयकाव्ये निर्जराभावनाविभावनोनामनवमःप्रकाशः

अर्थ ॥ वळीएतपते चारित्ररूप लक्ष्मीने वशकरवानी विद्याछे तथा सुंदर मो क्षना सुखआपवाने विशारदछे वळी चिंतितार्थ देवाने चिंतामणीरत्नसरखोछे एह वा तपने आजगतमां हेविनय तुं वारंवार अंगीकारकर ॥ ७ ॥ हेविनय कर्मरूप रोगनुं औषध अने तीर्थंकरोनो जे मत तेछे अनुपानजेहनुं तथा समस्त सुखनुं निधान एहवोजे शांतसुधारस तेनुंतुंपानकर ॥ ८ ॥ इतिश्रीशांतसुधारस गेयकाव्ये निर्जराभावनाविभावनो नाम नवमः प्रकाशः

उपजातिवृत्तं ॥ दानं च शीलं च तपश्च भावो धर्मश्चतुर्धा जिनबां धवेन॥निरूपितो यो जगतां हिताय स मानसे मे रमतामजस्त्रं॥१॥

अर्थ ॥ हवेदशमी धर्मभावना भावेछे तीर्थंकरदेवें लोकहितार्थे दानशील तप अ ने भाव एरीतें चारप्रकारनो धर्मकह्योछे तेधर्ममारामनमां सर्वकालरहो ॥ १ ॥

थोमुजले केमके दृढप्रहारी जेवा पुरुषोए महाघोर कठोर कर्म करीने अत्यंत पा
सपादान कर्युहतो तेपण तपस्याना प्रभावे समस्त पापानो नाशकरीने थोडाज
समां मोक्ष प्रतें पाम्या ॥ ५ ॥ जेम प्रदीप्तअग्नि सोनानु पवित्रस्वरुप प्रगटकरे
तेमज तपजेने तेपण आत्मामाथी कर्मरुप मलना नाशकरीने साक्षात् आत्मानु
ज्योतिस्वरुप प्रगटकरेले ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्त॥ बाह्येनाभ्यंतरेण प्रथितबहुभिदा जीयते येन
शत्रुश्रेणी बाह्यांतरंगा भरतनृपतिवत् भावलब्धद्रढिम्ना॥
यस्मात्प्रादुर्भवेयु प्रकटितविभवा लब्धय सिद्धयश्च व
दे स्वर्गापवर्गार्पणपटु सतत तत्तपो विश्ववंद्य ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ जेना बाह्य अने अभ्यंतर भेदकरी घणाभेद प्रख्यातछे एहवा तपना
उपर विशेषभावना योगकरी जेहने दृढपणु लब्धक० प्राप्तथयलो ते तपेकरी कुन
मनादिक बाह्यशत्रु अने रागादिक अतरंग शत्रु तेनीज श्रेणीक० पंक्ति तेने भरत
राजानीपरे जीतीजवायछे वली जेतपथकी प्रभावयताने प्रगटकरनारी अणिमादिक
लब्धीओ अने आमर्षौषधि आदि सिद्धिओ प्रगटथायछे तथा जे स्वर्ग अने मोक्षना सुखआपवानी
कुशल एवीजगतने पुजवायोग्य एहवुजेतप तेहनेहु निरंतर नमस्कारकरुहु ॥ ७ ॥
अथतस्मजावनाष्टक सारंगरागेण गीयते ॥ त्रिशलानंदनगुण निहार आयाएदेशी॥

विभावय विनय तपोमहिमानं ॥ ध्रुवपद ॥ बहुभवसंचितदु
ष्कृतममुना ॥ लभतेलघुलघिमानं ॥ वि० ॥ १ ॥ याति
घनापि घनाघनपटली ॥ खरपवनेन विरामं ॥ भजति त
था तपसा दुरिताली ॥ क्षणभंगुरपरिणामं वि० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ विनयविजयजी पोताना आत्माने शिक्षाकरेछेके अरेविनय तु तपनामहिमानी
भावनाकर जेनायोगथकी घणाभवनु संचितकरेलु पाप तुरतज हलकापणुपामे
छे ॥ १ ॥जेम तीक्ष्णवायुए करी मोटीमोटी मेघनीपंक्तिओ नाशपामेछे तेमज
तपेकरीने महोटीमहोटी पापनीपंक्तिओ एक क्षणमात्रमां नष्टथइजायछे ॥ २ ॥

वांछितमाकर्षति दूरादपि रिपुमपि व्रजति वयस्यं॥ तप इदमाश्र
य निर्मलभावादागमपरमरहस्यं॥३॥अनशनमूनोदरतां वृत्तिह्रा
सं रसपरिहारं भज सांलीन्य कायक्लेशं तप इति बाह्यमुदारं॥४॥

अर्थ ॥ वली जे वांछितार्थ घणुंदूरहोय तेनेपण नजीकआणीआपेछे तथाशत्रु नेपण मित्रकरेछे एहवाएतपने शास्त्रनुं परमरहस्य जाणीने निर्मलनावें आदर ॥ ॥ ३ ॥ तेतपनावारनेदछे १ अनशन २ ऊनोदरी ३ वृत्तिन्हास एटले वृत्तिसं क्षेप ४ रसपरिहार ५ सांलीन्यता एटले इंद्रियोनोरोधवुं एकांतेंबेसवुं ६ कायक्लेश एछप्रकारनुं महोटुं बाह्यतपछे तेनुं तुं सेवनकर ॥ ४ ॥

प्रायश्चित्तं वैयावृत्यं स्वाध्यायं विनयं च ॥ कायोत्सर्गं शुन्नध्यानं आभ्यंतरमिदमंच॥वि०॥५॥शमयति तापं गमयति पापं रमयति मानसहंसं॥हरति विमोहं दूरारोहं तप इति विगताशंसः॥वि०॥६॥

अर्थ ॥ १ प्रायश्चित्त २ वेयावच्च ३ स्वाध्याय ४ विनय ५ कायोत्सर्ग ६ शुन्न ध्यान एछप्रकारना आभ्यंतर तपछे तेनेसेव ॥ ५ ॥ एतप अनेकप्रकारना संसारी कतापनी शांतिकरेछे अनेपापनोनाशकरेछे तथा मनरूपहंसने रमाडेछे वली निःसं शयपणे आजगतमां डुःखोनेदूरकरवा असमर्थ एहवोजे मोहतेनो नाशकरेछे ॥६॥

संयमकमलाकार्मणमुज्वलशिवसुखसत्यंकारं चिंतितचिंतामणिमाराध य तप इह वारं वारं ॥वि०॥७॥ कर्मगदौषधमिदमिदमस्य च जिनपति मतमनुपानं॥विनय समाचर सौख्यनिधानं शांतिसुधारसपानं॥वि०॥८

इतिश्रीशांतसुधारसगेयकाव्ये निर्जरानावनाविन्नावनोनामनवमःप्रकाशः

अर्थ ॥ वलीएतपते चारित्ररूप लक्ष्मीने वशकरवानी विद्याछे तथा सुंदर मो क्षना सुखआपवाने विशारदछे वली चिंतितार्थ देवाने चिंतामणीरत्नसरखोछे एह वा तपने आजगतमां हेविनय तुं वारंवार अंगीकारकर ॥ ७ ॥ हेविनय कर्मरूप रोगनुं औषध अने तीर्थंकरोनो जे मत तेछे अनुपानजेहनुं तथा समस्त सुखनुं निधान एहवोजे शांतसुधारस तेनुंतुंपानकर ॥ ८ ॥ इतिश्रीशांतसुधारस गेयकाव्ये निर्जरानावनाविन्नावनो नाम नवमः प्रकाशः

उपजातिवृत्तं ॥ दानं च शीलं च तपश्च नावो धर्मश्चतुर्धा जिनबां धवेन॥निरूपितो यो जगतां हिताय स मानसे मे रमतामजस्त्रं॥१॥

अर्थ ॥ हवेदशमी धर्मनावना नावेछे तीर्थंकरदेवें लोकहितार्थें दानशील तप अ ने नाव एरीतें चारप्रकारनो धर्मकह्योछे तेधर्ममारामनमां सर्वकालरहो ॥ १ ॥

इंद्रवज्रावृत्त त्रय॥सत्यक्षमामार्दवशौचसंगत्यागार्जवब्रह्मविमुक्तियु
क्त॥य संयम किच ततोपगूढश्चारित्रधर्मो दशधायमुक्त॥२॥य
स्य प्रभावादिह पुष्पदंतो विश्वोपकाराय सदोदये ते॥ग्रीष्मोष्मभी
ष्मामुदितस्तमिलान् काले समावासयत्ति क्षिति च ॥ ३ ॥ उल्लो
लकल्लोलकलाविलासैर्नाप्लावयत्यंबुनिधि क्षिति यत् ॥ न
घ्नति यत् व्याघ्रमरुद्दवाद्या धर्मस्य सर्वोप्यनुभाव एप ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ १ सत्य २ क्षमा ३ मार्दव ४ शौच ५ तपधर्म ६ संगत्याग ७ ब्रह्मचर्य ८
विशेषप्रकारे मुक्तिएटले निर्लोभतापणु ९ संयम १० अकिंचनता ते
रीते दसप्रकारनुं चारित्रधर्म कह्युछे ॥ २ ॥ जे धर्मनापसायेंकरी जगतमां
पण सर्वप्राणीमात्रने उपकारकरवाने अर्थे नित्यउदयपणु पामेछे वलीग्रीष्मऋतु
नी अत्यंत तप्तथयली जमीनने वर्षाऋतुमा मेघ वर्षादकरीने ठंडिकरेछे ॥ ३ ॥ त
था समुद्रपोताना महोटाकल्लोलेंकरी पृथ्वीनेबुडावतोनथी अने व्याघ्र तथा दाव
नल अने पवन इत्यादिकोकोइने मारतानथी एप्रतापसर्व धर्मनोजछे ॥ ४ ॥

शार्दूलविक्रीडित वृत्तद्वय ॥ यस्मिन्नेव पिता हिताय यतते
भ्राता च माता सुत सैन्य दैन्यमुपैति चापचपल यत्रा
फल दौर्बल ॥ तस्मिन्कष्टदशाविपाकसमये धर्मस्तु सर्वामि
त सज्ज सज्जन एप सर्वजगतस्त्राणाय बद्धोद्यम ॥ ५ ॥
त्रैलोक्य सचराचरं विजयते यस्य प्रसादादिद योत्रामु
त्र हितावहस्तनुभृता सर्वार्थसिद्धिप्रद ॥ येनानर्थकदर्थ
ना निजमह स्सामर्थ्यतो व्यर्थिता तस्मै कारुणिकाय ध
र्मविभवे भक्तिप्रणामोऽस्तु मे ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जेवखत पोतानाहितनेअर्थे बाप भाइ माता पुत्र अत्यतउद्योगक
तेपण धर्मनोजप्रतापजाणवो अनेवली धनुष्यनायोगेकरी चपलथयलो जे सैन्य
लशकर तेपण दैन्यके० दीनपणाने पामेछे तथा जेवखतपोतानी भुजाथातु
निष्फलथायछे एवी कष्टअवस्थाना परिणामकालें पण सज्जनएहवुजे आधर्म
मित्रते पोतानाअंगमां बख्तरजेवुथइ जाणे एक धर्मरूप बख्तरज पहेरुंहोयनी

ले आंगमां वरसतरपहेल्या नीपरेंथयीने सर्वजगतना रक्षणार्थें उद्योगकरेछे ॥ ५ ॥ वली जेहनापसायथकी स्थावर अने जंगमसहित जगत शोनेछे तथा जे आलोकें प्राणीओने हितकरवाने योग्यथयीने सर्वअर्थनी सिद्धताने पमाडेछे जेणेपोताना तेजस्वीसामर्थ्येंकरी पापरूपविटंबनानो नाशकरीनारव्युंछे एहवो जे दयावत धर्मरूप प्रभु तेने महारो नमस्कार होजो ॥ ६ ॥

मंदाक्रांतावृत्तं ॥ प्राज्यं राज्यं सुभगदयिता नंदनानंदनानां रम्यं रूपं सरसकविता चातुरी सुस्वरत्वं ॥ नीरोगत्वं गुणपरिचयः सज्जनत्वं सुबुद्धि किंतु ब्रूमः फलपरिणति धर्मकल्पद्रुमस्य ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ महोटुंराज्य सुंदरस्त्री पुत्र पुत्रीओ रमणीकरूप घणीज सरस कविता करवानी चतुराइ सुस्वरपणुं आरोग्यतापणुं गुणोनोपरिचय तथासज्जनपणुं अने रूडीबुद्धि एसर्वेवाना ते धर्मरूप कल्पवृक्षना फलछे ॥ ७ ॥

॥ अथ दशमभावनाष्टकं वसंतरागेण गीयते भवितुमेवंदोरेहीरविजयसूरिराया एदेशी॥

पालय पालय रे पालय मां जिनधर्म ॥ मंगलकमलाकेलिनिकेतन करुणाकेतन धीर ॥ शिवसुखसाधन भवभयबाधन जगदाधार गंभीर ॥ पा० ॥ १ ॥ सिंचति पयसा जलधरपटलीभूतलममृतमयेन ॥ सूर्याचंद्रमसावुदयेते तव महिमातिशयेन ॥ पा० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हे जैनधर्म तुं महारुंरक्षणकर महारुं रक्षणकर तुं मांगलिकरूप लक्ष्मीनुं क्रीडागृहछो वलीकरुणानो स्थानकछो तथा मोक्षसुखनुं साधनछो अने संसारना समस्तभयनो नाशकरनारछो तेमज जगतना जीवोने आश्रयभूतछो अनेअतिगंभीरछो ॥ १ ॥ जे मेघनो समूहते पृथ्वीतलने अमृत सरखा पाणीयें करीने सिंचन करेछे अने चंद्र सूर्य जे नित्य उगेछे तेसर्व ताहरोज महिमाछे ॥ २ ॥

निरालंबमियमसदाधारा तिष्ठति वसुधा येन॥ तं विश्वस्थितिमूलस्तंभं तं सेवे विनयेन॥पा०॥३॥ दानशीलशुभभावतपोमुखचरितार्थीकृतलोकः ॥ शरणस्मरणकृतामिह भविनां दूरीकृतभयशोक.॥पा० ४॥

अर्थ ॥ निरालंब पृथ्वीनेकोइ आधार नथतां जेनाआधारथकी रहेछे एहवो जगतनीस्थितीनो मूलस्तंभ जे धर्म तेने हुं नित्यप्रतें विनय एटले भक्तिये करी सेवुंछुं॥३॥ दान शील शुभभाव अने तप एचारप्रकारेकरी लोकोने चारित्रार्थेनो करनारो अने

जे प्राणी आ जगतमा ए धर्मनो स्मरण करेछे तथा आश्रय करेछे ते भय तथा शोकने दूर करनारो एहवो ए धर्मछे ॥ ४ ॥

क्षमासत्यसंतोषदयादिकसुभगसकलपरिवार ॥ देवासुरनरपूजित शासन कृतबहुभवपरिहार ॥पा०॥५॥बधुरबंधुजनस्य दिवानिशमस हायस्य सहाय ॥भ्राम्यति भीमे भवगहनेंगी त्वां बांधवमपहाय॥पा०॥

अर्थ ॥ जेनो क्षमा सत्य संतोष दया आदेदेइने समस्तपरिवार सुदरछे देवता दैत्य अने मनुष्योए जेनी आज्ञामान्यकरीछे तथा अनेक जन्म जरा नो परिहार करनारो ते ए धर्मजछे ॥५॥ वलीहे धर्मतु जेनेकोइ नाइनथी ऽ तथा जेनेकोइ सहायनथी तेने रात्रदिवस सहायनो करनार बांधव छ ता बांधवरूप तुजने मूकीने प्राणीओ ससाररूप अरण्यमां फिरेछे॥ ६॥

द्रगति गहन जलति कृशानुःस्थलति ज[illegible] ॥ कामितमिद्धिबहुना किंतु परेण ॥पा०॥७॥ इह यच्छसि [illegible] भ्रम्यं इन्द्रिपदानि॥क्रमतोज्ञानादीनि च वितरसि नि [illegible]

अर्थ॥हे धर्मरूपमित्र तहारीकृपाथकी आरण्य ते महोटा नगर जेवो थाय तथा अग्नि ते पाणीसरखोथाय अने समुद्रते स्थल सरखो तुरतथइजायछे वधारे शु कहीये तहारी कृपाथकी प्राणीमात्रना सर्व मनोरथ पूर्णथायछे ॥ ७ ॥ आनोकमां अ[illegible] परभवविषे दयारूप धर्म उदयआव्याछे तो तेने इहांपण पूर्वोक्तप्रकार सुखआपे अने परभवे इंद्रादिक देवताओनी पदवीआपेछे वली क्रमेकरी मोक्षसुखन था[illegible] ताएवा ज्ञानादिक गुणआपेछे ॥ ८ ॥

सर्वतत्रनवनीतसनातन सिद्धिसदनसोपान ॥ जय जय वि नयवता प्रतिलविनशांतसुधारसपान ॥पा०॥ ९॥ इतिशांत सुधारस गेयकाव्ये धर्मभावनाविभावनो नाम दशम प्रकाश

अर्थ। सर्वशास्त्रोमा नवनीत एटले माखणजेवो सारभूत अने सनातनक[illegible] अने तथा सिद्धिरूपगृहनो सोपान एटले निसरणीरूप अने जे विनयवंत वि[illegible] ने शांतिसुधारसनु पान करावेछे एहवोजे धर्म ते जयपामो जयपामो ॥ ९ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये धर्मभावनाविभावनो नाम दशम प्रकाश

मालिनी वृत्तं ॥ सप्ताधोधो विस्तृता याः पृथिव्यश्छत्राकाराः संति रत्नप्रभाद्याः ॥ ताभिः पूर्णो योऽस्त्यधोलोक एतौ पादौ यस्य व्यायतौ सप्तरज्जुः ॥ १

अर्थ ॥ हवे इग्यारमी लोकस्वरूप भावनाभावेछे सातअधोअधो एटले एकवीजाने नीचेंनीचे विस्तीर्ण छत्राकारे रत्नप्रभादिक सातपृथ्वीओछे तेणेकरी परिपूर्ण एवा अधोलोकरूप सातरज्जुप्रमाणे जेना महोटावेपगछे ॥ १ ॥

तिर्यग्लोको विस्तृतो रज्जुमेकां पूर्णो द्वीपरर्णवांतैरसंख्यैः ॥ यस्य ज्योतिश्चक्रकांचीकलापं मध्ये कार्श्यं श्रीविचित्रं कटित्रं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ अने एक रज्जु प्रमाण विस्तारवंत असंख्याता द्वीपसमुद्रकरी व्याप्त एहवो तिर्यग्लोकमां कृशपणानी शोभायेकरी युक्तछे वली ज्योतिष चक्ररूप कांचीकलापायें युक्त जेनुं सुंदर कणदोरोछे ॥ २ ॥

लोकोऽथोर्ध्वे ब्रह्मलोके द्युलोके यस्य व्याप्तौ कूर्परौ पंच रज्जू ॥ लोकस्यांतो विस्तृतो रज्जुमेकां सिद्धज्योतिश्चित्रको यस्य मौलिः ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ जेनो ऊर्ध्वलोके ब्रह्मनामा देवलोक पांचरज्जुप्रमाणे व्याप्त ते कोपरा सरखो कूरपरछे अने जेनुं लोकनेअंते एकरज्जुविस्तारपणे जे सिद्धशिला तेमस्तकछे॥३

यो वैशाखस्थानकस्थायिपादः श्रोणीदेशे न्यस्तहस्तद्वयश्च ॥ कालेऽनादौ शश्वदूर्ध्वंदमत्वाद्बिभ्राणोपि श्रांतमुद्रामखिन्नः ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जेना मथन करवाना दंडने स्थानकेपगछे एटले छासमथन करवाना दंडनीपरें जेना पगपसरेलाछे जेणे पोतानी कटीउपर वेहाथ राखेलाछे एहवोएक्को अनादिकालनुं निरंतर ऊर्ध्वदमपणे जितेंद्रियपक्को शांतमुद्रा धरीरह्योछे पण खिन्ननथी॥४

सोयं ज्ञेयः पुरुषो लोकनामा षड्द्रव्यात्माऽकृत्रिमोनाद्यनंतः ॥ धर्माधर्माकाशकालात्मसंज्ञैर्द्रव्यैः पूर्णः सर्वतः पुद्गलैश्च॥ ५ ॥

अर्थ ॥ षटद्रव्यरूप जेना आत्मानुं स्वरूपछे जेनेकोइयें कर्योनथी जेनो जन्म अथवा मृत्युथयोनथी वली धर्म अधर्म आकाश काल जीव अने पुद्गल एसाडद्रव्यकरी सर्वस्थले परिपूर्ण एवो आ चउदराज लोकनामा पुरुषजाणवो ॥ ५ ॥

रंगस्थानं पुद्गलानां नटानां नानारूपैर्नृत्यतामात्मनां च ॥ कालोद्योगस्वस्वभावादिभावैः कर्मातोद्यैर्नर्तितानां नियत्या ॥ ६॥

अर्थ ॥ वली जे काल उद्योग स्वस्वभावादिकभावें कर्मरूपवाजिंत्रे नियतिये

री नानाप्रकारना रूपेकरी नचावेला जीवोवुं अने नाचनारोजे पुद्गलरूप ओ तेनु रंगस्थान एटले रंगमंडपछे एवो एचउदराज लोकनामा पुरुषछे ॥ ६ ॥

एव लोको भाव्यमानो विविक्त्या विज्ञानां स्यान्मानसस्थैर्यहेतु ॥ स्थैर्यं प्राप्ते मानसे चात्मनीना सुप्राप्यैवा ऽध्यात्मसौख्यप्रसूति ॥७॥

अर्थ ॥ एरीतेलोकने विवक्त एटले जूदोजूदो स्पष्टपणे भाव्यो थको [illegible] नामनने स्थिरकरवानो कारण तेहीजथायछे जेवार मनस्थिरथयो तेवारें हितकरनारी अध्यात्मिक सुखनी प्राप्तिसुलनथायछे ॥७॥ सप्तनिर्मीलनीवृत्तं कुलकं ॥ अथ एकादशभावनाष्टक काफीरागेणगीयते आजसखीमनमोहनो ॥ एदेशी

विनय विभावय शाश्वत ॥ हृदि लोकाकाश ॥ सकलचराचरधा रणे परिणमदवकाश ॥ वि० ॥१॥ लसदलोकपरिवेष्टित गणनाति गमान ॥ पचभिरपि धर्मादिभि सुघटितसीमानं ॥ वि० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ विनयविजयजी उपाध्याय पोताने समजावेछेजे अरेविनय शाश्वतो चिरकाल रहेनारो एह्वो लोकाकाशतु तादृश हृदयमा धारणकर जेमां समस्त स्थावर अनेजंगमपदार्थोने धरवाविषे पूर्णअवकाशछे ॥ १ ॥ वलीजेना [illegible] लोकेकरी वेष्टितके० विटयुछे तथा जे गणनाके० परिमाण मूकीने रह्योछे केमके असख्यातो लोकाकाशछे माटे, वली जेनीसीमाधर्मादिक पाचद्रव्यकरी सुघटितके० रूमीरचनायें करी रचितछे एह्वो ए चउदराज लोकनामा पुरुषछे ॥ २ ॥

समवघातसमये जिनै परिपूरितदेह ॥ असुमदणुकविविधक्रिया गुणगौरवगेह ॥ वि०॥३॥ एकरूपमपि पुद्गलै कृतविविधविवर्त ॥ काचनशैलशिखरोन्नत क्वचिदवनतगर्त ॥ वि० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ वली लोकनामा पुरुषनेविषे श्रीतीर्थंकरदेव समुद्घातना समयें पोताना आत्माना प्रदेशेकरीने चउदेराजलोकना समस्तभाग परिपूर्णकरेछे तथा असुमतके० प्राणी अने अणुके० परमाणु तेमनी नानाप्रकारनी जेक्रिया अनेगुण तनागौरव णावु स्थानकजाणवु ॥ ३ ॥ वली ए लोकाकाश पुरुषमा यद्यपि रूपने धारणकर नारं एक पुद्गलद्रव्यछे तेणे नानाप्रकारना करेला एह्वा किहाक मेरुना शिखरप मापोउचा सुवर्णमयपर्वतोछे वलीकिहांकतो गर्तां एटले खामाओछे ॥ ४ ॥

क्वचन तविपमणिमंदिरैरुदितोदितरूपं ॥ घोरतिमिरनरकादिभिः क्वचनातिविरूपं ॥ वि० ॥ ५ ॥ क्वचिदुत्सवमयमुज्वलं जयमंगल नादं ॥ क्वचिदमंदहाहारवं ॥ पृथुशोकविपादं ॥ वि० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ वली किहांक तो देवताओना भुवन तेनी सूर्यकांत मणीरत्ननी शोभायें करी सुंदररूप पणाना उदयने पाम्योछे एटले उदितोदित रूपनेपाम्योछे वली किहांक भयंकर अंधकार अने नरकादिकें अत्यंत विरूप एटले मागरूप पणाने पाम्योछे ॥ ५ ॥ वली किहांकतो उत्सवमयछे एटले उज्वल जयमंगलना वाजित्रना नादेंकरी युक्तछे तथा किहांकतो अत्यंतशोक अने खेदे करीयुक्त जेमांथी महोटो हाहाकार शब्द निकलीरह्योछे एहवुं पुद्गल द्रव्यछे ॥ ६ ॥

बहुपरिचितमनंतशो निखिलैरपिसत्वैः जन्ममरणपरिवर्तिभिः कृतमुक्तममत्वैः ॥ वि० ७॥ इहपर्यटनपराङ्मुखाः ॥ प्रणमत भगवंतं ॥ शांतसुधारसपानतो धृतविनयमवंतं ॥ ८ ॥ इतिश्रीशांतसुधारसगेयकाव्ये लोकस्वरूपभावनाविभावनो नामैकादशः प्रकाशः

अर्थ ॥ वली लोकमां पुद्गलनो स्वरूप विशेषें कहेछे जेने जन्म मरणाना योगेंकरी फिरनारा प्राणी पूर्वपूर्व ममत्वनी परंपरायेंकरी अनंति अनंतिवार लेऽलेऽनेमूक्योछे अनेजेनुं सर्वप्राणीओए अनंतिवार घणुंपरिचित कर्युंछे एहवुंए पुद्गलद्रव्यछे॥ ७ ॥ माटे हेजीव तुंजो आलोकरूप पुरुषमां फिरवानेविषे पराङ्मुख थयो होय तो शांतिसुधारसना पानेकरी विनय धारण करनाराओनुं रक्षण करवा वाला जे भगवंत परमात्मा तेने नमस्कारकर ॥८ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये लोकस्वरूपभावनाविभावनो नाम एकादश. प्रकाशः

मंदाक्रांतावृत्तं॥यस्माद्विस्मापयितसुमनःस्वर्गसंपद्विलासप्राप्तोल्लासाः पुनरपि जनिः सत्कुले भूरिभोगे॥ ब्रह्माद्वैतप्रगुणपदवीप्रापकं निःसपत्नं तद्दुष्प्रापं भृशमुरुधियः सेव्यतां बोधिरत्नं ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवेबारमी बोधिदुर्लभ भावनाभावेछे जेनाथकी देवताओपण विस्मयपामे एहवो स्वर्गसंपत्तिनो विलास पामीने जीव आनंद पामनार थायछे वली जेनाथकी अनेकप्रकारना अत्यंत भोगेंकरी युक्त एहवा रुमाकुलमां पुनःपुनः ज

नमथायछे तथा परपरायें अर्हत ब्रह्मपदवी पमाडनारामां जेनेकोइगत्नुनथी . पामवी अत्यतकठीणछे एहवुजे बोधरूपरत्न तेनोहेबुद्धिमतो तमेसेवनकरो ॥ १

भुजगप्रयातवृत्तत्रयं॥अनादौ निगोदाधकूपे स्थितानामजस्रं जनुर्मृत्युदुःखार्दितानां॥परीणामशुद्धिः कुतस्तादृशी स्याद्यया हंत तस्माद्विनिर्याति जीवा ॥ २ ॥ततो निर्गतानामपि स्थावरत्वं त्रसत्वं पुनर्दुर्लभं देहभाजा ॥ त्रसत्वेपि पंचाक्षपर्याप्तसंज्ञिस्थिरायुष्कवद्दुर्लभं मानुषत्वं ॥३॥ तदेतन्मनुष्यत्वमाप्यापि मूढो महामोहमिथ्यात्वमायोपगूढः॥ भ्रमन्दूरमग्नो भवागाधगर्ते पुनः क्व प्रपद्येत तद्बोधिरत्नं॥ ४ ॥

अर्थ ॥ पण अनादि कालना निगोदरूप अंधकार तद्रूप कुवामां रहेनारा . तर जन्म मरणना दुःखेंकरी पीडायला प्राणीओने तेवी परिणामशुद्धि केमके जेथकी महोटा आनदे सहित जीव निगोद रूप अधकार कुवामांथी . . हेरपडेछे ॥ २ ॥ ते निगोदमाथी नीकलीने पण स्थावरमा उपजवुथाय प्राणीने त्रसपणु पामवुतो दुर्लभछे वली त्रसपणामा पण पचइंद्रियपणु पामवु दु र्लभछे तेमा वलीपर्याप्तिपणु पामवु दूर्लभछे तेमापण सज्ञी पचेंद्रियपण दीर्घायु ने मनुष्यपणुं पामवुतो परमदुर्लभछे ॥३॥महामोह मिथ्यात्व तथा माया एणेकरी युक्तथको मूर्खप्राणी आ मनुष्यपणु पामीने ससाररूप अगाध खाडामां फिरतो फिरतो बुडयोथको रहेछे तेप्राणीने बोधिरत्न फरीने शीरीतें प्राप्तथसे ॥ ४ ॥

शिखरिणीवृत्त॥विभिन्ना पंथानः प्रतिपदमनल्पाश्च मतिनः कुयुक्तिव्यासंगैर्निजनिजमतोल्लासरसिका ॥ न देवाः सान्निध्यं विदधति न वा कोप्यतिशयस्तदेवं कालेऽस्मिन् य इह दृढधर्मा स सुकृती॥५॥

अर्थ ॥ धर्मोना भिन्नभिन्न मार्ग अने भिन्नभिन्न स्थानके कुयुक्तिना व्यासगें ए टले अभ्यासें करीने पोतपोताना मतना उदयविषेरसिक एहवा घणामतवाला आ कालमाहे अनेजो देवतानेपूछवाजइयेंतो देव काइ कोइपासे आवतोनथी एमनएह वो अतिशयवालोपण कोइनथीके जेने पूछि निर्णय करीयें तो एवा आ दुष्टकाल मां जेप्राणी धर्मउपर दृढता राखेछे तेज प्राणी पुण्यवान जाणवो॥ ५ ॥

शार्दूलविक्रीडितवृत्तं॥ यावद्देहमिदं गदैर्न मृदितं नोवा जराजर्जरं यात्र
स्वक्षकदंबकं स्वविषयज्ञानावगाहक्षमं॥ यावच्चायुरभंगुरं निजहिते ता
वद्बुधैर्यत्यतां कासारे स्फुटिते जले प्रचलिते पालिः कथं बध्यते ॥ ६॥

अर्थ ॥ जिहांलगी आशरीर रोगाक्रांत थयोनथी तेमज जिहांलगी आशरीर जरायेंकरी जर्जरीभूतथयोनथी तथा जिहांलगी आ पांचइंद्रियनो समूह पोतपोताना विषयो लेवाने समर्थछे अने जिहांलगी आयुष्य क्षीणथयुंनथी तिहांलगी हेजीव तुं पोताना कल्याणविषे यत्नकर केमके तलावफुटीने पाणी बाहेर नीकली जतां तोपछे पालते केवी बांधीस ॥ ६ ॥

अनुष्टुब्वृत्तं ॥ विविधोपद्रवं देहमायुश्च क्षणभंगुरं ॥
कामालंब्य धृतिं मूढः स्वश्रेयसि विलंब्यते ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ आशरीर नानाप्रकारना उपद्रवेंकरी युक्तछे आयुष क्षणभंगुरछे एमछतां कोणमूर्ख तेनाउपर संतोष राखी पोताना कल्याणथवाना कार्यमां विलंब करे॥ ७

॥ ९ दशभावनाष्टकं धनश्रीरागेणगीयते ॥ हीचेरेहीचेरेपीआहिंडोलडेएदेशी ॥

बुध्यतां बुध्यतां बोधिरतिदुर्लभा ॥ जलधिजलपतितसुररत्नयु
क्त्या सम्यगाराध्यतां स्वहितमिह साध्यतां ॥ बाध्यताम
धरगतिरात्मशक्त्या ॥ बु० ॥ १ ॥ चक्रिभोज्यादिरिव न
रभवो दुर्लभो भ्राम्यतां घोरसंसारकक्षे ॥ बहुनिगोदादिका
यस्थितिव्यायते ॥ मोहमिथ्यात्वमुखचोरलक्षे ॥ बु० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ जेम समुद्रनापाणीमां पडीगयलुं चिंतामणीरत्न पाछोहाथमां आववुं अतिदुर्लभछे तेम बोधिपामवीपण अतिदुर्लभछे माटेरुडीरीतें बोधिनुं आराधनकरी पोतानुं हितसाधवुं अनेपोतानी शक्तीयेंकरी दुर्गतिनो बाधकरवो ॥ १ ॥ घणी निगोदादिक कायस्थितियें करी विशाल अने मोह मिथ्यात्वप्रमुख लाखोगमे चोरटायें युक्त एहवो आ घोर संसाररूप अरण्यमां फिरनारा जीवोने चक्रवर्त्तिना भोजन सरखो मनुष्य जन्म पामवो दुर्लभछे ॥ २ ॥

लब्ध इह नरभवोऽनार्यदेशेषु यः स भवति प्रत्युतानर्थकारी ॥ जी
वहिंसादिपापाश्रवव्यसनिनां माघवत्यादिमार्गानुसारी ॥ बु० ॥ ३ ॥

आर्यदेशस्पृशामपि सुकुलजन्मना ॥ दुर्लभा विविदिषा धर्मतत्वे ॥ र
तपरिग्रहभयाहारसंज्ञार्तिभिर्हंत मग्नं जगद्दुस्थितत्वे ॥ बु० ॥ ४॥

अर्थ ॥ जो आ जगतमा प्राणी अनार्यदेशमा मनुष्यभव पाम्यो तो ०१
थैनु कारणथायछे केमके जीवहिंसादिक पापाश्रवना व्यसनथाजा जीव
ति जे सातमी नरकादिकछे तेना मार्गनु कारण थायछे ॥ ३ ॥ रुडाकुलमा
पामेलो होय अनेवली आर्यदेशमा रहेनार होय तेनेपण धर्मतत्व जाणवानी
थनीदुर्लभछे कारणके रतके० मैथुन परिग्रह भय अने आहार ए चार नामना
स्थितपणामा सर्वजगत बूमोपडथोछे ॥ ४ ॥

विविदिषायामपि श्रवणमतिदुर्लभं धर्मशास्त्रस्य गुरुसन्निधाने ॥ वित
थविकथादितत्तद्रसावेशतो विविधविक्षेपमलिनेऽवधाने ॥ बु० ॥
॥ ५ ॥ धर्ममाकर्ण्य संबुध्य तत्रोद्यमं कुर्वतो वैरिवर्गोऽतरंग राग
द्वेषश्रमालस्यनिद्रादिको बाधते निहतसुकृतप्रसंग ॥ बु० ॥ ६

अर्थ ॥ कदाचकोइने धर्मतत्व जाणवानी इछाहोय अने गुरुसंनिध बेठो
तोपण वृथा विकथारसना आवेशथी नानाप्रकारना विक्षेपेंकरी जोतेनुंअंत
मलीन थयुहोयतो धर्मशास्त्रोनु श्रवण दुर्लभहोय ॥ ५ ॥ वली जेप्राणी
सांभली धर्मनेपाम्यो अने धर्मनेविषे उद्योगपण करवावेठो तेवा प्राणीनेपण
रूप प्रसंगना नाशकरनारा जे रागद्वेष श्रम आलस निद्रा इत्यादिक अंतर
नो समूहछे तेपीडाकरेछे तेथीतेने धर्मपामवु दुर्लभथायछे ॥ ६ ॥

चतुरशीतावहो योनिलक्षेष्विय क्व त्वया कर्णिता धर्मवार्ता ॥ प्रा
शो जगति जनता मिथो विवदते ऋद्धिरससातगुरुगौरवार्ता॥बु०
एवमतिदुर्लभात्प्राप्य दुर्लभतमं बोधिरत्नं सकलगुणनिधान॥कुरु
प्राज्यविनयप्रसादोदितं ॥ शांतरससरसपीयूषपानं ॥ बु० ॥
इ० शांतसुधारसगेयकाव्ये बोधिभावनाविभावनो नाम द्वादश प्र

अर्थ ॥ माटे अहोइति आश्चर्य हेजीव चोरासीलक्ष जीवा योनीम
पण तें धर्मनीवात सांभली हसेके अर्थात् नहीज सांभली हसे केमके घ
आ जगतमां ऋद्धिगारव रसगारव सातागारव एत्रण महोटा गारवेकरी प
लोकोतो परस्पर एकबीजा साथे वादकरेछे पणधर्मनी वातोसांभली धर्म

नैतानथी ॥७॥ एम अतिदुर्लभ वस्तु करतां पण विशेष दुर्लभ अने समस्त गुणनुं निधानएवुं जे बोधिरत्न ते पामीने गुरुनो अत्यंत विनयकर्यो तेणेकरीने प्राप्तथयुं एहवुं जे शांतिसुधारस रूप नवोअमृत तेनु तुं पानकर एमांकर्त्तायें पोतानुंनाम पणसुचव्युं ॥ ८ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये बोधिभावनाविभावनोनाम द्वादशःप्रकाश. एरीते अनित्यादिक बारभावनाओनो अधिकार संपूर्णथयो ॥

अनुष्टुब्वृत्तं ॥ सद्धर्मध्यानसंध्यानहेतवः श्रीजिनेश्वरैः ॥ मैत्रीप्रभृतयः प्रोक्ताश्चतस्रो भावनाः पराः ॥ १ ॥ तथाहुः॥मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि नियोजयेत् ॥ धर्मध्यानमुपस्कर्तु तद्धि तस्य रसायनं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवे मैत्र्यादिक चारभावनाओ भावेछे श्रीतीर्थंकरदेवें सत्यधर्मध्याननी धाराने हेतुभूत मैत्रीआदेदेइने बीजी चारभावनाओ कहीछे ॥१॥ तेश्रीतीर्थंकरदेवें कहीछे तेमज भाविये छैयें १ मैत्री २ प्रमोद ३ कारुण्य अने ४ माध्यस्थ्य एचारभावनाते धर्मध्यानना भूपणार्थं एटले धर्मध्याननी शोभानेअर्थे योजना करीयकी ध्यानाग्ने चारभावनायुक्त जे धर्म ते रसायन (औषधी) तुल्य थायछे ॥ २ ॥

उपजातिवृत्तं॥मैत्री परेषां हितचिंतनं यत् भवेत्प्रमोदो गुणपक्षपातः॥ कारुण्यमार्त्तांगिरुजां जिहीर्षेत्युपेक्षणं दुष्टधियामुपेक्षा ॥ ३ ॥सर्वत्र मैत्रीमुपकल्पयात्मन् चिंत्यो जगत्यत्र न कोपि शत्रुः ॥ कियद्दिनस्थायिनि जीविते ऽस्मिन् किं खिद्यते वैरिधिया परस्मिन् ॥ ४ ॥ सर्वेप्यमी बंधुतया ऽनुभूताः सहस्रशोऽस्मिन्भवता भवाब्धौ ॥ जीवास्ततो बंधव एव सर्वे न कोपि ते शत्रुरिति प्रतीहि ॥ ५ ॥ सर्वे पितृभ्रातृपितृव्यमातृपुत्रांगजास्त्रीभगिनीस्नुषात्वं ॥ जीवाः प्रपन्नाबहुशस्तदेतत्कुटुंबमेवेति परो न कश्चित् ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ जे बीजानाहितनुं चिंतनकरवुं ते मैत्रीभावना जाणवी गुणीनो पक्षपातकरवु ते प्रमोदभावना जाणवी दुखीप्राणीना दुख दुरकरवानी इच्छाराखवी ते कारुण्यभावना दुष्टबुद्धीवंत प्राणीउपर उपेक्षाकरवी ते उपेक्षणभावना ॥ ३ ॥ हेआत्मातुं सर्वत्र मैत्रीभावपणुंकर एटले आजगतमां कोइपण महारो शत्रु छे एहवो तुं ताहरा मनमां बीजकुल भावीशनहीं केमके थोडादिवस रहेनारो अल्पमात्र नाहारो जीवतव्यपणुछे तेमां बीजाउपर शत्रुबुद्धि राखीने तुं वृथा खिन्नथायछे ॥ ४ ॥

हेजीव आससारसमुद्रमां ए समस्तप्राणीसाथे हजारोवखत ते भाइपणो थ्यो तेमाटे एसर्व ताहरा भाइओजछे पण कोइ तहारो शत्रुनथी एरीतें ॥ ५ ॥ सर्वजीवो मात्र, ससारमा माता पिता बधु काको पुत्र पुत्री गोकरानीस्त्री इत्यादिकरीतें ताहरीसाथे क्रोडो वखत सगपण करीचुकाछे एसर्व ताहारो कुटुंबजछे पण एमांकोइ परकीयनथी एमविचारी सर्वगतु त्रिता पणु आदर ॥ ६ ॥

इडवज्रावृत्तद्वय॥ एकेंडियाद्या अपि हंत जीवा पचेंद्रियतायधि गत्य सम्यक् ॥बोधिं समाराध्य कदा लभते भूयो भवभ्रांतिभिया विराम॥ ७ ॥या रागरोषादिरुजो जनानां शाम्यतु वाक्काय मनोद्रुहस्ता ॥सर्वेप्युदासीनरसरसतु सर्वत्र सर्वे सुखिनोभवतु॥८॥

अर्थ ॥ फिरी हेजीव तु एवो विचारकर के आ ससारमां जे एकें जीवोछे तेपण रुडाप्रकारे पचेंद्रियादिकपणु पामीने ज्ञानाराधनाकरी ण ससारमां भमवारूप भयनुं अतकरसे एवुजाणीने तेजीवोनी साथे पण कर ॥ ७ ॥ जीजे प्राणीओने रागद्वेषादिरूप पीडा मन वचन कायाना गानो द्रोहकरेछे तेसर्वप्राणी उदाशीनतापणु पामीने सर्वलोक सुखीयाओ त्रीगणु तु सर्वजीवो उपर राख ॥ ८ ॥

॥ अथ त्रयोदशभावनाष्टक वेशाखरागेणगीयते रेजीवजिनधर्मकीजिये एदेशी ॥ विनय विचिनय मित्रता ॥ त्रिजगति जनतासु ॥ कर्मविचित्रतया गतिं विविधा गमितासु ॥वि० ॥ १ ॥ सर्वेते प्रियबांधवा नहि रिपुरिह कोपि ॥ माकुरु कलिकलुष मनो निजसुकृतविलोपि ॥ विन० ॥२॥

अर्थ ॥ हेविनय आ आपणोकमा कर्मनी विचित्रतायेकरी नानाप्रकारनी ... यादिक गतिश्राने पामेलाप्राणी जे छे तेसर्वप्राणीमात्रना समूहउपर तु ... नाकार शर तेमके एसर्व ताहरा परमप्रिय बांधवजछे पण एमांकोइ तहारा नथी माटे कोकट मनने क्लेशेकरी कलुषता मकर कारणके क्रोधजछे ते तह पोतानात पुण्यनो नाशकरनारोछे ॥ १ ॥ २ ॥ ए बेकाव्यनो अर्थएकठोछे

यदि कोप कुरुते परो निजकर्मवशेन ॥ अपि भवता किं भूयते हृदि रोषवशेन ॥ वि० ॥३॥ अनुचितमिह कलह सतां ॥ त्यज समरसमीन ॥ भज विवेककलहसतां॥ गुणपरिचयपीन॥वि०॥४॥

अर्थ ॥ माटे जो बीजोकोइ पोताना कर्माधीनपणायकी ताहरा उपर क्रोधकरे तो तुपण तहारा हृदयमां तेनाउपर क्रोध शावास्ते करेछे ॥ ३ ॥ अरेजीवतुं स मतारूप पाणीना नजावतुं मत्सरयइने मरपुरुषोने अयोग्य एहवुंजे रजतेनेमूकीयाप अनेगुणोनो परिचय करवाने पुष्टकारी एहवोजे विवेकरूप नगरतेमां रमण करवाने हंस जेवो था ॥ ४ ॥

शत्रुजना॰ सुखिन समे मत्सरमपहाय ॥ संतु गंतुमनसोप्यमी शिवसौख्यगृहाय॥वि०॥५॥सकृदपि यदि समतालवं हृदयेन लि हंति ॥ विदितरसास्तत इह रतिं स्वत एव वहंति ॥ वि० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हेजीवतुं समस्त शत्रुलोकोनी संमुखीउपर मत्सरताभावनो त्यागकरीने परमसुखीया अने मोक्षरूप सुखना घरने जाणवाने ताहरुं मनकर ॥ ५ ॥ जोएकवारपण समताना लवनुं ताहरा हृदयमां आस्वादन करीस तो रसज्ञथइने सम्यक्तउपर पोतानी मेलेज प्रीतिकरीस ॥ ६ ॥

किमुत कुमतमदमूर्छिता दुरितेषु पतंति जिनवचनानि कथंह हा न रसात्स्पृशंति॥वि०॥७॥ परमात्मनि विमलात्मनां परिणम्य वसं तु ॥विनय समामृतपानतो जनता विलसंतु॥वि०॥८॥इतिश्रीशांत सुधारसगेयकाव्ये मैत्रीभावनाविभावनोनाम त्रयोदशः प्रकाशः

अर्थ ॥ हे जीवतुं शावास्ते कुमतायेकरी मूर्छितथइने नरकमांपडेछे अने शांत रसथीज भरेला श्रीतीर्थंकरदेवना वचनोनुं केम संरक्षण करतोनथी ॥ ७ ॥ निर्मलअंत करणवाला जीवोनामन परमात्माना स्वरूपनेविषेज परिणत थइ रह्यो अने लोकोनासमूह ते समतारूपी अमृतना पानकरी विनयनो विलासपामो॥८॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये मैत्रीभावनाविभावनो नाम त्रयोदशः प्रकाशः

स्रग्धरावृत्तं॥धन्यास्ते वीतरागाः क्षपकपथगतिक्षीणकर्मो पगगास्त्रैलोक्ये गंधनागाः सहजसमुदितज्ञानजाग्रद्विरा गाः॥अध्यारुह्यात्मशुध्या सकलशशिकलानिर्मलध्यानधा रामारान्मुक्तेः प्रपन्नाः कृतसुकृतशतोपार्जितार्हत्यलक्ष्मीं ॥१॥तेषां कर्मक्षयोत्थैरतनुगुणगणैर्निर्मलात्मस्वभावैर्गायं

गाय पुनीमस्तवनपरिणतैरष्टवर्णास्पदानि ॥धन्या मन्ये र
सज्ञा जगति नवतस्तोत्रवाणीरसज्ञामज्ञा मन्ये तदन्या
वितथजनकथाकार्यमौखर्यमग्ना ॥ २ ॥ निर्ग्रंथास्तेपि ध
न्या गिरिगह्नगुहागव्हरातर्निविष्टा धर्मध्यानावधाना
समरससुहिता पक्षमासोपवासा ॥ येन्येपि ज्ञानवंत
श्रुतविततधियो दत्तधर्मोपदेशा॰ शाता दाता जिताक्षा
जगति जिनपते शासन नासयति॥ ३ ॥ दानं शील
तपो ये विदधति गृहिणो नावना नावयति धर्म धन्या
श्चतुर्धा श्रुतसमुपचितश्रद्धया राधयति ॥ साध्व्य श्राध्य
श्च धन्या श्रुतविदशधिया शीलमुद्भावयत्यस्ता न्सर्वान्
मुक्तगर्वा प्रतिदिनमसकृद्भाग्यनाज स्तुवति ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवे प्रमोद नावना नावेछे क्षपकश्रेणीना मार्गमां प्र
रूपमाने जेणे क्षीणकर्युछे अने त्रणलोकमा गधहस्तिसरखा
कर्नाग गहनउदयने पामेला केवलज्ञानेकरी जागृतथयुंछे
श्रीवीतराग एटले तीर्थंकरनेधन्यछे केमके जे आत्मशुद्धिकर
नारी निर्मल जे ध्यानधारा तद्रूप अनंतपुण्यना समूहेंकरी
करनीकरी तेनु आराधनकरी मुक्तिनेप्राप्तथायछे ॥ १ ॥ श्री
ध्यावरहेने के ह ते तीर्थंकरोना कर्मरूपथकी उत्पन्नथयाजे
तेनी मुनिकरनारिये जेहना परिणामहोयछे एवा आत्माना नि
तीर्थंकरनी मुनि करीकरीने रणना आवस्थानकोप्रत पवित्रकनार
तथा तीर्थंकरनी स्तुतिना रसने जाणनारी जिव्हाने धन्यमानुछुं
निरंतर नकरानां अने मायाना वाचालपणामा रत्तनारी प्रा
मानुछु ॥ २ ॥ वनी पर्वतमा अरण्यमां गुफागुहिरमां निवासकरीने
दर एकाग्रचित्त गमनाग तथा सम्यक्रूप रसेंकरी संतुष्टथयला वनी
दिवसोना उपवास करनाग एहवा जे निग्रंथसाधु तेनपण धन्यछे तथा वनी
ज्ञान करीने आत्मतत्त्व पसरनी वृद्धियेंकरी धर्मोपदेशआपेछे अने
स्वरूपनी निर्वेदिय एहवा महापुरुष ने जगतमा प्रवर्त्तनायरा श्री तीर्थंकर

शासनने प्रकाशितकरेछे तेनेपण धन्यछे ॥ ३ ॥ वळीजे गृहस्थावासमां रह्यायका रण सुपात्रने दानआपेछे शीलपालेछे तपकरेछे भावनाओ भावेछे तथा चारप्रका रें करी धर्मध्यानने आराधेछे अने पुष्टश्रद्धायें शास्त्रनुं आराधन करेछे तेनेपण धन्यछे वळीजे साध्वी तथा श्राविकाओ शास्त्रथकी स्वच्छयथली बुद्धियें शीलपाले छे तेनेपण धन्यछे एरीतें हे भाग्यवंत भव्यपुरुषो तमे सर्वथा गर्वमूकीने ए पूर्वोक्त समस्त उत्तमपुरुषोनी नित्यप्रतें निरंतर स्तुतिकरो के जेथकी तमारुं कल्याणथाय॥४॥

उपजातिवृत्तं॥ मिथ्यादृशामप्युपकारसारं संतोषसत्यादिगुणप्रसा रं ॥ वदान्यतावैन यकप्रकारं मार्गानुसारीत्यनुमोदयामः ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ ए पूर्वोक्त सम्यक् दृष्टी जीवनी स्तुति करवी ते तो श्रेष्टजछे परंतु अमें मिथ्यादृष्टीनो पण उत्तम उपकार जाणीयेंछेयें कारणके जो तेमनो संतोष सत्या दिक गुणनो प्रसार तथा दातारपणुं अने विनयना प्रकार एटलावाना मार्गानु सारीछे तो एहवोजाणीने तेनीपण अनुमोदना करियेंछे ॥ ५ ॥

स्रग्धरावृत्तं ॥ जिव्हे प्रव्हीभव त्वं सुकृतिसुचरितोच्चारणे सु प्रसन्ना भूयास्तामन्यकीर्तिश्रुतिरसिकतया मेऽद्य कर्णौ सुक र्णौ ॥ वीक्ष्यान्यप्रौढलक्ष्मीं द्रुतमुपचिनुतं लोचने रोचनत्वं संसारेऽस्मिन्नसारे फलमिति भवतां जन्मनो मुख्यमेव ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हेजीवो जो तमे सरलछो अने पुण्यवान पुरुषोना पुण्यनो उच्चार कर वाने प्रसन्नछो एटले आज अमारा कान बीजा पुण्यवान पुरुषोनी कीर्त्ति श्रवण ना रसिकपणे करी सुकर्णरह्यो अने बीजानी प्रौढ ऐश्वर्यताजोइने अमारी चक्षु काशपणाने धारणकरो एह्वा जो तमारा विचारछे तो आ संसारमां एज तमारा जन्म सफल पणानो मुख्य फलछे ॥ ६ ॥

उपजातिवृत्तं ॥ प्रमोदमासाद्य गुणैः परेषां येषां मतिः सज्जति सा म्यसिंधौ ॥ देदीप्यते तेषु मनःप्रसादे गुणास्तथैते विशदीभवंति॥७॥

अर्थ ॥ बीजाना गुणो सांभळी संतोषपामिने जेनीबुद्धि समतारूपी समुद्र मां संलग्नथायछे तेप्राणीना मननो प्रसाद देदीप्यमान थायछे तेमज तेना पोता ना गुण पण सर्व स्वच्छ थायछे ॥ ७ ॥

॥ अथ चतुर्दश भावनाष्टक टोडीरागेणगीयते रूपभकीमेरेमनजगतिवशीरीएदेशी ॥

विनय विभावय गुणपरितोष ॥ ध्रुवपद ॥ निजसुकृताप्तवरेषु परेषु ॥ परिहर दूर मत्सरदोष ॥ वि० ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हेविनय तु गुणीपुरुषनागुण उपर संतोष करवु मनमाभाव अने पोताना पुण्यप्राप्तिनावखतें बीजाउपर मत्सरकरवापणाना दोषने दूरकर ॥ १ ॥

दिष्ट्यायं वितरति बहुदानं वरमयमिह लभते बहुमान ॥ किमिति न विमृशसि परपरभाग ॥ यद्विभजसि तत्सुकृतविभाग वि० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ अमुक मनुष्य अत्यंत दानआपेछे एबहु कल्याणकारक कामकरेछे अथवा अमुकपुरुष अमुकस्थानके बहुमानपामेछे एपणघणुजरूडुछे एहवो रूडोविचार तु केमकरतोनथी ठेकाणेठेकाणे लोकोना गुणोत्कर्ष करवा एहिज सुकृत विभागछे ॥ २ ॥

येषां मन इह विगतविकार ॥ ये विदधति भुवि जगदुपकारं ॥ तेषां वयमुचिताचरिताना ॥ नाम जपामो वारंवार ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ आ जगतमां जेना मननेविषे कोइप्रकारनो विकारनथी एटले निर्विकारीछता पृथ्वीनेविषे लोकोनो उपकारकरेछे एहवा पवित्र सदाचारी पुरुषोना नाम अमें वारंवार जपियेंछयें ॥ ३ ॥

अहह तितिक्षागुणमसमानं ॥ पश्यत भगवति मुक्तिनिदान ॥ येन रुषा सह लसदभिमान ॥ झटिति विघटते कर्मवितान ॥ वि० ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ जेनीबराबरी करवाने कोई समर्थनथी एहवो मुक्तिनु कारणजे क्षमागुण ते श्रीतीर्थंकरदेव भगवानने जुवो के जेणेकरी क्रोधसहित अभिमानेकरी शोभता एहवा कर्मनो समूह ते तुरत नाशपामेछे ॥ ४ ॥

अदधु केचन शीलमुदारं ॥ गृहिणोऽपि परिहृतपरदार ॥ यश इह सम्प्रत्यपि शुचि तेषा ॥ विलसति फलिताफलसहकार ॥ वि० ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ जेगृहस्थो परस्त्रीनु त्यागकरी महोटु शीलव्रतपालेछे ते हमणापण आ जगतमां पवित्र यशे करीनेरुडा यथार्थफल सफल आंबाना वृक्षसरिखाशोभेछे ॥ ५ ॥

या वनिता अपि यशसा साकं कुलयुगलं विदधति सुपताक ॥ तासां सुचरितसंचितराक ॥ दर्शनमपि कृतसुकृतविपाक ॥ वि० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ वनीते स्त्रीओ पण शील पालीने पोताना माविग्र तथा सासरा बन्ने

लोने यशनी सुपताककें० ध्वजाकरेछे एवीस्त्रीओनो पुण्य परिपाके करी प्राप्तथ येलुं जेदर्शन ते पण पुण्यरूप धननुंज संपादकछे ॥ ६ ॥

तात्विकसात्विकसुजनवतंसाः ॥ केचन युक्तिविवेचनहंसाः ॥ अलम कृपत किल भुवनाभोगं ॥ स्मरणमनीषां कृतशुभयोगं ॥वि०॥ ७ ॥

अर्थ ॥ खरेखरा सत्वगुणने धारणकरनारा सज्जनलोकोना मस्तकना भूषणस मान अने जेम हंस दूध तथापाणीनो विवेचनकरेछे तेनीपरें युक्तियेकरी विवेचन नाकरनारा एहवा जे सर्वोत्कृष्टप्राणीछे ते आ त्रणेभुवनने शोभायमान करवाने तत्परछे तो तेवापुरुषोनुं स्मरणकरवु ते पण शुभयोगनो करनारथाय ॥ ७ ॥

इति परगुणपरिभावनसारं ॥ सफलय सततं निजमवतारं ॥ कुरु सुविहितगुणनिधिगुणगानं॥विरचय शांतसुधारसपानं॥वि०॥८॥ इति श्री शांतसुधारसगेयकाव्ये प्रमोदभावनाविभावनोनामचतुर्दशः प्रकाशः

अर्थ ॥ हे आत्मा एपूर्वोक्तरीतें परनागुणनो विचार करवुं एहिज जेमां सार छे एवुं आ तहारो पोतानो अवतार तेने तुं निरंतर परनागुणो स्मरणकरीने सफ लकर तथा शुद्धगुणोना निधि एहवाजे मनुष्यो तेना गुणोनुं गायनकर अने शां तसुधारसनुं पानकर ॥ ८ ॥ इतिश्री शांतसुधारसगेयकाव्ये प्रमोदभावना वि भावनो नाम चतुर्दश· प्रकाशः ॥

मालिनीवृत्तं॥ प्रथममशनपानप्राप्तिवांछाविहस्ता स्तदनु वस नवेश्मालंकृतिव्यग्रचित्ता· ॥ परिणयनमपत्यावाप्तिमिष्टेंद्रि यार्थान्सततमभिलषंतः स्वस्थतां क्वाश्नुवीरन् ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हवे कारुण्यभावना भावेछे प्रथमतो अशनपान प्राप्तिकरवानी इछा ये व्याकुलथयला तदनंतर वस्त्र घर अलंकार इत्यादिकोनी प्राप्ति करवाने विषे जे मनुचित्त व्यग्रथयुछे तेवारपछि लग्नकरवानी इछा तेपछि पुत्रपुत्री प्राप्त करवानी इछा अने इंद्रियार्थजे पांचइंद्रियोना त्रेवीस विषयोतेप्रते इछनार एहवाजे संसार वासी जीवो तेकेवीरीतें स्वस्थ थाय ॥ १ ॥

शिखरिणीवृत्तं ॥ उपायानां लक्षैः कथमपि समासाद्य विभवं भवा भ्यासात्तत्र ध्रुवमिति निबध्नाति हृदयं॥ अथाकस्मादस्मिन्विकिर ति रजः क्रुरहृदयो रिपु र्वा रोगो वा भयमुत जरा मृत्युरथवा॥२॥

अर्थ ॥ हे प्राणी तुथ्या जगतमां लक्षावधि उपायोकरीने कोइपणरीत ऐश्वं ता मेळवी जन्मोजन्मना अभ्यासेकरी तेहनाउपरज मनने स्थिर राखेछे पण ए उपरतो एयीअनतर जे अकस्मातिक क्रूर हृदयवत शत्रु किंवा रोगप्राप्ति नय जग अयवा मृत्यु एटलावाना धुळनाखेछे ॥ २ ॥

स्रग्धरावृत्त ॥ स्पर्धते केपि केचिद्दधति हृदि मिथो मत्सर क्रो धदग्धा युध्यते केरुप्यद्धा धनयुवतिपशुक्षेत्रपद्रादिहेतो ॥ केचिल्लोभाल्लभते विपदमनुपद दूरदेशानटंत ॥ किं कुर्म किं वदामो भृशमरतिशतैर्व्याकुल विश्वमेतत् ॥ ३ ॥

अर्थ ॥ कोइ क्रोधेकरी दग्धथयायका द्वेषकरेछे कोइ परस्पर हृदयमां मत्सर धरेछे केटलाक कोइना रुप्यानढता खळदपणे द्रव्य स्त्री पशु खेत्र गाम इत्यादिकोने नाम्ते लडेछे वळी कोइक लोभेकरी विपत्तिये भोगित थयायका दूर देशांतरोमां रख रवीरवीने व्यामृतथायछे तो हवे सु करिये अने सु बोलिये आ जगत तो अत्यत गेरहा दु गेरवी व्याकुलछे ॥ ३ ॥

उपजातिवृत्तत्रय ॥ स्वय खनत स्वकरेण गर्तान्मध्ये स्वय तत्र य था पतति ॥ तथा ततो निष्क्रमण तु दूरे ऽधोऽध प्रपाताद्विरमति नर ॥ ४ ॥ प्रकल्पयन्नास्तिकतादिवादमिद प्रमाद परिशीलयत ॥ मग्ना निगोदादिषु दोषदग्धा दुरंतदु खानि हहा सहते ॥ ५ ॥ शृण्वति ये नैव हितोपदेश न धर्मलेश मनसा स्पृशति ॥ रुज कथकारमथापनेयास्तेषामुपायस्त्वयमेक एव ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ प्राणीयान पोतानेहाथे खाडाखादीने तेमा एवीरीते पडछेक फरीतेह प्रकारे तमाथी नीकलवुतो दूरहसु परतु वनटो नीचनीच जइपडवु तनु निरा करन करनार नथी एटनो नडोखाडो खोदेछे ॥ ४ ॥ जे नास्तिकादिक वाद करीने प्रमादनो अभ्यासकरनारा दोषेकरी दग्धथयीने निगोदादिकमां बुडाहा थका तेनेअत पणुनमाळो एहवा महा क्लेशकारी दु खाने सोसेछे ता हाहा इतिप द ग्मान केटली खेदनोस्तीछे ॥ ५ ॥ जेप्राणीहितोपदेश सांभळतोनथी अन धर्म लेशन तो मनेकरीपण स्पर्श करतोनथी तेप्राणीना दु खो सीरीते दूरकरीये तना आ एकज उपाय छे तेआगळना श्लोकमां कहेछे ॥ ६ ॥

अनुष्टुब्वृत्तं ॥ परदुःखप्रतीकारमेवं ध्यायंति ये हृदि ॥
लभंते निर्विकारं ते सुखमायतिसुंदरं ॥ ७ ॥
अर्थ ॥ जेप्राणी पूर्वोक्तप्रकारे बीजाना दुःखोनो प्रतीकार हृदयमां धरेछे
करी जेना परिणाम सुंदरथायछे तेने निर्विकारी सुख प्राप्तथाय ॥ ७ ॥
॥ पंचदशभावनाष्टकं रामकलीरागेण गीयते ॥ हमारो अंबरदेहुमुरारी एदेशी ॥
सुजना भजत मुदा भगवंतं सुजनाभजत मुदा भगवंतं ॥ ध्रुवपदं ॥
शरणागतजनमिह निष्कारणकरुणावंतमवंतरे ॥ सुज० ॥ १ ॥
अर्थ ॥ हेसज्जनो आ जगतमां कारणविना दयाना पालनारा अने जे पोताने
शरणे आव्यो तेनीरक्षाना करनारा जे भगवंतछे तेने तुमे हर्षकरी भजो ॥ १ ॥
क्षणमुपधाय मनः स्थिरतायां पिबत जिनागमसारं ॥ का
पथघटनाविकृतविचारं त्यजत कृतांतमसारं रे ॥ सुज० ॥२॥
अर्थ ॥ एकक्षणमात्र पोतानो मनस्थिरकरी जैनागमना सारनुं पानकरो अने
कुत्स्योमां कुत्सित मार्गनी घटनाये करी आपणो विवेक विकारवत थायछे एवा
असार निंदनिक कृत्यनो त्यागकरो ॥ २ ॥
परिहरणीयो गुरुरविवेकी भ्रमयति यो मतिमंदं ॥ सुगुरुवचः
सकृदपि परिपीतं प्रथयति परमानंदं रे ॥ सुज० ॥ ३ ॥
अर्थ॥अविचारितगुरुनो संगमूको केमके जे गुरुओ मंदबुद्धिवंत पुरुषोने भ्रांति सहि
त करेछे अने सुगुरुना वचनो जो एक वखत सांभळ्या तोपणपरमानंद उत्पन्नकरेछे ॥ ३ ॥
कुमततमोभरमीलितनयनं किमु पृच्छत पंथानं ॥ दधिबुध्या
नर जलमंथन्यां किमु निदधत मंथानं रे ॥ सुज० ॥ ४ ॥
अर्थ ॥ कुमतरूपी अंधारेकरी जेनी आंखोढकाइ गयलीछे तेवाप्राणीने मोक्ष
ीनो रस्तोसुं पूछवुं हेलोको तमे दहीनी बुद्धियें पाणीनेविषे मथनिकाने केम
ोछो केमके ए पाणीमांथी कांइ माखण निकळवानुं नथी ॥ ४ ॥
अनिरुद्धं मन एव जनानां ॥ जनयति विविधातंकं ॥ सप
दि सुखानि तदेव विधत्ते ॥ आत्माराममशंकं रे ॥ सुज०॥५॥
र्थ ॥ पोतानुंमन पोताने स्वाधीन न राख्यो छता तेहिज पोताने नानाप्रकार

नाडु खो उत्पन्नकरेछे अने तेहिज मनपोताने स्वाधीन राख्योछता आत्माराम निगकपणे विविध प्रकारना सुखआपेछे ॥ ५ ॥

परिहरताश्रवविकथागौरवं मदनमनादिवयस्य ॥ क्रियता सावरसाप्तपदीन ॥ ध्रुवमिदमेव रहस्यम् रे॥ सुज० ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हे सज्जनो तमे आश्रव अने विकथानुजे गारवपणु तथा अनादिकालनु मित्रजे कामदेव तेनी साथे मित्रतानो त्याग नाव करीने सत्वररूप सन्मित्रकरो ए हिज एक गुप्त तत्वछे ॥ ६ ॥

सह्यत इह कि नवकातारे ॥ गदनिकुरबमपार ॥ अनुस रताहितजगदुपकारं जिनपतिमगदंकार रे ॥ सुज० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ हेजीव आ ससाररूप अरण्यमा रागद्वेषादिक अपाररोगना समूहने तु सोसेछे तेनो त्यागकरी ने जगतना उपकार करनार अने ससारीजीवाने राग द्वेष मद मत्सर इत्यादिक रोगोनो निवारणकरी निरोगताना आपनार एहवा श्री तीर्थंकरदेवरूप औषधनी सेवनाकर ॥ ७ ॥

शृणुतैक विनयोदितवचन नियतायतिहितरचनं ॥ रचयत सुकृत सुखशतसधान शातसुधारसपान रे ॥सुज०॥८॥ इति श्रीशातसु धारसगेयकाव्ये कारुण्यभावनाविभावनो नाम पचदश प्रकाश ॥

अर्थ ॥ माटेहे नव्यो विनयविजयजीना कहेला अथवा विनयेकरीने कहेला आ ग्रथमाहेला वाक्यो तेने एक नियमें करी एटले तदाकार वृत्तियें करी बरावर ध्यानराखीने सांभळो ए वचनो साभळवाथी उत्तरफळनी प्राप्तिथवाना कारनेविषे हित रचनना करनाराछे एहवुजाणीने ए वाक्यो ते एकनियमथी साभळो॥८॥ इति श्रीशातसुधारस गेयकाव्ये कारुण्यभावनाविभावनो नाम पचदश प्रकाश ॥

पचापि शालिनीवृत्तानि॥श्राता यस्मिन् विश्रम सश्रयते रुग्णा प्री तिं यत्समासाद्य मद्य ॥ लन्य रागद्वेषविद्वेषिरोधादौदासीन्य सर्वदा तत्प्रिय न ॥१॥लोके लोका भिन्नभिन्नस्वरूपा भिन्नैर्भिन्नै कर्म भिर्मर्मभिद्भि ॥रम्यारम्यैश्चेष्टितै कस्यकस्य तद्विद्वद्भिस्तूयते रुष्यते वा॥ ७ ॥ मिथ्याशसन्वीरतीर्थेश्वरेण रोद्धु शेके न स्वशिष्यो जमालि ॥ अन्य कोवा रोत्स्यते केन पापात्तस्मादौदासीन्यमेवात्मनी

नं ॥ ३ ॥ अर्हंतोपि प्राज्यशक्तिस्पृशः किं धर्मोद्योगं कारयेयुः प्र
सह्य ॥ दद्युः शुद्धं किंतु धर्मोपदेशं यत्कुर्वाणा दुस्तरं निस्तरंति॥४
तस्माद्दौदासीन्यपीयूषसारं वारंवारं हंत संतो लिहंतु ॥ आनंदा
नामुत्तरंगत्तरंगैर्जीवद्भिर्यद्भुज्यते मुक्तिसौख्यं ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ हवे सोळमी माध्यस्थ भावना भावेछे जेमकोइप्राणीने थाकचडेलो होयते प्राणी विश्रांतिनास्थानकें विश्रांतिलेछे तेमज उदासीनता जेछेते संसार रूप अरण्यमां भ्रमणकरनारा प्राणीने विश्रांतिलेवानुं स्थानकछे अने जेनेजोइ रोगीपुरुष तत्काळ प्रीतिवंतथायछे एटले गमेतेवा रोगेकरी पीडितहोय तथापि जेने उदासीनता पणुं प्राप्तथयुं तो तेने ते रोगनी व्याधि कांइपण जाणवामां न आवता उलटो हर्षवधेछे वली जेनीप्राप्ति राग अने द्वेषरूप शत्रुनो रोधकरवाथी थायछे एहवीजे उदासीनता ते अमोने सर्वकाळ प्रियछे ॥ १ ॥ आजगतमांना लोको अंतरना आशयेकरी मर्मनाभेदे भिन्नभिन्न कर्मेकरी अने रम्यारम्य व्या पारेकरी भिन्नभिन्न स्वरूपवंतछे पण वधाप्राणीनी एकप्रकृति तो नथीज तिवारें हवे विद्वानपुरुषे केनीकेनी रम्यारम्य चेष्टा उपर संतुष्टथावुं किंवा रुष्टथावुं अर्था त् विद्वान पुरुषेतो सर्वप्राणी उपर संतुष्ट अथवा रुष्टनथता समदृष्टीज राखवी भजीछे ॥ २ ॥ जूओकेश्री वीरभगवान पोते तीर्थंकर छता मिथ्यासहित बोलना रो पोतानो शिष्य जमाली तेने रुधीशक्यानही तो बीजो कोण कोइने पण पाप थकी रुंधीराखनारछे माटे उदासीनपणुं राखवुंतेहीज आत्मानुं हितकारीछे एम जाणवुं ॥ ३ ॥ जुओके श्रीतीर्थंकरदेव अत्यंत शक्तिना धरनारहता तथापिते कोइने बलात्कारेंकरी धर्मोद्योग करवाने प्रवर्तावताहता केमुं ते तो जेणेकरी भ व्यपुरुषो दुस्तर संसार समुद्रमाथी तरीपारपामे एहवो केवळ शुद्धधर्मनोज उपदेश मात्र आपताहता ॥ ४ ॥ तेकारणे हेसत्पुरुषो तमेवारवार हर्षसहित औदासीन्य तारूप सारभूत अमृतनो आस्वादनकरो के जेथकी जीव आनंदना वहेनाग मो जायेंकरी सहित मोक्षसुख भोगवे ॥ ५ ॥

॥ षोडशभावनाष्टकं प्रभातिरागेण गीयते ॥ आदरजीवक्षमागुणआदर ॥ एदेशी

अनुभव विनय सदासुखमनुभव ॥ औदासीन्यमुदारं रे ॥ कु
शलसमागममागमसारं ॥ कामितफलमंदारं रे ॥ अनु० ॥ १ ॥

परिहर परचिंतापरिवारं ॥ चिंतय निजमविकारं रे ॥ वदति को
पि चिनोति करीरं ॥ चिनुतेऽन्य सहकार रे ॥ अनु० ॥३॥
अर्थ ॥ वली विशेषप्रकारें माध्यस्थपणु जावेछे हे विनयतु सर्वकाल
अनुनवकर जेम वांछित पदार्थो आपवामा कल्पवृक्षमुख्यछे तेम वांछित मोक्ष
खनी पमाडनारी अने सर्वशास्त्रोमा मह्रोटी सारजूत एहवीजे उदासीनता तद्वा
तुसेवनकर ॥ १ ॥ अरेजीव तु बीजा विकारीपदार्थोनी चिंतवनाना करावनारो
ताहरो परिवार तेनोत्यागकर अने पोताना अविकारि स्वरूपनु चिंतनकर ॥ १॥
योपि न सहते हितमुपदेशं ॥ तडुपरि माकुरु कोप रे ॥ निष्फ
लया किं परजनतस्या ॥ कुरुषे निजसुखलोप रे ॥ अनु० ३॥ सूत्र
मपास्य जडा जापते ॥ केचन मतमुत्सूत्र रे ॥ किंकुर्मस्ते प
रिहृतपयसो यदि पीयते मूत्र रे ॥ अनु० ॥ ४ ॥
अर्थ ॥ जोपणकोइ हितकारी उपदेश सांनलतो नथी तोपण तेनाउपर क्रो
धीसनही निष्फल लोकोउपर संतापकरी पोताना सुखनो लोपकांकरेछे ॥ ३ ॥ के
लाक मूर्ख सूत्र त्यजीने बोलेछे केटलाक उत्सूत्र जापणकरेछे एवीरीतना बे
नारा जोनिर्मलपाणीनेमूकी लघुनीतनु पान करवालागा तोतेने अमेशुकरियें ॥ ४
पश्यति किं न मन परिणाम निजनिजगत्यनुसार रे॥ येन
जनेन यथा नवितव्य तनवता दुर्वारं रे ॥ अनु० ॥ ५ ॥
रमय हृदा हृदयगमसमता ॥ संवृणु मायाजाल रे ॥ वृथा
वहसि पुजलपरवशतामायु परिमितकाल रे॥अनु०॥ ६ ॥
अर्थ ॥ हेजीव पोतपोतानी गत्यनुसारें सर्वजीवोनामननो परिणाम जुदो
छे तेतु केमजोतोनथी केमके जेप्राणीने जेवी नवितव्यताछे तेना मननो परि
पण तेहवोजछे तो ते तहाराथी दुर्वारछे एटले तहारायी वारीशकाय तेमनथ
माटे हृदयने आनंद आपनारीएवीजे समतातेने मनमा धारणकरी आनंद
अने मायाजालने त्यागकर व्यर्थ पुजलने परवश कायायछे केमके तहारोआ
रिमितकालछे एटले प्रमाणसहितछे तेनेछूटता वारलागसेनही ॥ ६ ॥
अनुपमतीर्थमिदं स्मर चेतनमतस्थितमनिरामरे ॥ चिरजीव वि
दपरिणामं ॥ लनसे सुखमविराम रे ॥ अनु० ॥७॥ परब्रह्मप

णामनिदानं ॥ स्फुटकेवलविज्ञानं रे ॥ विरचय विनय विवेचित ज्ञानं ॥ शांतसुधारसपानं रे ॥ अनु० ॥८ ॥ इतिश्री शांतसुधारस गेयकाव्ये माध्यस्थ्यभावनाविभावनो नाम षोडशः प्रकाशः ॥

अर्थ ॥ हेभव्यो तमे मनमां रहेनारुं आनंदनुं कारण एहवुं अनोपम उदासीनपणारूप तीर्थनुं स्मरणकरो अने जे कोइकालेंपण विराम पामतानथी एहवा मोक्षसुखपामि चिरकाल स्वच्छपरिणामेरहो ॥ ७ ॥ अने परब्रह्मतारूप परिणामोनुं जे निदान तद्रूप विज्ञानने जे प्रगटकरेछे एहवुं विवेचननुंकरनारुंजेमां ज्ञान छे एहवा शांतसुधारसनुं पान ते हे विनयतुं निरंतरकर ॥ ८ ॥ इति श्रीशांतसुधारस गेयकाव्येमाध्यस्थ्यभावना विभावनोनाम षोडशः प्रकाशः ॥

स्रग्धरावृत्तद्वयं ॥ एवं सद्भावनाभिः सुरभितहृदयाः संशयातीतगीतोन्नीतस्फीतात्मतत्त्वास्त्वरितमपसरन्मोहनिद्राममत्वाः ॥ गत्वा सत्त्वा ममत्वातिशयमनुपमां चक्रिशक्राधिकानां सौख्यानां मंक्षु लक्ष्मीं परिचितविनयाः स्फारकीर्तिं श्रयंते ॥ १ ॥ दुर्ध्यानप्रेतपीडा प्रभवति न मनाक् काचिदद्वंद्वसौख्यस्फातिः प्रीणाति चित्तं प्रसरति परितः सौख्यसौहित्यसिंधुः ॥ क्षीयंते रागरोषप्रभृतिरिपुभटाः सिद्धिसाम्राज्यलक्ष्मीः स्याद्वश्या यन्महिम्ना विनयशुचिधियो भावनास्ताः श्रयध्वं ॥ २ ॥

अर्थ ॥ हवे श्रीविनयविजयजी उपाध्याय आग्रंथ समाप्तकरीने उपदेशरूप पोताना अभिप्रायनुं कथनकरेछे आवीरीतें पूर्वोक्तप्रकारें सद्भावनाओनी सुगंधियें जेनाहृदयमां संशयरहित गायनकरवाथी तार्किकरूंछे स्पष्ट आत्मतत्वजेणे अने जेना मोह निद्रा अने ममत्व तुरत नाशपाम्या छे एवाप्राणी ममतानुं अतिशयपणुं मूकीने चक्रवर्त्ति तथा इंद्रादिकोनासुखोथकी पण अधिक एवा विनयधरनारा अनुपम सुखोनी पुष्कल कीर्त्तिवंत लक्ष्मीने पामेछे ॥ १ ॥ जेहना महिमायेंकरी दुर्ध्यानरूप प्रेतनीपीडा लगारमात्रपण थातीनथी पण कोइएक अपूर्व अद्वंद्व सौख्यनी वृद्धिथायछे अने चित्तप्रीतिवंतथायछे अने आत्माने चारे बाजुथी सौख्य तृप्तिनी नदीपसरेछे वली रागद्वेषरूपशत्रु क्षीणथइजायछे सिद्धिरूप साम्राज्यलक्ष्मी

वशथायछे एहवीजे भावनाओ तेने हे भव्य लोको तमारी निर्म
द्धियइछता ते भावनाओोनुं आश्रयकरो ॥ २ ॥

पथ्यावृत्त ॥ श्रीहीरविजयसूरीश्वरशिष्यौ सोदरावभ्रा
तौ ॥ श्रीसोमविजयवाचकवाचकवरकीर्तिविजयाख्यौ॥३

अर्थ ॥ श्रीहीरविजय सूरीश्वरना शिष्यबेभाइहता तेमां एक सोम
क अने बीजा कीर्त्तिविजयवाचक ॥ ३ ॥

गीतिद्वय ॥ तत्र च कीर्तिविजयवाचकशिष्योपाध्यायविनय
विजयेन॥शान्तसुधारसनामा सदृष्टो भावनाप्रबोधोऽयं॥४
शिखिनयनसिंधुशशिमितवर्षे हर्षेण गंधपुरनगरे ॥ श्री
विजयप्रभसूरिप्रसादतो यत्न एष सफलोऽभूत् ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ तेमा कीर्त्तिविजय वाचकना शिष्य श्रीविनयविजयजी उपाध्याय तेणे
शांतसुधारस नामा भावनानो प्रबोधकर्यो ॥ ४ ॥ आ प्रयत्न संवत सतरसें
त्रेवीसना वर्षे श्रीगांधार नगरमां श्रीविजयप्रभसूरिना प्रसादथकी हर्षेकरि
सफलथयु ॥ ५ ॥

उपजातिवृत्त ॥ यथा विधु षोडशभि कलाभि संपूर्णतामेत्य जग
त्पुनीते॥ग्रंथस्तथा षोडशभि प्रकाशैरयं समग्रै शिवमातनोतु॥६॥

अर्थ ॥ जेम चंद्रमा सोलेकलाये पूर्णतापामी जगतने पवित्रकरेछे तेम आ
ग्रंथपण सोलकलारूप सोलप्रकाशोंकरी जगतनुकल्याणकरोएवो महारोआशीर्वादछे

इंद्रवज्रावृत्त ॥ यावज्जगत्येष सहस्रभानु पीयूषभानुश्च सदोदये
ते ॥ तावत्सतामेतदपि प्रमोद ज्योति स्फुरद्वाङ्मयमातनोतु॥७॥

अर्थ ॥ जेसानपर्यंत जगतमा षड्सूर्य उगेछे तिहांसुधी जेमाप्रकाशमान वा
णी मयरूप ज्योतिछे एहवो आ शास्त्र ते सत्पुरुषोने आनंद आपो ॥ ७ ॥

इति श्रीमन्महोपाध्याय श्री कीर्त्तिविजयगणिशिष्योपाध्याय श्री
विनयविजयगणिविरचिते शांतसुधारसग्रंथे षोडश प्रकाश
इति समाप्ति...

॥ अथ श्रीजिनप्रभसूरिकृतचतुर्विंशतिजिनस्तवनं ॥

पात्वादिदेवो दशकल्पवृक्षा यस्मादधीत्येहितदानविद्याम् ॥ अपूपुजन् यच्चरणौ नखाभिव्याजेन नूनं नवपल्लवैः स्वैः ॥ १ ॥ गत्या विजित्य द्विरदं स्वसेवां चिन्हछलाद्वश्वदचीकरद्य. ॥ यस्योदये हव्यभुजा नृणां वो बभूव भूमा भुवि सोऽजितोऽव्यात् ॥ २ ॥ सद्यः स भिंद्याद्भवसंभवं वः श्रीशंभवो यस्य पितुर्जितारेः ॥ राजाधिराजत्वजुषोपि सेनापतित्वमेवाभिमत बताभूत् ॥ ३ ॥ जातोपि य· संवरत· स्वयं यदजीजनत् संवरमद्भुतं तत् ॥ स कौशकेतुर्जितमीनकेतुर्जितोऽभिनंद्यादभिनंदनो वः ॥ ४ ॥ सुदुर्लभं मेघभवस्य यस्य मुक्ताफलस्येव न दर्शनं कै. ॥ चक्रावदात सुमतिं तमार्याः सर्वश्रियामाश्रयमाश्रयध्वं ॥ ५ ॥ न भेजिवान् वक्रगति कदाचित् नचातिचारं सततं च सौम्य ॥ पद्मप्रभः शोणतनुप्रभोपि नव्यश्रिये कोपि धरांगजन्मा ॥ ६ ॥ पृथ्व्यां प्रसूत. सुमनोभिरर्च्यैः सुपर्णकांतिर्बहुकव्युपास्यः ॥ श्रेयःफलश्रीर्जयताडुदग्रस्कंधः सुपार्श्वद्रुरपास्ततापः ॥ ७ ॥ चंद्रप्रभोऽव्यात् वपुरंशुजालैरालिंगितांगीजनता यदीयैः ॥ प्रसेननिर्वाणरमाविमुक्तकटाक्षलक्षस्नपितेव भाति ॥ ८ ॥ भावाहवे पुष्पशरं विजित्य नश्यध्वजं यो मकर गृहीत्वा ॥ आरोपयल्लक्ष्मपदे ध्रुवं स स्वभृत्यतां मे सुविधिर्विधेयात् ॥ ९ ॥ पित्रंगदाहप्रशमेन भावदाहप्रमाथेपि खलु स्वशक्तिं ॥ अजिज्ञपद्गर्भगतोपि विज्ञान् यस्तं स्तुम शीतलमच्छशीलं ॥ १० ॥ श्रेयान् श्रिये दोहदि मातृरुद्धात् गर्भस्थिते यत्र महार्हतल्पात् ॥ दुर्व्यंतरीशक् प्रणनाशमोहराजाय पूत्कर्तुमिवाहितोत्थः ॥ ११ ॥ भव्यांगिनां यस्य रुचिप्रपंचैरंगानि चेतांसि च रंजितानि ॥ स वासुपूज्यो जगदेकपूज्य. संपूज्यतां निर्जितदुर्जयारिः ॥ १२ ॥ क्ष्माभर धर्तुमशिक्षितांकछलेन सेवां प्रतिपद्य यस्मात् ॥ धत्ते ततस्तं स किलादिकोलः कांपिल्यजन्मा विमलः स जीयात् ॥ १३ ॥ अनंतजिज्जंतुरनंतसौख्यप्रदोऽस्तु दोस्तमितवैरिवारः ॥ यल्लांछनं श्येनमपि प्रदृश्य विश्वस्य नश्यंत्यथ वर्तिकौघाः ॥१४॥ पापाद्रिभिद्वज्रमुदीक्ष्य दीप्रं यल्लक्ष्म भक्तिचिकीरुपेतः ॥ तद्भंगशंकी मुहुरालुलोके शक्रः स्वपाणिं स धिनोतु धर्मः ॥१५॥ अरातिरन्येप्यनरातिरन्ये सन्नाभियोगेऽपि दृढाभियोगे ॥ चक्रे स्थिता यस्य सुखं जयश्री. स पातु वः पंचमचक्रवर्ती ॥ १६ ॥ छागं ध्वजं यस्य तनौ विलोक्य तत्प्रेमतो हव्यभुजा ध्रुव यः ॥ सर्वांगमालिंगिसुवर्णवर्णभाः सुपूरदंभात्स मुदेऽस्तु कुंथुः ॥१७॥ सुदर्शना

ज्ञात इति प्रसह्य छेद व्यधायस्तमस खसृने ॥ पितु क्रम पानयितु स्तान्न कलार्तांप्रवकज्ञिनोर ॥ १८ ॥ यस्य प्रिया नो निहितारि द्यो न पर्षा नदीन ॥ निस्तारकात्मा नयमालयस्यो नव्य श्रिये कुनन्नव स महि ॥ १९ ॥ यस्यागरोचि पटल समतात्प्रसृत्वर नृगकुज्ञानिराम ॥ वास साक्षाभावद्दिषा नदतु सुव्रतोऽसौ ॥ २० ॥ यल्लोचनस्पर्द्धिविधेर्विदिता सापराधं जगदेकनाथ ॥ यो लक्ष्मलक्ष्याच्चरण श्रितो द्राक् नीलोत्पलेनास्तु स नृत्यै ॥ २१ ॥ यच्चक्रयोगात्सुनग विदन् स्व महाशयोत्पन्नतया रुतङ्क ॥ वुरङ्कांकमिषात्सिषेवे त नेमिमध्येमि यदुप्रकाड ॥ २२ ॥ यदेह्दीर्ति प्रना चिर चारुनिनालयत ॥ नैर्मल्यकोटिं घटयति दृष्टे शिष्टा श्वनिष्ट स पार्श्व ॥ २३ ॥ प्राच्य विमोच्यास्पदमुद्भवात्प्राक् स्थानांतरे रोपितवान् हरि प्राचीकसल्लक्षणशालिजूय यम्याधमम्यान्नमता स वीर ॥ २४ ॥ जयंति गर्भा जन्मदीक्षा ज्ञानापवर्गोत्सववासराणि ॥ जैनानि नाकायितनूतलानि त्रैलोक्य लोकप्रमदप्रदानि ॥२५॥ यदाप्लवान्न शिरसाऽनिवद्य सुमेरुरक्षाऽजनि गोत्रमुख्य तीर्थाधिनाथा प्रथयतु सेवाहेवाकिना ते कुपथप्रमाथं ॥ २६ ॥ कुवादिवक्रादि हातरान्न प्रयोगघूकालिरल निरेतु ॥ यस्मिंस्तपत्यस्ततम समूहे श्रीवीरसिद्धातरवि स जीयात् ॥ २७ ॥ व्यामोह्नूपालवर निजित्य तस्मादुपात्त तु सितातपत्र ॥ य स्या करे राजति पुण्डरीक सा नारती यच्छतु वाञ्छितं व ॥ २८ ॥ इति जिनप्रभसू रिनिरीडिता जिनवराश्चतुरुत्तरविंशति ॥ नरतवर्षनवा नुवनेश्वरा स्वरततिर्धि स्व वितरतु न ॥ २९ ॥ इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तवन समाप्तम् ॥

॥ इति श्रीचतुर्विंशतिजिनस्तवन समाप्तम् ॥

॥ श्री वीतरागायनमः ॥

॥ अथ श्री आस्तिक तथा नास्तिकनो संवाद प्रारंभ ॥

१ नास्तिकः—आ जगत अने तेमांना पदार्थो सर्व शून्यछे; एने ससलानां शींगडां, आकाशनां फूल तथा वांझणीना पुत्र वगैरे जे पदार्थोनी त्रणे काळमां सिद्धता थती नथी. तेवा पदार्थोनी उपमा देवाय. कदाच तमे कहेशो के, जेम शशशृंगादिक देखातां नथी, तेम ए पदार्थो पण देखाया न जोइये. तेम तो नथी. जगततो प्रत्यक्ष देखायछे, तेने ए उपमा केम देवाय; प्रत्यक्ष प्रमाणवडे सिद्ध पदार्थने शून्य केम कहेवाय? एनो उत्तर ए के, जे ए पदार्थोने देखे छे, ते भ्रमिष्ट छे. जे पुरुषने भ्रम थयो होय, तेने एकनुं बीजुं भाशे; तेम तमने पण थयुं कहेवाशे. तमे ए दृष्टांतोनो मर्म समजी शकता नथी, त्यारे तमारा ध्यानमां सहेज आवे एवो बीजो दृष्टांत कहुं हुं ते सांभळो; आ जगत स्वप्नसमान छे. जेम स्वप्न असत्य छे, तेम जगत पण असत्य छे. अने स्वप्नना पदार्थोनी पठे आ जगतना पदार्थो पण असत्य छे. जे देखाय छे ते स्वप्ननी पठे भ्रम मात्र छे; एमां संशय नथी.

आस्तिकः—अरे नास्तिक, हुं तने एटलुंज पुछुं हुं के तारा सिद्धांतनो कहेनार जीव छे के अजीव छे, एनो उत्तर ताराथी शुं देवाशे? जीव अथवा अजीव कह्याविना चाल शेज नही. जो तुं कहीश के ते भ्रमरूप छे, तो ते एक रीते व्यवहार दृष्टीए योग्य कहेवाशे खरुं, केम के जे पोते भ्रमरूप होय तेने बधुं भ्रमरूप भाशे. जो एम होय तो अमारो कांइ बांधो नथी; पण ज्यो तारो सिद्धांती भ्रमरूप ठरशे नही, तो जेवो ठरशे तेवा बीजा पदार्थो पण कबूल करवा पडशे; अने कबूल कर्याविना चालनार नथी; केम के, बीजुं बधुं भ्रमरूप होय अने तारो सिद्धांतीज मात्र अभ्रम होय एम संभवे नही. त्यारे एक सिद्धांती ने एक सिद्धांत ए बे पदार्थ मानवा जोइये छे. ए बे पदार्थ जो तुं माने, तो जीव अने अजीवपणुं सिद्ध थाय छे के नही! एवी रीते जगतमां पण घटपटादिक जे वस्तु छे ते वस्तुज छे अवस्तु नथी. तेमज घट ते घट छे, ने पट ते पट छे. घट पट नथी, ने पट घट नथी. एक पदार्थमां बीजा पदार्थनो अभाव होय छे, पण घट घटपणे भावरूपें छे; ने पट पटपणे भावरूपें छे. इत्यादिक सर्व पदार्थोविषे जाणी लेवुं. जे भावरूप होय ते सत्यज होय छे ए रीतें आ जगत भावरूप होवाथी सत्य छे. केम के सर्व वस्तु पोतपोताना रू

त रहित छे, तो चेतनलक्षणवत जीवने भूतथी उपनो कहिये ते युक्त नथी
पांच महाभूतना अंशथी तो मात्र शरीरनी उत्पत्ति थाय छे
स्तिक – ए वात पण कल्पित छे यद्यपि जीवविषे तो तारा सारा विचार न
, तथापि जडाणुथी जिनोक्त वचनजन्य ज्ञान नथी थयु, तद्दाणुथी सर्व मि
एम जीवने शाश्वत जाण्यो तेथी शु थयु ! कोई अजाणना मुखथकी नव
सुत्र जेवा तादृश्य अक्षरोनो अचानक उच्चार थाय तेथी शु तेने तेना फ
ाप्ति थाय छे ! तेम ज जीवने शाश्वत जाण्यो तेथी शु सम्यक्त ज्ञानवान क
! कदी नही अने शरीर पंच महाभूतोथकी उत्पन्न थाय छे, एवु जे तें
अगम्य छे शरीरनी उत्पत्ति तो पुद्गलथकी थाय छे बीजा संवादमां शरया
उत्पत्ति महाभूतथी कही छे ते पण मिथ्या छे, केमके, अस्थि जे छे ते पृथ्वी
ा नथी, पण पृथ्वीना जेवा कठण छे, रुधीर छे ते जलनो अंस नथी, पण जल
ाहारनी विपरिणाम थाय छे, जठराग्नि जे छे ते अग्निनो अंश नथी, पण अग्नीनीप
छे, श्वासोश्वास जे छे ते वायुनो अंश नथी, पण वायुनी पठे पुरुषनो विश
ाहारण ते श्वासोश्वास जाणवा छे. तेम वळी शरीर पंचमहाभूतोथकी उत्पन्न
ाय एम कहेतो तो ए पंचमहाभूतोमाना पृथ्वी, अप, तेज अने वायु ए
ीव शाथकी उत्पन्न थाय छे ? ए पृथ्व्यादिकपण जीवरूप छे, अने तेओ शरीर
छे तेम काली माटी सजीवन छे माटेज तेमां वनस्पति उगे छे, अने जे क्षार
निर्जीव छे तेमां वनस्पति उत्पन्न थती नथी तेमज ए पंच महाभूत ते सर्व
तथा निर्जीव ए बन्ने रूप छे, माटे जा जगत उपजवानां कारण ए पांच
ऊपर कहेला पांचमहाभूत शाथकी पेदा थया कहेशो ? माटे एनाथी शरीर
उत्पत्ति नहीं जीव अने जड ए बन्ने पदार्थोथी जग
दर्शन छे एम जाणवु दाता, आगम अगम अगाधवत, ज्ञान ताह्या नर न
ि वस्तु विनश्वरवत, नह चाह फल तेह ॥

नास्तिक – त्यार ता ईश्वरना अंशथकी उत्पन्न थायछे एम जणाय छे
स्तिक – जा ईश्वरना अंशथकी जीव थाय छे ता ईश्वर पोते अखंड रूप छे
ईश्वरने खंडखंड थवाने पामशे ईश्वर निर्लेप छे तो कर्मलेप सहित केमथाय
जन्मजरा मरण अने मरणरोग रहित छे ते जन्मादिक सहित केमथाय छे ? वि
छे ते मृदवण केम थाय छे ? एवा मूढता जगतमां काई नथी ज प्रमाणवश
तेम अवतरवु आदर ! माटे परमेश्वरने ए वी बुद्धि केम थई जे परमेश्वर मूकी

न जगत वार
नवाताना मा
ईश्वरपद ज
केमआदरे
५ नास्ति
थई छे माटे
शरीर जेना म
नथी आपणे
निवान छे,
श्रोना रज त
नियमित ..
नास्तिकने व
वात छे
तो पेदा थार
आस्तिक
नाश समने
करो छे, पण
थतो नथी
छ, तो शा
थाय छे ?
नहीं एवो
नथी पण
६ नास्ति
थाय छे, एम
थई बहु मन
कथा मन्
आस्ति
ए माननार
नी श्रेष्ठा

ने जगत वाळी जीव थयो. केमके सर्व मतमतांतर वाळा परमपदनी वांछनाथे
तपोताना मार्गनी क्रिया करे छे. पोताना आत्माने निर्लेपपणुं चाहे छे तो स्व
ईश्वरपद जन्म जरा मरण रहितपणुं पामीने वळी जन्ममरण सहित उपाधिप
केमआदरे छे ? माटे ए तमारा वचन विरुद्ध जणाय छे.

५ नास्तिकः-- कांई नवी युक्ति कहाडीने बोले छे. आ बीजाओनी मति तो मारी
गई छे माटे गमे तेम बके छे. जीवने कोई शाश्वत कहे छे, ने कोई अशाश्वत कहे छे.
वगेरे जेना मनमां जेम आवे छे ते तेम महोडेथी बोले छे. पण मर्म कोई जाणतो
नथी आपणे प्रत्यक्ष अनुभव करेलुं छे ने आंखे देखीए छैए के जीव पदार्थ उत्प
त्तिवान छे, ने कोईक समये तेनो अंत पण थाय छे. स्त्रीपुरुषनो संयोग थयाथी ते
ओना रज तथा वीर्यथी माताना उदरनेविषे शरीररूप एक पिंड बंधाय छे, ने पछी
नियमित समये तेमां चेतना शक्ति आवे छे, तेने जीव कहे छे. वळी शरीर कांई रो
गादिकने वश मरण पामे छे, त्यारे जीव पण तेनी साथे नाश थाय छे, ए प्रत्यक्ष
वात छे. हाथना कांकणने आरीशुं शा सारु जोये. माटे जीव पदार्थ कोईकाळे न
वो पेदा थाय छे, तेथीजीवनी आदि छे एम जणाय छे.

आस्तिकः- भाई, तुं तो वळी बधाथी डाह्यो देखाय छे! चेतननी उत्पत्ति तथा
नाश संभवे नही. कर्मना वशे जीवने जन्मांतर थाय छे, तेथी नवुं शरीर धारण
करे छे; पण जीव नवुं थतुं नथी. वळी शरीरनो नाश थयाथी जीवनो नाश पण
थतो नथी. जीव तो बीजा शरीरने धारण करे छे. तेम छतां जो वधारे आग्रह करी
, तो आ मारा प्रश्ननो उत्तर आप के, जीव कई वस्तु पलटीने तेमांथी उत्पन्न
य छे ? अथवा कई वस्तुनो परिणाम छे ? केमके कारण विना कार्यनी उत्पत्ति थाय
ी एवो नियम छे; एटलुं समजाव्या छतां पण जो नही मानीश, तो तुं पोते जीव
पण जड छो एवुं ठरशे. त्यारे जडनी साथे कोण माथाकूट करे !

ई नास्तिकः- कदाच जड वस्तुनो परिणाम जीव अने जीवनो परिणाम जड
छे, एम कहीए तो कांई दोष आवे के ? अघटितघटनापटीयसी माया छे, ते
ु संभवे छे माटे अमे तो एम मानीए छैए के, जड वस्तु बदलीने तेथी जी
त्पत्ति थाय छे.

स्तिकः- भाई, ए तमारुं बोलवुं केवळ अविचारवुं छे, एम तो कोई अज्ञानी प
ार नथी जे जड वस्तुथी जीवनी उत्पत्ति थाय; एक स्वभाववाळा पदार्थ
ा स्वभाववाळा पदार्थोनी उत्पत्ति थाय नही एवो नियम छे. जेम के, मा

पिन्डथकी पट थाय नही अने तंतुना पुजथकी घट थाय नही तेम अजीवथी
उत्पन्न थाय नही अने जीवथी अजीव उत्पन्न थाय नही जे अचेतन होय
जड कहे छे अने जे चेतन होय तेने जीव कहे छे ए बन्ने पदार्थ परस्पर स्वभावे
न्नित छे, तेम छता जड वस्तुथकी जीवनी उत्पत्ति कहेवी, एना जेवी बीजी मूर्ख
ई छे ! शु कोईक एवो मसालो हशे के जो ते जड वस्तुमा पडे तो तेमाथी चेतन
थाय ? एवी काई चीज तमे शोधी कहाडी होय तो अमने देखमावो नी ! माटे ए
नरूप अधारु हृदयमाथी कहाडी नाखो, ने शुद्ध धर्मने अगीकार करो दोहा
धर्म जन जे लहे, ते पामे पद मोक्ष,प्रगट वस्तुने मूकिने, कां जन भ्रमे परोक्ष॥
नास्तिक – सवदीना जेवी मुखमुद्रा करीने बोलवा लाग्यो के, जीवने
लागे छे के नही ? ए विषे विचार करवो जोइये अमारा मतप्रमाणे जी
कर्म लागतां नथी
आस्तिक – तमे तो वली बधाना शिरताज थया जणाओ छो ! पण कर्मविना
बनतुज नथी, एम मान्याविना चालशे नही कर्मने तो सर्वे अगीकार करे
मा कोई वाधो कहाडे एवु नथी. जो कर्म न होय तो पापपुण्यनु फल थवु
जोइये, ते तो प्रत्यक्ष दीठामा आवे छे, जेणे पाप कर्यु छे ते दुःखी छे, ने
पुण्य कर्यु छे ते सुखी छे, वली जो एम होय तो, दान, ध्यान, स्नान
पूजा प्रमुख जे सत्कर्म छे, ते सर्वे मतवालाओ शासारु करे छे ? तमारा
प्रमाणे तेनु फल तो कांई थनार नथी, पण ते शुभ कर्म जाणीने लोको आ
छे ज्यारे कर्म नथी त्यारे जन्म धारण करवानु शु प्रयोजन छे ? माटे जाज
मरण तथा सुखदुःख छे, तो कर्म पण होवा जोइये कर्म छे ते जीवने रा
छे रागादिकथी बधाय छे, ने भोगव्यापछी छुटे छे ज्यालगि कर्म छे त्यान
ससारी जीव कहेवाय छे, कर्मोनो क्षय थवाथी मुक्त थयो कहेवाय छे माटे
ारे निश्चय मानवु जोइये छे के जीवने अवश्य कर्म लागे छे दोहा, कर्मथकी आ
वने, सुख दुःख सघला थाय, रुत्य शुभाशुभ जेहथी, शफल थया कहेवाय
नास्तिक –तमे कहो छो के, जीव भवांतर थकी आवीने आहि उपजे छे
रे एक भवनी वात बीजा भवमां केम करतो नथी ? जो भवातर होय तो ते
स्मृति जरूर थवी जोइये, ते तो कोईने पण थती नथी त्यारे भवांतर छे एम
उपरथी समजाय ?
आस्तिक –आगला भवनी स्मृति थती नथी ते उपरथी भवातरनो अभाव छे ए

મ જાણવું નહી. આગલા ભવની વાત તો રહી, પણ આ ભવમાંજ મદ્યાદિક પદા ર્થના યોગે, ગયા દિવસની વાત પૂછવાથી માણસ બરાબર કહી શકતો નથી જુ ઓ કે, કોઈ મનુષ્ય તાડનાદિકના યોગે મૂર્છાવાન થયો હોય, કોઈ પુરૂષે સુરાપાન કર્યું હોય, અથવા નિદ્રાવશ થયો હોય, ત્યારે ગયા દિવસની સ્મૃતિ રહેતી નથી; તેનું કારણ મદ્યાદિક પદાર્થોનું આવરણ છે તેમ જીવને જ્ઞાનાવરણી કર્મના ઉદયથી પૂર્વ ભવના વાતની સ્મૃતિ થતી નથી. વળી જેમ આ ભવમાંજ માતાના ઉ દરમાં નાના પ્રકારના દુઃખ સહન કરેલા હોય, તે વાત જન્મ્યાપછી કાંઈ કહી શક તો નથી; તો ભવાતરની વાત કેમ કહી શકે ? માટે ભવાંતરની વાત તો વિશેષ જ્ઞા નીવિના બીજો કોઈ જાણી શકેજ નહી. એમ સમજવું. દોહા, જ્ઞાનાવરણી કર્મથી ભ વવિસ્મૃતિ થઇ જાય; વિશેષ જ્ઞાની કહિ શકે, પૂર્વ જન્મ મહિમાય ६

९ નાસ્તિકઃ—અભિમાનયુક્ત મુદ્રા કરીને બોલે છે-તમે એમ માનો છો, કે જીવને કર્મનો લેપ લાગે છે. ને વળી એમ પણ કહો છો કે, જીવ વાસ્તવિક સ્વરૂપે શુદ્ધ છે. ત્યારે જે શુદ્ધ હોય તેને લેપ કેમ લાગે? માટે જીવ શુદ્ધજ છે; તેને કોઈ કર્મનો લેપ લાગતો નથી એમ માનવું જોઇયે.

આસ્તિકઃ—ટુંકામાંજ સમાધાન કરે છે કે, યદ્યપિ જીવનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ શુદ્ધ છે, તથાપિ શુભાશુભ કર્મને યોગે તેને લેપ લાગે છે; તેથીજ જીવ બંધ કહેવાય છે અને જેને કર્મનો લેપ નથી, તે મુક્ત કહેવાય છે. મુક્તિ તો સિદ્ધતા પામ્યાવિના સંભ વેનહી અને જહાંસુધી મુક્તિનો અભાવ છે, તહાંસુધી બંધની કલ્પના અવશ્ય કર વી જોઇયે. તે બંધ જીવને અનાદિ કાળથી ચાલ્યો આવે છે. જેમ ધાનને તૂસ લા ગેલાજ હોય છે તેમ જીવને કર્મ અને કર્મજન્ય શરીર લાગેલુંજ હોય છે. જેમ ધા નને તૂસ લાગવાનું કારણ છોતરાં હોય છે. તેમ જીવને કર્મબંધ લાગવાનું કા રણ મિથ્યાત્વ તથા રાગદ્વેષાદિક હોય છે. જેમ ધાન્યમાંથી તૂસ તથા તત્સંબંધી છો તરાંરૂપ બંધ હેતુ પદાર્થના અભાવથી શુદ્ધ કણ દેખાય છે; તેમ જીવમાંથી મિ થ્યાત્વ તથા રાગ દ્વેષાદિક કર્મબંધ હેતુનો અભાવ થયાથી શુદ્ધ નિર્મળ થાય છે. જેમ અનાજનો શુદ્ધ થયલું દાણું ઉગે નહી. તેમ જીવપણ શુદ્ધ નિર્મળ થયા થી જન્મમરણ પામે નહી. દોહા, કર્મ લેપના યોગથી, બંધ જીવને હોય; કર્મ ખપે મુક્તી લહે, જન્મ મરણ નહિ કોય. ७

१० નાસ્તિક.—સંભ્રમ વિચારમાં પડેલા જેવી મુદ્રાથી બોલવા લાગે છે. કર્મ પોતે તો જડ પદાર્થ છે. તેઓનો જીવની સાથે સ્વતંત્ર સંબંધ સંભવે નહી. કોઈ પણ પ્રેરક હોવો

जोये माटे ईश्वरेछायी जीवने कर्म बंध थाय छे, अने तेज प्रेरक छे एम जाणवु

आस्तिक – लगारेक हास्य करीने बोले छे ईश्वरे पोताना अंशरूप जीवने उत्पन्न कर्या छे तेथी जीव ईश्वरनो अंग कहेवाय, ए उपरथी जीव तथा ईश्वरना अंशांशीनाव संबंध तमारा कहेवा प्रमाणे ठरे छे जो ईश्वर अंश छे एम मानीए तो ईश्वरना जेवो जीव होवो जोये केमके, अंशांशीमा भेद होतो नथी तेथी ईश्वर नी पठे जीव पण निर्मल छे, एम मानवु जोये त्यारे एवा निर्मलस्वरूपी जीवने कर्म लगाडीने मलसहित करवानु कारण शु हतु! आपणे कोई शुद्ध वस्तु वापरवाने अर्थे ज्यारे लावीए छैये, त्यारे जहांसुधी बने तहांसुधी तेने मलीन करवा देता नथी, अने स्वछ राखवानो घणो प्रयत्न कर्या करीये छे त्यारे पोताना अंशरूप जीवने जाणी जोईने मेल लगाडवु ए ईश्वरनेविषे संनवे नहीं एम तो कोई साधारण मूर्ख मनुष्य पण करे नही, त्यारे ईश्वर ते तेम करे! अने जे पोताना अंगनो तिरस्कार अथवा नाश करे ते आत्मघाती कहेवाय तेम ईश्वरपण आत्मघाती कहेवाशे कदाच तमे एम कहेशो के, ईश्वर पोते पण कर्मकलंकसहित छे त्यारे जे पोते कलंकसहित होय, ते बीजानो कलंक शु मटाडी शकवानो हतो! अने ते ईश्वर पण शाना! माटे गमे तेवी मनकल्पना करीने निर्दोषी ईश्वरने दोष लागु कर्यो ए केटली मूर्खता छे! माटे ईश्वरनी इछायी कांई पण थतु नथी. जे थाय छे ते कर्मथी थाय छे एम जाणवु दोहा, कर्मबंध आ जीवने, ईश्वर इछाथ्य, कहे एम ते मूर्ख छे, ईश अक्रीय अनूप ८

११ आस्तिक –आ जगतनी जे अद्भुत रचना देखाय छे, तेनो कर्त्ता कांई पण होवो जोये ईश्वर, एनी सिद्धि मानाविना थई शके नही तेम कर्मादिक जड पदार्थोथी पण जगतनी उत्पत्ति संनवे नही माटे जे जगतने उत्पन्न करे छे, तेनज ईश्वर कहिये, अने एनी साक्षदता पण छे, के जगत सर्व ईश्वर रूप छे

नास्तिक— जगतनो कर्त्ता ईश्वर होय, तो सर्व प्राणीमात्रनु ईश्वर कारण थयु ने सर्व पदार्थो ईश्वरना कार्य थया पिता जेम पुत्रनी उत्पत्ति करे छे तेम ईश्वर सर्व प्राणी मात्रनी उत्पत्ति करे छे त्यारे ईश्वर पितारूप अने सर्व पदार्थो पुत्ररूप मानवा जोये पुत्रनी उपर पितानो प्यार होय ए मानाविना सिद्ध छे तेम ईश्वरना पण सर्वेनी उपर प्यार होवो जोये जो एम होय तो सर्व प्राणीमात्र सुखी होवा जोये तेम तो दीठामां आवतु नथी कोई सुखी, कोई दुःखी कोई रोगी, कोई पुन्यवान, कोई नर्कगामी, तथा कोई सर्गगामी वगेरे सर्व जीवो

नी वर्त्तणुक जुदी जुदी दीठामां आवे छे. एम केम कीधुं छे? वली जगतन
वोने प्रवर्त्तावनारो ईश्वर छे, एम पण तमारा कह्या उपरथीज सिद्ध थाय छे.
हिंडुए गायनी पूजा करवी, अने म्लेछे तेनो वध करवो, ए बुद्धि पण ईश्वरे
पी कहेवाशे. जो एवी बुद्धि देनारो ईश्वर मानशो नही, तो बीजो कोई मान
जोइशे. केमके तमारा मत प्रमाणे प्रेरणा करनारो कोई जुदोज होय छे; अने
प्रेरणा करे छे ते ईश्वर छे. त्यारे ते बीजो प्रेरणा करनारो ईश्वर मानवो पडशे
एवी रीते ईश्वरनो ईश्वर तेनो ईश्वर इत्यादिक मानशो तो अनवस्था दोष प्राप्त थ
शे वली पोते पोताने दुःखी कोई पण करतो नथी. सर्व पोताने सुखनी चाहना करे
छे. तेमज पोताना संबंधीओविषे पण सुखनी चाहना करे छे. तमारा केहेवा प्रमाणे
तो जे जीव नरके जाय छे तेपण ईश्वरनो अंश, अने जे स्वर्गे जायछे ते पण ईश्वर
नोज अंश छे. एटले सुखी तथा दुःखी थाय ते सर्व ईश्वर पोतेज छे एम ठर्युं. ए प्रमाणे
ईश्वर पोतेज संसारमां परिभ्रमण करेछे. ते पोताना सेवकनां जन्म मरणादिक दुःख
केम टाली शके! अने जीवोने नरकथी अथवा बीजी कुगतिथी केम बचावी शके?
इत्यादिक विचार करतां जगतनो कर्त्ता ईश्वर नथी; किंतु स्वाभाविक सिद्धछे. दोहा, ज
ग कर्त्ता ईश्वर कहे, ते विद्वान न होय; ईश्वरने कर्त्तव्य नहि, स्वभाव सिद्धज जोय. ए

१२ नास्तिक — जगतनी उत्पत्तिकर्त्ता भले ईश्वर न होय, एमां हुं कशो वांधो
लेतो नथी. पण ईश्वर सर्वव्यापक छे के नही?

आस्तिक — जो ईश्वर सर्वव्यापक होय, तो जीव शिवाय बीजो कोई पदार्थ
न होवो न जोये. केमके, ईश्वरतो चेतनवत छे; ते सर्वमां व्यापक होय, तो चेतना
ना कोई जगा खाली न जोइये, के जे ठेकाणे बीजो पदार्थ रही शके; अने
गतमां तो जीव अजीव पदार्थो जुदा जुदा दीठामा आवे छे. एथी स्पष्ट सिद्ध
य छे के, ईश्वर सर्व व्यापक नथी वली ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र, ए
वर्ण अनुक्रमे श्रेष्टता तथा कनिष्टता केम पाम्या छे! जेम के, ब्राह्मण सर्वथी
तेनाथी क्षत्रिय कनिष्ट, क्षत्रियथी वैश्य, अने वैश्यथी शूद्र कनिष्ट छे, अने
ी कनिष्ट चंडालादिक जाति छे, तेओमां श्रेष्ट कनिष्टता न थवी जोइये. के
ईश्वर तो सर्वमां एक अने समान छे; तेमां उत्तम मध्यमता प्रमुख संभवे
अने उत्तम मध्यम तो प्रत्यक्ष दीठामां आवे छे. वली बीजा पण उदाहर
क छे, जेम के. कोई पुरुष शुभ कृत्य करे छे. ने कोई पुरुष अशुभ कृत्य क
न थवुं जोइये ईश्वर तो बधामां व्यापक छे, तेथी शुभाशुभ कृत्य शाना

रु करे छे ? ए उपरथी एवो निश्चय थाय छे के, ईश्वर सर्व व्यापक नथी दोहा व्यापक ईश्वर जे कहे, तेह न जाणे मर्म, नर्मे भूल्या सर्व मत, विना एक जिनधर्म १०

१३ नास्तिक – ईश्वर सर्व व्यापक हो के न हो, तेनी साथे अमारे जरुर नथी, पण आ जगतनो अधिपति ईश्वर छे, अने जगतरूप तेनु ऐश्वर्य छे, तेथीज ईश्वरताने पाम्यो छे जे ऐश्वर्यवालो होय तेने ईश्वर कहिये

आस्तिक – जगतनु आधिपत्य लेवानु ईश्वरने शु कारण हतु ! अने जगतरुप ऐश्वर्य पण तेने शासारु जोइतु हतु ! शु जगतनी उत्पत्तिनी पूर्वे ते ऐश्वर्यने पाम्यो न हतो ! ऐश्वर्यविना ईश्वरता संभवे नही ए उपरथी जे जगतनी उत्पत्तिनी पूर्वे अनीश्वर हतो, ते उत्पत्ति करीने ईश्वरताने पाम्यो छे, एवो तमारो आशय जणाय छे नही वारु ! पण ए बधुं खोटु छे ईश्वरनेविषे एवी कल्पना करवीज नही जोये जुओ के, तमारा कहेवा प्रमाणेज जेम प्रजानी अपेक्षाये राजा कहेवाय छे, अथवा धननी अपेक्षाये धनाढ्य कहेवाय छे, तेम जगतनी अपेक्षाये ईश्वर कहेवाय छे एटले जेवारे जगतने उपजावे तेवारे जगतनु ईश्वर पणु कल्पिये, एथी जगतनी पूर्वे ईश्वर न हतो एम थयु, अने जेवारे जगतनो प्रलय थाय त्यारे ईश्वरनो पण अभाव थई जवो जोये जो ए वात कबूल करशो तो जे कांई कालमां होय ने कोई कालमां न होय ते क्षणिक कहेवाशे जो क्षणिक मानशो तो बीजा घणा दोष प्राप्त थशे, माटे ईश्वरने जगतनो एवी रीते अधिपति कहेवो ते योग्य नथी दोहा, अधिपति जगनो जे कहे, ईश्वरने मतवादि, ते एकांत अनिष्ट छे, भ्रमम अनेक वादि ११

१४ नास्तिक – आटला संवाद थया, तेओमां ईश्वरनु यथार्थ कारणपणु कोइए कह्यु नथी जगतनी उत्पत्तिनी पूर्वे ईश्वरने एवो संकल्प थया के, मारु सामर्थ्य प्रगट करु, ए वात वेदमां कही छे ते आवी रीते - 'एकोहं बहुस्यामि' एटले एक हु बहु रूपे थाउ एवा कारणथी जगतनी उत्पत्ति करी छे, तेथी ईश्वरने कारण कह्यो छे

आस्तिक – पोतानु सामर्थ्य प्रगट करवानी इच्छा तो तेने थाय के, जेनामां अज्ञान होय ईश्वरतो सर्वज्ञ छे, ते शु पोतानु सामर्थ्य जाणता नहोता ! मारामां केटलु सामर्थ्य छे, एवा जेने संशय होय, ते ईश्वर शानो ! साधारण मनुष्य प्राणी पण पोतानु सामर्थ्य जाणी शके छे, तो ईश्वर केम न जाणी शके !

माटे एम कहेवुं ते मूर्खता छे. दोहा, निज समर्थने जाणवा, कर्युं ईश जग एह; कारण वादी जे कहे, शतमूरख छे तेह. १२

१५ नास्तिक.-- ईश्वरे पोतानुं सामर्थ्य बताववा सारु जगतनी उत्पत्ति करी छे, एम जाणवुं जोइये.

आस्तिकः-- कोने बताववा सारु जगतनी उत्पत्ति करी छे? जीव अने जड प पार्थो तो ईश्वरेज उत्पन्न कर्या छे, एम तमे कहो छो. त्यारे बीजो कोण जगतनी पूर्वे हतो के, जेने देखाडवा सारु ईश्वरे आ जगतनी उत्पत्ति करी छे! माटे ए ात पण असत्य छे. दोहा, बीजाने देखाडवा, पोतानुं सामर्थ्य, जग उपजा र्युं ईश्वरे. एम कहे ते व्यर्थ. १३

१६ नास्तिक --जेम माणस सवारमां उठी वस्त्रादिक पहेरीने आरीसामां पोतानुं रूप देखे छे; ते सारुं देखाय तो आनंदित थाय छे, तेम ईश्वर पण पोते पोतानुं रूप जोवासारु आ जगतरूप शृंगार करी पोतानुं रूप विस्तारीने देखे छे; एम ाणवुं जोइये.

आस्तिक--माणस पोतानुं रूप आरीसामां जुवे छे, तेनुं कारण ए के, मारुं रूप देखाशे नही, तो लोको हांशी करशे, अथवा कोई खोड काहाडशे; तेम ईश्वरे कोना भयथी पोताना रूपनो विस्तार कर्यो छे? ईश्वरना जेवो बीजो ईश्वर नही; त्यारे जोनारो कोण! माटे ए वात पण जूठी छे. दोहा, पोते जोवा रच्यो जगत आ ईश; कोना भयथी ते कहो, मतवादी तजि रीश. १४

नास्तिक --"एक एवहि भूतात्मा, भूते भूते व्यवस्थितः; एकधा बहुधा चैव. जल चंद्रवत्" एवी रीते आत्मा एक छतां सर्व प्राणीमात्रमां जुदो जुद वे छे; जेम चंद्रमा एक छतां अनेक जलस्थानकोमां प्रतिबिंब रूपे मां आवे छे; तेम ईश्वर एकज छे पण घट घटमां जुदो जुदो देखाय छ र बिंब छे ने सर्व जीव प्रतिबिंब छे, एम जाणवुं.

क.-- जेम एक चंद्रमाना अनेक प्रतिबिंबो होय छे, ते जेवो चंद्रमां खाय छे. तथा काचना भुवनमां एक मनुष्य छतां अनेक प्रतिबिंब ां आवे छे. तेमां मूल आकृतिथी जुदी आकृति देखाती नथी. थी ते पूर्णिमासुधी गमे तेवी चंद्रमानी आकृति होय, तेवो प्रतिबिंब या काच भुवनमां मनुष्यनी जेवी आकृति होय तेवीज तादृश्य छे ो होय तो काणो देखाय, आंधळो होय तो आंधळो देखाय; वगेरे

बिंबना जेवोज प्रतिबिंब देखाय छे तेम ईश्वर सर्व प्राणीओमां सरखो देखातो नथी कोई सुखी, कोई दु:खी, कोई पापी, कोई पुण्यवान वगेरे अनेक प्रकारे देखाय छे त्यारे ईश्वरना प्रतिबिंब केम संभवे ? जे प्रतिबिंब होय, ते बिंबना जेवाज होय छे ? तेम तो ए नथी वळी जेम चद्रमानो उदय थता प्रतिबिंब पण तेनी साथे उत्पन्न थाय छे अने चद्रमां अस्त थयाथी प्रतिबिंब पण मटी जाय छे तेम ईश्वर अने जीवोनेविषे थतु नथी ईश्वर उत्पत्ति नाश रहित छे, तेम जीव पण होवा जोये ईश्वर जेम अक्रिय छे, तेम जीव पण कर्मविना होवा जोये जेवो बिंब तेवा प्रतिबिंब होवा जोये तेम तो ईश्वर अने जीव नथी, माटे चद्रबिंबनो दृष्टांत सर्वथा असत्य छे, केमके सर्व जीव पोताना कर्मोदयथी उत्तम मध्यम पणु पामेछे दोहा, बिंब अने प्रतिबिंबता, ईश्वर जीव प्रमान, चद्र बिंबवत ए नही, तेथी सत्य न जान. १५

१८ नास्तिक – जीव वर्णादिके करी सहित छे, एम मानवु जोये

आस्तिक – जीव वर्णादिके करी रहित छे, अने चेतन लक्षणवत छे, अने कालु, रातु, नीलु, पीलु, तथा धोलु ए पांच वर्ण, सुगधि तथा दुर्गंध ए बे गध, तीखु, कडवु, कशायलु, खाटु तथा मीठु ए पाच रस, शीत, उष्ण, स्निग्ध, लूखु, करकश, मृदु, गुरु, तथा लघु ए आठ फरस, अने परिमडल, वृत, त्र्यांश, चउरस तथा आयतन ए सस्थान प्रमुख सर्व जड पदार्थना गुण छे, ते चैतन्यमां नथी चेतननो आकार शरीरने आश्रये छे जेम पाणीनो आकार जलाशयथी जणाय छे तेम चेतननो आकार पुद्गलथी जणाय छे

१९ नास्तिक – जीव कर्मोने केम ग्रहण करतो हशे वारु ?

आस्तिक – जेम वस्त्रना तंतु ते वस्त्रना अश छे, तेम जीवना प्रदेश ते जीवना अश छे, जेम वस्त्रातर्गत ततुना सूक्ष्म तंतु छे तेम जीवना पर्यायछे जेम वस्त्रना वरण तेम जीवनु सद्लक्षण छे जेम वस्त्रने मेल लागवानु कारण, तेमजीवने मिथ्यात्वादिक हेतुये रागद्वेष आश्रवे कर्मरूप मेल लागवानु कारण छे जेम वस्त्रनो मल टाळनार धोबी तेम पोताना अतरनो मल टाळनार आत्मा पोते छे जेम वस्त्र साबुये करी मल टळे छे, तेम जीवने शुभध्यानेकरी कर्मरूप मल टळे छे जेम वस्त्रने अग्नि, तेम जीवने तपस्या छे इत्यादिक करवाथी कर्मनो क्षय थाय छे. जे जीव कर्म सहित होय तेने कर्म लागे, पण कर्मरहित होय, तेने नवा कर्म लागे नही जेम सूत्रकातनारी नाडी काते, तेमाथी थोडी बाकी रहे, त्यारे तेनी साथे बीजी वनगा

, पण पहेली होयज नही, तो तेनीसाथे बीजो संबंध साथी करे! तेम जीव प
ण अनादिनो कर्मसहित छे, अनादि जीवनुं एहवुंज स्वरूप चाल्युं आवे छे; माटे
ज्यांसुधी कर्म सहित छे त्यांसुधी नवां कर्म पण ग्रहण करे छे; पण प्रथमथी अमुक
वखतेज जीव नवां कर्म ग्रहण करी कर्ममल सहित थयो; एवी आदि नथी.

२० नास्तिकः--जीवने कर्म क्यारे लागां छे? कर्म लागवानी कोई पण आद्य
तोयें जे पदार्थनो अंत थतो होय, तेनी आदि पण होवी जोये. ज्ञाने करी क
र्मोनो अंत थाय छे. एम तमेज कह्यो छो. त्यारे आद्य पण कबुल करवी पडशे;
ते आदिनो समय कह्यो देखवशो? केम के. जीव प्रथम निर्मल होय तोज तेने
कर्मरूप मल लाग्यो कहेवाय.

आस्तिकः--ए वचन दूषण सहित छे. केमके, जीव प्रथम ज्यारे निर्मल हतो
त्यारे तेने कर्म लागवाना परिणाम केम थया? जे निर्मल होय ते पोताने मल
सहित थवानी इच्छा करे नही. तेम छतां जीवे कर्मोनी वांछा केम करी? माटे
जीव अनादिनो कर्म सहित छे. जीवनेविषे कर्म स्वभावे अनादिसिद्ध छे. दोहा,
आदि जीव निर्मल हतो, पछि वलग्यां छे कर्म; एम कहे ते ना लहे, जिन वच
नोनो मर्म. १६

२१ नास्तिकः--सर्वमां व्यापक आत्मा एक छे; अने शरीरो जुदां जुदां छे; एम
मानवुं जोइये.

आस्तिकः--जो बधामां आत्मा एक होय तो माता, पिता, स्त्री, पुरुष, भाई,
बेन, पुत्र, राजा, प्रजा. चोर, साहुकार, चंडाल, क्षत्रिय, उंच, नीच, नरक, देव
ता, पुण्यवान, तथा पापी इत्यादिक भिन्न भिन्न केम देखाय छे? सर्वमां आत्मा
एक होवाथी तेज देखावुं जोइये; अने एके कीधेलुं पाप सर्वने लागवुं जोइये; ते
मज एके कीधेला पुण्यना सर्व भागीदार थवा जोइये; एकना मुक्त थयाथी सर्व मु
क्त थवा जोइये; प्रत्येक माणसनुं जुदुं जुदुं अनुष्टान निष्फल थवुं जोइये; तेम तो
थतुं नथी जे करे छे ते भोगवे छे; ए कहेवत प्रमाणे बधा आत्मा भिन्न भिन्न दे
खाय छे. माटे सर्वमां एक आत्मा व्यापकपणुं कहेवुं ते समीचीन नथी; एम
जाणवुं. दोहा. आत्म सर्वमां एक छे, भिन्न भिन्न आ देह; एम कहे एकांत म
त; असत कहीजे तेह. १७

२२ नास्तिक.--सर्व कार्य अने अकार्य ईश्वरनी इच्छारूप छे; अने ईश्वरनी इ
च्छाथीज सर्व थाय छे; एम जाणवुं जोइये.

आस्तिक –जो एम होय, तो जन्म धारण करवामां मातापिताचुं शु छे ? अने विष खाधाथी मरण थाय छे, तेमां विषचुं सु वांक छे ? जनथी क्षुधानी निवृत्ति, पाणीथी तृषानी निवृत्ति, अग्निथी शीतनिवृत्ति, ली तापथी खेदोत्पत्ति, वर्षाथी धान्योत्पत्ति, द्वेषथी वैरोत्पत्ति, नम्रताथी त्पत्ति, चोरी करवाथी ताडन, यारी थकी निर्लज्ज, पापथकी नरक, स्वर्ग, इत्यादि सर्व कारणो अने कार्यो व्यर्थ थशे अने सर्व वस्तुओ सगुण कहेवी जोइशे राग करनारो स्नेही नही, तेम द्वेष करनारो वैरी नही कहेवाश, पकार प्रति उपकार करवानी काई जरूर रहेशे नही अने पाप पुण्य थशे केम के, सर्व कार्य करवानु मूल कारण एक ईश्वर इछा थई, माटे सर्व ईश्व र इछारूप छे, एम कहेवु ते समीचीन नथी तमारा कहेवा प्रमाणे पुण्य कर्त्ता पण ईश्वर अने भोक्ता पण ईश्वर थयो दोहा, ईश्वर इछारूप आ, वे जगमाहि, एम कहे गुणता टले, सारासार न काहि १८

२३ नास्तिक - आत्मा पच भूतो थकी थयो छे, ए वात असत्य नथी, साची छे, एवु अमने जणाय छे

आस्तिक - भूत शब्दनो अर्थ त्रणे कालमां अस्तित्व थाय छे एटले जे छे ने छे, तेने भूत कहिये भूतनो तो कोई काले छेद थतो नथी, माटे ए अस्तित्व भूतनो अश तो सभवे नही, तेम आकाशादिक पच महाभूतनो अश पण कही शकाय नही वली पाच भूतना अशे करी शरीरनी उत्पत्ति थाय छे, त्यारे अने चेतना कह्या अशथी उत्पन्न थया ? माटे भूत शब्द ए भ्रमजाल छे अने चिदानद ज्ञानरूप आत्मा तो शाश्वत छे ते कोई समये जूनो तथा नवा थतो नथी ते जीव पूर्वोपार्जित कर्मे करी शरीर बाधे छे ते जल पुद्गलनु ग्रहण छे तेमा भूतनु काई प्रयोजन नथी, भूत केवी वस्तु छे ? जीव छे के जड छे ? रूपी छे के अरूपी छे ? ईश्वराश्रित छे के नवा प्रगट थाय छे ? छता रूप छे के सपाय थाय छे ? ए विषे काई विचार करी शकातो नथी, माटे भूत ए शब्दज व्यर्थ छे ते नाथी जीवनी उत्पत्ति केम मनाय ! दोहा, जीव ऊपजे भूतथी, ए मत छे भ्रम रूप, जीव चिदानंद सत्य छे, अनादि भाव अनूप १९

२४ नास्तिक -तमारा कह्या प्रमाणे जीवने भवातर थाय छे भवनी प्राप्ति मानुसार छे जेवां कर्मो कर्यां होय तेवा भवनी प्राप्ति थाय छे शुभ कर्मनु फ सारा भव छे, अने अशुभ कर्मनु फल नरशो भव छे ते वात सत्य छे, परतु

जीवने एक खंडमां शरीर मूकीने बीजा खंममां बीजुं शरीर धारण करवुं पमे एटलो दूर जतां तेने केटलो वखत लागतो हशे ! अने कोई जीवने एक श र मूकी तरत तेज गाममां उपजवुं होय, तेने कांई दूर जवुं पडतुं नथी, तेथी ाई वधारे वखत लागतो नही हशे, पण जेने दूर जवुं पडतुं हशे तेने रस्तामां ालता वधारे वखत लागतो हशे नी !

आस्तिकः– नजीक अथवा दूर नवांतर करवामां वधारे वखत लागतो नथी; रखोज वखत लागे छे. जेम घाणी, रहेंटीओ अथवा वारणुं इत्यादिक ज्यारे रे छे. त्यारे तेओना माहेला तथा बाहेरना नागने फरतां सरखोज वखत लागे यद्यपि अंदरनो क्षेत्र थोडो होय छे, ने बाहेरनो घणो होय छे; तथापि फरतां खतमां वधघट थती नथी. वली जेम दीपकने झलगावीए ते क्षणमांज प्रकाश रेछे. वचमां कांई अंतर पडतो नथी; तेम जे वखते एक नव मूके के लागलोज ीजो नव पामे छे; तेमां लगार पण अवकाश रहेतो नथी. ते नव पछी दूर देश ारण करवो होय, के नजीक देशमां धारण करवो होय, गमे त्यां नव धारण कर ांवामां वखतनो वार फेर थतो नथी.

७५ नास्तिकः–जीवने कर्म केवी रीते लागे छे.

आस्तिक –आत्माना शुनाशुन परिणामथी जीवने कर्म लागे छे. जो शुन ारिणाम होय, तो सारा कर्म लागे छे; अने अशुन परिणाम होय, तो नरगां र्म लागे छे. अने तेनां फल पण तेवां थाय छे. कर्मने कांई ज्ञान नथी, जे ्रा जीवे पाप कर्युं माटे हुं एने पापरूप कर्म थई लागुं.

७६ नास्तिकः–कर्म तो जड छे तेथी तेओमां ज्ञान शक्ति नथी त्यारे जीवे नर ा अथवा सारां कर्मो कर्याथी पाप अथवा पुण्यरूप परिणाम केम थाय छे ? ः परिणाम तो ज्ञानविना थाय नही. तेथी एवुं जणाय छे के कर्म लागवामां ीश्वर हेतु छे. कर्म करवापणुं जीवने छे, ने तेनुं फल देवुं ईश्वरने छे.

आस्तिक –कर्म लागवामां ईश्वरनुं कांई काम नथी. कर्मोनो एवो स्वनावज छे के परिणामने पामवुं. जेम कोई पुरुष विषमिश्रित नोजन करे, ते मरण पामे छे खरुं ए विषनो परिणाम छे; पण विष जम पदार्थ होवाथी तेने एवुं ज्ञान नथी के मने जे खाय छे, ते मरीजायछे; तेम छतां तेथी तेवो परिणाम थायछे के नही ! वली जेम कोई पुरुष मिष्टान्न नोजन करे, तेथी पुष्ट थाय छे पण ते नोजन एम नथी जाणतुं के, माराथकी आ शरीरनी पुष्टी थाय छे. तेम छतां तेनो परिणाम

आस्तिक–यद्यपि तमे कहोछो के ईश्वर सर्वज्ञ छे, ए वात सत्य छे तथापि ते सर्वज्ञतानी रीत कांईक जूदीज छे जे तमे मानो छो ते ईश्वर सर्वज्ञ नथी अमे एटलुज पूछीए छीए के, ज्यारे ईश्वर सर्वज्ञ छे, त्यारे पोताने दुःख देनार रावणादिकने तेणे शा सारु उत्पन्न कर्या ! ज्यारे ए राक्षसोनी उत्पत्ति पोते कीधी त्यारे पोतानेज युद्ध करवु पडयुं ए उपरथीज विचार करो के जो ईश्वर जाणतो होय, तो एवी भूल केम करे ? जो एम कहिये, के राक्षसादिक प्राणी ओ ईश्वर थकी अजाणमा उत्पन्न थया जणाय छे, तो ईश्वरनेविषे अज्ञानरूप दूषण प्राप्त थशे अने जो एम कहीशु के जाणी जोईने उत्पन्न कर्या छे, तो ईश्वरना भक्तने पण संग्राम उचित नथी, तो ईश्वरने ते केम संग्राम कार्य उचित थयो ? माटे एम कहेवु तदन असंभवित छे

३१ नास्तिक–ईश्वर ज्यारे जगतनो संहार करेछे, त्यारे पोते प्रागवडना पांदडापर पहोढे छे, अने ज्यारे जगतनी उत्पत्ति करवानो समय होय, त्यारे जागृत थाय छे, ए वात तो साची छे के नही ?

आस्तिक–ए वात ते वली जूठी होय ! पण हु तमने पूछु छु के ते प्रागवड अधर आकाशमा रहे छे के, पृथ्वी उपर होय छे ? तेमा अधर रहे छे, एम तो तमे कबूल करशो नही, केम के तमे वली एम पण मानो छो के, बधु जलमय थई जाय छे, ने तेनी उपर मात्र प्रागवड देखाय छे, त्यारे पृथ्वी पण कबूल करवी पडशे जो पाणी, पृथ्वी, तथा प्रागवड ए बधा पदार्थ महा प्रलय थया पछी पण रहे छे, त्यारे संहार ते शानो कर्यो कहेवाय ? जो एम होय तो सर्व पदार्थो शाश्वत थया एम जणाय छे फरी ज्यारे ईश्वरे सृष्टि उत्पन्न करी, ते पहेलां कह्या प्रमाणे पांच महा भूत तथा, प्रागवड हतो त्यारे नवु ते शु कीधु ए वगेरे विचार कर्याथी एम जणाय छे के, ए बधा गपाटा छे जेना मनमां जेम आव्यु, तेणे तेम शास्त्रोमा लखी नाख्यु जणाय छे.

३२ नास्तिक–ब्रह्मा, विष्णु, अने महेश ए त्रणे सर्वज्ञ ईश्वर छे, एम अमे मानिये छैये

आस्तिक–तमे गमे तेम मानो तेमां अमारु शु गयु ! अमे तो जेम हशे तेम मानशु तमे कह्या ते त्रणे जो सर्वज्ञ होय तो अज्ञानने केम अंगीकार करे ! जुवो के, महादेवे पोताना पुत्र गणेशनु माथु कापी नाख्यु तेनी खबर पोताने केम न पडी ? रावण सीतानुं हरण करी गयो ते वखते राम सर्वज्ञ छता

पशु, पक्षी, तथा वृक्ष प्रमुखने केम पूजतो हतो? अने ब्रह्मा पासेथी वेद केम चोरी लई गया? ए रीते ब्रह्मा, विष्णु अने शिव अज्ञानी ठरे छे. अज्ञानी तेने ईश्वर केम कहिये?

२३ नास्तिकः—सर्व योनिओमां मनुष्य योनि उत्तम छे. एवुं शास्त्रोमां क ने सत्य छे. अने वळी अनुभव सिद्ध पण छे.

आस्तिक.—ना कोणे कह्युं छे? मनुष्य योनि तो उत्तमज छे. परंतु तमे अंतःकरण पूर्वक मानता नथी देखाता. महोडाथीज मात्र कहो छो. केम तमारे तो एथकी पण बीजी उत्तम योनिओ मानवी जोइये छे. जे योनिने श्वरे अंगीकार करी छे, ते योनि तमारे पण सर्वोत्कृष्ट मानवी जोइये. मत्स, क छ, तथा वराह, प्रमुख योनिओमां ईश्वरे अवतार लीधो छे; ते योनिओ मनु र योनिकरतां उत्तम मानवी जोइये. जो मनुष्य योनिज उत्तम होय तो ईश्व पोते बीजी योनि केम धारण करे? माटे तमारा बोलवा प्रमाणे तो मनुष्य नि करता वराहादिक योनि उत्तम जणाय छे. ईश्वर ज्यारे पशुमां अवतार लये छे, त्यारे पशुमुखी, पशुवाही, तथा पशुरूपी होय छे. तेने देव मानवो अयोग्य छे. आहार, अग्नि, आयुध, असवारी, तथा आवाश ए पांच पदार्थ धरना भक्तने पण त्याग करवा कह्युं छे; तो ईश्वर पोते तेनुं केम ग्रहण करे? टे वराहादि योनि धारण करनारो ईश्वर मानो, तो मनुष्य योनि करता ते योनि म कहेवी जोइशे; जो तेम नही कहेगो तो ईश्वरने अपमान लागशे.

२४ नास्तिक—शरीरनो त्याग करीने जीव परलोके गया पछीपाछो आ लोक मां केम आवतो नथी? जे छे तेने तो आव्युं जोइये.

आस्तिक.—आ संसारनो संबंध मटी गया पछी जीवनुं फरी आववुं थतु न थी, तेनुं कारण कर्म छे. जीववुं आववुं जवु कर्माधीन छे. ज्यां कर्म लई जाय त्या जीव जाय छे. अने जे जे भव पामे छे ते ते भवना कार्य करे छे. आ भ मा पण हमेश एक रीत रेहेती नथी जेम के बालपणानी प्रीति होय ते कोई ळे मटी जाय छे. घणा काल लक्ष्मीनो संबंध छतां कोई काले तूटी जाय छे. त्यारे रिद्र आवे छे कोई कर्मना योगे प्राणी बंदीखानामां पडे, ते वारे तेनो अन्य स्नेही होय ते पण पासे आवतो नथी. कोई पुरुष एक स्त्रीउपर बीजी करे ई प्रथम स्त्रीनी उपर प्रीति रहेती नथी; अने पूर्वनो संबंध पण तूटी गया जे य छे. तो पूर्व जन्मना संबंध ते केम याद आवे? ज्ञानावरणी कर्मना यो

गे बीजा भवनु स्मरण पण थतु नथी ए विषयने मळती प्रदेशी ।
शी गुरुनी प्रश्नोत्तररूप चर्चा छे ते कहुं छु

प्रदेशी राजा — मारो अधर्मी दादो नरकमा गयो छे, ते तमारा मत
त्यांथी आवीने मने अधर्म करतो वारे त्यारे हु मानु, के वात साची छे

केशी गुरु — तारी स्त्रीनी साथे कोई पुरुषने कामभोग करतो तने दीठामा
वे, ने ते तारा हाथमा आव्या पछी ते तारी वीनती करे के, मने थोडीक वार रजा
आपो, तो हु मारा कुटंबने कही आवु के, कामभोग कराथी आवु छु एम थावे
तो ते वात कबूल करीने तेने तु रजा आपीश ?

राजा — ना तेने एक क्षण पण छुटो मूकु नही

गुरु — तेमज तारो दादो पण पापसची, गुनेहगार थई, नरकमा गया पछी
परमाधामी तेने केम मूके ? तेथी ते आवी शके नही

राजा — मारी दादी स्वेछाचारी थई, जैनधर्मने अंगीकार करीने स्वर्ग गई, ते
पाछी केम कहेवा आवी नही, ने आवे तो तेने शु हरकत छे ?

गुरु — कोई पुरुष स्नानकरी, कुंकुम तथा धूप प्रमुख लई देवनी पूजा करवा
जेतो होय, तेने कोई चांडाल संडासमा जवाने कहे तो ते त्या जाय के? एवी
दी इछा पण करे ?

राजा — ना ते एवा खराब स्थले केम जाय ? कदी पण जाय नही

गुरु — तेम तारी दादी स्वर्गलोकमा गई छे, ते सेतखाना तुल्य आ मनुष्यलो
कमा केम आवे ! आ लोकमा आववानी इछा पण थाय नही

राजा — एक चोरे चोरी करी, तेनो इन्साफ करीने तेने लोहानी कोठीमा घा
ली दीधो तेनु मुख बंध करीने उपर सारी रीते कलाई कराबी तेमा पवन पण
प्रवेश करी शके नही एवु कर्यु पछी ते चोर कोठीमा मरी गयो तेनो जीव ते
कोठीना क्या रस्तेथी नीकली गयो ? तेमा तो कोई छिद्र दीठामा आव्या नही
हवे जीव ते केम मनाय ?

गुरु — मोटी शाळामा एक पुरुषने भेरी सहित घालीने तेने चातरफ बंध क
री लीधी होय, तेमा ते भेरी वगाड्याथी तेनो अवाज बाहार संभळाय छे ते छि
द्रविना बाहार केम आवे छे ? तेम जीव पण छिद्रविना बाहार निकळी जाय छे

राजा— एक चोरना कटका करी एक कुभमां में भरी राख्या हता तेनु महाडु
परथी मारी रीते आवी लीधुं हतु, के जेमा पवन पण प्रवेश करी शके नही ते

केटलाक काल पछी उघाडी जोयुं, तो तेमां अनेक क्रम पडेला देखायां. ते वि
विना क्यांथी आव्यां ?

गुरु – अग्निमां लोहनो गोलो नाख्यो होय तेमा छिद्रविना अग्नि केम प्रवे
करेछे। जे वस्तु अग्निमां नाखीए तेमां छिद्र नहोय, तो पण अग्नि प्रवेश करे छे
तेम जीवनो प्रवेश थवामां छिद्रनुं कांई काम नथी.

राजा – एक चोरने में ते जीवतो हतो त्यारे तोल्यो, अने मरी गया पछी
पण तोल्यो; त्यारे जीव नीकली गयो छतां भारमां कांई फेर पड्यो नही तेनुं शु
कारण होवु जोये ?

गुरुः– जेम खाली मशक तथा पवनथी भरेली मशक तोली जोतां वजनमां
फेरफार थतो नथी. तेम जीव वायुरूप होवाथी ते शरीरमांथी नीकली गया प
भी कांइ तोलमां फेर पडतो नथी.

राजा – बालक अने यौवनना शरीरमां फेर छे पण जीवमां कांई फेर नथी
बन्ने वाणी सरखी बोले छे ने तेनुं शब्द पणे कानमां सरखी रीते स्वर जाय छे.;
तेम छतां उपयोग सरखो केम थतो नथी? युवान जे क्रिया करी शके छे ते बाल
कथी थती नथी तेनुं कारण शुं ते कहो.

गुरु – जेम जूनुं धनुष्य होय तेथी वाणनो उपयोग जुदी रीते थाय छे ने न
ुं धनुष्य होय तो तेथी वाणनो उपयोग जुदी रीते थाय छे; धनुष्यमां फेर होवा
ी वाणनी क्रियामां फेर पडे छे. तेम बालक अने युवानना शरीरमां फेर होवा
ी जीवनी क्रिया सरखी थाय नही एटले बल वीर्य प्रमुखमां पण फेर फारथाय छे.

राजा –युवान अने वृद्ध माणशना शरीरमां जीव सरखो छतां युवाननी पठे
. केम भार उपाडी शकतो नथी?

ुरु –जेम कावडवडे भार उपाडनारो पुरुष सारी नवी कावड होय तो वधा
र उपाडी शके छे, ने जूनी कावड होय तो कांईक थोडो भार उपाडी शके
म जीव तो तेज छे पण युवान शरीर होय तो वधारे भार उपाडी शके, ने
रीर थाय तो थोडो भार उपाडी शके छे.

ा.–एक चोरने मारीने तेना अनेक खंड कीधां, पण जीव तथा जीवना
ठेकाणुं कोईमां आव्युं नही, माटे जीव कोई छेज नही

–जेम काष्टमा अग्नि रही छे, तेम शरीरमा जीव रह्यो छे, ते देखाय केम?
मा अग्नि देखाय तो शरीरमां जीव देखाय कापीआरो हमेश लाकडा

कापे छे पण तेने अग्नि कोई वखते पण दीठामां आवती नथी ने ते अग्नि देवानु ठेकाणु पण दीठामां आवतु नथी तेम जाणी लेवु

राजा –मने प्रत्यक्ष जीव देखाडी आपो के जेथी हु जीवने जाणु

गुरु –तमे बादर वायु कायना जीवने जोई शकशो के? तेने पण जो शो नही तो जे अरूपी जीव छे तेने केम जोई शकशो?

राजा –हाथीमा अने कीडीमा जीव केम सरखो होय छे?

गुरु –हाथीनु तथा कीडीनुं शरीर मोहोटु नानु छे, पण जीवमा अधिक ता नथी जीव बन्नेमा सरखो छे

राजा – लोकमां जीव अने जड एक क्षेत्र अवगाही निरतरपणे केम रह्या छे?

गुरु – जेम दूधनी भरेली कडाईमा साकर, एलची, अने केशर नाखी ते केम समाई जाय छे? दूधशुद्धां चारे वस्तु एक क्षेत्र अवगाही निरतर केम रहे छे? एकज ठेकाणे चारे वस्तु अभिन्न भावे रहेली छे एना वर्ण रस, फरश निरतर निराबाधपणे छे तेम जीव अने जड जगतमा निरतर क्षेत्र अवगाही निराबाधपणे रह्या छे

३५ नास्तिक – सर्व लोकमा जीव भरपूर छे त्यारे देखाता केम नथी?

आस्तिक – जेम सूक्ष्म जीव सर्वत्र पूर्ण छे ते ज्यारे दिवसे तडका पडे घरमाना कोई छिद्रद्वारायें थोडोएक तडको घरमा आवे छे ते तडका तरफ केटला एक परमाणु जेवा दीठामा आवे छे, ते बधा सूक्ष्म जीवो छे ते मा तडको आवे त्यारे उडता देखाय छे, बीजी रीते देखाता नथी तेम जीव ने जड सर्व लोकमा भरपूर छता छद्मस्थने देखाय नही, किंतु केवल ज्ञानरूप तपना योगे देखायछे अर्थात् केवल ज्ञानीज जाणी शकेछे

३६ नास्तिक – चद्र, सूर्य, छाया, आतप, माता, पिता, स्वर्ग, नरक जड, घट, पट, स्तभ, तथा कुभ प्रमुख सर्व भ्रममात्र छे, वस्तुरूप कईजनथी

आस्तिक – जेम अधकारमा आकाशनेविषे कोई पुरुष चाल्यो जाय, त बाधपणे जई शके छे, पण वचमा जो भित आवीजाय तो आगल चलातु ने ते कार्यमा अपराबाधक थायछे. ए प्रत्यक्ष भ्रम के सत्यछे? तथा कोई मारे, कूटे, दानदिये, ए वस्तु गल्ये सत्यछे, असत्य अने भ्रमजाल तो सम सकल्पने कहिये

२७ नास्तिक.—सर्व जगतमां एकज ईश्वर छे. ईश्वर विना बीजुं कांई नथी,
जाणवुं जोये.

आस्तिकः— जो सर्व जगतमां एक ईश्वर होय, तो दाननो लेनार पण ईश्व
अने लेनार पण ईश्वर कहिये. लेनार अने देनारमां कांई भेद थयो नही. ई
श्वरे पोते पोतानी पाशेथी दान लिधुं त्यारे दान दीधानुं पुण्य कोने थयुं ? एथी
दान तथा पुण्य व्यर्थ गयां. वली मारनार पण ईश्वर ने मरनार पण ईश्वर कहेवो
जोये; तो ईश्वरे ईश्वरने मार्यो तेनुं पाप कोने लाग्युं ? धणी पण ईश्वर ने चोर
पण ईश्वर; तो ईश्वरनो माल ईश्वरे चोर्यो कहेवाय, त्यारे चोरीनी तपाश शासा
रु करवी जोयेछे ? पुण्ये करी स्वर्गमां गयो ते पण ईश्वर, तथा पापे करी नरकमां
गयो ते पण ईश्वर; त्यारे स्वर्गमा पुण्यवान जाय अने नरकमां पापी जाय; एम क
हेवुं व्यर्थ छे. ए उपरथी तमारुं बोलवुं असंभवित छे. जगतमां एकज ईश्वर छे
एम जे कहेवुं ते असत्य छे. घटघटप्रत्ये जीव जुदा जुदा छे, अने तेओनी कर
णी पण जुदी जुदी जाणवी.

२८ नास्तिक.—घट पटादिक सर्व पदार्थोमां ईश्वर एकज छे. एम जाणवुं जोये.

आस्तिक.— जो सर्वमां एक ईश्वर होय तो जात, कुल, राजा, तथा रंका
नी भिन्नता कही न जोये; कोई श्रेष्ठ तथा भ्रष्ट कहेवाय नही. एक पुण्य करे ते
फल सर्वने थवुं जोये, तेमज कोईएक पाप करे तेनुं फल पण सर्वने थवुं जो
ये; एक भोजन कर्याथी सर्वनी तृप्ति थवी जोये; एक नरकगामी थयाथी सघला न
रकमां जवाजोये; एक स्वर्गगामी थयाथी सर्व स्वर्गमां जवा जोये; एकनो भोग सर्वने
थयो जोये, कर्म जुदा जुदां भोगववां न जोये; तेम तो देखातुं नथी, जे करे ते
भोगवे एवुं स्पष्ट देखाय छे. त्यारे सर्वमां एक ईश्वर केम कहेवाय? माटे एम क
हेवुं समीचीन नथी; वली जीव जुदा जुदा छे, एम कहेवुं योग्य छे.

नास्तिकः—स्वर्ग, नरक, पुण्य, पाप, चंद्र, सूर्य, नदी, समुद्र, द्वीप, नर,
नगर, ग्राम, तथा माता, पिता इत्यादिक चोराशी लक्ष जीवयोनि प्रमु
असत्य छे, एओमा सत्य पदार्थ कोई नथी.

आस्तिकः—सर्व पदार्थ सत्य छे. जलनी बुंद पण असत्य कहेवाय नही, तो
पदार्थो केम असत्य कहेवाय? जे वस्तु थाय त्यारे थई कहेवाय

समये पोताना कारण पंच महाभूतोमां लीन थशे, ने पच महाभूतो ईश्वरमां लीन थशे

आस्तिक –जो एम होय तो ईश्वर जड मिश्रित थाय अने ते समल तथा निर्मल ए बे अवस्थावालो कहेवाशे त्यारे केवल ज्योतिस्वरूपपणु क्या गयु? जे पच महाभूतोथकी जगतनी उत्पत्ति थई कहोछो ते तो सदा शाश्वत छे ते ओमा पृथ्वी, आप, तेज तथा वायु, ए चारे भूतो पोतपोतानी क्रिया करेछे, केम के, वनस्पति अने जगम त्रसनी उत्पत्ति करेछे ते क्रियाविना थाय नही एवी रीते तो जीवनी छ खान शाश्वत सदा काल छे, त्यारे प्रलय ते शानो थया? जो एम कहेशो, के पच महाभूतो जगत विनिर्मित क्रिया करता नथी, त्यारे ता ते भूतद्रव्यरूप कथन मात्रज ठरशे अने हरेक वस्तु पोतपोताना गुणविना रहे नही एवो नियम छे वली जो कहेशो के भूत तो अनत कालना छे त्यारे ता ससार पण अनत कालनो ठरशे तेनी उत्पत्ति तथा प्रलय केम कहेवाय? ए तो जेम छे तेम छे वली ईश्वर मनसा वाचा कर्मणा करि रहित छे, अने एक थी अनेक थाउ एवी मननी इच्छा थई त्यारे जगतनी उत्पत्ति करी ए बे वाक्यो नो परस्पर विरोध छे, केम के, प्रथम वाक्यप्रमाणे ईश्वर इच्छारहित ठरे छे, ने बीजा वाक्यमा इच्छासहित कहो छो, एवो पूर्वापर वचनविरोध होवाथी तमारु बोलवु सर्व असमीचीन छे

४७ नास्तिक – सर्व वस्तुनो ईश्वर अधिष्ठान छे ईश्वरनी इच्छाथी कृत तथा अकृत सर्व थायछे

आस्तिक – जो एमछे तो घट ते पट केम थतो नथी? पण तेम थाय नही, केमके, घटनु कारण मृत्तिकानु पिण्ड छे, तेमाथी घटज थायछे पण पटादि कार्य नथी थता तेमज पटनु कारण तंतु छे, तेथकी पटज थायछे, पण घटादि क बीजा कार्यनी उत्पत्ति थायनही जो एम थतु न होय तो कारणथी कार्य थायछे, ए प्रवृत्ति मिथ्या थाय माटे ईश्वरना अधिष्ठितपणातले ईश्वरनी इच्छाथी कृत तथा अकृत सर्व थायछे ए तमारु कहेवु सर्व व्यर्थ छे

४८ नास्तिक – जीवने भवातर थाय छे खरु, पण वेदनो छेद थतो नथी पुरुष वेद ते स्त्री वेद न थाय, स्त्रीवेद ते पुरुषवेद न थाय, तेम स्त्री तथा पुरुष ते नपुंसक वेद न थाय, अने नपुसकवेद ते पुरुष तथा स्त्री वेद न थाय एम जाणवु जोये

आस्तिक –पुद्गलना परिणामनो नियम नथी एना पुन पुन रूपातर थया क

छे. मात्र अवस्तुपणुं पामता नथी, वस्तुपणे गमे ते रूपे थई जायछे. जेम भेंस ना शिंगमाथी केल थायछे; काशयकी सेरडी थायछे, माखीना हिंगारथकी कद लीनी नाली थायछे. एवी रीते कर्मना परिणामे गत्यंतर थायछे. आगामिक भव नेविषे कायवेद पलटाईने ते नवा भवरूपे परिणमेछे. जेम सोनीना योगे सुव र्ण नाना प्रकारना आकाररूपे परिणामने पामेछे. तेम जीव कर्मना योगे नाना विध गतिओ पामेछे. ते तो रह्यु, आ भवमां पण एकसरखी स्थिति रहेती न थी. जेम के, राजा ते रंक थई जायछे, ने, रंक ते राजा बनी जायछे, सुखी ते दु खी, तथा दु:खी ते सुखवान थई जायछे. इत्यादिक आ भवमां पण पर्याय पलटाई जायछे; तो भवांतरमां केम एकरूपे रहे? कर्मना बंध सादि छे, माटे जेवो कर्म नो उदय तेवा फलनी प्राप्ति थायछे, एविषे कोई नियम थई शके नही. गमे ते वेद बदली ने गमे ते वेद कर्मना योगे थायछे एम जाणवुं.

४९ नास्तिकः—एम कह्यु छे के ब्रह्माना मुखमांथी ब्राह्मणो उत्पन्न थया, भुज थकी क्षत्रिय थया, तथा जंघा थकी वैश्य थया, माटे ए त्रणे वर्ण उत्तम छे, अ ने पादथकी शूद्र उत्पन्न थया माटे अधम छे, एम जाणवुं.

आस्तिकः— ए वात संभवित नथी. जुवो के, उंबराना वृक्षमां पेड, डाल, तथा पत्रनेविषे सरखां फल लागेछे. ते सर्व फलोनुं रूप सरखुं होयछे; तथा ते ओमां रस पण सरखोज होयछे. तेओमां कोई प्रकारे उत्तम तथा अधमता क हेवाय नही. तेमज ब्रह्माना शरीर थकी उत्पन्न थया जे चार वर्ण, ते सर्व चेतन रूप होवाथी सर्व जीव सरखा जाणवा. उत्तम मध्यम वगेरे सर्व लौकिक कार्य थकी कहेवायछे. पण चेतनपणे तो सर्व सरखा छे. एना उपर एक दृष्टांत कहुं छुं. चारे वर्णना मनुष्य एक तलावने कांठे बेशीने पाणी पिये छे; तेथी कोई वट लतो नथी. पण ते तलावमांथी पाणी भरीने पोतपोताना वासणोमां लीधा पछी हलका वर्णना वासणनुं पाणी उंचा वरणवालो माणस पीए तो वटले छे. फरी चारे वर्णना भरेला पाणीना वासणो मानुं पाणी ते तलावमां नाखीने पी तां कोई वटलतुं नथी तेनुं कारण शुं? माटे पाणीमां वटलवापणुं नथी. ने वा सण तो सर्वनां सरखा छे. माटे वटलवुं ए मननी मानीता छे; अने एवी लोक म र्यादा छे. ज्या सुधी मननो मिथ्याभाव छे, त्यां सुधी भिन्न पणुं छे एम जाणवुं.

५० नास्तिकः— समदृष्टीने विषे मिथ्याभाव होतो नथी, तेम छतां ते भिन्न भाव केम राखेछे?

आस्तिक –लोक मर्यादा लोपवी नही ए नीति छे तेनो लोप करवो नही जे कार्यनी जगत निंदा करे ते कार्य करवो नही एवु श्रेष्टोनु वचन छे तेना पण लोप करवो नही तेथीज समदृष्टि पण तेवु आचरण करे छे पण मनयकी म दृष्टिने काइ नथी

५१ नास्तिक – सर्व कार्यनो कर्ता ईश्वर छे, एम मानवु जोये के नही?

आस्तिक – एम मानवु नही जोये ए वचन प्रलाप छे ईश्वरपिणे कर्तृत्व होयज नही घट, पट, कृषि, सग्राम, खान, पान, दान, मान, स्नान, तप क्रिया, विनय तथा व्यावच इत्यादिक सर्व पदार्थोना कारण काल, स्वभाव, नियत, पूर्वकृत कर्म, तथा पराक्रम ए पाच छे जेम के, तंतुना पुजमाथी पटनी उत्पत्ति थवानो जे समय ते काल समजवो, ततुना पुजने पटनी उत्पत्ति करवानी योग्यता ते स्वभाव जाणवो, ततुना पुजमाथी पटनी उत्पत्तिनु जे निमित्त थवु ते पूर्व कर्म समजवु, अने ततुना पुजमाथी पटनी उत्पत्ति करवानो जे उद्यम करवो ते पराक्रम जाणवो, ए पाचमाथी एक ओछु होय तो वस्तुनी उत्पत्ति थई शके नही ए पाचनां समुदायथी घटपटादिक सर्व कार्योनी उत्पत्ति थायछे, एज्युक्त मत जाणवु

५२ नास्तिक – जो कुछ होता है, सो अल्लाहुतालाके हुकमसे होता है, और किसीका किया कुछ होता नही, यही बात रास्त है

आस्तिक – जो ऐसे होवे, तो अल्लाहुतालाने पैदा किये हुये, इमामे हसन और हुसन, काफिरोंके हातसे कैसे मारे गये? वे तो खुदाके प्यारे बदे थे, तिनकू काफिरोने मारे, ये वडी अजायवकी बात है तिनकू बचानेके वास्ते खुदा नाकावत था? इमाम किसीके गुनेहगारभी नही थे, वे क्यू मारे गये? इसवास्ते जो होता है, सो तकदीरसे होता है जो जैसा करता है, सो तैसा पावता है तामे अल्लाहुतालाका कुछ वास्ता नही है यही बात रास्त है

५३ नास्तिक – अल्लाहुतालाने इमामोंका दिल देखनेके वास्ते आजाब दियाथा

आस्तिक – आजाब दिये शिवाय तिनोंके दिलकी वात खुदा नही जाणता था! जो कहोगे की नही जाणताथा, तो खुदामें खुदापना क्या रहा! खुदा तो सब जानता है, ऐसे तुमारे कुरानेशरीफमें कहा है एसें हाके भी इमामोंकू मारनेकी दयानत जो काफरोंने करीथी सो खुदा जानके भी कैसे चुप रहा! इसवास्ते ये बात भी गलत है

५४ नास्तिकः– आदमी मरगये बाद जीकूं फिरस्त लेजाते है ये बात तो सच्च है की नही ?

आस्तिकः– इस बातकूं कौन जूठ कहता है ? लेकीन समजमें कुछ फरक है. तुम कहेते हो की कीयामततक जीकूं एक ठिकानेमें रखते हैं, पीछे खुदाके पाश ले जाके इन्साफ करवाते हे; ऐसे नही होवें है. लेकीन उसीवख्त जी अपनी त गदीरके जिये अछा या बुरा फल पावता है. तुमजी सुख, दुःख, जेहेस्त औा दोज क तो मानते हो ! सो जैसी जीने करनी करी होवें तेसी गति उसकु मलती हैं.

५५ नास्तिकः– अल्लाहुताळाने औसे फरमाया हे की जो किसीकूं इजा देता हे सो मारने लायक है.

आस्तिक.– कबू मावाप छोकरेकूं इजा देते हैं, आ कबु छोकरा मावापकूं इजा देता हे; कबू पीर मुर्विदकूं इजा देता है, औा कबू मुर्पिद पीरकूं इजा देता है; कबू नोकर खाविंदकूं इजा देता हे, कबू खाविद नोकरकूं इजा देताहै; ऐसे खुदाकी खलकतमें जहांतके जी है, वे सब इजा देनेवाले होनेते जो सब मारने लायक हो वें तो खैर महिर कैसे रहेगी ! औा रहम करने लायक कोई जी नही रहेगां थोर इमामोकूं जब काफरोने इजा दी, तब तिनोकूं कायके वास्ते इमामोने मारे नही इस वास्ते जो होवें दे सो तगदिरसे होवे एसे जानना चाहिये.

५६ नास्तिकः–मांसाआहारी पापिष्ट कहे छे. आ दुनीआमां जलचर, स्थलचर, तथा खेचर प्रमुख जे नाना प्रकारना जीव छे, तेओने बेशक मारी नाखवा, अने तेओनुं मांस जक्षण करवुं. एम अमने साहेबे फरमाव्युं छे, ते प्रमाणे करवामां शुं गुनाह तथा पाप छे ?

आस्तिकः–तमारा कह्या प्रमाणे जीवने मारवुं ए खुदानो हुकम छे, ते कोई ए फेरववो जोये नही. जो फेरवीए तो गुनेहगार ठरीए, एम सिद्ध थायछे ; त्यारे कोई वाघ अथवा सिंह प्रमुख मनुष्यनो आहार करनार जीव, तमने मारवा आ वेछे, तेथी मरीने तमे केम नाशी जाओछो ? अने ते प्राणीने नाना प्रकारना ह थीआर वगैरेनी सहायता वडे केम मारवा तैयार थाओछो ? अने जो ते जीव तमारा दावमा आवी जाए तो केम मारीनाखो छो ? जेम खुदाए तमने जीव मा रवाने फरमाव्युं छे तेम तेओने पण मनुष्य मारवाने फरमाव्युं छे ! ते प्रमाणे तेओ पोतानुं कृत्य करेछे ; तेओने मारवुं लायक नथी. जो तेओने मारवानुं त मने लायक दीशतुं होय, तो जे जीवोने तमे मारोछो, तेओए अथवा तेओने वा

स्ते कोई वीजा प्राणीए तमने मारवु पण नालायक नथी, लायकज छे मारे ... वाघ वगेरे प्राणीओ जीव घातक होवाथी मारवा योग्य छे तेम तमे पण ... व घातक होवाथी मारवा योग्य छो एम तमारे कबूल करवु जोइशे जा ... नही करशो, तो खुदाना गुनेहगार ठरशो माटे हे महामदीयन मुसलमीनो ... जीव मारवामां खुदानोहुकम होयज नही जो एम होय तो खुदा रहम दिलना ... के खुदा तो रहमदिल छे, एवु तमारा रसूलिल्लाए कुरानेशरीफमा फरमाव्यु छे ... वार आवशे ए उपरथी एवु जणाय छे के, कोई एक पुरुषने कोई कारणने ... ते अचानक मासनो आहार मली गयाथी, तेने तेनो स्वाद लागो तेथी, व्यसन ... गयु, ने पछी लोकापवादसारु खुदाए फरमाव्यु छे, एम कहीने बचारा खुदाने ... लेख्यो जणाय छे तेमां केटलो गुनाह छे। एनो विचारतो करो। ते प्राणीओने ... ताने खुदा फरमावे त्यारे बीजी अन्नादिक वस्तुओ पेदा शावास्ते करे? ए उपर ... साफ जणायछे के, अन्नादिक वस्तु खावायोग्य छे, पण मांस खावायोग्य नथी ... म छतां जे जीनना स्वादने अर्थे खायछे ते राक्षसतुल्य जाणवा

वळी मुसलमीन प्रमुखने बीजु युक्तियी समजावे छे के, तमारा किताबमां ... घने पाक वस्तु कहीने, अने पिशाबने नापाक वस्तु कहीने, पाक वस्तुथी ... दाग थायछे, ते पाक कहेवायछे, अने नापाक वस्तुथी जे पेदाश थायछे त ... कहेवायछे जेम के, अन्न वगेरे पदार्थो जे पाणी थी पेदा थायछे, ते पाक छे ... पिशाबथी जे कीटकादिक पेदा थायछे, ते नापाक छे एवु तमे पण मानो छो ... तेम मानता नथी केमके मांसाहार करो छो जुओके प्राणिमात्र पिशावनी ... छे ते पिशाव ज्यारे नापाक त्यारे तेथी पेदा थयेला प्राणीओ केम पाक ... तेना मांसने तमे पाक मानो छो, ए केटली बेवकूफी छे वारु ... नतो पिशावने नापाक कहेवाशे नही, ने जो पिशावने नापाक मानशो ... गनशो नही जेवु कारण तेवो कार्य एवो दुनीयामा नियम छे ... मांस छे, त्यारे तेनो आहार करवाथी दोजकमा गयाविना ... मांस नक्कुण मूकी द्यो अने पाक पाणीना ... वगेरे अनेक स्वादिष्ट पदार्थोनो आहार करवा ... मनी आदत पडीगई छे कयु छे के तहाड ... री आदत हमणा जनार नथी पण ... फाटीने पडाना ...

७८ नास्तिक — कोइ वेदधर्मी प्रश्न करे छे के, तमारा जैनमतमा जीवना दिकनेविषे केवीरीते वर्णन करेलुछे ? तेने उत्तर दिये छे के, सर्वज्ञ केव... कह्यु छे —सर्व लोकनेविषे धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय, ... स्तिकाय तथा पुद्गलास्तिकाय ए छ द्रव्य भरपूर छे ए छए द्रव्य पोतपोताना गुण तथ पर्याये करी पूर्ण छे सदा भावरूप छे जगतनी स्थिति जेम वर्तमान कालमां छे ... मज भूत कालमा हती, अने भविष्य कालमा पण एवी रीतेज जाणवी ते म... जीव अने पुद्गल अनंत काल लोलुपभूत छे एटले जेम क्षीर तथा पाणी ... मृत्तिका तथा धातुनुं मिश्रण थयाथी एक रूप बनी जाय छे तेम जीव तथ... ... एकरूपे रहे छे समय समयने विषे नवां कर्म जीवबांधे छे अने समय... समयने विषे पूर्व कर्म निर्जरीने तूटी पण जाय छे कर्मोनी उत्पत्ति तथा नाश... ईश्वरनु कांइ कारण पणु नथी ईश्वर तो अकर्त्ता छे, तेने विषे कर्ता पणुं ... नही माटे ईश्वर कांईनु कारण नथी काल, स्वभाव, नियत, पूर्व कर्म, तथा ... ... ए पांच कारणो उत्पत्तिना कह्या छे एणे करीनेज पुण्य पाप जन्य ... गे ... विषे गमनागमन थाय छे अने दुष्कर्मां जे नरक, तिर्यंच, मनुष्य ... या ... नी शारीर गतिओ कही छे ते प्रमाणे भवपरंपराने पामेछे ... ... शुभाशुभ कर्म भोगवे छे ते ते भवने विषे ज्ञानावरणादि ... छे कर्मने अनुसारे वर्ते छे जेम माटीनी भरेली तूंबी जलमां नाखीए तो ते ... ... भीने बूडी जाय छे पछी जेम जेम ते माटी, तेमांथी आती थती ... ... तेम ते तूंबी उपर आवती जाय छे ज्यारे बधी माटी नीकली जाय त्यारे ... ... तरती रहे छे पण पाणीथी उपर जाय नही तेवी रीते जीव पण ... ... अधोगतिने पामे छे पछी जेम जेम ते कर्मनी न्यूनता ... ... तेम ते ऊर्ध्व गतिने पामतो जाय छे, ज्यारे बधा कर्मोना नाश ... ... त्यारे ते जीव लोकाग्रने विषे प्राप्त थाय छे, पण तेनी उपर ... ... करतो नथी, जेवी रीते तूंबी जलना योगे उची आवे छे, तेम जीव ... ... योगे ... ऊर्ध्व गति पामेछे

... प्रश्न करे छे के, मनुष्य शाता वनथी सात ... सुखी ... ... मां ... गुणठाणे अयोगी थाय छे ... उत्तर दिये छे ... ... तूटे छे त पूरे भोगव्या वगरथी थानेछे तेन ... ... नथी ज्यारे मनुष्यमांथी थाण तूटे छे, न ...

यमिन ठेकाणे पहोंतो एम समजवुं. ए विषय उपर बीजा पण त्रण दृष्टांतो छे. कुंभकारनो चक्र. अग्निनो धूमाडो, तथा एरंडीओ ए चार दृष्टांत वडे जाणी लेवुं.

५ए नास्तिक.—कर्मक्षय थया पछी जीव अलोकनेविषे केम जतो नथी! जो जायतो वचमां तेने कोण रोकनारो छे?

आस्तिकः—चलन शक्तिने सहाय आपनारुं जे धर्मास्तिकाय द्रव्य, तेनुं त्यां आलंबन नथी. धर्मास्तिकाय द्रव्य लोक प्रमाणेज छे. ते थकी अधिक नथी. तेथी अलोकमां जवाने जीव तथा पुद्गलनी गति थती नथी.

६० नास्तिकः—कर्मोनो क्षय करीने सिद्धावस्थाने पामेलां जे सिद्ध जीवो ते सिद्धक्षेत्र समश्रेणीए जायछे. पण स्थानांतरनेविषे जता नथी तेनुं कारण शु?

आस्तिक:—ते समयनेविषे कोई प्रेरक नथी प्रेरणाविना चक्रभ्रमण थाय नही, तेथी सिद्धना जीवो समश्रेणीए सिद्धसिला उपर जायछे.

६१ नास्तिकः—सिद्धने शरीरनो अभाव थायछे. त्यारे अवगाहना केम कही छे?

आस्तिकः—जेम टारानुं वासण बनाववाने अर्थे प्रथम तेना जेवो मेणनो आकार करवो पडेछे. तेमां ते रस ओल्याथी ते धातुनो तेवो आकार थायछे. ते वासण मेणथी तूटूं कख्या पछी पण मेणनो आकार थायछे. कदाच मेण गाली नाखीए तो पण ते आकारपणुं जतु नथी, केमके वासणनो आकार जे कायम रहेछे. ते पण ते मेणना आकार जेवोज छे, तेथी आकारपणुं कायम रहेछे. तेम जीव जे शरीराकारे थयोछे. ते शरीरनो अभाव थया पछी पण सिद्ध पुरुषनो आत्मा ते शरीरनी अवगाहनारूपे रहेछे. एटले आउखाने अंते जेवो सिद्धना शरीरनो आकार रहेछे. तेवोज जीवना प्रदेशोनो अरूपी आकार रहेछे.

६२ नास्तिकः—जेम जलमां जल मले ते एकरूपे थई जायछे. भिन्नता देखाती नथी. तेम अनंत सिद्ध एकरूपे थई रहेछे के चेतन द्रव्यपणुं जुदुं जुदुं छे.

आस्तिक.— ज्यारे जलना बिंदुओ मलीने एक जलनो पिंम थाय; त्यारे एक ज जल कहेवायछे. पण ज्यारे जलना बिंदु जुदा जुदा होय त्यारे बिंदु कहेवायछे. एक जल कहेवाय नही. तेम सिद्ध पण सर्व एकज छे: परंतु चेतन द्रव्ये करी सर्व भिन्न भिन्न छे. ते उपर दृष्टांत: जेम अनेक शीपीओथकी उत्पन्न थएला अनेक मोतीओ जुदा जुदा होयछे. तेओमांना केटलाएक लईने एक मोटो टगलो करिये. ने पछी तेओ विषे विचार करिये के ए टगलामां एकता अनेकता शुं छे? तो तरत जणाशे के ते मोतीओ उज्वलता गुणरूपे सर्व एक छे. पण

॥ ॐ श्री जिनाय नम ॥

अथ श्रीयशोविजयजी उपाध्यायकृत सम्यक्तना सडसठ बोलनी सज्झाय प्रारंभ ॥

॥ दोहा ॥ ॥ सुकृत वल्लिकादंबिनी । समरी सरसति मात ॥ समकित
सठ बोलनी । कहिशू मधुरी वात ॥ १ ॥ समकित दायक गुरुतणो ।
न थाय ॥ भव कोडाकोडे करी । करतां सर्व उपाय ॥ २ ॥ दानादिक कि
रिये । समकित विण शिवशर्म ॥ तेमाटे समकित वडूं । जाणो प्रवचन मर्म
दर्शन मोह विनाशथी । जे निर्मल गुणगण ॥ ते निश्चय समकित कह्या । तेहना
ए अहिठाण ॥ ४ ॥ ॥ ढाल ॥ देइ देइ दरसण आपणू, एदेशी ॥ ॥ चउ सद्दह
तिलिंग छे । दशविध विनय विचारोरे ॥ त्रिण शुद्धि पण दूषण । आठ ॥
धारोरे॥ ५॥त्रूटक॥प्रभाविक अड पंच भूषण । पंच लक्षण जाणिये॥ षट् जयणा षट्
आगार भावन । छविहा मन आणियें ॥ ५ ॥ षट ठाण समकित तणा सडसठ ।
भेद एह उदार ए ॥ एहनो तत्व विचार करता । लहीजे भवपार ए ॥६॥ ढाल॥
चहु विह सद्दहणा तिहा । जीवादिक परमत्थोरे ॥ प्रवचनमा जे भाखिया । लीजे ते
नो अर्थोरे ॥ ७ ॥ त्रूटक ॥ तेहनो अर्थ विचार करिये । प्रथम सद्दहणा खरी ॥ बीजी
सद्दहणा तेहना जे । जाण मुनिगुण जवहरी ॥ सवेग रग तरग झीले । मार्ग शुध
कहे बुधा ॥ तेहनी सेवा कीजिये जिम । पीजिये समता सुधा ॥ ८ ॥ ढाल ॥ सम
कित जेणे ग्रही वमिउं । निन्हव ने अहछंदारे ॥ पासत्थाने कुशीलिया ते । वे
षविडंबक मंदारे ॥ ९ ॥ त्रूटक ॥ मदा अनाणी दूर छंडो । त्रीजी सद्दहणा ग्रही ॥ पर
दर्शनीनो संग तजिये । चोथी सद्दहणा कही ॥ हीणातणो जे संग न तजे ।
तेहनो गुण नवि रहे ॥ ज्यू जलधि जलमा भल्यू गंगा । नीर लूणपणू लहे ॥ १० ॥
॥ ढाल ॥ कपूर होवे अति ऊजलू रे, एदेशी ॥ ॥ त्रण लिंग समकित तणारे ।
पहिलो श्रुतअभिलाष ॥ जेहथि श्रोता रस लहेरे । जेवो साकर द्राखरे। प्राणी, धरिये
समकित रंग । जिम लहिये सुख अभंग रे । प्राणी, टेक ॥ ११ ॥ तरुण सुखी
स्त्री परिवर्योरे चतुर सुणे सुरगीत ॥ तेहथि रागे अति घणो रे । धर्म सुण्यानी री
त रे । प्राणी० ॥ १२ ॥ भूख्यो अटवी ऊतर्यो रे । जिम द्विज घेवर चंग ॥ इछे
तिम जे धर्मने रे । तेहिज बीजू लिंग रे । प्राणी० ॥ १३ ॥ वैयावच्च गुरु देवनू

े । त्रीजुं लिंग उदार ॥ विद्या साधक तणि परे रे । आलस नविय लगार रे ।
ाणी० ॥१४॥ ॥ ढाल ॥ प्रथम गोवालातणे नवेजी, ए देशी ॥ ॥ अरिहंत ते जि
' विचरता जी ॥ कर्म खपी हुआ सिद्ध ॥ चेइय जिण पडिमा कही जी । सूत्र
रद्धांत प्रसिद्ध । चतुर नर, समजो विनय प्रकार । जिम लहिये समकित सार ।
तुर० ॥ १५ ॥ धर्म खिमादिक नाखेओ जी । साधु तेहना गेह ॥ आचारय आ
ारना जी । दायक नायक जेह । चतुर० ॥ १६ ॥ उपाध्याय ते शिष्यने जी ।
त्र नणावण हार ॥ प्रवचन संघ वखाणिये जी । दरसण समकित सार । च
ुर० ॥ १७ ॥ नगति बाह्य प्रतिपत्तिथी जी । हृदय प्रेम बहुमान ॥ गुण थुति
प्रवगुण ढांकवा जी । आशातननी हाण । चतुर० ॥ १८ ॥ पांच नेद ए दश त
णो जी । विनय करे अनुकूल ॥ सीचे तेह सुधा रसें जी । धर्म वृक्षनुं मूल । चतुर०॥
।१९॥ ढाल ॥ ॥ धोबीडा तूं धोए मननूं धोतीयूं रे ॥ ॥ एदेशी ॥ ॥ त्रण शुद्धि सम
केततणी रे । तिहां पहिली मन शुद्धि रे ॥ श्री जिनने जिनमत विना रे । कूड स
कल ए वुद्धि रे ॥ चतुर विचारो चित्तमां रे । टेक ॥ २० ॥ जिन नगतें जे नवि थयुं
े । तेवीजाथि नवि थाय रे ॥ एवुं जे मुख नाखिये रे । ते वचन शुद्धि कहिवाय रे । च
ुर० ॥ २१ ॥ छेद्यो नेद्यो वेदना रे । जे सहतो अनेक प्रकारे ॥ जिण विण पर सुर
रवि नमे रे । तेहनी काया शुद्ध उदाररे । चतुर० ॥ २२ ॥ ॥ ढाल ॥ मुनि जन मारगनी,
ए देशी ॥ ॥ समकित दूषण परिहरो । तेमां पहिली छे शंका रे ॥ ते जिन वचन
मां मत करो ॥ जेहने समनृप रंका रे । समकित दूषण परि हरो ॥ टेक ॥ २३ ॥
कंखा कुमतनी वाछना । बीजूं दूषण तजिये ॥ पामी सुरतरु परगडो । किमबाकल
नजिये ॥ समकित० ॥ २४ ॥ संशय धर्मना फलतणो । वितिगिछा नामे ॥ त्रीजुं दूषण
परिहरो । निज शुन परिणामे ॥ समकित० ॥ २५ ॥ मिथ्यामति गुण वर्णनो ।
टालो चोथो दोष ॥ उन्मारगि थुणतां हुवे । उनमारग पोष ॥ समकित० ॥ २६ ॥
पांचमो दोष मिथ्यामती । परिचय नवि कीजे ॥ इम शुन मति अरविंदनी । न
ली वासना लीजे ॥ समकित० ॥ २७ ॥ ॥ ढाल ॥ नोलिडा हंसारे विषय न ग
चीये, ए देशी ॥ आठ प्रनाविक प्रवचनना कह्या । पावयणी धुरि जाण ॥ व
र्तमान श्रुतना जे अर्थनो । पार लहे गुण खाण ॥ धन धन शासन मंडन मु
निवरा । टेक० ॥ २८ ॥ धर्म कथी ते बीजो जाणिये । नदिषेण परि जेह ॥ नि
ज उपदेशेरे रंजे लोकने । नंजे हृदय संदेह । धन धन० ॥ २९ ॥ वादी त्रीजोरे त
र्क निपुण नण्यो । मल्लवादी परि जेह ॥ राजछारे जयकमला वरे । गाजंतो जिम

मेह । धन धन० ॥ ३० ॥ नद्रबाहु पणि जेह निमित्त कहे । परमत जीपण
ज ॥ तेह निमित्तीरे चोथो जाणिये । श्री जिनशासन राज । धन धन०॥ ३१
तप गुण ऊपर रोपे धर्मने । गोपे नवि जिन आण ॥ आश्रव लोपेरे न
दा । पचम तपसी जाण । धन धन० ॥ ३२ ॥ ठगो विद्यारे मत्र तणो बलि
श्रीवयर मुणिद ॥ सिद्ध सातमोरे अजन योगथी । जिम कालिक मुनि चद । धन
धन० ॥ ३३ ॥ काव्य सुधारस मधुर अर्थ नर्या । धर्म हेतु करि जेह ॥ सिद्धसे
परि नरपति रीझवे । अष्टम वर कवि तेह । धन धन० ॥ ३४ ॥ जव नवि हावे
नाविक एहवा । तव विधि पूरव अनेक ॥ जात्रा पूजादिक करणी करे । तेह प्रभा
क ठेक । धन धन० ॥ ३५ ॥ढाल॥ सतीय सुनद्रानी । ए देशी ॥ ॥ साहे समकित
जेहथी । सखि जिम आनरणे देह ॥ नूषण पाच ते मन वस्या । सखी मन
स्या । तेमा नही सदेह । मुझ समकित रग अचल होयो । टेक० ॥ ३६ ॥
लु कुशलपणु तिहा । सखी वदन ने पच्चखाण ॥ किरियानो विधि अति घण
सखी आचरे तेह सुजाण । मुझ० ॥ ३७ ॥ बीजू तीरथ सेवना । सखी
तारे जेह ॥ ते गीतारथ मुनिवरा । सखी तेहस् कीजे नेह । मुझ० ॥ ३८
गति करे गुरु देवनी । सखी त्रीजू नूषण होय ॥ किणहि चलाव्यो नवि
सखि चोथु नूषण जोय । मुझ० ॥ ३९ ॥ जिनशासन अनुमोदना । सखी
थी बहु जन हुत ॥ कीजे तेह प्रनावना । सखी पाच नूषणनी खत ।
॥ ४० ॥ ॥ ढाल ॥ इम नवि कीजे हो, ए देशी ॥ ॥ लक्षण पाच
मकित तणा । धुर उपशम अनुकूल । सुगुण नर ॥ अपराधी सू पण
तथकी । चितवियें प्रतिकूल । सुगुण नर । श्री जिननाषित वचन विचारिये
॥ ४१ ॥ सुरनर सुख जे दुःख करि लेखवे । वछे शिवसुख एक ॥ सु०
लक्षण ते अगीकरे । सार सवेग सुटेक । सु० । श्रीजिन० ॥ ४२ ॥ नारक
भनव कनग्यो । तारक जाणिने धर्म । सु० ॥ चाहे निकलवु निवद ते ।
क्षण मर्म । सु० । श्री जिन० ॥ ४३ ॥ द्रव्यथकी दुखियानी ज दया
णानी नार । सु० ॥ चोथु लक्षण अनुकपा कही । निज शक्ते म
सु० श्रीजिन० ४४ ॥ जे जिन नाख्यु ते नहि अन्यथा । एहवा जे
ते आस्तिकता लक्षण पाचमु । करे कुमतिनो ए नग । सु० । श्रीजिन०
॥ ढाल ॥ जिन जिन प्रति वदन दिसे, ए देशी ॥ पर तीर्थी परना सु
त्य ग्रह्यां वलि जेह ॥ वदन प्रमुख तिहा नवि करवु । ते जयणा षट

भविका, समकित यतना कीजे । टेक० ॥ ४६ ॥ वंदन ते कर जोडन कहिये । नमन ते शीश नमावे । दान इष्ट अन्नादिक देवुं । गौरव भगति देखाडे रे । भविका० ॥ ४७ ॥ अनुप्रदान ते तेहने कहिये । वार वार जे दान ॥ दोष कुपात्रे पात्र मतिये । नहि अनुकंपा मान रे । भविका० ॥ ४८ ॥ अण बोलावे जेह नालहे । ते कहिये आलाप ॥ वार वार आलाप जे करवो । ते कहिये संलाप रे । भविका० ॥४९॥ ए जयणाथी समकित दीपे । वलि दीपे व्यवहार ॥ एमां पण कारणथी जयणा । तेना अनेक प्रकार रे । भविका० ॥ ५० ॥ ढाल ॥ ललनानी देशी ॥ शुद्ध धर्मथी नवि चले । अति दृढ गुण आधार ललना ॥ तो पण जे नवि तेहवा । तेहने ए छ आगार । ललना ॥ ५१ ॥ बोल्युं तेहवुं पालिये । दंति दंत सम बोल । ललना ॥ सज्जनना दुर्जन तणा । कछप कोटिने तोल । ललना॥बो०॥५२॥राजा नगरादिक धणी । तस शासन अभियोग । ललना । तेहथी कार्तिकनी परे । नहि मिथ्यात संयोग । ललना ॥बो०॥५३॥मेलो जननो गण कह्यो । बल चोरादिक जाण । ललना ॥ क्षेत्रपालादिक देवता । तातादिक गुरु ठाण । ललना॥बो०॥५४॥वृत्ति दुर्लभ आजिविका । ते भीखण कंतार । ललना ॥ ते हेते दूषण नही । करतां अन्य आचार । ललना ॥बो०॥५५॥ढाल॥राग मल्हार॥ भाविजे रे समकित जेहथी रुअडुं ॥ ते भावना रे भावो मन करि परवडुं ॥ जो समकित रे ताजूं साजूं मूल रे ॥ तो व्रत तरु रे दीये शिवपद अनुकूल रे॥५६॥त्रूटक॥ अनुकूल मूल रसाल समकित । तेह विण मति अंध रे ॥ जे करे किरिया गर्व भरिया । तेह जूठो धंध रे ॥ ए प्रथम भावना गुणो रुअडी । सुणो बीजी भावना ॥ बारणुं समकित धर्मपुरनुं । एहवी ते पावना॥५७॥ढाल॥त्रीजी भावना रे समकित पीठ जो दृढ सही ॥ तो मोटो रे धर्म प्रासाद डगे नही ॥ पाइये खोटे रे मोटो मंमाण न शोभीये ॥ तेह कारण रे समकितसूं चित्त थोभीयें ॥५८॥त्रूटक॥थोभीयें चित्त नित एम भावी । चोथी भावना भाविये ॥ समकित निधान समस्त गुणनुं । एहवुं मन लाविये ॥ तेह विण छूटा रत्न सरिखा । मूल उत्तर गुण सवे ॥ किम रहे ताके जेह हरवा । चोर जोर भवे भवे ॥५९॥ढाल॥ भावो पंचमी रे भावना सम दम सार रे पृथवी परे रे समकित तस आधार रे ॥ छठी भावना रे भाजन समकित जो मिले॥ श्रुत शीलनो रे तो रस तेहमां नवि ढले॥६०॥त्रूटक॥नवि ढले समकित भावना रस । अमियसम संवरतणो ॥ षट भावना ए कही एहमां । करो आदर अति घणो ॥ इम भावता परमार्थ जलनिधि । होइ नितु कल्लोल

पुल्य प्रमाण प्रगटे। चिदानद कलोल ए॥ ६१ ॥ढाल॥जे मुनिवेष सके न। ठंडी। धरे जिहा समकित ते थानक। तेहना षट विध कहिये रे॥ तिहां पहिलुं थानक छे चेतन। लक्षण आतम लहिये रे॥ खीर नीर पर पुद्गल मिश्रित। पण एहथी छे अलगो रे॥ अनुभव हंस चंच जो लागे। तो नवि दीसे वलगो रे॥ ६२॥ बीजू थानक नित्य आतमा। जे अनुभूत संभारे रे॥ बालकने स्तन पान वासना। पूरव भव अनुसारे रे॥ देव मनुज नरकादिक तेहना। छे अनित्य पर्याय रे॥ द्रव्यथकी अविचलित अखंडित। निज गुण आतमराय रे॥ ६३ ॥ त्रीजूं थानक चेतन कर्त्ता। कर्मतणो छे योगे रे॥ कुंभकार जिम कुंभतणो जे। दण्डादिक सयोगे रे॥ निश्चयथी निज गुणनो कर्त्ता। अनुपचरित व्यवहारे रे॥ द्रव्य कर्मनो नगरादिकनो। ते उपचार प्रकारे रे॥ ६४ ॥ चोथू थानक छे ते भोक्ता। पुल्य पाप फल केरो रे॥ व्यवहारे निश्चय नय दृष्टे। भुंजे निज गुण नेरो रे॥ पंचम थानक छे परम पद। अचल अनंत सुख वासो रे॥ आधि व्याधि तन मन थी लहिये। तसु अभावे सुख खासो रे॥ ६५ ॥ छठ्ठु थानक मोक्षतणू छे। संयम ज्ञान उपायो रे॥ जो सहिजे लहिये तो सघले। कारण नि फलथाया रे॥ कहे ज्ञान नय ज्ञानज साचूं। ते विण कूडीकिरिया रे॥ न लहे रूपूं रूपूं जाणी। सीप भणी जे फिरियारे॥ ६६ ॥ कहे किरियानय किरियाविण जे। ज्ञान तेह सू करशे रे॥जल पेसी कर पद न हलावे। तारू ते किम तरसे रे॥ दूषण भूषण छे इहा बहुला। नय एकेकने वादे रे॥ सिद्धांति ते बेहु नय साधे। ज्ञानवंत अप्रमादे रे॥ ६७ ॥ इणि परे सडसठ बोल विचारी। जे समकित आराहे रे॥ राग द्वेष टाली मन वाली। ते समसुख अवगाहे रे॥ जेहनो मन समकितमां निश्चल। कोइ नही तस तोले रे॥ श्री नय विजय विबुध पय सेवक। वाचक जस इम बोले रे॥ ६८ ॥

॥ इति श्री सम्यक्त सडसठबोल सझाय समाप्त

ॐ श्री जिनाय नमः

अथ श्री शृंगारवैराग्यतरंगिणीप्रारंभः

संस्कृतटीकाना कर्त्ता आरंभमां मंगलाचरण करेछे.

उपजातिवृत्तं ॥ श्रीपार्श्वनाथं प्रणिपत्य भक्त्या पुरि
स्थितं श्रीफलवर्द्धिकायां ॥ शृंगारवैराग्यतरंगिणी या
व्याख्याननाव्या क्रियते मया सा ॥ १ ॥

अर्थः— श्रीफलवर्द्धिकानामनी पुरीनेविषे स्थित श्रीपार्श्वनाथ भगवानने भ
केवडे प्रणाम करीने शृंगारवैराग्यतरंगिणी नदीनी नाविकारूप व्याख्या हुं करुंछुं.

अवतरण—श्रीसोमप्रभाचार्य, वैराग्यनी वासनावडे शृंगारने दूषित करनार छ
तां आ शृंगारवैराग्यतरगणी नामनो ग्रंथ करवानी कामनाएकरी स्त्रीनुं रूप निं
दा करवा योग्य छे एवुं प्रतिपादन करेछे. ॥ १ ॥

शार्दूलविक्रीडितंवृत्तम् ॥ धर्मारामदवाग्निधूमलहरीलावण्य
लीलाजुष स्तन्वंग्या यमितान्विलोक्य तदहो वालान्किमु
त्कंठसे ॥ व्यालान् दर्शनतोपि मुक्तिनगरप्रस्थानविघ्नद
मान् मत्वा दूरममून् विमुंच कुशलं यद्यात्मनो वांछसि ॥ १॥

अर्थ —अहो ! आ धर्मरूप वननेविषे दावाग्निना धुमाडानी पंक्तिना जेवा श्या
मवर्णवाळा, सूक्ष्मअंगयुक्त शरीरवाळी स्त्रीओना वांकेला जे वाळो छे, तेने जोई
ने तूं केम आनंदने पामेछे ? जो तूं पोतानुं सारुं थवानी इच्छा करतो हो तो, जे
ा दर्शनेकरी मुक्तिरूप नगरीना मार्गमां विघ्न थायछे, एवा वाळोने व्याल (स
) रूप मानीने दूरथी त्याग कर. एणेकरी वैराग्यरस दर्शावीने शृंगारने दूषित
योछे; जेम सर्प लांबा अने काळा होयछे, तेमज स्त्रीना वाळ पण लांबा
े काळा होवाथी, तेओनुं सादृश्यपणुं कह्युंछे; जेम सर्पने जोतांज आपणे
नाशी जइये छैये, तेम ते वाळोने जोतांज तेओनो तिरस्कार करवो जोइये.
नशास्त्रमां कह्युंछे के, कोई बाहेर गाम कामे जतो होय ते वखते जो मा
साप मळे तो ते काममां विघ्न पडतां ते कार्यनी सिद्धि थाय नही, तेमज

मुक्तिरूप नगरीना मार्गमां स्त्रीना वालरूप सर्प जो आडे आवे एटले
मोह उत्पन्न थाय तो मोटो विघ्न थायछे, माटे ए सर्वथा त्याग करवा
छे उपर कह्यु के, स्त्रीओना बांधेला वालने व्यालरूप जाण, ए ठेकाणे कवि
मत्कार राख्यो छे के, वालशब्दमां यकार मळ्याथी व्यालशब्द थायछे,
लने व्याल कहेवु योग्य छे एने श्लेषालंकार कहेछे

आ वृत्तमां, सर्प चालती वखते जेम वांकोचूको थई जायछे, तेम स्त्रीना
श विटडीआला होय तेने कविलोको श्रेष्ठ कहेछे अने जेम सर्पनो रंग
कालो होयछे, तेम स्त्रीना अति काला रंगवाला वाल होय, तो ते श्रेष्ठ कहेवा
छे एवी रीते वालनी जे श्रेष्ठता छे, ते विषयक शृंगार रस दर्शाव्योछे, अने
म मार्गमां सर्प आमो आवे तो कार्यसिद्धि थाय नहीं, तेम गुणस्थानक
णी चडतां पुरुषने वचमां स्त्रीना केशनो मोह उत्पन्न थयो तो तेथी श्रेणी
हनी सिद्धि थती नथी, एवी रीते वालनी जे निर्भर्त्सना कीधीछे ते विषयक
ग्य रस दर्शाव्योछे ॥ १ ॥

ये केशा ललिता सरोरुहदृशा चारित्रचंडप्रभाभ्रंशा
म्भोदसहोदरास्तव सखे चेतश्चमत्कारिण ॥ क्लेशान्मू
र्तिमतोऽवगम्य नियत दूरेण तानुत्सृजेर्नोचेत् कष्टपरंप
रापरिचित शोच्यां दशामेष्यसि ॥ २ ॥

अर्थ — हे सखा, कमलपत्रना जेवा नेत्रोवाली स्त्रीना देदीप्यमान केश, चा
रित्ररूप चन्द्रनी ज्योतिनो नाश करवाविषे मेघजेवा छे, अने जे तारा अंतःकरणमां
चमत्कार उत्पन्न करेछे, तेओ मूर्तिमान चक्षुरिंद्रियगम्य क्लेश छे, एम निश्च
जाणीने दूर नाखी दे जो एओनो तु त्याग करीश नहीं, तो तु कष्टपरंपराए युक्त
थयोथको शोक करवायोग्य अवस्थाने पामीश आ श्लोकमां स्त्रीना केशने क्लेशनु
सादृश्य कह्युछे, ते आवी रीते "ललित" ए शब्द मूलमां छे, एनो अर्थ लकार
करी सित केहेता युक्त, केशशब्दनो क्लेश शब्द थायछे

आ वृत्तमां, मेघना वर्णनी साथे स्त्रीना केशनी बराबरी करीछे जेम आ
काशने विषे मेघ अति शोभायमान दीसमा आवेछे, तेम स्त्रीना मस्तकनेविषे
केश अति ललित एटले देदीप्यमान दीसमा आवेछे स्त्रीनां केश जे चलकता होय
य ते श्रेष्ठ कहेवायछे ए मुख्य केशनी श्रेष्टतानो विषय कहेतां अंतरगत ते के

धारण करनारी स्त्रीनां नेत्रोने कमलपत्र जेवां कह्यांछे; ए वधो शृंगार रस ज
वो. अने स्त्रीना एवा केश जोईने पुरुषना अंतःकरणमा मदनादि विकाररूप च
त्कार उत्पन्न थायछे. माटे ते क्लेशरूप कह्याछे; केमके, कामादि विकारो क्लेशरू
कह्याछे, क्लेशो अंतरना विषय होवाथी चक्षुना विषय नथी, तेओएज जाणे केश
रूप मूर्त्ति धारण करी होय नी! एवी उत्प्रेक्षा थायछे. ए कारणथी स्त्रीना देदीप्य
मान केशने क्लेशरूप जाणीने तेनो तुं त्याग कर; एवडे वैराग्य रस दर्शाव्योछे.॥२॥

वसंततिलकावृत्तम्॥ ये शुद्धबोधशशिखंडनराहुचंद्राश्चित्तं
हरंति तव वक्रकचा दृशांग्या. ॥ ते निश्चितं सुकृतमर्त्य
विवेकदेहनिर्दारणे ननु नवक्रकचा· स्फुरंति ॥ ३ ॥

अर्थ – हे पुरुष, निर्मल ज्ञानरूप चंद्रनुं ग्रासन करवाविषे, स्त्रीना वांका के
श, राहु जेवा क्रूर छे. ते तारा अंतःकरणमां चमत्कार उत्पन्न करेछे. अर्थात् रा
हु जेम चंद्रनो ग्रास करेछे, तेम ए वांका केश तारा ज्ञाननो नाश करनारा छे.
अने ते जाणे सुकृतरूप मनुष्यना विवेकरूप देहनुं विदारण करवाने नवी करवत
ज होयनी! ए उत्प्रेक्षा छे. एमां "वक्र कच" एटले वांका केश ते "नवक्रक
च" एटले नवी करवतना जेवा छे. एमकह्याथी श्लेषरूप चमत्कार जाणवो.
आ वृत्तमां. स्त्रीना वाका केश होय ते श्रेष्ट कह्याछे स्त्रीना वक्रकेश पुरुषना
मनने मोहित करेछे, एथीज अंतःकरणमां चमत्कार उत्पन्न करेछे एम कह्यु
छे, माटे ए शृंगार रस छे, अने स्त्रीना वांका केशनुं दर्शन थतांज पुरुषनुं मन
व्याकुल थायछे. देहनी पण शुद्धि रहेती नथी. अने ज्ञाननो नाश थई जायछे
थी तेओने राहुरूप कह्याछे. तेमज विवेकरूप शरीरने कापवाने नवी करवत
ा कह्याछे. एवा जाणीने तेओनो तुं त्याग कर. ए वैराग्य रस जाणवो. ॥३॥

उपजातिवृत्तम्॥ अलंकृतं कुंतलभारमस्या विलोक्य लोकः कुरुते
प्रमोदम्॥ वैराग्यवीरच्छिन्नं स्रवंत मसृं न किं पश्यसि कुंतभारम्॥४॥

र्थ – हे पुरुष. पुष्पादिकवडे गूंथेला स्त्रीना वांधेला केशोनो समूह एटले
टो जोईने लोक आनंदने पामेछे; परन्तु ए वैराग्यरूप वीरनुं छेदन करणा
" नामक ह मह शस्त्र छे. एम तुं का जोतो नथी? अर्थात स्त्रीना अलंकृत
भार" एटले जे शणगारीने बांधेला केश छे, ते कुंतभार एटले भाल नाम

क शस्त्रज छे एम जाणवु आ ठेकाणे अल एटले लकाररहित, कृत एटले लो, जे कुतलनार शब्द, तेनो कुतनार एवो शब्द थाय, ते योग्य छे

आ वृत्तमा, पुष्पादिकेकरी शृंगारेलो स्त्रीना केशोनो अवोमो पुरुषने एवो णीय लागेछे के, ते जोईने वैराग्यवान पुरुषनो वैराग्य पण भगी जायछे, श्रेष्ठता कहीछे, ते शृंगाररस छे अने ते दुःखे करीने पण सहन न थाय, प्रास नामक शस्त्ररूप छता वैराग्यनो नाशकरनारो छे, माटे तेनो त्याग ए वैराग्य रस छे ॥ ४ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ कस्तूरिकातिलकित तुलिताष्टमींदु
चित्ते विचिंतयसि सौख्यनिमित्तमेकम् ॥ वामभ्रुवा यदलिक
तदहो अलीकमित्याख्ययेव परया प्रवदति रूपम् ॥५॥

अर्थ –हे पुरुष, जेमां कस्तूरीनो तिलक कर्योछे, तेथी अष्टमीना चंद्र जेनी सुदर भ्रुकुटी देखाय छे, ते अद्वितीय सौख्यनु कारण छे, एवु तु मा चिंतन करेछे, ते व्यर्थ छे अहो इत्याश्चर्ये! ते स्त्रीओनु अलिक एटले जे लाट छे, तेने पडित लोको अलीक एटले मिथ्या कहेछे अर्थात् अलिक एवा रूप ललाट वाचक छे, तेओमाना पहेला रूपने बीजा रूपे करी जाण, एमने लाटने मिथ्या जाण, ए पण श्लेषज छे

आ वृत्तमा, अष्टमीनो चंद्र अर्धगोलाकार छता बन्ने खूणाए सरखो देखाय तेना वचमां श्याम वर्णना चांदलाना जेवु देखायछे, तेथी ते अति शोभित लाग तेम स्त्रीनु पण वाकु ललाट छता तेमा कस्तूरीनो तिलक कर्यो होय, तो अति नोहर देखायछे, ते जोईने पुरुषना मननेविषे घणो आनंद थायछे, ते शृंगार छे अने ए जे कस्तूरीना तिलक सहित स्त्रीनु ललाट अति शोभायमान देखाय तेमां कांई अर्थ नथी, किंतु व्यर्थ छे, माटे तेनो त्याग करवो ए वैराग्यरस छे ॥

उपजातिवृत्तम् ॥ न भ्रूरियं पंकजलोचनायाश्चकास्ति शृंगाररसै
कपात्रम्॥भ्रू किलसौ साधुतरा प्रसूते निबंधन मोहविषद्रुमस्य॥६॥

अर्थ –हे पुरुष, कमलपत्रना जेवा लोचनवाली स्त्रीनी शोभायमान भ्रुकुटी ते जाण शृंगाररसनु एक पात्रज छे, ते अतिशय श्रेष्ठ भूमि छे, केमके, एथकी रूपविषना वृक्षनो प्रादुर्भाव उत्पन्न थायछे, अर्थात् भ्रू एटले भ्रुकुटी, ते साधु

भू एटले भूमि थायछे, एम कह्यु; तेमां आवी रीते ''श्लेष छे:- सा एटले प्री
धुतरा एटले रेफरहित एवो, भ्रू शब्द भूमिवाचक शब्द थयो ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीनी जे शोभायमान भ्रुकुटि, तेने शृंगार रसना पात्ररूपे क
छे; केमके, एने जोतांज पुरुषने मोह उत्पन्न थायछे, माटे ए शृंगार रस छे;
ने ए भ्रुकुटि नथी पण मोहरूप विषना वृक्षने उत्पन्न करनारी सारी भूमि छे, ए
कहेवाथी वैराग्य रस जाणवो. ॥ ६ ॥

मालिनीवृत्तम् ॥ नवकुवलयदामश्यामलान् दृष्टिपातान् कृत
परमदनाशान् विक्षिपत्यायताक्षी॥ इति वहसि मुदं किं मोह
राजप्रयुक्तान् प्रशमभटवधार्थं विद्ध्यमूनृष्टिपातान् ॥ ७ ॥

अर्थः- हे पुरुष, विस्तीर्ण नेत्रोवाळी स्त्रीना कुवलयनी माळा जेवा श्यामव
र्णवाळा, अन्यमदना नाश करनारा जे कटाक्ष, ते मारा उपर नाखेछे, एम जाणीने
तुं शासारु हर्षित थायछे? अरे, ए जे दृष्टिपात (कटाक्ष) छे ते प्रशम रूप शूरवी
रनो वध करवा सारु मोह राजाए प्रेरणा करेला ऋष्टिपात एटले तलवारना पात
(घा) छे; एम जाण; अंही दृष्टिपातनो ऋष्टिपात आवी रीते थयो छे:- दृष्टिपात
शब्दनुं विशेषण मूळमां ''कृतपरमदनाशान्'' छे; एनो श्लेष करी आवो अर्थ थाय
छे:- कृत एटले कर्यो, परम एटले अत्यंत, दनाश एटले दकारनो नाश थयाथी
ऋष्टिपात शब्द थाय छे ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, विस्तीर्ण नेत्रोवाळी स्त्री कही छे, एथी स्त्रीना विशाळ नेत्रोने कवीओ
ए उत्तम कह्या छे, एम जाणवुं, एवा विशाळ नेत्रोना जे कटाक्ष, ते कुवलयनी
माळा जेवा, अने अन्य मदना नाश करनारा कह्या छे; एटले जे पुरुष उपर कु
वलयनी माळाना जेवा कटाक्ष पडे ते पुरुष बीजा गमे तेवा मदवाळो होय तो
पण तरत ते स्त्रीनी उपर मोहित थईने तेना किंकर जेवो थई रहेछे, अने ते
पोतानी उपर स्त्रीना कटाक्ष पड्या जोईने अति आनंदित थायछे, माटे ए शृंगार
रस छे; अने एवो लुब्ध थएलो पुरुष मोहरूप राजाने वश थयो थको दुःखी थायछे;
केमके, नेत्रकटाक्षरूप तलवारना घाएकरी तेना प्रशमरूप शूरवीरपणानो वध
थायछे. तेनो तुं त्याग कर, ए वैराग्य रस छे. ॥ ७ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥ तस्याः कोपपदं यदाननमहोरा
त्रं स्मरन्नात्मनः संतापं वितनोपि काननमहो ज्ञाता स

खे तत्यजे ॥ एतस्मिन् वसता मनोभवमहासर्पेण दष्ट पुमान् कार्याकार्यविवेकशून्यहृदय कस्को न सजायते॥८॥

अर्थ –हे सखा, कोपनु स्थान जे स्त्रीनु आनन एटले मुख, तेनु रात्रदिवस स्मरण करीने तूं पोताने सताप करीछे ठे, अहो इति खेदे ! ते आनन नथी पण कानन एटले वन ठे, एम जाणीने मूकी दे, केमके, ए वनमा रहेनारो जे कामरूप सर्प ते जे पुरुषने दश करेछे, ते पुरुषनो हृदय कार्याकार्य विवेकथी शून्य थई जायछे एवो कोण ठे, के जे उक्त विवेकशून्य न थाय ! किंतु सर्व थायज ठे सामान्य सर्पनाविषे करीने मूर्छित थएलो पुरुष पण शून्य हृदयवाळो थई जायछे, ता आ सर्प दश कर्यो होय तेनु शु कहेवु ! अहीं कोपपद आनन कानन ठे, एम कहेछे, तेथी कोपपद एटले ककार ठे उपपद एटले समीपपद जेनो एवो आनन शब्द कानन शब्द थाय ठे ते योग्य ठे, एश्लेष ठे

आ वृत्तमां, स्त्रीनु मुख कोपायमान कह्यु ठे तेनु कारण ए के, स्त्रीनी मुखमुद्रा यत्किंचित् कोपायमान पुरुषने दीठामा आवे तो तेने कामविकार उत्पन्न थायछे अथवा कोई कारणने लीधे स्त्रीने रीश आवीने पुरुषने पोतानी मुखमुद्रा कोपायमान करी देखाडवाथी तेने प्रीति उत्पन्न थायछे, अने विविध प्रकारे तेने समाश्वासनी आतुरताने लीधे कामविकार उत्पन्न थायछे ते अहीं शृंगाररस जाणवो. अने स्त्रीना मुखने वन जेवु कह्यु ठे, ने तेमा कामरूप सर्प रहे ठे ते दश करीने पुरुषना हृदयने शून्य करे ठे एटले सारासार विवेकरहित करे ठे, अर्थात् मृतप्राय करे ठे. तेथी तेनो तु त्याग कर ए वैराग्यरस जाणवो ॥ ८ ॥

उपजातिवृत्तम ॥ साकारमालोक्य मुख तरुण्य कि मुग्धबुद्धे मुदमादधासि॥इद हि चित्तभ्रमनाटकस्य विचक्षणैरामुखमाचचक्षे ॥९॥

अर्थ – हे हीनबुद्धिवान पुरुष, तरुण स्त्रीनु साकार एटले सुदर मुख जोईने तु शामाटे आनदित थायछे ! ए मुखने विद्वान पुरुष निश्चये करी चित्त भ्रमरूप नाटकनु आमुख एटले आयारभ कहेछे अहीं साकार एटले आकार सहित सुदर होय ते आमुख ठे, ते योग्य ठे

आ वृत्तमां, तरुण स्त्रीनु सुदर मुख कह्यु ठे, तेनु कारण ए के मुखनी सुदरता जोवामा आवेछे ते समे तेवी मालीनबुद्धिवाना पुरुषनी बुद्धि विभ्रम थईने ते एकदम मोहित करेछे. ए शृंगार रस ठे अने तरुण स्त्रीनु मुख चित्तविभ्रम

नाटकनो आधारंभ छे. एटले स्त्रीनुं मुख जोईने मोहनो आरंभ थाय छे. जेम ना
टकनो आधारंभ सूत्रधार अने नटीप्रमुखना गायनद्वारा थायछे, ते जोनारा
पुरुषना चित्तने मोह उत्पन्न करेछे. तेम ए पण जाणवुं. तेनो तुं त्याग कर.
ए वैराग्य रस छे. ॥ ९ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ कामज्वरातुरमते तव सर्वदाऽऽस्यं वा
मभ्रुवां यदि कथंचिदवाप्तुमिच्छा ॥ यत्नं विनाप्यखिलज
न्मपरंपरासु तज्जातमेव भवतो ननु सर्वदास्यम् ॥ १० ॥

अर्थः– हे कामरूपज्वरथी पीडायमान थएली मतिवाळा पुरुष. जो सर्वदा
एटले सर्व काळ सुंदर भ्रकुटिवाळी स्त्रीनुं आस्य एटले मुख, कोई पण प्रकारेकरि
तने प्राप्त थवानी इच्छा होय, तो निश्चयेकरि यत्नशिवाय संपूर्ण जन्मपरंपराने
विषे सर्वदास्य एटले सर्वनुं दासपणुं तने थयलुंज छे, एम जाणवुं. आश्लोकमां
बे ठेकाणे "सर्वदास्य" ए शब्द आवेलो छे. ते बन्नेनो अर्थ भिन्न भिन्न थाय
छे. तेथी अहिं यमक जाणवो.

आ वृत्तमां, सुंदर भ्रकुटीवाळुं स्त्रीनुं मुख कह्यु छे, एथी जे स्त्रीनी भ्रकुटि सा
री होय, ते सुरूप दीठामां आवेछे. तेनुं मुख कामी पुरुषने अति प्रिय लागेछे.
अने तेने जोतांज कामीपुरुषनी मति कामज्वरथी पीडायमान थायछे, एज शृं
गार रस छे. अने एवा स्त्रीना मुखनी प्राप्तिनी इच्छा जे पुरुष करेछे ते जन्मो
जन्मने विषे पराधीन रहेछे. माटे तेनो तुं त्याग कर ए वैराग्य रस जाणवो.॥१०॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥ तस्याः साधुरदं विलोक्य वद
नं य. संश्रयत्यंजसा मुक्त्वा मुक्तिपथं हठा प्रविशति भ्रां
त्या स दुर्गं वनम् ॥ तत्रात्यंतमचारुतच्छमतिर्येनात्र रा
गादिभिश्चौरैर्धर्मधनापहारकरणात्कष्टं न किं प्राप्यते॥११॥

अर्थ.– ते स्त्रीनुं "साधु रदं" एटले सारा दांतवाळुं वदनं एटले मुख जो
ईने जे पुरुष वेग करी तेनो आश्रय करेछे, एटले तेमां लुब्ध थायछे ते पुरुष.
हा इति खेदे! मुक्तिमार्गने मूकीने. भ्रांतिने आश्रय करीने दुःखेकरि प
गमन न थाय, एवा वनने विषे भ्रांतिए करि प्रवेश करेछे. ते वन मर्यादारहि
त, तेमां गमन करनारा पुरुषनुं धर्मरूप धन रागादिक चोरो हरण करी जाय
छे, एथी शुं कष्टनी प्राप्ति थती नथी? अहिं साधुरदं वदन जे छे ते वन छे ए

म कह्यु छे. ते आम – साधुरद ए शब्दनो पदछेद करिये तो साधु अद ए पद जुदा थायछे एमाना अद पदथकी दकार रहितपणु थायछे, एम वन थायछे, ते योग्य छे

आ वृत्तमा, सारा दातवाळी स्त्रीनु मुख जोताज पुरुषनु मन लुब्ध थई जाय छे मुक्तिनो मार्ग जे धर्मध्यानादिक तेने ते मूकी दे छे जेने वसति सारी गमती नथी, मदनने वश थयो थको वनादिक एकांत स्थळमां ते स्त्रीसहित स्त्रीना आगमननी इच्छावान थयो थको वास करेछे, अने तेथी महाकष्ट करेछे, एवो स्त्रीना मुख दर्शननो जे प्रभाव ते अहिं शृंगार रस छे स्वरूप जे वन तेमा जे पुरुष प्रवेश करेछे तेनु धर्मरूप धन रागादिक चोर लिये छे माटे तेमा लुब्ध थवु नही ए अहिं वैराग्य रस छे ॥ ११ ॥

पृथ्वीवृत्तम् ॥ पिपाससि भवोदधेर्यदितटं तदेणीदृशामदीनमधर धर परिहर पर दूरत ॥ इहास्फुलनतोऽन्यथाविशदवासनानौ स्मर भजिष्यति विशीर्णता न भविता ततो वांछितम् ॥ १२ ॥

अर्थ –हे पुरुष, जो तु आ संसार समुद्रनो पार लेवानी इच्छा करतो हो, तो हरिणी जेवां नेत्रोवाळी स्त्रीओना अहीन एटले अमृतादिवडे परिपूर्ण, अधर एटले होठरूप धर एटले पर्वत जे छे तेने तु दूर नाखी दे ते जो तु नही मूकीश तो तेना वेगरा गरुडनना पागे तारी निर्मळ वासनारूप नौका भागी जशे तेथी तारुं धारेलुं पार पडशे नही जेम समुद्रमा पर्वतना लागवाथी वहाण भांगी जाय तो सारी रीते इच्छित सिद्धि थती नथी ते प्रमाणे तु पण आ भव समुद्रनु पहेलुं पार पहोंची शकीश नही अहीं अहीन अधर जे छे ते धर एटले पर्वतन छे, एम कह्युं छे. ते आम – ते अहीन एटले अकारे करि हीन एटले रहित अधर शब्द धर थाय छे, ते योग्य छे

आ वृत्तमा, स्त्रीना नेत्रोने हरिणीना नेत्रोनी बराबरी करीछे, एटले हरिणीना नेत्र अति विशाल अने मनोहर होयछे तेम स्त्रीना नेत्र पण अति विशाल अने मनोहर होवाथी पुरुषनु मन खेंची लियेछे, तथा ज कामी पुरुषने स्त्रीना अधरामृतने विषे घणी प्रीति होयछे, माटे अमृतेकरी पूर्ण अधर कह्यो छे, ते शृंगार रस छे. अने ते अधर छे ते पर्वतज छे, केमके, जे पुरुष तेमा अटवाय छे ते समाधिथी छूटी शकतो नथी ए वैराग्य रस छे ॥ १२ ॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ न भातीदं भ्रातः स्फुरदरुणरत्नौघकिरणप्रतानं तन्वंग्यास्तरलतरलं कुंडलयुगम् ॥ इमं ध्रुवं पुंसामिह विरहसंयोगदशयोर्ज्वलच्छोकानंगज्वलनयुगिदं कुंडयुगलम् ॥ १३ ॥

अर्थः– हे भाई. देदीप्यमान रक्तवर्ण रत्नोनो किरणसमूह छे जेनाविषे, तथा "तरल तरलं" एटले जे अत्यंत चंचल छे. एवा कृशांगी एटले पातला आंगवाली स्त्रीना जे "कुंमलयुगं" एटले जे बे कानना कुंमल छे ते शोभता नथी; किंतु विरहदशा अने संयोगदशामां शोक तथा कामाग्निएकरी युक्तछे एटले विरहावस्थामां शोकाविर्भाव, तथा स्त्रीपुरुषनी संयोगावस्थामां कामाग्निनो आविर्भाव थायछे. अने आ संसारनेविषे पुरुषना शांतिरूप दूधने बालवावाला ए कुंमयुगल एटले बे कुंम छे एम जाण. अहीं कुंमलयुग ते कुंमयुगल थाय छे. ते आवी रीते.–कुंमलयुग शब्दनुं विशेषण तरलतरलं एवुं छे. एनो श्लेषार्थ आम छेः– तरलतर एटले चंचल छे. ल एटले लकार जेमां एवो जे कुंमलयुग शब्द; तेमांनो लकार कहाडी नाखिये तो कुंमयुग शब्द थायछे; अने युग शब्द थया पछी तेना अंतमां लकार जोडीये तो कुंमयुगल शब्द थायछे. ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीना काननेविषे देदीप्यमान रत्नजडित जे बे कुंमल होयछे, ते स्त्रीना रूपमां अति वृद्धि करेछे. अने चचल होवाथी अति सुशोभित देखायछे तेमां पण कृशांगी एटले पातला आगवाली स्त्रीने अति शोभेछे. ए शृंगार छे. अने ए जे बे कुंमल छे ते शोभाकारक नथी पण विरहदशा तथा संयोगदशामां शोक तथा कामाग्निना उत्पन्न करनारा छे, ए पुरुषनी शांतिरूप दूधनो नाश करनारा छे तेथी कुंडरूप छे, तेनो तुं त्याग कर. ए वैराग्य रस छे. ॥ १३ ॥

अनुष्टुब्वृत्तम् ॥ ताडंकं सस्पृहं तस्याः पश्यन् मूढः परे भवे ॥ नरो नरकपालेभ्यस्ताडं कं न सहिष्यते ॥ १४ ॥

अर्थ.– हे मूर्ख पुरुष, ते स्त्रीनुं साभिलाष "तामंकं" एटले कर्णभूषण अवलोकन करतां आगल आवनारा भवमध्ये नरक पालन करनारा अधम परमाधामी पुरुषोनी पासेथी "कंताडं" एटले कोण आघात सहन करनार नथी? अपितु सर्व आघात सहन करशे. अही "ताडंकं" ए शब्द बे वार आव्योछे, तेओनो अर्थ भिन्न भिन्न छे. ए यमकालंकार छे.

आ वृत्तमा, स्त्रीना कानना कुंडल जोताज पुरुषने एवी अभिलाषा ए कुंडलेकरी शोभायमान स्त्री मने प्राप्त थाय तो सारु ए शृंगार रस छे. भिलाषाए करी स्त्रीना कुंडलोने जे पुरुष जुवे छे ते आवता जवमां नरकमां उन करनारा परमाधामी देवताओनी मार खायछे, माटे एनो त्याग करवा राग्य रस छे ॥ १४ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ सार गलं यमरविदविलोचनाना मालोक्य चेतसि मुद कलयति मूढा ॥ हा निश्चित रवि तमुक्तिपुरप्रवेशव्यापेधमर्गलममुं न विचारयति ॥ १५ ॥

अर्थ – हे मूढ, कमलना जेवा नेत्रोवाली स्त्रीओनो जे सार एटले श्रेष्ठ एटले कंठ अवलोकन करीने पुरुषो अंत करणमा हर्ष पामेछे परंतु हा, दे ! ए जे गल छे ते मुक्तिनगरीमा प्रवेश करवानेविषे प्रतिबंध करनार गल छे. एनो विचार करता नथी अहीं सार एटले अरसहित गल शब्द थापछे ते योग्य छे

आ वृत्तमा, स्त्रीना कंठनी श्रेष्ठता कहीछे जो स्त्रीनो कंठ सारो होय ने पामीने पुरुष आनंदित थायछे, अर्थात् कामनी इछा उत्पन्न थायछे. ते शृंगार रस छे, अने एना अभिलाषी पुरुषोनो मुक्तिरूप नगरीमां प्रवेश नथी माटे तेनो त्याग करवो ए वैराग्य रस छे ॥ १५ ॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ अलं प्राप्य स्पर्शं कुचकलशयो पंकजदृशा परा प्रीति भ्रात कलयसि सुधामग्नइव किम्॥अवस्कंद धर्मदितिप स्टके दानुमनसा प्रयुक्त जानीया कलुपचरटेन स्पशमिम॥१६

अर्थ – हे भ्रात, जेना कमलना पत्र जेवां नेत्र छे, एवी स्त्रीओना मननां कुच छे. तेने अल एटले अत्यंत स्पर्श पामीने अमृतमां मग्न थई जनारानी पेठे तु शु उत्कृष्ट प्रीतिने पामेछे ? ए स्पर्श, धर्मरूप राजानी सेनाने हणवानी इच्छावाळा मनमां, एना कलुष एटले पापरूप जीने मोकलेला स्पश अस्पृश छे, एम तु जाण अहीं अल स्पर्श जे छे ते स्पश छे, एम कहु वकार स्पर्श होयछे, एवा नियम छे माटे अल एटले जेमां रफ नथी एवो शब्द छे ते स्पश शब्द थापछे ते योग्य छे

आ वृत्तमां, स्त्रीना स्तननी उत्कृष्टता कहीछे, एटले पुरुषने स्त्रीना स्तननो स्प
ो थतांज अमृतनेविषे मग्न थई गएला पुरुषनी पठे आनंद उत्पन्न थायछे; ए
ृंगार रस छे; अने ए स्तन जे छे ते धर्मनो नाश करवाने अर्थे पापनो एक छा
ो जास्छ छे, माटे तेनो तुं त्याग कर. ए वैराग्य रस छे. ॥ १६ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ पीनोन्नतं स्तनतटं मृगलोचनाया आ
लोकसे नरहितं यदपूर्वमेतत् ॥ मोहांधकारनिकरक्षय
कारणस्य विद्धास्तदस्ततटमेव विवेकभानोः ॥ १७ ॥

अर्थः— मृगना जेवां लोचनवाली स्त्रीनां जे पुष्ट अने उन्नत स्तनतट एटले
स्तनो छे, ते नरहित एटले पुरुषने हितकारक नासेछे, अने अपूर्व एटले प्र
तेक्षण पुरुषने चमत्कार उत्पन्न करे छे; तेनुं तुं अवलोकन करेछे; पण ते मोह
ूप अंधकारनो क्षय करवानुं कारण विवेकरूप सूर्यना अस्ततट छे. अर्थात् ए
नकी ज्ञानरूप सूर्यनो अस्त थायछे. आ पद्यमां स्तनतट जे छे तेने तु अस्ततट
ाण एम कह्यु, केमके, नरहितं अने अपूर्वं ए बे स्तनतटनां विशेषणो छे, तेओ
ांथी आवो अर्थ निकळे छे — नरहित एटले नकारेकरी रहित अने अपूर्व एटले
जेनी आद्यमां अकार छे, एम कह्याथी स्तनतटनो अस्ततट शब्द थायछे ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, मृगना जेवां लोचनवाली स्त्रीना मांसथी भरेला अने उंचा रहेला
जे बे स्तन छे, ते पुरुषने अति सुख करनारा लागेछे; अने पुरुषना मनमा कामवि
कार उत्पन्न करेछे माटे ए शृंगार रस छे. अने एज स्तनोनुं विलोकन करनारा पुरु
षोनो विवेकनाश थई जायछे, एटले कामविव्हल थयो थको तेने कांई सूजतुं न
थी तेथी एनो त्याग कर ए वैराग्य रस छे. ॥ १७ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ॥ कंदर्पद्विपकुंभचारुणि कुचद्वंद्वे मृ
गाक्ष्या मया न्यस्तो हस्त इति प्रमोदमदिरामाद्यन्मना मा
स्मभूः ॥ किंत्वाजन्म यदर्जितं बहुविधामभ्यस्य कष्टक्रियां
हस्तोऽयं सुकृतस्य तस्य सहसाऽदायीति संचिंतयेः ॥ १८ ॥

अर्थ ॥ हे सखा, कामरूप हस्तिना गंमस्थल जेवा मनोज्ञ जे मृगाक्षी स्त्रीना बे
स्तन छे, तेनेविषे में हस्तस्थापन कर्यो छे, एम जाणीने हर्षरूप मदिराएकरी मदो
न्मत्त अंतःकरणवालो तुं नही था. केमके, नाना प्रकारनी तपोनुष्ठानादिरूप जे क
ष्टसाध्य क्रिया छे, तेनो अभ्यास करीने जन्मेकरी संपादन करेला जे सुकृत एटले

पुरुष, तेने तें आडुं हाथ दीधुछे जेमके, कोई बाहेरथी आवनारा पुरुष
दानसङ्काएकरी निषेध करे, तेम कुचद्वनेविषे हस्तप्रदानेकरीने सुरतने
षेध कर्योछे एवो जे तु ते मनमा विचार कर आ पद्यमां स्तन ...
रयु अने सुरतने हाथ दीधुं एज चमत्कार छे.

आ वृत्तमा, कामरूप हस्ती कह्योछे ने तेना गण्डस्थलरूप स्त्रीना बे
छाछे ते ज्यारे पुरुष हाथनेविषे ग्रहण करेछे त्यारे मदनातुर थयो
हादनें पामेछे, ए शृंगार रस छे, अने नाना प्रकारे कष्ट करीने सघा
सुरतनो निषेध करेछे, माटे तेनो त्यागकर ए वैराग्य रस छे ॥ १८

ऽञ्वशाद्वृत्तम्॥ कंठोपकंठे लुलितं विभावयेर्नुज युवत्या
भुजगं गराजितम् ॥ एतस्य सस्पर्शवशादपि क्षणाद
गेपचैतन्यमुपैति सक्षयम् ॥ १९ ॥

अर्थ –कंठनी पासे वलेला गर एटले विषे करीने अजित एवा जे
ना भुज एटले बाहु, ते हुजग एटले सर्पज छे, एम तु जाण. ए सर्पना
शेकरी गपूर्णचैतन्य क्षणमात्रमां नाशने पामेछे जेम सर्पना स्पर्शेकरी
नो नाश थायछे, तेमज तरुण स्त्रीना भुजस्पर्शीथी चैतन्यनाश थायछे
नो हुजग थावी रीते थायछे –भुज शब्दनु विशेषण गराजित छे, तेनो
कार अद्दरेकरी राजित एटले युक्तथयाथी भुजग शब्द थायछे, ते युक्त छे

आ वृत्तमां, कंठनी पासे वांका वलेला स्त्रीना बे हाथ पुरुषने अडकतां
अति मोहित थयांपछी पोताना शरीरनी शुद्धि पण रहेती नथी ए शृंग
छे, अने ए बे स्त्रीना हाथ छे ते साक्षात सर्परूप छे, केमके, एनो स्पर्श
पुरुष बदछ थई जायछे, माटे तेनो तु त्याग कर ए वैराग्य रसछे ॥१९

...नानिदनम्॥ कंठायमक्ते कुपिते नगाद्वो वर वह्नि प्राणहरे
द ॥ विध्वस्तधर्मानरजीविते नु स्त्रैणे न बाढां विझ्या स युक्त

अर्थ –... ... नाश करनारो क्रोधायमान जे नगार्ता एटले नां
ई, ते पुरुषनः गलामां सलग्न थाय ते सारु, परंतु धर्मरूप अन्यतर जीवित
करनारा ... स्त्रीसंबंधी बाहो एटले भुज, ते पुरुषना गलामां सलग्न थया
वई थायछे, ते इंकित पुरुषने योग्य नथी, केमके, सर्प, ...
... ... छेछे; पण स्त्रीयोना जे बाहुछे ते ... थयाथी ...

–गो नाश करेछे ; माटे स्त्रीए पोताना हाथथी करेलुं आलिंगन सर्प करतां पण अ
–धिक दुःख देनारुं छे. आ श्लोकमां नवाहो शब्द वे वखत आव्योछे तेनो अर्थ जुदो छे.
आ वृत्तमां, स्त्री ज्यारे पोतानी भुजावडे पुरुषने आलिंगन करेछे, त्यारे पुरुष
पोताना प्राणनी पण परवा राखतो नथी, एवो कामातुर थायछे ; ए शृंगाररसछे.
अने सर्प गळामां वाळी प्राण लिये ते सारुं, पण स्त्रीनुं आलिंगन नक्कुं नही ; के
मके, तेथी माठा कर्म बंधाईने अंतरात्मानो नाश थायछे. माटे तेनो त्याग कर
वो उचित छे ए वैराग्यरस छे. ॥ २० ॥

इंद्रवंशावृत्तम् ॥ कोयं विवेकस्तव यन्नतन्त्ववां दोपावगूढः प्रमदं वि
गाहसे ॥ यतः स्मरातंकपरीतचेतसां किं सुंदरासुंदरयोर्विवेचनं ॥२१॥

अर्थ.– हे साधो, आ तारो कयो विवेक छे के, नम्र छे भृकुटि जेओनी एवी
स्त्रीना दोपावगूढ एटले भुजाए आलिंगित थयो थको तुं उत्कृष्ट मदने पामेछे !
केमके, कामरूप रोगेकरीने जेना अंत:करण व्याप्त थयाछे, एवा पुरुषने सारा
तथा नरसानुं विवेचन थतुं नथी. जेम अपस्मारादि (मरी) रोगवाळा पुरुषने गु
णागुन ज्ञान होतु नथी, तेम तने पण थयुंछे. अथवा तारो विवेक दोपावगूढ
एटले दोपेकरीने युक्त छे एवो अर्थ पण थायछे, माटे ए तारो केवो विवेक
ए एम कहेवुं योग्यज छे.

आ वृत्तमां, पुरुषने स्त्रीए आलिंगन कर्युंछतां, ते गमे तेवो विवेकी होय तो
पण ते एक कोरे रहीने कामातुर थयोथको हर्षित थायछे ; ए शृंगार रस छे;
अने स्त्रीना आलिंगनथी पुरुषना विवेकनो नाश थायछे, अने अंत:करणमां अ
विवेक आवेछे, माटे तेनो तुं त्याग कर ए वैराग्य रस छे. ॥ २१ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ हंहो विलोक्य परमंगदमंगनाना
मानंदमुद्वहसि किं मदनांधबुद्धे ॥ सत्यं विवेकनिधनै
कनिमित्तमेतत् मेधाविनो हि परमं गदमुद्गृणांति ॥ २२ ॥

अर्थ – हे कामेकरी अंधबुद्धिवाळा पुरुष, स्त्रीयोना परमंगदं एटले उत्कृष्ट
बाजु जोईने शुं आनंद करेछे ? पंडित लोको जे छे ते ए बाजुबंधने ज्ञाननोनाश
परम एटले उत्कृष्ट गद एटले रोग कहेछे; ते सत्य छे. केमके, जेम रोग जीव
नो हेतु छे. तेम स्त्रीनो बाहुभूषण पण ज्ञानना नाशनो हेतु छे. ए पदमां
पद वे वखत आव्योछे, तेनो अर्थ जुदो जुदो छे, एवो चमत्कार चमत्कार छे

आ वृत्तमां, स्त्रीना बाहुनुं भूषण जे बाजूबंध छे, ते पुरुषना मनने हित करी त्रिपेछे के पुरुष कामांध थयोथको महाहर्षने पामेछे ए, छे, अने ए जे बाजूबंध छे ते आनंद करनारो नथी, पण जीवनो नाश मोटो रोग छे, एम जाणीने तेनो तू त्याग कर ए वैराग्य रस छे. ॥ ११ ॥

अय जनो वलयचर विलोकते मृगीदृशामधिभुजवल्लि वालिश।
न बुध्यते सुकृतचमूं जिगीषत समुद्यत वलचरमेनमेनस ॥१२॥

अर्थ – अय एटले आ प्रत्यक्ष मूर्ख जन जे छे, ते हरिणाक्षी स्त्रीओना लताने विषे वलयचर एटले जे कंकणसमूह छे ते जुवेछे परंतु ए वनय जे सुकृत जे शीलादिक, तेओने जीतवानी इच्छावालो एवो पापनो वलचर एटले सेनासमूह छे, एम जाण आ पद्यमा वलयचर जे छे, ते वलचर एम समजुवे, बकार अने वकारनु ऐक्यछे वलयचर शब्दनु विशेषण अय एशब्द एनो अर्थ अ रहित य थायछे, तेथी वलयचर शब्द, वलचर थयो ते पोग।

आ वृत्तमां, स्त्रीओना हाथमां जे कंकण होयछे, तेने जोईने जे मूर्ख जन आनंदने पामेछे, ए शृंगार रस छे, अने ए जे कंकणनो समूह छे, ते नो नाश करनारो छे, माटे तेनो तु त्याग कर ए वैराग्य रस छे ॥ १२ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ ये दृक्पथे तव पतति नितंबिनीना
काना करा जन्मिपल्लवनप्रवीणा ॥नो वेत्सि तान् किमपर
गंपुरप्रयाणप्रत्यूहकारणतया करकानवश्यम् ॥ १४ ॥

अर्थ – हे जननाना प्रकटीकरण करवाविषे निपुण पुरुष, नितंबिनी स्त्रीओ कांत एटले मनोज्ञ कर एटले हाथ तारी दृष्टिरूप मार्गमां आवेछे, तेओने नगरी प्रत्ये जवा करक एटले करानी पेठे विघ्न करनारा केम जाणता नथी? जवा जो मार्गमां करानी वृष्टि थाय तो इच्छेला कार्यनी सिद्धि थाय नहीं, कुलनाशमा करवे आ पद्यमा स्त्रीना कर जे छे ते करकज एम समजु छ दो रीते – करशब्दनु विशेषण कात शब्द छे, एनो अर्थ क छे जेना अतमां छ एवछे, अर्थात् कर शब्दना अंते ककार राखिये तो करक थाय ते थाय छ

आ वृत्तमा, जननानु प्रकटीकरण करवाविषे स्त्रीना हाथ निपुण छे एवा ना हाथनी वृत्तने स्वर्गादि थतांन ते गमे तेवो धर्मादिकनेविषे साव

ण दिग्मूढ एटले कामने वश थई जाय छे, ने तेमां ते पोताने परमानंद माने छे; ए शृंगार रस छे. अने स्त्रीना करस्पर्शादिकेकरी स्तब्ध बनी गएला पुरुषने मोक्षनो मार्ग जे धर्म. ते सूजतो नथी, माटे तेनो तुं त्याग कर. ए वैराग्य रस छे.

उपजातिवृत्तम् ॥ नीव्यासमस्या हरिणेक्षणाया यंवीक्ष्य हारं हृदि हर्षमेषि ॥ विवेकपंकेरुहकाननस्य तमेव नीहारमुदाहरंति ॥ १५ ॥

अर्थः—नीवी एटले वस्त्र. तेनी गांठ पर्यंत हरिणाक्षी स्त्रीनो जे लंबायमान हार, तेने जोईने तूं पोताना मनमां आनंदने पामेछे, ते हारने पंडितलोक, ज्ञानरूप कमलना वनने नीहार एटले हिम कहेछे. जेम हिम, कमलना वनने नाश करनारो छे, तेम स्त्रीना हृदय उपरनो जे हार ते ज्ञानने नाश करनारो छे. आ पद्यमां हारने नीहार कह्योछे, ते आम:—हारशब्दनुं विशेषण नीव्यास छे. एनो अर्थ आ छे:—नीशब्देकरी व्यास एटले जे युक्त हारशब्द ते नीहारशब्द थायछे ते योग्य छे.

आ वृत्तमां, स्त्रीना हृदयनो जे लांबो हार ते जोतांज पुरुषने अति आनंद उत्पन्न थायछे; ए शृंगाररस छे; अने ते हार जे छे ते ज्ञानरूप कमलना वनने बालवामां हिम जेवो छे, एटले ते हारमां लुब्ध थएला पुरुषनुं ज्ञान नाश थई जाय छे, माटे तेनो तूं त्याग कर. ए वैराग्य रस छे. ॥ १५ ॥

वंशस्थवृत्तम् ॥ विलोक्य किं सुंदरमंगनोदरं करोषि मोहं मदनज्वरातुर॥नो ईक्षसे दुर्गतिपातसंभवं भवांतरे भाविनमंगनोदरम् ॥ १६ ॥

अर्थः—कामज्वरवडे पीडाने पामेला हे पुरुष, सुंदर अंगना एटले स्त्रीनुं उदर जोईने तूं कां मोहने पामेछे ? अंग एटले हे पुरुष, ए उदर नथी पण जन्मांतरने विषे अने नरकने विषे पडवाथी उत्पन्न थनारा जे दर एटले भय; तेज छे; एवो कां विचार करतो नथी ? आ पद्यमां अंगनोदर ए पद बे वखत छे; तेओनो पदविभागेकरी भिन्न अर्थ छे, ते अहिं यमकरूप चमत्कार जाणवो.

आ वृत्तमां, स्त्रीनुं उदर जोई पुरुष मोहने पामीने कामज्वरनी पीडाने पामेछे ए शृंगाररसछे; अने ए उदर नथी पण जन्मांतर तथा नरकमां थनारो भय छे, एम जाणीने तेनो तूं त्याग कर ए वैराग्य रस छे. ॥ १६ ॥

वसंततिलकावृत्तम् ॥ स्फूर्जन्मनोभवभुजंगमपाशनाभी नाभी कुरंगकदृशां दृशि यस्य लग्ना ॥ नाभीमयं जगदशेषमुदीक्षतेऽसौ यो यत्र रज्यति स तन्मयमेव पश्येत् ॥ १७ ॥

ते निबनुं काट सर्वे प्रकारे करवु जोयने. तेम स्त्रीना नितब सर्वे प्रकारे ग्लानि करवा योग्य ने. तेनो तु त्याग कर. आ पद्यमां उल्लसित तापनो ठेनाग जे नितब ते निबवृक्षाज ने, एम कह्युं, ते आम.—उल्लसित एटले विकसित ने तकारनो अपनोद एटले नाश जेने विषे. एवो निनंब शब्द निंबशब्द थायने ते योग्य ने.

आ वृत्तमां. कमलना जेवां नेत्रोवाळी स्त्रीना जे वे नितब ने. ते संतापनी प्रेरणा करनारने, एटले स्त्रीनी कटिनो पाछलो जाग जोयाथी अन्यत मदन विकार उत्पन्न थायने. ते इछा पूर्ण न थयाथी तेना मनमां संताप थायने, एवो ते नितंबोनो जे प्रजाव ने. ते शृंगार रस ने: अने स्त्रीओना नितब निंबडाना जाडजेवा कडवा ने. माटे एनो तुं त्याग कर; ए वैराग्य रस ने. ॥ २९ ॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्॥नूनं नूपुरमेतदायतदृशां रागादिविद्वेषिणां क्रीडार्थं पुरमित्यवेत्य न दृशाप्यालोकनीयं कचित् ॥ येनास्मिन् मुखमात्रचंगिमगुणैराकृष्य तैरुल्बणैर्बद्धस्य प्रसभं चिरादपि सखे मुक्तिर्भवित्री न ते ॥ ३० ॥

अर्थ:— हे सखा. नूनं एटले निश्चयेकरी विशाळनेत्रोवाळी स्त्रीओनां जे आ नूपुर एटले चरणजूषण. रागादिशत्रुनं क्रीडा करवानुं पुर एटले नगर ने; एम जाणीने क्यारे पण नजरेकरी जोईश नही. जेने पोतानुं सारुं थवानी इछा हो, तेणे क्यारे पण शत्रुनुं नगर जोवुं नही. केमके, ए नगर प्रसिद्ध, उदार, त सुख्यत्वे श्रेष्ट गुणे आकर्षण करी बलात्कारेकरी तने बांधीलेशे, तेथी फरी छूटी शकनार नथी अर्थात् ते नूपुरमां जो तु आसक्त थशे तो, फसाई पड; आ पद्यमां स्त्रीओना नूपुरने शत्रुनुं नगर कह्युंने, ते आम.—नूपुरशब्दनुं विशे जे नून ने,तेनो अर्थ न शब्देकरि ऊन एटले जे रहित ने, एवुं नूपुर ने,एम जाणवुं. आ वृत्तमां' स्त्रीओना पगनां नूपुर पुरुषना मननुं हरण करी लिएने. ए शृंगाररस अने ते नूपुर शत्रुनुं नगर ने एम जाणीने तेनो त्याग करवो, ए वैराग्य रस ने. ३०

उपजाति वृत्तम्॥यास्त्रीतिनाम्ना विभृते शमादौ शस्त्री प्रबुद्धैरवबुध्यतां सा ॥ एनां पुरस्कृत्य जगत्यनंगजटो यतः पुण्यजटं भिनत्ति ॥ ३१ ॥

अर्थ:—जे स्त्री एवुं नाम तु अंतःकरणमां धारण करेने, ते शमादौ एटले उपशम धर्म कर्मने विषे शस्त्री एटले एक आयुधविशेष ने, एम सुजाण पुरुषोए जा

एवु आ ससारनेविषे कामरूप योद्धो, ए स्त्रीरूप शस्त्रीने आगल करीने धर्मरूपयो द्धानु भेदन करेछे जेम सग्रामनेविषे एक मोटो योद्धो, पोताना शस्त्रेकरीने प्रति योद्धानुं भेदन करेछे, तेम कामरूप योद्धो स्त्रीरूप शस्त्रीए करी धर्मरूप योद्धानु भे दन करेछे आ पद्यमा स्त्रीने शस्त्री कहीछे, ते आम —या स्त्री शमादौ त्रिजुते, ए टले जे स्त्री प्रथम शकार धारेछे, अर्थात् स्त्रीशब्दनी आद्ये शकार आव्यायी शस्त्री शब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमा, प्रसिद्ध शृंगाररस नथी, परंतु स्त्रीनी निर्भर्त्सना द्वारा वैराग्यान्तर गत शृंगारनी पण सूचना करीछे. ॥ ३१ ॥

वसततिलकावृत्तम् ॥ येय वधूरवसिता हृदये प्रमोदसपा
दनव्यतिकरैकनिबधन ते ॥ सा दुर्गदुर्गतिपथेन जगन्नि
नीपोर्धूरेव मन्मथरथस्य विभावनीया ॥ ३२ ॥

अर्थ — हे पुरुष, ताराहृदयनेविषे हर्षसमूह उत्पादन करवानु कारण जे वधू एटले स्त्री, अवसिता एटले आवीने रहीछे, ते स्त्रीने तु जे हृदयने हर्ष उत्पन्न करनारी मानेछे, ते वधू, अत्यत दुर्गम नरकना मार्गेकरी लेई जवाविषे इच्छा क रनारा कामरथनी धू एटले धुरी छे, एम तु जाण अर्थात् ए स्त्री नथी, किंतु नरक ना मार्गेकरी ससारनेविषे लईजनारो जे कामरथ तेनी धुरी छे आ पद्यमा व धू कामरथनी धुरी छे, एम कह्यु, मूलमा वधू शब्दनु विशेषण अवसिता शब्द छे, एनो अर्थ वकारेकरि सित एटले रहित थयायी वधू शब्दनो धू शब्द थायछे ते योग्य छे

आ वृत्तमा, स्त्रीने हर्षसमूह उत्पादन करनारी, अने पुरुषना मननेविषे रम ण करनारी कहीछे, ए शृंगार रस छे, अने ए वधू नथी पण कामदेवना रथनी धुरी छे, एम जाणीने तु त्याग कर, ए वैराग्य रस छे. ॥ ३२ ॥

मदाक्रातावृत्तम् ॥ प्रीति तन्वत्यनलसदृशो यास्तरुण्य
स्तवैता देहद्युत्या कनकनिभया द्योतिताशा विवेकिन् ॥
सत्य तासामनलसदृशा सयमारामराज्या मान्नू पा
श्वेष्यसि यदि शिवावाप्तये बद्धबुद्धि ॥ ३३ ॥

अर्थ — हे विवेकवान् पुरुष, जेनी अनलस एटले आलस्य रहित दृष्टि छे, अने

जेनी सुवर्णना जेवी शरीरनी कांतीए दिशाओ प्रकाशित करीछे, एवी तरुण स्त्रीओ तने हर्ष उत्पन्न करेछे. ते अनलसदृश एटले अग्निना जेवी स्त्रीओनी सत्ता संयम एटले चारित्ररूप वनपरंपराविषे छे. एम जाण. अर्थात् जेम अग्निसंपर्केकरी वन दग्ध थायछे, तेम स्त्रीसंपर्केकरी चारित्र दग्ध थायछे. जो मोक्षप्राप्तिनी बुद्धि तने थई होय, तो स्त्रीओनी समीप पण जतो नही, आ पद्यमां अनलसदृश पद बे वार आव्यांछे. तेनो अर्थ नोखो नोखो छे, ए चमत्कार जाणवो.

आ वृत्तमां. चंचलदृष्टिवाली स्त्रीना शरीरनो वर्ण सोना जेवो होय, तो पुरुषना मनमां अति आनंद उत्पन्न करेछे. ए शृंगार रस छे; अने स्त्री अग्नि जेवी छे. ते संयमादिक वनपरपराने बाली भस्म करनारी छे, माटे एनो तुं त्याग कर, ए वैराग्य रस छे ॥ ३३ ॥

मालिनीवृत्तम ॥ क इह विषयभोगं पुण्यकर्मायशून्यं स्पृहय
ति विषभोगं भावयेस्तत्वतस्तम् ॥ स्मरति न करणीयं मूर्छि
तो येन जंतुः पतति कुगतिगर्ते नेक्षते मोक्षमार्गम् ॥ ३४ ॥

अर्थः— आ संसारनेविषे कयो पुरुष पुण्यकर्मनो आय एटले लाभ, एणेकरी शून्य एटले रहित जे विषय भोग एटले पांच इंद्रियना सुखनी इच्छा करेछे, केमके ए जे विषयभोग छे, ते विषभोग एटले विषभक्षण छे, जे विषयभोगना योगे मोहने पामेलो प्राणी, स्मरण करवायोग्य ते करतो नथी. तेथी नरकरूप खाडामां पडेछे. ते फरी मोक्षमार्गने पामतो नथी, जेम विष खानारा पुरुषने स्मरणादि रहेतां नथी, तेम विषयोपभोग करनाराने पण स्मरणादिक रहेतां नथी. आ पद्यमां विषय भोग जे छे ते विषभोग छे, एम कह्युं; ते आम.— विषयोपभोगी पदनुं यशून्य ए विशेषण छे, एनो अर्थ यकारेकरी शून्य एटले रहित थायछे; एम यकाररहित जे विषयभोग ते विषभोग छे, ते योग्य छे.

आ वृत्तमा, पांचे विषयोनो तिरस्कार कर्यो छे, तेओनुं मूल कारण स्त्री विषय सुख शास्त्रोमां कह्युछे, ते आश्लोकमां यद्यपि प्रगट कह्यु नथी तथापि अर्थात् सिद्ध थायछे, तेथी ए शृंगार रस छे; अने विषयभोगने विषभोग कह्याछे ए वैराग्य रस छे. ॥ ३४ ॥

उपजातिवृत्तम् ॥ सखे सुखं वैषयिकं यदेतदाभासते तन्नरकां
तमंत ॥ सत्यं तङ्क्सर्पदृघप्रबंधनिबंधनत्वान्नरकांतमेव ॥ ३५ ॥

अर्थ – हे पुरुष, जो तने मुक्तिरूप नगरी प्रत्ये जवानी अभिरुचि होय, तू कामरूप गजशिशुने क्रीडाने अर्थे, विहारविषे योग्य एवा आ स्त्री स्थली एटले भूमि, तेने तू दूर मूकीदे जो तू ए भूमिने मुकीश नही, तो ए प्रबल वायुए करी विस्तारने पामेला व्यामोहरूप रज कणो तारा नेत्रोमां पडशे तेथी मार्ग सूझनार नथी अर्थात् मोक्षमार्ग मलनार नथी आखोमा धूल गयाथी मार्गने जोई शकातु नथी ए प्रसिद्ध छे, एम संसाररूप अरण्यमा भ्रमण करीश

आ वृत्तमा, कामने हस्तिनाबालक जेवो कह्योछे तेने क्रीडा करवाने स्त्री नितंब रूप पृथवी छे, अर्थात् कामक्रीडानु स्थान जे स्त्रीना नितंब कह्याछे ए शृंगाररस छे, अने ए पृथवीनेविषे यौवनना योगे नेत्रोनेविषे रज कणो पडवाथी मार्ग सूजता नथी, अर्थात् स्त्री नितंबरूप भूमिनेविषे जे पुरुष आवी जायछे ते विषयरूप रजके ऐकरी हृदयांध थई जायछे माटे ए त्याग करवा योग्य छे ए वैराग्यरस छे ॥ ३९॥

मालिनीवृत्तम् ॥ शमधनमपहर्तुं कामचौरप्रचारं विरचयति निकामं कामिनी यामिनीयम् ॥ सपदि विदधती या मोह निद्रासमुद्रा जनयति जनमंत सर्वचैतन्यशून्यम् ॥ ४० ॥

अर्थ –आ कामिनीरूप यामिनी एटले रात्रि, उपशमरूप धन हरण करवाने साह कामरूप चोरनो अत्यंत प्रचार प्रगट करेछे, तथा मोहरूप निद्रानी समृद्धि कर नारी जे ए रात्र, ते जन एटले मनुष्योने अंत करणनेविषे सर्व चैतन्य थकी रहित करेछे जेम रात्रिनेविषे सर्व मनुष्य निद्रित छता द्रव्य हरण करवासारू चोर फिरे छे तेनी पठे जाणी लेवु

आ वृत्तमां, स्त्रीने मोह उत्पन्न करनारी रात्रि कहीछे, ने कामने चोर कह्योछे अर्थात् स्त्री कामोत्पत्ति करनारी छे, ए शृंगाररस छे, अने ए रात्रिनेविषे मनुष्य भ्रम ण करे तो कामरूप चोरना सपाटामा आवी पोतानी संपत्ति तथा प्राण प्रमुख सर्व खोई दियेछे, माटे एनो त्याग करवो योग्य छे ए वैराग्य रसछे ॥ ४० ॥

उपजातिवृत्तम् ॥ मृगेक्षणा नूनमसावसीमा भीमाटवी बुद्धिमतामतीत्या ॥ यद्बाहुवल्लीनिरनगनिघ्नो बध्वा नरान् लम्भयते न मुक्तिम् ॥४१॥

अर्थ –ने बुद्धिमान पुरुषोने अतिक्रमण करवा योग्य नथी, जेने मर्यादा नथी, जेना मृगना जेवा नेत्र छे, एवी आ स्त्री ते भयंकर वन छे, जेनी बाहुलताए करी

कामरूप चोर, मनुष्योने बांधिने फरी छोडी मूकतो नथी. अर्थात् बांधनारोने बांधलो ज रहेवा दियेछे जेम अरण्यमा मार्ग चालनार लोकोने चोर, बेडीवडे बांधिने तेओनुं सर्वस्व हरण करी लीयेछे. तेमज मृगनयणी स्त्री पोतानी बाहुलताए कंठने विषे बंधन कर्या पछी पुरुषने मूकती नथी.

आ वृत्तमां, स्त्रीने मर्यादारहित कही, तेथी हावभाव सूचव्या छे. स्त्रीने वनरूप कही ने तेनी भुजाने लतारूप कही. एमां कोई पुरुष सपडाय तो फरी पडेछे. अर्थात् स्त्रीए भुजावडे आलिंगन कर्युंहतां तेथी पुरुष छूटी शकतो नथी. ए शृंगार रस छे. अने ए वनमां कामरूप चोरटा वशेछे ते मोक्षमार्गे जनार पुरुषनुं धर्म धन प्रमुख हरण करी लेनार छे. माटे त्याग करवा योग्य छे, ए वैराग्य रस छे. ॥४१॥

शिखरिणीवृत्तम् ॥ इयं वारं वारं द्युतितुलितरोलंबवलयं न वक्रं भ्रूचक्रं चलयति मृगाक्षी मम पुरः ॥ कुधीकारागारापसरणमति मां रखलयितुं प्रपंचत्पंचेषोर्वदति निबडं लोहनिगडम् ॥ ४२ ॥

अर्थः— आ मृगलोचना जे स्त्री छे. तेनु जे वांकुं भ्रुकुटिचक्र छे, ते भमराओना जेवुं कांतिवाळुं छे. ते मारी पासे वारंवार चंचल करेछे. एम नथी; पण नरशी बुद्धिरूप कारागृहथी दूर नाशी जवानी इच्छावाळो जे हुं छुं. तेमने नाशी जवा न देतां कामना प्रपंच युक्त हु सह जे लोखंडनी बेडी धारण करेली छे. अर्थात् जेम चोरने बेडी नाखीने बंदीखानामा नाखेछे. तेमज मने पण वश करवा सारु आ स्त्री भ्रुकुटी चक्ररूप कामदेवनी लोखंडनी बेडी धारण करेछे.

आ वृत्तमा, स्त्रीनुं भ्रुकुटिचक्र एवुं छे के जे पुरुष तेना फासामां आवे ते फरी छूटी शकतो नथी, अर्थात् अति मोह उत्पन्न करनारुं छे, ए शृंगार रस छे; अने स्त्रीनुं भ्रुकुटिचक्र काम देवनी लोहनी बेडी छे, माटे तेनो त्याग करवो जोये ए वैराग्य रस छे. ॥ ४२ ॥

मंदाक्रांता वृत्तम् ॥ यामोन्यत्र द्रुततरमितो मित्र यत्कंठपीठे नायं हारश्चकितहरिणीलोचनाया चकास्ति ॥ नाभीरंध्रे विहितवसति र्योस्ति कंदर्पसर्पस्तन्मुक्तोयं स्फुरति रुचिरः किंतु निर्मोकपट्टः॥४३॥

अर्थः—हे मित्र, आ आपणे स्थानकने मूकीने जलदी बीजे ठेकाणे जवु जोये. केमके रुपावान थएली हरिणीना नेत्रना जेवा जेनां नेत्र छे, एवी स्त्रीओना कंठमां जे

आ हार शोभे छे, ते हार नथी, किंतु नाभिरूप रध्रनेविषे रहेनारो जे सर्प, तेणे मूकेलु आ मनोहर निर्मोकपट्ट एटले कंचुक दीसामां आवेछे, ठेकाणु मूकीने बीजे ठेकाणे जागी जवानी सूचना करेछे सर्पनु कंचुक देतु छे. माटे नाभीरूप जे कामरूप सर्पने रहेवानुं राफडु, अने आ हाररूप कंचुक छे, एम जाणीने नाशी जवु योग्य छे

आ वृत्तमां, स्त्रीओना कंठना हारनी शोभा कहीछे, तथा नाभिनु वर्णन कर्युं छे, ए शृंगाररस छे, अने ए बन्ने दुःखना साधन होवाथी त्याग करवा योग्य छे ए वैराग्यरस छे ॥ ४३ ॥

वसततिलका वृत्तम् ॥ य कामकामलविलुप्तविवेकचक्षु स्वर्गापवर्गपुरमार्गमवीक्ष्यमाण. ॥ ज्ञानांजन प्रति निरादरतामुपैति भ्रात. पतिष्यति स भीमभवान्धकूपे ॥ ४४ ॥

अर्थ — जे पुरुषना विवेकरूप चक्षु कामरूप कामला एटले नेत्र रोगेकरी ग्रस्त छे ते स्वर्ग अने अपवर्ग एटले मोक्षरूप नगरनो मार्ग जोई शकतो नथी, एमछतां जे पुरुष ज्ञानरूप अंजननो आदर करतो नथी, ते पुरुष भयकर संसाररूप अंधकूपमां पडेछे, जेम कमळाना रोगेकरीने जेना नेत्रो ग्रस्त थयेला होय, ते जो आंखोनविषे अंजन नाखवानो अनादर करे तो अंध कूपमा पडी जाय, तेम ज्ञानांजननो जे निरादर करेछे, ते आ संसाररूप आंधळा कूवामा पडेछे

आ वृत्तमां, कामने नेत्र रोगना जेवो कह्योछे, एटले जेने कामनो प्रचुर प्रसार थायछे ते कांई जोई शकतो नथी, तेम कामरूप नेत्र रोगना थाथी पुरुष विवेकरहित थायछे, एवी कामनी महिमा छे, ते शृंगाररस छे, अने कामांध पुरुष आ संसाररूप आंधळा कूवामां पडेछे, माटे त्याग करवायोग्य छे, ए वैराग्यरस छे ॥ ४४ ॥

शिखरिणी वृत्तम् ॥ भवारण्य मुक्त्वा यदि जिगमिषुर्मुक्तिनगरीं तदानीं मास्माषींर्विषयविषवृक्षेषु वसतिम् ॥ यतश्छायाप्येषा प्रथयति महामोहमचिरादय जतुर्यस्मात्पदमपि न गंतु प्रभवति ॥ ४५ ॥

अर्थ — हे पुरुष, जो तु भवाटवीने मूकीने मुक्ति नगरीप्रते जावानी इच्छा करतो हो, तो विषयरूप विषवृक्षनेविषे वसति नही कर कारणके आ वृक्षनी छाया पण महामोहना विस्तारने पमाडेछे ए विषयवृक्षनी छायाना स्पर्श पण

ह कारक छे. ए कारण माटे आ प्राणी एक पगलुं पण चालवाने समर्थ थतो नथी.
जेम वननेविषे विषवृक्षनी नीचे बेठेलो पुरुष, मत्त थयेलो होयछे, ते वखते त
ान मूकीने नगरमां जवानी इच्छा करे तो एक पगलुं, पण नाखी शकातुं नथी. मा
मोक्षनी इच्छा करनारा पुरुषे विषयसेवन करवानी बुद्धि करवी नही.
आ वृत्तमां, विषयना सेवन थकी पुरुष कामांध थई जाय छे, एम कह्युंछे ते शृं
ाररस छे, अने ते सर्वथा त्याग करवा योग्य छे एम कह्युंछे ते वैराग्यरस छे.
उपजातिवृत्तम्॥सोमप्रभाचार्यमभा च यन्न पुंसां तमःपंकमपाकरोति॥
तदप्यमुष्मिन्नुपदेशलेशे निशम्यमानेऽनिशमेति नाशम् ॥ ४६ ॥
इति श्रीशतार्थवृत्तिकारश्रीसोमप्रभाचार्यविरचिता
शृंगारवैराग्यतरंगिणी समाप्ता.

अर्थः—सोमप्रभा एटलेचंद्रकांति, अने अर्यमभा एटले सूर्यकांति जे मनुष्यो
नो तमःपंक एटले अज्ञानांधकारसमूह दूर करता नथी, ते पण आ अल्प उप
देश श्रवण कर्यो छतां नाशने पामेछे, अर्थात् चंद्रकांति तथा सूर्यकांति अज्ञानरू
प अंधकारनो नाश करवाने समर्थ थती नथी, अने आ उपदेश अंतरनो अंधका
र मटाडवाने समर्थ छे एथी आ उपदेश अति उत्कृष्ट छे. आ पद्यमां ग्रंथकर्त्ता
ए पोतानुं सोमप्रभाचार्य एवुं नाम चातुर्य करी गोपन करेलुंछे, ते ज्ञाताओए
जाणी लेवुं. ॥ ४६ ॥

आ ग्रंथनुं नाम ग्रंथकर्त्ताए शृंगारवैराग्यतरंगिणी राख्युंछे, एनोअर्थ शृंगार अने
वैराग्यरूप तरंगोवाली नदी, एवो थायछे. ते नदीना बन्ने प्रकार नंदलाल नामना टी
काकर्त्ताए स्पष्टरीते दर्शाव्या छे, तेनोज भाव लईने आ अमे अर्थ कर्यो छे. ग्रंथ
ना अंतमां टीकाकर्त्ताए त्रण श्लोक राख्या छे ते आप्रमाणेः—

संवत्सरद्विपमुनीडुमितस्य मासे मार्गे त्रयोदशमिते दिवसे भृगौ च॥ स्वल्पा तरी
विरचिता सुखबोधिकाख्या श्लेषाद्यलङ्कृतरतरंगिणिकासुशास्त्रे ॥ १ ॥ आगारनाम्नि
नगरे नंदलालेन धीमता ॥ दानविशालशिष्यानुरोधेन कृपया गुरोः ॥२॥ युग्मम् ॥
सोमप्रभाचार्यकृतिं सुदुर्गमां विवृण्वता स्वल्पधिया मयाऽत्र यत् ॥ न्यूनाधिकोट्टंकन
मल्पबुद्धितः कृतं विशोध्यं कृतिभिः कृपालुभिः ॥ ३ ॥

इति श्रीशृंगारवैराग्यतरंगिणीभाषांतरं समाप्तं

॥ अथ श्रीवीरस्तवनप्रारंभ ॥

स श्रेयससरसीरुह, सूर श्रीवीर कृपिवर सेव ॥ सविशेषहर्षरसवश, व्यूहसेव्याऽन्हि ॥ १ ॥ अश्वोवसीयससर, गोपसहस्राङ्कुराश्रय सहस्रां ॥ लाजसा वो, भूयाद्भवशो वशी वीर ॥ २ ॥ विषयाशीविषवीश्वर, हिसारस सरसि रिस्हशिशिर ॥ विश्वस्य रोपशार्वर, सहाररवे शिवाय स्या ॥ ३ ॥ आगमव वश्री,विलासलीला विहाय सुरयोषा ॥ य शिश्रियु स्वरीशा श्रीवीर श्रेयसं व ॥ ४ ॥ हरहासहसशशिहा,रहारियशमो शिवविसश्रययो ॥ ईहे वरिवस्यां वीरेशम्यान्हिसारसयो ॥ ५ ॥ शीलसरोवरलहरी, विहारशिशिरा असवरीयो व । वीरस्य व्याहारा, न्हियासुरशरीरशौर्यहरा ॥ ६ ॥ उरुसशयशलस्वरु, ररिहा वीराह्यो वरवृषाम ॥ ध्वरसेयाल्लीय वा, वर्षारुहवारिवाहरव ॥ ७ ॥ सरलाशया शुभ्रा, रिरसव श्रायसश्रिया सह ये ॥ येषा श्रीवीरेश्वर,सेवारस एव हर्षाय ॥ ८ ॥ शिवाजयसरसी, वरलाजर सर्वविषयविभ्राम्य॥ सवरसारसवासर, सर्वेषा लानवीक्ष य ॥ ९ ॥ शीलश्रियो विवाहावसरे विश्वाश्रयो रसावजये ॥ आवर्ष वसुवर्षा [illegible] शा विशाजरयरासी ॥ १० ॥ आगसे सहसाह, वासवसेवार्ह शिवरसान हरे ॥ [illegible] हविश्रसारसाय, ध्वरसायायासविरहवर ॥ ११ ॥ अहरुपयोविशरारु,श्रीसर्वस [illegible] हि शशिसरोरुहयो ॥ अशरारुस्वास्यश्री, लास्यविलासैर्विलोलयसि ॥ १२ ॥ [illegible] रसजिनराजे , शोषे कृपिर्गवेजेयऽत्र वीर ॥ सर्वाशालासियशो,राशिरहिलाह लाः ॥ १३ ॥ उरसिशयालु श्रेय ,श्रिया असवरसरोरुहशशीव ॥ रापाल [illegible] वारह, रसाविहार ससेवाया ॥ १४ ॥ सदानिक ॥ अविषहशिर शुन, सेहो विषयवैरिवारस्य ॥ व्याहरसि वृषरहस्य, शस्याय शरीरिविसराय ॥ १५ ॥

सुमार , स्वरहार्यशिरोविलोलसेव्यान्हे ॥ सहरसि हेजयाह , सिहश्व [illegible] ॥ १६ ॥ शिशिराशुशिशिरलेश्यं,रायव्यवहारजाजसैररुपे ॥ सश्री [illegible] ॥ १७ ॥ उल्लासय स्वसेवारसशीले विशि शिवाव ति मह्विषयहजाहज, लहरीसहारसुशिरीय ॥ १८ ॥ अरसी वशयसि

अर्थ – हे सुगहिविशा ॥ ये सह रसाजयाऽहा,सि हारहूाररसाजग्म रतो हो, तो विषगसुरागार्यवीर्यशाजी य ॥ वरिवस्

या पण महामोहनास्य सूरिजरं ,विहाय आशारसाविहारियशा ॥

हरिः, सुरशैलशिलाविनाशोराः ॥ २१ ॥ शुश्रूषुशिष्यविसर,श्रव.सुहर्षरसवर्षिसंरा वः ॥ अविजयवार्यैश्वर्य, श्रीयोपाश्लेपरसविवशः ॥२२॥ सैपोऽसहायवीरः, शिवा श्विाराद्वेष्यसुसहेषु ॥ विश्वस्य सुरोर्वीरुह, आयुष्य· श्रेयसां वीरः ॥ २३ ॥ संसारो रविपालय. वारिविशोर्पार्वद्व्यवाहो वः ॥ अव्याछीशाऽजससुर, विजयाद्दावाऽविपय शीश· ॥ २४ ॥ पंचभिः कुलकं॥ अर्हियोऽजसस्य शिष्या,वयवलवन्याऽयविग्रहवि ग्रस्य ॥ श्रीवीर वीरयस्या छेऽया अश्रेयसमीरस्य॥ २५ ॥ यः पंचवर्गपरिहारमनो ज्ञमेतन्नेतश्चमत्कृतिकर गुणकीर्तनं तं ॥ जिव्हाग्रवर्ति वितनोति विपश्चितानाः श्री वीरनाम्ययुजि न प्रभवंति तस्मिन् ॥ २६ ॥ इति पंचवर्गपरिहारेण श्रीजिनप्रभसू रिकृतश्रीवीरस्तवनं समाप्तम् ॥

श ॥ तत्रापि नीतिं दधती शशाकाव्याजेन जग्राह तृण नु वक्रे॥ १२॥
रसलालसत्वात् तद्बाधिनीं केवलबोधलक्ष्मीं ॥ अप्यायतामादरिणीं वरीतु
य मत्वा त्वमिव त्वमस्या ॥ १३ ॥ अपोढपके कविनिर्निपेव्ये
नगजाले ॥ विनो नवक्षाड्मुखगागपूरे दुर्वादिपूगास्तृणवत्तरति ॥ १४॥
मये दिग्विजये समतात् यश शशाकेन कृते भुव ते ॥ कुहूध्वनि केवलमेव
पिकानां शरणीचकार ॥ १५॥ जगत्रयोऽप्यासि यशस्त्वमेतत् क स्पर्द्धता
इ ॥ यस्यापरार्द्धेपि तृणस्य नैव प्रनाप्रनावो लनतेऽवकाश ॥ १६
रुढिमात्र त्वन्नाम्नि तु श्रीर्वसतीति मुष्टि ॥ कुतोन्यथा तत्पदीक्षिताना पुर
ति नित्यमृद्धि ॥ १७ ॥ वसुनूतिसुतोपि कौतुक वसुनूतेर्जनक प्रणेमुषां॥
नवोपि वर्तसे कथमगीकृतसर्वमगल ॥ १८ ॥ नाथ करोषि वृषमीश
धत्से सदा स यमपाशमपि प्रचेता ॥ श्रीदोपि सुत्रितयमालयवासकेलिस्त्व
हरसे हरहेतिपातं ॥ १९ ॥ यत्तपत्यपि कलौ जिनप्रनाचार्यमत्रमनुशीनतां
॥ हेतुताऽत्र खलु तत्वदेकताध्यानपारमितयैव गृह्यते ॥२०॥ मयेव दुर्दैव शमयितुं
नूनमहिमा सुतरस्त्व लेशेन श्रुतरथधुरा गौतमगुरो ॥ कुरुद्योतं क्लीवदिनपतिसुधा
मणिमे प्रनो विद्यामत्र प्रनव नवतो गौतम नम ॥२१॥इति श्रीगौतमस्तवन समाप्तम्॥

॥ अथ नेमिस्तवनं क्रियागुप्त ॥

श्रीहरिकुलहीराकर, वज्रमणिर्वज्रपाणिना प्रणत ॥ त्वमवद्यमुक्त नेमे, प्रणयुजा
शेमुषीमघुनां ॥ १ ॥ अवद्य ॥ मयि प्रसादप्रवण कृपानिधे विधेहि शिवेय निज मनस
या॥ यथा जगन्नाथ मधुव्रत व्रतं नवे नवे तारकपादपद्मयो ॥२॥नवे॥ नयेन नेमे
वशर्मक्रिक श्रियानिवासस्तव पादपंकज ॥ दु खोर्मिसघट्टविघट्टितात्मना तेनापि
गनीरतमे नवाम्बुधौ ॥ ३ ॥ आर्ति ॥ दुर्नयार्णवमहातरीनिना स्यात्पदोपहितवस्तु
विस्तरा ॥ पातकानि नवदीरितागिराऽजतु जातशिवदानलालसा ॥ ४ ॥ अनु
प्रेंखन्नखश्रेणिमयूखलेखा निर्वासिताशावलयाधकार ॥ अवार्यसौदर्यविनास
तराग्रियुग्म शरण प्रपद्ये॥ ५ ॥ गे ॥ यस्त्वया ऋजुपथ सता मतो देवखडितकुतीर्थि
कवर्ग ॥ तं प्रपद्य निरवद्यमुद्यता नेदयति ननु मुक्तिपुरीं द्राक्॥ ६ ॥ कदे ॥ वरविन्द
विर्या यस्ते सद्विवेकविनाकृत ॥ तस्यानिमुखमीक्षते न जातु सुखसपद ॥७॥ असत्
कर्मकक्षारनीपाररूपं तावक दुर्नयाद्रुतित्रासन शासन ॥ ये प्रपन्ना गुणास्तदिना
देहिनस्ते सुगमाप्यड खानि सुश्रियां ॥ ८ ॥ असु ॥ विनवराज्यश्च नासुरा
जनावरमणीरमणीनिरल मम ॥ हृदि पदांबुरुहस्मरण चते गिरि च तथ्यगुणस्त

नं तव ॥ ए ॥ नते ॥ जंगज्ञनश्रवणपुटामृतघटी तमोपहा सुललितरा गपेशलां ॥ उदीरयन् गिरमिलदेशनावनावरा गतामयसुखसंपदां सतां ॥ ॥ १० ॥ अरा: ॥ नव्यान् नवभ्रमणनीरुकचित्तवृत्तीन् सद्देशनाभिरभितस्त्वमुरुप्र नावः ॥ दोषासमागमनिमीलितमन्नखंडमाश्वासयेन्न किमुरश्मिभिरंशुमाली ॥११॥ आवः ॥ नृत्यानिनूतपुरुहूतपुराभिरामतां कुर्वंति संततमहोत्सवनाजमुर्वरां ॥ स्वन्नंदनंदथुमयानि महाद्भुतानि ते कल्याणकानि नुवनेश विनाव्य चेतसा ॥ १२॥ अयानि ॥ नास्त्वया भ्रमरविभ्रमवर्णो हे मुनींद्र वपुषि प्रचरिष्णुः ॥ पापशात्रवनिव र्हणकल्ल ध्यानसंततिरिवाश्रितमूर्त्तिः ॥ १३ ॥ कहे ॥ दुर्बोधं मे सपदि पदकीनूत वास्तोः पते सद्भृंगश्रेणीकुवलयवनश्यामलछायकाय ॥ आकौमाराद्भुवनजयिनि र्यस्य ते ब्रह्मवर्मैः कादंबन्नं खलु मदनः स्प्रष्टुमप्यक्षमीष्ट ॥ १४ ॥ उय ॥ नादांनो दनिनादयादवकुलश्रीकंठपीठीलुवन् मुक्ताहारमहारयं रतिपतिं निर्जित्य जैनाजिरे ॥ कीर्त्तिं कैरवकोमलामधिगत त्वामेव देव प्रभुं श्रीमन्नेमिजिनेंद्रचंद्र शरण नीरुर्न्न शरातितः ॥ १५ ॥ एमि ॥ सेवाहेवाकिनः स्युस्तव पदयुगले येऽत्र नक्तिप्रयुक्तास्तेषां देवा. सदा पिप्रति हतविपदः संपदः सुप्रसन्नाः ॥ चिंतारत्नं प्रयत्नात् करतलकलि तं कुर्वतां सर्वकालं कालं नेतर्नराणामटति सुघटतां नो मनोराज्यसिद्धिः ॥ १६ ॥पि प्रति ॥ नवताऽऽरि जयोद्धुरैर्यशःप्रसरैः शुक्लतया जगत्त्रयं ॥ जिनसिद्धिरिति प्रसिद्धिना क् सुखसाम्राज्यमयी महापुरी ॥ १७ ॥ आरि ॥ अवगच्छतरां स्वसेवकं मां नगवन् यां च शिवस्य वार्त्तिनीं त्वं ॥ करुणार्द्रमनाः कुरु प्रसादं मयि तस्याः सपदि प्रकाश नेन ॥ १८ ॥ अवक् ॥ मरकतकमनीयकांतिकाय त्वमभिनतेंद्र किरीटघट्टितांन्हे ॥ चिरमिन मम चंचरीकचर्यां हृदय कुशेशयकोशमन्वजस्रं ॥ १९ ॥ अय ॥ निखिलज्ज गतां गोप्ता गुप्तक्रियास्तवसूत्रणादिति कृतनुतिः सानंदं श्रीजिनप्रनसूरिनिः ॥ नव तु नवतां नेतुं नूयो नवभ्रमनंजव नयमनयदो नीमः श्रीमच्छिवातनयः प्रनुः ॥२०॥ इति श्रीनेमिजिनस्तवनं क्रियागुप्तं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीवर्द्धमानस्तवनप्रारंभः ॥

कंमारिकमनिर्यदापगाधगाद्युद्धविराट्ठदछवि ॥ छंदोनिर्विविधैरधीरधी· स्तोष्येऽहं चरमं जिनेश्वरं ॥ १ ॥ त्रैलोक्यनेतस्तव दुर्नयालीनिनाशनं शासनमाश्रितो यः ॥ त स्येंद्रवज्रायुधमाविरस्ति ङ कर्मशैलेंद्रनिदाविधानं ॥ २ ॥ किमकमाश्चर्यकरं न ते यत् पुष्पंधयोप्येष विशेषविज्ञ. ॥ त्यक्तोपजातिभ्रमणानिजापस्त्वदंगगंधं प्यमनुप्रयाति ॥ ३ ॥ यः गृजत्यलं सौरजसारैरंबुजैस्तव पदांबुजपूजां ॥ प्रेत्य तस्य दिवि देवनृ

गाद्यं स्वागतानि निगदंति सराग ॥ ४ ॥
भोगभ्रगिभृत् ॥ राज्यऋद्धिरुपनम्रमीति तं ननमीति तव य पदौ मुदा॥
किनिकायकरप्रहतानां संप्रसरन् गगने मरुजानां ॥ जन्ममहे तव कस्य
दत्तमदो धकधोंकृतिनाद ॥ ६ ॥ ये नत्तयात्तभ्रमरविलसिता जङ्
विभो॥ ते श्रेय श्रीमधुरमधुररसास्वादो सादात् समजनि कृतिनि ॥ ७ ॥
तत्वारोपलोपप्रवीणा प्रव्हप्राणिप्राणसस्याधुरीणा ॥ आज्ञा धत्ते मोनिना
तुश्रेणि श्रद्धाशालिनी तावकीनां ॥ ८ ॥ वसुधाम सुधामयवक्र विभो
माद्रियते भुवि य ॥ स सुखानि सुखानिरिवोद्यमणीन् बिभृते परितो
भर ॥ ९ ॥ स्रग्विणी कुडलभ्राजिगल्लस्थला तारहारद्युतिद्योतिवक्षस्तग॥
राखमलानामखडादरा पादपीठे लुवत्तावके पावके ॥ १० ॥ कृणान्वे
श्रीभुजगप्रयात विशुद्धि शुभ कर्म पुसा ॥ भवन्नाममन्त्र्य
तिस्मुरापादिता यै ॥ ११ ॥ द्रुतविलंबितमध्यरवध्वनद्
॥ कुसुमवर्षचितं तव देशनावनितल कइवेत्य न मोदते ॥ १२ ॥
णभृता हृदये प्रमिताक्षरापि वत वाक् भवत ॥ अनियततया प्रतिपक्षान्
नितोऽर्थतश्च जगदर्च्यधिया ॥ १३ ॥ जगत्प्रभो भक्तिभरादनुद्विजा
पहृत्य रुत्यवित् ॥ नरेंद्रवशस्थमचीकरच्छचीपतिर्भवतं हरिनैगमेषिणा ॥
ते निखिलनयाविरोधिनीना डुर्बोधद्रुमदलने कुवारिकाणां ॥ माहात्म्य
प्रहर्षिणीना निर्वक्तु कइव यथावदस्तु शक्र ॥ १५ ॥ सिद्धार्थराजकुलनदनपारि
त न भ्राम्यति क तव कीर्तिरपारिजात ॥ वर्णेन डुग्धमधुरेण मतोजनाग
व्ता स्थिरतया सुमनोजनाऽग ॥ १६ ॥ अति महति भवोर्मीमालिनीह प्रमत्ता
जननमरणवीच्या घातदोदूयमाना ॥ कथमपि पृथुपुण्या प्राणिन प्राग्नवि
हणमिर केचिल्लासन तावकीन ॥ १७ ॥ लवणिमतर्जितस्मरपुरध्रिरूपदर्पा
टाक्षलक्षशरविद्धकामिमर्मा ॥ कनकमणीमयाभरणरश्मिरजितागी व्यजयत
नी न भवत समाधिमुद्रा ॥ १८ ॥ प्रबोध भव्याम्भोरुहवनमधीशाधिगमयन्
रन् मोहध्वान्तं परसमयतारा कवलयन् ॥ निविष्ट सिहासन्यलममनभामहत्
तो नवानानातिस्मोदयशिखरिणीव द्युतिपति ॥ १९ ॥ अमितदमितस्ताला
चतुरगमसगमत्रिदशहरणीनेत्रो नेत्रत्रिभागविलोकिते ॥ तव जिन मन
मनागपि न ससाचलयितुमल कि हेमाद्रि युगातमहाबला ॥ २० ॥ दारिद्र्य
रिजयजन्तुर्विसरसामृत्युड खराती के के न तव बलव देवसेवां प्रपन्ना ॥ किं

त्प्रशमनपटोगैपथ्योपयुक्तो मंदाक्रांता जगति जनता डु महेनामयेन ॥ २१ ॥
स्फुटितनिशाकरांशुप्रना जैत्रकीर्तिव्रटाथवर्जितनिखिलत्रिलोकीतलं श्रेयोपार
॥ सरजनविनमत्सुराधीशचूडामणिज्योतिषामरुणितपदपीठमूर्मिनिरेष्यत्रविस्त
प्रनो ॥ २२ ॥ बिभ्राणो नखविक्रियां नयकरीं यूतोत्तमश्चानथीशोऽद्भुतः
नीचकैः प्रकटयन् नूपोवनीकाहृतः ॥ त्वनक्त्या नृतकोप्यवाप्य नृपतां मांसाद्
वर्धयन् धत्तेऽनेकपराजिदर्पदलने शार्दूलविक्रीडितं ॥ २३ ॥ विद्यामंत्रैर्न काये सु
त्तस्निरलं वित्तेन च मूनं पर्याप्तं राज्यलक्ष्म्या कृतममरतया ह्यास्तां सुवदना ॥ स्र
न्त्वेका तु नक्तिस्त्वयि मम मनसि ध्वस्ताखिलमला कैवल्यश्रीर्यया स्यात् करतलनिल
ा साऽन्हाय नगवन् ॥ २४ ॥ श्रीवीरः सर्वदर्शी कनकरुचितनूरोचिरुच्चप्रदीपैर्मग
र सोऽस्तु दीपोत्सव इव जगदानंदसंदर्भकंदः ॥ सूक्तिर्जैनप्रनोर्यं मृडुविशदपदा स्रग्ध
धीयमाना नव्यानां नव्यनूत्यै नवतु नवतुदे नावनानावितानां ॥ २५ ॥ इति
विर्द्धमान स्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ चतुर्विंशतिजिनस्तवनं ॥

कनककांतिधनुः शतपंचकोन्नितवृषांकितदेहमुपास्महे ॥ रतिपतेर्जयिनं प्रथ
मं जिनं नृवृषनं वृषनं वृषनंजिनः ॥ १ ॥ द्विरदलांछित वांछितदायक क्रमजुषत्रि
दशासुरनायक॥ स्तुतिपरः पुरुषो नवति श्रिता वजित राजितरा जितराग ते॥२॥तुरग
लांछनसंनव संनवत्यहरिदं जिन यत्र रसादहं ॥ हृदि दधे नणितीर्गुणनूरुहां
शमहिता महितामहि तावकी ॥ ३ ॥ नवमहार्णवनिस्तरणेछया त्वमनिनंदन
देव निषेव्यसे ॥ व्रतनृतां कुगतेः स्मरनिग्रहप्रसनया सनया सनयात्मना ॥ ४ ॥
त्रिनुवनामितकामितपूरणे सुरतरोरुपमामतिगामुकः ॥ तव विनो नजते नवतः
क्रमावसुमते सुमते सुमतेर्दद ॥ ५ ॥ धरनृपात्मज पद्म जिनेश्वर त्वयि कृतप्रण
नः क्रियते पतिः ॥ रजसतः प्रथितार्थिदरिद्र तोपरमया रमया रमयान्वितः ॥६॥
लसुपार्श्वजगन्नितयाप्तनुः पवितकाशिपुरीकवीलक्षणः॥ सुरुतिनः कृतिनश्चरितं वि
ःशुनवतो नवतो नवतोदनं ॥ ७ ॥ कुनयकाननजंजनकुंजराः शशिरुचे महसेन
त प्रनो ॥ निखिलजीवनिकायहितोक्तिनिः शुनवदा नवदा नवदागमाः ॥ ८ ॥
धि विजित्य मनोनवमग्रहीन्मकरमंकमिषाद्ध्वजमस्य यः ॥ स्तुतजनाः सविधिं
दशां सुरस्तुतमसंतमसं तमसंस्तुत ॥ ९ ॥ दृढरथांगजशीतल शीतलद्युतिकलावि
ा तव नारती॥ मनसि कस्य न हर्षसनाथतां जिन ततान ततानततायिनी॥१०॥

गाद्धयं स्वागतानि निगदंति सराग ॥ ४ ॥ वाजिवारणरथो॰
जोगत्रगिनृत् ॥ राज्यऋद्धिरुपनन्नमीति तं ननमीति तव य पदौ मुदा ॥
किनिकायकरप्रहताना ,सप्रसरन् गगने मरुजाना ॥ जन्ममहे तव कम्प
दत्तमदो धकधोंरुतिनाद ॥ ६ ॥ ये नत्तयात्तन्नमरविलसिता जङ्ग
निनो ॥ ते श्रेय श्रीमेधुरमधुररसास्वादो सादात् समजनि कृतिनि ॥ ७ ॥
तलारोपलोपप्रवीणां प्रव्हप्राणित्राणसस्थाधुरीणा ॥ आज्ञा धत्ते मोनिना
नुश्रेणि श्रद्धाशालिनी तावकीनां ॥ ८ ॥ वसुधाम सुधामयवक्र निनो
माद्यिते ज्ञवि य ॥ स सुखानि सुखानिरिवोद्यमणीन् विनृते
नर ॥ ए ॥ स्त्रग्विणी कुडलभ्राजिगह्नस्थला तारहारद्युतिद्योतिवक्षस्तग ॥
रावमत्तानामखडादरा पादपीठे लुवत्तावके पावके ॥ १० ॥ कृणादेव तेषा
श्रीनुजगप्रयातं विर्द्धि शुन कर्म पुसा ॥ नवन्नाममत्रस्य वर्णानुपूर्वी
तिंभुरापादिता यै ॥ ११ ॥ द्रुतविलंबितमध्यरवध्वनद् विविध
॥ कुसुमत्रर्पचितं तव देशनावनितल कइवैत्य न मोदते ॥ १२ ॥ शुद्ध
एानृता हृदये प्रमिताक्षरापि वत वाक् नवत ॥ अनियत्तया प्रतिपफान
नितोऽर्थतश्च जगदर्च्यधियां ॥ १३ ॥ जगत्प्रजो नक्तिनरादनुद्विजा वि
पहत्य रुत्यवित् ॥ नरेंद्रवशस्यमचीकरन्नचीपतिर्नवतं हरिनैगमेषिणा ॥ १४
ते निखिलनयाविरोधिनीना दुर्बोधद्रुमदलने कुगरिकाणां ॥ माहात्म्यं
प्रहर्षिणीना निर्वक्तु कइव यथावदस्तु शक्त ॥ १५ ॥
त न भ्राम्यति क तव कीर्तिरपारिजात ॥ वर्णेन दुग्धमधुरेण मतोजनानां
म्दता स्थिरतया सुमनोजनाऽग ॥ १६ ॥ अति महति नवोर्मीमानिनीह
जननमरणवीच्या घातदोदूयमाना ॥ कथमपि पृथुपुण्या प्राणिन प्राप्नुवंति
हणमिव केचिदासन तावकीन ॥ १७ ॥ लवणिमतर्जितस्मरपुरध्रिरूपदर्पा
टाह्लजदक्षशरनिक्कामिममां ॥ कनकमणीमयानरणरश्मिरजितांगी व्यजयन
नी न नवत समाधिमुद्रां ॥ १८ ॥ प्रबोध नव्यानोरुहवनमयीशाधिगमयन
रन् मोहध्वांतं परसमयतारा कवलयन् ॥ निविष्ट सिंहासन्यलममनजामा
तो नवानाजातिस्मोदयगिखरिणीव द्युतिपति ॥ १९ ॥
यनुरगमसगमत्रिदशहरणीनेत्रो नेत्रत्रिनागनिलोकितं ॥ तव जिन मन
मनागपि न समाचलयितुमल कि हेमाद्रि युगांतमहाबला ॥ २० ॥ दारिद्र्यात
रिनवजनुर्निस्वसामृन्पुड सरातो के के न तव वजव देवसेवां प्रपन्ना ॥ किं

प्रशमनपटोरौषधस्योपयुक्तो मंदाक्रांता जगति जनता इ सद्देनामयेन ॥ २१ ॥ श रडुद्दितनिशाकरांशुप्रभा जैत्रकीर्तिवटाधवलित निखिलत्रिलोकीतलं श्रद्धयोपासते ॥ सरभसविनमत्सुराधीशचूडामणिज्योतिषामरुणितपदपीवमूर्मिनिरेष्यब्रविस्त्वां प्रभो ॥ २२ ॥ विभ्राणो भवविक्रियां भयकरीं धूतोल्लसद्वालधीरौडं शब्दम नीचकैः प्रकटयन् भूयोवनीकाद्दत्तः ॥ त्वद्भक्त्या भृतकोप्यवाप्य नृपतां मांसादरं वर्धयन् धत्तेऽनेकपराजिदर्पदलने शार्दूलविक्रीडितं ॥ २३ ॥ विद्यामंत्रैर्न कार्यं सुर तरुभिरलं वित्तेन च मृतं पर्याप्तं राज्यलक्ष्म्या कृतममरतया ह्यास्तां सुवदना ॥ स्फू र्जल्लेका तु भक्तिस्त्वयि मम मनसि ध्वस्ताखिलमला कैवल्यश्रीर्यया स्यात् करतलनिल या साऽन्हाय भगवन् ॥ २४ ॥ श्रीवीरः सर्वदिक्कैः कनकरुचितनूरोचिरुद्दीप्रदीपैर्मंग ल्य. सोस्तु दीपोत्सव इव जगदानंदसंदर्भकंदः ॥ सूक्तिर्जिनप्रभीयं मृदुविशदपदा स्रग्ध राधीयमाना भव्यानां भव्यभूत्यै भवतु भवतुदे भावनाभावितानां ॥ २५ ॥ इति श्रीवर्द्धमान स्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ चतुर्विंशतिजिनस्तवनं ॥

कनककांतिधनुः शतपंचकोन्नितवृषांकितदेहमुपास्महे ॥ रतिपतेर्जयिनं प्रथ मं जिनं भवृषभं वृषभं वृषभंजिन ॥ १ ॥ विरदलांछित वांछितदायक क्रमयुवत्रि दशासुरनायक॥ स्तुतिपरः पुरुषो भवति श्रिता वजित राजितग जितगग ते॥२॥भुग्ग भावनसंभव संभवल्यहरिदं जिन यत्र रसादहं ॥ हृदि दधे भणितीर्गुणभूरुहां शमहिता महितामहि तावकी ॥ ३ ॥ भवमहार्णवनिस्तरणेभ्रया त्वमभिनंदन देव निषेव्यसे ॥ व्रतभृतां कुगतेः स्मरनिग्रहप्रभभंया सभया गभयात्मना ॥ ४ ॥ त्रिभुवनामितकामितपूरणे सुरतरोरुपमामतिशामुकी ॥ तव विभो भजते भवतः क्षमावसुमते सुमते सुमतेर्दद ॥ ५ ॥ धरनृपात्मज पद्म जिनेश्वर त्वयि कृतप्रण य. क्रियते पति. ॥ भ्रसततः प्रथितार्थिदरिद्र तोपरमया रमया रमयान्वितः ॥६॥ प्रभुसुपार्श्वजगत्रितयात्तनु. पवितकाशिपुरीकवीजक्षणः॥ सुकृतिन. कृतिनश्रर्ग्नि वि दःशुभवतो भवतो भवतोदनं ॥ ७ ॥ कुनयकाननभंजनकुंजराः शशिरुचे महसेन सुत प्रभो ॥ निखिलजीवनिकायहितोक्तिभिः शुभवदा भवदा भवदागमाः ॥ ८ ॥ भुवि विजित्य मनोभवमग्रहीन्मकरमंकमिषाद्ध्वजमस्य यः ॥ स्तुतजनाः सुविधिं कुदृशा सुरस्तुतमसंतमसं तमसंस्तुतं ॥ ९ ॥ दृढरथांगजशीतल शीतलद्युतिकलावि मला तव भारती॥ मनसि कस्य न हर्षसनाथतां जिन ततान नतानततायिनी॥१०॥

जयति गंडकजकातनुर्जिन शशिमुगोंगुजद्दक् दशमोत्तर ॥
कस्तवरदो वरदो वरदोर्युग ॥ ११ ॥ शुज्ञमयी नसुपूज्यसुत अनो भुवन
पांकिता ॥ तव तनुर्वितनोतु सुखं सतामरुचिरं रुचिरं रुचिरंजिता ॥ १२ ॥
त्वसरोजविकासने रविरुचिर्विमल त्रिजगत्पते ॥ श्रपि शमं नयते तव
रसा तरसा तरसा तृषं ॥ १३ ॥ जयतो निष्कुत नवी
तजित् ॥ विशतु व क्रुमतासुरनिमर्हे नृशमन शमन शमनस्वरं ॥ १४ ॥
तव धर्म धुनोतु वाक्श्रुतिपथाऽतिथितां गमिता सती ॥ किमु करोति न
वरसिता रसिता रसिताज्ञुया ॥ १५ ॥ जयति शांतिजिन स्म जगंति बा
धि मोहमहीपते ॥ रणकथामपि नक्तिनरेण ते ससहसा सहसा
॥ १६ ॥ श्रवति कुंथुजिनाधिपराज्यमाहिमयत स्त्वयि चक्रहतारिनं ॥ त्रिदिवमोत
धिका जनिकृद्धिनिर्धनरसा नरसानरसारकिः ॥१७॥ जगदधीश सुदर्शन नूं
सरिदीश निशामणे ॥ प्रणिदधेऽतिपदो निगदन्नता वनरतानरता नरतावकान् ॥
हृदि नरस्त्वमहिजिनस्मरन्नपि हि मूर्तिमुपैति महत्फलं ॥ निशमयन्
णाचिता किमुदिता मुदिता मुदितादर ॥१८॥ त्वमिन सुव्रत कछप नांवना
हरिवंशविनूषण ॥ शिवसुखाय तप परमुंघिताऽशुनवनो नवनो नवनो
विरतिरमे तटाहतिकुंवितस्मरशर शरणीक्रियतां त्वया ॥ गुणगणस्य
ण व्रजनना जननाजन नावनक् ॥ २१ ॥ श्रनुमितं खलु नामि नव
मयका यदि यन्निर ॥ मह्नितपादनवान् नवत रुपानवनमानवमा नम
॥ २२ ॥ कमठशासन पार्श्वशिवकरे रमतएव मन प्रियधर्मणा ॥ श्रपि
नेन डुरात्मना तव मतेऽवमतेऽवमतेजस ॥ २३ ॥ त्रिजगदीक्षण केवलिक्षण
णमपि प्रनुवीर मनोगिरौ ॥ गुणगणान् मम मास्म विरज्यतामुदयिता दयिता
तावकान् ॥ २४ ॥ च्युतिजनुर्व्रत केवलनिर्वृतिक्षणदिनादवतां मुदमार्हता ॥ श्र
यरुपयत्रिदशेशितां नवसुधा वसुधा वसुधामनि ॥ २५ ॥ इति जिनप्रनवोमयकां
मेक्रमगतयमकाऽवयवस्तुता ॥ बलममी वितरंतु धुरिस्थिता शुनवतां नवतां नव
तिनित् ॥ २६ ॥ सडुपदेशकर प्रसरद्दिताऽखिलतमस्कतया तपनोपमा ॥ दददु
रुतो मम निर्ममा शमरमा मरमाऽमरमानिता ॥ २७ ॥ जयति डुर्नयपकनिरी
हिमतिमितिकैरवकौमुदी॥शमयितु तिमिराणि जते महावृजिननाजिन ॥
ती ॥ २८ ॥ करकृताम्रफला प्रणती जिनप्रनवतीर्थमिनारिमधिश्रिता ॥ हरतु हे
चि सुदशां सुखव्युपरम परम परमम्बिका ॥ २९ ॥ इति चतुर्विंशति

अथ श्रीमहावीरस्तवनप्रारंभः

पराक्रमेणेव पराजितोऽयं सिंहः सिषेवे धृतलक्ष्मदंभः ॥ सुखानि वः खानिरयं र
माणां हेमातुरस्तीर्थकरः करोतु ॥ १ ॥ सप्ताग्वतंजाः करसप्तकोच्चः कर्मेधसप्ता
निरप्तनीतिः ॥ प्रणीतवान् सप्तशती नयानां वीरः श्रिये व्यंजितसप्ततत्वः ॥ २ ॥
शक्रानत प्राणतकल्पपुष्पोत्तरात्वमाषाढवलक्षपष्ठ्यां ॥ देवाधिदेव द्विजदारदेवा
नंदोदरेऽभूर्विहितावतार ॥ ३ ॥ ऽपस्य नभावसिता त्रयोदशी द्व्यशीत्यहानंत
रमीशितस्ततः ॥ सुरेशसेनापतिदेशिताध्वना क्षात्रं कुलं यत्र पवित्रितं त्वया
॥ ४ ॥ प्रभूतभूतिद्युनवप्रभुवा नवज्ञतुर्महे नोऽजनि हे जिन ध्रुवम् ॥ जगत्रयीजंतु
षु हर्षवर्षिणी निरुद्धदुर्मदनत्रयोदशी ॥ ५ ॥ त्वया स्वदेहद्युतिसंविभागसंभावि
त हेम सुवर्णमासीत् ॥ तारं तु हीनं त्वदनुग्रहेण दुर्वर्णमित्यापदवर्णवादं ॥ ६ ॥
बाल्ये विबोधाय हरेः सुराद्रिः पादाग्रलुन्नस्तव यत्प्रकंपे ॥ चित्रीयता त्वत्तरसा रसात
न्मूर्धानमाधूनयतिस्म नूनं ॥ ७ ॥ बभूव भाग्यातिशयप्रभावात् गुरुस्तवापि त्रिजग
द्गुरोर्यः ॥ बुद्धयैव तं मेरुगिरेर्गरिष्ठं सिद्धार्थमप्यार्यगणा गृणंति ॥ ८ ॥ कथं गु
णैः प्राप्तयशःपताका नारीषु नास्तु त्रिशलाशलाका ॥ यत्कुक्षिशुक्तौ विमलः सुवृ
त्तो मौक्तिक्यभूस्त्वं गुणयुक्तिहृद्यः ॥ ९ ॥ दिवि प्ररूढं सुरमीश मुष्टिघातेन यद्वाम
नतामनैषीः ॥ गर्वाद्रिखर्वीकरणश्रमं तु चकर्थ तीर्थंश्वर शैशवेन तत् ॥ १० ॥ मो
क्षं गमी यः खलु तद्भवेपि गंतु कथं सोर्हति लेखशालां ॥ इतीव शक्रोऽपजलाप
पित्रोरनौचितिं ते विनयेन धीमान् ॥ ११ ॥ व्याकुर्वतस्ते हरये यदागमं संगृह्य बु
ध्या कतिचित् गिरां लवान् ॥ अध्यापको यद्विदधे तदुत्प्रकरेंद्र भुवि व्याकरणं प्र
थामगात् ॥ १२ ॥ यस्या न कस्योदितमुक्तिमार्गमार्गस्य कला दशमी शमीश ॥ प्रा
ज्यं प्रभो यत्र विसृज्य राज्यं श्रमणसाम्राज्यमुपापयास्त्वं ॥ १३ ॥ शिवालये प्रो
ज्झितविग्रहं यत् त्वत्पादमूले चमरं निलीनं ॥ जंभारिदंभोलिभयः प्रचंडो नस्प्र
ष्टुमाप्यैष किमत्र चित्रं ॥ १४ ॥ न वाधितुं जातु दधुः समर्थतां मुनींद्र धातोरि
व नान्ववर्त्तिषुः ॥ समाविरुद्धां प्रकृतार्थसंपदं तवोपसर्गा व्यशिषंस्तु केवलं ॥ १५ ॥
न कौशिके रागमुपासनापरे करोपि रोषं स्म न चंडकौशिके ॥ अहो उदासीनत
यैव निर्जिता चमूस्त्वया दुर्विपहापि कर्मणां ॥ १६ ॥ निवर्हितुर्गा सुर
भर्तुरुद्यतस्तथा तथा यो दुरचेष्टत त्वयि ॥ वहिःकृतः स्वर्गसमाजसंगमा

तु ससगम स्यान्नकथं जनंगम ॥ १७ ॥ एकाग्रपङ्क्तित्रिशतावसाने ॐ
रे ऋजुवालिकाया ॥ तवोदगात् केवलऋद्धिरस्ताऽपराधराग्रस्य शुचौ दशम्यां
॥ १८ ॥ एकाङ्कमाहुर्मुनय कथ मामितीव कोपात् त्वङ्घ्रपर्यशोक ॥ श्रदीदृशत् प्र
पदगर्भपुष्पव्याजस्फुरत्तारकदृक्सहस्र ॥ १९ ॥ सुरैर्विकीर्णास्तव देशनावना बभु
प्रसूनप्रकरा समतत ॥ नयश्लथीभूतकरात्परिच्युता शराऽवानगजटस्य कौसुमा
॥ २० ॥ स्फुटीनवन्मालककौशिकीमुखप्रशस्तरागस्तवसस्तवोचित ॥ प्रविश्य हि
व्य श्रवणाध्वनि ध्वनिर्मुदे न केषा रजयन् मृगानपि ॥ २१ ॥ स्यातु चनद्राम्बर
युग्मकैतवात् त्वदीयदतद्युतिजाह्नवीजले ॥ भ्रुव त्वदास्याबुजवासिनारती युग्म
वपेता कलहससदपती ॥ २२ ॥ स्थैर्यं हृतं यद्भवता शिशुत्वे तद्याचनाय स्फुटमे
ष मेरु ॥ स्वयसमागादिति तुगहेमसिहासने ते करवति तर्क ॥ २३ ॥ दृतु क्षमा
ह तम एकमेव तद्देहि मेसर्वतमोपहत्व ॥ इतीव विज्ञापयितु सिषेवे नामडलत्व
धरो रविस्त्वा ॥ २४ ॥ दूराङ्कराजन्मनिदे नवज्ञी सुधासपीत्यै त्रिजगज्जनौघ ॥
नून नदन् सस्रदि देवदेर्वादिव्याहृतो डुडुभिराजुहाव ॥ २५ ॥ मेद प्रमाणातरश
ितं सन्नमस्यते सर्वं इतीव पुसा ॥ सितातपत्रत्रितयच्छलेन रत्नत्रय दर्शयतिस्म ता
दृात् ॥ २६ ॥ सुपर्वसचारितहेमपकजापदेशतश्चंक्रमणक्षणे किल ॥ गतस्पृहस्या
पि गुणैर्वशवदा पदोस्तले ते निधयो नवालुठन् ॥ २७ ॥ त्रैलोक्यसयुक्तनिरकुशश्रि
प्राकाररेखात्रयवेष्टिताग ॥ नंदत धन्या कतिनाम रक्षायत्रोपम त्वां सुमनोर्चनीय
॥ २८ ॥ त्वत्प्रातिहार्यश्रियमित्थमेद्य चेतो न यस्येश चमच्चकार ॥ स केवली चेत्र
तदा ऽस्तु तस्य नरत्वमस्याजननिर्जगत्या ॥ २९ ॥ अनिद्यविद्यामदनङ्कदर्पणा गणा
धिपास्ते यदसूत्रयन् श्रुतं ॥ गिरस्तवैव त्रिपदीसुधाकिर सता मन सप्रथितेन गौ
रव ॥ ३० ॥ अशेषनायापरिणाममञ्जुल विचित्रसदेहविपातवज्रल ॥ सुवे वच
स्ते नयनिर्विरोधता त्रिशयि सबोधनिर्गा निवयन ॥ ३१ ॥ तप्त्वा तप पद्ममपालन
ध्य रोगारिर कार्तिकदर्शरात्रौ ॥ अपापमापु पदमीश पापा पुर्या द्विपुगुरात
निरस्तरापु ॥ ३२ ॥ स्वे यत्र बुद्धे सति फल्गुनीषु जाले स्मरोऽजूम्भृतकम्पमानो
तद्विभ्रयानक्फ्लुनीषु वभूव कल्याणकपचक ते ॥ ३३ ॥ भुवनाधिपतरनतया
नवत स्वातिगतेऽत्र नाथिपे ॥ यदयाद्युचित घनावनोदकयोगान्नर्मालिकश्रि
या ॥ ३४ ॥ ज्ञातेद्राक्कुजप्रदीप नगरन् यदारुवृदारकश्रेणीरत्नकिरीटकातिनद्री
सम्भाव्यमानाह्नये ॥ मोहोर्वीपतिगर्वपर्वतनिद्वि व्याधामधामश्रियामश्रांत जिनमि
ह्मभूम्नि ह्नि श्रीवीर तुभ्य नम ॥३५॥ इतिस्तुतिपरायणे त्रिजगदेकचूडामणे प्रसीद

युग्म ॥ पुण्य स एषाऽवसरोऽमराली सरो मरालीव निषेवते यत् ॥ २ ॥ प्रणाम
पूर्णसमस्तकाम समस्तकाम सकृदप्यधीश ॥ भवतमानस्य विमानमाया विमान
या प्रभवो भवति ॥ ३ ॥ भयाढ्यभुग्नक्रमभंगमाल भंजगमालङ्कितसर्वभाव ॥ कम
म धीमन्निरमानि शान्तं रमानिशात न वचस्त्वदीय ॥ ४ ॥ नित्य प्रमाभेनविना वि
ताम विनाशितामगजमगजाजा ॥ त्वन्नाम धन्य स्मरतीश सार रतीशसारगभृंग
नाद ॥ ५ ॥ भृत्योपि योत्राऽवृजिनप्रभावे जिनप्रभावैकरसस्त्वयि स्यात् ॥ तस्य
श्रीगजाश्वसेने गजाश्वसेनेश्वरतामुपैति ॥ ६ ॥ भूयान्नमो नीलतमाऽलकाय तमाल
कायप्रभ तुभ्यमेव ॥ भवात्त्वदन्य कतमोऽविता न तमोवितानच्छिदुरोऽर्क एव ॥ ७ ॥
त्वकुल रुन्थ्यप्यविगमवामे विराम वामेय मयि प्रसीद॥भव्यान् स्तव पातु जिन प्रभा
जिनप्रभो य विदधे यतीड् ॥ ८ ॥ इति जिनप्रभसूरिविरचितं श्रीपार्श्वस्तवन समाप्तम्

॥ अथ श्रीपार्श्वनाथस्तवनप्रारभ ॥

श्रीपार्श्वपादानतनागराज प्रोत्सर्पदेन कफनागराज ॥ सतां हृताऽसत्परिणामगर्व
त्वां गम्नुम स्थैर्यगुणाऽमगाग ॥ १ ॥ ये मर्त्यदेवासुरमाननीय पद्मपति ते श्री
रमाननीय ॥ सयस्त्रिलोकीतिलकाऽमितानि सिध्यंति तेषामिह कामितानि ॥ २ ॥
एताद्वैप पद्मदभानुसार नाशिश्रयत्ते कमलानुकाऽर ॥ कुतोऽन्यथा त्वन्नतिदीक्षितेषु म
वैश्रिया श्रेम तदीक्षितेषु ॥ ३ ॥ अन्यर्हितं नत्यकदंबकानां स्वप्नकपाहनसदंबकानां
गवनि ये त्वां विविशमनते निर्वाणसौख्य बुधवद्मन ते ॥ ४ ॥ स्तैरह स्यपनाधिशा
नि वैनु श्रिया ते गुरुनाथिशानि ॥ नाक्षोनि चेत परभावजीनमर्चित्यविस्माविग
नरभाव ॥ ५ ॥ प्रभा तवाऽस्तम्मराजमाने नरवांशुजालेन विराजमाने ॥ रमं
त्रे व्हिगृहे स्मनाकांक्षनीय सुमहे स्मन ॥ ६ ॥ आशंक्षिता बहुवि र जननी
गमा स्पष्टामनादपतुरी भुरनानिगमा ॥ अप्यध्वरश्रुतितप सवनादृते न पुमा
प्यते चित तर स्मरनादृतेन ॥ ७ ॥ इत्य फणीइ सततश्रितपार्श्व नाऽथ स्त्री वा मर
दत्ति दस्तर पार्श्वनाथ ॥ नर्म्म स्पृष्टामगृजिनप्रभनाय नव्या लक्ष्मी विनति समन म
मरादनध्या ॥ ८ ॥ इति जिनप्रभसूरिविरचितं श्रीपार्श्वनाथस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीनंदीश्वरकल्पप्रारभ ॥

आराध्य श्रीजिनाधीशान् सुराधीशार्चितक्रमान् ॥ कल्पं नंदीश्वर द्वीपस्याय श्री
भण्यते ॥ १ ॥ अस्ति नंदीश्वरोनामाऽष्टमो द्वीपो द्युमनिभ ॥ तत्परिक्षिप्ता न
दंश्च नामा दिना पुन ॥ २ ॥ एतद्वलयविष्कंभे लक्षाशीतिश्चतुर्युता ॥ चतस्

नां त्रिषष्टिश्च कोट्यः कोटीशतं तथा ॥ ३ ॥ असो विविधविन्यासोद्यानव
भोगभूः ॥ जिनेंद्रपूजासंसक्तसुरसंपातसुंदरः ॥ ४ ॥ अस्य मध्यप्रदेशे तु
पूर्वादिदिक्षु च ॥ अंजनवर्णाश्चत्वारस्तिष्ठंत्यंजनपर्वताः ॥ ५ ॥ दशयोजन
तिरिक्तविस्तृतास्तले ॥ सहस्रयोजनाश्चार्द्धे क्षुद्रमेरूच्छ्रयाश्च ते ॥ ६ ॥ तत्र
देवरमणो नित्योद्योतश्च दक्षिणः ॥ स्वयंप्रभः प्रतीच्यस्तु रमणीय उदक्स्थितः
शतयोजनायतानि तदर्धं विस्तृतानि च ॥ द्विसप्ततियोजनोच्चान्यर्हच्चैत्यानि तेषु
॥ ७ ॥ पृथक् द्वाराणि चत्वार्युच्चानि षोडश योजनीं ॥ प्रवेशे योजनान्यष्ट वि
न्यष्ट तेषु तु ॥ ९ ॥ तानि देवासुरनागसुपर्णानां दिवौकसां ॥ समाश्रयादेव त
मन्निविश्रुतानि च ॥ १० ॥ षोडशयोजनायामा स्तावन्मात्राश्च विस्तृता ॥ अ
योजनकोत्सेधास्तन्मध्ये मणिपीठिकाः ॥ ११ ॥ सर्वरत्नमया देवच्छंदकाः पीठिको
रि ॥ पीठिकाभ्योऽधिकायामोच्छ्रयभाजस्तु तेषु च ॥ १२ ॥ ऋषभा वर्द्धमाना च त
ा चंद्राननापि च ॥ वारिषेणाचेति नाम्ना पर्यंकासनसंस्थिता ॥ १३ ॥ रत्नमयोपु
ाः स्वस्वपरिवारेण हारिणा ॥ शाश्वतार्हत्प्रतिमाः प्रत्येकमष्टोत्तरं शतं ॥ १४ ॥
द्वे द्वे नागभूतकुंडभृत् प्रतिमे पृथक् पृथक् ॥ प्रतिमानां पृष्ठतस्तु छत्रभृत् प्रतिमैकिका
॥ १५ ॥ तेषु धूपघटीदामघंटाष्टमंगलध्वजाः ॥ छत्रतोरणचंगेर्यः पटलान्यास
नानि च ॥ १६ ॥ षोडश पूर्णकलशादीन्यलंकरणानि च ॥ सुवर्णरुचिररजो वालु
गस्तत्र भूमयः ॥ १७ ॥ आयतनप्रमाणेन रुचिरा मुखमंडपाः ॥ प्रेक्षार्थमंडपा
ाद्भवाटिकामणिपीठिका ॥ १८ ॥ रम्याश्च स्तूपप्रतिमाश्चैत्यवृक्षाश्च सुंदराः ॥ ई
ध्वजाः पुष्करिण्यो दिव्याः संति यथाक्रमं ॥ १९ ॥ प्रतिमाः षोडश चतुर्द्वारस्तू
पेषु सर्वतः ॥ शतं चतुर्विंशमेवं ताः साष्टशततद्युताः ॥ २० ॥ प्रत्येकमंजनाद्रीणां
ककुप्सु चतसृष्वपि ॥ गते लक्षे योजनानां निर्मलस्वच्छवारयः ॥ २१ ॥ सहस्र
योजनो द्वेधा विष्कंभे लक्षयोजनाः ॥ पुष्करिण्यः संति तासां क्रमान्नामानि षो
शः ॥ २२ ॥ नंदिषेणा चाप्यमोघा गोस्तूपाऽथ सुदर्शना ॥ तथा नंदोत्तरानंदा सु
दा नंदिवर्धना ॥ २३ ॥ भद्रा विशाला कुमुदा पुंडरीकिणिका तथा ॥ विजया वै
यंती च जयंती चापराजिता ॥ २४ ॥ प्रत्येकं योजनं पंच पंचशत्या परत्र च ॥ यो
ानां पंचशतिं यावद्विस्तारभांजि तु ॥ २५ ॥ लक्षयोजनदीर्घाणि महो
ानि तानि तु ॥ अशोकसप्तच्छदक चूत चंपकसंज्ञया ॥ २६ ॥ मध्ये पुं
णीनां च स्फटिकाः पल्यमूर्तयः ॥ लजामवोद्युद्यानादिचिन्हा दधिमुखाद्र
॥ २७ ॥ चतुःषष्टिसहस्रोच्चाः सहस्रं चावगाहिनः ॥ सहस्राणि दशा

सा ते सरस्वती कुइवशीकराणां ॥ माधुर्यशैत्याक्रयिनी तरिनीं सरस्व... र
राणां ॥ ७ ॥ सदोदिताबोधमपूरुषा अप्यानविताागमृतं श्रवोन्या ॥
धमपूरुषा अप्युपाशमस्तेन मुनीषु तेषा ॥ ८ ॥ व्यामोहबाणासुरदर्पमाथ
दीर्णतमोवितान ॥ त्वमेधि सन्मत्रजपानिराद्ध पद्मावरो दीर्णतमोवितान ॥
योगेन धीरोचित माननीय श्रियस्तवोचे शशिनोपमान ॥ योगेनधीरोचित
प्रख्यातमूर्खं तमुदाहराम ॥ १० ॥ स्मराशुगाना हृदि मे ... ामा
तानि ॥ तत्वानि सूरीड् मदान्द्विनेदविधाऽमरेशाऽस्त्रनि मे हितानि ॥ ११ ॥
नाचार्यमनासमानावबोधमव्या कविमात्मशिष्य ॥ जिनप्रना च ...
नो स्फुरत्वम्य तव प्रसादात् ॥ १२ ॥ ... ज्ञानं... ... पादप...
जिनसिंहसूरि ॥ इत्थ सुतोस्तु यमकै शमकरवेङ्करानंदकदलनङ्गनितो
॥ १३ ॥ इति श्रीजिनप्रनसूरिकृतयमकस्तबकितश्रीजिनसिंहसूरिस्तवन समाप्त ॥

॥ अथ श्रीपचनमस्कृतिस्तवनप्रारम्भ ॥

प्रतिष्ठितं तम पारे पारेवाग्वर्त्तिवैभव ॥ प्रपच वेदस पच नमस्का...
॥ १ ॥ अहो पचनमस्कार कोप्युदारो जगत्सु य ॥ सपदोऽष्टौ स्वय धत्ते
सु ता सता ॥ २ ॥ दत्तेऽनुकूलएवान्यो भुक्तिमात्रमपि प्रभु ॥ एष पच नमस्कार
तिलोक्येपि मुक्तिद ॥ ३ ॥ नमस्कारनरेन्द्रस्य किमपि प्राभव स्तुम ॥ पदं
पि विद्रवति द्विष क्षणात् ॥ ४ ॥ सिद्धयोप्यणिमाद्यास्ता नमस्कारमधिष्ठिता
अष्टापष्टयक्षरात्मापि यदसौ प्रणवेऽविशत् ॥ ५ ॥ शिर कादिविधायीरे स्व
वेशिता ॥ नमस्कृतेर्नवपदी कटरे वज्रपजर ॥ ६ ॥ वर्ण्यता श्रीनमस्कारात् काम
किमतोधिक ॥ यत्सप्रयोगत पाशुरपि सञनयेज्जगत् ॥ ७ ॥ नमस्कार तुम
यत्पदस्पर्शपूतया ॥ पद्माद्मादितसर्वांग शातिमासादयेऽऽवरी ॥ ८ ॥
स्कृत्या कृती प्रतिपद जपन् ॥ विधत्ते विविधानिघ्नविघ्नावग्रहनिग्रह ॥ ९ ॥ कर्णिका
ष्टदलाढ्ये हृत्पुडरीके निवेश्य य ॥ ध्यायेत्पच नमस्कार ससार स तरेत्तरा ॥ १० ॥
कोष्टे पदेष्वम्य वर्णानालिख्य तावत ॥ कुडयादार्चयन् सम्यगेति शातेर्निशातता
॥ ११ ॥ श्याद्याक्षराण्यपीठार्थसिध्यै स्यु परमेष्ठिना ॥ विडुरप्यामृत किं न नाशयेद्विष
क्रिया ॥ १२ ॥ करागुलीषु विन्यस्यार्हदादीन् ध्यानमानयन् ॥ प्रत्यूहपन्नगव्यूहव्य
वैनतेयति ॥ १३ ॥ गुरून् पच क्रमात् ध्यायन् मुद्रया परमेष्ठिना ॥ गूढप्ररूढ मति
कर्ममायं विमोचयेत् ॥ १४ ॥ षोडशाक्षरगान् अक्षापरमं परमेष्ठिन ॥ प्राणी

धानोप्यौपवस्तुफलमेधते ॥ १५ ॥ विद्युज्जलाग्निनृपालव्यालचौरारिमारिजं ॥ यं वंचयते पंच नमस्कारस्य संस्मरन् ॥ १६ ॥ आराध्य विधिवत्पंच नमस्कारमु दारधीः ॥ लक्षजापेन पापेन मुक्तमार्हंत्यमश्नुते ॥ १७ ॥ ऐहिकं फलमीप्सूनामष्ट कर्मप्रसाधिनी ॥ मुक्त्यर्थिनां च स्यादेवैवाष्टकर्मनिषेधिनी ॥ १८ ॥ विपदामनि वारन्योपादानस्याखिलश्रियां ॥ स्मर्ता नमस्कृतेः स्वर्गिवर्गेण वरिवस्यते ॥ १९ ॥ चतुर्दशानां पूर्वाणामेवैवोपनिषत्परा ॥ आद्या सकलविद्यानां बीजानां प्रकृतिः परा ॥ २० ॥ इयं पथ्योदनं पथ्यं परलोकाध्वयायिनां ॥ परमास्त्रं नृणां मोहराज युद्धाय सज्जतां ॥ २१ ॥ प्राणी प्राणप्रयाणस्य क्षणे ध्यायन्नमस्क्रियां ॥ लभते सु गतिं नैकान् पाप्मनः कृतपूर्व्व्यपि ॥ २२ ॥ नमस्कृतिं कृपावित्तैः श्रोत्रयोः प्रापिती कृतां ॥ स्वीकृत्य पुण्यसध्र्यंचस्तिर्यंचोपि ययुर्दिवं ॥ २३ ॥ त्रिदंडिनं निगृह्याऽसिय ष्टेना श्रेष्ठिनंदनः ॥ नमस्कारस्य महसाऽसाधय त्स्वर्णपूरुषं ॥ २४ ॥ स्मृत्वा पंच नमस्कारं प्रविष्टायास्तमोगृहं ॥ घटन्यस्तो महासत्याः पन्नगः पुष्पमाल्यभूत् ॥ २५ ॥ नमस्कारेण संबोध्य मातुलिंगवनामरं ॥ प्राणत्राणं स्वपरयोर्व्यधत्त श्राद्धपुंगवः ॥ २६ ॥ यक्षतां हुंडिकः प्रापत् सुकुलं चंडपिंगलः ॥ इतस्ताहक् गुणस्फीतिं सुदर्श नः सुदर्शने ॥ २७ ॥ एष माता पिता स्वामी गुरुर्नेत्रं भिषक् सखा ॥ प्राणत्राणं गतिर्दीपः शांतिः पुष्टिर्महन्महः ॥ २८ ॥ निधयः संनिधौ कामधेनुरप्यनुगामिका ॥ भूभृतो भृतकास्तस्य यस्य नैष हृदो हिरुक् ॥ २९ ॥ नास्येयत्तां प्रभावाणां क्रमवर्ति तया गिरां ॥ मितायुग्ब्रह्म सर्वोपि न्यक्षेण भणितुं क्षमः ॥ ३० ॥ सर्वावस्थोचित सर्वश्रुतसारं सनातनं ॥ परमेष्ठिमहामंत्रं भक्तितंत्रमुपास्महे ॥ ३१ ॥ उच्चैर्योजन लक्ष्मानविदितो विभ्रत्सुवर्णात्मतां भव्यानंदनभद्रशालमहिमा गेचिभ्रचूलांचि तः ॥ अस्तु श्रीजिनगेहभास्वररुचिस्थानं लसन्निर्जरः सोयं वः परमेष्ठिपंचकनम स्कार. सुमेरु.श्रिये ॥ ३२ ॥ साम्नायावयवां जिनप्रभगुरुर्यो सूत्रयामासिवान् दि व्यां पंचनमस्कृतिस्तुतिमिमामानंदनंदन्मनाः ॥ यस्यैषांचति कंठसीमनि सदा मुक्ता लताविभ्रमं तं मुंचत्यचिरेण विघ्ननिचयाः श्लिष्यंति च श्रीभराः ॥ ३३ ॥ इति श्रीपंचनमस्कृतिस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीवीरस्तवनप्रारंभः ॥

श्रीवर्द्धमान परिपूरितभव्यकाम चामीकरप्रभ जिनप्रभसूरिरेतं ॥ सोसूत्र्यते त व जगज्जनदर्पदर्पदीपोत्सवस्तवलवं यमकावदातं ॥ १ ॥ श्लिष्टास्त्वां कमलाह

र्म्य कल्पपाद पयोज ये ॥ कर्ता तान् प्रति विश्वेकृकल्पपादपयोजये ॥ १
स्ते नाति न सद्दोऽसिपुरारातिलक्ष्मणे ॥ रके च तुल्यचित्ताय नि...
॥ ३ ॥ ह्लिश देह दर्शे त्वा शिवगकार्त्तिके विद ॥ नान्यतीर्थ्यां यत्र ...
र्त्तिकेविद ॥ ४ ॥ रुद्वान्यपवर्णनामादान दीपालिका सता ॥ कोटि परा
दानदी पालिका सता ॥ ५ ॥ कुदृशा शुश्रुवे तेऽल्यदेशनागितदर्पका ॥ ...
ग्यदेशनागितदर्पका ॥ ६ ॥ त्वन्मुक्त्याऽसीत्तमो हृतु तरसा दक्ष पावनी ॥ पृ
पापपद्माऽल्पेतरसादक्षपाऽवनी ॥ ७ ॥ त्वत्सेवाया हृषीकेनहस्तिपा...
केन नाम तदा राज्ञो हस्तिपालस्य हीनता ॥ ८ ॥ दधाना ऽघोरगेपूकस्वा...
ता ॥ कुक्षेपु जात त्वन्मोक्षो स्वातिरेका विराजता ॥ ९ ॥ त्वन्निर्याणेन करण
गसङ्गमरजयत् ॥ एनासि भगवन् क ना नागसङ्गमरजयत् ॥ १० ॥
स्येन्द्रियार्थममता विपपानत ॥ नायोपचर्या कुर्यास्त्व मम तावविपपानत ॥ ११
तावक या पिबत्युच्चै रमायाननसारस ॥ दृष्टिर्विदति सोरस्य रमाया न न
॥ १२ ॥ स्तूयासमन्वहमह भवत पृथिव्या सिद्धार्थनदनयशोनिमत ,
सिद्धार्थनदनयशोनि मत समस्या सर्वश्रिया जिन निज हृदि रोप्यता मे ॥ १
इतिश्री जिनप्रभसूरिविरचितश्रीवीरस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीआदिजिनादिस्तवनप्रारम्भ ॥

प्रणम्यादिजिन प्राणी मरुदेवागजायते ॥ हरणे पापरेणूना मरुदेवा ग
॥ १ ॥ गर्वमैदवमब्जाभमाननम्यप्रभोरुण ॥ सौदर्येणाजितस्वैर माननम्य
ण ॥ २ ॥ मोहस्यानापतस्त्राण शभवेश मिता रये ॥ यस्म विश्व नमभक्त
भवे शमितारये ॥ ३ ॥ मुदे ऽभिनदन सूतो राजसवरदेहत ॥ यत्पादा जे
भाव राजस वरदे हत ॥ ४ ॥ दु स्थाना सुमते दौस्थ्य साध्वसागदवानल
ध्यायस्त्वा च स नीरोग साध्वसागद वालन ॥ ५ ॥ क पद्मप्रभ शक्तिमे
मिता हिता ॥ सख्यातुमीष्टे चद्दार्कप्रभावदमिता हि ता ॥ ६ ॥ मोहराज
त्व नुतमायाम ॥ भक्तो तेऽत कोस्तु विद्यानुतमायामजोऽप ॥ ७
तव ... नक्षमेनत ॥ न सेवाविरहं सोढु महसेनक्षमे नत
...क्षप्रभोदयां ॥ तन्यास्त्व सुविधे सर्वभावलक्ष्म प्रभा
...म्ना रविकल्पमनामया ॥ त्वा प्रत्यात्मा रुतो भर्तो
...वन्मते रमते श्रेयन् कमलायतनेत्र या ॥ सा धीरि...
॥ ११ ॥ वासुपूज्य सविज्ञास्त वधूकारुण्ययागत

शरणं त्वकमौ विश्ववंधूकारुण्ययोगतः ॥ १२ ॥ श्रेयस शरणं भव्य त्वं गव
श्रेमलंकृते ॥ न्हदि देहि च भक्त्यादिकृत्व गवविमलंकृते ॥ १३ ॥ यःख्यातस्त्रि
जगत्यार्थ सदानुननयोऽनिशं ॥ हंत्वकेवन्मोहमर्यी सदानुतनयोनिश ॥ १४ ॥
त्वत्पादाब्जेऽलिनो हर्षाद मलं पदतां पदं ॥ शांते मोहं जित मन्ये दमलंपदतां
पदं ॥ १५ ॥ सुश्रीकुंथुं प्रतिश्रद्धा यमलार्जन भंजना ॥ यास्तावीड्गगरोयचम
नार्जनभजनाः ॥ १६ ॥ सोहं समर्थी भूयस्य नतमामवनिर्वलं ॥ गोरत्वमर्हन्न
कीड्नत मामव निर्वलं ॥ १७ ॥ शक्ति भवाब्धरुच्छतुं मतिमछीनदेहिन ॥ पुण्य
यातर्जने भक्तिर्मतिमछीन देहि न. ॥ १८ ॥ यस्या विलासास्त्रिलोक्य पद्मानंदनना
नव ॥ मा तु सुव्रत सा शक्या पद्मानंदनना न व ॥ १९ ॥ यत्र नाश्विच्यी ते वा न
मे रुचिरकोमला ॥ तत्र राजेष्वनीतानां नमेरुचिरकोमला ॥ २० ॥ नेमे नमस्ते
रोपश्च रंजन. प्रभविभ्रवे ॥ कर्मासुरवधायोस्त्रैरंजनप्रभविभ्रवे ॥ २१ ॥ तापार्ना
कुर्वे पार्श्व भवता पंचसायक. ॥ श्रितोऽतस्त्वं जनो मोहभवतापं च सायक. ॥
२ ॥ नाऽश्रुन्यः कामसौख्याय लोकनेतरणीयसा ॥ तेन वीर जगत्कर्मालोकने त
ीयसे ॥ २३ ॥ तवार्हन् पंचकल्याणी दया लोकामदायिन ॥ पायास्त्रिजगते दत्तो
लो कामदायिनः ॥ २४ ॥ त्रातु जीववीधाः संविदक्षा मानव तामिता. ॥ जिनं
पातु करुणा दक्षा मानवतामिता. ॥ २५ ॥ यदाराध्यति गीर्वाणव्रजाऽभयदशा
। तत् प्रजा शरणं भक्ता व्रजाभयदशासनं ॥ २६ ॥ यस्या नेशशिरा जैन्या सुत
वासना ॥ हंत्वापद सुसंवस्यासुतरा मघवासना ॥ २७ ॥ लक्ष्म्याकृष्टिकर जिनेंद्र
नड्रावलीमंदिर वंदे तस्य गिर नतभ्रमतम सूर्य धिया कारणं ॥ सार्वीयप्रथित
विलारिष्टावहानिप्रदं दंभव्यालसृणिं वरेण्यसमयं रगशुणं बोधिदं ॥ २८ ॥
यमकयुक्त आदिजिनादिस्तवनं संपूर्णम् ॥

॥ अथ श्रीपार्श्वप्रातिहार्यस्तवनप्रारंभ ॥

वितुल्य महिमश्रियामहं पन्नगाकमठदर्पकोविणं ॥ स्वां पुनामि किमपीनर
ां कमठदर्पकोविणं ॥ १ ॥ कोनुरज्यति देशनौकसि शागशोकतरुणा वि
रत्नहेमरचिनि· क्षितोच्चसङ्गशोकतरुणाविलासिते ॥ २ ॥ देहदीप्तिति
यन्नारना सुमनस· सदानवा· ॥ देशना श्रुवि किरति ते स्फुरत्सारना
दानवाः ॥ ३ ॥ तादृश. श्रवणतस्तवोत्तमा कारकाय वरदेशनाध्वने ॥
व पाप्मनां निराकारकायवरदेशनाध्वने· ॥ ४ ॥ नाकिनायकयुगेन सादर
ाग वीज्यसे ॥ त्वं न कर्मवसुखायमुक्तये चामरौविपदनागवीज्यसे ॥ ५ ॥

वीक्षितुर्नयनयोर्निराकृता शस्त्रनासुरमणीपनावत ॥ आतनोति कृतं नासुर मणीपनावत ॥ ६ ॥ इपुरर्पयति कीर्तिश्रुत्रिता शांतम दीप्यमानमतुमौलि तावक शांतनावत्रयमर्यमोहद ॥ ७ ॥ व्योम्नि गर्जि रस्तवामानवैरिमुदिरो महर्पिनि ॥ कैर्न कुडनिरव श्रुतस्तनां मानवैरिमुदि नि ॥ ८ ॥ जेमुपीपु कुपथानि मौक्तिकन्यास हृद्यरुचितानि चायितु ॥ श्रीमजिन शितोभवारण न्यासहृद्यरुचितानिचायितु ॥ ९ ॥ श्रीजिनप्रन विति स्तुतो मया ॥ पार्श्वकामितफलाय कल्पता नेमुपां ॥ १० ॥ इति जिनप्रजसूरिकृतश्रीपार्श्वप्रातिहार्यस्तवन सपूर्णम् ॥

॥ अथ श्रीकल्याणपचकस्तवनप्रारम्भ ॥

निजिपलोकायित नूतल श्रिया नयन्मुद नैरयिकानपि क्षण ॥ त्रिलोक नाथ रते प्रपचकं जिनेंद्र कल्याणकपचकं स्तुम ॥ १ ॥ निवेदित प्रीतिपरं ... श स्वप्नविनाशितोदय ॥ महानिधानागम चारुरर्हता तनोतु गर्भावतरोत्सव श्रि ॥ २ ॥ ककुप्कुमारीकृतसूतिसस्क्रिय सुपर्वसपादितमज्जनक्षण ॥ सृजन्मुदा पं जगत्रय जनुर्मह सस्तुमहे नवह्रद ॥३॥ सुरोपनीत परिवत्सर धनवर्षया पं परितोषितार्थिने ॥ जिनाधिपानां निखिलागिरक्षिणे ... ॥ ४ ॥ अमर्त्यनिर्वर्तितदेशनावनीकृताद्भुत कैवलवैनवोद्भव ॥ ... रितावर करोतु जैन शुभनाजन जन ॥ ५ ॥ पुरदरक्रदितसभ्रमभ्रमत्सुरानना गितमुक्तिवल्लभ ॥ जिनस्य निर्वाणदिन दिगतरस्फुरत्तम सत्तमशर्मणेऽस्तु न ॥ महर्षयो नूतनवद्भविष्यतामभुत्र कल्याणकपचकेऽर्हता ॥ विना विदेहान् दश कर्म मिपु स्मरति मासर्क्षतिथीन् सनातनान् ॥ ७ ॥ इत्यादृतत्रिभुवनप्रभुसत्क पञ्च ल्याणरत्नकवच हृदि यो बिनर्त्ति ॥ शस्त्राणि ते जिततराण्यपि मोहराज सौभाग्ययुजि न भवति तस्मिन् ॥ ८ ॥ इति श्रीकल्याणपचकस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ लक्षणप्रयोगमयश्रीवीरस्तवनप्रारम्भ ॥

निस्तीर्णविस्तीर्णभवार्णव झैरुत्कर्णमाकर्णितवर्णवाद ॥ सुपर्णमहादि वर्मै सुपर्ण श्रीपर्णवर्ण निनुमामि वीर ॥१॥ यैर्व्याप्यता प्राप्यत तावकीन क्रमाबुज नर नमस्करोते ॥ ससारचक्रभ्रमणानिवस्य गणस्य ते वृत्करण गृणति ॥२॥ तुभ्य ... प्राभृतार्थनावे कजकपक्च्युतिसस्तुतिभ्यां ॥ प्रधानशिष्ट वदन त्वदीय मन्दानं न्याचपनिष्टमिष्ठ ॥ ३ ॥ द्विगोरिव त्वत्प्रणतस्य सख्या पूर्वा प्रवृत्तिन ...

नां ॥ विज्ञो बहुव्रीहिसमासवत्त्वमन्यार्थ एवोपदधाति वृत्तिं ॥ ४ ॥ विनक्तिमुक्तं पुरुपैरसंख्यैः समाश्रितं धातुविकारहीनं ॥ अपूर्वमेतत्कटकृत्यनिष्टाप्रधानमाख्यातमिन त्वदीयं ॥ ५ ॥ यस्मिन्न संधिर्न च वर्णलोपो न संस्तुतिर्विग्रहकारकाणां ॥ नवा विकल्पः क्वचन प्रयोगेप्यहो नवं व्याकरणं तवेदं ॥ ६ ॥ ध्यात्वा हृदा त्वां फलमेति नव्यो दृष्टापि साक्षान्न कृतीत्वनव्यः ॥ तत्तत्त्यमेतद्बहिरंगतो यत् स्यादंतरं गोत्रविधिर्बलीयान् ॥ ७ ॥ एतावतैव प्रतिजाति विश्वविलक्षणं वीर नवच्चरित्रं ॥ नालेन युष्मत्पदसंप्रयोगेप्यलंनि लोकस्य यदुत्तमत्वं ॥ ८ ॥ एकत्र धातावुपसर्गपंचकप्रयोग इष्ट. कविनिर्निरंतरं ॥ त्वध्यानधातावुपसर्गविंशतिं सुरः प्रयोक्ता न कथं कुलक्षणः ॥ ९ ॥ प्रज्ञो महच्चित्रमिदं कदंबके कुतीर्थिकाणामपि कर्म धारये॥ यन्मोहराजप्रथनेषु पुंवद्भावो न कश्चित् परिपोस्फुरीति ॥१०॥ शुद्धयोर्वरद भावकर्मणोर्दर्शयन् विकरणस्थितिं पदे॥निर्विनक्ति समुदाहरन् पदं साधुलक्षणविचक्षणो न वान्॥११॥अनुपघातिनमेव किलागमं प्रणिगदंति जिनेश्वर शाब्दिकाः॥अत्तुमतामुपघातकरःस्फुटमत् कथमिवागमतां स कृतःपर॥१२॥योपादानं नश्यतः पापपूगस्यात्ति व्याप्यं वंदतेवांसवानां॥आधारः श्रीसंपदां संप्रदानं त्रैलोक्यस्य स्तोत्ररत्नोपदायाः ॥१३॥ वेडावधः करणमुन्नतां मोहवार्द्धि तरीतु कर्ता जातेर्द्विरदरदनछेदयोर्निर्यशोनिः ॥ नव्यानां यस्त्वमसि सुपथप्रस्थितो हेतुकर्ता तस्मै तुभ्यं जिन मम शिरो नम्रताकम्रमस्तु ॥ १४ ॥ अंतस्थास्तव शासनस्य यशसां कुंदावदातत्विषां गच्छंते भुवि संप्रसारणविधौ मत्या न तत्कौतुकं ॥ यत्ते नित्यमनामिनोपि कुगुरौ दुर्वृत्तदेवेषु च प्राजते गुणवृद्धिभाजनतया भ्रमस्तदत्यद्भुतं ॥ १५ ॥ तात त्रातरिदं नपुंसकमपि स्वांतं मदीयं नवन्माहात्म्यस्तुतिसुंदरीं प्रणयतः पाणौ करोत्वेकदा ॥ तत्संश्लेषनुग्वानुनावदशतः क्लैब्यं विधूय क्षणात् तत्रोत्पादयिता ऽथ शाश्वतचिदानंदाव्हयं नंदनं ॥ १६ ॥ इत्थंकारमिनारि लक्षणनरः सल्लक्षणप्रक्रियाचित्रं स्तोत्रमिदं विदंजहृदयो जिव्हाग्रजाग्रत्तमं ॥ कुर्वाण· स्मरबाणकुंठनकलानिष्णाततानर्तकी नाट्याचार्य जिनप्रभेंद्र पदवीसाम्राज्यमालादयेत ॥ १७ ॥ इति श्रीजिनप्रभ विरचितलक्षणप्रयोगमयश्रीवीरस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीवीतरागस्तवनप्रारंभः ॥

जयंति पादा जिननायकस्य दोषापहा ध्वस्ततमोविकाराः ॥ रवेरिवाश्वर्यमनापरा श्च न कौशिकक्लेशकरा. खराश्च ॥ १ ॥ वाग्ज्ञानपूजानिरपायरूपाश्चत्वार एते जिनपास्त्वैव ॥ देवाधिदेवत्वमनिष्टवंतश्चतु कषायकृत्तये नु नाथ ॥ २ ॥ शुद्धप्रयोगस्तवनं

स्तवेन कृतार्थतामेति कृती कृतीश ॥ न वाच्यतां याति कदापि लोके यथा यथार्थस्व
काव्यकर्ता ॥ ३ ॥ त्वमेव चेच्चेतसि जागरूको जतोऽसि श्रीजिनराजमल्ल ॥ नवेत्र कि
सत्त्रिजगन्महल्ल प्रपात्यते किं नहि मोहमल्ल ॥४॥ त्वमेव देवस्त्रिविधेन येषां जगत्र
यीवंद्यपदो हि पार्दे ॥ धात्री पवित्रीक्रियते किमत्रचित्र तदीयैस्त्रिजगत्पवित्रै ॥ ५॥
उपाधियोगान्महतो लघुत्व लघोरपि प्राज्यगुरुत्वमेव॥आदर्शके देव यथा द्विपस्य शो
पदीतो तु तनूकृत स्यात् ॥६॥ कश्चिद्गुणाना हि लवोपि लोके यो दृश्यते सोपि विना
प्रभाव ॥ अक्षतकल्याणनिधेर्जिनेंद्र पयोविना पल्लविता नवृक्ष ॥ ७ ॥ नात पर दुर्व
जडत्वमत प्रत्यक्षलक्षोपि नवान्नबुध्द ॥ सर्वज्ञताप्यस्ति विनो न चान्या त्वमेव दे
वो विदितो यदीह ॥ ८ ॥ विदति सर्वेप्यपरानधीशान् नतान्नतास्ते प्रवदति सर्वान् ॥
जगज्जगन्नाथ यथास्थितं हि त्व वेत्सिहि त्वातु न वेत्ति चित्र ॥ ९ ॥ वहि स्थिर
वेत्ति परस्वरूप न स्वस्थितं देव तव स्वरूप॥ चक्षुर्यथा पश्यति बाह्यरूप नचात्म
प तु कदापि लोके ॥ १० ॥ सदात्मविज्ञानविहीनधीभिर्न ज्ञायते नाथ विना
स्वरूप ॥ स्वशीर्षपश्चात्प्रविभागसम्यङ् निरीक्षणे कोपि न बाह्यहेतु ॥ ११ ॥ मध
स्थनाथोपि जिन त्वयीह गुणस्तुते स्याद्गुणिनो नितातं ॥ यथाऽगुणप्रत्यय एवधातो
कर्मण्यथो कोऽत्र विचारहेतु ॥ १२ ॥ त्वद्भक्तिभावोप्ययथार्थ एव नवत्प्रणीतार्थ
विपर्ययेण ॥ विधीयते सर्वहितोपसर्गवर्गेण धात्वर्थइवान्यथा हि ॥ १३ ॥
दृयते य स्वयमेव रागद्वेषादिलुंटाकनदैर्यथेष्ट ॥ संस्तूयते सोपि हि देवबुध्या हह
महामोहविजृंभितं तत् ॥ १४ ॥अचिंत्यमाहात्म्यनिधि प्रसन्न जगच्छरण्य जगतां
पूज्य ॥ त्वमेव देव प्रविवेत्सि हि त्वां प्रकाशतेऽन्येन किमु प्रदीप ॥ १५ ॥ कि
मिनास्तिति विवेकपक्षा रागादिपक्षक्षतिलब्धदक्षा ॥ ये श्रीजगन्नाथ जिनप्रभ
त्वामेव देव जिनमाश्रयति ॥ १६ ॥ इति श्रीवीतरागस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीचंद्रप्रभस्वामिस्तवनप्रारंभ ॥

देवैर्य स्तुतो तुष्ट सोमजांतितविग्रह ॥ दद्याच्चंद्रप्रभ प्रीतिं सोमजातितविग्रह
॥ १ ॥ येषा पूजाविधि कर्माजनहत्कमलालय ॥ ते जिना पांतु वानव्य ननह
क्मनालय ॥ २ ॥ कृतीर्थिसार्थेन दुरासद नोज्ञानिरजन ॥ श्रुतं सेवत माहा
मदनो ज्ञानिरंजन ॥३॥ पातु गीर्वा कृताविद्योपरमा कमलासना ॥ यत् प्रभा वा
नंनमे परमा कमलासना ॥ ४ ॥ इति श्रीचंद्रप्रभस्वामिस्तवन समाप्तम ॥

॥ अथ श्रीऋषभदेवस्तवनप्रारंभः ॥

संस्कृतभाषा.

निरवधिरुचिरज्ञानं दोषत्रयविजयिनं सतां ध्येयम् ॥ जगदवबोधनिबंधनमादि जिनेंद्रं नवीमि मुदा ॥ १ ॥ कस्तवमिति छिपोलं वदितुं परितो गुणान् गुरुनिभो ऽपि ॥ चुलुकैः प्रमिमासति वा कश्च जलं वरमनीरनिधेः ॥ २ ॥ तदपि त्वद्भक्तिभर प्रतरलितो वच्मि तावकगुणाणुं ॥ चापलभुभ्रो स्फुटमपि लपन् शिशुर्वा निरपवादः ॥ ३ ॥ ज्ञानप्रदीपजमिव स्निग्धांजनमुपहितं चरणलक्ष्म्या ॥ सच्ध्यानदृगंजिताय चिकुरचयस्ते स यो रुरुचे ॥ ४ ॥

प्राकृतभाषा.

तमकसिए सप्पखयमो,र मोरच्छाहुत्ते किलिम्मंति ॥ तुह सासणापिधं जे कुणंति विविहे लव किलेसो ॥ ५ ॥ तक्किय कल्लाणसिरि, पिदे वकल्लाणसिरिविलासगिहं ॥ तुह वदे देहमहं विलसिरमोहंपि ह्यमोहं ॥ ६ ॥ युग्मं ॥ तुह सुहरभासयला, रविदलब्धी मरट्टफुसणेणं ॥ जं विजितुं हिमरस्सी नियकंती निवहसुहडेहिं ॥ ७ ॥ असइं तमभि नवभरं सुसिरिठं पहू ससंकोसो ॥ डुग्गं खुर इय घणपरि,हिदंभउं परनिसेहत्ता ॥ ८ ॥

मागधी भाषा.

तुह शुत्तिदंवजाव, स्तं गदपञ्ञे शमयपयमचञ्ञें ॥ ते यिण कुमदलक्कशव,शिमिश्चादिस्टी पददि भवे ॥ ९ ॥ तमवय्यवय्यिदमिधं, आचिरिकिद शुस्टु मोस्कपुलमग्गं ॥ काला चिष्ठामि हगे, हलिशभले पिस्किडं धञ्ञे ॥ १० ॥ केलीहलाहगुणहं, हलिञ्ञकशवस्टलायि किलणाह ॥ तुह अपुलभवत्तिलसं, वंदामु हगे शलीलाह ॥ ११ ॥ संयणिदधञ्ञकमले, ये पश्कालिदमहंदपंकमले ॥ धिदपलमहिमशलूवे, ययडु भव शे शदा कोहे ॥ १२ ॥

पैशाची भाषा.

विबुधान राचिजानत, अनञ्ञ सामञ्ञ बुञ्ञ तिसपञ्ञं ॥ रंतून हितपके मे, कतगिरीकुतुंबिनी पनय ॥ १३ ॥ भत्तिभरातो दूरे चिष्ठति यो तुह रमिय्यतेनेन ॥ कमटभं चरणसुधा विहितसिनातो न सो भोति ॥ १४ ॥ युस्माातिसेवि तेदे अपुय्यपुय्यान वे सतय्येव॥कीरतिनो येन रती स कथं वपते सुकतवीजं॥१५॥ नरपून नृत्तिमिपूनां भवव तिठे तुमं मिमजरूपा॥ विलसिर पमतज्जीजल, परकालितका ॥ १६ ॥

चूलिका पैशाची

काव सिनेह्फलिता तुह् वतन सेवते लमा अनरखं॥ह्यनून फकुरकुन पोम लकमपि च विथुं ॥ १७ ॥ चलथलमटलपटिमा चिकुराली शोफते तवसथुके, नसिरिशितसयेनू चरनायल तव नव तुवा ॥ १८ ॥ तुह्सकिलितटे फुन,ति नालिव मधुकचलाची ॥ गतरुचकपोलतलरुचि,फासुर सोतामिनीतामा॥ १ सफसुमकानाविल चनपरिह्नि संखनीरवाद्खटा ॥ पथस फुवि सवकन्ता ती तंसिया तुमए ॥ २० ॥

शौरसेनी

कुमद मकथ्यनिदाण ताश्थ जवमाणविक्कदे जगव ॥ चिदाविदाव नथ्थे,बर्को दि याथाणनाध इमा ॥ २१ ॥ करुय अलं हरिपदवि करुय अल वा महन्त किं यसुहे ॥ खणु लहिय अपुरवपद पणइजण पाविदूण खणु ॥ २२ ॥ दहाड वि रागमिदो पच्चत्त योग उत्तरङ्गेण ॥ नवरि तुह जत्तिपयि माजिणरायं फुरड वि दयम्मि ॥ २३ ॥ युग्मम् ॥ हीमाणहे जवादो चकिदोह् अम्महे यदित्थवो॥ एत यध तायध म ससेवग सामिथा तत्तो ॥ २४ ॥

॥ समसस्कृतम् ॥

हेमसरोरुहजास कलिमलकमलालिमथहिमजास ॥ जवनयधूलिमहावन ना चेय जवतमनिवदे ॥ २५ ॥ तव चरणोजयजलरुह् पालीसेवापरायणादेव ॥ तिं ति नरालिगणा जरसिद्धिरमामरदलय ॥२६॥ महिमधर तमसमहिम, विमन वरधी सरोरुहेहिमज ॥ समयदयारससुगम चरण सेवे तवासुगम ॥ २७ ॥ तव नामधेय चिताजरुरसा भुवि नरावली धत्ते ॥ सरुध्दारिनिरामरज, दरमालिगकेलिरस ॥१८॥

॥ अपभ्रंशाजापा ॥

तव रेहइ अलिसामलि विद्धुचरावलि भुयपिष्ठि ॥ निल्लिपरिउवलमृणे डुग सुहअन असिजहि ॥ २९ ॥ हुड मिल्हि विसहजहि, यावहृदिय जणववहार ॥ पइ कापरि मुणिपई, सुफरुसन्निय करणपयार ॥३०॥ तास महानवजलहिज, लिनरु निवारि इहरुत्ति ॥ जास्वन पासिय तुम्र प,हुसारुणनावकडत्ति ॥ ३१ ॥ सुकट्ठ कई तिढु ता सुय, इकहत मुसनजडजम्मु ॥ दिविदिनि जीवाजुन कर,दि पइवुत उनिएपम्मु ॥३२॥जूरे हि कुतिन्नियन, वयणू अवरुप्प रयइ विरुष्ठु॥तं नेरसिवपमिय त, इ निरु प्पमाएहि सुरिंदु ॥ ३३ ॥ इकाति तेहा जाव नि,णु हुडुपणमिय तुह पाय॥ जुनि ङ

न्हि ता सुर रहहं करिविणु डुरुकविघाय॥३४॥ मज्ज कहंतिहु नावरि,ज दडवड तण जह वेकू ॥ सामिय सट्टलतेज,लु डुनहु चंपइ परचक्कू ॥ ३५॥ जुत्तिवि किरिय नाणहरि, ध धंमण मनसुद्धि जुगग्गि ॥ कुकुनपढुवइ सिवनय, रि तुह सासणरहिलग्गि ॥३६ ॥ परि कवि तुह तणु नूडहि,कंचणकांति रवन्न ॥ वियसहि महणयणुल्लम, तामइ नवडुह तिन्न ॥ ३७ ॥

नुत्तरपद्यस्याद्यंन्द्रो संस्कृतं १ समसंस्कृतं ७ प्राकृतं ३ द्वितीये पैशाची चूलिका पैशाचिके ॥ तार्तीयिके मागधीशौरसेन्यौ ॥ तुर्ये अपभ्रंशः॥

नायालीहयमंदयामयमलं नासं धरंतं परं राकालिं पवलोतयं अखचयासत्तं क माजाचितं ॥ धीलं लोअमहं ददावहकलं गिन्नाहमायालदं नाधा नीवृदिरेसि वदउं पइं साणंडु सीसुल्लइं ॥ ३७ ॥

॥ कविनामगर्भचक्रं ॥

तं प्राप्तो रुचिशुद्ध्योगरन्नसोन्मीलत्प्रतोपान्वितं शस्तः सौष्ठवन्नम्रमोहरवनः कंकं जहस्तछवि· ॥ रुच्या नास्करतिग्मसिद्धिरमणीसंक्रान्तनावः परं रंता ज्ञानरमांशमास्त रुषमे तन्याः सुविद्यां चिरं ॥ ३९ ॥ जगति विदितवान् यस्त्वत्कमाज्ञास्वरूपं तव शु चिपदनाव संस्तवादध्यवन्य॥ रचयति निजकंगालंक्रियां स्तोत्रमेतन्नवति नवकरीणां सिंहसोन्नीष्टलक्ष्मीः ॥ ४० ॥ इति श्रीजिनप्रनसूरिविरचित अष्टनाषात्मकं श्रीरूपन देवस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीमहावीरस्तवनं ॥

चित्रैः स्तोष्ये जिनं वीरं चित्रकृच्चरित मुदा ॥
प्रतिलोमानुलोमाद्यैः खड्गाद्यैश्चातिचारुन्निः ॥ १ ॥

॥ प्रतिलोमानुलोमपाद ॥

वंदे ऽमंददमं देवं यशमाय यमाशयः ॥ नायेनाघघनायेना पाकृता ममता कृपा २

॥ अनुलोमप्रतिलोम ॥

दासतां तव नागारां नचेयाय मतामस॥समतामययाचेनरागान्नावततां सदा॥३॥

॥ अर्द्धप्रतिलोमानुलोम ॥

वरदानवरादित्व त्वदिरावनदारव ॥ याज्यदेव नयान्यास सन्याय नवदेज्यया॥४॥

॥ अर्द्धभ्रम ॥

श्रीद वीर विरेनत्वं दमिताक्ष गताशुन॥ वीताक्षमारंनितारे रक्ष मां सदरंगवि ५

॥ मुरजबंध ॥

गीरतारजतारद्दणे धीरता स्थिरतारसा ॥सारतारश्रुताव्या सुरता जन ता

॥ गोमूत्रिका ॥

ये पश्यति तवेहास्यारविंद भक्तिविधुरा ॥न पतंति भवे शम्यास्ते नितो भगवन्नराः

॥ सर्वतोभद्र ॥

नमासररसामान मारिताद्दतारिमा॥साता म या यामतासा रद्यासमवार

॥ रथपद ॥

तिर्यद्नरसुराकीर्णा भासते ननते सभा ॥
यन्माहात्म्यात् कृताश्चर्य याश्रिता ततता श्रिया ॥ ९ ॥

॥ द्व्यक्षरपाद ॥

रंगोरांगांरुगीगंगा गोरीगुरुररोगरुरु ॥ गोरगा गाररोगारि रेरिरो रेगुरु गिरः॥ १०

॥ एकाक्षरपाद ॥

ताननानाननीनान ततताततितातते ॥ ममाममाममुमा ननानेनोननानन ११

॥ एकाक्षर श्लोक ॥

कारकि कारककांक केकाकोककेकिक ॥
ककरापुककारंक ककु कंकोककांकक ॥ १२ ॥

॥ भ्रमयोग ॥

मरनूर्मा तपरतानिर चारमरारर ॥
हुन सुरनहीनाना सुनन तर शासन ॥ १३ ॥ युग्म ॥

॥ वान्या सदृसदानितक ॥

मर्गणि पुष्परम्याया म्यापमानिकगुनिका ॥ काम नुनयरितो यरन्न नगा ॥ १४ ॥ सार म्याहादमुदायात्विपदी नयताऽसा ॥ सा म नु रीर नेक निवन रन्निनमा ॥ १५ ॥

॥ मुसल ॥

श्रनिवार्यकृनयामदिवाकर निरजन ॥
कहनरानना मर्न तीर्थंकर तवाश्रिता ॥ १ ।

॥ त्रिशूलं ॥

नुक्ता या त्वयि नव्याली धन्या धत्तेस्म चेतसा ॥
सामता तामसाकाममकासारंगसागरं ॥ १७ ॥

॥ हलं ॥

त्रिशलाकुक्षिपाथोजराजहंस जगद्विनो ॥
नोगास्तृणमिव त्यक्तास्त्वयामुक्ति दिदृक्षया ॥ १८ ॥

॥ धनु ॥

सुरासुर नमस्तुभ्यं नमम्यति जिनोत्तम ॥
मनःप्रसादसंदर्भदर्जिता शुनवासना ॥ १९ ॥

॥ शर ॥

कथं कर्तुं जनो मोहव्यपोहमहहक्रमः ॥
मनसा सादरं यस्त्वां न स्तौति तिमिरापहं ॥ २० ॥

॥ शक्ति ॥

वाल्यो मरुशिरःकंपसंपत्प्रथितविक्रम ॥
मनोजानोकहव्याल मम स्वामी नवानवं ॥ २१ ॥

॥ अष्ट दलकमलं ॥

मानितार्यक्रमामार रमामाकंद माधवः ॥
वधमार्गे ममाकास सकामाधीः प्रतानि मा ॥ २२ ॥

॥ षोडशादल कमलं ॥

वनम्या न घनस्वान ध्यानमौन कनच्छन ॥
ज्ञानस्थान जिनश्रीनघनमेनस्खनःस्व नः ॥ २३ ॥

॥ स्तुत्यनामगर्भं बीजपूरं ॥

जय हेमवपुःश्रीक जगन्मोहापहारक ॥
जराहिवीन सिंहांक जन्मनीरधि नाविक ॥ २४ ॥

॥ हरा ॥

तुभ्यं नमोस्तुलनयस्थितिकाय नीतिवन्यासुपावक सुरस्तुल वीर नेतः ॥
विद्याल ताविपुलमंडपहेमरूप कल्याणधीकरणदक्ष नतेदमीन ॥ २५ ॥

॥ कविकाव्यनामाक चक्र. ॥

नमाकल्पपथो जिनेश्वरवरो नव्याब्जमित्र क्रियादिष्टे तत्वविगानदोषरहिते श्रवसर्पण जन्माचिल्यसुखप्रद. सुरचित्तारिष्टक्षयो व सदा दाता शोननवादिशी। जलदं यामेक्षण सविदा ॥ २६ ॥

॥ चामरवध ॥

श्रीमद्दाम समग्रविग्रह मया चित्रस्तवेनामुना नूतस्त्व पुरुहूतपूजित विनो प्रसृयविमे ॥ ख्यातज्ञातकुलावतस सकलत्रैलोक्यकल्पसातर ..... र सरवधरक्षारत ॥ २७ ॥ इति श्रीमहावीरस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीजीरापल्लिपार्श्वस्तवन ॥

जीरिकापुरपति सदैवतं दैवत परमह स्तुवे जिन ॥ यस्य नाम जगतो ग्र गकर जपति मन्त्रवज्जान ॥ १ ॥ नाथ तत्तव सुखेंदुदर्शन दर्शन च नवतुं स्तुवे ॥ येन मेडुरिततापहारिणा हारिणा लसति पुण्यवारिधि ॥ २ ॥ विश्व महाप्रजाव तं नावतेज इह मालिनो युगे ॥ उजते दिनकरे हि नासुरे नासुरेभ्य स्य कि नवेत् ॥ ३ ॥ अर्बुदस्य नवता व्यनारि या नाविपात्रिकजनेष्वनीति पशुपतोदरनृतापि सारसा सारसाधुनिचिता नवत्तरा ॥ ४ ॥ ग्राममात्रमपि पल्लिका पल्लिकाननसहोदरीव या ॥ त्वत्पदस्थितिवलेन साधुना सा ..... सते ॥ ५ ॥ त्वा नमत्यशिववार्धितारक तारककणसुमै प्रपूज्य य ॥ प्राप्य वि पमनेनम पद सपद स समुपैति शाश्वती ॥ ६ ॥ त्वत्पुर प्रकुरुते प्रनावनां जिन निधाय यो हृदि ॥ निश्चित स लनते न डुर्गती डुर्गतीर्णनवसागर प्रनो ॥ यो दधाति हृदि तेऽन्हिपकज पकज मलमथ करोति स ॥ ततयेपि न ... श्वत पार्श्वतस्पतु नवोन्नवभ्रमा ॥ ७ ॥ त्वत्स्मृतेरपि जना निरामया ..... निरामया ॥ यागिनूषण नवति नूषिता नूषिता किल सुधागनाऽव ॥ ९ ॥ ..... तिजाजमादर मादर दधति जातुनाध्वनि ॥ यत्र याति नवु नानुनानया .... य नमस्त तत्र किं ॥ १० ॥ अतरगरिपवोऽरूपापरा पापराशिहर पापपति ... सत्यपि त्वयि विनो ऋपाजये पालयेश शरणागतं तत ॥ ११ ॥ ... यस्य मानस मानसयमनतस्य डुर्धरा ॥ तस्करानतपय करेणरा ..... वति तत्क्षणात् ॥ १२ ॥ देउशाग्विमणि रेनुदेवता देव तावदिह वांछितप्रदा । वदेव तव धामनामन नाम जतुमनसि प्रदीप्यति ॥ १३ ॥ ज्ञानिन नगन्नि ....

नं त्रिजगतः पुरातनं ॥ त्वां स्मरामि सकलंच निष्कलं निष्कलंकमचलं महाव
॥१४॥ इत्थं यः प्रयतः स्तवीति सततं श्रीजीरपल्लीपुरीवासं पार्श्वजिनप्रभुं प्रकटित
ढप्रतापोदयं ॥ सोवश्यं सुभगं भविष्णुरधिकं धर्मार्थकामामृतश्रीभिः स्त्रीभिरिव
यं गुणगणाश्लिष्टाभिराश्लिष्यते ॥१५॥ इति श्रीजीरापल्लीपार्श्वस्तवनं समाप्तम्॥

॥ अथ श्रीफलवर्द्धिजिनपार्श्वस्तवनं ॥

सयलाहिवाहिजलहर, समूहसंहरणचंडपवमाणं ॥ फलवद्धिपासनाहं संथुणि
। फणय इठफलं ॥ १ ॥ विहुयासं विहुयासं, विहुयासं पत्तमभिथुणंति तुमं ॥ अम
रया अमयरया, अमयरया णुगइरवमवयणं ॥ २ ॥ समणाणं समणाणं, समणा
लंघिउं फुरइ सत्ती ॥ विणयाणं विणयाणं, विणयाणंदणभयाहि मुदे ॥ ३ ॥ अ
हिन्ना अहिन्ना, अहिन्ना विणियमंति कयपूया ॥ सव्वाही सव्वाही, सव्वाहीणा
ह य भत्ता ॥ ४ ॥ गयवाहा गयवाहा, गयवाहा अरहियापइपसन्ने ॥ परमहिया
रमहिया, परमहिया सह न हुंति नरा ॥ ५ ॥ सदवणा सदवणा, सदवणामयरि
हवंति जणा ॥ सुहयगया सुहयगया, सुहयगया तुह पसाएण ॥ ६ ॥ कणयाउ
णयाउ, कणयाउ रक्खसी तुमं भवणं ॥ भदवओ भदवओ, भदवओ रिद्धिसिरिया
ं ॥ ७ ॥ नाएणं नाएणं, नाएणं चियति लोहसुहडंसि ॥ नयराई नयराई, नयरा
सुगुणपोराणं ॥ ८ ॥ फलवद्धी फलवद्धी, फलवद्धी दाइणा तुमे विहिया ॥ सन्न
री सन्नयरी, सन्नयरीणंतयाइजया ॥ ९॥ समणाली समणाली, समणाली णं
हागमे धन्ना ॥ चरणरया चरणरया, चरणरया भाइचत्तसिरी ॥१०॥ निहप्पहस्स
नेह,प्पहस्स, निहप्पहस्स मोहदले ॥ रयणायर रयणायर, रयणायर गुहिर तुज्झ
मो ॥ ११ ॥ इत्थं थुणंति सिरिपास जगन्निवास सिंगारहारफलवद्धिपुरीसिरीए ॥
ुल्लीयराकयजिणप्पहसूरिवाणी भूयच्चमे वियर अंतररोगमुक्कं ॥ १२ ॥

॥ इति श्रीफलवर्द्धिपार्श्वनाथस्तवनं समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीचंद्रप्रभस्वामिस्तवनं ॥

॥ संस्कृतं ॥

नमो महसेननरेंद्रतनूज जगज्जनलोचनभृंगसरोज ॥ शरद्भवसोमसमद्युतिकाय
दयामय तुभ्यमनंतसुखाय ॥ १ ॥ भुवीकृतसादरसेवकलक्ष विनिर्जितदुर्जयभाव
विपक्ष ॥ सुरासुरवृंदनमस्कृत नंद महोदय कल्पमहीरुहकंद ॥ २ ॥

॥ प्राकृतं ॥

जय निरसिय तिहुयणजंतु भंति जय मोहमहीरुहदजनदंति ॥ जयकुंदक

जियसमंदतर्यति जयजय चदप्पहववदकति ॥ ३ ॥ जय ... रक जय जगडिय अपयमकसयपरक ॥ जय निम्मलकेवलनाणगेह, जयजयवि द अप्पडिमदेह ॥ ४ ॥

॥ शौरसेनी ॥

विगदडहहेडु मोहारिकेदूदय दलिदगुरुडुरिदमथ विहिदकुमदकय ॥
नाधतं नमदिजोसदटनदवलसजजहदिनिश्चदि गतिं सोददं निम्मन ॥ ५ ॥

॥ मागधी ॥

असुलसुनरिसलनलनाय सेविवपदे नमिल जय जतुतुदि दिन्नसिवपुनपदे।
चजनपुजनिलद ससाजिसलसीलुदे, देहि मह्सामितसालि सातदपदे॥ ६॥

॥ पैशाचिक ॥

तलितारिसलतोमतया सतन मदनानलनीज्ञमनानगुण ॥
नलिनारुणपाततलानमते जिनना ऽथत ससिव लत्तते ॥ ७ ॥

॥ चूलिका पैशाचिक ॥

कजनाजिकनातुलतप्पहल चलनीकल चालुपशप्पतल ॥
लजनाचनकीतकुनलुचिल चिनलावमहसमलामिचिल ॥ ८ ॥

॥ अपभ्रंश ॥

सासयछुक्ख निहाणुनाहनदिगो जेहिं तवं पुन्नविहूणवजाणु निफलजम्मुतिं नरपसुह ॥ ९ ॥ निम्मल तुह मुहचडजे पहुपिक्खुइ पसरितिउ इयनिरुवमथाउडुहि ह मुनिसामी विप्फुरइ ॥ १० ॥

॥ अथ समसंस्कृत ॥

हारिहारहारहामकुदसुंदरदेहानय केवलकमलाकेलिनिलय मजुनगुणगणना कमलामणरचरणचरणनरचरणधवल बलसिद्धिरमणिमगमविलासना वदल ॥ ११ ॥ नयनरदवजलगाहविमलमगलकुलमदिर वामकामरकिनिद हरियरगुणबधुर ॥ मदरगिरीगुरसारसवलकलिनूरुहकुजर दहिमहादयमय म केवलनिकुजर ॥ १२ ॥ इति जगदभिनदन जनहृदि चदन चडप्रभ निनवदर पहनापानिहुत मम मगलपुनसिद्धिसुखानि जिनो वितर ॥ १३ ॥

इति श्रीजिनप्रभसूरिकृतचद्रप्रभस्वामिस्तव षड्भाषात्मक सपूर्णम्

॥ अथ श्रीवर्द्धमाननिर्वाणकल्याणकस्तवनप्रारंभः ॥

श्रीसिद्धार्थनरेशवंशकमलाशृंगारचूमामणेर्भव्यानां दुरपोहमोहतिमिरप्रोद्भासने ऽह्र्मणे. ॥ कुर्वे किंचन कांचनोज्ज्वलरुचेर्निर्वाणकल्याणकस्तोत्रं गोत्रनिदर्चनीयचरणांभोजस्य वीरप्रभोः ॥ १ ॥ प्राप्य देव शरदांद्विसप्तति शीतगौ पवनदैवतर्क्षगे ॥ तामुपायत रसेन कार्तिकाऽमावसीनिशि शिवश्रियं भवान् ॥ २ ॥ हस्तिपालकनृपालपालिता पूर्न पूरयतु मन्मनःशुचा ॥ यत्र दर्शइव चंद्रमा भवानस्तमाप भवतापहा पुनः ॥३॥ कर्जदर्शनिशि दर्शितर्द्धयस्तत्रपुर्यखिलवर्णजाः प्रजाः॥ त्वन्महोदयमही तयाऽधुनाऽप्युत्सवं विदधतेऽनुवत्सरं ॥ ४ ॥ यैर्ध्वनिस्तव पपे श्रवःपुटैः षोडशप्रहरदेशनाविधौ ॥ तान्निवेश्य धुरि धन्यताजुषां रेखया न खलु लुप्यतेऽन्यतः ॥५॥ पुण्यपापफलपाकवर्णनामध्यमध्ययनपंक्तिशुक्शतं ॥ व्याकृथाः स्फुटमपृष्टपद्कृतिव्याकृतीश्च पश्चिदपुरस्तदा ॥६॥ जीवति त्वयि जिनेंद्रभूतिना त्वत्प्रणामविधिभंगभीरुणा ॥ नूनमैप्यत न देव केवलज्ञानसंपदनुरागभागपि ॥ ७ ॥ यद्विधेयमुपदिश्य गौतमः प्रैपि भक्तिभृदपि त्वयाऽन्यतः ॥ रोगिणः कटुकजाग्रुपानवद्भायतेऽस्य चकृपे शुणाय तत् ॥ ८ ॥ त्वद्विहद्भवतरत्सुरावली या न देहमणिभूषणांशुभिः ॥ सा कुहूरजनिरस्ततामसा पूर्णिमानिशमुपाहसद्ध्रुवं ॥९॥ निर्वृते त्वयि विलोक्य विष्टपं ध्वांतपूरपरिपूरितोदरं॥ रोदयंत इव रोदसी प्रतिश्रुत्स्वरेण रुरुदुः पुरंदराः ॥१०॥ वन्हिवायुजलदेश्वरैः सुरैस्तैलपर्णिककृतांगसंस्कृते॥भूतिमात्रमपि भूतिधाम ते ऽपस्पृशन् वत न तान् रजोऽस्पृशत् ॥११॥ भक्तितो महितुमीशवासवास्तावकीनहनुसंग्रहं व्यधुः॥नूनमद्भविजयाय तावकानुग्रहेण हनुमत्वमिच्छव॥१२॥ कुग्रहा न तव जातु शासनं वीर बाधितुमलंभविष्णवः ॥ एककः स खलु भस्मकग्रहो बाधते भवडपेक्षितस्तदा॥१३॥ जग्मुषि त्वयि शिवं नराधिपास्तत्क्षणं गृहमणीनबोधयन्॥ ये बभुः कुनयकाननप्लुषस्त्वत्प्रतापशिखिनः कणा इव ॥१४॥ यन्न कश्चन मुनिस्त्वया समं युक्ति मैयरित्तै रैर्जनैरिव ॥ दुःषमा समयभाविलिंगिनां व्यंजितेन गुरुनिर्व्यपेक्षिता ॥ १५ ॥ प्रस्थिते त्वयि शिवाय तत्क्षणं संमुमूर्छुरधिपृष्ठि कुंथवः ॥ कृइलीववहुलामतः परं सूचयंतइव भाविनीं महीं ॥ १६ ॥ यत्र यत्र चरणौ त्वयाऽर्पितौ तत्तदास्पदमगादमापतां ॥ एकया पुनरपापया पुरापापयाऽजनि सुरोक्तिनामतः ॥ १७ ॥ यत्र मुक्तिमगमः शमदुमावाप पापतुहिनार्कतापतत् ॥ प्रीतिमीति तरुकुंजभंजने नाग नागकरणं करोतु नः १८ ॥ यः पठत्यशठधीस्तव वीरस्तोत्रमेतदवधानसमेतः ॥ तत्रभावरिपुरा

जि रयश्रीनाजि न प्रनवति प्रवलापि ॥ १९ ॥ इति श्रीवर्धमानजिनस्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ श्रीअरिनाथस्तवनप्रारंभ ॥

जय शरदशकलदशत्ययवदन जय हतजगदसहनमदमदन ॥ मनजकदन जयनगवदरपरमपदसदन ॥ १ ॥ गतमलकमलसकलकरस्य जननमरणनवनयनरहरण ॥ रचय चरणरसनशबलस्तवन मनवमसतवमानम वचन ॥ २ ॥ नवरचनरतदशशतनयन नयवनजलदजलजदलनयन ॥ कजकलशजयकरयजन नमदशमपहरशममनजजन ॥ ३ ॥ श्रमरफणगिरि पदकमल गजकरसरलसबलकरयमल ॥ जनयसनयमतनतजनतरन लमपमलकलमलमकल ॥ ४ ॥ नयमयवचनपवनसमवमत परमतनगा लमनसमत ॥ शमदमयमसमरसरमसमय नवपतनजनयमज मम शमर ॥ ५ ॥ घनरवकनकशकलघनवरन मदकलकरणकलनजयशरन ॥ ... शमन सदयमदधमफलयगजगमन ॥ ६ ॥ नतशतमखतमखननमस मयपरमपदमनयदसदर ॥ नवनवनवनजवदशमगम शकलनगनकनाजल वगम ॥ ७ ॥ तमचयमपनयतपमहतपन परसमयजरजहरपदजपन ॥ सकल नदमनकमनगजकरट दलनमबलतमहतमदचगट ॥ ८ ॥ मदनयनगम रशरण गतरणसदवतरणवरकरण ॥ परसहचरसमरमजगदवन समशम रमदहमहनरन ॥ ९ ॥ सततमचरचरजगदवगमक मननजनकथनततत क ॥ परपदनगगमनरणरणक मफलदशमसफलयपथनणक ॥ १० ॥ सकल लसदनत्रसनमदमन नवनपवनचमनरयतसमर ॥ दलयवहलमनमरवर मतरतनरशतगतपरवशत ॥ ११ ॥ कपटशकटजलशयसमनवक जनमत समपरसमवक ॥ गदगजरणफणधरदकदहन धनहरमरकजदरहरमहन ॥ १२ ॥ समततततमहपरमतकलस गणधरगणधरशमरसकलस ॥ नवदनवम्पदनव दवम वनमवनमपसहनमहनवम ॥ १३ ॥ एष श्रीअरतीर्थराज तव या ... मरोगच्छिदा काम केवलवर्णसत्स्तवसुधास्वाद विधत्ते सुधी ॥ श्रेयो वा न ... त्वपदवीमांस्यानि बाह्यतरा मित्राणी जय सुंदर स नियतं शिश्रीयत मानव ॥ १४ ॥ इति केवलाक्षरमय श्रीअरनाथस्तवन संपूर्ण ॥

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

॥ अथ श्रीयशोविजयजी उपाध्यायकृत अध्यात्ममतपरीक्षाप्रारंभः ॥

॥ आर्या वृत्तं ॥ पणमिय पासजिणंदं, वंदिअ सिरिविजयदेवसूरिंदं ॥ अप्पमयपरिक्खं, जहबोहमिमं करिस्सामि ॥ १ ॥

व्याख्या – सर्व कल्याणनी सिद्धिने अर्थे, श्रीपार्श्वनाथने प्रणाम करीने, तथा संप्रति विजयमान तपागछाधिराज जे श्रीविजयदेवसूरी तेमनी वंदना करीने, पोताना बोधने अनुसारे, आ अध्यात्ममतपरीक्षानामनुं प्रकरण हुं करुं छुं.

उपोद्घातः– कोई आशंका करे के, शुद्ध तत्वनो जे अंगीकार तेने अध्यात्म कहेछे. तेमां कोई विवाद नथी; त्यारे परीक्षा ते शानी करवी? जे वस्तुमां संदेह पडे तेनी परीक्षा कराय छे; निस्संदेह वस्तुनी शी परीक्षा! माटे आ अध्यात्ममत परीक्षानामनुं प्रकरण करवानुं कांई प्रयोजन दीठामां आवतु नथी. तेने कहेछे ॥१॥

अप्पं णामाई, चउव्विहं चउविहा य तव्वंता ॥
तत्थ इमे अप्पुत्तिय, णामेणज्झप्पिआ णेआ ॥ २ ॥

व्याख्याः– अध्यात्मना चार प्रकार छे. एक नामअध्यात्म, बीजो स्थापनाअध्यात्म. त्रीजो द्रव्यअध्यात्म अने चोथो भावअध्यात्म. चेतन तथा अचेतन ए बेमांनी कोई पण वस्तुनुं अध्यात्म एवुं नाम राखेलुं होय ते नामअध्यात्म; अध्यात्मवंत यतिना आकारनुं चित्र कहाडयूं होय ते स्थापनाअध्यात्म; अने जेथकी भावअध्यात्म उत्पन्न थाय, जेवां के, प्रतिमादर्शन, सद्गुरुसेवा, अने अध्यात्मशास्त्राभ्यास ए त्रणे भावाध्यात्मना कारण छे, माटे ते द्रव्याध्यात्म; तथा आत्माना जे शुद्ध परिणामते भाव अध्यात्म कहिये. तेम अध्यात्मीना पण पूर्वोक्त रीते चार प्रकार छे तेओमां इहां जेओना मतनो विचार कर्त्तव्य छे, ते नामअध्यात्मवत्त छे. तेओना मतनी आशंकानुं निवारण करवुं, ते आ ग्रंथनुं प्रयोजन छे.॥२॥

उ०:– पूर्वोक्त चार प्रकारना अध्यात्ममानो भावअध्यात्म मोक्षनुं कारण छे. माटे तेनुं विशेषकरी स्वरुप कहेछेः–

जा खलु सहावसिद्धा, किरिआ अप्पाणमेव अहिगिच्च ॥
भणइ परमप्पं, सा दंसण नाण चरणड्ढा ॥ ३ ॥

व्या०:– जहांसुधी कषाय तथा इंद्रियने वश थयोथको संसारनेविषे आत्मा

फरे छे, तहाशुरी आत्मानेविषे कर्मनो अधिकार छे, स्वत आत्मानो
नथी केमके, आत्मस्वभावनुं आच्छादन थएलु छे जेम
नु आच्छादन थई जायछे, तेथी तेनो स्वभाव प्रगट थई शकतो नथी
योगे आत्मानु आच्छादन थई जायछे, तेथी तेनो ज्ञान, विज्ञान, तथा
दि स्वभाव प्रगट थई शकतो नथी अने नामकर्म ते आत्मस्वभावने
नर, तिर्यंच, नारकी, तथा देवताप्रमुखना पर्यायरूप पोताना स्वभावने
छे जेम तीव्र अग्निमा सुवर्णने नाख्याथी ते मल ज्यारे बली जाय त्यारे
नो शुद्धतादिस्वभाव प्रगट थायछे तेम शुभपरिणाम पूर्वक
की ज्यारे कर्मोनो क्षय थई जायछे, त्यारे आत्मानो ज्ञानादिरूप स्वभाव
थायछे एटले कर्मनो अधिकार टलीने स्वत आत्मानो अधिकार प्रवर्ते छे
अधिकारनी जे क्रिया तेने भावअध्यात्म कहिये ते आत्म ज्ञानरूप
वाथी बोधरूप छे माटे ज्ञान कहिये, तेमज रुचिरूप होवाथी सम्यक
हिये, तथा प्राणातिपातादिक आश्रवनिरोधरूप होवाथी चारित्र कहिये यत
त्मानमात्मनोवेत्ति, मोहत्यागायआत्मनि॥ तदेव तस्य चारित्र, तज्ज्ञान तच्च दर्शनं

उ० कोइ आशका करे के, भावाध्यात्म तथा शुद्धोपयोग ए बे शब्दोनो अर्थ
एक छे जेम उपाधिरहित स्फटिकनो निर्मल स्वभाव छे तेम परद्रव्यसगर्थी
त जीवनो निर्मल स्वभाव छे तेनेज शुद्धोपयोग कहेछे. अने एनेज चारित्र
कहेछे परद्रव्यसगे जीवनो जे मलिन स्वभाव थायछे, तेने अशुद्धोपयोग कहे
एना बे भेद छे –एक शुभोपयोग बीजो अशुभोपयोग देव गुरु तथा धर्मादिक
पर जे प्रशस्त राग होयछे, तेने शुभोपयोग कहेछे जेम राता फूलना सगथी
स्फटिकनो रातो रग थायछे, तेम जाणवु अने जे अप्रशस्त राग तथा द्वेष होय
छे. तेने अशुभोपयोग कहेछे जेम काला फूलना सगथकी स्फटिकनो कालो र
थाय [illegible] जाणवु ए बन्ने मूल स्वभावने ढाकी दियेछे, तेथी अशुद्धोपयोग
[illegible] शुद्धोपयोगरूप चारित्रना भेद कहेछे एनां आयतन परद्रव्य
[illegible] विषे चउद उपकरणरूप परद्रव्यनो सग छता अध्यात्म केम
[illegible] त्तर कहे छे ॥ ३ ॥

[illegible] रागदोसो, अप्पपरसेहि किंचि पडिकूल ॥
[illegible] करणे, किपुण देहुव धम्मठे ॥ ४ ॥

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

॥ अथ श्रीयशोविजयजी उपाध्यायकृत अध्यात्ममतपरीक्षाप्रारंभः ॥

॥ आर्या वृत्तं ॥ पणमिय पासजिणंदं, वंदिअ सिरिविजयदेवसू
रिंदं ॥ अज्झप्पमयपरिक्खं, जहबोहमिमं करिस्सामि ॥ १ ॥

व्याख्या – सर्व कल्याणनी सिद्धिने अर्थे, श्रीपार्श्वनाथने प्रणाम करीने, तथा ...संप्रति विजयमान तपागछाधिराज जे श्रीविजयदेवसूरी तेमनी वंदना करीने, पो...ताना बोधने अनुसारे, आ अध्यात्ममतपरीक्षानामनुं प्रकरण हुं करुं छुं.

उपोद्घातः– कोई आशंका करे के, शुद्ध तत्वनो जे अंगीकार तेने अध्यात्म ...कहेछे तेमां कोई विवाद नथी; त्यारे परीक्षा ते शानी करवी? जे वस्तुमां संदेह ...होय तेनी परीक्षा कराय छे; निस्संदेह वस्तुनी शी परीक्षा! माटे आ अध्यात्ममत ...परीक्षानामनुं प्रकरण करवानुं कांई प्रयोजन दीगमां आवतुं नथी. तेने कहेछे ॥१॥

अज्झप्पं णामाई, चउव्विहं चउविहा य तव्वंता ॥
तह इमे अप्पुत्तिय, णामेणज्झप्पिआ णेआ ॥ २ ॥

व्याख्या.– अध्यात्मना चार प्रकार छे. एक नामअध्यात्म, बीजो स्थापनाअ...त्म, त्रीजो द्रव्यअध्यात्म अने चोथो भावअध्यात्म. चेतन तथा अचेतन ए...नी कोई पण वस्तुनुं अध्यात्म एवुं नाम राखेलुं होय ते नामअध्यात्म; अ...समवत यतिना आकारनुं चित्र कहाडयूं होय ते स्थापनाअध्यात्म; अने जेथ...भावअध्यात्म उत्पन्न थाय, जेवां के, प्रतिमादर्शन, सद्गुरुसेवा, अने अध्या...त्माभ्यास ए त्रणे भावाध्यात्मना कारण छे, माटे ते द्रव्याध्यात्म; तथा आ... जे शुद्ध परिणामते भाव अध्यात्म कहिये. तेम अध्यात्मीना पण पूर्वोक्त ...र प्रकार छे तेओमां इहां जेओना मतनो विचार कर्त्तव्य छे, ते नामअध्यात्म ... तेओना मतनी आशंकानुं निवारण करवुं, ते आ ग्रंथनुं प्रयोजन छे.॥२॥

...– पूर्वोक्त चार प्रकारना अध्यात्ममानो भावअध्यात्म मोक्षनुं कारण छे. ... विशेषकरी खरूं कहेछे.–

...जा खलु सत्तसिद्धा, किरिआ अप्पाणमेव चउ. त्यारे ...
...मसाइ परमप्पं, सा दंसण नाण चरणमूअ निमित्त छे. तेथी ...
... जहां कषाय तथा इंद्रियने वश थ...

अधिक मूर्छा सनवे एनुं समाधान जो आवी रीते करिये के, मूर्छाना बे
ले – एक मारुं मारुं एवो ममत्वपरिणाम, अने बीजो पामेली वस्तुपर
योगनो अध्यवसाय, ए आर्त्तध्याननो नेद ले तेओमानी पहेली जे
ममत्वपरिणामरूप मूर्छा कहीले, ते तो सम्यक्दृष्टिने पण थाय नही,
ते ज्ञानी ले अने ममत्वपरिणाम तो अज्ञाननिमित्त ले एथीन
विषयादिकनु सेवन करतो लता पण तेने परमार्थथी विषयसेवनरहित
त्यारे यतिनेविषे ते शु कहेवु! अर्थात् यति तो सर्वथा विषयसेवनरहित
अने बीजी आर्त्तध्यानरूप जे मूर्छा ले ते धर्मध्यानना प्रनावेकरी
य नही एज समाधान उपकरणनेविषे पण जाणी लेवु जो एम कहेशो के
उपकरण राख्याथी तेना ग्रहण तथा त्यागथी आरन थायले, ए वात पण अ
नचित ले केमके, आरन तो शरीरना करचरणादिनी क्रिया करवाथी
ले जो कहेशो के शरीरना करचरणादिकनी क्रिया जयणाएकरी थायले
णाएकरी धर्मोपकरण लेतां तथा मूकता पण आरंन थतु नथी जो
शो के, धर्मोपकरणथकी शुद्धात्मपरिणाम नंगरूप हिसा थायले त्यारे
की केम हिसा थती नथी? ज्यारे मूर्छाविना शरीरथकी हिसानो सनव
थी, त्यारे मूर्छाविना धर्मोपकरणनो पण सनव केम थशे! जो एम कहेशो के
धर्मोपकरणथकी परद्रव्यनेविषे रति होवाथी आत्मद्रव्यमा रति थती नथी
त्यारे शरीरथकी पण द्रव्यरति केम नथाय? किंतु थवीज जोइये एनो विचार क

उ० – परद्रव्यरतिने बे विकल्पेकरी दूषित करेले – ॥ ६ ॥

तह परदव्वम्मि रई, परिणामो रक्कणाणुबंधो वा ॥
उदओ तणु सममुवहि, पासतो कि ण लज्जेसि ॥ ७॥

व्या० – परद्रव्यरति ते शु काययोगना परिणामरूप ले के, सरक्षणानुबंधी
रौद्रध्यानरूप ले? जो प्रथम काययोग परिणाम कहेशो तो शुनकाययोग
केम लागे? अर्थात् एम तो सनवे नही अने जो सरक्षणानुबंधी रौद्रध्यान
प कहेशो तो ते पण सनवशे नही केमके, चोरादिकथकी सर्व प्रकारे ने व
दिकनु बचाववु, तेने सरक्षण कहेले, ने तेनु जे निरतर चितन करवु तन अनु
ध कहेले एवु रौद्रध्याननो नेद जो उपधियकी थाय तो शरीरथकी पण
जोइये केमके, सर्प, चोर, तथा कंटकप्रमुख थकी शरीरनो रक्षा करवाना

प्रवसाय पण घणानेविषे दीठामां आवेछे. एने तो रौद्रध्यान कहेता नथी! जो म कहेशो के, यतिने शरीरनेविषे राग नथी होतो, तेम छतां सर्पादिकथी शरीर रक्षा तो धर्मसाधनने अर्थे करेछे. तेथी तेना अध्यवसाय अशुभ होता नथी. म पण संभवे नही! केमके, यतिने शरीरनी पठे धर्मोपकरणउपर पण राग हो ो नथी. तेम छतां तेनी रक्षा पण धर्मसाधनने अर्थे करेछे. एवी रीते शरीरना जे ांज धर्मोपकरण छेछे. तेम छतां तेओनी उत्थापना करतां तमने शरम थती नथी!

उ०:– कोई आशंका करे के. उपकरण जे छे ते ध्यानना विरोधी छे. केमके, ओना प्रतिलेखनादि बाह्यव्यापारना योगे अंतर आत्मतत्वनेविषे चित्त एकाग्र ारूपध्यानमां विघ्न थायछे. एम कहेनाराने उत्तर दिये छे. ॥ ७ ॥

जो किर जयणापुव्वो. वावारो सोण जाण पडिवक्खो ॥
सोचेव होइ जाणं, जुगवं मण वयण कायाणं ॥ ८ ॥

व्या०:– आवश्यक पडिलेहणाप्रमुख जे जयणाएकरी व्यापार थायछे ते प ण ध्याननो विरोधी होवोजोये; एने तो कोई विरोधी कहेतो नथी किंतु एत्तो ए क कालाश्रित मन, वचन, तथा कायासंबंधी ध्यानरूप होयछे. जेमके, शुभयो ो करीमन एकाग्र होयछे, एनेज मन संबंधी ध्यान कहेछे; निरवद्य वचन बोला यछे, अने सावद्य वचननो त्याग थायछे, एनेज वचनसंबंधी ध्यान कहेछे; अने शुभयोगनेविषे यत्नेकरी कायानी दृढता थायछे, एने कायसंबंधी ध्यान क हेछे. जो तमे एम कहेशो के, भगवंते एकसमयनेविषे बे क्रियानो निषेध कह्योछे; तेम छतां एकसमयाश्रित मन, वचन तथा काया संबंधी ध्यान केम संभवे? ए नो उत्तर आमछेः– भगवंते जे एकसमयनेविषे बे क्रियानो निषेध कह्योछे ते भिन्न विषयविषे छे; एक विषयविषे निषेध नथी कह्यो. जेमके, वांदणाना आवर्त्तननेवि षे त्रण योगनी क्रिया एकज समयनेविषे थायछे. यतः "भिन्नविषये णिसिद्धं, किरि या दुगमेगयाए एगम्मि; जोग तिगस्स विभंगिय, सुत्ते किरिया जउ भणिया."

उ०:– कोई आशंका करे के, ध्यान जे छे ते योगनो परिणाम नथी. के जेनी प्रवृत्ति बाह्य व्यापार करतां थाय. जो योगना परिणामरूप ध्यान होय, तो लेश्या अने ध्यान एक कहेवाय. एओमां कांई न्यूनाधिकता होय नही तेम तो नथी देखातुं. लेश्याओनुं रूप पण जुदुंछे, ने ध्याननुं रूप पण शास्त्रोमां जुदुं कह्युंछे. वली जो योगपरिणामरूप ध्यान होय तो चौदमे अयोगिकेवल गुण

स्थानके शुक्लध्याननो संभव केम थाय ! ए तो योगनी परिणतिरूप नथी केम के, ध्यानतो आत्मस्वभाव समवस्थानरूप छे अने तेनी उत्पत्ति आवीरीते था यछे — सुखनी तृष्णाएकरी मोहनीयकर्मने वश थयो थको जीव परद्रव्यनेविषे प्र वृत्ति करेछे, ज्यारे मोहनीयकर्मनी न्यूनता थायछे, त्यारे परद्रव्यनेविषे प्रवृत्ति थती नथी. एमथयाथी विषयनेविषे वैराग्य थाय छे केमके, विषयनेविषे जे रा ग होय छे, ते विषय प्राप्तिपूर्वक होयछे अने रागना अभावे वैराग्य होयछे वैरा ग्यथकी मननो रोध थायछे केमके, मननी प्रवृत्ति विषयविना थती नथी जेम तृणरहित स्थानकनेविषे पडेली अग्नि पोतानी मेलेज नाशने पामेछे तेम विषय विना मन पोतानी मेलेज स्थिरताने पामेछे मननो निरोध थयाथी चचलता मटी जायछे अने पछी मन एकाग्र थईने आत्मानेविषे प्रवृत्त थायछे ए आत्मस्वभाव ने ध्यान कहेछे यत "जो खविदमोहकलुसो, विषयविरत्तो मणोण सनिरु समवछिदो सहावे, सो अप्पाणे दवदिजा दा " इति प्रवचनसारे एवु सह चेतन स्वभावरूप जे ध्यान ते, वाह्य व्यापार करतां, तथा परद्रव्य अधिकरण क्रियाथ केम प्रगट थाय ? एनो निर्णय करेछे ॥ ८ ॥

झाण तिकरण पयत्तो, ण सहावो तेण जेण सिद्धस्स ॥
इह णाणविभागो, कह सुक्कझाणभेआणं ॥ ९ ॥

व्या० मन वचन तथा कायारूप त्रिकरण एटले त्रण योगनो प्रयत्न कराथी ध्याननी सिद्धि थाय छे, माटे योगपरिणामरूप ध्यान छे, परतु उपयोगरूप ध्यान नथी अने लेश्या पण योगपरिणामरूप छे तेथी योगपरिणामपणे तो

वस्थान तो केवलीने सर्वथकी अधिक छे. ए कारण माटे अयोगीने तो योगनि रोधरूप ध्यान छे. अने छद्मस्थने करणना दृढव्यापाररूप ध्यानछे. एवी रीते शुभ योगेकरी प्रवर्त्तनीय जे ध्यान, तेमां वाद विवाद शानो होय!

उ० कोई आशंका करे के, जो उपकरण होय तो राग पण होय, माटे उप करण सर्वथा त्याग करवा योग्य छे, तेम जो न करिये तो उत्सर्गमार्ग केम रहे? एप्रश्ननो उत्तर दिये छेः— ॥ ए ॥

जा खलु सरागचरिआ, साविय उस्सग्गमग्गसंलग्गं॥
मोत्तुं अववायपयं, अइप्पसंगी परविसेसो ॥ १० ॥

व्या० जे स्थिविरकल्परूप सरागचर्या कहेतां सरागमार्गी छे. ते पण उत्स र्गमार्गने लागेलोज छे. अर्थात् अपवाद मार्ग अने उत्सर्ग मार्ग निकट संबंधी छे. यद्यपि स्थिविरकल्पी पण अपवादनो तो त्याग करेछे, तथापि कोई कारण रे जोग्रे तेने ग्रहण पण करवुं जोयेछे. अने जिनकल्पी तो कदापि अपवादनुं ग्रह ण करेज नही. एवी रीते स्थिविरकल्पी तथा जिनकल्पीना अपवाद तथा उत्स र्गमार्गमां अल्प अंतराय छे. एटले अपवादमार्ग थकी उत्सर्गमार्गनी कांईक उत्कृष्टता छे, तेथीज बे नेद थयाछे. अने जिनकल्पनी अपेक्षाए स्थिविर कल्प कह्योछे. तेमज उत्सर्गमार्गनीअपेक्षाए अपवाद मार्ग कह्यो छे. जो उत्सर्ग मार्ग थकी कांईक न्यूनता वालो अपवाद मार्ग, तथा अपवादमार्गथी कांईक अधिकतावालो उत्सर्ग न कहेवुं तो चौदमां गुणस्थानकना अंतना समयसुधी उत्सर्गमार्गनो संनव थशे नही. केमके सर्वोत्कृष्ट संवर तिहांज छे. माटे जे ठेकाणे जे मार्ग उत्कृष्ट कह्यो होय ते ठेकाणे तेज उत्सर्गमार्ग छे. जेमके स्थि विरकल्पनेविषे चौद उपकरणज उत्कृष्ट होवाथी ते उत्सर्ग मार्ग छे. ॥ १० ॥

उ० मूल गाथावडे पूर्वपक्षी आशंका करे छेः—

नए वज्झंगं साहण, मववाउ अंतरंगमुस्सग्गो ॥ जा पुण सराग चरिया, समुच्चिया णेव सिद्धाए॥११॥ पडिसेवणो पुणसो, अववा उ फुडो अणायारो ॥ ता वज्झाई गंथो, णो उस्सग्गो ए अववाउ॥१२॥

व्या०:— परद्रव्यमात्रनी जे निवृत्ति, एटले परद्रव्यनो कांई पण परिग्रह रह्यो होय, मात्र आत्मद्रव्यनोज प्रतिबंध होय, तेज संयमनुं अंतरंग कारण छे;

एने उत्सर्गमार्ग कहेछे एवी सामग्रीनी प्राप्तिविना शुद्धोपयोगभूमिकाए शकातु नथी, त्यारे तेनी साह्यता करनारी जे उपधि होय तेनुं धारण अपवाद कहेछे ते उपधि बंधनो हेतु नथी, माटे निषेध नथी कही उपधि संयमरहित पुरुषना उपयोगमा आवती नथी किंतु संयतीने छे अने मूर्छानो हेतु थती नथी यत " असुमिकुई उवहिं, जव जणोहि, मुच्छादिजणणरहिद, गेह्लउसमणोयजदि रिथअप्पंते " ते आ छे – एक तो यथाजातलिंग पुद्गल, एटले जेवो माताना उदरमांथी होय तेवो आकार धारण करवो, बीजो वचनपुद्गल, एटले जेथी बोध थायछे, तेनु ग्रहण करवु, त्रीजु गुर्वादिक विनयरूप मनना करवु, अने चोथु सूत्राध्ययनना पुद्गलने धारण करवुं यत " उवयरण ग्गो, लिंग जह जादरूपमिदि भणिद, गुरुवयणपि अ विणउ, सुत्तज्झयण भत्तं " एवो जे अपवादमार्ग तेने सरागचर्या कहेछे अर्थात् शुद्धोपयोगनी नताने लीधे अपवादमार्ग कहेवाय छे पण जे वस्तु प्रतिषिद्ध एटले सेवन योग्य न होयने तेनु जे सेवन करवु तेने अपवाद कहता नथी तने तो नाचारज कहेछे. तेमछता संयतीने वस्त्रादिक सेवन करवायोग्य नथी केमके अनाचार छे माटे ए सर्व परिग्रहनो त्याग करवो जोये वस्त्रादिक परिग्रहनु ग्रहण करवु ते उत्सर्ग पण नथी ने अपवाद पण नथी, किंतु अनाचार छे." केम करवो ? एहवु जे कहेछे तेने उत्तर आपी तेनो समाधान करेछे –॥१३॥

उवकुणइ जह सरीर, सुद्धुवओग तहेवमुवगरण ॥
जम्हा तउ मुणीण, सुए अणेगे गुणा भणिआ ॥ १३ ॥

व्या० –जेम शरीर परद्रव्य छता शुद्धोपयोगनु साह्यकारिछे, तेथी परिग्रह कहेवाय नही तेमउपकरण पण शुद्धोपयोगना साह्यकारी होवाथी परिग्रह कहेवाय नही केमके, ए वात, सिद्धांतोनेविषे पण धर्मोपकरणना अनेक गुण कह्या तेथी सिद्ध थायछे जेमके, रात्रीयें चउकाले काल ग्रहलेता वस्त्रे करी यतीने शी नी पीडाटले छे ने जो वस्त्र न होय तो शीतनी पीडाने लीधे अग्निना ताप ग्रहण नी चिंतना थाय तेथी आर्तध्यान उत्पन्न थायछे वस्त्रेकरी सचित्त रज यी धूमरी ओस, वृष्टि, तथा त्रिम्मज प्रमुखनी रक्षा थायछे ने जो वस्त्र न होय ढ उघाडु शरीर होय, तो शरीरनी गरमीनी वाफथकी ते जीवोने दुःख उत्पन्न थाय

संपातिमरजरेणु प्रमार्जवाने अर्थे मुहपत्ती राखवी, लेवादेवा प्रमुखनी क्रियाए पू
वें प्रमार्जवाने अर्थे तथा जैनलिंगने अर्थे उंगो राखवो. तथा पुरुष वेदनीयोद
यादिक वर्जने अर्थे चोलपट राखवो. इत्यादिक वस्त्रना गुण कहाछे. अनाभोगे
लीधेलां जे संसक्त गोरसादिक, ते पात्रेकरीने विविए परठाई शकायछे. पात्रवि
ना हाथमाज लीधा होय तो योग्य ठेकाणे केम परठवी शकाय? तथा हाथमां
रस वस्तु लीधाथी तेनो विंदु जो नीचे पडे, तो तेथकी कीडीओप्रमुख अनेक जं
तुओनी विराधना थाय. गृहस्थ भाजनने अर्थे उपभोगेपण पश्चात्कर्मादिक दोष
उपजे; अने जो पात्र होय तो तेणे करी ग्लान अथवा दुर्बलने पथ्यादिक लाव
ने अर्थे उपयोगी होवाथी उपकार थायछे. अलब्धिवत तथा लब्धिवत अस
मर्थ तथा समर्थ प्राहुणाने वात्सल्य पात्र होय तो अन्नपानादिकने आपणी उप
कार करे. अन्यथा केम करे? इत्यादिक वस्त्र तथा पात्रनेविषे अनेक गुणजाणी
शरीरनी पठे धर्महेतु होवाथी तेमां परिग्रहपणानी आशंका करवी नही.॥१३॥
हवे — उपहासयुक्त पूर्वपक्षीनी मूल गाथा वडे आशंका करे छे:—

जइ उवहिभारगहणं, इठं दुज्झाणवज्जणणिमित्तं
तो सेयं थीगहणं, मेहुणसण्णाणिरोहठं ॥ १४ ॥

व्या० — शीत तथा तापप्रमुखनी पीडाए करी आर्त्तध्यान उपजे नही; ते मा
टे जो तमे एटलो बधो उपधिनो भार वेठो छो; त्यारे मैथुन संज्ञानिमित्त आर्त्तध्यान
तेनो त्याग करवासारु एक स्त्रीनो परिग्रह पण शासारुं राखता नथी? ज्यारे जी
र्णादिक वस्त्र राखवाथी मूर्छा थती नथी, त्यारे अंगभंग थएली तथा कुरूप स्त्री
राखवाथी मूर्छा केम थाय? ॥ १४ ॥

उ०:— ए आशंकानो उत्तर दियेछे:—

एयं वि दूसगाणं, वयणं मयणंधवयणमिव मोहा ॥
असद समोवहासो, देहाहाराइगहणेवि ॥ १५ ॥

व्या०.— तमारुं वोलवुं भांड (मस्करा) ना जेवुं भासेछे. जेम होलीना दाहा
डांमां कामी पुरुषो गमे तेम बक्या करेछे. अने कामने वश थया थका लाज उप
जावे एवा वचनो वोल्या करे छे. तेम तमे पण मिथ्यात्वना परवशेकरी अज्ञानने
लीधे मस्करीना वचन वोलो छो. ते वचनोथी अमने तो कांई थवानुं नथी, पण
तमे पोते तेवा देखाई आवो छो. केमके, तमे पोते पण भूखनी पीडा टालवासारुं

खावाने न मळेतो आर्त्तध्यान थाय तेने टाळवासारुं, तथा शरीरने वासारु आहार लेवानुं मानोछो, तेम स्त्रीपरिग्रह शासारु मानता नथी! जेम आहारमा गुण छे, दोष नथी तेम धर्मोपकरणमां पण गुण छे, दोष ए रुडु समाधान छे. ए कारणथी धर्मनां साधनोनेविषे जे राग थाय छे, तं जाणीने तेनेपरिग्रहरूप दोष जाणवो नही. ॥ १५ ॥

अ० — सम्यग्ज्ञान थवासारु राग प्रशस्त छे अने द्वेष अप्रशस्त छे ते

रागस्स व दोसस्सव, उद्दिस्स सुहासुहे सुहासुहया ॥
जइ पुण विसयविरुक्का, कह होज्जा तो विनागोसि ॥ १६ ॥

व्या० — सारा उद्देशेकरी अरिहंतादिकनेविषे जे राग करवो, ते प्रशस्त राग कहेवायछे यत "अरिहंते सुयरागो, रागो साहीसु बंभयारीसु, एम रागो, अज्जस रागाण साहूण" इति आवश्यके अगुणने तजवासारु जे द्वेष करवो पडे तेने प्रशस्त द्वेष कहिये जेम के, मिथ्यात्व अज्ञान, तथा अविरति प्रमुखउपर जे द्वेष थाय छे, ते प्रशस्त द्वेष कहेवायछे केमके, तेओविषे द्वेष न थाय तो तेओनो त्याग केम थाय? केवल विषयनी अपेक्षाएज द्वेष थ यछे एम न मानवु जो मात्र विषयनेअर्थेज द्वेष थतो होय तो तेना प्रशस्त या अप्रशस्त ए बे विभाग थई शके नही तेमज उत्तमयतीनेविषे तथा उत्तम धर्मनेविषे पण जे आ लोकादिकने अर्थे राग थायछे ते अप्रशस्त कहेवायछे कोई कहेशे के, रागना उपर कहेला बे विभाग थई शकेछे केमके, तेना शुभ तथा विशुद्ध ए बे अंगछे तेम द्वेषना ए बे विभाग थई शके नही, केमके, नो बीजो विशुद्ध अंग नथी मात्र सक्लेशरूप होवाथी अप्रशस्त छे यत रिणामो दो भधो, परिणामो राग दोस मोह जुदो, असुहो मोह य दोसो, " असुहो हवदि रागो " इति प्रवचनसारे एम कहेनाराने एम कहेवु के तम ने सामायकनेविषे पाप ग्रहोना अध्यवसाय केम थायछे? जे वस्तुविषे द्वेष थ थाय तेने त्याग करवाना परिणाम थाय नही तेवा परिणामो ता थायछे ते अप्रशस्त द्वेष कहेवाय? किंतु प्रशस्त द्वेषज कहेवाय केमके, परन तार द्वारे ते क्रोधनो अंश छे, माटे क्रोधरूप जे द्वेष ते पण रागनी पठ बे प्रकारे होय

अ० — चार निक्षेपाए करी राग तथा द्वेषनु विवरण करे छे — ॥ १६ ॥

णामं ठवणा दविए, रागो दोसो अ भाव चउभेया ॥ कम्मं जोग्गं
वद्धं, वज्झंतमुदीरणोवगयं ॥ १७ ॥ णो कम्म दवराउ, णायवो
वीस साप उगा य ॥ संझाइ कुसुंभाई, दोसो डुब्बणाईओ ॥१८॥
जं राग दोस कम्मं, समुइन्नं जे तओ अपरिणामा ॥ ते भावराग
दोसा, वोहमिह णय समोआरं ॥१९॥ कोहो माणो दोसो, माया
लोभो अ राग पज्जाया ॥ संगहणयमयमेयं, दोसो माया अवि
वहारा ॥ २० ॥ उज्जुसु अस्सय कोहो, दोसो सेसेसु णहि ए
गंतो ॥ कोहोचिय लोहोचिय, माणो मायाव सहस्स ॥ २१ ॥

व्या० राग तथा द्वेषनां नाम, स्थापना, द्रव्य तथा भाव ए चार चार प्रकार होवाथी बन्नेना चार चार भेद थायछे. जेम के, नामराग, स्थापनाराग, द्रव्यराग, तथा भावराग ए चार भेद रागना थायछे. तेमज नामद्वेष, स्थापनाद्वेष, द्रव्यद्वेष, तथा भावद्वेष ए चार भेद द्वेषना थायछे. जेनुं राग एवुं नाम होय ते नामराग कहेवाय. रागवाननुं जे चित्र कहाडेलुं होय ते स्थापनाराग कहेवाय. द्रव्यरागना बे प्रकार छे—एक कर्मद्रव्यराग, बीजो नोकर्मद्रव्यराग, एमांना कर्मद्रव्यरागना चार प्रकार छे:—एक योग बीजो बध्यमान, त्रीजो बद्ध, अने चोथो उदीरणाप्राप्त. जे मोहनीयकर्मना पुद्गलबंध परिणामने अभिमुख थया होय ते योगकर्मद्रव्यराग कहेवाय. जे मोहनीयकर्मना पुद्गलबंध क्रियाना परिणामने पाम्या होय ते बध्यमान कर्मद्रव्यराग कहेवाय. जे मोहनीयकर्मना पुद्गल बंध परिणामनी निष्ठाने पाम्या होय तेबद्धकर्म द्रव्यराग कहेवाय. अने जे मोहनीयकर्मना पुद्गल उदयने पाम्या होय ते उदीरणाप्राप्त कर्मद्रव्यराग कहेवायछे. तेम नोकर्मद्रव्यरागना बे प्रकार छेः—एक विश्रसा, बीजो प्रयोग. जे संध्याराग प्रमुख देखायछे ते विश्रसानो कर्मद्रव्यराग कहेवाय; अने जे वस्त्रादिकनेविषे कुसुंभादिक राग देखायछे ते प्रयोगनो कर्मद्रव्यराग कहेवाय. अने भावरागना पण बे प्रकार छे—एक उदयप्राप्त, बीजो परिणाम. मोहनीयकर्मनो उदय थाय ते उदयप्राप्त भावराग कहेवाय. अने मोहनीयकर्म परिणा[illegible]ामे ते परिणामभावराग कहेवायछे.

जेनुं द्वेष एवुं नाम होय ते नामद्वेष कहेवाय. द्वे[illegible]

कहाडेलुं

होय ते स्थापनाद्वेष कहेवाय द्रव्यद्वेषना बे प्रकारछे -एक
बीजो नोकर्मद्रव्यद्वेष एमांना कर्मद्रव्यद्वेषना चार प्रकार छे -एक योग
बद्धमान, त्रीजो बद्ध अने चोथो उदीरणाप्राप्त जे मोहनीयकर्मना पुद्
परिणामने अभिमुख थया होय ते योगकर्मद्रव्यद्वेष कहेवाय, जे
ना पुद्गल बंधक्रियाना परिणामने पाम्या होय ते बद्धमानकर्मद्रव्यद्वे
ष; जे मोहनीयकर्मना पुद्गल बंधपरिणामनी निष्ठाने पाम्या होय ते
द्रव्यद्वेषकहेवाय, अने जे मोहनीयकर्मना पुद्गल उदयने पाम्या होय ते
णाप्राप्तकर्मद्रव्यद्वेष कहेवायछे तेम नोकर्मद्रव्यद्वेषना बे प्रकार छे -एक
अगा. बीजो प्रयोग जे सध्याराग प्रमुख देखाय छे, ते [illegible]
कहेवाय, तथा जे वस्त्रादिकनेविषे कुसुंभादिक राग देखायछे ते प्रयोगना
द्रव्यद्वेष कहेवाय छे अने भावद्वेषना पण बे प्रकार छे -एक उदयप्राप्त.
परिणाम मोहनीयकर्मनो जे उदय थाय ते उदयप्राप्तभावद्वेष कहेवाय,
मोहनीयकर्मपरिणामने पामे ते परिणामभावद्वेष कहेवायछे

हवे नयेकरी रागद्वेषनुविवरण करे छे -संग्रह नयनी रीतिए क्रोध तथा
[illegible] अप्रीतिनो परिणाम होवाथी द्वेष कहेवायछे, अने माया तथा लोभ
[illegible] प्रीतिनो परिणाम होवाथी राग कहेवायछे व्यवहारनयनी
मायानी योजना परना उपघातने अर्थे थायछे माटे त्रीजी माया पण [illegible]
कहेवाय अने न्यायोपात्त द्रव्यप्रमुखनेविषे जे लोभ थायछे ते राग कहेवाय
परंतु अन्यायोपार्जित द्रव्यादिकनेविषे जे लोभ थायछे ते राग कहेवाय [illegible]
केम के, एथी कलहादिकनी उत्पत्ति थायछे ऋजुसूत्रनयनी रीतिए [illegible]
[illegible] अप्रीतिनाज परिणाम होवाथी एकांत द्वेष कहेवायछे बाकीना [illegible]
मान, माया ने लोभ ते एकांत द्वेष कहेवाय नही किंतु अनेकांत [illegible]
केम के, मान ज्यारे स्वोत्कर्ष परिणामरूप होय छे त्यारे राग कहेवायछे [illegible]
[illegible] परनिंदापरिणामरूप होयछे त्यारे द्वेष कहेवायछे तेमज माया [illegible]
लोभ पण ज्यारे मूर्छा परिणामरूप होय छे त्यारे राग कहेवाय छे, अने [illegible]
[illegible] परिणामरूप होयछे त्यारे द्वेष कहेवायछे. अने शब्दनयनी रीतिए [illegible]
[illegible] लोभ ए बे कषायरूप होवाथी एमांना मान तथा माया अप्रीतिना [illegible]
[illegible] [illegible] त्यारे क्रोधमां आवीने मळी जाय त्यारे ते द्वेष कहेवायछे अने [illegible]
[illegible] परिणामरूपे थईने ज्यारे लोभमां आवी मळी जाय त्यारे राग कहेवायछे [illegible]

परदव्वंमि पवित्ती, ण मोहजाणिया व मोहजाणावा ॥
जोगकयाहु पवित्ती, फलकंखा रागदोसकया ॥ ७२ ॥

व्या०:– परद्रव्यनेविषे जे प्रवृत्ति थाय छे तेनुं निश्चयथी मोह कारण नथी. केमके, प्रवृत्ति तो मन वचन तथा काय योगथी थायछे, अने फलनी इच्छा राग द्वेषथी थायछे. माटे फलनी इच्छाविना यतिजो धर्मोपकरण धारण करे तो तेथी अयोग्य शुं थयुं कहेवाय ? केमके, फलनी इच्छाविना राग तथा द्वेष थता नथी.॥७२॥

वत्थाइणेवगंथो, मुणीण मुच्छं विणेव गहणाउ ॥ तह
देहपालणठा, जह आहारो तुह वि इठो ॥ ७३ ॥

व्या०:– यतिने वस्त्रादिकनो ग्रंथ थतो नथी. केमके, मात्र शरीरनी रक्षा करवासारु ग्रहण करेछे. तेमां मूर्छा रंचमात्र पण होती नथी. जेम शरीरनी रक्षाने अर्थे यति निरवद्य आहारनुं ग्रहण करेछे पण तेमां मूर्छा होती नथी. तेम धर्मोपकरणोविषे पण जाणी लेवुं. ॥ ७३ ॥

जह देहपालणठा, जुत्ताहारो विराहगो ण मुणी ॥
जह जुत्तवत्थपत्ता, विराहगो णेव णिद्दिठो ॥ ७४ ॥

व्या०:– जेम शरीरनुं पालन करवाने अर्थे निरवद्य आहार लेतां यतिने विराधक कह्यो नथी. तेम निरवद्य वस्त्र पात्र राख्याथी पणविराधक न कहेवाय किंतु आराधकज कहेवाय. कोई एम कहे के, शुद्धोपयोग जे छे ते प्रदीप जेवो छे, अने भोजन तथा शरीर संचलन जे छे ते तेलपूरण तथा वाटसंचार जेवो छे. एतो योग्य छे पण उपधि अयोग्य छे. एवुं अमरचंदनुं बोलवुं असमीचीन छे. केमके, धर्मोपकरण धारण करवां ते प्रदीपने निर्वातस्थले राखवा जेवां छे. माटे योग्यछे.

अणसण सहावजोगा, जह असणं अणसणं तिजुत्त
मिणं ॥ जुत्तं तह वत्थाई, सहावउ तप्परिणयस्स ॥ ७५ ॥

व्या०:– जेम सर्व भोजननी तृष्णाथकी रहित छतां अंतरंग आत्मस्वभावनी भावना करतां तेना उपष्टंभने अर्थे आहारनुं जे ग्रहण करवुं ते परमार्थे अनाहार ज कहेवाय. यत. "जस्स अणेसणमप्पा, तपि तओ तप्पडिच्छगसमणा; अण निरकमणे त्तण, मथतेसमणाअणाहारा." इति प्रवचनसारे. तेमज सकल परि

तो ते निर्धन जेवोज होय छे. एम सचेल साधुविषे पण जाणी लेवुं. सर्वथा अचेल तो ज्यारे स्कंध ऊपरथी देवदुष्य वस्त्र पडे त्यारे तीर्थंकर कहेवायछे. ॥२९॥

एएण जइ अचेला, जिणंद जिणकप्पिआइआ सुमुणी॥ ता एसोच्चिय मग्गो, एसोत्ति पराकयं वयणं॥३०॥

व्या०:— एणेकरी, जिनतीर्थंकर तथा जिनकल्पिप्रमुख अचेलाछे, तेथी एज मार्ग उत्तमछे; अने स्थविरकल्पनो मार्ग उत्तम नथी; एम कहेनारानुं निराकरण कर्युं. कारणके, जे जिनकल्पीछे ते पण एकांते अचेला नथी. केमके, जे जिनकल्पीने पात्रनी लब्धि होय, हाथ छिद्ररहित थया होय; किंतु वस्त्रनी लब्धि न होय ते ओमांना कोइएकने रजोहरण, मुहपति, तथा एक कल्पक ए त्रण उपधि होय छे; कोइकने रजोहरण, मुहपति, तथा बे कल्पक मली चार उपधि होयछे; कोइकने रजोहरण, मुहपति, तथा त्रण कल्पक मली पांच उपधि होयछे; जेने वस्त्रनी लब्धि होय, किंतु पात्रनी लब्धि न होय तेने सप्तविध पात्रनिर्योग, रजोहरण, तथा मुहपती मली नव उपधि होयछे; जेने बन्ने लब्धिमानी एके लब्धि न होय तेओमांना कोइकने सात पात्रा, रजोहरण, मुहपती तथा एक कल्पक मली दश उपधि होयछे; कोइकने सात पात्रा, रजोहरण, मुहपति तथा बे कल्पक मली अग्यार उपधि होयछे, अने कोइकने सात पात्रा, रजोहरण, मुहपति, तथा त्रण कल्पक मली बार उपधि होय अर्थात् पोतानी शक्तिने अनुसारे उपधि होयछे. अने जेने बन्ने लब्धीओ होय तेने पण रजोहरण तथा मुहपति ए बे उपधि तो निश्चयथी होयछे. एवो नियमछे. ॥ ३० ॥

जिणकम्मेव य कम्मं, जइ कायव्वं तउ तुहं इहयं॥
उवएस सिस्स दिक्खा, गुरुवयणाईहि किं कज्जं॥ ३१ ॥

व्या०:— जो तमे कहेशो के. जे कार्य जिनेश्वरे नथी कर्युं ते अमारे पण करवुं नथी! त्यारे धर्मोपदेश, शिष्य. दीक्षा, तथा गुरुवचनादिकनुं तमारे शुं उपयोग छे! जेम भगवंते ज्ञान उपना पछी धर्मोपदेश दीधो छे, किंतु केवलज्ञाननी पूर्वे कोइने उपदेश कर्यो नथी; तेम तमारे पण केवलज्ञान उत्पन्न थाय त्यारेज उपदेश करवो जोये. तेनी पूर्वे कांइ पण धर्मोपदेश प्रमुख करवुं जोइये नही वारु !!! ॥३१॥

णिरतिसयाणं कप्पा, थेराणहिव छिन्न अ तहेव ॥
पन्विज्जउ जिणकप्पं, पंचहि तुलणाइ जुत्तो नो॥ ३२॥

प्रमुख धर्मचिंताने अर्थे साधु आहार करे छे. पण वस्त्र तथा रूपादिकने अर्थे करतो नथी, तेमज वस्त्र पण कारणने लीधे धारण करे छे तेनो त्याग करवानुं कारण शुं! आहार लेवो अने वस्त्र मूकवा! एम करवाने तमारो शुं अभिप्राय छे ते जाणतु नथी ॥ ३४ ॥

अविजिय हिरिकुछाणं जइ नूणं संजमेण अहिगारो ॥
ता कह अजिय छुगंछा तणाणं तत्त अहिगारो ॥ ३५ ॥

व्या०.— जो एम कहेशो के जेणे लाज तथा छुगंछा प्रमुख जीत्यां न होय तेने चारित्रनो अधिकार नथी त्यारे जेणे क्षुधा तथा तृषा जीत्यां न होय तेने चारित्रनो अधिकार केम कहेवाय? ज्यारे क्षुधा तथा तृषा मूलगुणनां घातक नथी त्यारे लज्जा तथा छुगंछा पण मूल गुणघातक केम कहेवाय? माटे अहीं तमारे अभिनिवेशविना बीजुं कांइ कारण दीठामां आवतुं नथी ॥ ३५ ॥

अह हिरि कुछा हिसया हिरि कुछ सहाव भावणो णोचेत् ॥
एहा छुहाहि ताकह तय भाव सहाव संबुछी ॥ ३६ ॥

व्या०.— जो कहेशो के, यतिने लज्जा तथा छुगंछा होय तो तेथी विपरीत जे अलज्जा तथा अछुगंछारूप आत्मस्वभावनी भावना ते न थाय. त्यारे क्षुधा तथा तृषा छतां तेथकी विपरित जे अक्षुधा तथा अतृषारूप आत्मस्वभावनी भावना ते यतिने केम थाय! माटे शांत दांत प्रमुख अष्ट गुणयुक्त जे यति छे, तेनुं मन शुद्ध होयछे तेनावलथी आत्मस्वभावभावना टलती नथी. ए समाधान आहार अने उपकरण ए बन्नेनेविषे लागु पडेछे ॥ ३६ ॥

उस्सग्गववायाणं मित्तीए अहण भोअणं छुहं ॥ उ
स्सग्गववायाणं मित्तीइ तहेव उवगरणं ॥ ३७ ॥

व्या०:— जो एम कहेशो के, उत्सर्ग तथा अपवाद ए बन्ने मार्गनेविषे सापेक्षताएकरी भोजन करवुं ते अयोग्य कहेवाय नही: त्यारे सापेक्षताएकरी उपकरण धारण करवामां शुं अयोग्यता छे? ॥ ३७ ॥

ए पणुवगरणेणं पच्चक्खाणस्स दववउ भंगो ॥ इयकप्प
णावि विहवा जोवणमिव णिप्फला एआ ॥ ३८ ॥

व्या० – जो एम कहेशो के, उपकरण जे छे ते नावथी तो मूर्छारहित छे द्रव्यथकी परिग्रहरूप छे तेथी पच्चखाणनो जंग थायछे केमके द्रव्य, काल तथा नाव ए चार प्रकारे जे पच्चरकाण छे तेमांनो प्रथम उपकरण छता संनवे नही एवी जे अध्यात्मनी कल्पना छे ते पछे निष्फल छे केमके, द्रव्यादिक चार प्रकारे सर्व मूर्छानो जे त्याग करवो सिद्धांतोनो परमार्थ छे एम जो न मानीए तो शरीर पण द्रव्यपरिग्रह छे, त्याग केम थाय ! अने पच्चरकाणना जे चार प्रकार कह्या छे ते तो सर्व पच्चखाणनो विस्तार छे, एम जाणवु यत " अपरिग्गहियासुत्ते, तिजाय मुच्छा रिग्गहोनिमउं, सवदवेसु एसा, कायवा सुत्तसप्नावो," इति विशेषावश्यके

सिद्धंत सिद्धधरणं उवगरण त मुणीण सुद्धकरण ॥
अह होइ पावहरण इय अम्ह विति आयरिया ॥३९॥

व्या० – एरीतीते सिद्धांतनेविषे उपकरण धारण करवानु कह्यु छे, ते ज मुनिने सुखकारक थाय छे, तथा पापनुं हरण करेछे एम ... गुरु निग्रंथनेविषे अमारा पूर्वाचार्ये कह्यु छे, ते अवश्य मान्य करवुं जोये ॥३९॥

पुछा दिअवराण केवलमन्नपिआण उत्तरासो ॥
अम्हाण पुण दुहउ होइ विवहि आरवावारो ॥ ४० ॥

व्या० – आपणनेविषे दिगंबरीओए जे प्रश्न कर्या छे, तथा अध्यात्मीयोए ... वचनो कह्यांछे, ए बन्नेनो अमारे प्रतिकार करवानो अधिकार छे एरीते ... उपकरण तथा नावअध्यात्म ए बन्नेनु पोतपोतामां अविरोधपणु बतावुं ॥४०॥

... – अध्यात्मनी प्राप्ति केम थाय ते कहेछे –

पंच समिउ तिगुत्तो सुविहिय ववहार किरिअ परिक म्मो ॥ पावइ परमप्प साहू विजिइदिअप्पमरो ॥ ४१ ॥

व्या० – ... समिति तथात्रणगुप्ति करि सहित होय, ... तथा विनयप्रमुख विविधप्रकारे क्रिया पालता होय, तथा इंद्रिया ... ते साधु ... अध्यात्मनी प्राप्ति थाय छे ॥ ४१ ॥

... वर्ग ... जो ... आहम्म जाव कहणेण ॥
... बोडिरीअ उम्मग्गपरूवण काल ॥ ४२ ॥

व्या०:— कोई एम कहे के, व्यवहाररूप बाह्य क्रियाथी अर्थ सिद्ध थाय एवो नियम नथी; केमके, क्रिया कर्याविना भरत चक्रवर्त्तिने काच भुवनमां अनित्य भावना भावतां केवल ज्ञान उत्पन्न थयुं अने बाह्य क्रिया करतां रौद्र ध्यानना योगे प्रसन्नचंद्रे अशुभ प्रकृति बांधि लीधी. माटे व्यवहार क्रिया करवी नही, किंतु निश्चय क्रियानो अंगीकार करवो. एम कहेनारा उन्मार्गनी प्ररूपणा करीने पोताना बोधबीजनो नाश करेछे. माटे ते वचन मान्य करवां नही. केमके, भरतादिकनुं स्वरूप कदाचित भावमां कहेवाय. एटले एवुं कदाचितज बनेछे, पण नियमथी एमज थायछे एवुं कोईनाथी कहेवाय नही. अने व्यवहार पंथमां तो व्यवहारक्रियाविना निश्चय क्रिया संभवेज नही अने ए कारण माटे एक निश्चय अंगीकार करिने क्रिया मूकी देवी नही किंतु बन्ने अवश्य करवीः ॥ ४२ ॥

सव्वं सद्दावसज्झं णिछं पठपरकयं च ववहारा ॥ ए
गंते मिछंतं उभय णयमयं पुण वयाणं ॥ ४३ ॥

व्या०:— निश्चयनयनी रीतिए सर्व वस्तु स्वभावे उत्पन्न थायछे, विशिष्ट वस्तु परिणामने स्वभाव कहेछे. ज्यारे बीजने अंकुरपणे उत्पन्न थवानो परिणाम थायछे, त्यारे बीजपर्याय टलीने अंकुरपर्याय उत्पन्न थायछे. पण तेने बीजा कारणनी अपेक्षा होती नथी. अहीं कोई आशंका करे के, जो बीजा कारणनी अपेक्षा न होय तो कोठामां पडेला बीजनो केम अंकुररूपे परिणाम थतो नथी? एनो जवाब.— कोठामां पडेला बीजने अंकुररूप परिणाम थवानां बीजां कारणो जोयेछे, माटे व्यवहारनय पण अंगीकार करवो जोये छे. तेने सामग्री कहेछे, ते सामग्री मल्याविना बीजनो अंकुररूपे परिणाम थाय नही. किंतु सामग्रीना योगे ते परिणाम थाय छे. कोई आशंका करे के जो सामग्रीथीज कार्यनी उत्पत्ति थती होय तो तेने परिणाम एवुं नाम राखवानुं कारण शुं? किंतु सामग्रीथकी कार्यनी उत्पत्ति थायछे, एवो अंगीकार करवो जोइये. एनो जवाब के, सामग्रीथी कार्यनी उत्पत्ति थायछे एम मानिये तो व्यवहारनय सिद्ध थाय पण निश्चयनय वमी जाय. तेथी एकांतपणुं थाय ते मिथ्यात्व कहेवाय. माटे बन्ने नयनुं मत प्रमाणभूत मानवुं. जो एकलो निश्चय नय अंगीकार करिये ने व्यवहारनय अंगीकार नही करिये तो सामग्री थकी परिणामविशेषनी उत्पत्ति मनाय नही, अने एकज वस्तु कारण तथा अकारण ए बन्ने भावे कहेवाशे. त्यारे

अकारण वस्तुथी परिणामरूप कार्यनी उत्पत्तिनो संभव केम थशे कार्यनी ति तो कारणथी थायछे पण अकारणथी थाय नही, इत्यादिक सूक्ष्म ि थी बन्ने पक्ष अंगीकार करवा योग्य छे एवु सहज जणाई आवशे ॥ ४३ ॥

अन्नतर बन्भाए बलिजावलितणति जइ बुद्धि ॥ णणु कयर अ लत्त वेचित्तंवा विवेसम्म ॥ ४४ ॥ णिप्पत्तीव फलठ अणिवय जोगो फलेण वा सिद्ध ॥ पढमे समसावग्गी वि ति ए वावार वे सम्म ॥ ४५ ॥ नति ए दोण विसमया सज्ज पक्को पुणो अत्थि होति ॥ तेण समावेक्खाए दोण्ह विसमयत्ति वह्रुठिई ॥ ४६ ॥

व्या० – कोई कहे के, कर्मरूप अतरंग हेतु जे छे ते बलवान छे अने उद्यमा दिरूप बाह्यहेतु जे छे, तेनिर्बल छे एम कहेनारा नयवादीने एम पूछवु के, कर्म रूप अतरंग हेतु केवी रीते बलवान छे ? जो कहेशो के एक जातनो उद्यम करनारा पुरुषोने कर्मनी विचित्रताने लीधे सुखदु खनी अधिक न्यूनता दीठेछे, तेथी कर्मरूप अतर हेतुनु बल सिद्ध थायछे तो ते कर्म शाथी थया छे ? एनो विचार करताथी पूर्व नरना उद्यमथी थयांछेएम करशे एथी उद्यमनी विचित्रताने लीधेज कर्मनी विचित्रता छे ॥४४॥नो कहेशो के, सुखनां कारण छता पण अशातावेदनीयकर्मना उदये जीव ने दु ख उपजेछे, ए कर्मनु बलवतपणु जाणवु, अहीं दृष्टांत ए के, जेम कोइक मनुष्य ने दूधना पानथी पण दु ख थायछे. ए वचनपण समर्थ नथी अहीं पण भवांतरना उद्यमनी अपेक्षा छे, केमके, दुग्धपानादिके करी पण पित्तादिकना योग तिक्तरसादि नु उद्योतन थवाथी दु ख ऊपजेछे ॥४५॥ जो कहेशो के, कर्म पोताना नाशने अर्थे बाह्य कारणने निपेछे,ते बन छे तो जन्मांतरनोउद्यम जन्मांतरना फलनाशन अर्थे अतरंगछे कारण कर्मादिक कारण उत्पन्न करेछे एम पण कहेवाई शकायछे ओर देशा के, क्वचित् बाह्यकारणविना कार्यनी उत्पत्ति थायछे, पण अतरंगकारणविना कोइ कार्यनी उत्पत्ति थायनही, ए बलजाणवुतो एम पण मनाय नही कारण साक्षात् अथवा बाह्यकारणथीज कार्यनी उत्पत्ति थायछे, ते विना थाय थाय नही. किंबहुना कालादिक बाह्य कारणविना कोई कार्यनी उत्पत्तिज थती नथी माटे कार्यार्थीनाए बाह्य तथा अतरंग ए बन्नेकारण सरखाज छे ए वचनसिद्ध कहेना वे नयने अनुयोगे प्रमाणमार्ग छे ॥ ४६ ॥

अ० निश्चयनयनु मत कहे छे –

णिछिय उसकदंचिय सव्वं णो परकयं हवइ वछुं ॥
परिणामा बंऊत्ता णयवंऊं दाण हरणाइ ॥ ४६ ॥

व्या०:– निश्चयनयथी सर्व वस्तु आत्मपरिणामथी उत्पन्न थायछे; परंतु परथी परवस्तुनी उत्पत्ति थती नथी केवळ पुण्य पापकर्मना विपाकने अवसरे पासे आवेला जे अंगना सर्पादिक बाह्य अर्थ ते निमित्त मात्र छे. तेने व्यवहारवडे मूढ जीव कारण करी माने छे. व्यवहारवादी कहेछे के. ज्यारे परकारणत्व नथी, त्यारे साधुने दान दीधाथी शुभफळ अने परद्रव्यनुं हरण कर्याथी अशुभ फळ केम थायछे? निश्चयवादी समाधान करे छे के. निर्दोष आहार साधुने देतां ते देनाराना जे शुभ परिणाम होयछे. तेथी शुभफळ थायछे, परंतु अन्नादिक पुद्गलरूप होवाथी, तेथी फळ थतुं नथी. केमके, पुद्गल द्रव्यथकी पुद्गल परिणाम थाय छे; परंतु आत्मपरिणाम नथी थतो. तेमज परद्रव्यनुं हरण कर्याथी जे अशुभ फळ थायछे. ते पण आत्माना अशुभ परिणामे करी थाय छे, परंतु द्रव्यरूप पुद्गल थकी नथी थतुं. ॥ ४६ ॥

अ०:– निश्चय थकी दान पण आत्मपरिणामरूपछे, पुद्गल परिणामरूप नथी एम कहेछे:–

दिंतो वहरंतो वा णय किंचि परस्स देइ अवहरइ ॥
देइ सुहं परिणामं हरइ वत्तं अप्पणोचेव ॥ ४७ ॥

व्या०:– निश्चयथकी तो साधुने निर्दोष आहार देतां तथा परद्रव्यनुं हरण करतां ते दान देनार तथा द्रव्य हरण करनारनेविषे काइ देवुं, तथा लेवुं वस्तुज नथी. कोइ कोइने दान देतो नथी, तथा कोइ कोइनुं द्रव्य हरण करतो नथी. साधुने आहारादिकनुं दान देतां देनारो पोते पोतानेज परानुग्रह बुद्धिरूप शुभपरिणाम दियेछे; तथा परनुं द्रव्य हरण करतां ते हरण करनारो जीव घात बुद्धिए करी पोतेज पोताना शुभ परिणामनुं हरण करेछे. परंतु परनेविषे काइ देवुं लेवुं संभवे नही. ॥ ४७ ॥

णय धम्मादि सुहं वा परस्स देयं णया विहरणिज्जं ॥
कयणासा कयज्ञोग, प्पमुहा दोसा फुमाइ हरा ॥ ४८ ॥

व्या०:– जो परआत्मा परने देतो होय तो पोतानो धर्म तथा पोतानुं सुख बीजाने देवाइ शकाय छे; अने जो परनो आत्मा परनुं हरण करनो होय तो

वीजानो धर्म तथा वीजानु सुख पोते लेवाई शकायछे ए वचनमां अने अकृतागम दोष प्राप्त थायछे, केमके, जो पोतानो धर्म तथा पोतानु वीजाने देवाई शकातु होय तो पोते करेला कृतनो नाश थई गयो कहेवाय. ने लेनारने अकृतनो आगम थयो कहेवाय केमके, तेने नकरेलो धर्म नु फल जे सुख, तेनी प्राप्ति थायछे, तथा करेलो अधर्म तथा तेह थायछे, ते कृतनाश कहेवाय छे तेमज वीजानो धर्म तथा वीजानु सुख की लेवाई शकातु होय तो तेणे करेला कृतनो नाश थई गयो कहेवा" अकृतनो आगम थयो कहेवाय, केमके, पोताने नही करेलो धर्म तथा लनी प्राप्ति थायछे, तथा करेलो अधर्म तथा तेना फलनो नाश थायछे, ते नाश कहेवाय छे ॥ ४९ ॥

जताइ पोग्गलाणवि ण दाण हरणाइ होइ जीवस्स॥
जइ त सचिय हुज्जा तो दिज्जा वा अवहरिज्जा ॥ ५० ॥

व्या० —नरुप्रमुख पुद्गलनु देवु तथा लेवु जीवनेविषे थाय नही, केमके जे वस्तु पोतानी होय तेनु देवु तथा लेवु थायछे, परनी वस्तुनुं लेवु देवु थर्तु नथी. ने परवस्तुनु लेवु देवु तो प्रत्यक्ष करिये छैये ते केम वने? ज्यारे पुद्गल पोतानु आपणु नथी त्यारे लेवु देवु केम कराय छे? ॥ ५० ॥

जोगवसेणुवणीआ इट्ठाणिट्ठा य पोग्गला जेहु ॥
अप्पाणे जीवाउ जीवो अण्णो अतेहिंतो ॥ ५१ ॥

व्या० — नामकर्मना परिणाम जे मन वचन तथा कायना योग छे, तेना वडे पुद्गलनु ग्रहण थायछे, जेम के, सुगंध तथा दुर्गंधनु ग्रहण करतां काय योगना वडेकरी पुद्गलनु ग्रहण थायछे, ते आत्मतत्त्वना ज्ञानयकी जोतां रागद्वेषनु कारण थायछे, पण ते आत्मायकी अन्य छे अने आत्मा तेयकी अन्य छे केमके, पुद्गल ग्रहण गुण छे, अने आत्मा उपयोग गुण छे ॥ ५१ ॥

तम्हाम परिविज्जाणो पोग्गलदव्वमि णत्थि णिच्छयउ॥
जोगाजोगनिमित्तो ववहाराचेव सपसम्म ॥ ५२ ॥

व्या० — माटे निश्चयनयथकी एटलो विशेष छे के, जे आपणने लाग आवे तेमनु स्वसंवेदित विन दोष ते आपणु, ने जे पग्ने लाग आव त परनु नाग्नु॥

पुण्णपयडीण उदये भोगो भोगांतराय विलएणं ॥ ज
इ णिअचित्तेणंचिअ, तो भोगो किण किं विणाणं ॥ ५३॥

व्या०:– सातावेदनीयप्रमुख पुण्यप्रकृतीना उदयथी भोगांतरायकर्मनो विल
य थया पछी पण जो जीवने भोग थता होय तो कृपणने पण भोगनी प्राप्ति थ
वी जोइये, तेम तो नथी थतुं; केमके, कृपणने पण लाभांतरायकर्मना क्षयोप
शमथकी द्रव्यनी प्राप्ति तो थायछे. परंतु भोगांतराय कर्मना वशथी भोगवी शकतो
नथी. माटे जे आपणने भोगवायोग्य होय ते स्वद्रव्य कहेवाय, ने बीजुं बधुं परद्र
व्य छे एम जाणवुं. एवी रीते व्यवहार नयना मते पण एकांत नथी; माटे ए सर्व
पुद्गल द्रव्यने परकरी जाणवुं जोइये. ॥ ५३ ॥

अ० आ सर्व पुद्गल द्रव्य परकीय छे एम जे जाणे नही तेने आत्मस्वभावनी
प्राप्ति न थाय. ते कहे छे.

जो परदव्वमि पुणो करेइ मूढो ममत्त संकप्पो ॥ सो
कह्आय सहायं गिद्धो विसएसु उवलहई ॥ ५४ ॥

व्या०:– व्यवहारमूढ जीव परद्रव्यनी उपर ममत्वसंकल्प करेछे, ते विषय
लोलुप थयो थको आत्मस्वभावने पामतो नथी. केमके, शरीरादिकनेविषे 'हुं मा
ठो छुं, हुं दूबळो छुं, हुं गोरो छुं तथा हुं काळो छुं' इत्यादिक अहंकार जीवने
उत्पन्न थायछे; तथा 'मारुं शरीर, मारुं कुटुंब; इत्यादिक ममकार उत्पन्न थायछे;
तेथी विषयोनेविषे दृढप्रवृत्ति थायछे, अने विषयना अभ्यासे तेओनेविषे दृढ भाव
थायछे, एवी परंपराए करी अज्ञाननी वृद्धि थई गयाथी आत्मज्ञान केम थाय !॥५४॥

णाहं होमि परेसिं ण मे परे णत्थि मज्झमिहंकिंची ॥
इय अप्पभावणाए राग दोसा विलज्जंति ॥ ५५ ॥

व्या०:– हुं बीजा कोईनो संबंधी नथी, तेम मारो कोई बीजो संबंधी नथी, आ
जगतनेविषे मारुं कांई नथी, केमके, परद्रव्यनुं अस्तित्व भिन्न छे; अने मारा आ
त्मद्रव्यनुं अस्तित्व भिन्न छे, शरीर कुटुंबादिक कर्मना योगे संयोग लक्षण भावछे;
तेमा मारुं कांई लागतुं वळगतुं नथी, केमके, तेओनो वियोग पण थायछे, जेनो
कोई काळे संयोग तथा कोई काळे वियोग थतो होय ते पोतानुं द्रव्य कहेवाय नही
जेनो कोई काळे वियोग थाय नही ते पोतानुं द्रव्य कहेवाय छे, एवो तो आत्मस्व

नाव छे, जेनो आत्माथी वियोग थतो नथी, जेम ज्ञान दर्शननादिक, कोई कालें आत्माथी वियोग थतो नथी एवी रीते शास्त्रोक्तमर्यादाए त्मभावना करवाथी राग द्वेषनो नाश थाय छे ॥ ५५ ॥

तो परिणामाउच्चिय बंधो मोक्खो व णिछयणयस्स ॥
णेगंतिया अणच्चं तिया पुणो बाहिरो जोगो ॥ ५६ ॥

व्या० —माटे जीवने बंध अथवामोक्ष निश्चयनयथी आत्मपरिणामथीज छे अज्ञानरूप परिणामथकी बंध थायछे, अने आत्मज्ञानरूप परिणामथी थायछे जेम हिमथकी थएली जे शीतनी वेदना ते अग्निना तापथकी छे, तेम आत्माना अज्ञानथकी थएलो जे कर्मबंध, ते आत्मज्ञानथकी निवृ थछे केमके, एम सिद्धांतोमा पण कह्यु छे के, तपथकी दुर्भीर्ण कर्मनो क्षय ते पण ज्ञानना संयोगथीज फल थायछे केमके, अज्ञानी कोडाकोडी वर्षकरी कर्मनो क्षय करे, ते कर्मनो क्षय ज्ञानी एक उच्छ्वासमा करेछे बाह्य योग पातादिक, तथा क्रियानुष्ठानादिक एकातिक नथी, तेम आत्यंतिक पण नथी मके, बाह्य हिंसाविना मनना क्लिष्ट परिणामे करी, तंडुलमत्स्य, सातमी नरक नेविषे उत्पन्न थायछे अने अप्रमत्त यतिने जयणाए चालता अनाभोगे जीव तथी पण ते प्रत्ययिक कर्मनो बंध थतो नथी तथाविध क्रियानुष्ठानविना पण केवल ज्ञान उत्पन्न थाय छे ने अभव्य जीव यतीने विषे उत्कृष्ट बाह्य क्रिया ले छे तेना बळे ते नवमा ग्रैवेयकसुधी जायछे तो पण शुद्ध परिणामविना समारने पार पामता नथी ॥५६॥

सिद्धी णिछयउच्चिय दोह्न सजोगउ अवेयत्त ॥ क
जइ कहई दोह्नवि उवउगो तुल्लवचेव ॥ ५७ ॥

व्या० — समारपार गमन सिद्धलक्षण निश्चय क्रियाथीज थायछे एमां पण ए टनी विशेषता छे के, घणाने व्यवहारथकीज निश्चय आवेछे अने कोइक जगतं अने पूर्व चारित्राभ्यासेकरी तथा भव्यत्वना परिपाकेकरी सहजे पण थायछे पण कहेवा योग्यपणु ते निश्चय तथा व्यवहार ए बन्नेना सयोग थकीज छे एविषे सिद्धांतमां चार भांगा कह्या छे पहेलो जे रुपु सारु नही ने शार पण सारु नही. तेनी पछे ए भांगो चरकपरिव्राजकप्रमुखनेविषे छे केमके, त

वो शुद्ध परिणाम नथी, तथा छापना जेवो वेष पण नथी. माटे तेओना अर्थ ी सिद्धि थती नथी, ने ते वंदन करवायोग्य पण नथी. बीजो रूपुं खोटुं, होय ो छाप खरी होय ए भांगो. पासत्था. उसन्ना, प्रमुखनेविषे थाय छे; प्रमुख श ब्दकरी दिगंबरादिक पण लेवा. केमके, तेओने रुपाना जेवो शुद्ध परिणाम नथी मात्र छापनी पठे वेष तेवो छे. पण परिणामविना तेओना अर्थनी सिद्धि थती नथी. ष तेवोछे माटे जहांसूधी दोष जाण्या न होय तहांसूधी वंदना करवायोग्यछे, परं दोष जाण्या पछी जो वंदना करिये तो महा दोष लागे. यतः "जह वेलं वगलिं गं, जाणं तस्स णमउ धुवं दोसो; णिद्धंदसत्तिणाऊ, ण वंदमाणे धुवदोसो" इत्या वश्यके. एनो अर्थः— जेम कोइ भांडे यतिनो वेष लीधो होय तेने जाणीने वंदन क रतां निश्चयेकरी दोष लागेछे. तिम निद्धंदस जाणी वेष मात्र जोइने वंदना करतां ध्रुव दोष लागे. त्रीजो रुपुं चोखुं होय पण छाप खरी न होय ए भांगो प्रत्येक बुधने लागु थायछे. केमके, तेओ अन्यलिंगे पण होय तथापि तेओने रुपानी पठे भावचारि त्रतो छे, तेथी पोताना आत्मानो अर्थ तो सिद्ध करेछे, परतु साधुना पथ्यविना वंदन करवा योग्य नथी. चोथो भांगो रुपुं पण चोखुं तथा छाप पण चोखी होय तेनी पठे सर्व शुद्ध जाणवुं. जे महानुभाव आलय विहारादिक सर्व शुद्ध. यतिनी समाचारी पाले, अने विशुद्ध चारित्रवत होय, एने रुपानी पठे शुद्ध परिणाम छे, तेथी आत्मानो अर्थ सिद्ध करेछे, तथा साधुनुं पथ्य छे, माटे वंदवा योग्य तथा पूजवायोग्य पण छे. एवीरीते एवा ठेकाणे शुद्ध परिणामरूप निश्चय बलवंत छे. साधु वेषादिरूप उपचरिता सद्भुत व्यवहार ते निर्बलछे. तथाकोईक ठेकाणे व्यवहार अने निश्चय ए बन्नेनो सरखो उपयोग छे. अहीं ज्ञान अने क्रियानुं उदाहरण लेवुं ज्ञाननयनी रीतिए आम कह्युं छे के, ज्ञानविना क्रियामात्रथी फलनी सिद्धि थती नथी. केमके, मिथ्याज्ञानेकरी सीपनेविषे रूपानी बुद्धि प्रवर्त्ते छे ने तेनी प्राप्ति तो थती नथी माटे मिथ्याज्ञानजन्य जे क्रिया, तेथी फलनी प्राप्ति थती नथी; किंतु सत्यज्ञानजन्यक्रियाथी फलनी प्राप्ति थायछे. परंतु क्रिया तो ज्ञानेकरीनेज थायछे, तेमां मिथ्याज्ञानजन्यक्रि या निष्फल थायछे ने सत्य ज्ञानजन्यक्रिया सफल थायछे, एवीरीते क्रियानुं कारण ज्ञान होवाथी प्रधान छे. अने ज्ञाननुं कार्य क्रिया होवाथी अप्रधान छे, ते मज क्रियानयनी अपेक्षाए एम कह्युंछेः— ज्ञानजन्यक्रियाए करीने संपादन क रेलुं जे फल, ते कोई कारणने लीधे क्षीण थई जाय तो ते पाछुं क्रियाथी प्राप्त थायछे; माटे क्रिया प्रधान छे. अने ज्ञान अप्रधान छे. जुवो के, ज्ञानवान छतां

क्रिया न करे तो ते ज्ञानमात्रथकी फलनी प्राप्ति थती नथी यहां ..
छे – जेम कोई पुरुषने मार्गनुं ज्ञान सारी पठे होय, पण जो चलनी
तो वांछित नगर प्रत्ये पहोची शके नही , जेम कोई पुरुषने नृत्यकलानु
न होय पण जो नृत्य अभिनय क्रिया न करे तो जोनारा लोकनु
शके नही , तथा तेने काई द्रव्यनी प्राप्ति थाय नहीं तथा जेम कोई पुरु
जाणतो होय एटले जलतरणज्ञानवान होय, पण जो हस्तपादचलन
रेतो इछितस्थले न पोहोचता वच्चेज बूडी मरे, एवी रीते ज्ञाननय तथा
नो परस्पर विवाद छे , तेने एककोरे मूकीने मात्र साराशनो विचार जो करी
तो परमार्थदृष्टिए फलसिद्धिने विषे बन्ने समान बलवत छे केमके,
स्थानेविषे केवलज्ञानरूप ज्ञान, तथा संवररूप क्रिया ए बन्ने योगथी मुक्ति
पण ए बन्नेमानुं कोई एक न होय तो मुक्ति थाय नही, ए प्रमाण पक्ष छे ॥

अ० निश्चयनयनी अपेक्षाए कहेछे –

तुल्लत्तमवेक्खाए णियमासमुदाय जोगमहि गिच्च ॥
किरिआ विसस्सए पुण नाणाउ सुए जउ भणिअ ॥५८॥
जम्हा दसण नाण संपुन्नफल न दिंति पत्तेअ ॥ चा
रित्तजुआ दिंतिहु विसस्सए तेण चारित्तं ॥ ५९ ॥

व्या० – यद्यपि कार्य करवानी अपेक्षाए ज्ञान अने क्रिया ए बन्नेनु साम्य
छे , तथापि ज्ञान करता क्रियाने आटली विशेषता छे – ज्यारे शुद्धक्रिया
थाय त्यारे षष्ठादिगुणस्थानके नियमे शुद्धज्ञान होयछे पण ज्यारे शुद्धज्ञान
य, त्यारे शुद्धक्रियानो नियम नथी केमके, चतुर्थगुणस्थानके सम्य
ने रुगे शुद्ध ज्ञान तो होयछे, परतु अविरति होवाने लीधे शुद्धक्रिया
नथी तथि आवश्यक निर्युक्तिमा कह्युछे के, जेमाटे दर्शन तथा ज्ञान ए
के संपूर्ण फल दई शकता नथी, पण ज्यारे चारित्रनेविषे एकठा मलेला
संपूर्ण फल दियेछे तेमाटे दर्शन तथा ज्ञान करता चारित्रश्रेष्ठ छे ॥ ५८।५९॥

एव ववहाराउ बलवतो णिच्छउ भणेयव्वो ॥ एग
मय ववहारो सव्वमय णिच्छउ वत्ति ॥ ६० ॥

व्या० – एवी रीते व्यवहारथकी निश्चयनु बल अधिक कह्यु तथा वाली
रनु निश्चयनी विशेषता छे – जे एकनयनु मत ते व्यवहार, अने सर्वनयनु

निश्चय कहिये, यथा जूतपदार्थनुं जे कथन ते निश्चयनय कहेवाय ठे, ने ए जूता
नय पण कहेवायठे, निश्चयनयनो विषय जाव जे ठे ते सर्व समान ठे. यतः
सव्वणया जावमिछंति " इति विशेषावश्यके. ॥ ६० ॥

अ० एवुंनिश्चयनयनुंमत सांजलीने सिंहावलोकनन्यायें व्यवहारवादी बोले ठे.—

अहिआ जइ तुह किरिआ अहिआ नाणं वि तस्स हेउत्ति ॥
कारणगुणाणुरूवा कज्जगुणाणेव विवरीआ ॥ ६१ ॥

व्या०:— पूर्व कहेली रीतिए ज्यारे तुं क्रियाने अधिक माने ठे, त्यारे ज्ञानने पण
अधिक मानवुं जोयेठे. केमके, ज्ञान क्रियानुं कारण ठे. कारणना गुण जेवाज का
र्यना गुण होयठे, तेथी विपरीत होता नथी. जेमाटे ज्ञान क्रियानुं कारण ठे, तेमाटे
तेना गुणे करीने क्रियाने कार्य पणानी प्रधानता ठे, तेथी ज्ञान अत्यंत प्रधान ठे, जो
कहेशोके, मोक्षरूप कार्य क्रियाथकी थायठे. माटे क्रिया अधिक ठे ; तो तेम पण
संजवे नही. केमके, ज्यारे क्रिया ज्ञाननुं कार्य ठे. त्यारे क्रियानुं कार्य जे मोक्ष,
तेपण परंपराए ज्ञाननुंज कार्य जाणवुं. यतः " दासेण मे खरो कीउ, दासोवि मे
खरोवि मे." एटले मारा दासे खर वेचातो लीधो, ते दास पण मारो अने खर
पण मारो ठे ; एम सिद्धांतोक्तन्यायथी जाणी लेवुं. ॥ ६१ ॥

अह जह सव्व णयमयं वं णिछिउ इगमयं च ववहारो ॥
सोसा सयलादेसा विगलादेसा कहं होकं ॥ ६२ ॥

व्या० पूर्वे कह्या प्रमाणे निश्चयनय जे ठे ते सर्व नयनुं मत ठे, जो एम होय
तो ते सर्व जांगानुं ग्रहण करनार सकलादेश प्रमाणरूप मानवो जोइशे. त्यारे ते
नयरूप विकलादेश केम मानशो ? ॥ ६२ ॥

अ० एवीरीते व्यवहार तथा निश्चय ए बन्नेनय परस्पर वाद करता जोइने
मध्यस्थपणे प्रमाणवादी कहेने.—

मुस्कामुस्कविजागो इछामित्तेण णत्थि एगंतो ॥ जइ
अत्थि तो विनाणे चरणं सारोत्ति तं मुस्कं ॥ ६३ ॥

व्या० व्यवहार तथा निश्चय एबन्ने नयोना मुख्य तथा अमुख्य ए बे विजाग पोतपो
तानी इछाए थइ शकेने, कोइक गुणने लइने निश्चयनी मुख्यता कहेवायठे, अने
कोइक गुणने लइने व्यवहारनी मुख्यता कहेवायने. परन्तु एओनेविषे एकांतपणुं नंन

ते नही; किंतु अनेकांतपणुं सनवेडे. केम के, निश्चय तथा व्यवहारना मुख्य विभाग सत्वाविकपमेरूप नथी, किंतु आपेक्षिक डे जेम वदरनी अपेक्षाए दीर्घ कहेवाय, अने घटादिकनी अपेक्षाए ह्रस्व तेम ए बन्ने नयो एक बीजानी अपेक्षाए मुख्य तथा अमुख्य कहेवाय. तो पण जो व्यवहारनयवादी पोताना मतनु मुख्यपणु प्रकाशवाने तो तेणे वली आ युक्तियेकरीने पोताना मतनु समाधान करी के व्यवहारनु जे मुख्यपणु डे ते मात्र कहेवानुं डे, अने निश्चयनुं मुख्य कार्यनो उपयोगी डे, केम के, सामायक आदिदईने चौद पूर्वपर्यंत ज्ञाननु ते चारित्र कह्यु डे, यत "सामाइअमाईअं, सुअनाण जाव बिंदुसाराउ, रि सारो चरण, स्सारो चरणस्स निव्वाण" इति आवश्यके ॥ ६३ ॥

सव्वणयमयत्तं पुण सव्वेसिं सम्मउ जउ विसउ ॥
णयणिच्छयस्स तेण सयल दिसत्त मेगस्स ॥ ६४ ॥

व्या० निश्चयनयने सर्वनयमय पणु जे पूर्वे कह्यु ते सर्वनय सम्मत मानेले तेमाटे कह्यु एम जाणवाथी एकला निश्चयनयने प्रमाणात्मक सकल देशपणुं पण दोषनु करनार थशे नही ॥ ६४ ॥

जेण सयला देसो अन्नेय वित्तीइ णिच्छयाधीणो ॥
तेणेर मोपमाण ण पमाण होइ ववहारो ॥ ६५ ॥

व्या० जिहां एक धर्मनी धाराए सर्व धर्म जे सकलादेशनेविषे प्रतिपादन डे, जिहां अस्तित्वादिक एक धर्मनी साथे बीजा सकल धर्मानु अभेदपणु जे ते निश्चयनयने आयत डे, एवी अपेक्षाएकरी निश्चयनयने प्रमाण कह्यो व्यवहारनयने अप्रमाण कह्यो डे, परतु एकांत निश्चयनय प्रमाण कह्या नथी

जम णुरयारोवि चल कासइ णेगतिअ हवे तपि ॥
स्स मुक्खावे णियमा अरवायारोवि ॥ ६६ ॥

व्या० कोई एम कहेले के निश्चयनय परमार्थग्राहीडे तमा कांई ... दी होवाथी ते बलवान, अने व्यवहार नय परमार्थग्राही नथी ... हावाथी ते निर्बलडे, एवाण एकांत नथी, केमके, व्यवहारनय ... व्यवहारनय अग्राही डे, तेमां ज्यारे निश्चयनयनी मुख्यता विवक्षि...

नय पण उपचारसहित थायछे, इहां कोई विशेषता नथी, यतः "अर्पितानर्पितसिद्धे तत्वार्थे" शब्देकरी नयनी प्रधानतानी जे विवक्षा करवी ते अर्पित कहिये, अने नयांतरनी अपेक्षाए तेनी अप्रधानतानी जे विवक्षा करवी ते अनर्पित कहिये, एबन्ने प्रकारनी विवक्षाथी जे पदार्थनी सिद्धि थायछे, ते तत्वार्थसिद्धि कहेवायछे. ॥ ६६ ॥

णिछयणयस्स विसयं भावंचिय जे पमाण माहंसु ॥
तेसिं विणेव हेउं कज्जुप्पत्तीइ कामेरा ॥ ६७ ॥

व्या०: कोईक आम मानेछे के, निश्चयनयनो विषय जे भाव छे तेज प्रमाण छे, तो ते भावनो हेतु द्रव्य छे, द्रव्यविना भावनी उत्पत्ति थाय नही जो द्रव्यविना भावनी उत्पत्ति अंगीकार करीये तो मर्यादा रहे नही. अने कारणविना कार्यनी उत्पत्ति थती नथी एवो नियम छे तेनो भंग थशे! जो एम कहेशो के, द्रव्यक्रिया संसारमां अनंतवार प्राप्त थएली छे, माटे ते अप्रधान छे; तो भाव पण अप्रशस्त अनंतवार प्राप्त थएलो छे ते केम प्रधान कहेवाय ? जो कहेशो के, शुद्ध भाव अपूर्व छे, तो शुद्ध द्रव्य पण अपूर्वज छे, ते शासारुं नही मानवुं जोये ! ॥६७॥

खाउवसमिगभावे सुश्रो हेऊ सुहस्स खइअस्स ॥ त
ब्भावेण कया पुण किरिआ तब्भाववुड्ढि करी ॥ ६८ ॥

व्या०: क्षायोपशमिक भावे कीधेली जे क्रिया तेज क्षायोपशमिक भावनीवृद्धि करनारी छे; माटे शुद्धभावथी क्रिया अवश्य करवी योग्य छे; अने तेम न करवाथी भावनी हाणी थई जाय. ॥ ६८ ॥

धिइ सद्धा सुह विविइस विण्णत्ती तत्त धम्म जोणित्ती॥
तव्भवधम्मभावा वड्ढइ भावतत्तणं तत्तो ॥ ६९ ॥
एवं पवड्ढभावो कमेण गुणठाणसिड्ढिमारुहिय ॥
पक्खीणघाइकम्मो कयकिच्चो केवली होइ ॥ ७० ॥

व्या०: धृति, श्रद्धा, शुश्रूषा, विविदिषा, तथा विज्ञप्ति ए पांच पदार्थो धर्मनां कारण छे, एविषे पतंजलिप्रमुख ग्रंथोमां पण कहेलुं छे, उद्वेगादिनो त्याग करीने चित्त स्वस्थ करवुं ते धृति कहिये, चित्त स्वस्थ थयाथी मार्गानुसारिणी रुचि उत्पन्न थाय छे ते श्रद्धा कहिये; मार्गानुसारिणी बुद्धि थयाथी क्षायोपशम भाव

ने नही, किंतु अनेकांतपणुं सचवेछे केम के, निश्चय तथा व्यवहारना मुख्य विभाग सत्तात्विकधर्मरूप नथी, किंतु आपेक्षिक छे जेम बदरनी अपेक्षाए दीर्घ कहेवाय, अने घटादिकनी अपेक्षाए ह्रस्व तेम ए बन्ने नयो एक बीजानी अपेक्षाए मुख्य तथा अमुख्य कहेवाय छे तो पण जो व्यवहारनयवादी पोताना मतनु मुख्यपणु प्रकाशवानु चाहे तो तेणे वली आ युक्तियेकरीने पोताना मननु समाधान करी लेवु के व्यवहारनु जे मुख्यपणु छे ते मात्र कहेवानु छे, अने निश्चयनुं मुख्यपणु कार्यनो उपयोगी छे, केम के, सामायक आदिदईने चौद पूर्वपर्यंत ज्ञाननुं ते चारित्र कह्यु छे, यत "सामाइअमाईअं, सुअनाण जाव बिंदुसाराउ, रि सारो चरण, स्सारो चरणस्स निव्वाण" इति आवश्यके ॥ ६३ ॥

सव्वणयमयत्त पुण सव्वेसिं सम्मउ जउ विसउ ॥
णयणिच्छयस्स तेण सयल दिसत्त मेगस्स ॥ ६४ ॥

व्या० निश्चयनयने सर्वनयमय पणुं जे पूर्वे कह्यु ते सर्वनय सम्मत छे मानेछे तेमाटे कह्यु एम जाणवाथी एकला निश्चयनयने सर्वन प्रमाणात्मक सकल देशपणु पण दोषनु करनार थशे नही ॥ ६४ ॥

जेण सयला देसो अन्नेय वित्तीइ णिच्छयाधीणो ॥
तेणेव सोपमाण ण पमाणं होइ ववहारो ॥ ६५ ॥

व्या० निश्चे एक धर्मनी धाराए सर्व धर्म जे सकलादेशनेविषे प्रतिपादन करा छे, निश्चे अनित्यादिक एक धर्मनी साथे बीजा सकल धर्मोनु अभेदपणु जे कर्यु ते निश्चयनयने आधीन छे, एवी अपेक्षाएकरी निश्चयनयने प्रमाण कहाछे, अने व्यवहारनयने अप्रमाण कह्योछे, परतु एकांत निश्चयनय प्रमाण कह्या नथी ॥६५॥

जम णुनयारोवि चल कासइ णेगतिअं हवे तपि ॥ एग
न्त मुक्खजाने णियमा अवरोवयारोत्ति ॥ ६६ ॥

व्या० कोई एम कहेछे के निश्चयनय परमार्थग्राहीछे तेमां कोई उपचार नो दोषथी ते बनतानथी, अने व्यवहार नय परमार्थग्राही नथी, तेमां उपचार होवाथी ते निर्बलछे, एवण एकांत नथी, केमके, व्यनय वस्तु व्यवहारनय अनमाही छे, तेमां ज्यारे निश्चयनयनी मुख्यता विवक्षित थायछे

र्थनय पण उपचारसहित थायछे, इहां कोई विशेषता नथी, यतः "अर्पि तानर्पितसिद्धे तत्वार्थे" शब्देकरी नयनी प्रधानतानी जे विवक्षा करवी ते अर्पित कहिये, अने नयांतरनी अपेक्षाए तेनी अप्रधानतानी जे विवक्षा करवी ते अन र्पित कहिये, एवन्ने प्रकारनी विवक्षाथी जे पदार्थनी सिद्धि थायछे, ते तत्वार्थ सिद्धि कहेवायछे. ॥ ६६ ॥

णिछयणयस्स विसयं नावंचिय जे पमाण माहंसु ॥
तेसिं विणेव हेउं कज्जुप्पत्तीइ कामेरा ॥ ६७ ॥

व्या०: कोईक आम मानेछे के, निश्चयनयनो विषय जे नाव छे तेज प्रमाण छे, तो ते नावनो हेतु इव्य छे, इव्यविना नावनी उत्पत्ति थाय नही जो इव्यवि ना नावनी उत्पत्ति अंगीकार करीये तो मर्यादा रहे नही. अने कारणविना का र्यनी उत्पत्ति थती नथी एवो नियम छे तेनो नंग थशे! जो एम कहेशो के, इव्य क्रिया संसारमां अनंतवार प्राप्त थएली छे, माटे ते अप्रधान छे; तो नाव पण अ प्रशस्त अनंतवार प्राप्त थएलो छे ते केम प्रधान कहेवाय? जो कहेशो के, शुद्ध नाव अपूर्व छे, तो शुद्ध इव्य पण अपूर्वज छे, ते शासारुं नही मानवुं जोये! ॥६७॥

खाउवसमिगनावे सुद्धो हेक सुहस्स खइअस्स ॥ त
प्नावेण कया पुण किरिआ तप्नाववुड्ढि करी ॥ ६८ ॥

व्या०: क्षायोपशमिक नावे कीधेली जे क्रिया तेज क्षायोपशमिक नावनीवृ द्धि करनारी छे; माटे शुद्धनावथी क्रिया अवश्य करवी योग्य छे; अने तेम न करवाथी नावनी हाणी थई जाय. ॥ ६८ ॥

धिइ सद्धा सुह विविइस विणत्ती तत्त धम्म जोणित्ती॥
तब्लद्धधम्मनावा वड्ढइ नावतत्तणं तत्तो ॥ ६९ ॥
एवं पवड्ढनावो कमेण गुणठाणसिद्धिमारुहिय ॥
परकीणघाइकम्मो कयकिच्चो केवली होइ ॥ ७० ॥

व्या०: धृति, श्रद्धा, शुश्रूषा, विविदिषा, तथा विज्ञप्ति ए पांच पदार्थो धर्मनां कारण छे, एविषे पतंजलिप्रमुख ग्रंथोमां पण कहेलुं छे, उद्वेगादिनो त्याग क रीने चित्त स्वस्थ करवुं ते धृति कहिये, चित्त स्वस्थ थयाथी मार्गानुसारिणी रुचि उत्पन्न थाय छे ते श्रद्धा कहिये; मार्गानुसारिणी बुद्धि थयाथी क्षायोपशम नाव

वे नही, किंतु अनेकांतपणु संभवेछे. केम के, निश्चय तथा
अमुख्य विभाग स्वभाविकधर्मरूप नथी, किंतु आपेक्षिक छे तेम
बदरनी अपेक्षाए दीर्घ कहेवाय, अने घटादिकनी अपेक्षाए ह्रस्व
तेम ए बन्ने नयो एक बीजानी अपेक्षाए मुख्य तथा अमुख्य कहेवाय.
छतां पण जो व्यवहारनयवादी पोताना मतनुं मुख्यपणु प्रकाशवानु
चाले तो तेणे वली आ युक्तियेकरीने पोताना मतनु समाधान करी
के व्यवहारनु जे मुख्यपणु छे ते मात्र कहेवानुं छे, अने निश्चयनुं
कार्यनो उपयोगी छे, केम के, सामायक आदिदईने चौद पूर्वपर्यंत ज्ञाननु
ते चारित्र कह्यु छे, यत "सामाइअमाईअं, सुअनाण जाव बिंदुसाराउ,
वि सारो चरण, स्सारो चरणस्स निव्वाण" इति आवश्यके ॥ ६३ ॥

सवणयमयत्त पुण सव्वेसिं सम्मउ जउ विसउ ॥
णयणिछयस्स तेण सयल दिसत्त मेगस्स ॥ ६४ ॥

व्या० निश्चयनयने सर्वनयमय पणु जे पूर्वे कह्यु ते सर्वनय सम्मत
थी मानेछे तेमाटे कह्यु एम जाण्याथी एकला निश्चयनयने
प्रमाणात्मक सकल देशपणु पण दोषनु करनार थशे नही ॥ ६४ ॥

जेण सयला देसो अन्नेय वित्तीइ णिछयाधीणो ॥
तेणेव सोपमाण ण पमाण होइ ववहारो ॥ ६५ ॥

व्या० जिहां एक धर्मनी धाराए सर्व धर्म जे सकलादेशनेविषे प्रतिपादन करा
छे, तिहां अस्तित्वादिक एक धर्मनी साथे बीजा सकल धर्मोनु अभेद
ते निश्चयनयने आयत छे, एनी अपेक्षाएकरी निश्चयनयने प्रमाण
व्यवहारनयने अप्रमाण कह्योछे, परतु एकांत निश्चयनय प्रमाण कह्यो नथी ॥ ६५ ॥

जम णुवयारोवि चल कासइ णेगतिअ हवे तपि ॥ एग
स्स मुक्कभावे णियमा अवरोवयारोत्ति ॥ ६६ ॥

व्या० कोई एम कहेछे के निश्चयनय परमार्थग्राहीछे तेमां कोई उपचार
ही होवाथी ते बलवानछे, अने व्यवहार नय परमार्थग्राही नथी, तेमां
उपचार होवाथी ते निर्बलछे, एपण एकांत नथी, केमके, बन्नेनय वस्तुग्राही
व्यवहारनय अशग्राही छे, तेमा ज्यारे निश्चयनयनी मुख्यता विवक्षिए

नय पण उपचारसहित थायछे, इहां कोई विशेषता नथी, यतः "अर्पि तानर्पितसिद्धे तत्वार्थे" शब्देकरी नयनी प्रधानतानी जे विवक्षा करवी ते अर्पित कहिये, अने नयांतरनी अपेक्षाए तेनी अप्रधानतानी जे विवक्षा करवी ते अन र्पित कहिये, एवन्ने प्रकारनी विवक्षाथी जे पदार्थनी सिद्धि थायछे, ते तत्वार्थ सिद्धि कहेवायछे. ॥ ६६ ॥

णिछयणयस्स विसयं भावंचिय जे पमाण माहंसु ॥
तेसिं विणेव हेउं कज्जुप्पत्तीइ कामेरा ॥ ६७ ॥

व्या०: कोईक आम मानेछे के, निश्चयनयनो विषय जे भाव छे तेज प्रमाण छे, तो ते भावनो हेतु द्रव्य छे, द्रव्यविना भावनी उत्पत्ति थाय नही जो द्रव्यवि ना भावनी उत्पत्ति अंगीकार करीये तो मर्यादा रहे नही. अने कारणविना का र्यनी उत्पत्ति थती नथी एवो नियम छे तेनो भंग थशे! जो एम कहेशो के, द्रव्य क्रिया संसारमां अनंतवार प्राप्त थएली छे, माटे ते अप्रधान छे; तो भाव पण अ शस्त अनंतवार प्राप्त थएलो छे ते केम प्रधान कहेवाय? जो कहेशो के, शुद्ध भाव अपूर्व छे, तो शुद्ध द्रव्य पण अपूर्वज छे, ते शासारुं नही मानवुं जोये। ॥६७॥

खाउवसमिगभावे सुधो देक सुद्दस्स खइअस्स ॥ त
प्भावेण कया पुण किरिआ तप्भाववुड्ढि करी ॥ ६८ ॥

व्या०: क्षायोपशमिक भावे कीधेली जे क्रिया तेज क्षायोपशमिक भावनीवृ द्धि करनारी छे; माटे शुद्धभावथी क्रिया अवश्य करवी योग्य छे; अने तेम न करवाथी भावनी हाणी थई जाय. ॥ ६८ ॥

धिइ सद्धा सुह विविइस्स विण्णत्ती तत्त धम्म जोणित्ती॥
तल्लद्धधम्मभावा वड्ढइ भावतत्तणं तनो ॥ ६९ ॥
एवं पवड्ढभावो कमेण गुणठाणसिद्धिमारुहिय ॥
पक्खीणघाइकम्मो कयकिच्चो केवली होइ ॥ ७० ॥

व्या०: धृति, श्रद्धा, शुश्रूषा, विविदिषा, तथा विज्ञप्ति ए पांच पदार्थ धर्मनां कारण छे, एविषे पतंजलिप्रमुख ग्रंथोमां पण कहेलुं छे. उद्वेगादिनो त्याग क रीने चित्त स्वस्थ करवुं ते धृति कहिये, चित्त स्वस्थ थयाथी मार्गानुसारिणी बुद्धि उत्पन्न थाय छे ते श्रद्धा कहिये; मार्गानुसारिणी बुद्धि थयाथी तत्वांतरनां भाव

उत्पन्न थायछे, त्यारे जेम सर्प बाहेर आमो तिडो चाले पण ज्यारे
सेछे त्यारे पांसरो थई जायछे तेम श्रवणादिकनेविषे बुद्धिनी जे सरला थवी ते
पा कहिये, श्रवणादिक करवाथी जेम जेम बुद्धि शुद्ध थती जायछे,
त्मतत्वचिंतननी उत्पत्ति थती जायछे ते विविदिषा कहिये,
की शुश्रूषा जे छे ते श्रवणादिगुणरूप थायछे, तेविना ते आनासमात्र कहेवाय,
पण गुण कहेवाय नही, आत्मतत्वचिंतन वडे श्रवणादिक गुण उत्पन्न
कनी उत्पत्ति थायछे, ते सम्यक्तना पांच लिंग शम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा,
आस्तिक्यता, एवो आत्मानो जे शुभ परिणाम तेने परमतनेविषे
त्माना शुभपरिणामथी धर्मनो भाव उत्पन्न थायछे, तेणेकरी
द्धि थायछे, एम उत्तरोत्तर, भाववृद्धिकरी अविरति देशविरत्यादिक
णीचढी घातीकर्मनो क्षयकरी कृतकृत्य केवलीथाय एनो सारी रीते
जुवो एटले सहज जणाईआवेछे ॥ ६ए॥ ७० ॥

अ० एवु युक्तिपूर्वक वचन सांभलीने पीडितकर्ण थयो थको परवादी

नणु जय सो कयकिच्चो अठारसदोसविरहिउ देवो ॥
ता बुहतह्ला भावा जुज्जइ कम्मा कवलनोजी ॥ ७१ ॥

व्या० देव तो अढारदोषरहित छे, अने कृतकृत्य छे, ए सर्व मान्यछे
तमे पण जो एमज मानता होतो तेने कवलाहार करनारो केम कहोछो?
लाहार अंगीकार करवाथी क्षुधा तृषा पण अंगीकार करवा जोईशे केम के
क्षुधा तृषाविना कवलाहार संभवे नही जो क्षुधा तृषाने पण अंगीकार करशो
तो परमेश्वरने अढारदोषरहित केम कही शकशो? केम के, क्षुधा अने तृषा ए
बे दोष तो कवलाहारना ग्रहणथी सिद्ध थायछे त्यारे शु केवली सोनतरारहित
छे, जो एम मानशो तो आगमवचननो अपमान थशे यत "क्षुत्पिपासा जरातंक
जन्मातकनयस्मया ॥ न रागद्वेषमोहाश्च, यस्याप्त स प्रकीर्त्यते" इति दिगंबर
यांतरगत उपासकाध्ययने क्षुधा, तृषा, जरा, क्षय, जन्म, यम, इहलोकादिनय, अ
हंकार, राग, द्वेष, मोह, चिंता, अरति, निद्रा, विस्मय, विषाद, स्वेद, तथा खेद,
ए अढार दोष केवलीने नथी एम कह्युछे तेओमाना क्षुधा तथा तृषा ए बे हा
वता कृतकृत्यता केम संभवे? माटे केवलीने जो कवलाहारी कहो तो बे हा
अंगीकार करो ॥ ७१ ॥

प्र० ए आशंकानो उत्तर कहे छे:--
तो सक्कावुत्तु जे छुहतहाइ जिणस्स किरदोसो ॥ जइ
तं दूसेज गुणं साहावियमप्पणो किं वि ॥ ७२ ॥
दूसइ अवाबाहं इय जइ तुह सम्मउ तयं दोसो ॥
मणुयत्त णं वि दोसो ता सिद्धत्तस्स दूसणउ ॥ ७३ ॥

व्या०: क्षुधा अने तृषा ए बे दोष अढार दोषमां गणीने, कृतकृत्य जे केवली तेनेविषे ते बे दोषनो तें जे अभाव कह्यो; ते वचन ताराज मतानुयायिमां कहेता शोभाप्रद छे; परंतु पंडितोनी पर्षदामां शोभाने पामे नही, किंतु मूल्यविना ना कहेवाय. केमके, क्षुधा अने तृषा ए बन्ने दोषमां त्यारे गणी शकाय. के ज्यारे कोई स्वाभाविकआत्माना गुणने दूषण लागतुं होय; तेम तो कांई थतुं नथी, केमके, ए भाव वेदनीयकर्मना करेला छे; ते केवलज्ञानने दूषित करी न शके. केमके, केवलज्ञानने दूषण करनार ज्ञानावरणीय कर्म छे. तेम केवलदर्शनने दूषित करनारुं दर्शनावरणीय कर्म छे; तेम सम्यक्तचारित्रने दूषित करी शके नही केमके, सम्यक्तचारित्रने दूषित करनारुं मोहनीयकर्म छे. तेमज दानादिक पांच लब्धिने पण दूषित करी शके नही; केमके, लब्धिओने दूषित करनारुं अंतराय कर्म छे. ए कारण माटे क्षुधा अने तृषा ए बे दोष कहेवाय नही अहिं कोई आशंका करशे के जेम क्षुधा तथा तृषावडे छद्मस्थने ईर्या समिति श्रुताभ्यासादिकनो भंग दीठामां आवेछे; तेम केवलीने पण चारित्रज्ञानमां प्रतिबंधरूप शारू न थाय? एनो उत्तर आ छे: यद्यपि क्षुधा तथा तृषा ए बे बहिरिंद्रियत्तिनी ग्लानि करवाने लीधे एकेंद्रिय ज्ञानादिकना विरोधी थायछे. तथापि अतींद्रिय ज्ञाननो घात करी शकतां नथी, कोई एवी आशंका करे के, जीवनो अव्याबाध गुण छे. एटले निराकुलत्वरूप जे जीव, तेने दूषित करनारी क्षुधा तथा तृषा छे. केमके, ते आकुलता परिणामरूप छे. जे आकुलतानी क्षुधावडे निवृत्ति थायछे, तेक्षुधानी परिणामक छे. ने क्षुधा तेनो परिणाम छे; अने जे आकुलतानी तृषावडे निवृत्ति थायछे, ते तृषानो परिणामक छे. ने तृषा तेनो परिणाम छे. तेने एम कहेवुं के, केवलीनो सिद्धत्व गुण छे, तेने दूषित करनारुं मनुष्यपणुं पण दोषरूप केम न कहेवाय? इत्यादिक विचार करी पोतानी कल्पना मूकीने घातिकर्मना करेला अढार दोष जेवी रीते पूर्वाचार्ये कह्याछे, तेवी रीतेज मानवा

जोइयेठे, यत "अंतराया दानलाज, वीर्यनोगोपनोगगा ॥ हासारत्यरती गुप्सा शोक एव च ॥ १ ॥ कामोमिथ्यात्वमज्ञान, निद्रा चाविरतिस्तथा पश्च नो दोपा, केपामष्टादशाप्यमी ॥ २ ॥" ज्ञानगुणनो घात करनारु दर्शनगुणनो घात करनारी निद्रा, सम्यक्तगुणनो घात करनारुं मिथ्यात्व, त्रगुणनो घात करनारां हास्य, रति, अरति, नय शोक, डुगंठा, काम, राग, तथा द्वेष, अने दानादि लब्धिरूपवीर्यगुणना घात करनारा ‹ लाजांतराय, नोगांतराय, उपनोगांतराय, तथा वीर्यांतराय, ‹ कर्मना कह्याठे, परंतु केवलीने घातीकर्मोनो क्षय थई जायठे, माटे ते हेवायठे तेम ठतां क्षुधा अने तृषाने अढारदोषोमां जे गणेठे ते ‹ चार नकरतां केवल स्वमतनु पोषण करेठे, ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

अह जइ जिणस्स खइअ सुक्ख डुक्ख विरुज्झए तेण॥
तो सामणाजावे विसेसजुत्ता कहं सत्ता ॥ ७४ ॥

व्या० – कोई आशंका करे के, जेम केवलीने क्षायिक ज्ञानादिक ठे, यिक सुख पण ठे, तिहां डुखनो लेश पण नथी, तो क्षुधा तृषा केम लागेठे

तो वेयणिज्जकम्म उदयप्पत्त कह हवे तस्स ॥ एय
सोपदेसउदउ समयम्मि विवाग जणणाउ ॥ ७५ ॥

व्या० – उपली आशंकानु उत्तर दियेठे के, केवलीने जो क्षायक सुख ता होतो सिद्धांतनेविषे केवलीने वेदनीयकर्मनो उदय कह्योठे, ते शातान नवो ' अर्थात् मानवो जोईशे जेम ज्ञानावरणीयकर्मना उदय ठतां क्षायि ज्ञान थतु नथी, तेम वेदनीयकर्मनो उदय ठतां क्षायिक सुख पण थतु न कोई शंका करेके, केवलीने एवा वेदनीयकर्मनो उदय होयठे के, जेना प्र आत्मप्रदेशनी साथे मलेठे, ते स्थिति प्रमाणे रहीने क्षीण थई जायठे प ‹ वलीने तेनी आकुलता थती नथी एवु उत्तर एके, यद्यपि एवा प्रदेशोदय ने पण मान्य ठे, तो केवलीने क्षायिक सुख संजवे नही तेम ठता अनुजव थ। ... कहेलु, मीयेठे के, केवलीने वेदनीयकर्मनो प्रदेशोदय ठेन नही उ सिद्धांतोमां विपाकोदय कह्योठे ॥ ७५ ॥

आवस्सयणिज्जु ... सत्ती पयडिपसजोदउवएसेण ॥ ण
जइ ता सुहाया ... ॥ न असुहपडिवक्खवयणेण ॥ ७६ ॥

व्या०:– आवश्यक निर्युक्तिनेविषे प्रकृतिनो प्रशस्त उदय कह्यो छे, तथा दिगं
ना प्रवचनसारनामक ग्रंथमां पण " पुसफला अरिहंता " इत्यादिक वचनो
रांछे, एवी रीते असुखना प्रतिपक्ष वचनथी केवलीने सुखनो विपाक छे. ॥७६॥
अ० कोई आशंका करे के, जे कारण माटे सुखविपाक छे, तेथीज दुःखवि
क नथी? तेनुं समाधान करेछे. ॥ ७६ ॥

तत्तवसुत्तन्नणिआ एकारसहा परीसहा य जिणे ॥ तेह
वि खुहतएहाइ खइअस्स सुहस्स पडिकूलं ॥ ७७ ॥

व्या०:– अमारा श्रीनगवतीसूत्रनेविषे केवलीने अग्यार परीसह कह्याछे.
तथा " एकविहबंधगस्सणं नंते सजोगि नवछ केवलिस्स कइ परीसहा पस्र
? गोयमा, एकारस परीसहा पसुत्ता, एव पुणवेण तित्ते " तथा वेढुने " ए
दश जिने " एवीरीते श्रीतत्वार्थसूत्रमां अग्यार परीसह कह्याछे; एणेकरी के
ीने क्षुधा तथातृषा प्राप्त थईछतां क्षायिक सुखनी हानि थती नथी एवुं ठरेछे
हीं उक्त " एकादशजिने " ए सूत्रनो अर्थ केटलाएक पोतानुं मत पोषण कर
ना हेतुथी एवुं करेछे के " एकेनाधिकानदश " एटले एकअधिक दश न थाय;
र्थात् अग्यार परीसह नही. ए अपव्याख्यान जाणवुं, केमके, एवो समास सं
ा नही. वली केटलाएक सर्वार्थसिद्धिप्रमुख "नसंति" एवुं वाहेरथी वाक्य
येछे. तेतो जाणे पोतानुं उत्सूत्रनापणज प्रगट करतो होयनी! परंतु तेओए
वो विचार करवो जोये के, परीसहनास्वामी चिंताना अधिकारनेविषे प्रसिद्ध छतां
ो अनाव केम थशे! जे धनरहित होय ते धननो स्वामी कहेवाय नही. वली
टलाएक आवीरीते व्याख्यान करेछे के, केवलीने वेदनीयकर्म होवाथी कारण
र्योपचारेकरीने अग्यार परीसह कह्याछे ए व्याख्यान पण नदीमां बूडतां घास
आश्रय लेवाजेवुं छे, केमके, स्वामित्वचिंताए उपचार संनवे नही, जो उप
र मानिये तो छता मोहनीयकर्मना होवाथी उपशांत मोहगुणस्थानकनेविषे
ण वावीस परीसह कह्या जोईशे, ए प्रकारे करी सूत्रनां घणां अपव्याख्यानो
त्याग करीने परमार्थनो विचार करवो जोये. ॥ ७७ ॥

अस्साय वेयणिज्जं खुहतएहाईण कारणं जाण ॥ पक्ख
त्तिसत्तिजुदय जलिअंतरजलणदित्ताणं ॥ ७८ ॥

व्या०:– आहार पर्याप्तिनामकर्म तथा असाता वेदनीयकर्म ए बन्नेना उदय

थी प्रज्वलित थएलो जे जठराग्नि, तेणे करीने जीवने क्षुधा तथा तृषा लागेछे, ते बधां कारण केवलीनेविषे छतां छे तेने क्षुधा तथा तृषा केम न लागे? तेकहो ॥७७॥

अ० वादी आशंका करेछेः—

णणु छुद तह्रा तह्रा मोहुब्भ पत्तियारिरंसव ॥
णणइ अण्णा तह्रा अण्हुक्क तयह्रुति ॥ ७९ ॥

व्या० — क्षुधा तथा तृषा ए मैथुननी इच्छानी पठे तृष्णारूप होवाथी ते मोहनीयकर्मथकी उत्पन्न थायछे. माटे केवलीनेविषे ए संभवे नहीं केमके, केवली तो मोहनीयकर्मनो प्रथमज नाश कर्योछे एनो उत्तर आवीरीते छे — तृष्णा अने दुःखमां घणी भिन्नता छे, तृष्णानेज दुःख कहेवाय नहीं परंतु संसारी तृष्णाथकी दुःखनी उत्पत्ति थायछे ॥ ७९ ॥

अ० तृष्णा उत्पन्न थवानो प्रकार कहेछे —

मोहाभिणिवेसेण चउहि वि उमकोठयाइ हेऊहि ॥
पगरिस पत्तातह्रा जायइ आहारसण्णत्ति ॥ ८० ॥

व्या० — मोहनीय कर्म अभिनिवेशे चार कारणथी आहारसंज्ञा उत्पन्न थयेछे ते उत्कर्ष पाम्याने दीधे तृष्णा कहेवायछे ते चार प्रकार श्रीठाणांगमां छाछे, यत "चउहि ठाणेहि आहारसण्णा समुप्पज्जइ, उमकोठयाए, छुहावेदणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं, मतीए, तदठोवउगेणं," एनो अर्थ — चार कारणे आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे कोठेखाली थयाथी, क्षुधावेदनीयकर्मना उदयथी आहारादिकनी कथानुं श्रवण कर्याथी, तथा वारंवार आहारनो उपयोग कर्याथी आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे. अर्थात् ए चार कारण मल्याथी मोहनीय कर्मना थने आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे. अतएव गोमठ सारटीकाप्रमुखने विषे पण आहारसंज्ञा आहाराभिलाषरूप कहीछे. होवाथी यतिने विना अशनपानादिकनेविषे प्रवृत्ति छे — [illegible]

असणाइम्मि पवित्ती [illegible] त। [illegible] ॥ एज
हुत्त णिहणिहाणो [illegible] उहि [illegible]

व्या० ए हेतुथीज यतिने पण [illegible]
केम थे, निर्ग्रंथ पाळनारा यतिने [illegible] नथी;

चारमां छे. माटे जे एम कहेछे के आहारसंज्ञाविना यतीए आहार करवो नही तेने आचारमां पण अतिचार कह्या छे. ॥ ७१ ॥

एयं विणा णमुत्ती मेहुणसण्णं विणा जह अबंभं ॥ इ
य वयणं पि परेसिं एएण पराकयं णेअं ॥ ७२ ॥

व्या० जेम मैथुनसंज्ञाविना अब्रह्मचर्य न थाय, तेम आहारसंज्ञाविना केव लीने भुक्ति थाय नही. एवा परवादीना वचननुं आवीरीते निराकरण कर्युं छे.— जेम यतिए आहारसंज्ञाविना आहार करवो उचित छे, तेम केवलीनेविषे पण मानी लेवुं जोईये. ॥ ७२ ॥

णहु साहु चिय पवित्ती णेवय सुपसत्थझाणहेउत्ति ॥ आ
हारोव्व अबंभं असुह तुह होइ णिद्दोसं ॥ ७३ ॥

व्या० आहार अवर्जनीय होवाथी उचित छे, तथा छद्मस्थ यतीने प्रशस्त ध्याननुं कारण छे. माटे आहारसंज्ञाविना केवलीने आहार लेवो संभवे छे. अने मैथुन वर्जनीय होवाथी अनुचित छे; तथा दुर्ध्याननुं कारण छे. माटे मैथुना दिक अनुचितप्रवृत्ति अप्रशस्त रागद्वेषविना केवलीने थाय नही. एवा अर्थनो विचार करीने तेनुं ग्रहण करवुं जोये. ॥ ७३ ॥

आहारचिंतणुब्भव मेयं आहारसण्णमासज्ज ॥
वुड्डइ अट्टज्झाणं इणा लोभेण मूढाणं ॥ ७४ ॥

व्या० आहारना चिंतनथकी जे आहारसंज्ञा उत्पन्न थायछे, तेनेविषे मोहित थएला मूढजीवने जो ते आहाररूपइष्टवस्तुनी प्राप्ति न थाय तो ते वस्तु क्यारे प्राप्त थशे एवा चिंतनरूप आर्त्तध्यान करेछे. परन्तु ते अभिलाषा मटती नथी. ७४

तत्तो माणसदुक्खं लहइ जिउ कंदणाइ कुणंतो ॥
लहुं वि इट्ठविसयं रइइ चिंतेइ अवियोगं ॥ ७५ ॥

व्या० त्यार पछी पूर्वोक्त रीतिए जो तेने आहारादिक इष्टवस्तुनी प्राप्ति न थाय तो ते जीव क्षुद्वेदनीयना उदयथी प्रज्वलित थएला जठरानलना योगे श रीरदुःख पामेछे. अने पछी क्रंदन रोदनादिक करवाथी अरतिमोहनीयकर्मना उदयने लीधे गाढ चिंतोपतापरूप मानसदुःख पामेछे. कदाच पुण्यप्रकृतिना परिपाके इष्टवस्तुनी प्राप्ति थाय तो पण रतिमोहनीयकर्मना उदयथी ते वस्तु

ना अप्रियोगनी इच्छा कर्याकरे, तेणे करी ते वस्तु उपर गाढानुरागेकरी [illegible] ध्यानना वश थयो थको जीव दुःखज पामे छे, माटे मोहमूढ जे जीव छे [illegible] परमार्थथकी कदी पण सुख नथी ॥ ८५ ॥

तो मोहणिज्जखयउ तप्पवडुक्खाणुबंधि विलएण ॥
जइ सुहं सव्वहू चएणो पुण छुह चइउं ॥ ८६ ॥

व्या० — मोहनीयकर्मना क्षयथी जीवने आहार करवानी रति तथा [illegible] उत्पन्न थायछे, ते मोहनीयकर्मना उदयथी जीवने मानस दुःख उत्पन्न थायछे, ते दुःख केवलीने मटी जायछे; पण असातावेदनीयकर्मना उदयथी केवलीने जे क्षुधा तृषा लागेछे, तेनो ते त्याग करी शके नही ॥ ८६ ॥

घाइ वेयणीअं इय जइ मोह विणा ण डुक्खयर ॥
पयडं पडिरूवाउ ता अण्णाउ विपयडीउ ॥ ८७ ॥

व्या० — पूर्वपक्षी कहेछे के, वेदनीयकर्म घाती कर्मना जेवुंछे, माटे मोहनीय कर्मविना ते दुःखदायक थाय नही. वळी "घाईव वेयणीयं, मोहस्स बलेण घाइए जीवं," इति कर्मग्रंथे तेनु समाधान आमछे — जो तमारा कह्या प्रमाणे [illegible] असातावेदनीयनी पेठे केवलीने बीजी प्रकृतिओ पण मोहनीय कर्मने [illegible] पोताना कार्यनी करनारी होवी जोये. अने तमे वेदनीयकर्मनीसाथे घातीकर्मनी तुलना करीनिने कहोछो ? घातीआना रसना जेवो तेनो रस होयछे एम [illegible] [illegible] के [illegible] करवानेविषे घातीआनी अपेक्षापण कहाता, [illegible] [illegible] केवलज्ञान कहोछो, ? जो कहेशोके घातीआना रसना जेवो रस होवे [illegible] अघातीकर्म प्रकृति घातीना जेवी होवी जाये केमके, ज्यारे अघाती [illegible] घातिनी प्रकृतिनी साथे वेदेछे त्यारे ते सर्व घातिनीप्रकृतिना [illegible] [illegible] त्यारे तेम घातिनीनो विपाक देखाडे, अने [illegible] वेदय त्यारे [illegible] [illegible] विपाक देखाडेछे; माटे पक्ष गळवतो नथी. [illegible] [illegible] करवानेविषे घातीआनी अपेक्षा होवी जोयेछे, तो नामकर्म [illegible] [illegible] अपेक्षा करतु नथी. जेम केवलीने मोहविना [illegible] [illegible]; तेम वेदनीय कर्म पण मोहनीयकर्मनी अपेक्षाविना थाय [illegible] [illegible] पक्ष पण संभवे नही. जो कहेशो के वेदनीयकर्मथी दाह लागे, [illegible]

पण मनाय नही, केमके, क्षुधा अने तृषानेविषे दोषपणानुं पूर्वेज खंडन कर्युं छे; एवीरीते सबुद्धिएकरी सारी पठे विचार करीने जुवो. ॥ ८७ ॥

अणुकूलं पडिकूलं च वेयणं लक्कणं सुहदुहाणं ॥ ण
हु एसो एगंतो अपमत्तजईसु तयन्नावा ॥ ८८ ॥

व्या०: औदयिक सुख छतां अनुकूलत्व वेदन थायछे, ते रागरूप छे अने औदयिक दुःख छतां प्रतिकूलत्व वेदन थायछे, ते द्वेषरूप छे; माटे केवलीने औदयिक सुख तथा दुःख ए बन्ने होतां नथी; किंतु क्षायिक सुखज होयछे. एम केटलाएक कहेछे, ते योग्य नथी. केम के, जेम अप्रमत्तयतीने औदयिक सुख तथा दुःख ए बन्ने होयछे. पण राग तथा द्वेष ए बे होता नथी; तेम केवलीने विषे पण जाणी लेवुं. एमां एकांतपणुं न मानवुं. ॥ ८८ ॥

अधुवाण सुहदुहाणं नोगो नोगेण कम्मबंधो य ॥
णहु एसो एगंतो अपमत्तजईसु तयन्नावा ॥ ८ए ॥

व्या०: सुख तथा दुःख ए बन्ने पदार्थ शाश्वत नथी, किंतु अशाश्वत छे. ते थोनो एवो नियम छे के, अवश्य नोगने दियेछे. कह्युंछे के, "नाभुक्तं क्षीयते कर्म" इत्यादि. अने नोगथकी कर्मबंध थायछे. ए कारण माटे केवलीनेविषे ते संनवे नही. केमके, सुख तथा दुःख ए बन्ने पदार्थो अध्रुव छे. एम केटलाएक कहेछे, ते पण योग्य नथी. केमके, सुख तथा दुःख अध्रुव छतां अप्रमत्तयतीने होयछे; तो पण तेनाथी कर्मबंध थतो नथी; तेम केवलीविषे पण जाणवुं जोइये. अहीं पण एकांत नथी. ॥ ८ए ॥

अन्नाणजं तु दुक्कं नाणावरणक्कएण खयमेइ ॥
तत्तो सुहमकलंकिय केवलनाणा पुहन्नूयं ॥ ए० ॥

व्या०:— ज्यारे हरेक पदार्थनो सूक्ष्म अर्थ जाणवामां आवतो नथी, त्यारे जीवने महादुःख उत्पन्न थायछे. केमके, यथार्थवस्तु जाणवानी इछा प्रमाणे जाणवामां न आवे तो तेथी जीवने आकूलता थायछे. तेज दुःख जाणवुं. ए दुःख वस्तुनो सूक्ष्म अर्थ न जाणवायकी थायछे, माटे अज्ञानरूपज छे. अ ज्ञान ज्ञानावरणीयकर्मना क्षयथी नाश थाय छे, ते दुःखनोज नाश जाणवो. केवलीने ज्ञानावरणीयकर्मनो क्षय थई जवाथी दुःखरूप अज्ञाननो लेश पण

रह्यो नथी अने केवल ज्ञाननो उदय थयोछे ते सर्व सुखरूप छे ते सुख ज्ञानथकी पृथक्भूत नथी केमके, केवल ज्ञान जे छे ते सकावना तिघातरहित होवाथी अनाकूलतारूप छे, त्या आकुलता छेज नहीं, कुलता नथी त्यारे तज्जन्य जे दुःख ते क्याथी होय! अने दुःख नथी सुखज छे एवी रीते "जं केवलित्तिनाणं, त सोक्ख परण सचसोचेव॥ नणीदो, जम्हाघादीखय जादा" ए प्रवचनसारना वचन असनगित छे आटलो विशेष छे -- केवल ज्ञान क्षायिकसुखप्रक्रिया सनने नहीं, केमके क सुख तो वेदनीयकर्मनाक्षयथकीज उत्पन्न थायछे ॥ ८० ॥

णय सुक्ख दुक्ख वा देहगय इंदियप्पवं सव्व ॥ अ
न्नाण मोह कज्जे पमाणसिद्धेण सकोए ॥ ८१ ॥

व्या० दिगंबर एम कहेछे —के शरीरगत सुख दुःख सर्वइंद्रियथकी थाय छे केम के, छद्मस्थने-जे सुख तथा दुःख उत्पन्न थायछे ते एवी रीते यछे प्रथम परोक्षज्ञानना कारणथी इंद्रियोनी उपर मैत्री प्रवर्ते छे, मैत्री थकी विषयोनेविषे तृष्णा उत्पन्न थायछे जेम अग्निथी तापेलो लोढाना गोळा होयछे, तेम विषयोनी तृष्णाएकरी इंद्रियो तप्त होयछे ते महाव्याधि छे अने तृष्णा टाळवाने अर्थे विषयनु सेवन थायछे, ते व्याधीना छे ते यद्यपि व्यवहार दृष्टिए तो सुख कहेवायछे, तथापि परमार्थताए दुःखरूप छे उक्तंच "पप्पाइट्ठे विसए, फासेहि समास देस हावेण; परिणममाणोअप्प सयमेव सुह णयदिदेहोत्ति" इति प्रवचनसारे ए कारण माटे देहगत सुख इंद्रिय छे तेमज दुःखपण ऐंद्रियक छे एवा ऐंद्रियक विषयोना द्वेषथी दुःख उपजेछे. माटे देहगत सुख तथा दुःख केवलीनेविषे नथी तेथीज केवली अतींद्रिय थया छे उक्तंच "सोक्खवा पुण दुक्ख, केवलनाणिस्स नत्थि देहगय, जम्हा अदिंदियत्त, जाद तम्हा दुनंणेयत्ति" इति प्रवचनसारे एनु समाधान करेछे -केवली सर्व सुख तथा दुःख इंद्रियाधीन नथी केम के, इंद्रियोनी पराधीनताथी ने अज्ञान तथा मोहथकी सुख तथा दुःख उत्पन्न थायछे, तेथीनेज इंद्रियानी अपेक्षा परन्तु अप्रमत्तयतिने जे मानस सुख थायछे, तथा साताविकर्मना उदयथी व्याधि दोष उत्पन्न थायछे, तेमा इंद्रियोनी अपेक्षानो नियम नथी, जो एम मानिये के इंद्रियाधीनज सुख तथा दुःख मानीये तो रतिमोहनीयकर्म तथा अरति

ोहनीयकर्मनुं नामांतरज वेदनीयकर्मना उदयथी असाता वेदनीय कर्म थाय छे म ठरशे. त्यारे वेदनीयकर्म जुदु कहेवाशे नही. जो वेदनीयकर्म मोहनीयसाथे ानीये तो सातज कर्म ठरशे. आठ कर्मनो संभव थशे नही एम करतां सर्व जैन रुतिनो उच्छेद थशे. वली देहगत सुख जो केवलीने न मानीये तो तीर्थंकरनाम र्मनो विपाक केम संभवे! जो एम कहिये के तीर्थंकरनामकर्म जीव विपाकी छे, ाटे तेथी जीवगत सुखतो उपजेछे. परंतु देहगत क्षुधादिक दुःख संभवे नही. ो जेम सुखने पण देहनी अपेक्षा छे, तेम दुःखने पण देहनी अपेक्षा छे, माटे देहग ाज मानवा योग्यछे, इत्यादिक सूक्ष्मविचार करी मध्यस्थबुद्धिये न्याय करो. ॥९१॥

एत्तोच्चिअ बहु दुःख, खएण तेसि दुहाइवेयणियं ॥
णिंवरस लवुव पए अप्पंति भणंति समय विऊ ॥ ९२ ॥

व्या० केवलीने अज्ञानादि जघन्य घणां दुःख मटीगयां छे, मात्र एक क्षुधावे दनीय रह्यु छे. ते पण घातीकर्मनी साथे मलेला जेवो पोतानो विपाक देखाडे छे केम के, केवलीने पुण्यप्रकृतिनो विपाक प्रबल छे. यतः "अस्सायमाइआओ, जाविअ असुहा हवंति पयडीउ; णिंबुरस णिंबुव्वपणु ण हुंति ता असुह यात स्स." ए आवश्यकगाथामां तीर्थकरने असाता प्रकृति दुःखदायिनी थती नथी. जेम दूधना घडामां निंबना रसनो बिंदु नाखवाथी कटुता थाय नही, एम श्रीभद्र बाहु स्वामीए कह्यु छे, जेम तेने प्रबल पुण्यपराभव करेछे. परंतु तेथी क्षुधादिक उप जे नही एम न जाणवुं, एवो भाव जणायछे. पछी विशेषार्थी तो बहुश्रुत जाणे.॥९२॥

णय तं कवलाजोग्गं वेयणियं अगणिमंदयाभावा ॥
णय दड्ढरज्जुकप्पं वेअणिअं हंदि मुअमिद्धं ॥ ९३ ॥

व्या०:- केवलीनुं वेदनीयकर्म कवलाहार योग्य थाय नही एम न कहेवुं. केमके. केवलीने अग्निमंदपणुं नथी आहारपर्याप्तनामकर्मनो उदय अने वे दनीयकर्मनो उदय होवाने लीधे उदराग्नि प्रज्वलित थायछे. ए बन्ने कारणो वा वाथी केवलीने वेदनीय कर्म कवलाहारयोग्य थायछे. जो कोई कहेशे के, वेदनी य कर्म दोरडीना जेवुं छे, तेथी केवलीने ब्याबाध करीशके नही तेने आवो ज वाब देवो के, ए वचन प्रयोपनुं छे, शास्त्रनुं नथी. केमके, श्रीसुयगडांगनी टीकामां आम कह्युं छे के, "यद्यपि दग्धरज्जुस्थानसंभवमुच्यते वेदनीयस्य तदप्यना

गमिकमयुक्तिसंगतं वागमेह्यल्पतोदय सातस्य केवलिन्यनिर्धीयते
तिकर्मक्षयादज्ञानादयस्तस्या अनूवन् वेदनीयोद्भवाया क्षुध ।५।१
वति न तपोच्छायातपयोरिव सहानवस्थानलक्षणो विरोधो ।१।
रिव परस्परपरिहारेण लक्षणकश्चिद्विरोधोस्तीति ।।।।।।
वर्त्तमानतया यथा सातोदय एवमसातोदयोपीति अनंतवीर्यत्व सत्यपि
लापचयकृद्वेदनीयोद्भवा पीडा च नवत्येव नचाहारग्रहणे किंचित्क्षति
यज्ञ महोपुरुषिकामात्रमेवेति पचाशीतिर्जरद्वस्त्रप्राया उपात्सर्वांग
एवु जे गुणस्थानक्रमारोहमा कह्युंछे, ते तो थोडी स्थितिनी अपेक्षाए
णवु, पण रसनी अपेक्षाए न जाणवु केमके, सत्तानी प्रकृति तो
कहीछे, पण उदयनी प्रकृति एवी कही नथी उलटो तीर्थंकरनामप्रमुख
घज उदयज कह्योछे एम जाणीने "अतएव दग्धरज्जुकल्पेन
रि गता केवलिनोपि न मुक्तिमासादयेयु " ए आवश्यकवृहद्वृत्तिनुं वचन छे,
जोईने पण व्यामोह करवो नही तेटला माटेज इहां पण स्थितिनो
केवलीने कर्म दोरडीना जेवां कह्यांछे "अतएव नवोपग्राहित्वात्पग्राहित्वादिरित्याय
कह्यांछे एवु अमने प्रतिभासेछे वली विशेष गीतार्थनेविषे जेम पूर्वापरविरोध
थाय, तेम विचारवु केटला एक प्रमेयकमलमार्त्तंडना अभिप्रायने अनुसरी
आवीरीते कहेछे के, अपूर्वकरणगुणठाणाए पापप्रकृतिना रस कर्यो, ते
टे केवलीने तथाविध सातोदय थाय नही मोहसापेक्षप्रकृति थाय तेनो नाश
ना घातथी अवश्य घात थायछे अन्यथा पराघातनामकर्मना उदयथी केवली
पाहननादिक केम न करे ! ए बोलवु पण कुराग्रहवुं जाणवु, केमके, जेम रसनो
घात थायछे, तेम स्थितिनो पण घात थायछे माटे जो रस आवो थतो होय तो
स्थिति पण ओछी थई जोये जेम बध्यमानकर्मनी स्थिति घटी जायछे तेम
बध्यमान कर्मनो रस पण घटी जायछे, एज समाधानछे तथा पराघातनामकर्म
तु फल केवलीने थायजछे, अने परहनन तो मोहविना थाय नही कर्म
एम कहेछे के वेदनीय कर्म केवलीनेविषे दग्धवीर्य छे, माटे तेनविषे इत्यादि
मद छापाकर छे एम जे केवलीनेविषे कहेछे तेणे श्वेतांबरनी प्रक्रिया जाणी नथी
म जाणवुं केटलाएक कहेछे के, केवलीनेविषे उदीरणाविना प्रचुर पुद्गल थाय
नही. माटे असातावेदनीयोदय वली दोरडीना जेवोज छे एवोनवुं पण थाय
क्य छ. केमके, एवीरीते तो सातावेदनीयोदय पण मद होवा जाय.

मतनो विचार करतां वास्तविक अर्थ सहज देखाई आवशे. माटे सूक्ष्म दृष्टिवडे ते अर्थनुं शोधन करो. ॥ ९३ ॥

णय केवलनाणाई छुहाईपडिबंधगं जिणंदस्स ॥
दाहस्सिव मंताई इय जुत्तं तंतजुत्तीए ॥ ९४ ॥

व्या०:— जेम दाहना प्रतिबंधक मंत्रादिक छे, तेम क्षुधादिकनुं प्रतिबंधक केवलज्ञान छे. ए वचन पण शास्त्रानुसार नथी केमके, जेम हाथनेविषे मंत्रेलो अग्नि राख्यो छतां हाथ बलतो नथी एवुं प्रत्यक्ष दीगमां आवेछे, तेथीज मंत्रादिक जे छे ते दाहना प्रतिबंधक छे, एवी कल्पना करायछे, तेम जो केवलीनेविषे वेदनीयादिक कर्मोदयरूप कारण छतां क्षुधादिक उत्पन्न थतां नथी एम जो सम्मतशास्त्रमां कह्युं होय तो एवी कल्पना थई शके; तेविना बोलवुं व्यर्थ छे; माटे शास्त्रनी युक्तिए जिमपूर्वे कह्यु छे तेम आदरवुं योग्य छे. ॥ ९४ ॥

खिज्जइ बलं छुहाए णय तं जुज्जइ अणंतविरिआणं ॥
इय जुत्तं पिण सुत्तं बलविरियाणं जउ भेउ ॥ ९५ ॥

व्या०·— केवलीने जो भूख लागती होय तो बलनी हाणी थाय. ते तो तेनेविषे संभवे नही केमके, वीर्यांतरायकर्मना क्षयने लीधे केवली अनंतवीर्यवंत छे. ए वचन पण अयोग्य छे. केमके, बल अने वीर्यमां भेद छे. शरीरनो जे पराक्रम ते बल कहेवायछे, अने अंतरग जे शक्तिविशेष ते वीर्य कहेवायछे. तेम छतां क्षुधाएकरी शरीरनुं बल घटेछे, एविषे अमे ना कहेता नथी ए योगप्रत्यय छे; योग जे छे ते शरीरनामकर्मपरिणतिविशेषरूप छे. अने नामकर्म तो भगवंतनेविषे क्षीण थयुं नथी. ॥ ९५ ॥ अ० पूर्वपक्षी आशंका करेछेः—

बंधो परपरिणामा सो पुण नाणा ण वीयमोहाणं ॥ जो
गकया पिहु किरिया तो तेसि होइ णिव्वीआ ॥ ९६ ॥

व्या०:— ग्रहण तथा मोचनादिक परपरिणामथी जीवने कर्मबंध थायछे. ते परिणाम वीतरागने ज्ञानना प्रतापे थाय नही. उक्तंच " गेह्णदि णेव ण मुंचदि, ण परं परिणमदि केवली भगवं; पेछदि समंतदोसो, जाणदि सव्वं निरवसेसं " इति प्रवचनसारे. केवलीने तो योगनी क्रिया पण नथी, त्यारे भोजननी शी कथा अर्थात् केवलीनेविषे भोजन पण संभवे नही जो भोजनक्रिया केवलीनेविषे मा

निये तो तेथी योगक्रिया सिद्ध थशे ते तो केवलीनेविषे सनवे नही स्थाननिषद्या, विहार, तथा धर्मोपदेशादिकक्रिया पण केवलीने थती त्यारे नोजनक्रिया ते केम थाय ! जो कहेशो के, स्थाननिषद्या, विहार, धर्मोपदेशादिकक्रिया केवलीने प्रत्यक्ष विद्यमान ठता ना केम कहेवाय ! क्रिया यद्यपि ठे, तथापि प्रयत्नपूर्वक नथी केमके, प्रयत्न रागद्वेष थी तेतो केवलीनेविषे नथी, माटे ए क्रिया स्वनावसिद्ध ठे जेम वादला समयविशेषे स्वनावेज संचार करेठे, रहेठे, गर्जना करेठे, तथा वर्षा तेम केवलीने पण स्थाननिषद्या, विहार तथा धर्मोपदेशादिक स्वनावेन उक्तंच "गणणिसेज्ज विहारो, धम्मुवदेसो अणियदिणा तेसिं, ... ले, मायाचारोव्व इछीण" इति प्रवचनसारे अतएव केवलीने जे या ठे, तेनेविषे मोह नही होवाने लीधे परद्रव्य परिणामना विरहथी जाणवी. यत "पुणफला अरिहंता, तेसिं किरिया पुणोहि ओंदयिगी, विरहिया, तम्हा साखाइ गतिमदत्ति" ॥ ए६ ॥

अ० एवी पूर्वपक्षीनी आगकानु उत्तर आपेठे –

जोग विणावि किरिआ उवज्जइ कह ण तस्सोवि ॥
तुल्ल किरिवेचित्त तह तुल्ल. मवुद्धिपुवत्त ॥ ए७ ॥

व्या० – केवलीनेविषे स्थाननिषद्यादिक्रिया जो स्वनावेज थती होय तो ... निश्चैव थाय एम तो काइ दीवामा आवतु नथी प्रयत्न सार्थकज ... केमके, प्रयत्नविना चेष्टा प्रतीज नथी माटे केवलीनेविषे प्रयत्ननो ... मात्र स्वानाविक्तानोज उपयोग करवो नही जो कहेशो के, केवलीनेविषे प्र... अन्य चेष्टा नथी किंतु तेथी विलक्षण ठे अर्थात् केवलीनी चेष्टा प्रयत्न... ... तो जेम चेष्टा विलक्षण ठे, तेमज प्रयत्न पण शासारू विलक्षण न ... ... चेष्टा मोहविना थायठे, तेम विलक्षण प्रयत्न पण ... कहेशो के, केवलीनी चेष्टा मन पूर्वक नथी, ता त ... ... एम शास्त्रारू न मानो एवीरीते सर्व ठकाणे ...
... ॥

... जत्ता जेणि तेसिं वयजोगो ॥
कम्मखवणाय ॥ ए८ ॥

व्या०:—पूर्वे कहेला हेतुए करीज दिगंबरो कहेछे के, केवलीने राग नथी होतो तेथी तेनेविषे वचनव्यापार संभवे नही. तेम छतां जे वचनव्यापार थायछे ते स्वभावेज मस्तकमांथी ध्वनि नीकले छे एम जाणवो, पण अक्षररूप वाणी संभवे नही. ए शंका पण अयुक्त छे. केमके, केवलीने केवलस्थनी पूर्वे जेवीरीते वचन योग हतो, तेमज केवलज्ञान थया पछी पण जाणवो. अने केवलीने रागविना रण क्रियानुं सामर्थ्य छतां अक्षररूप वाणी केम न संभवे? कोई आशंका करेके, केवली कृतकृत्य छे. त्यारे ते उपदेश शासारू करेछे? तेनुं समाधान ए के तीर्थंक रनामकर्मनो विपाक एवीरीतेज भोगवायछे. तेथीज केवली उपदेश करेछे. ए केवलीनो स्वभावज छे. जो कहेशो के, केवली पदेकरी एकांते कृतकृत्यछे? तो तेम पण न समजवुं. यतः एगंतेण कयछो; जेणे दिन्नं जिणंदणामंसे, तदवंझ फलं तस्स य खवणो वाउ असवेजउ; इति विशेषावश्यके. जो कहेशो के, परोप कार[illegible] [illegible]विना उपदेश देवो संभवे नही, अने इछा तेज राग कहेवायछे. अने रागत[illegible] [illegible]विषे संभवे नही. एवो व्यामोह पण न करवो. केमके एवी इछा ते रूप[illegible] प्रय[illegible]ण तेने राग न समजवुं. ॥ ए८ ॥

गाथा[illegible]

[illegible]गं खेअस्सोदीरणं जिणंदस्स ॥ इह
[illegible]हेऊ णय वा असुपयमीणं ॥ एए ॥

व्या[illegible] [illegible]गोलवाना प्रयत्नेकरी जीवने खेद थयानी उ दीरणा[illegible] [illegible]के, मनुष्यना आउखामां साताअसाता वे दनीयक[illegible] [illegible]होयछे; प्रमादविना बीजां कारणो छतां उदी[illegible] [illegible]अने बीजां कारणोथी उदीरणा थाय छे एम क[illegible]; ता काययोगनेविषे सातावेदनीयनी उदीरणा, पण तेने केम थाय? केमके, उदीरणानुं तो आवुं लक्षण कह्युंछे.— जे स्थितिना दलिक, उदयावलिका थी बाहेर वर्त्तेछे, तेने कषायसहित योगनामना वीर्यकरी आकर्षण करीने ते उदयावलिकानेविषे जे प्रक्षेपन करवुं, ते उदीरणा कहेवायछे. ॥ एए ॥

णय तं विरिअविरहियं जायइ अपवत्तणाअ करणंति ॥
केवलसहावपक्कं सुगयस्स मयमणुमयं जाण ॥ १०० ॥

व्या०— जो कहेशो के ते उदीरणा वीर्यविना थायछे, तो ते संभवे नही. केमके, उदीरणा जेछे ते अपवर्त्तनानी परीकरण विशेषछे. एटले स्थानांतर कराववा

नुं कारण छे, अने कारण जेछे ते प्रयत्नरूप छे, एम नमानतां जो केवल वाद मानिये तो बोध्धनु मत अनुमत थाय, माटे प्रयत्न पण अंगीकार

खेदं णाईरिज्जइ केवलजोगेहिं तो विणु पमाय ॥ उद्
दयदेउपभवो दीसइ पुण सो वि तत्तुल्लो ॥ १०१ ॥

व्या० – केवली योग प्रमादविना खेद उदीरतो नथी, परंतु उदयना हां उदीरणासरखा दीसमा आवेछे, तेथी खेद जेछे ते उदीरितना पण परमार्थताए ते उदीरणा कहेवाय नही ॥ १०१ ॥

भुत्तीइ सुहुपत्ती त पुण जोगाउदीरिय हुज्जा ॥ एसा
परजुत्तिलया एएण पकपिआ णेआ ॥ १०२ ॥

व्या० – भुक्ति कहेतां जे कवलाहारछे तेणेकरी केवलीने जे सुख उत्पन्न थाय, ते योगथी उदीयु, अने केवलीने तो योगनी उदीरणा संभवे नही तेने वेदनीयनी उदीरणा होती नथी माटे केवलीने कवलाहार संभवे नही. यी जे परयुक्तिरूप वेली ते आवीरीते कपाई गईछे के प्रमादविना उदीरणा पण नही एम निश्चये जाणवु ॥ १०२ ॥

णय दुप्पणिहाण पिहु, केवलजोगाण होइ भुत्तीए ॥
त रागदोसकय, ते पुण तेसिं विलीणत्ति ॥ १०३ ॥
इय मतमाइ फासग, कोडिन्नाईण कवलजोईए ॥ णेवय
दुप्पणिहाण, सुप्पणिहाणस्स माहप्पा ॥ १०४ ॥

व्या० – आहारेकरी केवलीना योगने दुःप्रणिधान थाय नही केमके, दुःप्रणिधान ते रागद्वेषवडे थायछे ते रागद्वेष तो केवलीनेविषे नथी अने सातमे गुणठाणे चढेला जे कोडिन्नादिमहर्षि, तेओने आहार करतां पण दुःप्रणिधान थयो नथी तो केवलिने आहार करतां तेओने आत्मलीनताना माहात्म्यथी दुःप्रणिधान थतो नथी. किंतु अप्रमादने रहेछे सातमा गुणठाणानेविषे [illegible] थतो नथी पण पूर्वे आरंभेला व्यापारनी निष्ठा थायछे [illegible] [illegible] थतो नथी पण छठे गुणठाणे बांधवा मांडयु [illegible] [illegible], ते बांधवा थकां पण सातमे गुणठाणे थवायछे [illegible]

ना अभिप्रायेज "इत्येतस्मिन् गुणस्थानानि संत्यावश्यानि षट्" एवुं गुणस्थान क्रमारोहनेविषे कह्युंछे. ते संभवितछे. ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

हेऊ पमत्तयाए आहारकहव णेव आहारो ॥ होज्ज
जइ एऽआरो असद्दती एव तेणावि ॥ १०५ ॥

व्या०.– आहारनी कथा करतां साधु प्रमत्त थायछे. त्यारे आहार करतां केम प्रमत्त न थाय? एवुं प्रभावे कहेछे ते अयुक्त जाणवुं. केमके, आहारकथा प्रमादनुं कारण नथी. तेम छतां जो बन्ने सरखा कहिये तो जेम आहारकथा करतां अतिचार थायछे. तेम आहार करतां पण यतीने अतिचार थवो जोये॥ १०५॥

णिद्दाविण एण हेउ भुत्ती सहयारमेत्त ओत्तीए ॥ जेण
सुए णिद्दिछा पयडी सा दंसणावरणी ॥ १०६ ॥

व्या०:– जो केवली आहार करतो होय तो तेने निद्रा होवी जोइये. एम जे कहेछे ते पण अप्रमाण जाणवुं. केमके, निद्रानुं कारण आहार नथी. आहार तो मात्र निद्रानो सहचारी छे. सिद्धांतोनेविषे निद्राने दर्शनावरणीयकर्मनी प्रकृति कहीछे. केमके, आहार करतां पण केवलीने दर्शनावरणीयकर्मनो अभाव छे. माटे केवलीने निद्रा होती नथी. ॥ १०६ ॥

णय तस्स थोवयाए जेण अणुसा तउ तउ डुगो ॥
णिद्दव डुहयाजं णिद्दाई पसंगउ तस्स ॥ १०७ ॥

व्या०:– शास्त्रोमां कह्युं छे के थोडो आहार करवो, माटे आहार दुष्ट छे, एम कहेवुं पण अयोग्य छे; केमके, घणो आहार कखाथी दर्शनावरणीयकर्मना विपाकनो उदय थायछे. एटला माटे घणो आहार करवो दुष्ट कह्योछे. पण स्वभावे आहार दुष्ट नथी. ॥ १०७ ॥

आहारो ण पमाउ भन्नइ अववाऽजत्तिकाऊणं ॥
अववाया वोलीणा वीयभयाणं जिणाण जउ ॥ १०८ ॥

व्या०.– आहार अपवादमार्गने प्रतिबंध करनारो होवाथी प्रमादरूप छे, एम नकहेवुं. केमके, वीतभय तीर्थंकरने कोई अपवाद नथी. अपवाद तो जे उत्सर्गमार्गे करी शके नही, अने चारित्रना त्यागथी बीहे, तेने छे. जिनने तो ते नहोय. ए केवल पोतानी कल्पना नथी, केमके, धर्मबिंदुनेविषे निरपेक्षयतिधर्मना अधिकारे अपवादत्यागसूत्र कह्युछे, ए गीतार्थे यथा सूत्र विचारवो ॥ १०८॥

पत्त ममत्तहेऊ जुत्तं वोत्तुं पुणो ण देहुव ॥ इहराणी
ममन्नावो जिणाण कह पाणिपत्ताणं ॥ १०९ ॥

व्या० – आहार करनारने पात्र राखवा जोइये, ते पात्रतो एम कहेवु नही केमके, पात्र तो शरीरनी पठे धर्मसाधन ठे जो एम ने ममत्वनु कारण मानिये तो तीर्थंकरप्रमुख जे पाणिपात्री ठे ममत्वपणु केम सनवे? जो कहेशो के, बाह्य पात्र ममत्वनु कारण ठे, ए असमीचीन ठे केमके, जेटलु पुद्गल द्रव्य ठे ते सर्व आत्माथी बाह्य ठे शु ते ममत्वनु कारण थाय? ॥ १०९ ॥

झाण तवोवघाउं आहारेणति ते मई मिछा ॥
झाण सेलेसीए तवो अ णिविसस्स तेसिंति ॥ ११० ॥

व्या० – जो कहेशो के, आहारेकरी केवलीना ध्यान तथा तपनो घात, माटे आहार लेवो अयोग्य ठे तो एवु जे तारी मतिमां जासे ठे ते मिथ्या ठे. केमके, ध्यान तो शैलेशीये ठे पण पूर्वे उत्कर्षताथी देशोणी वरोडी सुधी नथी अने विशेषेकरी केवलीने कोई तप पण नथी तेथि केवलीने जे अणुत्तर तप कह्युं ठे, ते पण शैलेश्यावस्थानाय ए ठे अने सोमिलना प्रश्नना अधिकारे श्रीभगवतीमां "किं भंते जत्ता, जंमे तव णियम संयम सज्झाय सज्झाण रसयमाईसु जोएसु जयणा" एम ठे तेहां पण तपनु फल ठे तेमाटे उपचारें तप कह्यु ठे ॥ ११० ॥

उगलियदेहस्स य ठिई अवुह्रीय णो विणाहार ॥
तेण पिअ केवलिणो कवलाहारित्तण जुत्त ॥ १११ ॥

व्या० – औदारिकशरीरनी स्थिति, तथा तेनी वृद्धि आहारविना थती नथी माटे केवलीने कवलाहार युक्त ठे ॥ १११ ॥

परमोरालिअदेहो केवलिण णणु हवेज मोहखए ॥
महिगइधाउरहिअ तेअमज्ञ अप्पपडलुवो ॥ ११२ ॥

व्या० – पूर्वपक्षी शंका करे ठे के, मोहनीयकर्मना क्षयथी केवलीने परम [illegible] शरीर थायठे ते हाडमांदिक सातधातुरहित परम पवित्र हायठे [illegible]

ना पडलनी परे केवल तेजमय होयछे. एवा शरीरने कवलाहारनी अपेक्षा नथी॥ ११२

अ० उपली आशंकानुं समाधान करेछेः—

संघयणणामपगइउ केवलिदेहस्स धाउरहियत्ते ॥
पोग्गलविवागिणी कह अतारिसे पोग्गले होऊ ॥ ११३ ॥

व्या०ः— केवलीनुं शरीर जो सप्तधातुरहित कहिये तो तेने वज्रऋषभनाराच संघयण नामकर्म प्रकृतिनो उदय केम थाय. केमके, ते प्रकृति तो पुद्गल विपाकनी छे. ते अस्थि पुद्गलने विषेज विपाक देखाडे छे. जो दृढ संस्थानमात्र पुद्गलनेविषे ते विपाकने देखाडती होय तो देवताने पण वज्रऋषभनाराच संघयण कहेवुं जोये. ११३

मोहविलएण नाणं णामुदयाचेव तस्स पारम्मं ॥
तो वण्णाइविसेसो तं होऊण धाउरहियत्तं ॥ ११४ ॥

व्या०ः— मोहनीयकर्मना विलयथी केवलीने केवल ज्ञान उपजे छे. पण शरीरनेविषे कांई विशेषपणुं थतुं नथी. शरीरनामकर्मना उदयथीज शरीरनेविषे विशेषता थायछे. माटे केवलीना शरीरनेविषे पुण्यप्रकृतिना माहात्म्यथी वर्णगति सारसत्वादिकनी विशेषता युक्तज छे. परंतु धातुरहितपणुं थाय नही. अतएव शास्त्रोनेविषे कह्युंछे के, “ संघयणरूव संठा, ण वन्नगइ सारसत्त ऊसासा ; एमा इणुत्तराइं, हवंति णामोदया तस्स. ” एम छतां जे केवलीना शरीरनेविषे अस्थ्यादि पुद्गल पलटीने अन्यविषेज पुद्गल उत्पन्न थायछे. एवी कल्पना करवी ते दृष्टिविपरीत होवाथी अयोग्य छे. केमके, पुण्यप्रकृतिनो उदय थयाथी तथा विध लब्धिवडे शरीरवर्णादिकविशेष दृढ होयछे. एम जाणवुं. ॥ ११४ ॥

ओरालिपत्तणेणं तह परमोरालिअंवि केवलिणो ॥
कवलाहारावेक्खं ठिइं च वुड्ढिं च पाउणई ॥ ११५ ॥

व्या०ः— तीर्थंकरनुं शरीर जो परमौदारिक होय तो पण तेने कवलाहार सापेक्षज स्थिति तथा वृद्धिनो अनुभव थाय. केमके सामान्यपणे औदारिकशरीरनेविषे एवो नियम ग्रह्योछे के, आहारविना शरीरनी स्थिति होयज नही.॥ ११५

णय मइनाणपसत्ती, कवलाहारेण होइ केवलिणो ॥
पुप्फाईअं विसयं, अस्स हयाणाइ गिह्णिज्जा ॥ ११६ ॥

व्याः— जो केवली आहार करे तो तेना आस्वादथी रसनानुं मतिज्ञान थाय

नही, जो एम मानिये तो समवरणभूमिकानेविषे गृहणप्रमाण [illegible] होवाथी, तेना परिमलथी घ्राणेंद्रियनु मतिज्ञान केम न थाय? आमाथ तृप्ति थाय नही, एम पण न कहेवु केमके, रतिरूप तृप्ति थती न होय आमारे पण इष्ट छे परंतु क्षुधानाशरूप तृप्ति तो आहारविना थायज नही॥".

इरिआ वहिआ किरिआ, कवलाहारेण जइ ण केवलिणो॥
गमणाइणा विनहवे, सा किं तुह पाण पिहियंति॥ ११७॥

व्या० जो कहेशो के, केवलीने कवलाहार करतां इरिआवहिकी क्रिया तो गमनागमनादिक क्रियाए करी केवलीने इरिआवहिआ क्रिया केम न [illegible] माटे जेम केवलीने गमनादिक क्रिया छे, तेम भोजन क्रिया पण जाणवी. प्रथमज कह्यु छे. ॥ ११७ ॥

णय परुवयारहाणी तेण सया जोग्गसमयणियएण॥
णय वाहिसमुप्पत्ती हिअमिअआहारगहणाउ॥ ११८॥

व्या० - केवली जो कवलाहार करे तो धर्मोपदेशमा अंतराय पडे, तेथी [illegible]नी हानि थाय, एम कहेवु न जोइये केमके, ते तृतीयप्रहरनेविषे मात्र नियतसमयेज आहार करेछे तेथी बाकीनो सर्व काल उपदेशने अर्थे छे जो कहेशो के, केवली आहार करेतो शूलादिक व्याधि उत्पन्न थातो [illegible] थाय, ता ए कल्पना पण व्यर्थ छे केमके, ते सारी रीते जाणीने [illegible] [illegible] मिताहारज करे छे माटे तेनेविषे शूलादिकना [illegible] नथी अने एथी तेनेविषे रागनी कल्पना पण थाय नही ॥ ११८ ॥

[illegible] पुरीसाइ दुगंछिय मंसिं णिहहु मोहवीआण॥
[illegible] तेय परेमि विवित्तदेसेविहाणाय॥ ११९॥

व्या० - जो कहेशो के, केवली आहार करे ता तेथी वडिनीत प्रमुख [illegible] [illegible], तेना [illegible]नु कारण छे, एम पण कहेवु नही केमके, दुगंछानु मूल [illegible] [illegible] छे तेनु ता प्रथमज उन्मूलन करेलु छे अने तीर्थंकरना एवा [illegible] छे के तेनां आहार तथा निहारनी विधिने कोइ देखी शके नही [illegible] [illegible] [illegible] दुगंछा उत्पन्न थाय नही वली सामान्य केवली [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] कारणे दुगंछा उत्पन्न थाय नही [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] निहार होय नही तो पछी ते केम मनाय? [illegible]

तप्पियरो, हलधर चक्कीय वासुदेवाय; मणुआण जोगजूमी, आहारो णत्थि णी
ते." ए तो कोई अपूर्व मतछे. केमके, शास्त्रोनेविषे एवो कोई अतिशय क
नथी; तेम एवी उदराग्नि पण नथी के जेथी निहारनो अनाव थाय. तेम
ां जो ए वातसाची मानिये तो जस्मकव्याधिनी पठे ते दोषरूप थशे. खल
ीकृत आहार मात्र जो जस्म थाय तो पूर्वे केम न थाय? माटे ते केवल
प रुचिमात्र छे ॥ ११९ ॥

जो पुण जुत्तिअजावो केवलिणो अइसउत्ति जंपेई ॥
सो वायामित्तेणं साहेउ सुह खउ पुप्फं ॥ १२० ॥

व्या०:– जो कहेशो के, केवलीने जे जुक्तिनो अनाव छे. ते अतिशय जाण
. तो एम कह्याथी तमे पोते पोताना वचने अछतीवस्तुने छती करो छो त्या
आकाशना पुष्प पण छे एम कहेशो तो कोण ना कहेनारो छे! पण ए वच
सप्रमाण न कहेवाय. ॥ १२० ॥

एवं कवलाहारो जुत्तीइ समत्थिउ जिणवराणं ॥
पुवायरिएहि जहा तहेव लेसेण उवइछो ॥ १२१ ॥

व्या०:– एम जे प्रकारे पूर्वाचार्य केवलीने विषे कवलाहारनी समर्थना करी छे
प्रकारेज आ ठेकाणे अमे लेशमात्र कह्युंछे. ॥ १२१ ॥

तेणं केवलनाणी कयकिच्चो चेव कवलजोईणं ॥
नाणाईण गुणाणं पडिघायाजावउ सिद्धो ॥ १२२ ॥

व्या०:– माटे केवली कवलाहार करता छतां पण कृतकृत्यज छे. केमके, ज्ञान
र्शन चारित्र तथा वीर्यगुणनो स्वजावपरावृत्ति एटले पाछल हटवारूप प्रतिघात
थी. ज्ञानादिक गुण संपूर्ण सिद्धज होयछे. माटे ते सर्वथा कृतकृत्य तो सिद्धज छे.
म कहेवुं जोइये. तथापि ज्ञानादिगुणचतुष्टयनी विशुद्धताने लीधे केवलीने देश
तकृत्य कहेतां पण कांई विरोध आवे नही. ॥ १२२ ॥

नाणस्स विसुद्धीए अप्पा एगंतउ ण संसुद्धो ॥
जम्हा नाणं अप्पा अप्पा नाणं तअण्णं वा ॥ १२३ ॥

व्या०:– जो कहेशो के, आत्मा ज्ञानरूप छे. तेथी ज्ञाननी एकांत शुद्धताने
ीधे आत्मा पण एकांत शुद्ध थाय छे. एम न कहेवु. केमके, ज्ञान ते आत्म

रूपज होयछे केमके, आत्माविना ज्ञाननुं रहेवु नथी अने आत्मा छे ते ज्ञानस्वरूप पण होयछे ने तदन्यस्वरूप पण होयछे, ए हेतुथी ज्ञानादिगुणने स्वजावेकरी शुद्ध पण छे अने अव्याबाधादिगुणना स्वजावे अ-शुद्ध पण छे एम जाणवु ॥ १२३ ॥

एव परमप्पत्त नाणाइगुवारगं मुणेअव ॥
सवह परमप्पत्त सिद्धाण चेव ससिद्धं ॥ १२४ ॥

व्या० - एवी रीते केवलीने परमात्मापणु ज्ञानादिकगुणेकरी देशथीन जाण वु, सर्वथा परमात्मा ते सिद्धज कहेवाय माटे आठ दोषना विरहथी आठ गुण तेनेज प्रगट थायछे आत्मा त्रण प्रकारनो होयछे एक बाह्यात्मा, बीजो अं-तरात्मा, अने त्रीजो परमात्मा, आत्मबुद्धिथकी जे कायादिकनुं ग्रहण थायछे ते बाह्यात्मा कहिये शरीरादिकनो अधिष्ठायक जे चेतन ते अतरात्मा कहिये, अ-ने जे सर्व उपाधिरहित शुद्ध आनदमय होय ते परमात्मा कहिये यत "आ-त्मधिया समुपात्तकायादि कीर्त्यते अत्र बहिरात्मा कायादेशमधिष्ठायको भव-त्यतरात्मा तु चिद्रूपानदमयो नि शेषोपाधिवर्जित शुद्ध अप्रत्यक्षोनतगुण प-रमात्माकीर्तितस्तद्ज्ञैरिति योगशास्त्रे " केटलाएक एम कहेछे के, जे मिथ्यात्वा-दि परिणामवान होय ते बाह्यात्मा कहिये, जे सम्यक्त्वादि परिणामवान होय ते अतरात्मा कहिये, अने जे केवल ज्ञानविधान होय ते परमात्मा कहिये मि-थ्यात्वादि त्रण गुणगणा सुधी बाह्यात्मा कहेवायछे, अविरतिसम्यग्दृष्टिनाम-ना चोथा गुणगणाथी लईने क्षीणमोहनामना बारमा गुणगणासुधी अतरा-त्मा कहेवायछे, माटे मिथ्यादृष्टिने पण निश्चयथी सम्यग्दर्शन तथा केवल ज्ञा-न छे ते शक्तिएकरी अंतरात्मता तथा परमात्मताने पामेछे केमके, अविरति-सम्यग्दृष्ट्यादिकने पण निश्चयथी केवल ज्ञान छे अने बाह्यात्मा ते भूतपूर्वनये-करी कहेवायछे केमके तेने मिथ्यादर्शन पर्याय पूर्वे थयाछे जेम मधुथी भ-रेला घटमाथी मधु कहाडी लीधा पछी पण मधुघट कहेवायछे ते न्याय अहि पण जाणवो व्यक्त परमात्माते बाह्यात्मा तथा अतरात्मा पूर्वभूतनयथी कहेवाय छे केमके, तेने मिथ्यादर्शन तथा सम्यक्दृष्ट्यादि ए बन्ने पर्याय पूर्वे थयाछे ॥ १२४ ॥

तस्स य सहावसिद्धा, किरिआ गुण करण जोग अहिगिच ॥
कम्मगुणी आविहवे, जजणकरण त अहिगिच ॥ १२५ ॥

व्या०:– ते केवलीने गुणकरण आश्री स्वभावसिद्ध क्रिया होयछे. तेने केवली ज्ञानादि गुणपर्याय उपजतां आत्माथी अन्यकर्मादिकारणनी अपेक्षा नथी कालस्वभावादिके तेना कारणपणे सर्व आत्मांतरभूत छे. मनोवाक्कायरूप पुद्गलना कारण आश्रीने केवलीने कर्मोपनीतक्रिया पण थायछे. माटे ते अंगेकरी केवल स्वभावसिद्ध क्रियाज नथी. ॥ १७७ ॥

अह सो सेलेसीए. झाणानलदड्डसयलकम्ममलो ॥
कणगंव सवह च्चिय, लद्धसहावो हवइ सिद्धो ॥ १७६ ॥

व्या०:– हवे केवली जे छे ते. शैलेसीअवस्थानेविषे शुक्लध्यानरूप अग्निएकरी सर्वकर्मरूपमलने दग्ध करीने अग्निएकरी निर्मल कीधलां सुवर्णनी पठे सर्वथा लब्धस्वभाव थईने सिद्धत्वपर्यायनो भजनार थायछे. ॥ १७६ ॥

तस्स वर नाण दंसण, वर सुद्ध सम्मत्त चरण निव्वठिई ॥
अवगाहणा अणंता, मुत्ताणं थई अविरियं च ॥ १७७ ॥

व्या०:– ज्ञानावरणीयादिक आठकर्मथी जीवने अज्ञानादिक दोष होयछे ते नाश पाम्यापछी सिद्धने आ आठ गुण प्राप्त थायछे:– पहेलो ज्ञानावरणीयकर्मना क्षयथी अनंत केवलज्ञान उत्पन्न थायछे; बीजो दर्शनावरणीयकर्मना क्षयथी अनंत केवलदर्शन उत्पन्न थायछे; त्रीजो वेदनीयकर्मना क्षयथी क्षायिक सम्यक उत्पन्न थायछे; चोथो चारित्रमोहनीयकर्मना क्षयथी क्षायिक चारित्र उत्पन्न थायछे; पांचमो आयुःकर्मना क्षयथी अक्षय स्थिति उत्पन्न थायछे; छठो नामकर्म तथा गोत्रकर्म ए बन्नेनो क्षय थयाथी एक सिद्धावगाहक स्थाननेविषे दीर्घर्अवगाहनी पठे अनंत सिद्धावगाहना उत्पन्न थायछे; अने मोहनीयकर्मना क्षयथी बे गुण उत्पन्न थायछे एम कहे, तथा नाम अने गोत्र ए बे कर्मना क्षयथी एकज गुण उत्पन्न थायछे एम कहेछे: ए ठेकाणे स्वपरिज्ञानाज शरण छे. ॥१७७॥

थिरयावग्गहणाउ. पनेअं नामगोत्तकम्मखए ॥
चरणंचिअ मोहखए. इअ अठ गुणानि विंति परे ॥ १७८॥

व्या०:– वेदनीय मोहनीयकर्मना क्षयथी एकज चारित्रगुणमानेछे. तथा नामकर्मना क्षयथी आत्मप्रदेशस्थिरतारूप गुण कहेछे; तेमज गोत्रकर्मना

क्षयथी अवगाहना गुण मानेछे ॥ १२८ ॥ अ० जे आचार्य सिद्धने ण नथी मानता, ते सूत्रनु अवलंबन करीने पूर्व पक्ष करेछे –

नणु सिद्धाते सिद्धो, णो चारित्ती अ णो अचारित्ती ॥
नणिउ ववहारणया, णिच्छउ होई चारित्ती ॥ १२९॥

व्या० – "सिद्धे णो चारित्ती णो अचारित्ती" ए सूत्रनेविषे सिद्धने नो अचारित्री कह्योछे, एवु वचन तो चारित्र न होय तो सनवे, जेम ही होवाथी नव्यत्वने ठेकाणे अनव्यत्व कहेवायछे, तेम छता सिद्धना . रित्रनी गणना केम कीजीये ? ॥१२९॥ अ० कोईएक ए सूत्रनु सम

नणु इह देसणिसेहे,णो सद्दो तेण तस्स देसस्स ॥
अह णिसेहो किरिया,रूवस्स ण सत्तिरूवस्स ॥ १३०॥

व्या० – "णो चारित्री णो अचारित्री" ए वाक्यमाना "नो" शब्दथी नो निषेध थायछे एटले चारित्र बे प्रकारनु होय छे, एक क्रियारूप ने बीजो णामरूप छे तेयोमाना क्रियारूपचारित्रनो सिद्धनेविषे निषेध छे, परंतु चारित्रनो निषेध नथी , एम जाणवु ॥ १३० ॥ अ० केवलीनेविषे रित्र छे, परंतु शक्तिरूप चारित्र नथी एम कहेवु नही ते कहेछे –

जइ किरियारूव चिअ, चारित्त णेव णायपरिणामो ॥
तो किरियारूव चिअ, सम्मत्त णायपरिणामो ॥ १३१॥

व्या० – जे प्रेक्षोत्प्रेक्षादिक्रियाछे, ते चारित्र कहिये , अने तदुपयोगरूप रित्र ते नावचारित्र कहिये, नावचारित्र ज्ञानरूपज छे त्यारे निराकताथाय प जे क्रिया , तेज सम्यक्त कहिये, अने श्रद्धानपरिणाम ते ज्ञान कहिये, निर्णय करतां ज्ञान तथा दर्शननो नेद थाय नही, ज्यारे आत्मगुणरूप सम्यक् त्यारे चारित्र पण आत्मगुणरूप केम न कहिये ! अतएव मरुदेवादिकने वाया रविना पण चारित्र सनवेछे ॥१३१॥ अ० "इह नविए नते, चरित्ते परनविए ने, तदुनयनविए चरित्ते गोयमा, इह नविए चरित्ते, णो परनविए चरित्ते णो तदु पनविए चरित्ते" एवा नगवती सूत्रनां वचनोए करी चारित्र नवानुगामी कहु माटे मोक्षनेविषे चारित्र सनवे नही, एम जे कहेछे, तेनु समाधान आपीये छे

जं पुण तं इह भविअं, तं किरियारूपमेव णेयव्वं ॥
अहवा भवो ण मुक्खो, णो तम्मि भवे इअं अहवा ॥ १३२ ॥

व्याः– जे चारित्र इह भविक कह्युछे, ते क्रियारूप जाणवुं; अने बीजुं जे मोहनीयकर्मना क्षयथी उत्पन्न थायछे ते चारित्र मोक्षनेविषे होयछे, तेनी अमे पण ना कहेता नथी. अथवा मोक्षना भवमां विवक्षा करी नथी माटे इह भविक चारित्र कह्युछे, अथवा मोक्षनेविषे चारित्र तो छे, परंतु कर्मनिर्जरारूप प्रयोजन तिहां नथी, तेथीज इह भविक कह्युंछे ॥ १३२ ॥

णय मोरकसुहे लद्धे, तयणुठाणस्स हंदि वेफल्लं ॥
तक्कारणस्स इहरा, नाणस्स वि होइ वेफल्लं ॥ १३३ ॥

व्या० चारित्रनुं फल मोक्ष छे, ते पाम्या पछी चारित्र रहेतुं नथी. एम कहेवुं नही. अन्यथा ज्ञाननुं फल विरति छे, ते पाम्या पछी चारित्र रहेतुं नथी; एम कहेवुं नही; अन्यथा ज्ञाननुं फल विरति छे, ते पाम्या पछी ज्ञानपण संभवे नही. ज्यारे सिद्धने ज्ञाननुं फल निश्चयथी लोकालोकप्रकाशरूप छे; त्यारे चारित्रनुं फल पण निश्चयथी शुद्धात्मस्वभावानुभवलक्षण शासारू न होय. ॥ १३३ ॥

णेव पइण्णाभंगो, अहियावहि पूरणंमि चरणस्स ॥
सावा किरियारूवे, सुअकरणे जं करेमित्ति ॥ १३४ ॥

व्या० सिद्धने जो चारित्र मानिये तो यावज्जीवतोनी प्रतिज्ञानो भंग थशे. एम पण न कहेवुं. केमके, ओछा काले प्रतिज्ञानो भंग थाय छे; पण अधिक काले प्रतिज्ञानो भंग न थाय. अथवा ते प्रतिज्ञा क्रियारूपचारित्रनीयज जाणवी. केमके, " करेमि भंते " एसूत्र श्रुतकरणार्थे कह्युछे. ते श्रुतकरण युंजनाकरणरूप चारित्रज अवलंबीने प्रवर्त्ते छे. गुणरूप चारित्र ते आत्मस्वरूप छे. मोहविरहथी तेनो आविर्भाव मात्र थायछे. ॥ १३४ ॥

अह चरण मनुठाणं, तं ण सरीरं विणत्ति जइ बुद्धी ॥
तेण विणा नाणाई, ता तस्स हेऊअं पत्तं ॥ १३५ ॥

व्या० जो चारित्र अनुष्ठानरूपछे, ते शरीरविना सिद्धनेविषे संभवे नही. एम जो कहिये तो शरीरविना ज्ञानादिक पण सिद्धनेविषे केम संभवे ! पूर्वावस्थामां शरीरथी उत्पन्न थएला ज्ञानादिकना नाशना कारणविना सिद्धने ध्रुव कहियेछे. ॥१३५॥

किरिया फलउदयिगी, खइअं चरण वि दोह्र मह जेऊ॥
सातेण वज्झचरण, वज्झतरिय तु परिणामा ॥ १३६॥

व्या० बीजूं क्रिया छे ते शरीरनामकर्मना उदयथी छे, शरीरविना य नही शरीरवमे चारित्ररूप क्रिया थायछे ते बाह्यचारित्र कहेवाय बाह्यचारित्ररुप शुद्ध जैनसमाचारीरूप क्रियानुं सेवन करीने अनन्य जीव वमा ग्रैवयकसुधी जायछे, एवो बाह्य चारित्रनो महिमाछे अने क्षा यिक चारित्र कहुछे माटे ते बाह्यचारित्र कहेवाय नही, किंतु ते शुद्ध रिणामरूप होवाथी ए अतरग चारित्रज कहेवाय ॥ १३६ ॥

आया खलु सामाइय, आया सामाइअस्स अछोत्ति ॥
तेणेव इमं सुत्त, नासइ त आयपरिणाम ॥ १३७॥

व्या० " आया सामाईए आया सामाइयस्स अछे " ए सूत्र पण आत्मपरिणामरूपज कहेछे परतु बाह्यक्रियारूप नथी कहेता ॥ १३७॥

एय खइअ विचरित्तं, जोगिणिरोहेण त विलयमेइ ॥
अणह विहल पत्तो, विरहो चारित्तमोहस्स ॥ १३८॥

व्या० केवलीने जे क्षायिक चारित्र उत्पन्न थायछे, ते ज्यारे योगनो नि ने मोक्षनेविषे गमन करेछे, तेना प्रथमसमयमा नाश थायछे एम कहेवु, केमके, क्षायिकभावनो नाश थतोज नथी जो एम न मानिये अने भा वनो नाश मानिये तो चारित्रमोहनीयकर्मनो नाश कहेवाशे नही तम वलेकरी नाश अगीकार करशु तो पण ते निरर्थक थशे केमके, चा रित्र यकर्मना नाशथी क्षायिक भावतो उत्पन्न थयोनही त्यारे ए नाशपणु शु तु? जेम ज्ञानावरणीयकर्मना नाशनु फल केवल ज्ञान छे, तेम चारित्रदर्श कर्मना नाशनु फल यथाख्यात चारित्र छे ते जो सिद्धनेविषे न हाय, ता म नीयनो नाश निष्फल कहेवाशे ॥ १३८ ॥

तेणं सुद्धवओगे, चरण नाणाउ दसण वन्न ॥
कारणकज्जविभागा, सततमिय किं न सिद्धेसु ॥१३९॥

व्या० ते कारण माटे शुद्धोपयोगरूप चारित्र यद्यपि उपयोगरूपताथी अन्यथा छे, तथापि तेओमां कारणकार्यभावभेद छे ज्ञान चारित्रनु कार

।, तेम चारित्र ज्ञाननुं कारण छे; जेम सम्यक्त तथा ज्ञानना विषयोमां भेद न
ी. अर्थात् बन्नेनो एकज विषय छे. तथापि तत्वरोचकरूप ते ज्ञान कहेवायछे,
ाथा तत्वरुचिरूप ते सम्यक्त कहेवायछे. एवो बन्नेनो भेद छे. तेम ज्ञान अने
ारित्रनो पण भेद जाणवो. तेमज ज्ञानावरणीयादिक कर्मोनो भेद पण संभवे
. एवी रीते ज्ञानथी अन्य चारित्र उपयोगरूपने ज्ञानथी अनन्य अनेकांतस्वरू
 सिद्धनेविषे केम न थाय ॥ १३ए ॥ अ० ए प्रमाणे सिद्धनेविषे चारित्रनी स
ेयना करी, ते उपर सिद्धांतपक्षने अवलंबीने पूर्वपक्षी समाधान करेछे.

एछ समाहाणविही, जो मूलगुणेसु हुज्ज थिरभावे ॥
सो परिणामा किरिआ, जुंजणकरणं पडिछंतो ॥ १४० ॥

व्या० मूलगुणनेविषे जे स्थिर भावरूप छे, तेज चारित्र क्रियारूप कहेवुं. के
मके. ते मनोवाक्काययोगरूप युंजनाकरणनी अपेक्षा करेछे. कोई पूछे के, एम
कह्याथी वीर्यरूप चारित्र थाय. ते संभवे नही. जेम ज्ञानाचारादिकथी ज्ञाना
दिक अन्य छे, तेम चारित्राचारथी चारित्र पण अन्यज संभवे. तेने एम कहेवुं
के, जो एम कहिये तो वीर्याचारथी वीर्य पण कां अन्य न कहिये! जो कहेशो
के, योगरूप चारित्र होय तो ते उपशमिक भावे केम थाय! केमके' योग ते
नामकर्मना उदयिकभावे वर्त्तेछे. उपशमिक भाव तो मोहविना अन्य कर्मनो था
यज नही. एम पण न कहेवुं, केमके, योगपरिणामविशेष पण चारित्रमोह
नीयकर्मना उपशमादिकनी नियमेंकरी अपेक्षा करेछे ते उपशमादिक भावेज
कहिये, केमके, प्रधाननी अपेक्षाए व्यवहार होयछे. अतएव इंद्रियपर्याप्ति उ
दय जघन्य पण इंद्रियप्रधाननी अपेक्षाए शास्त्रमां क्षायोपशमिक कहेवायछे.॥१४०

असह वक्कजडाणं, चंमाणं चंमरुद्दपभईणं ॥
वेणसिया चारित्तं, सुहुवउगोत्ति काऊणं ॥ १४१ ॥

व्या० जो योगस्थैर्यरूप चारित्र न कहिये, अने शुद्धोपयोगरूप चारित्र क
हिये, तो वक्र जमने चारित्र केम संभवे? केमके, तेने तथाविध माया ते अ
शुभोपयोगरूप छे. अने ते तो शुद्धोपयोगनो भेद छे, तथा क्रोधमोहनीयक
र्मना परवशे जे चंमरुद्राचार्यादिक सहजे कोपनशील छे, तेने पण चारित्र केम
संभवे? केमके, तेने पण अशुभोपयोग छे. मूलगुणनेविषे योगस्थैर्य ते तेने
पण संभवे. जेम वज्र अग्निएकरी जल थाय, तो पण वज्रपणुं मूके नही. जे

म यथाविध कषायथी अस्थिरता पण कषायपरिणति प्रमादरूप तेने पण योगस्थैर्यनो घात थाय नही जो योगक्रियारूप चारित्र कहिये वादिकने केम सनवे ? एवो संदेह पण न करवो केमके, मरुदेवादिकने संसारनिवृत्तिरूप मनोयोगपरिणतियुक्त छे उक्तंच "जगवद्दर्शनानंद पंप्रपेयुषी,केवलज्ञानमम्लान, मालसाद तथैव सा " इति योगशास्त्र वृत्तौ॥

चरणं जइ उवउगो, जिणाण ता हुति तिन्नि उवउगो ॥

दोसु अ अतप्नावे, त तिअस्स पकप्पणा मोहा ॥१४०॥

व्या० जो शुद्धोपयोगरूप चारित्र कहिये, तो केवलीने था त्रण उपयोग वा जोइये ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोग, तथा चारित्रोपयोग इम ण तेर उपयोग थवा जोइये अने शास्त्रोनेविषे तो बार उपयोग कहावे, न तथा दर्शनमांज चारित्र जेलिये तो त्रीजु कयु चारित्र कहीशुं जे प्रयागमात्र थाय जो साकारोपयोग चारित्र जेलिए तो साकार पण सनवे उपयोगरूप चारित्र मान्याथी इत्यादिक अनेक दूषण थाय॥

उ० जो वीर्यरूप चारित्र कहिये तो पण शैलेशी अवस्थानेविषे ते केमके, ते समयनेविषे प्रवृत्तिरुप वीर्य नथी एम जे कहेछे, तेनु समाधान क

सेलेसीए जत्तो, णिवित्तिरूवो सचेव थिरजावो ॥

एप मो सिद्धाण पिय, ज तेसि वीरिअ णत्थि ॥ १४३ ॥

व्या० शैलेशीअवस्थानेविषे यद्यपि रुप यत्न नथी, तथापि योगनिरोध निरूप यत्न छेज, तेज परम स्थिरजावरुप चारित्र छे, ते.स्थिरजाव नथी, केमके तेनो वीर्य नथी, माटे चारित्रने दानादिक पांच लब्धिए ब मादिर्मान कहावे, तथा सूत्रमा पण सिद्ध अवीर्य कहावे ॥ १४३ ॥

उ० जो चारित्र क्रियारूप कहिये, तो अक्रिया मोक्षकारण कही केम सन थन "माण नंते अकिरिआ किं फला, गोयमा, सिद्धगमणपज्जवसाण फला" एहवु जे कहेछे, तेनु समाधान करेछे –

अने अ अनकिरिआ, सेलेसी अकिरियत्ति एगहा ॥

नाणकिरिआहि मोक्खो, एत्तो चिअ जुज्जए एअ ॥१४४॥

व्या० अनक्रिया, शैलेशी तथा अक्रिया ए सर्व शब्द एकार्थक कहा क्रिया एटले सकलकर्मक्षयरूप तेनुं प्रयोजन, जेथी कांइ अन्य क्रिया

नही ते; शैलेश एटले मेरुपर्वत, तेनी पठे जे निश्चल अवस्था ते शैलेशी कहेवाय; अने जे अवस्थानेविषे प्रवृत्तिरूपक्रिया न होय ते अक्रिया कहेवायछे. अतएव "ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्षः" ए वचन युक्त छे. केमके, सर्व संवररूपक्रिया अक्रिया रूपज छे. ॥ १४४ ॥ उ० कोइ आशंका करेछे.

णणु जोग निरोहेणं, चारित्तं सासयं परं होऊ ॥
असइ तेण ण मोरको, उप्पव काले असंतेणं ॥ १४५ ॥

व्या० परमार्थेताथी चारित्रनो प्रतिपक्षी यद्यपि चारित्रमोहनीयकर्म छे, तथापि जेम चोरनी साथे रहेनारो अचोर पण कर्मांकित थायछे, तेम मोहना सहचारथी योग पण चारित्रना विरोधी छे. माटे योगना निरोधकरी परम यथाख्यातचारित्र शैलेशीने चरमसमये ऊपजे ते शाश्वतचारित्र सिद्धने पण होयछे. जो ते चारित्र ते समयनेविषे उत्पन्न थईने आगल मोक्ष थवाना समये नाश पामतुं होय तो ते उत्पन्न थवातुं प्रयोजन शुं? तथा जो कार्यना समये कारण न होय तो कार्यनी उत्पत्तिपण केम थाय? ॥ १४५ ॥

केई विंति मुणीणं, सहावसमवहिई हवे चरणं ॥
तं लद्धसहावाणं, सिद्धाणं सासयं जुत्तं ॥ १४६ ॥

व्या० केटलाएक कहेछे के, पूर्वोक्त दोषने लीधे शुद्धोपयोगरूप चारित्र थाय नही. स्वभावसमवस्थानरूप चारित्र होयछे. ते आत्मस्वभाव अविरत्यादि दशाए आच्छादन करी लीधु छे ज्यारे चारित्रमोहनीयकर्मनो विजय थायछे, त्यारे ते आत्मस्वभाव प्रगटेछे. ते लब्धस्वभाव सिद्धने शाश्वतरूप चारित्र युक्त छे. ॥१४६॥

उ० ए कहेला परमतनुं समाधान करेछेः—

चरणरिउणो ण जोगा, अवसमाएण सव्वसंवरणं ॥
सिद्धे तम्मि सहावे, समवट्ठाणंति सिद्धंतो ॥ १४७ ॥

व्या० जो एम कहिये के, योगचारित्रना विरोधी छे, तेथी योगनो निरोध कर्या थकी परम चारित्र ऊपजे छे. ए कहेवुं योग्य नथी. केमके जो सहचारथी योग चारित्रना विरोधी थाय; तो दर्शनना पण विरोधी थवा जोईए तेम तो न कहेवाय. ज्यारे शैलेशीअवस्थानेविषे सर्व संवर कहेवाय छे, त्यारे तेज समयनेविषे सकल कर्मनिर्जरा कारण चारित्र छे, एवा अभिप्राये स्वभावसमवस्थानरूप चारित्र परमार्थि सिद्धने कहेवुं जोईए के जो योगपरिणामथीभिन्नस्वभाववान चारित्र सिद्धहोय.॥१४७॥

उज्जुसुएण मएणं, सेलेसीचरमसमय नाविति ॥
अनसमत्तं च्चिय जहो, हेऊ हेऊस्स कज्जम्मि ॥ १४८ ॥

व्या॰ एम जे कह्युं छे के, शैलेसीना छेल्ला समयनेविषे चारित्र उपजेछे, ए सूत्रनयनामते क्षणपर्याय जयुरछे तथा कारणनो अत्यसमयज कार्यनो हेतु ए अनिप्रायेकरी मोहना क्षयथीज सादिसात क्षायिकनावरूप वीजुं चारित्र पजे छे ॥ १४८ ॥

णय चरणमोहवधो, सिद्धाण अ चरणाण सताण ॥
अविरय पच्चइओ सो अइप्पसगो हवे इहरा ॥ १४९ ॥

व्या॰ सिद्धने चारित्र नही होय तो तेने चारित्रमोहनीयकर्मनो बंध थवो जोइए माटे एम न केहेवुं केमके विरति अने अविरति ए बे स्वतंत्र परिणाम छे।

जच जिअलक्खण ते उवइठ तह लक्खण लिंग ॥
तेण विणा सो जुज्जइ धूमेण विणा हुआ सुव्व ॥ १५० ॥

व्या॰ “नाण च दसण चेव, चरित्त च तवो तहा, वीरिय उवओगो य, जीअस्स लक्खण” एवीरीते श्रीउत्तराध्ययनसूत्रनी गाथाएकरी जीवनुं लक्षण चारित्र कह्युंछे माटे ते सिद्धने पण होवुं जोये एम कहेवुं नही केमके चारित्र जे छे ते उपयोगनी पछे यावत् द्रव्यनावि लक्षण नथी आहीं ... थी लिंग जाणवो जेम धूम अग्निनो लिंग छे तेम चारित्र जीवनो लिंग छे, जेम धूमविना अग्नि तप्त लोहनेविषे होयछे, तेम चारित्रविना जीवपणुं होय एमा कांई विरोध नथी, अतएव अतरंग लक्षण कहीने बाह्य लक्षण कहेवाने अर्थे उपर कहेली गाथा उत्तराध्ययनबृहद्वृत्तिनेविषे अवतरण करेली छे ॥ १५० ॥

णय णिच्छयस्स नाणे अनेयवित्ती कह चरणविरहे ॥
सत चिअ पन्निज्जइ फलेण ज सोय सत वि ॥ १५१ ॥

व्या॰ जो सिद्धनेविषे चारित्र न होय तो ज्ञानमां चारित्रनी अनेद वृत्ति केम नयनी ? केमके, सकलादेशो छतांज सर्व धर्म एक धर्मवाचक शब्द माने एवी शंका पण न करवी, केमके, ते समयमां चारित्र नथी तो पण चारित्रनुं फल छे माटे चारित्र छे एम मनायछे, ए नयना मते चारित्रना फलविना छतुं चारित्र थयुं माने ॥ १५१ ॥

णवि आयाचरणं चिअ आया सामाइयंति वयणेणं ॥
दवियाया नयणाए चरणाया सव्वथोकुत्ति ॥ १५२ ॥

व्या० "आया समाईए, आया सामाईअस्स अट्ठे" ए सूत्रनेविषे आत्मपर्यायरूप जे चारित्रछे, ते द्रव्यार्थिक नयना आदेशे आत्मरूप कह्युंछे, माटे ते चारित्र यावत् द्रव्यभावी आत्मस्वभावरूप न जाणवुं केमके, द्रव्यात्मा, ते भजनाए चारित्रात्मा कह्युछे, तथाहि " जस्स दविआया तस्स चरित्ताया भयणाएत्ति " एवी रीते भगवतीसूत्रमां कह्युछे, तथा आत्माना जे आठ भेद कह्या छे, तेओमां चारित्रात्माने सर्वस्तोक कह्युंछे, माटे आत्मा तेज चारित्र एम न कहेवुं ॥ १५२ ॥

एत्तो च्चिय सिद्धाणं, खइअम्मि नाणदंसणगाहणं ॥
सम्मत्तजाइगहणं, वद्धूण दोसा ण संकंती ॥१५३ ॥

व्या० वली सिद्धनेविषे चारित्र नथी, ते माटेज सिद्धने क्षाइकभावमां ज्ञान तथा दर्शन ए बेज कह्यांछे. जो कोई कहेशे के, सम्यक्तसमान चारित्रछे. तेथी सम्यक्तना ग्रहणथी चारित्रनुं पण ग्रहण थायछे. एम कहेवुं नही. केमके, शुद्धोपयोगरूप चारित्रनो ऐवेज निषेध कर्योछे. अने योगस्थैर्यरूप तेहनीज व्यवस्थापना करीछे ॥ १५३ ॥

अम्हं णाभिणिवेसा, सिद्धाणं अ चरणस्स पक्खम्मि ॥
तह वि भणिमो रतीरइ, जं जिणमयमन्न हाकाउं ॥१५४॥

व्या० सिद्धने चारित्र नथी, ए पक्षमां यद्यपि अमने अभिनिवेश नथी, तथापि आटलुं व्यवस्थापन आटलासारू करिये छैये के, श्रीवीतरागनां वचन अन्यथा न थाय ॥ १५४ ॥ अ० एवीरीते सिद्धने चारित्र नथी, एवी समर्थना करी, त्यारे सिद्धना गुणोमां चारित्रनी गणना केम करीछे? एवा पूर्वपक्षनुं समाधान करेछेः—

जइवि जइमो सिद्धंतो, इट्ठं केसिंवि तहवि सूरीणं ॥
सिद्धाणं चारित्तं, तेसिमए तं मए मिहिअं ॥ १५५ ॥

व्या० यद्यपि सिद्धने चारित्र नथी; एवो सिद्धांत छे, तथापि केटलाएक आचार्यो चारित्र मानेछे, यतः " अन्येतु दानादिलब्धिपंचकं चारित्रं च सिद्धस्यापीछंति, तदाचरणस्य तत्राप्यभावात्, आचरणाभावेपि च तदऽसत्वे क्षीणमोहादि ष्वपि तद सत्व प्रसंगात् ॥ततस्तन्मते नचारित्रभावनां सिद्धावस्थायामपि सद्भावेनापर्यवसितत्वादकस्मिन् द्वितीयभंग एव क्षायिको भावो न शेषेषु त्रिष्वपि" इति विशेषावश्यक

टीकायां " ए आचार्यना मतेकरी अमे सिद्धना गुणोमा चारित्रनी गणना ए मत जे छे ते पूर्वमतथी विरुद्ध छे माटे अप्रमाणजछे एम कहेवु नही अविच्छिन्नपरपराए आवेलां जे ए बे मत, ते अनतिशय पुरुषथकी निवारण नही जो कहेशो के, एक एकनी युक्तिनी समर्थना करता प्रत्येकमा दोष आवशे, एवो विचार पण न करवो केमके, जिनवचनकपर अरुचि थयाविना ॥ न्नश थतो नथी ॥ १५५ ॥

तेसि सब्वा किरिआ, सहावसिद्धा पणठ कम्माण ॥
छह्रपि कारगाणं, एगछेजं समावेसो ॥ १५६ ॥

व्या० ते सिद्धने सर्व क्रिया स्वनावसिद्ध छे, एक पण विनाव क्रियानथी के मके, कर्मरहित सिद्धने छ कारक एक अर्थे विश्राति पामेछे ते कहेछे – कथंचित ज्ञानथी अन्यथा अत्माज्ञप्तिक्रिया स्वतंत्रपणे करेछे माटे आत्मा जे छे तेज कर्त्ता छे, ए पहेलु कर्त्तानामा कारक ज्ञप्तिक्रिया स्वतत्र आत्मानेविषे प्राप्यमाण छे, मा टे तेज आत्मरूप कर्म छे, ए बीजुं कर्मनामा कारक जेणे करीने ज्ञानस्वनावथी तथा ज्ञप्तिस्वनावे आत्मा क्रिया करे छे, तेज आत्मरूप करण होवाथी आत्माज कर्त्ता छे एम जाणवु ए त्रीजु करणनामा कारक जे स्वानुफलवेदने अर्थ आ त्मा ज्ञप्तिक्रिया करेछे, तेज आत्मरूप सप्रदान छे, ए चोथु सप्रदाननामा कार क जे पूर्वज्ञेयाकारने विश्लेषे उत्तरज्ञेयाकारमिश्रित ज्ञानस्वनाव आत्मा नजेछे तेज आत्मस्वनावरूप अपादान छे ए पाचमुं अपादाननामा कारक तथा जे ज्ञा नरूपगुणनु नाजन जे आत्मानामे द्रव्य तेज आधार छे एम जाणवु, ए छठु आधारनामा कारक कह्यु ए ज्ञान आश्री छ कारक कह्या, एमज सर्व बीजा धर्मो आश्री जाणी लेवु ॥ ५५६ ॥

ते पुण पनरस नेआ, तित्थातित्थाय सिद्धनेएण ॥
तह इत्थीए सिद्धिं, ण खमइ खवणो अनिणिवेसी ॥ १५७ ॥

व्या० ते सिद्धना पदर नेद कह्याछे, यत तीर्थसिद्ध, अतीर्थसिद्ध, तीर्थकर सिद्ध, अतीर्थकरसिद्ध, स्वयबुद्धिसिद्ध, प्रत्येकबुद्धिसिद्ध, बुद्धबोधितसिद्ध, स्त्रीलिंग सिद्ध, पुरुषलिंगसिद्ध, नपुसकलिंगसिद्ध, स्वलिंगसिद्ध, अन्यलिंगसिद्ध गृहलिंगसि द्ध एकसिद्ध, तथा अनेकसिद्ध हवे एनो अर्थ करेछे तीर्थ एटले जे चतुर्विध सघ अथवा प्रथम गणधर उत्पन्न थया पछी जे सिद्ध थया ते तीर्थसिद्ध, तीर्थनी उत्प

त्ति थया पहेला अथवा तीर्थनो विछेद थया पछी जे सिद्ध थया ते अतीर्थसिद्ध, तीर्थंकरपदवी जोगवीने जे सिद्ध थया ते तीर्थंकरसिद्ध; सामान्य केवली छतां जे सिद्ध थया ते अतीर्थंकरसिद्ध, बाह्य कारण दीठाविना जे पोतेज जातिस्मरणा दिकथी प्रतिबोध पामीने सिद्ध थया ते स्वयंबुद्धिसिद्ध; प्रत्येक बाह्य कारण वृ पन्नादि देखी प्रतिबोध पामीने जे सिद्ध थयाने ते प्रत्येकबुद्धिसिद्ध, बुद्धजे गुर्वादिकथकी बोध पामीने सिद्ध थया ते बुद्धबोधित्तसिद्ध. स्त्रीलिंगना त्रण प्रकार छे. वेद, शरीरनिवृत्ति, तथा पथ्य, ए त्रणमां अत्रे शरीरनिवृत्तिनो अधि कार लेवो. वेद तथा पथ्यनो अधिकार नथी. केमके, ए बे प्रकार मोक्षना अंग नथी माटे शरीरेकरी वर्त्तमान छतां जे सिद्ध थया ते स्त्रीलिंगसिद्ध; पुरुष शरीरे करी वर्त्तमान छतां जे सिद्ध थया ते पुरुपलिंगसिद्ध; नपुंसकलिंगे करी वर्त्तमान छतां जे सिद्ध थया ते नपुंसकलिंगसिद्ध; रजोहरणादिकस्वलिंगनेविषे व्यवस्थि त छतां जे सिद्ध थया ते स्वलिंगसिद्ध; परिव्राजकादिक चार अन्यलिंगनेविषे जे सिद्ध थया ते परलिंगसिद्ध; गृहस्थलिंगनेविषे वर्त्तमान छतां जे सिद्ध थया ते गृ हस्थलिंगसिद्ध; जे एकला सिद्ध थया ते एकसिद्ध; अने जे अनेकनी साथे सिद्ध थाय ते अनेकसिद्ध कहेवायछे. ए पंदर भेदमांना स्त्रीलिंगसिद्धने अभिनिवेशने वश थया थका दिगंबरीओ मानता नथी. ॥ १५७ ॥

तस्सम्मयथीसिद्धा, जे पुव्विं चेव खीणथीवेआ ॥
एवं पुरिस णपुंसा, थी पज्जाएण णो सिद्धी ॥१५८॥
चरणविरहेण हीण, त्तणेण पाव पयडीण बाहुल्ला ॥
मणपगरिसविरहाउ, संघयणाभावउ चेव ॥ १५९ ॥

व्या० ते दिगंबरीओनुं आवुं मत छे के, स्त्रीलिंगसिद्ध तो कहिये के जो पूर्वे स्त्रीवेदनो क्षय करी अने पछी बन्ने वेदनो क्षय करी सिद्ध थतां होय; तेमज न पुंसकसिद्ध पण तो मानिये के जो प्रथम नपुंसकवेदनो तथा पछी बन्ने वेदनो क्षय करी सिद्ध थता होय; शरीरे करितो पुरुषज सिद्ध थायछे; परंतु स्त्रीना प र्याये करी सिद्धताने पमातुं नथी. केमके स्त्रीने चारित्र होतुं नथी. चारित्र जे छे ते शुद्धोपयोगरूप आचेलक्यमूलगुणमयछे; अने स्त्रीतो अचेलक थायज नही. त था पुरुष थकी स्त्रीहीन होवाथी पण तेने सिद्धतानो संभव नथी. नपुंसकत्व तथा स्त्रीत्व महापापे करीने अर्जायछे, एम पापप्रकृतिनी बाहुल्यताने लीधे पण स्त्रीने

मुक्ति थाय नही तथा जेम स्त्रीने सातमी नरक पृथवीए जवायोग्य तीव्र नपरिणाम थता नथी, तेम मुक्ति पामवायोग्य तीव्र शुभमनपरिणाम पण थता नथी. माटे स्त्री सिद्ध थायज नही अने सातमी नरकपृथ्विए जवातु नथी, माटे तेने वज्रऋषभनाराच संघयण नही होवाथी पण ... सम्भव नथी ॥ १५८ ॥ १५९ ॥

एवी दिगंबरीओनी युक्तिने ग्रंथकर्त्ता दूषण दियेछे –

तम्हा वेयखउ, सरीरणिवत्ति णियमणियउत्ति ॥
चरणविरहाइआ पुण, सव्वे तुह होइओ सिद्धा ॥ १६० ॥

व्या० दिगंबरीओ स्त्रीसिद्धादिकना प्रसिद्ध अर्थने मूकीने जे अन्य अर्थ करे ते सम्भवित नथी केमके, जेने स्त्रीवेदादिकनो पूर्वेज क्षय छे, एवा नपुंसकादिक शरीरेकरी वर्त्तता श्रेणी करे तेनेविषे छे, माटे "वीसणपुंसगवेया" इत्यादिक शास्त्रवचन समर्थवाने अर्थे ए कल्पना केवल कदाग्रहरूप जणायछे, जो एम कहिये के, उदीर्ण वेदनोज पूर्वे क्षय करवो तो तेनेविषे पण शास्त्रोक्त व्यवस्था सम्भवे नही शास्त्रोमा तो एम कह्युछे के, जो पुरुष श्रेणिनो आरम्भ करे तो तवे पूर्वे नपुंसकवेदनो क्षय करवो, पछी स्त्रीवेदनो, पछी हास्यादिक छ प्रकृतिना अने पछी पुरुषवेदना त्रण खण्ड करी तेमाना बे खण्डनो एकवार क्षय करवो, अने त्रीजो खण्ड सञ्ज्वलन क्रोध मान खपाववो जो स्त्रीए क्षपकश्रेणिनो आरम्भ करवो होय तो तेणे पूर्वे नपुंसक वेदनो क्षय करवो, पछी पुरुष वेदनो, पछी हास्यादिक छ प्रकृतिनो अने छेवट स्त्रीवेदनो क्षय करवो जोये अने जो नपुंसके क्षपक श्रेणीनो आरम्भ करवो होय तो तेणे पूर्वे स्त्रीवेदनो क्षय करवो, पछी पुरुषवेदनो, पछी हास्यादिक छ प्रकृतिनो, अने सरसेवटे नपुंसकवेदनो क्षय करवो आदि इत्यादिक रीति जाणी लेवी ॥ १६० ॥

अ० स्त्रीलिंगे सिद्ध थवातु नथी, तेमां चारित्रविरहादिक जे हेतु कह्याछे, ते असिद्धछे, एम कहेछे –

णेगंति यमिछीणं, डुव्वत्त संजमो चिया लज्जा ॥
तासि चरित्तविरहे, चाउव्वणो कह सघो ॥ १६१ ॥

व्या० स्त्रीने चारित्र न होय तेमां कारण शु छे? स्त्रीनेविषे जे दुःशीलादिक दोषछे ते एकांत नथी, केमके, परमशीलवान जे सुशीलसादिक श्राविकाओ थईगइ छ

ढनी नगवंते पोते प्रशंसा करीने. वली स्त्री जेम केटलाएक पुरुष डुष्टछे तेम पण महारंन्न महापरिग्रही देखायछे, माटे स्त्रीनुं डुष्टत्व कांई एकांते नथी. जो कहेशो के, स्त्रीने लज्जा मटती नथी, माटे चारित्र थाय नही; एम पण न कहेवुं; केमके, नग्नताज चारित्रांग नथी, विधिए करीने धर्मोपकरणोनुं धारण करतां चारित्रनो नंग थतो नथी. जो कहेशो के, स्त्रीनुं शरीर हिंसायतन छे, माटे तेने हिंसा नथी; ए कहेवुं पण असत्यपणानुं छे. केमके, अशक्यपरिहारस्थलनेविषे हिंसा थाय नही. प्रमादना योगे हिंसा थाय छे, प्रमादनुं जे व्यपरोपण तेज हिंसा कहिये. वली जो स्त्रीने चारित्र न मानिये तो चार प्रकारनो संघ केम संनवे? जो वेषधारिणी श्राविकाज साध्वी कहिये तो चारित्र जाण्याविना जे वेषधारण करवुं ए तो मोटी विटंबना कहेवाय! जो कहेशो के, चारित्रलेश स्त्रीने थाय छे, तो तेमां अमे पण ना कहेता नथी, पण जो कहेशो के, स्त्रीने चारित्र मोक्षनुं कारण थाय नही तो ते कदाग्रह मात्र जाणवुं. केमके, अध्यवसायविशेषेकरी पुरुषनी पठे स्त्रीने पण चारित्रनो उत्कर्ष होयछे; एमां कांई विरोधता नथी. ॥ १६१ ॥

हीणत्तं पुण णाणं, लद्धिनड्ढिं बलं च अहिगिच्च ॥
णो पडिकूलमसिद्धं, तिरियणसारम्मि संतम्मि ॥ १६२ ॥

व्या० स्त्रीने जे पुरुषथी हीनपणुं कह्युंछे, ते जो विशिष्ट पूर्वज्ञाननी अपेक्षाए कहिये तो ते प्रतिकूल नथी, किंतु अनुकूलज छे. केमके, तथाविध ज्ञानविना पण गुरुपरतंत्रताए माषतुषादिक चारित्रना पालणार थयाछे. जो लब्धिनी अपेक्षाए कहिये तो पण प्रतिकूल नथी, किंतु अनुकूलज छे, केमके, तथाविध लब्धि विना पण मातुष्यादिक कृतकृत्य थयाछे; जो ऋद्धिनी अपेक्षाए कहिये तो पण प्रतिकूल नथी किंतु अनुकूलज छे. अन्यथा तीर्थंकरादिकनी अपेक्षाए अमहर्द्धिक गणधरादिक छे, तेने मुक्तिनो संनव केम थाय? स्त्री पुरुषने अवंद्य छे, माटे ते चारित्र ऋद्धिए करी हीन होवी जोये, एवी आशंका पण न करवी, अन्यथा शिष्यादिक आचार्यादिकने अवंद्य छे, तेपण चारित्रऋद्धिए करी हीन होवा जोये. जो बलनी अपेक्षा कहिये तो तेपण प्रतिकूल नथी, किंतु अनुकूलज छे, केमके, स्त्री करतां निर्बल जे पंगुप्रमुख ते पण अध्यवसायविशेषे मुक्ति पामेछे, जो कहेशो के. हीनबलने विशिष्टादिरूप चारित्र केम थाय! एमपण न कहेवुं. केमके. चारित्र ते यथाशक्ति आचरणारूप छे; माटे ते स्त्रीने पण संनवे छे. उक्तंच " वादिदि

कुर्वाणत्वादिलब्धिविरहे श्रुते कनीयसि च जिनकल्पमनःपर्ययविरहेपि न कि विरहोस्ती " एणेकरी अनुपस्थाप्यपारांचितक प्रायचित्तना अनुपदेशथी स्त्री ए हीनपणुंछे, ए असबद्ध जाणवु, केमके, योग्यतानी अपेक्षाए शास्त्रनेविषे चित्रतपनो उपदेश छे उक्तंच " संवरनिर्जरारूपो बहुप्रकारस्तपोविधिः शास्त्रे योगचिकित्साविधिरिव कस्यापि कथंचिदुपकारीति " ॥ १६२ ॥

पावाणं पयडीए थीणिवत्तीइ वधजणणीणं ॥
सम्मत्तेणेव पए णो तासि पावबहुलत्तं ॥ १६३ ॥

व्या० स्त्रीने जे पापनी बाहुल्यता कहीछे, ते वचन पण मिथ्याछे, केमके जे वारे स्त्रीपणुं बांध्युं छे, तेवारे यद्यपि बहुल पापप्रकृति मिथ्यात्वादिरूप हती तथापि ते प्रकृति जेवारे तथाभव्यत्वने परिपाके सम्यक्त गुण पामीने क्षय करी तेवारे स्त्रीने पापनी बाहुल्यता नथी जहांसुधी स्त्रीशरीर होय, तहांसुधी जो बंध वधकारण मिथ्यात्वादिक रहे तो स्त्रीए सम्यक्त पण न पाम्यु जोये जा कहे के, पुरुषथी तीव्र काम पण अध्यवसाय छे, माटे नपुंसकनी परे स्त्री मुक्ति पामे नही, एम पण न कहेवु केमके, तीव्र काम पण अध्यवसाय विशेष पामे माटे ते मुक्तिनेविषे विघ्नकारक नही होवाथी ए हेतु अप्रयोजक जाणवा अने स्त्री मुक्ति पामे केमके, ते नपुंसकथी हीनकामछे, माटे तेने पुरुषनी परे जा वी ए हेतु पण अत्रे लागु थायछे ॥ १६३ ॥

णय तासि मण विरिअं असुद्ध च सुद्ध विणेव उक्किट्ठं ॥
तम्मिणियमाभावा तेण हत्तं चरमदेहरुवि ॥ १६४ ॥

व्या० जो कहेशोके, जेम सातमी नरक पृथ्वीए जवायोग्य स्त्रीने अशुभ म नोवीर्य नथी, माटे तेने मुक्तिनेविषे जवानो पण तथाविध मनोवीर्य थाय नही एम कहेवु नही केमके, एवो नियम नथी, के, जेटला अधोगति जवानो अध्यव साय थाय तेटलोज ऊर्ध्वगति जवानो अध्यवसाय थाय केमके भुजपरी सर्प बीजी पृथ्वीसुधी उत्कर्षथी अधोगतिए जायछे, पक्षी त्रीजी पृथ्वीसुधी जायछे चतुष्पद चोथी पृथ्वीसुधी जायछे उरग पांचमी पृथ्वीसुधी जायछे स्त्री छठी नरक पृथ्वीसुधी जायछे, पुरुष अने मत्स्य सातमी नरक पृथ्वीसुधी जायछे ए स्त्री तथा पुरुषविना बीजा पूर्वोक्त सर्व प्राणीओ नरकथकी सहस्रार आठमां देवलोकसुधी उर्ध्वगमन करेछे एवी रीते यद्यपि स्त्री सातमी नर

थ्वीसुधी जती नथी, तथापि तेने मोक्षसुखनी प्राप्ति थायछे एमां कोई विरोध थी. केटलाएक कहेछे के. अधोगतिने परमोत्कर्ष होयछे. ते एकांततायी संभवे ही. केमके, जेवी कारणनी उत्कर्षता होय. तेवीज कार्यनी उत्कर्षता कहेवा छे; एवो नियमछे परंतु एथी अन्य कोइ नियम नथी. स्त्रीनेविषे जो युध्धादिक महारंभरूप कारणनो संभव होय. तो सातमी नरक पृथ्वीसुधी जवाय; तेवुं कोई कारण नही होवाने लीधे स्त्रीथकी त्यांसुधी जवातुं नथी, किंतु छठीसुधीज जवायछे; अने पुरुष तथा मत्स्यनेविषे तेवां कारण होवाथी तेओथी सातमीनरक पृथ्वीसुधी जवायछे. एवी रीते अधोगतिनेविषे जवासारू पुरुष अने स्त्रीना कारणोनी विलक्षणता होवाथी सरखुं गमन थतु नथी, परंतु ऊर्ध्वगतिनेविषे जवासारू बन्नेनां कारणो सरखां होवाथी सरखुं गमन थवानो अवश्य संभव छे. जेम पुरुषनेविषे शीलादिक गुणरूप ऊर्ध्वगमननां कारण होयछे तेम स्त्रीनेविषे पण होयछे. ए हेतुथीज स्त्रीने वज्रऋषभनाराचसंघयणनो संभव छे. एम न मानवामां कोई युक्ति नथी. ए प्रकारे स्त्रीना निर्वाणना निरोधनेविषे दिगंबरीओना हेतुनो निषेध कर्यो; हवे स्त्रीनो निर्वाण थवामां अनुमान कहेछेः—हरेक वस्तुना अनुमानमां पक्ष, साध्य, हेतु तथा दृष्टांत ए चार प्रकार होयछे. एटले ए चार पदार्थोए करी सिध्ध थएली वस्तुने अनुमित कहेछे; अने एचार पदार्थोए करी सिध्ध थवा योग्य वस्तुने अनुमेय कहेछे. जेम के, अग्नियुक्त पर्वत सिध्ध करवो होय. ते अनुमेय कहेवायछे; अने एज पक्ष कहेवायछे. अनुमान करती वखते "पर्वतमूपक्षीकृत्य, वन्हिमत्त्वसाध्यते, धूमत्वात् ऽतिहेतु . पाकगृहवत्, यत्रयत्रधूमः तत्रतत्र वन्हि." पर्वतनो पक्ष करीने तेने अग्नियुक्त सिध्ध करेछे; एमां हेतु पर्वतउपर नीकळतुं धूमाडुं छे, जेम रसोई करवाना गृहमां अग्नि होवाथी धूमाडुं नीकळेछे, केमके, ज्यां ज्यां धूमाडुं होय त्यां त्यां अग्नि होयछे. ए दृष्टांत छे. तेम "कांचित्स्त्रीव्यक्तिं पक्षीकृत्य, मोक्षाविकलकारणता साध्यते, दीक्षाधिकारत्वात्, पुरुषवत्, येये दीक्षाधिकारिण· ते ते मोक्षाविकलकारिणः" कोईएक स्त्रीनी व्यक्तीने पक्ष्य करीने तेने मोक्षना अविकलकारणवंत सिध्ध करेछे; एमां दीक्षानो अधिकार हेतु छे; अने पुरुषजातिनी पठे ए दृष्टांत छे. केमके जे जे दीक्षानो अधिकारी होय ते ते मोक्षना अविकलकारणवंत होयछे. ॥ १६४ ॥

कीवस्स कप्पिअस्स व इत्थीए कप्पिआइ सिद्धी वि ॥ ण
विणा विसिट्ठ चरिअ तासि तु विसिट्ठकम्मखओ ॥१६५॥
पाव तह इत्थित्तं णय पुण्णफलाण केवलीण हवे ॥ परमा
सुइभूआण णय परमोरालिअ देहो ॥ १६६ ॥

व्या० कोई आशंका करे के, जेम जातिनपुंसकने मुक्ति थाय नही तेम क्ली... पण मुक्ति थती नथी एम छता जो कहेशो के, जेम कृत्रिमनपुंसकने मुक्ति थायछे तेम त्रियाप्रयोगादिकेकरी युक्त स्त्रीने मुक्ति थायछे, तो तेम पण न संभवे, केमके, स्त्रीने विशिष्टक्रियानुष्ठान होतु नथी, विशिष्टक्रियानुष्ठानविना विशिष्ट... नो क्षय थाय नही अने विशिष्ट कर्मनो क्षय थयाविना मुक्ति थती नथी तथा स्त्रीपणु जे छे ते पापप्रकृतिरूप नदीनु करणु छे, ते पुण्यरूप सुरतरुना केवलज्ञा... नरूपफलने सेवन करनारा केवलीनेविषे केम संभवे' अर्थात् पापप्रकृतिरूप... ने केवल ज्ञान संभवे नही तथा स्त्री परम अशुचि छे तेने परमौदारिक शरीर पण संभवे नही केवलीनु शरीर तो परमौदारिक होयछे तेवु तो स्त्रीनु शरीर कहेवाय नही, माटे स्त्रीने केवल ज्ञान केम संभवे? ॥ १६५ ॥ १६६ ॥

अ० ए आशंकाने युक्तिवडे दूषित करेछे –

एय मयुत्त जम्हा विचित्तभावा विचित्तकम्मखओ ॥ ण
य इत्थि भाव जिणाण पाए णाण ठित्ति ॥ १६७ ॥

व्या० स्त्रीने क्रियाविशिष्टविना विशिष्ट निर्जरा न थाय एम जे वादिए कह्यु ते अयुक्त छे केमके, भावविशेषे फलविशेषछे क्रियाविशेषविना भावविशेष न थाय, एमां एकांतता नथी केमके, जो शक्तिना निग्रह करीने क्रिया करिये तो भावनी हानि थायछे, अन्यथा भावनी हानि थती नथी तयाली पणु प... प छे, एमां पण एकांतता नथी, केमके, सम्यक्त्वना बंधथी मिथ्यात्वादिक पाप... क्षय थायछे एम पूर्वसूरी आप्या छये वणुकरीने तीर्थंकरनेविषे स्त्रीपणु न... होतु, एटले बहुधा स्त्री तीर्थंकर थती दीठामा आवती नथी तेथी स्त्रीपणु पाप... छे एम जो कहिये तो विमलादिक पण तेवाज कहेवा जोये केमके बहु... तीर्थंकरनेविषे विमलादिकना पण अभाव होयछे अर्थात् घणुकरीने क्षत्रि... तीर्थंकर थएना दीठामा आवेछे तेथी शु विप्रादिकने मोक्षना संभव न...

थी अने परमौदारिक शरीरनो तो पूर्वेज निषेध कस्योछे, माटे ते होय के न होय तेनी शासारू चर्चा करवी ! ॥ १६७ ॥

इय इत्थीणं सिद्धी सिद्धा सिद्धंतमूलजुत्तीहिं ॥ इअं
असद्दहंता चिक्कणकम्मा मुणेअव्वा ॥ १६८ ॥

व्या० एवी रीते सिद्धांतमूलयुक्तिउए करीने स्त्रीने मुक्ति थायछे एवुं सिद्ध कर्युं तेम छतां जे हवेकरीने ए अर्थनी सद्दहणा करता नथी, ते चिकणा कर्मवाला जाणवा. एवा प्रकारे स्त्रीनेविषे मुक्तिनी व्यवस्थापन कस्याथी सिद्धना पंदर भेदनी व्यवस्था थई तेथी सप्रसंग सर्व सिद्धनुं स्वरूप कह्यु. सिद्धस्वरूपना वर्णनथी परम भावाध्यात्मनुं निरूपण थयुं अने भावाध्यात्मना निरूपणथी ग्रंथार्थ पूर्ण थयो. १६८

अ० हवे ग्रंथार्थनुं परम रहस्य कहेछेः—

इयं परमरहस्सं एसो अप्पकणगकसवट्टो ॥ एसा
य परा आणा संयमजोगेसु जो जत्तो ॥ १६९ ॥

व्या० संयमयोगनो जे उद्यम करवो, तेज सर्व शास्त्रना नयविस्तार जाणवानुं फल छे; अने एज परम रहस्यभूत छे. यतः "सव्वेसिं पिण याणं, बहुविहवत्तव्व यंणि सामित्ता, न सव्वणयविसुद्धं, जं चरणगुणछिउ साहू." इत्यावश्यकादौ. तथा आश्रवो भवहेतुःस्यात् संवरो मोक्षकारणं; इतीयमार्हती मुष्टि, रदनस्याप्रपंचनम्; एनो अर्थ – प्राणातिपातादिक जे आश्रव छे, ते संसारनुं कारणछे. प्राणातिपातादिकथकी विरमवारूप जे संवर ते मोक्षनुं कारण छे; ए परमार्थने विस्तारेकरी जाणवासारूज सर्व शास्त्र छे. माटे जेणे ए अर्थ जाण्यो छे ते परमार्थताथी सर्व शास्त्रज्ञ छे एम जाणवुं. अतएव उपशम विवेक संवर ए पदनो अर्थ जाणीने चिलातीपुत्रे निजअर्थ साध्यो. तथा संयमयोगनो जे उद्यम करवो तेज अध्यात्मरूप सोनानी कसोटी छे; जेम कसोटीए करी सोनानी परीक्षा थायछे, तेम क्रियानुष्ठाने करी अध्यात्मनी परीक्षा थायछे. ते अध्यात्मेकरी जे विशुद्धि थायछे, ते बाह्यकारणनुं आलस्य करे नही. यतः "संयमयोगेसु सया, जे पुण संत विरिआ विसीयंति; कहते विसुद्धचरणा, बाहिरकरणालसा हुंति." इत्यावश्यके. तथा एज श्री वीतरागनी परमआज्ञा छे के, संयमयोगनेविषे यत्न करवो. जेणे ए यत्न कस्यो, तेणे चैत्य कुल गणादिक सर्वनुं कार्य कर्युं, एम जाणवुं. यतः "चेइअ कुल गण संघे, आयरिआणं च पवयणसुए अ; सव्वेसु वि तेण कयं, तव संयममुज्जमंतो

अ० कोईक कहेशे के, ज्यां सुधी जीवने नव्यत्वनो संदेह होय त्यांसुधी त्रनेविषे ते केम प्रवृत्ते ? केमके, अनव्य अनेक क्रियाकरें तेथी तेने परतु परमार्थथी तेने कोई फलनी प्राप्ति थती नथी, एवुं समाधान करेछे -

आसन्नसिद्धिआए जीवाणं लक्कण इम चेव ॥
तेण ण पवित्तिरोहो नवानवत्तसकाए ॥ १७० ॥

व्या० जे जीव थोडा नवे मुक्ति पामनार होय तेनु एज लक्षणछे के, यनेविषे वैराग्य धारण करीने धर्ममा प्रवृत्ते यत "आसन्नकालनवसि, जीवस्स लक्कण इणमो, विसयसुहेसु ण रज्जइ, सव्वथामेण उज्जमई" ४८ लाया माटे चारित्रनेविषे प्रवृत्ति थाय, त्यारे जीवे पोताने आसन्नसिद्धकपणु अ एवुकहेवाय, पठी ते नव्यानव्यत्वनी शकाएकरी शुभप्रवृत्तिनो वाधक केम थाय किंतु साधकज थाय अने हुं नव्यछु के अनव्यछु ? एवी जेने शका उत्पन्न थायछे ते जीव निश्चये करीने नव्यज जाणवो यत "अनव्यस्यहि नव्य न अनावादित्याचारागटीकाया" ए आशका तो उलटी चारित्रप्रवृत्तिनो अगछे, माटे तेथी काइ वाधा थती नथी ॥ १७० ॥

अ० केटलाएक परवादी एम कहेछे के, मोक्षोपायनेविषे प्रवृत्ति थायछे, ते वैराग्य अनुक्तनोगनेविषे सनवेछे, माटे नोगनोगव्या पठी तेना करीने जो योगमां प्रवृत्ति करिये तो ते सुखथी थई शकेछे, एम कहेनाराने ने अर्थ कहेछे –

जो पुण नोए नोत्तु इच्छेइ ततो अ संयम काउ ॥ ज
लणम्मि पज्जलित्ता इच्छइ पच्छा सणिव्वाउ ॥ १७१ ॥

व्या० जे पुरुष नोग नागवीने पठी सयम पालवानी इच्छा करेछे, ते इच्छा थम अग्निमा पक्षी वलीने पठी शीतलता पामवानी पठे छे केमके, नोग नव्याथी तेनी इच्छा मटती नथी, किंतु अधिक थायछे यत "नजातु काम मानाः, मुपनोगेन शाम्यति, हविषा कृष्णवर्त्मे व, पुनरेव प्रवर्द्धते" जे सुख व नोगवेछे, ते सुख यद्यपि अनंतवार नोगवाई गया छे, तथापि मार्दनत मना दोषने लीधे एम नासेछे के, में ए सुख पूर्वे कोई समयनेविषे नोगव्यां नथी यत "पत्ता य कामनोगा, कालमणतं इह स उवनोगो, अपुव्व पिव मन्नई हरिय जीवो मणे सुरकं" इत्युपदेशमालायां ॥ १७१ ॥

अ० वळी जोगनेविषे प्रवृत्ति करतां एवो संदेह रहेछे के रखेने जोगनो नाश थई जाय; ते योग्य छे. केमके, जोग स्थिर नथी, किंतु अस्थिर छे. अथवा जोग जोगवतां आयुष्यनो अंत आवी जाय तो पण जोग जोगवाता नथी. एवा जोग जोगववानेविषे प्रवृत्ति थतां अविरति जीवने प्रतिक्षणे कर्मबंध थायछे. एमां रंचमात्र संशय नथी. माटे जे विवेकी पुरुष छे ते स्वप्ननेविषे पण जोगनेविषे प्रवृत्तिनी अभिलाषा करता नथी. एवो उपदेश करेछे. ॥ १७१ ॥

कोवा जिअवीसासो विज्जुलया चंचलम्मि आउम्मि ॥
सज्जो णिरुज्झमो जइ जराभिभूउ कहं होही ॥ १७२ ॥

व्या० हे जीव, तने जीवितव्यनो शो विश्वास छे? केमके, जेम विजळीनी लता एटले झात्कार क्षणभंगुर छे, एटले क्षणमा देखाय छे ने क्षणमां नाश थई जायछे, तेम जीवितव्य एकक्षणमां प्रत्यक्ष देखातो छतां कोई रोगादिकना उदयथी बीजी क्षणमां नाश थतां वार लागती नथी माटे ज्यांसुधी शरीर निरोगी छे त्यांसुधी जो तूं धर्मकार्य करीश तो करी शकीश. ॥ १७२ ॥

अ० कोई कहेशे के, जो जीव रोगेकरीने ग्रस्त्रेलो होय, अथवा कायबळेकरी हीण थएलो होय, ते चारित्र मार्गनेविषे केम प्रवृत्ति करी शके, तेने उत्तर दियेछे

देहबलं जइ ण हवइ तहवि मणोधिइबलेण जइअवं ॥
तिसिउ पत्ताभावे करेण किं णो जलं पिबई ॥ १७३ ॥

व्या० जो रोगादिकें करी शरीर निर्बल थई गयुं होय तो मनबुद्ध्यादिकना बळे करीने योग धारण करवो. जेम पुरुषने ज्यारे तृषा लागेछे त्यारे तेनीपासे जो पाणी पीवानुं पात्र न होय तो हाथेकरी पाणी पीएछे: पण तरस्यो रहेतो नथी. तेम तथाविध कायबळ न छतां पण जेने मोक्षनी अभिलाषा होय तेणे मनोबळेकरी योगमार्गनेविषे प्रवृत्ति करवी ॥ १७३ ॥

अ० जे पुरुष बळना समयनी शोचनाएकरी बळरहितसमयमां भविष्यकाळ उपर भरोसो राखी आळस करीने बेशी रहे ते अति दुःख पामेछे; एम कहेछे.

बलकालसोअणाए अलसा चिठंति जे अकयपुन्ना ॥
ते पछिता वि लह सोअंति मुढं अपावंता ॥ १७४ ॥
जह णाम कोइ पुरिसो ण धनहा णिस्सणो वि उज्जमइ ॥
मोहाइ पछणाए सो पुण मोएइ अप्पाणं ॥ १७५ ॥

व्या० जे पुरुष एवी शोचना करे के, हमणा मारामां वज नथी, माटे आगल धर्माचरण करीश. अथवा हमणा मारो अवसर नथी, माटे आगल जतां धर्माचरण करीश. एम जाणीने आलस करी बेशी रहे ते अकृतपुण्य थका आगल धर्मप्रार्थना कयाथी पण पुण्यविना सुखने पामे नही, त्यारे घणो शोच करेछे. अथ कोइ निर्धन पुरुष प्रथम आलस करीने धन अर्जवानो उद्यमन करे ने पछी गाढी इछा करीने धनविना दुःखने पामेछे त्यारे पोताना आत्मानेविषे घणाज शोच करेछे माटे प्राप्त थएलो धर्म मूकीने आगल धर्मप्रार्थना करीये तो ग्रानी प्रार्थना कहेवाय यत "लद्धिल्लिय च बोहि, अकिरंतो णागयगपछित्तो, आणगाइ बाहि, लप्नसि कयरेण मुल्लेण" ॥ १७४ ॥ १७५ ॥ अ० कोई कहेशे के, पापनी निंदाथीज पाप टलेछे, त्यारे विशेष अनुष्ठान करवानु कारण शु ? एविषे कहेछे-

जो पाव गरहतो तं चेव णिसेवए पुणो पाव ॥ तस्स
गरहा वि मिछा अतक्कारो हि मिछत्तं ॥ १७६ ॥

व्या० जे पाप करी मिछामि डुक्कड दईने फरी पाप करे तेनी पापनिंदा मिथ्या छे केमके, जेवु बोलिए तेवु जो पालिए नही तो तेज मिथ्यात्व छे यत "जो जह वायण कुणई, मिछद्दिट्ठी तउंदुको अन्नो, वड्ढेइ अमिछत्त, परस्स सकं जणे माणो" इत्युपदेशमालाया हवे मिछामि डुक्कड ए शब्दनो अर्थ कहेछे -मि कहेता कायाथी तथा नावथी मृदु थइ, छा कहेता असयमरूप दोषनु अछादन करीने, मि कहेता चारित्रनी मर्यादामा रह्यो थको, डु कहेता दुष्कृत कार्यनो करनार जे आत्मा तेने दु निंदवु, क कहेता में जे पाप कयाछे, तेनु ड कहेता उपशम पामीने उल्लंघन करवु एवो अर्थ जाणीने मिछामि डुक्कड दीधा पछी फरी पाप न करवु, ते पापनी साची निंदा कहेवायछे तेम न करता पछी जे पाप करवु तेथी तो उलटु माया मृषावादादि पाप लागेछे यत "ज डुक्कडति मिछा। तं चेव णिसेवए पुणो पाव, पच्चक्खमुसावाई, मायानिवडी पसंगोय" इति ॥ १७६ ॥

अ० ए कारण माटे चारित्र लईने जो ते सारा नावथी पालिए तोज तथी महाफलनी प्राप्ति थायछे, अन्यथा आजीविकाने अर्थे चारित्र लीधा करतां गृहस्थधर्मज सारो छे एम कहेछे

चुअधम्माउ मुणिणो सुठुअर किर सुसावगत्त पि ॥ प
डिअ पि फल सेय तरुपडणाउं णच्चपि ॥ १७७ ॥

व्या० वेषधारी चारित्ररहित जे सु श्रावक छे, ते अरिहंतनी पूजा करे, सुसा
धुनी सेवा करे, ब्रह्मचारीपणुं पाळे. इत्यादिक धर्माचरण करेछे, अने जे चारित्र वेष
धारी होय ते गृही धर्म तथा यतिधर्म ए बन्नेथी भ्रष्ट थायछे. उक्तंच "छज्जीव
णिकायदया. विवज्जिउणेव दिक्खिउ ण गिही; जइधम्माउ चुक्को, चुक्कइ गिहदाण
धम्माउ; इत्युपदेशमालायां. वेषधारी चारित्रियाने मूलगुणविना तपथी पण ते
टुं फल थतुं नथी. उक्तंच "महव्वय अणुव्वयाइ, छ डेउं जो तवं चरइअाणं,
सो अन्नाणी मूढो, नावाबुड्डो मुणेअव्वो." माटे केवल वेषधारी करतां गृही
धर्म सारो छे. दृष्टांत:– फलनी अभिलाषाथी वृक्ष उपर चढी, फल मेलव्यावि
ना पडी न जतां ते फल मेलवाई शकाय तो सारुं, पण जो फलनी प्राप्ति न थ
तां नीचे पडी जवाय तो उलटुं शरीरने लागे तेथी दुःखनी प्राप्ति थाय. तेना क
रतां वृक्षनी नीचे बेसीनेज पडेलुं फल ग्रहण करिये ते सारुं ॥ १७७ ॥

संयमयोगे अप्पु, ठिअस्स संचत्तवज्जजोगस्स ॥ ण प
रेण किंचि कज्जं आयसहावेण चिठस्स ॥ १७८ ॥

व्या० संयमना योगे जे आनंद थायछे ते केवल आत्मस्वभावनेविषेज अव
स्थित छे. तेने परनुं शुं काम छे! माटे जेने चारित्त परिणम्युं होय, तेणे सर्व प
रप्रतिबंध मूकीने आत्मद्रव्यमात्रना प्रतिबंधे प्रवर्तवुं ॥ १७८ ॥ अ० एक आत्म
द्रव्यमात्रनेविषे प्रवर्त्याथी बीजाने उपदेश केम देवाशे, एविषे कहेछे.

संविग्गो गीयत्थो बोहेउ परंपराइ करुणाए ॥ अन्नो
पुण तुसणीउ पुव्वं बोहेउ अप्पाणं ॥ १७९ ॥

व्या० जे महानुभावी संवेगी गीतार्थ होयछे, ते पोते तो कृतकृत्य होयछे, प
रंतु बीजानी उपर परम करुणाए करीने तेने प्रतिबोध करे तो तेथीते महाफलदाई
छे. परंतु जे एवो न होय तेणे बीजाने उपदेश करवानुं मांडीवालीने प्रथम पोताना
आत्मानेज बोध करवो जोयेछे. जे पोते प्रतिबोध पाम्या विना बीजाने प्रतिबोध
करेछे ते केवल नाटकीआनी पठे नाटक करी देखाडनारोछे एम जाणवुं. ॥ १७९॥
अ० एवी रीते ज्यारे परप्रतिबंध सारो नथी, किंतु एकाकीपणुंज सारुं छे,
माटे गच्छ पण प्रतिबंधरूपज छे, एम जे जाणेछे तेनो संदेह मटाडवाने अर्थे कहेछे

दव्वेण जो अणेगो गछे सो भावउ हवे एगो ॥ एगागी
गीउच्चिय कयाइ दव्वेअ भावेअ ॥ १८० ॥

व्या० गच्छमां रहतां द्रव्यथी जे अनेकता थायछे, तेज नावथी एकता थायछे अ न्यथा गुर्वाज्ञादिक अंकुशविना चित्तरूप हस्ति संसाररूप वनमां फरतां एकत्व नारूप वेलीनुं उन्मूलन करी नाखे अतएव नगवते "एकस्स अत्थि धम्मो", दिक प्रबंधे करी एकाकी विहारनो निषेध कर्योछे श्रीदशवैकालिक ण आम कह्युछे "नया लनिज्जा निउणं सहायं गुणाहिअं वा गुणओ समं वा, इक्कोवि पावाइ विवज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो" आ गाथामां कह्युछे के, ज्यारे पोताथकी अधिक गुणवालो अथवा समान गुणवालो प्राप्त नही, त्यारे एकाकी विहार करवो, ते गीतार्थ आश्री जाणवुं केमके, ते पापने वर्जीने कामनेविषे असंग करेछे माटे तेने एम कह्युछे अने अगीतार्थ तो गीतार्थनी निश्राविना पाप वर्जी शके नही तेम कामासंगपणुं वारी शके नहीं अतएव "गीयत्थो अ विहारो, बीओ गीयत्थ मीसिओ नणिओ॥ इत्तो तइअ वि हारो, नाणुन्नाओ जिणवरेहिं" ए गाथामा खुल्लीरीते अगीतार्थने एकाकी वि हारनो निषेध कर्योछे माटे गच्छमां रही, गुरुकुलवास सेवी, ज्ञानादिकनो अभ्या स करी, अने साधुसंग छतां पण अंतरंग निर्लेप रहीने जो अध्यात्मनावना नाविये तो परमानंदनी प्राप्ति थायछे ॥ १८० ॥

किं बहुणा इह जह जह रागद्दोसा लहु विलिज्जंति ॥ त

ह तह पयट्टिअव्वं एसा आणा जिणंदाणं ॥ १८१ ॥

व्या० घणुं शुं कहिये, जेजे प्रकारे रागद्वेष विलय थाय तेवी रीते प्रवर्तवुं ए ज श्रीवीतरागदेवनी आज्ञा छे ॥ १८१ ॥

अत्तप्पमयपरिक्खा एसा जुत्तीहिं पूरिया जुत्ता॥ सोहिं

तु पसायपरा तं गीयत्था विसेसं विऊ ॥ १८२ ॥

व्या० आ अध्यात्ममतपरिक्षा युक्तिएकरी पूरी कीधी, तद्रूप जे आ ग्रंथछे तेनु विशेषज्ञ जेगीतार्थ छे ते मजउपर कृपा करीने शोधन करो ए विज्ञापनाछे ॥१॥

शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं ॥ यस्यासन् गुरवोऽत्र जीतविजयप्राज्ञाः प्रकृष्टाशया भ्राजंते सनयानयादि विजयप्राज्ञाश्च विद्याप्रदाः ॥ प्रेम्णा यस्यच सद्म पद्म वि जयो जातः सुधीः सोदरः सोयं तत्वमिदं यशोविजयइत्याख्याभृदाख्यातवान् ॥ १॥

इति पंमित यशोविजयजी उपाध्यायकृत श्री अ ध्यात्ममतपरीक्षाग्रंथो बालावबोधसहित समाप्त

ॐ श्रीजिनायनम·

अथ श्रीसमयसार नाटक बनारसीदास कृत गुजराती भाषामां अर्थ सहित प्रारंभः

उपोद्घात.

आ ग्रंथनी दिगंबरी बनारसीदासे शुद्ध हिंदुस्थानी भाषामां पद्यात्मक ग्रंथरुप रचना करीछे. ए ग्रंथकर्ता पोते महापंडित तथा कवीश्वर होवाथी विविध प्रकारनी छंदरचना करीने तेणे पोतानी श्रेष्ट कृति देखाडी आपीछे. पदलालित्यता तथा अर्थ गौरवताविक जे काव्यना सारा गुण वर्णन कर्याछे, ते आ ग्रंथनी कवितामां सारी रीते दीठामां आवेछे अलंकारवडे कविता सारीरीते भूषित करीछे. आ ग्रंथ अध्यात्मिक विषयवालो होवाथी आमां मात्र शांत रसज मुख्यछे पण प्रसंगानुसारे बाकीना रस पण कचित दीठामां आवेछे. जोपण आ ग्रंथ उपर कह्या प्रमाणे नन्हवादिकमां गणायला दिगंबरीनो रचेलोछे, तोपण एनो विषय आध्यात्मिक होवाथी ते सर्वने उपयोगीछे; माटे आ पुस्तकमां अमे राख्योछे. ए ग्रंथनी व्याख्या कोई रुपचंदजी नामना पंडिते करीछे, ते पण हिंदुस्थानी भाषामां होवाथी सर्व जनने समज्यामां आवे नही, माटे तेनो आश्रय लईने अमे गुजराती भाषामा व्याख्या करी छे. व्याख्या करतांए आदिमां मंगलाचरणनो दोहरो कर्योछे ते आप्रमाणे –

दोहाः– श्रीजिन वचन समुद्रको, कौंलगि होइ बखान; रुपचंद तौहू लिखे, अपनी मति अनुमान. ॥ १ ॥

अर्थ –व्याख्याकर्त्ता रुपचंदजी कहेछे के, श्री जिनवचनरुप समुद्रनो कहांसुधी व्याख्यान थाय, तोपण हुं मारी मतीने अनुमाने लखी जणावुंछुं. ॥ १ ॥

हवे ग्रंथकर्त्ता आरंभमां मंगलाचरणरुप श्रीपार्श्वनाथ स्वामीनी स्तुति करेछे.

कवित्त, इकतीसासर्व ह्स्वाक्षरः– करम भरम जग तिमिर हरन खग, उरग लखन पग शिव मग दरसि; निरखत नयन भविक जल बरखत, हरखत अमितभविक जन सरसि; मदन कदन जित परम धरम हित, सुमिरत भगत भग

तसत्र मरति, सजल जलद तन मुकुट सपत फन, कमठ दलन
वनरसि ॥ १ ॥

अर्थ – जगतमा जे आठ कर्मरूप तिमिर एटले अंधकारने
करवाने खग एटले सूर्यरूप छे जेना चरणनेविषे सर्पनु चिन्ह छे
मार्गने देखाडनारा छे जेनेनेत्रे करी निरखता कल्याणरूप जन
करी अमित के० प्रमाणविना भव्यलोकरूप सरोवर महा हर्षने
जेमाटे कामदेवना क्षय करनार छे, अने जेनु उत्कृष्ट सहज सुखरूप धर्म
ते नाशी जायछे जेनु शरीर जलसहित मेघना जेवु नीलवर्ण छे जेना मुकुट
सात फण छे जेणे कमठ नामे असुरनु मान भजन कर्युछे एवा जिनेंद्र
र्श्वनाथ भगवान, तेने बनारसीदास नमस्कार करेछे ॥ १ ॥

फरीथी विशेषे श्री पार्श्वनाथ स्वामीनी स्तुति करेछे
सर्व लघु स्वरात अक्षर युक्त छप्पय छंद एने चित्रकाव्य पण कहेछे –
करम खल दलन, कमठ सठ पवन कनक नग, धवल परम पद रमन, जगत
न अमल कमल खग, पर मत जलधर पवन, सजल घन सम तन समकर,
अघ रज हर जलद, सकल जन नत भव भय हर, यम दलन नरक
छय करन, अगम अतट भव जल तरन, वर सबल मदन वन हर
जय जय परम अभय करन ॥ २ ॥

अर्थ – सर्व कर्मरूप खलके० दुष्ट वैरीने दलवा वाला छो कमठ नामना
हा मूर्ख असुर तेरूप पवन आगल मेरु पर्वतनी पर अमग छो धवलके०
ल सिद्ध स्थानकनेविषे रमनारा छो जगतना लोकारूपी उज्वल कमलने
अर करवानेअर्थे खगके० सूर्य जेवा छो एकात नय वादी जे पर मत तेरूप
ने मटाडवाने अर्थे पवनना जेवा छो जल सहित मेघ घटाना जेवा श्याम
नो शरीर छे समकरके० उपशमना करनार छो परके० शत्रुरूप अगर०
रजने हरण करवाने मेघ जेवा छो जेने सकल लोक नमे छे अर्थात् त्रिभुवन
ज्य छो जन्म मरणरूप जे भव भय तेने हरण करनार छो नारकाना
जगवाना छो भव्य प्राणीओने नरक पडना क्षय करनार छो अगम
पार अने अतटके० अपार एवो जे ससाररूप समुद्र तेन तरवाना
दाराामा वरके० प्रधान अने बलवान जे कंदर्पवन, तेने बालवान

ोत्रनी अग्नि जेवा हे नगवान तमे जयवंता थाओ. वली तमे परम अनय पद ना करनार गे, एटले नय नंजन गे. ॥ १ ॥ आ ठप्पय छंद वडे परमेश्वरनी महिमानुं वर्णन कर्युं. अने पोतानुं काव्य चातुर्य दर्शाव्युं छे.

आ ग्रंथना कर्त्ता बनारसीदास कहेछे के जेना प्रसादथी परगसेन पितानें घेर मारुं जन्म थयुं एवो हुं श्री पार्श्वनाथ नगवाननी स्तुति करुंछुं.

सवैया इकतीसाः— जिन्हके वचन उर धारत जुगल नाग, नये धरनिंद पद्मावति पलकमें; जाके नाम महिमासों कुधातु कनक करे, पारस पाषान नामी नयो है खलकमें; जिनकी जनमपुरी नामके प्रनाव हम, अपनो स्वरूप लख्यो नानसो नलकमें; तेई प्रनु पारस महारसके दाता अब, दीजे मोहि साता दृग लीलाके ललकमें.॥ २ ॥

अर्थ.— ज्यारे श्री पार्श्वनाथ नगवाननी कुमारावस्थाहती त्यारे कोई एक समये श्री बनारसी नगरीविषे एक तापसीनी साथे अज्ञानतपश्चर्यानी निर्नत्र्सना पूर्वक वाद थयो, ते प्रसंगे ते तापसीनी धूणीमानां लाकडांमां नाग छे एवी रीते श्री पार्श्वनाथ नगवाने कह्युं, ते वातने पेला तापसीए गणकारी नही, तेथी ते लाकडांफोमीने ते नागने बाहेर कहाड्यो; पण ते अधबल्यो थयो हतो तेथी तरफडवा लाग्यो, तेना अंतना समयमां श्री पार्श्वनाथ नगवाने तेने "ॐ अर्हते नमः" ए मंत्र संनलाव्यो. ते वचन तेणे सारी रीते हृदयमां धारी लीधुं. एटलामां तेना शरीरनी शांति थई गई. तेना अंतना सारा परिणामोने लीधे ते धरणेंद्र थयो. तेनी स्त्री पद्मावती हती; ए कथा श्री पार्श्वनाथ चरित्रमां प्रसिद्ध छे. ते अद्भुत महिमाने दर्शावतां छतां ग्रंथकर्त्ता उपमा अलंकारवडे पारसमणि अने श्री पार्श्वनाथना ए गुणनी सादृश्यता देखाडेछे.—

जेना वचन हृदयनेविषे धारण करीने नाग अने नागणी ए बन्ने पलकमां धरणेंद्र अने पद्मावतीरूपे थया. आंही नाग अने नागणी कहेवाथी दिगंबरीनुं मत जाणवुं. श्वेतांबरी तो एक नाग नेज कहेछे. वली पार्श्वपाषान खलक एटले दुनियामां प्रसिद्ध छे एटले पारस मणी नामना पाषाणनुं स्पर्श थतांज लोखंड नामनी कुधातुं सोनुं थायछे. तो ए पाषाणमां एवी महिमां क्यांथी उत्पन्न थई? तेनुं उत्तर कहेछे.— पार्श्व एवु नाम श्री पार्श्वनाथनें तुल्य छे. तेनी महिमा थकी एटले मात्र पार्श्व एवुं नाम छे ते नामनीज महिमांथकीने पार्श्वरूप पाषाणमां एवो गुण थयोछे. वली जेनी जन्म पुरीनुं नाम बनारसी नगरी छे. अने ग्रंथकर्त्ता पण

छे के, मारुं नाम पण बनारसी हु पाम्यो ते मात्र नामना प्रनावथी मे
त्मस्वरूप जाणी लीधुं ते केवी रीतें जेम प्रनात समयमां सूर्य पोताना
मां स्वछ प्रकाशे छे, तेनीपरे मारु रुप पण प्रकाशी रह्यु छे ए पण श्री
थ नगवाननी महिमानो प्रताप छे तेज श्री पार्श्वनाथ नगवान महा
देवावाला छे, ते हवे दृग लीलाकी ललकमेंके० थाव मीचीने उघाडीए श्र
क पलक मात्रनी सत्तामा मुजने आत्म समाधिरूप शाता आपो एथी नि
खनी सूचना करी छे ॥ ३ ॥

सिद्ध नगवाननी स्तुति करेछे –

अडिल्ल छंद –अविनाशी अविकार, परम रसधाम है, समाधान सर्व
हज अनिराम है, शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनंत है, जगत शिरोमणि सि
सदा जयवंत है ॥ ४ ॥

अर्थ – जेनो विनाश नथी, अने जेने कोई विकार लागे नही एवो परम
एटले कोई केवलीगम्य जे सहजानंद उत्कृष्ट सातरस, तेना जे धाम एटले
छे, माटे सरवगने विषे सहजनी जे अनंत सुखरूप समाधी तेणेकरी
राम एटले अति मनोज्ञछे चौदराजलोकनी उपर विराजमान होवाथी
थी रहित शुद्धछे सर्वज्ञता पाम्याथी बुद्ध छे अने सर्वना ईश्वर माटे अविरु
एहवी अवस्थाए करी ते अनादि अनंत छे अने चउद राजलोकना
जमान छे तेथी जगतना शिरोमणि छे एवा जे श्रीसिद्ध नगवान ते सर्वां
जयवंत पाम्यो ॥ ४ ॥

साधुरूप नगवाननी स्तुति करेछे –

सवैया इकतिसा –ज्ञानके उजागर सहज सुख सागर सुगुण रतनागर
रस नर्यो है मरनकी रीत हरै मरनको नै न करै करनसो पीठ दे चरण अनु
है, धरमको मंडन नरमको विहंडन सु, परम नरम व्हे के करमसो नर्यो है,
ऐसो मुनिराज नुव लोकमें विराजमान निरखि बनारसी नमसकार कर्यो है
अर्थ – जे ज्ञाननो उद्योत करनार छे आत्मद्रव्यनु जे सहजसुख
समुद्र छे अने सुगुनजे ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप रत्नत्रयीना आकर
राण छे पांच इंद्रियाना विषयनेविषे जे वैराग्य
एटले कांई परिग्रह आदीने मातपिताथी गृहस्थनीपरे
वर्तमान आत्मद्रव्य जाणीने जेणे मरणना नयमुकी दीधा छे

ठ आपी तेना विषयोथी विमुख थयाथकी जे चारित्रने अनुसर्या ठे; वळी जेनो आश्रय लेवाथी धर्मपदार्थ विराजमान थाय माटे धर्मना मंमन करनाराठे. मिथ्यामतिरूप जे नरम तेनुं विशेषेकरीने जे खंमन करनारा ठे; जे परम दयावान ठईने कर्मोनीसाथे युद्ध करेठे दयावानने युद्धकरवुं संनवे नही तेम ठतां कह्युं ते माटे विरोधालंकार जाणी लेवो. एवी विशेषताने धारे जे मुनिराज एटले ऋषीश्वर चुअलोकमां पिसतालीश लाख मनुष्य क्षेत्रनेविषे विराजमान ठे तेने हृदय कमलथी जोईने बनारसीदास नमस्कार करेठे. ॥ ५ ॥

हवे पांच अनुव्रत लीधा ठे जेमणे एवा समकितीनी स्तुति करेठे.

सवैया तेईसाः— नेद विज्ञान जग्यो जिनके घट, शीतल चित्त नयो जिम चंदन; केलि करै शिव मारगमें जगमाहि जिनेश्वरके लघु नंदन; सत्य स्वरूप सदा जिन्हके प्रगटयो अवदात मिथ्यात निकंदन; संत दशा तिन्हके पहिचान करै कर जोरि बनारसि वंदन. ॥ ६ ॥

अर्थ.—जे मंदबुद्धि ठे ते जीव अने शरीरने एक करी जाणेठे; नेद जाणता नथी. पण जेणे समकित पाम्यो ठे, तेना हृदयमां जड अने चेतननुं भिन्न भिन्न ज्ञान थयुं ठे; एवुं तेने नेदविज्ञान जागृत थयो, तेथी तेनुं चित्त चंदननी पठे शीतल थयुं ठे. जे मुक्ति मारगमां केलि करे एटले खेल करी रह्या ठे; आ जगतमां श्री जिनेश्वरना जे न्हाना पुत्रठे. अने साधुजे ठे ते सर्वज्ञपुत्र कहेवायठे माटे ते मोटा पुत्र ठे. वळी आत्मा सदा निश्चयेकरी सत्यरूपमांज ठे, पण मिथ्यातवडे मलिन थईरह्योठे. ते फरी सत्यस्वरूप जेनुं निर्मल प्रगटताने पाम्युंठे, अने मिथ्यात्वनुं निकंदन थयुंठे. एटले मिथ्यात्व रह्यु नथी चार अनंतानुबंधीनी जड तुटी गईठे. एवी तेमनी शुद्धदशा ओलखीने बनारसीदास बन्ने हाथजोडी वंदना करेठे. ए सवैयामां सम्यक्तनी दृढता बतावीठे. ॥ ६ ॥

पूर्ण सम्यक्तता दर्शाववानेअर्थे फरी तेनीज स्तुति करेठे.

सवैया इकतीसा.—स्वारथके साचे परमारथके साचे चित्त साचे साचे बैन कहै साचे जैनमती हैं, काहूके विरोधी नांहि परजायबुद्धि नांहि, आतम गवेषी न ग्रहस्थहै न यती हैं; सिद्धि रिद्धि वृद्धि दीसै घटमें प्रगट सदा, अंतरकी लक्षसों अजाची लक्षपती हैं; दास नगवतके उदास रहै जगतसों, सुखिया सदीव ऐसे जीव समकिती हैं. ॥ ७ ॥

अर्थ.— जेनी स्वार्थ एटले आत्मा पदार्थनेविषे साची प्रतीति ठे. तथा परमार्थ ते मोक्ष पदार्थनेविषे साची प्रतीति ठे. जेनुं चित्त निर्मल ठे. जे सत्यवचनना बोल

नारा छे जे साचा जिनमतने ग्रहण करी रह्याछे जेनु मन कल्पना करतु नथी केम के, ते साते नयनुं शुद्धस्वरूप जाणेछे तेथी कोईना दर्शनना विरोधी नथी जेम और मतानुसारी पर्याय बुद्धिवाळा छे पण द्रव्य बुद्धिवाळा नथी तेथी जीवने कुणनगुर मानेछे तेम समकितीपर्याय बुद्धिवत नथी पण आत्मद्रव्यनी गवेषना करनार छे तेथी तेने पर वस्तुमा मोह नथी माटे गृहस्थ पण नथी अने महा व्रत लीधा नथी, तेथी यति पण नथी पोताना घटनेविषे शुद्ध आत्म द्रव्यन सिद्धसमानन जुएछे तेथी घटमाज प्रगट सिद्धि देखेछे अने ज्ञान दर्शन चारित्ररूप रिद्धिनी वृद्धि जेना घटमा सदा प्रगट देखायछे जे अतर परमात्मा देव छे तेनु जेने लक्ष थयु छे, तेथी अयाची एटले कोईनी पासे काई मागे नही एवा लक्षपति छे धनीने ए पूर्वोक्त प्रकारना प्रगट स्वरुपने पामेला श्री वीतराग भगवतने पामीने तेना दास थयाछे, अने जगतथी उदास रहेछे जे आर्त्त अने रौद्र ए बे ध्यानथी विमुख थयाछे, तेथी सदीव सुखनी सन्मुख थयाछे, एवा समकिती जीव महा सुखमयीछे ॥३॥

फरी पोताना उल्लासथी समकितीनी स्तुति करेछे —

छे. चारित्रमां आत्मानी शक्तिने साधे. अने मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञाननो उदय थवानी इच्छा करेछे. मतिअज्ञान तथा श्रुतअज्ञानने गमावी दियेछे. ते समकिती जीव भवसमुद्रनो तरनार कहेवायछे; ए रहस्य छे ॥ ८ ॥

हवे समकेत पाम्या छतां मिथ्यात्वदृष्टिमांज रहेछे. तेनुं वर्णन करेछे.

सवैया इकतीसा.— धरम न जानत वखानत भरमरूप. ठौर ठौर ठानत लराई पक्षपातकी. भूल्यो अभिमानमें न पाउं धरे धरनीमें, हिरदेमें करनी विचारे उतपातकी. फिरेडांवाडोलसों करमके कलोलनमें. वेरही अवस्थासों बघूलाकेसे पातकी, जाकी छाती ताती कारी कुटिल कुवाती भारी, ऐसो ब्रह्मघाती है मिथ्याती महापातकी. ॥ ९ ॥

अर्थ — जे वस्तुना स्वभावरूप धर्मने जाणे नही, अने भर्मरूप मिथ्यावाणीने वखाणे; तथा ठेकाणे ठेकाणे. पोतानुं मत स्थापवाने पक्षपातनी लडाई करे अने पोताना अभिमाने भूल्यो थको धरती उपर पग राखे नही. पोतानेज तत्ववेत्ता जाणे. एमां अधर पगवडेकरी उत्प्रेक्षालंकार जाणवो. अने हृदयामां जेथी उतपात उपजे एवीज करणीनो विचार करे, अने आ संसाररूप समुद्रनेविषे कर्मरूप, कल्लोलोना धकाथे करी चारे गतिमां डामाडोल करतो फरेछे; जेम वंटोलिया वायुमां आवीगएलुं पानडुं आकाशमां कडीने भम्यां करेछे, पण कोई ठेकाणे स्थिर थई रहेतुं नथी; तेवीज एनी अवस्था थई रहीछे. जेनी छाती गर्वरूपवडे तप्त थई रहेछे: ते तापे करी काली एटले माया तेने राखवाथी कुटिल थई रहेछे. अने कुवाती एटले जे माठी वातोनुंज चिंतवनकरी रहेछे. तथा पापेकरी भरेली छे माटे भारी जाणवी एवी जेनी छाती छे. एहवो ब्रह्मघाती एटले आत्मघातनो करनार मिथ्यात्वी जीव महापातकयुक्त छे ॥ ९ ॥

दोहरा:— वंदो शिव अवगाहना, अरु वंदों शिवपंथ, जसु प्रसाद भाषा करो. नाटक नामे गरंथ. ॥ १० ॥

अर्थ.— जिहां सिद्धनो अवगाह थई रह्योछे, ते क्षेत्रने हुं वंदन करुंछुं. अने ज्ञान दर्शन चारित्र ए मोक्षनो पंथक० मार्ग छे. तेने हुं वंदन करुंछुं. ए मंगलाचरण करी हवे पोतानुं प्रयोजन कहेछे.— जेना प्रसाद थकी समय सार नाटक ग्रंथ संस्कृतमां हतो ते प्राकृत भाषारूप करुं. ए प्रयोजन कह्यो. ॥ १० ॥

हवे आ ग्रंथना अधिकारी बनारसीदास पोतेज छे; अने एमां कहेला ज्ञायक पोतानुं आत्मद्रव्य छे तेनुं वर्णन करेछे— कवित्तनं.

सवैया तेवीसा-- चेतनरूप अरूप अमूरति सिद्ध समान सदा पद मेरो, महातम आतम अंग कियो परसग महातम घेरो, ज्ञानकला उपजी अब गुननाटक आगम केरो जासु प्रसाद सधै शिवमारग वेग मिटे घटवास बसेरो ॥

अर्थ — बाह्यात्मामा अंतरात्माने अने अंतरात्मामा परमात्माना जोईये, ए मारो निश्चयरूप पद कहेवा योग्य थायछे ते चेतनरूपी अनूपम तिक सिद्ध समान छे जो ते निश्चयरूप पद एवो छे तो पछी ते प्रगट तु नथी? तेनो उत्तर एम छे के, मोहकर्मनुं कोई एहवु महात्म्य छे ते आत्मअंगके० आत्म प्रदेशनेविषे महाअंधकारनो घेरो छे तेथी प्रगट हमणा कोई ज्ञान कला मुझने उपनी छे ते कलानो अश प्रगट थयोछे तेथी टक सिद्धांत गुणनु व्याख्यान करुछु, जे आगमना प्रसादवडे मोक्षमार्ग अने जलदीथी शरीरमा वास वसवानु मटी जाय एटलेअशरीरपणु सिद्धथाय.

हवे आ ग्रंथनु गौरवपणु बतावीने कविराज पोतानी बुद्धिनु मंदपणु लघुता जाणवे छे — लघुता वर्णन —

सवैया इकतीसा —जेसे कोउ मूरख महासमुद्र तरिवेको भुजानिसों ... है तजि नावरो, जेसे गिरिउपरि विरपफल तोरिवेको बावन पुरुष ... वरो, जेसे जलकुंडमें निरखी शशि प्रतिबिंब ताके गहिवेकों कर नीचो रो, तैसे मैं अलपबुद्धि नाटिक आरंभ कीनो गुनीमोहि हसेगे कहेगे कोउ

अर्थ — जेम कोई मूरख मनुष्य महासागरने तरवा चाहे अने वाहाणने हाथवमे तरवानो उद्यम करे, तो कार्य केमबने, जेम कोई वामन पुरुष हाथ पहाड उपर वृक्ष होय तेना फलतोडवाने उतावलो थको उमग करे, ते केवी रीते बनी शके? वली एक त्रीजो दृष्टांत कहेछे के, जेम पाणीना द्रनु प्रतिबिंब पडेलु जोईने कोई नादान तेने साचो चद्र समजी हाथ नीचो तो तेना हाथमा चद्रमा केवी रीते आवे? तेमज हु अल्पबुद्धि हु अने आ टकग्रंथनो आरंभ मे कीधो छे, ते मारोआरंभ सफल नही थशे तेथी बीना वान पुरुषो कहेशेके, जुओ आ ग्रंथनो आरंभ करेछे एवु कहीने गुणीननो वरो जाणी हशी काढशे ॥ १२ ॥

वली ए कार्य करवाने साहस करेछे पुन

सवैया इकतीसा -- जैसे कोउ रतनसो वींध्यो है रतन कोउ, तामें सूत दोरी पोइ गई है, तैसे बुद्धीटीका करीनाटिक सुगम कीनो तापरि अलप बुद्धि

रिनई है; जैसे काहु देसके पुरुष जैसी नाषा कहै, तैसी तिनहूके बालकनी सिखीलई
है, तैसे ज्यों गरंथको अरथ कह्यो गुरु त्यों हमारी मति कहिवेकों सावधान नई है॥ १ ३

जेम कोई हीरानी कणीवडे कोई कठण रतनने आगलथी वींधी राख्युं होय,
ने ते पठी तेमां पडुवो रेशिमनी दोरी परोवे ते सुगम चालीजाय तो तेम आ कार्य
पण थशे. केमके मुनि अमृतचंद अने पांमेराजमल जेवा पंमितो थया तेमणे
आ ग्रंथनी टीका बालबोधमां करीने आ नाटकग्रंथने सुगम कर्योछे, तो तेउपर
माहरी अल्प बुद्धि छे तोपण आ ग्रंथमां सुधी रीते परणमी गई छे, तेथी आ कार्य
नेविषे महारी समर्थाइनो दृष्टांत देखाडुं छुं – जेम कोई देशनो वसनारो पुरुष
पोतानी देशनाषामां बोले अने तेनुं बालक होय तेपण तेनीपासे रहेतोथको ते
नाषा शीखी ले छे; तेमज आ कार्य पण छे. केमके मारा गुरुए आ ग्रंथनो अ
र्थ मने कह्योछे, तेज प्रमाणे आ ग्रंथनो अर्थ केहेवाने मारी बुद्धि समार्थिवंत थ
ईछे. एटले आगल कहेलो पश्चाताप मट्यो ॥ १ ३ ॥

हवे पोताना सामर्थ्यनुं कारण बतावेछे.

सवैया इकतीसा.—कबहों सुमति व्है कुमतिको विनाश करै, कबहों विमल ज्यो
अंतर जगति है; कबहो दया व्है चित्त करत दयालरूप, कबहों सुलालसा व्है लोच
लगति है; कबहों कि आरती व्है प्रभु सनमुख आवै, कबहों सु नारती व्है बाहरि
गति है; धरै दसा जैसी तब करै रीति तैसी ऐसी हिरदै हमारे नगवतकी नगति है १ ४

अर्थः– अमारा हृदयमां नगवतनी नगती रहीछे, ते क्यारेकतो सुमतीरूप थ
ईने कुमतीनो नाश करेछे, क्यारेक अंतरविषे ते नगती विमल ज्योतीरूप थई, ने
जागृत थायछे. अर्थात् सम्यक्त चेतना तेज नगवतनी नक्ति छे, क्यारेक तेज नक्ति
दयारूप थईने चित्तने दयालरूप करेछे, अने क्यारेक ते नक्ति पोताना आत्मई
रने जोवानी लालसा के० लगन थकी एटले लयलागवामां लोचनोने स्थिर करेछे
अने क्यारेक तो ते नक्तिना रति के० अति रंगेकरी प्रभु सनमुख थई रेहेछे (बीजेअर
प्रभू सनमुख आरती करेछे ते) अने क्यारेक तो ते नगति सुनारती के० न
वाणीरूप थईने बाहार बगति के० शब्द करी रहेछे. जेवी जेवी दशा धारेछे
वारे तेवी तेवी रीतनी करनारी छे, ते एवी नगवतनी नक्ति अमारा हृदयमां व
रहीछे तेथी आ नाटकग्रंथ रचनारूप कार्यमां पण एक नगवंतनी नक्तिज का
छे. एतात्पर्यार्थ छे. ॥ १ ४ ॥

छे, तेथी अलक्ष छे, वेदना खम थाय पण आत्मा अपराजित छे, सर्व नखो छे तेथी सर्व गत छे, एवु जीव द्रव्यनुं स्वरुप छे ते कह्यो ॥ २० ॥

हवे पुद्गल द्रव्यनुं लक्षण कहेछे अथ पुद्गल द्रव्य यथा –

दोहरा – फरस वर्न रस गंधमय, नरद फास संठाण, अनुरूपी पुद्गल नंत प्रदेश परवान ॥ २१ ॥

अर्थ –स्पर्श वर्ण रस गंध ए गुणमय सदा रहे, नरद जे सोगठीरुप ... मा सूक्ष्म, वृत्त, अस्र, चतुरस्र, आयत ए पांच संस्थान छे, तेथी ... नाम पोत पोतानी वर्गणा योग्यरूप ग्रहण करे, तेथी ए पुद्गल द्रव्य अनुरूपी माणुरूपी छे. जेम आकाश प्रदेश अनंत छे, तेम ए पण अनंत प्रमाण छे.

हवे धर्म द्रव्यनु लक्षण कहेछे धर्म द्रव्य यथा

दोहरा – जैसें सलिल समूहमें, करै मीन गति कर्म, तैसें पुद्गल जीवका, न सहाई धर्म ॥ २२ ॥

अर्थ --जेम पाणीना नरावमां माछलु गमन क्रिया करेछे, तहां क्रियानो माछलु छे, अने सलिल समूह जे पाणीनो नराव ते क्रियानो साधक छे लद्रव्यनी तथा जीवद्रव्यनी चलन क्रियानो साधक धर्मास्तिकाय द्रव्य छे ॥

हवे अधर्मास्तिकाय द्रव्यनु लक्षण कहेछे अधर्म द्रव्य यथा

दोहरा – ज्यों पथिक ग्रीषमसमैं, बैठे छाया माहि, त्यों अधर्मकी भूमिमें ड चेतन वहराहि ॥ २३ ॥

अर्थ – जेम कोई वटेमार्गु बेसवानी क्रियानो कर्त्ताछे, ने क्रियानी साधक छे, तेम अधर्मास्तिकायनी भूमी के० अवगाहना तेमां जड जे पुद्गल न चतन जीव ते बने स्थिर थायछे, तेथी अधर्मास्तिकाय द्रव्य स्थिरतानु कारणछे ॥ २३ ॥

हवे आकाश द्रव्यनु लक्षण कहेछे आकाश द्रव्य यथा

दोहरा – संतत जाके उदरमें, सकल पदारथ वास, जो भाजन सब जग को, सोइ दरव आकाश ॥ २४ ॥

अर्थ – संतत के० निरंतर जेना उदरमां समस्त पदार्थ वसी रह्याछे, अने जे सर्व जगतनु भाजन के० आधारभूत छे, ते आकाश द्रव्य जाणवु ॥ २४ ॥

हवे कालद्रव्यनु लक्षण कहेछे काल द्रव्य यथा

दोहरा – जो नवकरि जीरन करे, सकल वस्तु थिति ठान, परावर्तवर्तन धरै, काल दरव सो जान ॥ २५ ॥

अर्थः— जे द्रव्य वडे सघला वस्तुनी स्थिति बंधाय एटले पेलां सकल वस्तुने नवी बतावे, ने पछवाडेथी ते सघलीने जुनी करी देखाडे, अने उलट पालट वर्त्तवानी दशाधरे ते कालद्रव्य जाणवुं. ॥ २५ ॥

हवे आ ग्रंथमां कहेवा लायक नव तत्व छे तेनुं वर्णन करेछेः— तेमां प्रथम जीवतत्वनी समज पाडेछे. नवतत्व वर्णनं, जीवतत्व यथा.

दोहराः— समता रमता उरधता, ज्ञायकता सुखभास; वेदकता चैतन्यता, ए सब जीव विलास. ॥ २६ ॥

अर्थः— सर्व जीव बराबर छे ए समता, घटघटमां रमी रहेछे ए रमता, ऊर्ध्व दिशे गमन करवुं ए उरधता, सर्व पदार्थनो जाणनार ते ज्ञायकता सुखमय भासे छे तेथी सुखभास, सुखदुःख वेदे ए वेदकता, अने चेतना गुणथी चैतन्यता ए सघलो जीव तत्वनो विलासछे. ॥ २६ ॥

अथ अजीवतत्व यथा.

दोहाः— तनता मनता वचनता, जडता जड संमेल; लघुता गुरुता गमनता, ए अजीवके खेल. ॥ २७ ॥

अर्थः— शरीरपणुं, मनपणुं, वचनपणुं, जडवस्तुमां भेलभेल थवापणुं, लघुपणुं, गुरुपणुं, गमनपणुं ए सर्व अजीवतत्वना खेलछे. ॥ २७ ॥

अथपुन्यतत्व यथा.

दोहराः— जो विशुद्ध भावनि बंध, अरु ऊरध मुख होय; जो सुखदायक जगतमें, पुन्य पदार्थ सोय. ॥ २८ ॥

अर्थः— जे पदार्थ विशुद्ध परिणामथी बंधे, अने जेनुं ऊर्ध्वमुखछे, ऊर्ध्वगति एज चहेछे, जे पदार्थ जगतमां सुखदायकछे, ते पुन्य पदार्थ जाणवो. ॥ २८ ॥

अथ पाप तत्व यथा.

दोहराः— संक्लेश भावनि बंध, सहज अधोमुख होय; दुःखदायक संसारमें, पाप पदारथ सोय. ॥ २९ ॥

अर्थः— जे पदार्थ संक्लेश भाव वडे कषायनीवृद्धीथी बंधे, सहजे जेनी गती नीची छे अधोमुखछे, अने जगतमां दुःखदायक छे तेज पाप पदार्थ केवायछे. २९

अथ आश्रव तत्व यथा

दोहराः— जोई कर्म उद्योत धरि, होइ क्रिया रस रत्त; करषै नूतन कर्म को, सोई आश्रव तत्त. ॥ ३० ॥

अर्थ -- जे कर्मनो उदय धरीने शुभ तथा अशुभ क्रियाना रसमां रहे, त्यारे नवा करमनुं करखे के० खेचवु करे ते आश्रव तत्व केवाय ॥

अथ संवर तत्व यथा

दोहा -- जो उपयोग सरूप धरि, वरतै जोग विरत्त, रोंके आवत सो है संवर तत्त ॥ ३१ ॥

अर्थ -- जे शुद्ध उपयोग स्वरूपने धारीने मन वचन काया जोगथी थको वर्त्ते अने नवा करम आवताने रोकी राखे ते संवर तत्व कहियें ॥ ३१

अथ निर्झरा तत्व यथा

दोहा -- जो पूरव सत्ता करम, करि थिति पूरण आउ, खिरबेकों सो निर्झरा लखाउ ॥ ३२ ॥

अर्थ -- जे पूर्व कालनेविषे आयुविना सात कर्म सत्तारूप हतां कर्म वर्त्तमान कालमा सत्तारूप छे तेनी स्थिति पूर्ण करीने पछी नीरस विखेरवामां जे जीव उद्यमवत थयो ए निर्जरानुं लक्षण जाणवु ॥ ३२ ॥

अथ बंध तत्व यथा

दोहा -- जो नव कर्म्म पुरानसों, मिलें गठि दिढ होइ, सकति बढावे बंध पदारथ सोइ ॥ ३३ ॥

अर्थ - जे नवा कर्म जूना कर्म साथे आवी मळे, अने तेनी गांठ दृढ बंधाय अने आगळ जतां ते कर्मना बंधनी शक्ती चढती थाय, ते बंध पदारथ केवाय ॥

अथ मोक्ष तत्व यथा

दोहा -- थिति पूरन करि जो करम, खिरे बंध पद जानि, हंस अंस उज्जल करें, मोक्ष तत्व सो जानि ॥ ३४ ॥

अर्थ -- जे कर्मनी स्थितिने पूर्ण करीने कर्मने खेरे के० क्षयकरी नाखे अने बंध पद के० सत्तावन प्रकारें बंधस्थान तेने जानि के० जाणीने हंस के० आत्मा रमाना अंसने क्रमे उज्वल करे तेज मोक्ष तत्व जाणवु ॥ ३४ ॥

हवे कवित्त छदमां पदार्थनी नाममाळां एटले प्रयोजनवाळा नामनी माळा लखी जणावेले

अथ नाम माळा सूचनिका मात्र लिख्यते अथ समुच्चय वस्तुके नाम

दोहरा -- भाव पदारथ समय धन, तत्व वित्त वसु दर्व, द्रविन अर्थ इत्यादि बहु, वस्तु नाम ए सर्व ॥ ३५ ॥

अर्थः—प्रथम सामान्यपणे वस्तुना नाम कहेछे. भाव, पदारथ, समय, धन, तत्व, वित्त, वस्तु, द्रव्य, द्रविण, अर्थ, इत्यादि घणां वस्तुनां नाम छे. ॥ ३५ ॥

अथ शुद्ध जीव द्रव्यके नाम·-

सवैया इकतीसाः—परमपुरुष परमेसुर परमज्योति, परब्रह्म पूरन परम परधान है; अनादि अनंत अविगत अविनाशि अज. निरदुंद मुकत मुकुंद अमलान है; निराबाध निगम निरंजन निरविकार. निराकार संसार सिरोमनि सुजान है; सरव दरसी सरवज्ञ सिद्ध सांई शिव, धनी नाथ ईश जगदीश भगवान है. ॥ ३६ ॥

अर्थः—परमपुरुष, परमेश्वर, परमज्योति, परब्रह्म, पूर्ण, परमप्रधान, अनादिअनंत, अव्यक्त, अविनाशी, अज, निर्द्वंद्व, मुक्ति, मुकुंद, अम्लान, निराबाध, निगम, निरंजन, निर्विकार, निराकार, संसारसिरोमनि, सुजान, सर्वदर्शी, सर्वज्ञ, सिद्ध, स्वामी, शिव, धनी, नाथ, ईश, जगदीश, भगवान, कहीये. ॥ ३६ ॥

हवे कर्म व्याप्त अशुद्ध जीव द्रव्यना नाम कहेछेः—संसारी जीव द्रव्यके नाम

चिदानंद चेतन अलख जीव समैसार, बुद्धरूप अबुद्ध अशुद्ध उपयोगी है; चिदरूप स्वयंभू चिन्मूरति धरमवंत, प्रानवंत प्रानि जंतु भूत भव भोगी है; गुनधारी कलाधारी भेपधारी विद्याधारी, अंगधारी संगधारी जोगधारी जोगी है; चिन्मय अखंड हंस अखर आतमराम, करमको करतार परम विजोगी है ॥ ३७ ॥

अर्थः—चिदानंद, चेतन, अलख, जीव, समयसार, बुद्धरूप, अबुद्ध, अशुद्धोपयोगी, चिद्रूप, स्वयंभू, चिन्मूर्ति, धर्मवंत, प्राणवंत, प्राणी, जंतु, भूत, भवभोगी, गुणधारी, कलाधारी, भेषधारी, विद्याधारी, अंगधारी, संगधारी, योगधारी, योगी, चिन्मय अखंड, हंस, अक्षर, आत्मराम, कर्मकर्त्ता, परमवियोगी कहिये. ॥३७॥

अथ आकासके नामः—

दोहराः— खं विहाय अंबर गगन, अंतरिक्ष जगधाम; व्योम वियत नभ मेघपथ, ए अकाशके नाम ॥ ३८ ॥

अर्थः—खं, विहाय, अंबर, गगन, अंतरिक्ष, जगधाम, व्योम, वियत, नभ, मेघपथ, ए आकाशनां नाम. ॥ ३८ ॥

अथ कालके नाम.

दोहा·—यम, कृतांत, अंतक, त्रिदस, आवर्त्ती मृतथान; प्रानहरन, आदित तनय, कालनाम परमान. ॥ ३९ ॥

अर्थ --यम, कृतांत, अंतक, त्रिदश, आवर्त्तीक, मृतस्थान, प्राणहरण तनप, एवां कालना नाम छे ॥ ३९ ॥

पुन्यके नाम यथा

दोहा --पुन्य सुकृत ऊरधवदन, अकर रोग शुभ कर्म, सुखदायक भागबहिर्मुख धर्म ॥ ४० ॥

अर्थ --पुन्य, सुकृत, उर्ध्ववदन, अकररोग, शुभकर्म, सुखदायक, भाग, वहिर्मुख, धर्म,ए पुन्यना नाम छे ॥ ४० ॥

अथ पापके नाम यथा

दोहा – पाप अधोमुख एन अघ, कप रोग दुखधाम, कलिल कलुष दुरित, अशुभ कर्मके नाम ॥ ४१ ॥

अर्थ – पाप, अधोमुख, एन, अघ, कंप, रोग, दुःखधाम, कलिल, किल्बिष, अने दुरित, ए अशुभ कर्मना नाम जाणवा ॥ ४१ ॥

अथ मोक्षके नाम

दोहा --सिद्धक्षेत्र त्रिभुवन मुकुट, शिवमग अविचल थान, मोषमुगति शिव, पंचम गति निरवान ॥ ४२ ॥

अर्थ -सिद्धक्षेत्र, त्रिभुवनमुकुट, शिवमार्ग, अविचलस्थान, मोक्ष, मुक्ति, शिव, पंचमगति अने निर्वाण ॥ ४२ ॥

अथ बुद्धिके नाम यथा

दोहा --प्रज्ञा धिषना सेमुखी, धी मेधा मति बुद्धि, सुरति मनीषा चेतना, आसय असविशुद्धि ॥ ४३ ॥

अर्थ – प्रज्ञा, धिषना, सेमुषी, धी, मेधा, मति, बुद्धि, सुरति, मनीषा, आसय, असविशुद्धि कहिये ॥ ४३ ॥

अथ विचक्षण पुरुषके नाम –

अथ मुनीश्वरके नाम.–

दोहाः–मुनि महंत तापस तपी. भिक्षुक चारितधाम; यती तपोधन संयमी, व्रती साधु रिषि नाम. ॥ ४६ ॥

अर्थ.–मुनी. महंत, तापस, तपी, भिक्षुक, चारित्रधाम, यति, तपोधन. संयमी. व्रती. साधु ए ऋषिना नाम जाणवां. ॥ ४६ ॥

दरसनके नामः–

दोहा.–दरस विलोकन देखनो. अवलोकन द्रिगचाल; लखन दृष्टि निरखन जुवान, चितवन चाहन भाल ॥ ४७ ॥

अर्थ.–दर्शन, विलोकन, देखवुं, अवलोकन. दृगचालन, लखवुं. दृष्टी, निरखण. जोवुं. चिंतवन. चाहन. ने भालवुं. ॥ ४७ ॥

अथ ज्ञान तथा चारित्रके नाम.–

दोहा.–ज्ञान बोध अवगम मनन. जगतभान जगजान; संयम चारित आचरण. चरन वृत्ति थिरवान ॥ ४८ ॥

अर्थ.–ज्ञान. बोध, अवगम, मनन. जगद्भानु, जगजान. संयम. चारित्र, आचरण, चरण, वृत्ती. थिरवान. ॥ ४८ ॥

अथ साचके नाम.–

दोहा–सम्यक् सत्य अमोघ सत, निर्संदेह निरधार; ठीक यथारथ उचित तथ, मिथ्या आदिअकार ॥ ४९ ॥

अर्थ.–सम्यक्, सत्य, अमोघ, सत्, निःसंदेह, निर्धार, ठीक, यथार्थ, उचित, तथ्य. मिथ्या शब्दने आदि अकार लगाडीने बोलीये तो अमिथ्या शब्दथाय ते पण एनुं नाम जाणवुं ॥ ४९ ॥

अथ कूठके नाम.–

दोहा–अजथारथ मिथ्या मृषा, वृथा असत्य अलीक; मुधा मोघ निष्फल वितथ. अनुचित असत अठीक ॥ ५० ॥

अर्थ–अयथार्थ. मिथ्या. मृषा. वृथा, असत्य. अलीक. मुधा, मोघ. निष्फल वितथ. अनुचित. असत्य. अने, अठीक. ॥ ५० ॥ इति नाममाला समाप्ता.

अथ समयसारके द्वादश द्वार वर्णन–

सवैया इकतीसा.–जीव निरजीव करता करम पुन्य पाप, आश्रव संवर निरजरा बंध मोष है, सरव विशुद्धि स्यादवाद साधिसाधक द्वादश दुवार धरे समैसार

पावकमें दहिये ; आकृति विलोकत कहावे आगि नानारूप, दीसे एक सुनाव जब गहिये तैसे नव तत्वमें नयो है वहु जेखी जीव, शुद्धरूप अशुद्धरूप कहिये, जाही छिन चेतना शकतिको विचार कीजे, ताही छिन अजेदरूप लहिये ॥ ५९ ॥

जेम अग्निमां तृण, काठ, वांस अने आरने के० वननो बीजो कचरो इत्यादिक अनेक तरेना इंधण बालीये ठइये ने जेवी जेवी इंधणनी आकृती एटले (आकार) तेवी तेवी आकृतीनो अग्नी देखाय, ए रीते अग्नी नाना प्रकारना रूपनी कहेवायछे, पण ते अग्नीनो स्वजाव एक सरखो दाहक छे, एम जो ग्रहण करिये तो बधो अग्नी एकरूप छे तेमज नव तत्वमा जीव जेछे ते जातजातनो जेष धारी रह्यो छे, माटे जीव वहु वेशी के० नाना प्रकारनो थयो एटले शुद्धरूप जीव छे, ते मिश्रित थयो, त्यारे जीवने अशुद्धरूप कह्यो एनु नाम व्यवहार नय छे, अने जे द्र... नव चेतना शक्ति विचारिये, ते वखते शुद्ध निश्चयनये केवलीवडे नव तत्वनो रुप राखीने अजदरूप जीव छे, ते सर्वत्र अजेदरूप पामिये शुद्ध . नय ज ...

फरी बीजी रीते शुद्ध जीव व्यवस्था कहेछे अथ जीव व्यवस्था वनवारी द्र

सवैया इकतीसा —जैसै वनवारीमें कुधातुके मिलाप हेम, नाना जाति नयो है तथापि एक नाम है, कसिके कसोटी लीक निरखै सराफ ताही, वानके प्रमान करि लेतु देतु दाम है, तैसैही अनादि पुद्गलसों सयोगी जीव, नव तत्वरूपमें अरूपी महा धाम है, दीशे उनमानसौ उद्योत वान ठोर ठोर, दूसरो न और एक आतमाहि राम है ॥ ६० ॥

अर्थ —जेम सोनानी मूसमा चोखु सोनु गाल्यु अने सोनाथी हीण धातु ते कुधातु कहिये, तेना नाम कहेछे —रूपु, त्राबु, सीसु, जसत, कथीर, इत्यादि वस्तुनो जोग दो हेमनी साथे मिलाप थयो तेथी जुदी जुदी जातनु सोनु थयु, ते छतां एक सोनाना नामे ओलखायछे, अने तेअशुद्ध सोनाने सराफ कसोटी पथ्थर उपर कसीने तेनी लकीर जुये ने तेउपरथी सोनु केवु छे ते प्रमाण करे, जेम आ दस रुपीयाना नवनु छे ने आ अगीयार रुपीयाना जाववु छे, ने ते माफक तेना दाम आपे लिएछे तेमज अनादि कालथी ए जीव पुद्गल द्रव्यनो सयोगी माटे ए जीवे नव तत्व व्यवस्था धारी, गतीपणे स्थितिपणे जाजनपणे वर्त्तमानपणे, आधारपणे, ए पांचे द्रव्य ग्रहण कीधां अने नवतत्वरूप धारण कर्या पण एमां कोई अरूपी महा तेजवत द्रव्य छे ते तो कोई प्रत्यक्ष प्रमाणे ग्रहण थतु नथी, अने अनुमान

[illegible] रहे. केवार शिष्ये प्रश्न करे, अनुभव केम करीने रहे? त्यारे गुरु [illegible] [illegible] [illegible] प्रमाणवान द्रव्य देखाय, तेनो बीजो कोई द्रव्य नथी पण [illegible] [illegible] जाणवो; ए [illegible] निश्चय नयथी जीव [illegible] ॥ ६० ॥

[illegible] करी जीवने जे योजना करीने पवित्र पामिये तेने अनुभव कहिये. ते अनुभवनुं स्वरुप केवी रीते छे? एवुं शिष्ये पुछे थके गुरु सूर्यना दृष्टांते कहेछे —

अथ अनुभव अवस्था सूर्य दृष्टांत.

सवैया इकतीसा — जैसे रविमंडलके उदै महिमंडलमें, आतप अटल तम पटल बिलातु है, तैसे परमातमाको अनुभौ रहत जौ लौं, तौ लौं कहूं दुविधा न कहूं पक्षपात है, नयको न लेश परवानको न परवेश, निक्षेपके वंशको विधुंस होत जातु है; जे जे वस्तु साधक हैं तेऊ तहां बाधक हैं, बाकी रागदोषकी दशाकी कौन बातु है ६१

अर्थ — जेम सूर्यमंडलना उदयथी पृथ्वीमंडळमां आतप के० तडको अटल थई जाय, अने तम के० अंधकारना पडल नाश थई जाय, प्रकाश वर्तीत थाय; तेमज शुद्ध निश्चयनयना बळथी ज्यांसुधी अंतरआत्माने विषे परमात्मानो अनुभव रहेछे, त्या सुधी कांई पण द्विविधता न देखाय, पोतपोताना मतनो पक्षपात न रहे. अने अहीं नय नो लेश के० अंश न पामिये, नय तो ते छे के, जेणेकरीने वस्तुनुं साधन कराय अने अनुभव तो सिद्ध वस्तुनो होय माटे अहीं अनुभवमां नयनो लेश नथी अने एमां प्रत्यक्ष परोक्षादिक प्रमाणनो पण प्रवेश नथी, केमके जे प्रमाण होय ते तो असिद्धनुं साधन करे पण सिद्ध वस्तुने शुं साधशे? अने नाम स्थापना द्रव्य भाव ए चार निक्षेपा छे, तेपण असिद्ध वस्तुनुं साधन करे छे, ते तो जेवारे परमात्मानो अनुभव सिद्ध थयो त्यारे निक्षेपाना वंशनो विध्वंसज थयो, जेम सूर्यना प्रकाशवडे अंधकारनो नाश थायछे, तेम ए सर्व विलय थाय छे. आ परमात्माने नयप्रमाण निक्षेपादिक वस्तु जे जे साधक छे ते सर्व वस्तु परमात्माना अनुभवमा बाधक छे; ज्यांसुधी नयप्रमाण अने निक्षेपानो परिवार होय त्या सुधी शुद्ध अनुभव न होय एटलामाटे ए बाधक छे. बाकी राग द्वेष दशानी शुं वात केवी! तिहा तो नयादिक कहेवाज जोइये. ॥ ६१ ॥

हवे अनुभवमां शुद्ध रुप जीवज लख्यो तेनी व्यवस्था वचन गोचर जेवी होय तेवी कहेछे — अथ जीव व्यवस्था विवरन द्वार.

अडिल छंद.— आदि अंत पूरन सुभाव संयुक्त है; पर सरुप परजोग कलपना मुक्त है; सदा एक रस प्रगट कही है जैनमें, शुद्ध नयातमवस्तु विराजे वैनमें॥६२॥

ना स्वन्नावने मूकतो जाय अने पोताना आत्मानुं ध्यान करे. अने अनुनवमां प्रकाशरूप देखे. तारे कर्म कलंक तेहिज पंक के० कादव तेथी रहित प्रगटरूप अचल अवाधित सर्व वाध रहित एवो शाश्वत निरंजन देव परमात्मा पोते ठे, एवुं देखे.

अथ गुन गुनी अन्नेद कथन व्यवस्था

सवेया तेईसा.--शुद्ध नयातम आतमकी अनुनूति विज्ञान विनूतिहि सोई; वस्तु विचारत एक पदारथ नामक नेद कहावत दोई; यों सरवंग सदा लखि आपुहि, आतमध्यान करै जव कोई, मेटि अशुद्धि विनावदशा तव सिद्ध सरूपकि प्रापतिहोई६५

अर्थ.-- हवे शुद्ध अनुनव जे ठे ते गुण ठे, एक आतमां गुणी ठे, तेनुं जेवुं अन्नेद स्वरुप ठे तेवी अन्नेद अवस्था कही वतावेठे:-- शुद्ध निश्चय स्वरुपी आत्मानो अनुनूति के० जे अनुनव ठे. तेज विज्ञान विनूती के० विशेष रूप ज्ञान संपदा ने अही आत्मा गुणी ठे ने अनुनवज्ञान गुण ठे. हवे ए वे वस्तु शुं ठे? एवो जो विचार करीये तो एकज आत्म पदार्थ नासेठे. एकज पदार्थमां आ गुण अने आ गुणी एवां वे नाम ठे. तेज नेद केवायठे. एम सरवंग के० सर्व प्रकारे पोतानेज गुणगुणी रुप लखीने जागे कोई आत्मध्यान करे, तारे अशुद्धविनाव दशा मटीने सिद्धस्वरुपनी प्राप्ति थाय. ॥ ६५ ॥

अथ ज्ञाता चिंतवन स्वरूप कथन.

सवैया इकतीसा.-- अपनेही गुन परजायसों प्रवाहरूप, परिनयो तिहूं काल अपने आधारसों; अंतर वाहिर परकासवान एक रस, खिन्नता न गहै निन्न रहै नौ विकारसों, चेतनाके रस सरवग नरि रह्यो जीव, जैसें लोंन काकर नर्यौ है रस खारसों; पूरन सरूप अति उज्वल विज्ञान घन, मोकों होहु प्रगट विशेष निरवारसों ॥६६॥

अर्थ.-- हवे एज वातने जेम ज्ञाता लोक पोताना चित्तमां चिंतवे तेवुंज स्वरुप कही देखाडे ठे.-- आ जे कोई आत्मा केवायठे. ते तो विज्ञान घन ठे; विशेष ज्ञानमय एक पिंम ठे; ते अतीत अनागत ने वर्त्तमान ए त्रणे कालमां प्रवाहरुप कलाथी अविठिन्न धाराये पोतानाज गुण पर्याये करीने पोतानाज ज्ञानादिक गुणनी अवस्था नेदने लीधे अने पोताना आधारथी परना आश्रयविना परिणम्यो रहे ठे. अने ए विज्ञान घननी एवी महिमा ठे के तेथी मांहे अने वाहिर एक चित्त चेतना रसवडे प्रकाशवान थयो जे पोताने जाणे ते अंतर प्रकाश अने वाह्य वस्तुने जाणे ते वाहिर प्रकाश एवा कार्यमां खिन्नता ग्रहण न करे; अने नव विकारथी न्यारो रही सर्व प्रदेशविषे चेतनना रसे करी जीव नरपूर थई रह्यो

-ा अविचल अविकार निर्मल रूप छे. निश्चय नय ने व्यवहार नय ए बन्ने छे ते
सम्यक् दशामां प्रमाण छे; जे नय छे ते तो अभिप्राय विशेष छे, माटे एकज अ
क रूप निर्मल तथा समल रूप जाणिये. एम समकाले निर्मल अने समल जीवनी
रिणति थई रही छे, ते श्री जिन देव कहे छे अने गणधर देव सर्दहे छे. ॥६८॥

अथ व्यवहार कथनं.

दोहराः— एक रूप आतम दरव, ज्ञान चरन दृग तीन; भेद भाव परिनाम
ं, विवहारे सु मलीन. ॥ ६९ ॥

अर्थः— हवे ज्ञान दर्शन चारित्रनो त्रिक छे ते व्यवहार नयथी थाय छे; ते क
छे:—आत्म द्रव्य जे छे ते एकरूप छे, ने ज्ञान दर्शन चारित्र ए त्रण जे छे ते भे
भाव परिणाम छे; त्यारे एकविषे त्रण भेद थया तेथी ए व्यवहार नयवडे समल
प थयुं. ॥ ६९ ॥

अथ निहचै स्वरूप कथन.

दोहराः— यदपि समल विवहारसौं, पर्यय शक्ति अनेक; तदपि नियत नय
खिये, शुद्ध निरजन एक. ॥ ७० ॥

अर्थः—निश्चयनयेकरी निर्मल स्वरूपमांज ध्याववुं भलुं छे ते केहेछेः—यद्यपि व्यव
ारनयनी अपेक्षाथी आत्मानेविषे अनेक शक्ति अनेक पर्याय देखायछे; माटे ते
मल छे; तोपण निश्चय नयनी अपेक्षाथी शुद्ध निरजन एकज जाणवामां आवेछे. ७०

अथ शुद्ध कथन.

दोहराः— एक देखिये जानिये, रमि रहिये इक ठौर; समल विमल न विचा
रिये, यहे सिद्धि नहि और. ॥ ७१ ॥

अर्थः— हवे शुद्धरूपीज उपादेय छे एवुं केहेछेः— जे एक शुद्ध चेतनामय रू
ज देखवुं ते दर्शन, तेमज जाणवुं ते ज्ञान; अने तेमां जे रमि रहेवुं ते चारित्र
, ते नयनी अपेक्षावडे समल अथवा विमल रूप विचारवुं नही. एहिज सिद्ध
हिये, पण बीजा स्वरूपमां सिद्ध नथी. ॥ ७१ ॥

अथ शुद्ध अनुभव प्रशंसा.

सवैया इकतीसाः— जाके पद सोहत सुलछन अनंत ज्ञान, विमल विकासवं
त ज्योति लहलही है; यद्यपि त्रिविध रूप व्यवहारमें तथापि, एकता न तजे यों
नियत अंग कही है; सो है जीव कैसीहू जुगतिके सदीव ताके, ध्यान करिवेकों

मेरी मनसा उमही है, जाते अविचल सिद्धि होतु और नाति सिद्ध, नाहि नाहि यामे धोखो नांहि सही है ॥ ७१ ॥

अर्थ — हवे एवा स्वरूपनो अनुभव स्थिर रहेवो ते दुर्लभ छे, माटे सर्व एनो मनोरथ करे छे. जेनेविषे अनत ज्ञानरूप सुलक्षण शोभेछे, अने [ ] काशवत के० पोतानो तथा परनुं जाणवु एवी ज्योति जेनेविषे लहलही रहे ने यद्यपि व्यवहारनयमा वाह्यात्मा, अतरात्मा, तथा परमात्मा ए त्रिविध छे, तथापि निश्चयनयनी अपेक्षाथी एकताने त्यजे नही एवु एकरूपी कहु छे, एवो पदार्थतो जीव छे हवे ते युक्तिथी करी आगल केहेशे ते युक्तियेकरी तर तेनु ध्यान करवाने मारी होंस मनमा उमगी रहीछे जेना ध्यानथी नी ज्ञान दर्शन चारित्ररूप ऋद्धि अविचल थायछे, एज रीते सिद्ध छे पण कोई प्रकारे सिद्धि नथी एमा कई धोखो नथी एटले कूडु नथी एज वात साच

अथ ज्ञाताकी व्यवस्था वर्णन

सवैया तेईसा -- के अपनो पद आपु संभारत, के गुरुके मुखकी सुनि बानी, भेद विज्ञान जग्यो जिनके प्रगटे सु विवेक कला रज धानी, भाव अनत प्रतिबिंबत, जीवन मोष दशा ठहरानी, ते नर दर्पनज्यो अविकार रहे थिर सदा सुखदानी ॥ ७२ ॥

अर्थ -- हवे भेद विज्ञानवडे एनो अनुभव थाय छे तेथी मुक्ति मने तेन प्रमाथी कहेले — कोई तो पोतानु पद जे पोतानु निरालव स्वरूप, ते पातेने सत्यार्थ ने पोतावडे ग्रथी भेदकरी पोताने ओळखेछे कोई तो गुरुना मुखनी वाणी सांभळी ने पोताने ओळखेछे अने जेना घटमा जड चेतननु भेद विज्ञान जाग्यु, तेणे करी पोताना चेतन रुपनी जे न्यारी कला छे, तेनी राजधानी जे तेनु ईश्वरपणु तेना घटमां प्रगटयु, अने एज राजधानीमां अनत भाव पदार्थ प्रतिबिंबित थया ते ज्ञायक थया एटले जीवता थकाज मोक्ष दशा ठरी मुक्त स्वरूपी थया अने ए अनतभाव प्रतिबिंबित थया तोपण समलरूप न थया, तेथी ते मनुष्य दर्पण ए जे आरीसानीपरे विकार रहित थया, स्थिररूप थया, अने सुखदायक थयाछे॥

अथ भेद ज्ञान प्रशसा कथन

सवैया इकतीसा --याही वर्तमान समै भव्यनिको मिट्यो मोह लग्यो है है नादिको पग्यो है कर्म मलसों, उदा करै भेदज्ञान महारुचिका निधान, उर उजागे न्यारो न्यारो ऊद दलसों, याते थिर रहै अनुभौ विलास गहै फिरि ह्वै

अपनपो न कहे पुदगलमों; यहै करतूति यों जुदाइ करै जगतसों. पावकज्यों भि
न करै कंचन उपलसों ॥ ७४ ॥

अर्थः— हवे भेदविज्ञाननी उत्पत्ति अने महिमा कहेछे— आ वर्त्तमानकाल
विषे भव्यलोकनो मोह भ्रम टली जाय जे मोह कर्म आत्माने अनादिकालथी
लाग्युं छे; अने कर्ममलमां व्यापी रह्योछे; ते मोह भ्रम मटवाथी भेद विज्ञाननो
उदय थाय. ते भेद विज्ञान केवुंछे? महारुचिनुं निधान छे. ए भेद विज्ञानमां
उत्कृष्टी रुचि पामीये छिये एटले महारुचिनुं कारण छे. भेद विज्ञानथी गरिष्ट उर
मां अजवालुं प्रगट थायछे, ते अजवालुं केवुंछे?

एटले महा धाम घुमथी त्यागीने शुद्ध दशायी नीकली स्थिरतामां रहे. अने
पोताना अनुभवनो विलास ग्रहण करे. पोताने सत्यार्थ पणे जाणे. पछी ए भेद
विज्ञान पाम्या थकी शरीर कर्मादि पुद्गल रुपी जाणीने पोतानुं न कहे. आत्मारू
प न कहे करतूति के० ए जे भेदविज्ञाननी क्रिया तेज जगतथी जुदाईने करे, पां
च द्रव्यथी जुदाई करे, अही दृष्टांत बतावेछे.— जेम अग्नी माटी पाषाणने कंचन
थी जुदी करे छे तेम जाणी लेवुं ॥ ७४ ॥

अथ परमार्थ शिक्षा कथन.

सवैया इकतीसाः— बानारसी कहै भैया भव्य सुनो मेरी शीख, केहू भांति कै
सेहूके एसो काज कीजिए; एकहू मुहूरत मिथ्यातको विध्वंस होइ, ज्ञानको ज
गाइ अंस हंस खोजि लीजिये; वाहीको विचार वाको ध्यान यहै कोतुहल, यों
ही भरि जनम परम रस पीजिए; तजी भववासको विलास सविकासरूप, अंतक
रि मोहको अनंत काल जीजिए. ॥ ७५ ॥

अर्थः—हवे शुद्ध जीवद्रव्यमां रहेवुं तेज परमार्थ छे तेनी शिक्षा कहेछेः— ब
णारसीदास केहेछे.— अहो भाई भव्य जीवो, मारी शीक्षा सांभलो. केवी पण रीते
थी कोई द्रव्य क्षेत्र काल भाव पामीने एवुं काम करवुं के जेणे करीने एक मुहुर्तमा
त्रमां मिथ्यात मोहनो विध्वस थाय अने ज्ञाननो अंस जगावी लेवो, अने सोहं हंसो
एवी ध्वनि करतो हंस जे आत्मा तेने खोजी लइयें. पछी तेनुं लक्षण विचारवुं
पछी तेने ओलखीने तेनुं ध्यान करवुं. एवी एनी कला खोजीने कुतोहल जे
खेल ते कर्या करियें; अने तेज जनम परियंत परम रस पीवो. एरीते सविकार रू
पथी फेली रह्यो एवो भववासनो विलास तेने तजीने तथा मोहनो अंत आ
णीने अनंत कालसुधी जीवीए एटला प्रकारे सिद्ध थवायछे. ॥ ७५ ॥

। अचल कह्युंछे, पण निरंतर अचल आसन संभवे नही एवा जिनराजदेव जग
।मां जयवंत थाओ जेनी रूडी भक्ति करवाथी महामुक्ति फलनी प्राप्ती थायछे.

यथार्थ कथनः—

दोहरा:— जिन पद नाहिं शरीरकों, जिन पद चेतन मांहि; जिन वर्नन कछु और है, यह जिन वर्नन नांहि. ॥ ३८ ॥

अर्थः—एटली व्यवहार स्तुति करीने हवे सत्यार्थ वात कहे छेः—ए जे जिन नाम ो ते जीव विपाकी छे पण पुद्गल विपाकी नथी, तेथी जिनपद ते शरीरनो नथी, जि नपद तो चेतननो छे; तेथी जिनेश्वरनी स्तुति कोई औरज छे पण पूर्वे जे जिनेश्वर नी स्तुति करी ते जिन स्तुति नथी. इहां शरीर जड छे अने आत्मा चेतन छे ए बने भाव भिन्न स्वभावमां छे तेनुं दृष्टांत आपेछे. ॥ ३८ ॥

अथ जड चेतन भिन्नभाव दृष्टांत कथनः—

सवैया इकतीसाः—ऊंचे ऊंचे गढके कंगुरे यों विराजत हैं, मानो नभ लोक ली लवेकों दांत दियो है; सोहे चिहोंउर उपवनकी सघनताई, घेरा करि मानो भू मि लोक घेरि लियो है; गहरी गंभीर खाई ताकी उपमा बनाई, नीचो करि आ नन पताल जल पियो है; ऐसो है नगर यामें नृपको न अंगकोउ, योंही चिदानं दसों शरीर भिन्न कियो है॥ ३९ ॥

अर्थः— जेम कोई गढना ऊंचा ऊंचा कांगरा वीराजे छे (अहिं कवि उत्प्रेक्षणा क रे छे.) पण ते कांगरां नथी पण मानुं हुं जे आ नगरमां स्वर्गलोकने गली ज वाने दांत आप्यां छे; एटले जाणे स्वर्ग लोकने गली जशे. अने एनी चारे तरफ उपवन एटले बाग वाडीनी सघनता एवी शोभी रही छे के जाणे भूमिलोक एट ले मनुष्य लोक तेणे घेरी लीधो छे. अने ए नगरनी चारे बाजुए ऊंडी खाई ओनी ते जाणे नीचुं आनन एटले मुख करीने पातालज पाणी पातो होयनी ए रीते जेणे त्रणे लोक जीत्या छे एवुं नगरनुं वर्णन कीधुं पण ए नगरमां कोई राजाना अंगनुं कांई वर्णन कीधुं नथी. मतलब के चिदानंदथकी शरीरने भिन्न करी बताव्युं. ॥ ३९ ॥

अथ तिर्थंकरकी निहचै स्तुति सरूप कथन वस्तु वर्णनं.

सवैया इकतीसाः— जामें लोकालोकके सुभाउ प्रतिभासे सब, जगी ज्ञान सग ति विमल जैसी आरसी; दर्शन उदोत लियो अंतराय अंतकीउ, गयो महामोह भयो परम महारसी; सन्यासी सहज जोगी जोगसों उदासी जामें, प्रकृति पंचाशी ल

गि रहि जरि गरसी, सोहैं घटमदिरमे चेतन प्रगटरुप, ऐसो जि तांहि बंदत बनारशी ॥ ८० ॥

अर्थ.– हवे तीर्थंकरपदने लेई रहेली जे वस्तु छे तेना सरूपनुं जेमां लोक अने अलोकनो स्वनाव एटले खट ड्व्य नाव प्रतिनाती रहे न शक्ति निर्मल प्रगटी छे जेम आरीसामां पदार्थना नाव नासेछे, एवी ज्ञानमां सर्व नाव नासेछे, एटले ज्ञानावरण गयु, अने दर्शनावरणना थी केवल दर्शन उद्योत थयु. अने अंतराय नाश कर्यो, तेथी थयो; अने महा मोह कर्म जे छे ते नाश पाम्यो, तेथी परम यो, तेणे करी यथाख्यात चारित्रनो सन्यास एटले तेनो चारित्र आदि जे सहजयोग छे तेनो धरनार, मन वचन कायना अघातिक चार कर्मनी पच्यासी प्रकृती सत्ताये रहि छे ते पण बनीने वी थई रही छे, अने जेना घटमदिरमा चेतन छे ते प्रगटपणे शाही एवा श्री जिन राज देव तेने वणारसीदास वदन करेछे ए निश्चय स्तुति

हवे एवा शुद्ध चेतननी स्तुतिनु दृष्टांत देखाडीने निश्चय व्यवहारनो करेछे. अथ श्री निश्चय व्यवहार तीर्थंकर स्तुति कथन –

कवित्त छंद –तनु चेतन विवहार एकसे, निहचे जिन्न जिन्न है दार, सवे विवहार जीव थुति. नियत दृष्टि मिथ्या थुति सोइ, जिन सा जीव रूप महा वर. तनु जिन एक न मानै कोइ, ता कारन तनक थुतिमां निरमल है, नति नहि होइ ॥ ८१ ॥

एवो जिनराज–शरीर अने आत्मा ए बने व्यवहारमा एक सरखा छे, निश्चय

अर्थ –हवे पण जुदा छे. एमाटे तननी स्तुति करता जीवनी स्तुति थ मीने मर्ण पर्यंतथीथी जोतां ते मिथ्या स्तुतिछे जिनपद कर्म ज छे रूपपणु सूक्ष्मपणु विपाकी नथी. तेथी जिन ते जीव छे अने नोर ते जि न पामे, जेना सहज करी न मानीए, ते कारणे तननी स्तुति करी ते जि अने जेनेविषे चोत्रीस अ॥

... रहित निर्मल रहेछे वस्तु सरूप कथन दृष्टांत करी दिढाववु है – तेम जेनुं मन वचन छे, ने अ चिरकाल गडी वसुधा महि नृपि महानिधि परि. जो हगवत तिन्है सब सूजी

। अचल कह्युंछे, पण निरंतर अचल आसन संभवे नही एवा जिनराजदेव जग
मां जयवत थाओ जेनी रूडी भक्ति करवाथी महामुक्ति फलनी प्राप्ती थायछे.

यथार्थ कथनः--

दोहरा.– जिन पद नाहिं शरीरकों, जिन पद चेतन मांहि; जिन वर्नन कछु
और है, यह जिन वर्नन नांहि. ॥ ३७ ॥

अर्थ.–एटली व्यवहार स्तुति करीने हवे सत्यार्थ वात कहे छेः--ए जे जिन नाम
। ते जीव विपाकी छे पण पुद्गल विपाकी नथी, तेथी जिनपद ते शरीरनो नथी, जि
नपद तो चेतननो छे; तेथी जिनेश्वरनी स्तुति कोई ओरज छे पण पूर्वे जे जिनेश्वर
नी स्तुति करी ते जिन स्तुति नथी. इहां शरीर जड छे अने आत्मा चेतन छे ए बने
भाव भिन्न स्वभावमां छे तेनुं दृष्टांत आपेछे. ॥ ३७ ॥

अथ जड चेतन भिन्नभाव दृष्टांत कथनः--

सवैया इकतीसा --उंचे उंचे गढके कंगुरे यों विराजत है, मानो नभ लोक ली
लवेकों दांत दियो है; सोहे चिहोंओर उपवनकी सघनताई, घेरा करि मानो भू
मि लोक घेरि लियो है; गहरी गंभीर खाई ताकी उपमा बनाई, नीचो करि आ
नन पताल जल पियो है; ऐसो है नगर यामें नृपको न अंगकोउ, योंही चिदानं
दसों शरीर भिन्न कियो है ॥ ३८ ॥

अर्थ.– जेम कोई गढना उंचा उंचा कांगरा वीराजे छे (अहिं कवि उत्प्रेक्षणा
[illegible] छे.) पण ते कांगरां नथी पण मानुं हुं जे आ नगरमां स्वर्गलोकने गली, जू
माने दांत आप्यां छे; एटले जाणे स्वर्ग लोकने गली जशे. अने एनी चारेकु कं.
उपवन एटले बाग वाडीनी सघनता एवी शोभी रही छे के जाणे भूमिक्षेत्र जोयुं
ते मनुष्य लोक तेणे घेरी लीधो छे. अने ए नगरनी चारे बाजुए ऊंडी ते बन्न
[illegible]नी ते जाणे नीचुं आनन एटले मुख करीने पातालज पाणी पात्यांग [illegible]
ए रीते जेणे त्रणे लोक जीत्या छे एवुं नगरनुं वर्णन कीधुं पण ए [illegible]
राजाना अंगनुं कांई वर्णन कीधुं नथी. मतलब के चिदानंदथकीतनी भिन्नता
करी बताव्युं. ॥ ३८ ॥ [illegible] अने ते पर

अथ तिर्थंकरकी निहचे स्तुति सरूप कथन [illegible]

सवैया इकतीसा.– जामें लोकालोकके सुभाव प्रतिभासे [illegible]
ते विमल जैसी आरसी; दर्शन उदोत लियो अंतराय अंतक
[illegible]रम महारसी; सन्यासी सहज जोगी जोगमें उदासी [illegible]

पनी टेकहों, मोह कर्म मम नांहि नांहि भ्रम कूप है, शुद्ध चेतना मारो रूप है. ॥ ८४ ॥

अर्थ -- विचक्षण पुरुष केहेछे के, हुं सदा एक पणे रहु छु, चेतना रपूर छुं, अने पोताना आधारथी रहु छु, मने बीजानो आश्रय नथी नातनो मोह कर्मनो प्रपच छे ते मद्दारु स्वरूप नथी, ए भ्रम स्वरूप नथी, पण शुद्ध चेतनानो सिधु के० समुद्र ते मारु रुप छे ॥ ८४॥

हवे एवा पोताना स्वरूपने जाण्याथकी केवी अवस्था प्राप्त थई ते केहे

अथ ज्ञान व्यवस्था कथन –

सवैया इकतीसा -- तत्वकी प्रतीतिसो लख्यो है निज पर गुन, हग न त्रिविध परिनयो है, विसद विवेक आयो आछो विसराम पायो, पनो सहारो सोधि लयो है, कहत बनारसी गहत पुरुपारथकों, सहज सों विभाव मिटि गयो है, पन्नाके पकाय जैसे कचन विमल होत, तैसे तन प्रकाश रूप नयो है ॥ ८५ ॥

एवी जीव तत्वनी प्रतीति थई तेणे करीने ज्ञानादिक निजगुण अने परगुण जा द्रव्यना गुण जे गति, स्थिति, अवगाह, वर्त्तना, वर्णादिक ए सर्व जाणी ज्ञान अने चारित्र ए त्रणे गुणनेविषे परिणामी रह्यो छे, निर्मल विवेक रो विश्राम पाम्यो ते स्थिरता पामीने पोताने विषेज पोतानो सहज धी लीधो अही वणारसीदास केहेछे के त्यारे आ पुरुषार्थ ते तेनुं ग्रहण करीने सहज स्वभावमा राग द्वेष मोहरूपी विभाव जे हतो ते मटी गयो अहीं दृष्टांत कहेछे –जेम पाकी इटनी नवीमां गाळवाथी ए निर्मल थायछे, तेम शुद्ध चेतन निर्मलरूप थईने प्रकाश रूप थयो ॥ ८५॥

हवे विभाव टूटवाथी निज स्वरूप प्रगटताने पामे तेउपर नटी जे स्त्री, तेनु दृष्टांत कही देखाडे छे –अथ वस्तु स्वरूप कथन पातरको दृष्टांत-

सवैया इकतीसा –जैसे कोउ पातर बनाय वस्त्र आभरण, आगति निशि आडो पट करिके, दुहू उर दीवटि सवारि पट दूरि कीजे सकल सन क देखें दृष्टि धरिके, तैसें ज्ञान सागर मिथ्यात ग्रथि भेद करि रह्यो तिहु लोक भरिके, ऐसो उपदेस सुनि चाहिये जगत जीव सुद्धता जग जालमें निकरिके ॥ ८६ ॥

अर्थ –जेम कोई नाचनारी स्त्री आडो पट करीने तथा वस्त्र भूषणथी

ा मनोहर वनावीने रातना वखते अखाडामां आवी ऊभी रहे. ते आडा पटथी रा
ेनविषे देखाय नही. ने ज्यारे अंतरपट दूर करी बेहु तरफ हाथमां काकडा मशगावी
ेन्धय दूर करे त्यारे सर्व सभाना लोक दृष्टी धरीने तेनां रूप सणगार वगेरेनी शो
ा प्रगट जोई शीके छे. तेम ज्ञाननो सागर एवो जे आत्मा, ते मिथ्यातरूप आडा
ेथी प्रछन्न रह्यो हतो. ते कोई समे मिथ्यात ग्रंथी रूप पटने भेदीने प्रगट थ
ा; ते ज्ञान समुद्र त्रण लोक भरी रह्यो छे; एटले त्रणे लोक ए आत्माने
पे जाणी रह्या छे. हवे गुरु कहेछे के अहो जगतवासी जीव. में जे पूर्वे उपदे
ीधो एवा उपदेशनुं श्रवण करवुं तारे जरुरनुं छे; ते सांभळी जगत जाळ
ंथी निकळीने तारी शुद्ध दशाने संभारी लेईस. ॥ ८६ ॥
ति श्रीनाटिक समयसारना प्रथम जीव द्वारनुं निरूपण बाळबोध सहित समास थयुं.

दोहरा.—जीव तत्व अधिकार यह, कह्यो प्रगट समुझाइ; अब अधिकार अ
ीवको, सुनो चतुर मन लाइ ॥ ८७ ॥

अर्थ—जीवतत्वनुं जेवुं स्वरूप छे तेनो ए अधिकार एटले स्वरूप, लक्षण, गु
ा, प्रगट समजाव्यो. हवे बीजो जे अजीव द्वारछे, तेमां अजीवनो अधिकार
ुण्यपणे करीने कहुंछुं; ते चतुर लोको चित्त दईने सांभळजो ॥ ८७ ॥

हवे अजीवने पण ज्ञानवडेज जाणवानुं बनेछे अने आ ग्रंथमां अनिध्येय ज्ञानछे
ाटे संपूर्ण ज्ञाननी अवस्था निरूपण करेछेः—अथ ज्ञानकी व्यवस्था कथनः—

सवैया इकतीसा—परम प्रतीति उपजाइ गनधरकीसी, अंतर अनादिकी विभा
ा विदारी है; भेदज्ञान दृष्टिसों विवेककी सकति साधि, चेतन अचेतनकी
ा निरवारी है; करमको नासकरी अनुभौ अभ्यास धारी, हियेमें हरख निज
ता संभारी है; अंतराय नास गयो शुद्ध परकास भयो, ज्ञानको विलास ता
ंदना हमारी है. ॥ ८८ ॥

र्थ.—प्रथमथी जे ज्ञानवडे भव्य लोकना आत्मामां गणधरनी माफक तत्व
म प्रतीति उपजावी, अने समकाळपणे अंतरात्मानेविषे अंतरनी जे अना
विभावता (मूढता) तेने विदारीछे; अने जड चेतन ए बने भिन्न छे एवु
ा प्रगटयुं तेनी दृष्टी तेज विवेकनी शकति ते साधि एटले जुदा जुदा गुण
ाण्या; अने जुदा जुदा जाणीने चेतन तथा जड तेनी दशा ठीक की
ाठी गुण श्रेणीने धरीने क्षणेक्षणे कर्मनी निर्जरा करवा लाग्यो; ते करी

अनुभव अभ्यास कीधो, एटले सत्य प्रत्ययमा पेशो, अने हृदयानेविषे ह्रीं अने पोतानी शक्ति उत्कृष्ट कीधी ए कार्य थता अंतराय कर्म नाश्यु, रूप प्रकाश पाम्यु, एवो कोई क्रमे क्रमे करी ज्ञाननो विकास उत्तम ने अमारी वंदना छे ॥ ८८ ॥

शिष्य पूछे छे के स्वामी, तमे जे ज्ञान विलास कह्यो, तेतो तेवोज छे, ते पामवु दुर्लभ छे, ते उपर गुरु परमार्थेनी शिक्षा दिये छे -- अथ क्षा कथन --

सवैया इकतीसा -- भैया जगवासी तू उदासी व्हैके जगतसों, एक छ म॰ पदेस मेरो मानु रे और सकलप विकलपके विकार तजि बैठके एक ठोर आनु रे, तेरो घट सर तामे तुही है कमल ताको तुही मधुकर ह्वै ॥ रे, प्रापति न व्है है कछु ऐसो तू विचारतु है सही व्है है प्रापति सरूपयाही जानु ॥

अर्थ -- अरे जीव जगतवासी भाई तु जगत के० जव भ्रमणा तेतु ए (शब्द स्पर्श, रूप, रसने गंध) एने आचारांग सूत्रना वचनथी नगत ह तेथी उदास थईने, एक छ महिना सूधी अखण्ड थागए मारो उपदेश एटले मान्य कर एमा छ महीना कह्या ते उपलक्षणथी जाणवा, पण नथी, अने आर्तरौद्रध्यानथी अज्ञान दशामां संकल्प विकल्प घणा करे छे, ते आत्मानेविषे विकार उपजे छे, माटे तेना विकारने तजीदे, अने एकान्त स्थ सी मनने एक ठेकाणे परिणामथी राख ताग घट के० शरीर तेनेज स वो देख अने तेमा एक उज्वल कमल जोइये ते कमल तूज छे अने तुंज दा रूपने नीरे मधुकर रूपे था, एम करवाथी तू सहस्र दल कमलमा विनाश ए पिंडस्थ ध्यान लगाव्यु एटलु कार्य करवाथी पोताना स्वरूपनी प्राप्ति न थ तू क्यारे पण विचारीश नही एवा प्राणायामवडे कमल काप सुनशे ने रूपनी प्राप्ति थश, एज रीते गुणज्ञान खुलशे ॥ ८९ ॥

हवे जीवने अजीव एक सरखा थई रह्याछे, ते जुदा जुदा ०५ ...

अथ वस्तु व्यवस्था वर्णन --

दोहरा -- चेतनवंत अनंत गुण, सहित सु आतमराम यात अनमिल है सब पुद्गलके परिणाम ॥ ९० ॥

अर्थ -- चेतनावंत छे अने अनंत गुणसहित जे पदार्थ छ न ता आतम

ाणवो; अने जे एटलां लक्षणोथी मलेला नथी ते सर्वे अपर पुद्गलना परिणाम ाणवा. ॥ ९० ॥

हवे एवी पिछान अनुनवविना न होय माटे अनुनवनी प्रशंसा कहेछेः—

अथ अनुनव प्रशंसाः—

कवित्त छंदः—जव चेतन सँनारि निज पौरुष, निरखै निज दृगसों निज मर्म; व सुखरूप विमल अविनाशक, जानै जगत शिरोमनि धर्म; अनुनौ करै शुद्ध तनको, रमै सुनाउ व मै सव कर्म; इहि विधि सधै मुक्तिको मारग, अरु समीप ावे शिव सर्म. ॥ ९१ ॥

अर्थः—ए चेतन जे छे, ते जारे पोतानुं पुरुष के० पराक्रम संनारे, ने पछे पोतानी ृष्टी करी पोतानुं मर्म जे चेतनपणुं छे ते निरखे; त्यारे पोतानो धर्म के० स्वनाव सुख ूप जे निर्मल पणुं, अविनाशी पणुं, जगत शिरोमणी पणुं, सहज स्वरूप तेने ाणे. एज अनुनव एटले जे निःसंदेह यथार्थ ज्ञान छे तेज चेतनने शुद्ध करेछे, अने एज अनुनव जे छे ते पोताना स्वनावमां रमे अने सर्वे कर्मने दूर करे, एरीते अनुनववडे मुक्ति मार्ग सिद्ध थायछे; अने शिवशर्म के० मोक्षनुं सुखते पामेछे९१

हवे ए अनुनवथकी चेतनविषे पोतानुं अस्तित्व साधीने परनुं नास्तित्व साधेछेः—

अथ अनुनव प्रशंसाः—

दोहराः—वरनादिक रागादि जड, रूप हमारो नांहि; एक ब्रह्म नहि दूसरो, दीसे अनुनव मांहि. ॥ ९२ ॥

अर्थः—आ शरीरमां जे वर्ण गंध रस स्पर्श राग द्वेषादिक पदार्थनेविषे मोह छे ते मारुं आत्मरूप नथी; अने अनुनवविषे पोतानुं एकज जाणपणानुं रूप अमे जोइये छइये. पण बीजुं रूप जोता नथी. ॥ ९२ ॥

हवे जीव अजीव एक क्षेत्रावगाही थया ते जुदा केम केहेवाय? ते उपर दृष्टांत केहेछेः— अथ वस्तु विचारः—

दोहरा— खांडो कहिये कनकको, कनक म्यान संयोग; न्यारो निरखत म्यान सों, लोह कहैं सव लोग. ॥ ९३ ॥

अर्थः— जे सोनानी म्यानमां राखेली तलवार लोक नाषामां सोनेरी केहेवायछे, ते सोनेरीनो योगतो म्यान उपर छे; जारे तरवारने सोनेरी म्यानमांथी वार काहाडी जोइये त्यारे तरवार लोढानी जणाय, पण सोनेरी नही जणाय. तेम अंतरात्मा मांहे जाणवो. ॥ ९३ ॥

कोतुक, सो जलिये वरनादि पसारो, मोहसुँ भिन्न जुदो जडसों चिन, टक देखनहारो ॥ ८८ ॥

अर्थ – आ घटमा अनादि कालनो विस्तारवत भ्रमरूप महा अखाडो मचाई रह्यो छे. ते अखाडामा बीजो कोई शुद्ध स्वरूप तो अने पुद्गल द्रव्य जे छे ते अत्यत महोटो नृत्य करी रह्योछे, एज अविवेकी ज्ञा ते अजीव पुद्गल द्रव्य छे तेहिज एकेंद्रियादिकना वेषमा लेवरावी रवी वर्णादिकना पसारनी सामग्री लेवरावी कौतुक देखाडी रह्यो छे वेकरूप जे छे ते मोहथी जे पुद्गल जड तेथी जूदो छे तेहिज चिन्मूर्ति चेतन राजाछे ते तो इहा नाटिकनो देखनारो छे ॥ ८८ ॥

हवे जे जीव अने अजीवनु एकतापणु मिथ्या ज्ञानमा भासेछे, तेतो थी भिन्न भिन्न रूप देखायछे, ते कहेछे –अथ ज्ञान विलास कथन –

सवैया इकतीसा – जैसे करवत एक काठ बीचि खम्ड करै जैसे रानहंस दूध जलकों, तैसै भेदज्ञान निज भेदक शकतिसेति, भिन्न भिन्न करै चिदानंद पुद्गलकों, अवधिकों ध्यावै मनपर्येकी अवस्था पावे, उमगिके आवे परमावधि केवलकै याही भांति पूरन सरूपको उद्योत धरे, करै प्रतिबिंबित पदारथ सकलकों ॥ १०० ॥

अर्थ – जेम एक लाकडाने करवती वेहेरीने बे भाग करेछे ने जेम दूधने पाणी एकठा होय तेने जुदा जुदा करी नाखे छे तेम जेने के भेदज्ञान प्रगटे ते पोतानी भेदक शक्तिवडे चिदानद तथा पुद्गल एकक्षेत्र य तेने जुदा जुदा करेछे अने तेज भेदज्ञान पोताना क्षयोपशम नी अवधिने ध्यावे एटले पोतानी अवधि ज्ञानरूप पर्यायने पामे, पछी तेहिज ज्ञानथी विशुद्ध थयेलु मनपर्याय अवस्थाने पामे, अने तेथी विशुद्ध थईने परमावधि सुधी पोचे, एम वधते वधते भेदज्ञान थकी पोतानु पूर्ण स्वरूप यथातथ धारण करे, एटले केवल अवस्था धारे, अने सर्व पदार्थने प्रतिबिंबित करे ॥ १०० ॥

इती श्री समयसार नाटकनो बीजो अजीवद्वार बालावबोध सहित समाप्त थयो

दोहरा – यह अजीव अधिकारको, प्रगट बखान्यो मर्म, अब सुनु जीव अजीव के, करता किरिया कर्म ॥ १०१ ॥

अर्थ –अजीव द्वार एरीते समजावीने कह्यो अने एनु रहस्य ए छे के अजीव पदार्थ जाणीने [illegible] जीव पदार्थ जुदो जाणवो, तेनु वर्णन कयुंछे हवे [illegible]

विषे कर्त्ताकर्मक्रियानो विचार अने अजीवनेविषे पण कर्त्ताकर्मक्रियानो
ार गुरु कहेछे ने शिष्य शानजेछे ॥ १०१ ॥
हवे कर्त्तापणामा जीवनी मिथ्या दृष्टि छे ते भेदज्ञानथी छुटे. माटे भेदज्ञा
नुं माहात्म्य कहेछे.–अथ भेद ज्ञान माहात्म्य वर्नन.-
सवैया इकतीसाः—प्रथम अज्ञानी जीव कहै में सदीव एक, दूसरो न और में
ी करता करमको: अंतर विवेक आयो आपापर भेद पायो, भयो बोध गयो मिटी
ारत भरमको; भासे छहों दरवके गुण परजाय सब, नासे दुख लख्यो मुख पूर
. परमको: करमको करतार मान्यो पुदगल पिंड, आपु करतार भयो आतम धरम
ो. ॥ ३ ॥ जाही समे जीव देहबुद्धिको विकार तजे, वेदत सरुप निज भेदत भ
मको; महा परचंड मति मंमन असंड रस, अनुभौ अभ्यास परकासत परम
ो; ताही समे घटमें न रहे विपरीत भाव, जैसे तम नासे भानु प्रगट धरमको;
ऐसी दशा आवे जब साधक कहावे तब, करता व्हे कैसे करे पुद्गल करमको.॥३॥
अर्थ –प्रथमथी अज्ञानी जीव जे छे. ते पोताना रुपनी भूलवडे एमज कहेछे
ड निरंतर कर्मनो कर्त्ता हुंज हुं, बीजो कोई नथी एगीने जीवनी अपेक्षा लईने
कर्मनो कर्त्ता बनेछे. पछी ज्यारे घटमा विवेक प्राप्त थाय, त्यारे निजरुपनो भेद स
रज्यो एटले बोध थयो, अने भ्रम के० मिथ्यातनो खेल मटी गयो; ने भ्रम नाश
मना छए द्रव्यना गुण पर्याय आत्मानेविषे भासवा लाग्या, क्षण क्षण अक
भेद ते पर्याय कहीए अने पूर्णपुरुष जे छे तेनुं सुख दीठुं, तेणे करीने [illegible]
कर्त्ता पुद्गलपिंड मान्यो. अने पोते अकर्त्ता थयो अने आत्मिक धर्म [illegible]
कर्त्ता, तथा चेतनता इत्यादिक स्वभावनो हुं पोते कर्त्ता छुं एम [illegible]
ानो अकर्त्ता अने पोताना स्वभावनो कर्त्ता एम केहवा लाग्यो. ॥ ३ ॥
जे प्रस्तावे जीव छे, ते श्रेणीनुं आरोहण करे, अप्रमत्त [illegible]
र तजे, एटले बाह्यात्माने पोतापणे जाणवो [illegible]
शुद्धज वेदे, अने भ्रमनो भेद करे, वाणी [illegible]
ननो रस अखंड छे, पूर्ण रसस्वाद ले, [illegible]
न करी अंते परमात्मानो प्रकाश करे [illegible]
ी, एटले अहंबुद्धि वडे जे अकर्त्तां [illegible]
ो ते रहे नही. ते उपर दृष्टांत [illegible]
ना प्रकाशवाथी तम जे [illegible]

मत्त दशा ज्यारे प्राप्त थाय, त्यारे ते आत्मस्वभावनो साधक थयो, तेनो कर्त्ता केम थाय ! अने पुद्गलरूपी कर्मने केवी रीते करे ! एनो उपयोग नथी ॥ ३ ॥

हवे अहीं प्रथम आत्माने कर्मनो कर्त्ता मानीने पछी तेने अकर्त्ता ते ज्ञानना सामर्थ्य वडे बनेछे ते कहेछे –अथ ज्ञानसामर्थ्यवर्णन –

सवैया इकतीसा – जगमें अनादिको अज्ञानी कहै मेरो कर्म, किरियाको प्रतिपाखी है, अंतर सुमति भासी जोगसों भयो उदासी, ममता मिटाय परजाय बुद्धि नाखी है, निरभै सुभाउ लीनो अनुभौके रस भीनो, कीनो व्यवहार दृष्टि निहचैमें राखी है, भरमकी दोरी तोरी धरमको भयो धोरी, परमसों प्रीति जोरी करमको साखी है ॥ ४ ॥

अर्थ – संसारनेविषे जीव अनादिकालथी अज्ञानीज छे, ते कहेछे केने अशुभ कर्मनो कर्त्ता हुज छुं क्रियानो प्रतिपक्षी के० कर्मनी क्रियानो पक्षकरनारो छु, पछी ज्यारे अंतरमां सुमतीनो भास थयो, अने मन वचन तथा कायाना योगथी उदास थयो, एटले ए योगने पररूप समज्यो, तथा ए योगनी ममता मटी गई अने परजाय बुद्धि के० मन वचन अने कायाना योगनी जे बुद्धि ते नाखी दीधी, अने द्रव्यबुद्धि राखीने आत्मानो जे निर्भय स्वभाव छे, तेनुं ग्रहण कीधुं अने ए स्वभावनो जे अनुभव रस तेमां भीनो के० मग्न थई रह्यो अने सर्व व्यवहारमां प्रवृत्ति करी रह्योछे, पण दृष्टिमां श्रद्धा तो निश्चयमां राखी छे, एम करतां भ्रमनी दोरी तोडी नाखी, एवु उद्मस्थपणु मूकी दीधु, अने आत्मिक धर्म जे पोतानो स्वभाव तेना धोरी के० धरनारो थयो, परम साथे प्रीति जोडी, एटले सिद्धपणामां प्रीति राखीने कर्मनो साखी थयो, एटले पुद्गलकर्मने करे तेनो साक्षी थया छे ॥४॥

शिष्य पुछेछे के, चेतन तथा अचेतन एकक्षेत्रमां रहेछे, अने कर्म करेछे, तो चेतनने कर्मनो अकर्त्ता केम मनाय ? गुरु कहेछे के, ज्ञानशक्तिवडे अकर्त्ता मनाय ते कहेछे.– अथ भेदज्ञानको सामर्थपनो कथन –

सवैया इकतीसा – जैसो जो दरब ताके तैसे गुन परजाय, ताहीसों मिलत पै मिलै न काहु आनसों, जीव वस्तु चेतन करम जड जाति भेद, अमिल मिलाप ज्यों नितंब जुरे कानसों, ऐसो सुविवेक जाके हिरदे प्रगट भया, ताका भ्रम गयो ज्यों तिमिर भग्यो भानसों, सोइ जीव करमको करतासो दीसे पै अकरता कह्यो है सुद्धताके परवानसों ॥ ५ ॥

अर्थः— जे जेवुं द्रव्य होय तेना तेवा गुणपर्याय होय छे, ते तेज द्रव्यसाथे मलेछे, पण वीजा द्रव्यसाथे मलता नथी; जेम कोई स्निग्धगुणवडे घृतादिक द्रव्य पोताना पर्यायथी स्निग्ध गुणवाला द्रव्यसाथे मले, पण रुक्ष गुणवालासाथे मले नही; तेम ए जीव वस्तु चेतनजाति छे, अने कर्म जे छे ते जडजाति छे, एवो जातिभेद छे. तेथी चेतन तथा जडने अमिलनता छे, पण कांई युक्ति मिलाप नथी. जेम केडना नागनी नीचे पश्चिम प्रदेश नितंब छे, ते उपर रहेला कानसाथे केम मले? एवो गुणपर्यायनो विवेक जेना हैयामां प्रगट थयोछे, तेना हैयामां पूर्वनो उपजेलो भ्रम नाश पाम्यो, ते उपर दृष्टांत केहेछे के, जेम सूर्यनो उदय थवाथी अंधकार नासेछे, तेम नाश पामेछे; एवा विवेकवालो जीव जे छे ते कर्मनो कर्त्ता तो देखायछे पण शुद्धता जे पोतपोताना द्रव्यनी गुण परिणति तेना प्रमाणथी जीवने कर्मनो अकर्त्ताज कह्यो. ॥ ५ ॥

हवे जीव अने पुद्गलना लक्षणना भेद देखाडीने एज वात दृढ करेछे:—

अथ जीवपुद्गललक्षणभेदकथनः—

छप्पय छंदः—जीव ज्ञानगुनसहित, आपगुन परगुन ज्ञायक; आपा परगुन लखै, नांहि पुग्गल इहि लायक; जीवरूप चिद्रूप, सहज पुदगल अचेत जड; ... अमूरति मूरतीक पुदगल अंतर वड; जबलग न होइ अनुभौ प्रगट, तबलग मिथ्यामति लसै; करतार जीव जड करमको, सुबुधि विकाशक भ्रम नसै ॥६॥

अर्थः—जीवजे छे ते ज्ञानगुणसहित छे, अने जेम पोताना गुणनो ग्राहक छे ... पारका गुणनो पण ग्राहक छे. अने एज गुणना भेद करीने पोताने ...रने लखै के० जुएछे; एवी कला शक्ति लायक पुद्गल क्यारे पण वनी शके ... जीवनुं स्वरूप चिद्रूप के० चेतनारूप छे, अने पुद्गलतो सेहेज भावे अचेतना ...टले जडछे. वली जीव अमूर्त्ति छे अने पुद्गल मूर्ति छे, ए मोटुं अंतर ए बंने ...यांसुधी शुद्धचेतननो अनुभव प्रगट न थाय. त्यांहांसुधी मिथ्यामति लसै ...वंत होयछे अने जडस्वरूपी कर्मनो कर्त्ता जीव छे, ते भ्रमबुद्धि छे; पण ...काशनो भ्रम ते सुबुद्धिना विकाश थवाथी नाश पामेछे. ॥ ६ ॥

...कर्म अने क्रिया ए त्रणे स्वरूप कहेछे:—अथ कर्त्ताकर्मक्रियास्वरूपकथनः—

...—करता परिनामी दरब, करमरूप परिनाम; किरिया परजैकी फिरनि, ...य नाम. ॥ ७ ॥

...पांतरने भजे ते परिणामी केहेवाय, एवुं जे द्रव्य, ते कर्त्ता कहिये; रूपां

तर यावु ते परिणाम, अने कर्मनु स्वरूप कहियें, अने पर्यायनुं क्रमे ...
क्रिया कहिये ए रीते कर्त्ता कर्मने क्रिया एवा त्रण नाम छे पण वस्तु ...

हवे कर्त्ता, कर्म, ने क्रिया ते केहेवामा नाम भिन्न भिन्न छे पण वस्तु एक
ते कहेछे -अथ कर्त्ताकर्मक्रियैकत्वकथन —

दोहरा —कर्त्ता कर्म क्रिया करै, क्रिया कर्म करतार, नाव भेद बहु विधि
वस्तु एक निरधार ॥ ८ ॥

अर्थ —कर्त्ता त्यारे केहेवाय के ज्यारे क्रिया करे, अने क्रिया त्यारे केहेवाय
ज्यारे कर्म करे. एम नाम भेद जातजातनो पड्यो पण करवाथी कर्त्ता
कर्म ने करवाथी क्रिया ए त्रणे एकज वस्तु छे ॥ ८ ॥

हवे एक कर्म क्रियानो कर्त्ता एकज होयछे, ते स्थापन करेछे —अथ कर्त्ता
कर्मक्रियाप्रनिस्थापना --

दोहा —एक कर्म कर्तव्यता, करे न कर्त्ता दोय, दुजा दरव सत्ता सुतो एक
भाव क्यों होय ॥ ९ ॥

अर्थ —ए वात तो खुल्ली छे के, एक कर्मनी कर्तव्यता के० क्रिया ते एकज छे
पछे अने तेनो कर्त्ता पण एकज होयछे, पण बे कर्त्ता एकज क्रियाना करनार न
होय अहीं चेतन द्रव्यसत्ता अने पुद्गलद्रव्यसत्ता ते तो जुदा के० ने प्रकारे जुदी
जुदी छे, ते माटे एक भाव एक कर्म केम बने ? ॥ ९ ॥

हवे कर्त्ता कर्म ने क्रियानो विचार कहेछे अथ कर्त्ताकर्मक्रियाविचार -

सवैया इकत्तीसा — एक परिनामके न करता दरव दोय, दोय परिनाम एक
दर्व न धरतु है, एक करतूति दोइ दर्व कबहों न करै, दोई करतूति एक दर्व न
करतु है, जीव पुद्गल एक खेत अवगाही दोई, अपने अपने रूप कोउ न टरतु
है, जड परिनामनिको करता है पुद्गल, चिदानद चेतन सुभाव आचरतु है ॥

अर्थ —एक परिणामना बे द्रव्य कर्त्ता न होय, अने एक द्रव्य ते बे
परिणाम धारण करे नहीं, ए रीते बे द्रव्य मळीने एक करतूती के० क्रिया करता
न नथी करे तेमज एक द्रव्य बे क्रिया पण नहीन कर, ए व्यवस्था यदि
... कहेछे के, जीव अने पुद्गल एकमेक थई रह्यां छे नथी ...
... रह्या पण पात पातना स्वभावथी कोई टळे नहीं नथी ...
ने जड छे ते जडपरिणामनाज कर्त्ता थाय, अने चिदानद चेतन ...
आचरन आचरे ॥ १० ॥

हवे सम्यक्तअवस्थामां कर्मनो अकर्त्ता अने मिथ्यात्वअवस्थानेविषे कर्मनो कर्त्ता छे एम कहेछेः—अथ सम्यक्तमिथ्याकथनंः—

सवैया इकतीसाः—महा धीठ दुःखको वसीठ पर दर्वरूप, अंध कूप काहुपै निवार्यो नहि गयो है; ऐसो मिथ्याभाव लग्यो; जीवकों अनादिहीको, याही अहं बुद्धि लिये नाना भांति भयो है; काहू समै काहूको मिथ्यात अंधकार भेद, मम ता उछेदि शुद्ध भाउ परिनयो है; तिनही विवेक धारि बंधको विलास डारि, आतम सकतिसों जगत जीति लयो है. ॥ ११ ॥

अर्थः— महाधृष्ट अने दुःखनो पहु आत्मद्रव्य ते परद्रव्य के० पुद्गलद्रव्य जेनुं रूप छे, पिंड छे, अने जेमां सत्य दृष्टि पोची शकती नथी, तेमाटे अंधकूप समान छे; अने कोईथी निवारण नथी थतो, एवो मिथ्याभाव जे मिथ्यात्व मोह कर्म ते जीवने अनादि काल थकी लागेलुं छे; एथी परद्रव्य तरफ जीवनी अहंबुद्धि लागी, तेथी जीव नाना प्रकारनो थयो. अने कोई समये यथाप्रवृत्तिकरणना वखते कोई भव्यजीवनो मिथ्यात अंधकार भेदायो, ते मिथ्यात्वग्रंथि भेदीने अने सर्व कार्यनेविषे जे अहंबुद्धिवडे रहेली ममता हती, तेने छेदीने शुद्ध चिदानंद भावमांज परिणमी रह्यो, ते समये ते भव्यजीव भेदविज्ञान के० जड चेतननो विवेक धारण करीने अविरति, कषाय, योग तथा प्रमाद ए जे बंधनाहेतु हता, तेनो विलास छोडीने आत्मशक्तिवडे एटले पोताना वीर्यबलवडे जगतने जीति लीयेछे; जगतथी निरालो थाय छे. ॥ ११ ॥

हवे जेम कर्मनो कर्त्ता आत्मा नथी तेम ए कर्म आत्माना करेलां नथी; अने कर्त्ता ने कर्म एक रूपज छे ते केहेछेः— अथ यथा कर्म तथा कर्त्ता एकरूपकथन.—

सवैया इकतीसाः—शुद्धभाव चेतन अशुद्धभाव चेतन दुहूंको करतार जीव और नही मानीये; कर्मपिंडको विलास वर्न रस गंध फास, करता दुहूको पुदगल पर मानिये; ताते वरनादि गुन ज्ञानावरनादि कर्म, नाना परकार पुद्गलरूप जानिये; समल विमल परिनाम जे जे चेतनके, ते ते सब अलख पुरुष यों वखानिये. १२

अर्थः— चेतनानेविषे शुद्ध भाव तथा अशुद्ध भाव जे जाणवामां आवेछे, ते तो परिणामरूप कर्म छे; तेथी ते बनेनो कर्ता जीवज छे बीजो कोई कर्त्ता मानवो नही. अने ज्ञानने ढांकवुं दर्शनने ढांकवुं इत्यादि कर्म पिंडनो विलास छे; अने वर्ण गंध रस स्पर्श इत्यादि जे कार्य अने कर्म छे, ए बनेनो कर्त्ता पुदगलद्रव्यनेज प्रमाण राखिये; तेणे करीने वर्णादि के० वर्ण रस गंध स्पर्श गुण छे ते

अने ज्ञानावरण दर्शनावरण प्रमुख जे कर्म छे ते सर्व नाना प्रकारना जाणवा, जेम कह्युं छे के, जोगापयम्पियेसा के० जोगवडे प्रकृतिप्रदेशबंध ने तेनेविषे चेतनना समलपरिणाम के० अशुद्ध परिणाम अने विम के० शुद्ध परिणाम ए जे कर्मरूपक छे ते ते सर्व अलक्ष पुरुषरूप छे, कर्मने एकज वखाणीए ॥ १२ ॥

हवे ए वातना रहस्यने मिथ्यादृष्टि जाणे नही, तेना उपर हस्तिनो

अथ मिथ्यादृष्टि वर्नन हस्तिको दृष्टांत •

सवैया इकतीसा —जैसैं गजराज नाज घासके गरास करि, नक्षत ७ भिन्न रस लियो है, जैसैं मतवारो नहि जानै सिखरनि स्वाद, जुगमें मगन गऊ दूध पियो है, तैसैं मिथ्यामति जीव ज्ञान रूपी है सदीव, पग्यो पाप सों सहज सुन्न हियो है, चेतन अचेतन दुहूकों मिश्र पिंड लखि, न विवेक कबु कियो है ॥ १३ ॥

अर्थ —जेम हाथीने अनाज साथे घास भेळवीने ग्रास आपेछे ते हाथीनो स्वभाव एवोछे के, घासने अनाजनो जुदो स्वाद लेतो नथी कोई माणस मद्य पीने मतवारो थयो होयने तेने दहीने खांडथी रण जमवाने आपीये ने पुछीये के एनो स्वाद केवोछे तो ते केहेशे के दूध पीयें तेवोछे पण तेने दारूनी धुममां जुदा स्वादनी खबर पडती नथी जीव मिथ्यामतिवालो थईने जोपण अनादि कालनो ज्ञानरूपी छे एटले तो पण पापकर्म अने पुन्यकर्ममा लीन थई रह्योछे, माटे सहज थयोछे त्यारे चेतन अने अचेतन जे पुद्गल ते बेउने मिश्र के० एक पिंड एकमेक मानेछे ; पुद्गलना भेळथी चेतनने पण पुद्गलकर्मनो कर्त्ता मानेछे कदी विवेकनी नजरथी जोतो नथी ॥ १३ ॥

हवे जीवने कर्मनो कर्त्ता मानवो ए भ्रमवडे मनायछे, ते उपर -

अथ भ्रमस्वरूपकथनदृष्टांत —

सवैया इकतीसा —जैसें महाधूपकी तपतिमें तिसीयो मृग, भरमसों जल पीवनकों धायो है, जैसें अंधकारमांहि जेवरी निरखी नर, भरमसों डरपि सरप मानि आयो है, अपने सुभाय जैसें सागर सुथिर सदा, पवन संजोगसों उछरि अकुलायो है, तैसें जीव जडसों अव्यापक सहजरूप, भरमसों करमको करता कहायो है ॥ १४ ॥

अर्थ.—जेम वैशाक ने जेठना घणा सख्त तापनी गरमीवडे मृग तरस्यो थईने
ाग तृपाने जोई तेने जल भरेलुं तलाव मानी ते मिथ्या जलने पीवाने दोडेछे; त
ा जेम अंधारे पडेली दोरडीने जोईने कोई मनुष्य भरमवडे तेने साप जाणी भरी
ायछे; वली जेम समुद्रनो स्वभाव स्थिर छे पण पवनना संजोग थकी उछलतो
देखायछे, तेम जीव निश्चय थकी जोता जड वस्तुथी अव्यापक छे, पण अनादि का
ननो सहज रूपी भ्रम तेणे करीने ते जीवने कर्मनो कर्ता कहेछे. ॥ १४ ॥
हवे जे सम्यक् दृष्टि थाय ते सम्यक् स्वभावे करीने भ्रम दूर करे; अने छु
ो छुदोज भाव जाणे, ते उपर राजहंसपक्षीनो दृष्टांत आपेछे. अथ सम्यक्
ृष्टिस्वभाववर्णनं, राजहंसके दृष्टांतः—
सवैया इकतीसा.— जैसै राजहंसके वदनके सपरसत, देखिये प्रगट न्यारो न्यारो छी
र न्यारो नीर है, तैसै समकितीकी सुदृष्टिमें सहजरूप, न्यारो जीव न्यारो कर्म
न्यारोई शरीर है; जब शुद्ध चेतनाको अनुभौ अभ्यासे तब, भासै आपु अचल न
जो उर सीर है; पूरव करम उदै आइके दिखाई देहि, करता न होइ तिन्हको
मासगीर है ॥ १५ ॥
अर्थ.— जेम राजहंसनुं वदन के० मुखनी अंदरनी जीभ, तेना अडकवाथी
ने पाणी एकमेक होय ते फाटीने दुध जुदुं ने पाणी जुदुं थाय छे; तेमज स
दृष्टिवडे सहजरूपे जीव छे ते जुदोज जणाय ने कर्म पण जुदुंज जणाय;
शरीर पण जुदुंज जणाय; एटले बाह्यात्मा, अंतरात्मा ने परमात्मा ए त्रणे
जणाय. ज्यारे शुद्ध चेतन अनुभवनो अभ्यास करे त्यारे पोतेज देखाय.
ेकनो बीजा कोई साथे भेल नथी. पूर्व संचित कर्म जे छे ते निज स्थिति
ये अथवा उदीरणा करी के० कर्म उदे आव्याथी देखाय; पण जीव कां
ो कर्त्ता नथी, पण ते कर्मना उदयनो तमासो जुएछे ॥ १५ ॥
शिष्य पूछे छे के, हे स्वामी जीव तथा पुद्गल एकमेक थई रह्या छे, त्यारे ते
ेवो जुदो जुदो स्वभाव केम जाणीये? त्यारे गुरु तेनो उत्तर आपतां पाणि
कनुं दृष्टांत आपेछे: अथ कर्तृत्व स्वभाव तसोदक तथा व्यंजनको दृष्टांतः
इकतीसा.— जैसै उसनोदकमें उदक सुभाउ सीरो, आगिकी उसनते
लखिये, जैसै स्वाद व्यंजनमें दीसत विविध रुप, लोनको सवाद
ज्ञान चखिये; तैसै याहि पिंडमें विभावता अज्ञानरूप, ज्ञानरूप जी

व भेद ज्ञानसो परखिये, भरमसो करमको करता है चिदानंद, दरव
रतार भाव नखिये. ॥ १६ ॥

अर्थ – जेम अमोदक के० ऊनुं पाणी ते पाणीनो पोतानो स्वभाव तो
के० शीतलज छे, पण तेनो स्पर्श करता गरम लागेछे ते गरमी आगनी छे
स्वादिष्ट व्यंजन के० शाकमा भात भातनो स्वाद होय छे अने लोन के०
नो खारो स्वाद जुदोज जणाय छे, ते जीभ ज्ञानवडे जणाय छे, तेम
विभावता जे कर्मनी साथे चेतननुं मलवु तेतो जेम में आ कीधुं एम
ज्ञानरूप छे अने जीव छे ते शुद्ध ज्ञानरूपी छे, एनेतो शुद्ध भाव...
छे ए वात भेदज्ञान वडे जणाय छे ए चिदानंद जे छे तेने कर्मनो कर्त्ता
ते भ्रमवडे मनाय छे। पण द्रव्यनो विचार करतां एनो कर्त्ता भाव बने नहि
ए ज्ञाता भावज बने ए रहस्य छे ॥ १६ ॥

हवे निश्चय प्रमाणवडे जे जेनो कर्त्ता छे तेने जुदो बतावेछे अथ कर्तृत्वविधान

दोहा – ज्ञानभाव ज्ञानी करै, अज्ञानी अज्ञान, दरव करम पुद्गल करै,
यह निहचै परवान ॥ १७ ॥

अर्थ – ज्ञानी होय तेतो ज्ञानभाव करे एटले जाणवारूपजे कार्य छे ते
छे, अने अज्ञानी होय ते हु कर्त्ता छु एम मानी अज्ञानभाव करेछे, द्रव्य
कर्म छे तेने पुद्गल करेछे, निश्चेप्रमाणमा एवु स्पष्ट छे ॥ १७ ॥

शिष्य पूछेछे के हे स्वामी ज्ञानभाव ज्ञानी करे ए वात केहेतां ज्ञानना कर्त्ता
व ठरेछे, ते कया नयथी ठरेछे? तेनो उत्तर गुरु आपेछे –अथ व्यवहार कर्तृत्वकथन

दोहा – ज्ञानसरूपी आतमा, करे ज्ञान नहि और, दर्व कर्म चेतन करै,
ह विवहारी दौर ॥ १८ ॥

अर्थ – आत्मा ज्ञानस्वरूपी छे माटे ज्ञानने तो तेज करे, पण बीजा नहि
ए निश्चय अने जे एम कहेछे के, द्रव्यकर्मनो करता पण चेतन छे तेनो व्यव
हार कहेवाय ॥ १८ ॥

हवे शिष्य प्रश्न – कर्तृत्वकथन –

सवैया तेईसा –पुद्गल कर्म करै नहि जीव कही तुम में समुझी नहि तैसी,
कौन करै यह रूप कहो अब, को करता करनी कहु कैसी, आपुहि आपु मिलै
बिछुरै जड क्यों करि मोमन संशय ऐसो, शिष्य संदेह निवारन कारन बात
हैं गुरु हैं कछु जैसी ॥ १९ ॥

अर्थः--हवे शिष्य पूछे छे के, जीवने निश्चयनयथी ज्ञाननो कर्त्ता कह्यो ने कर्मनो कर्त्ता कह्यो, तेनुं शुं कारण? हे गुरु पुद्गल द्रव्यरूप कर्मने जीव करे नही एवी वात तमे कही, ते वात हुं यथार्थ समज्यो नही. ए पुद्गलरूपी कर्मनो स्वभाव छे? इहां कर्त्ता तो ठरावना नथी अने तेनी क्रिया केवी छे ते कहो. वली पुद्गल कर्मनो कर्त्ता पुद्गलनेज बनावोछो त्यारे कर्ता कर्म बंने जड थया, ते पोतानी मेले जुवुं तूटा थावुं केम बनी शके? ए मारा मनमां संदेह छे. शिष्यना संदेह निवारवाने आ प्रश्नो यथार्थ उत्तर गुरु हवे कहेछेः— ॥ ११९ ॥

अथ गुरु उत्तर कथनः—

दोहाः— पुदगल परिनामी दरव, सदा परिनमे सोय; याते पुदगल करमको, पुदगल कर्त्ता होय ॥ २० ॥

अर्थः— हे शिष्य, पुदगल जे छे ते परिणामी द्रव्य छे. क्षण क्षणमां तरेहवार बनी जायछे तेमाटे सदा परिणमी रह्यो छे ते युक्तिथी पुद्गलिक कर्मनो कर्ता पुद्गलज थई शकेछे. ॥ २० ॥

अथ पुनः शिष्य प्रश्नः—

अडिल छंद.—ज्ञानवंतको भोग निर्जरा हेतु है; अज्ञानीको भोग बंध फल देतु है; यह अचरजकी वात हिये नहि आवही; बूझे कोऊ शिष्य गुरु समुझावही. ॥ २१ ॥

अर्थ.—हवे शिष्य पूछेछे के, ज्ञानभाव ज्ञानी करे एवुं कहेवाथी भोग निर्जरारूपी थाय छे ते केम? ज्ञानी भोग भोगवे ते कर्मनी निर्जरा करेछे, त्यारे तो ज्ञानीनो भोग निर्जरानो हेतु छे अने अज्ञानी जे भोग भोगवे ते कर्म बंधन करेछे; त्यारे तो अज्ञानीनेज भोग बंध फलदाई कह्यो एतो अचरजनी वातछे; केमके भोग भोगववामां समान होय ने एकनो भोग निर्जरानो कारक अने बीजानो भोग बंधनो कारक एम केम बने? अने ए वात हृदयमां वसती नथी. आवुं शिष्यनुं केहेवुं सांभलीने गुरु तेनो उत्तर कहेछे.— ॥ २१ ॥

अथ गुरु उत्तर कथनः—

सवैया इकतीसाः—दया दान पूजादिक विषय कषायादिक, दोहू कर्म भोग पै दुहूको एक खेतु है; ज्ञानी मूढ करम करत दीसे एकसे पें, परिनाम भेद न्यारो न्यारो फल देतु है; ज्ञानवंत करनी करै पें उदासीन रूप, ममता न धरै ताते निर्जराको हेतु है; वहे करतूति मूढ करै पे मगन रूप, अंध भयो ममता सो बंध फल खेतु है. ॥ २२ ॥

अर्थ --दया पालवी, दान देवु, पूजा प्रमुख करवी, एक एवी रीतना अने पाच इन्द्रियोना विषयनुं सेवन करवु, कषायनुं सेवन करवु, एक एवी मे छे, ए बंने कर्मनो ससारमा जोग छे, पण क्षेत्र एक छे, तेथी बंने छे अने ज्ञानी पण ए बे कर्म करे छे, तथा अज्ञानी पण करे छे, अने ए र्ता तो ज्ञानी अज्ञानी एक सरखाज देखाय छे, पण एना परिणाम दा छे माटे ए कर्मनु फल जुदो जुदो आपे छे ज्ञानवान जे कर्म क्रिया उदासीन रूप थईने करे छे, एटले एनी मेले उदय आवेलु कर्म करेछे मता धरतो नथी, ए माटे निर्जरानो हेतु छे अने एज कर्म क्रिया पण ए क्रिया करवामा आनद रूप रहे छे, ने निजात्म शुद्धीने विसरी एटले अध जेवो बनी जाय छे, अने ममता धारण करे छे, तेथी बध ये छे, एज माटे अज्ञानी अज्ञाननो करता ठरे छे ॥ २२ ॥

हवे कुभारनुं दृष्टात आपीने मूढनु कर्तापणु शिद्ध करेछे –

अथ मूढ कर्तृत्व कथन कुलाल दृष्टात –

छप्पय छद –ज्यों माटीमहि कलस, होनकी शक्ति रहे ध्रुव, दंड चक्र कुलाल वाहिज निमित्त हुव, त्यों पुदगल परवानु, पुज वरगना भेष धरि, वरनादिक सरूप विचरत विविध परि, बाहिज निमित्त बहिरातमा, ज्ञान मति, जगमाहि अहकृत भावसो, करम रूप व्हे परिनमति ॥ २३ ॥

अर्थ –जेम कलसरूप कार्य थवामा माटी द्रव्यनी शक्ति ध्रुव के० निश्चय छे ते कार्यनेविषे तेने फेरववानो दंड अने चक्र के० चाकने चीवर उतारवानो, कुभार ए सर्व बाह्य निमित्त थया तेम परमाणु पुद्गलनो पुज ते बधपणु र्मणवर्गणानो भेष धरीने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, नामकर्म गोत्रकर्म अतराय ए स्वरूपे विविध के० भात भातनो पुद्गल अहीं बहिरात्मा एटले देह मनुष्यादिरूपी बाह्यात्मा बाह्यनिमित्त थईने, रूपी अज्ञान थईने अहीं कारण बन्यो, त्यारे जगतमां अहकारबुद्धिनी तेहिज पुद्गलबध कर्मरूप बनीने परिणम्यो छे ॥ २३ ॥

हवे निश्चे जीवनु अकर्तापणु मानीने एना अनुभवमा रहेवु तेनु माहात्म्य

अथ शुद्धानुभव महात्म्य कथन –

सवैया तेईसा – जे न करे नयपक्ष विवाद धरे न विषाद अलीक न भाखे उदवेग तजे घट अंतर, शीतलभाव निरतर राखे, जे न गुनी गुन भर वि

ाकुलता मनकी सब नाखे; ते जगमें धरि आतमध्यान अखंमित ज्ञानसुधारस चाखे
अर्थः—जेम मिथ्याती लोक पोतपोताना नयनो पक्ष धरीने पोतपोतामां विवाद क
छे तेम न करतां जे सहज आनंदमां रहेछे; ने विषाद धरता नथी, अने कूडुं बोल
ा नथी, अने दुष्ट ध्यान धरता नथी एटले उदवेगनो त्याग करेछे; अने हमेश
ोताना हृदयनेविषे शीतल भाव राखेछे, ने एवा शुद्ध आत्माना अनुभवमां मग्नछे.
ाथी आत्मा गुणी छे ने ज्ञानगुण छे, एवो जेने भेद विचार रह्योज नथी, अने
िकल्प के० व्याकुलताने मनमांथी काढी नाखे. एवा जे शुद्ध अनुभवी थाय, तेज
ातमध्यान धरीने जगतनेविषे संपूर्ण केवल ज्ञानरूप अमृत रस तेने चाखेछे. २४
हवे निश्चय नय थकी अकर्त्तापणानी स्थापना अने व्यवहार नयवडे कर्त्ताप
ानी स्थापना प्रमाण करी बतावे छेः—अथ निश्चय व्यवहारनय प्रमाण स्थापनाः-
सवैया इकतीसा.— विवहार दृष्टिसो विलोकत बंध्योसो दीसे, निहचे निहार
ा न बांध्यो यह किनही; एक पक्ष बंध्यो एक पक्षसों अबंध सदा, दोउ पक्ष अपने
अनादि धरे इनही; कोउ कहै समल विमल रूप कोउ कहै, चिदानंद तैसोई ब
ान्यो जैसो जिनही; बंध्यो मानै खुल्यो मानै दुहुनको भेद जानै, सोई ज्ञानवंत
ीव तत्व पायो तिनही. ॥ २५ ॥
अर्थः— चतुर्गतिरूप संसारमां भ्रमण करवानो आत्मानो व्यवहार जोइए तो
आत्मा कर्त्ताज देखाय ने बंधमां पण जणाय, अने निश्चयनयवडे ज्ञाननोज क
र्ता अने ज्ञानस्वरूपी जोइये तो एज आत्मा कर्ममां बंधायलो नही जणाय; तेथी
एकलो व्यवहार पक्ष ग्रहीये तो आत्मा बंधमां छे, ने एकलो निश्चयपक्ष ग्रही
ये तो आत्मा सदा अबंध जणाय, एवा बंने पक्ष अनादिकालना ग्रहण कीधा छे.
कोई व्यवहारनयवालो होय ते जीवने समल कहेछे, ने कोई निश्चयनयवालो होय
ते एने विमल कहेछे पण जेणे जेवुं पोतानी बुद्धिथी चिदानंदने वखाण्यो तेवोज
चिदानंदछे. हवे जे सम्यक्दृष्टि होय तेतो आत्माने बंधायलो पण माने, अने
अबंधपण माने, पण ए मानवामां बंनुनयनो भेद जे जाणे तेज ज्ञानी केहेवाय,
अने तेणेज जीव तत्वनुं स्वरूप ओलख्युंछे ॥ २५ ॥
हवे बेउ नयने समान राखीने समकित गुणथी समरस भावमां रहे तेनी प्र
शंसा करेछेः—अथ समरसी भाव प्रशंसा कथन.—
सवैया इकतीसा.—प्रथम नियत नय दूजो विवहार नय, दुहुकों फलावत अ
नंत भेद फले है; ज्यों ज्यों नय फले त्यों त्यों मनके कल्लोल फले, चंचल सुभाव

ो तिन मद्य मांस चारव्यो है; तैसे एक वेदनी करमके जुगल पुत्र, एक पाप ए
ुण्य नांउ जिन्न जारव्यो है; दुहो माहिं दोरधूप दोउ कर्म बंधरूप, याते ज्ञान
ो न कोउ अजिलारव्यो है. ॥ ३८ ॥

अर्थः-- जेम कोई चंमालनी स्त्री जुगल पुत्र के० वे पुत्र जणे ने पठी एक ठो
ब्राह्मणने आपे, ने एक ठोकरो पोताना घरमां राखे, हवे जे ठोकरो ब्राह्मणना
ां उठरे ते ब्राह्मण केहेवाय, ने ते मद्य मांसनो त्याग करे, जे चंमालना घरमां
ते चंमाल केहेवाय, ने ते मद्य मांस पण चाखे, ते रीते एक वेदनीय कर्मनां
ुत्र ठे, एक पाप ने वीजो पुण्य, एवां जुदा जुदा नाम कह्यांठे, पण बंनेनो
ाव एक ठे एटले बेउने विषे दोरधूप के० वेदवानी सत्ता ठे. एटले खेदसंताप
ली पापने पुण्यए बेउ कर्म बंधरूप ठे, एटला वासते ज्ञानीजने ए बेउमांथी
नो पण अजिलाष कीधो नथी. ॥ ३८ ॥

हवे पाप तथा पुण्य ए बेउने समान कह्या तेउपर शिष्य प्रश्न पूठेठेः--

अथ शिष्य प्रश्नः--

चोपाईः-- कोऊ शिष्य कहै गुरु पांही; पाप पुण्य दोऊ सम नांही; कारन रस
ाव फल न्यारे; एक अनिष्ट लगै इक प्यारे. ॥ ३९ ॥

अर्थ --कोई शिष्य गुरुनी पासे आवी कहे के, स्वामी पाप ने पुण्य ए बेने समान
ा पण ते समान देखाता नथी केमके. ए बेना कारण रस स्वजाव तथा फ
ां तो जुदां जुदां ठे वली एमांथी एक प्रिय लागे ठे ने एक अप्रिय लागे ठे ॥३९॥

हवे शिष्य ए बेउनां कारण प्रमुख जुदा जुदा कहे ठे.-- अथ शिष्य कथन.--

सवैया इकतीसा -- संकिलेस परिनामनिसो पाप बंध होइ, विशुद्धसों पुन्य
हेतु जेद मानिये; पापके उदै असाता ताको है कटुक स्वाद, पुन्य उदै साता
ु रस जेद जानिये; पाप संकिलेस रूप पुन्यहिं विशुद्ध रूप, दुहूंको सुजाउ
ु जेद यो वखानिये; पापसों कुगति होय पुन्यसों सुगति होय, ऐसो फल जे
रतत्र परवानिये. ॥ ४० ॥

अर्थः-- तीव्र कषायमय जे परिणामठे तेनुं नाम संक्लेश परिणाम. तेणे करी
पापनुं बंध थायठे; अने कषायनुं जे मंदपणुं तेने विशुद्ध कहिये; तेवडे पुन्य
बंध थाय; एवा हेतु एटले कारण जेद मानियें ठइये. अने पापना उदयथी
ाता थाय ठे, तेनो स्वादतो कटुक होय ठे. ने पुन्यना उदयवडे शाता उपजे ठे
ो मिष्ट स्वाद होय ठे. एटले पाप ने पुन्य ए बेठने विषे रसजेद थयो; वली

पापकर्म क्लेश रूप छे, तीव्र कषायरूप छे, अने पुण्य कर्म विशुद्ध रूप छे
यरूप छे, ए बने कर्मनो निन्न निन्न स्वनाव थयो, ते एज उपरथी ए कं
नेद वखाणीये छइये, अने पापथी कुगति के० नर्क गती तिर्यंच गती
अने पुण्यवमे मनुष्यगति देवगति एवी सुगति थाय छे, ए रीते पाप ं
नेविषे फलनो नेद प्रत्यक्ष प्रमाणथी छे ॥ ४० ॥

हवे शिष्यना प्रश्ननो गुरु उत्तर करे छे -- अथ गुरु उत्तर वचन यथा-

सवैया इकतीसा — पाप बंध पुन्य बंध डुहूमें मुगति नाहि कटुक मधु
द पुग्गलको पेखिये, संकिलेस विशुद्धि सहज दोउ कर्म चालि, कुगति
ग जालमें विशेखिये, कारनादि नेद तोहि सूझत मिथ्यातमाहि, ऐसा
ज्ञान दृष्टिमें न लेखिये, दोउ महा अंधकूप दोउ कर्म बंध रूप, डुहू का
मोष मारगमें देखिये ॥ ४१ ॥

अर्थ - पापनो पण बंध थाय ने पुण्यनो पण बंध थायछे ने
त्या मुक्ति न होय, एटले बेउथी मुक्ति नही ते माटे बेउ समान छे, अने
रसमा पाप छे ने मधुर रसमा पुण्य छे ए बेउ रस पुदगलना छे तेथी पापने
मानज छे वली जे संक्लेश स्वनावने लीधे पाप छे, ने विशुद्ध स्वनावथी
पण ए बेउ स्वनाव जे छे ते कर्मनी चाल छे अने कुगति तथा सुगति त पाप
फल छे, ते नेदवडे जगत जालनी विशेष ता छे, तेथी पाप पुण्य
अरे शिष्य तने जे पाप पुण्यना कारणादि नेद तेणे करीने पाप पुण्यनो
ब के० द्विविध नाव सूजे छे, ते तो मिथ्यामतिमा सूजे छे, पण ज्ञान दृष्टि
तो तो ए द्वैतनाव देखाशे नही ए बेनेविषे आत्मानु अवलोकन नथी, त
बेउ महा अंधरूप छे, अने ए बेउ कर्म छे, ते बंधरूप छे अने मोक्षमार्गने
ए बेउनो विनाश देखीयें छे, तेथीए बेउ समान छे ॥ ४१ ॥

हवे मोक्ष मार्गनेविषे बेउनो विनाश बतावे छे - अथ मोक्ष पद्धति कथ

सवैया इकतीसा -- सील तप संजम विरति दान पूजादिक, अथवा अनु
कषाय विषै जोग है, कोउ शुनरूप कोउ अशुन सरूप मूल, वस्तुके वि
उविध कर्म रोग है, ऐसी बंध पद्धति बखानी वीतराग देव, आतम धरमने
त्याग जोग है, नौजल तरैया राग दोषको हरैया महा मोषको करैया
द्ध उपयोग है ॥ ४२ ॥

अर्थ — ब्रह्मचर्य तप, पंचेंद्रिय निग्रह, संवर दान पूजाप्रमुख क्रिया ए

ा कारण कर्म छे. अथवा पापना कारण असंयम कषाय अने विषय जो छे. ए बेउमां कोई शुभरूप कार्य छे. अने कोई अशुभरूप कार्य छे; पण वस्तुनुं ल विचारता तो बेउए कर्म रोग छे. एटले बेउ प्रकारनो कर्म रोग छे; एवी बंधनी द्धति के० एक मंडी ते वीतराग देवे वखाणी; पण आत्मिक धर्ममां एटले आ मानो स्वभाव जोतां कर्म क्रिया त्यागवा योग्य छे; एवा पापपुण्यने हेय कहेनार, ने भवजल ने तरनार, राग द्वेषने हरनार तथा महा मोक्षनो करनार एक शुद्ध पयोग उपदेश छे. ॥ ४२ ॥

हवे अर्धा सवैयामां शिष्य प्रश्न करेछे, ने अर्धा सवैयामा गुरु तेनो उत्तर ापेछे.—अथ शिष्य प्रश्न गुरु उत्तर कथनः -

सवैया इकतीसा.—शिष्य कहे स्वामी तुम करनी शुभ अशुभ, कीनी है निषिद्ध रे संसो मनमांहि है; मोषके सधैया ज्ञाता देसविरती मुनीस, तिन्हकी अवस्था ो निरावलंब नाहि है; कहे गुरु करमको न्यास अनुभौ अभ्यास ऐसो अवलंब उ हहीको उनमाहि है; निरुपाधि आतम समाधि सोइ शिवरूप, और दौर धूप पु गल परछाहि है. ॥ ४३ ॥

अर्थ.—शिष्य पुछेछे हे स्वामी, तमे तो मोक्ष मार्गमां शुभने अशुभ करणी बेउ ो निषेध कीधो, तेनो मारा मनमां संदेह पडेछे; केमके मोक्षमार्गना साधक ज्ञा ा देश विरती पंचम गुण स्थान वर्त्ति थया अने मुनीश के० षष्ट सप्तम गुणस्था वर्त्ति सर्व विरती थया, तेमनी अवस्था तो निरालंबननथी एटलेपोतपोतानी ुद्ध क्रियाना आलंब ने लेइने देश विरती सर्व विरती केवायछे, त्यारे करणी निषिद्ध ेम थई? हवे गुरु कहेछे.—जेवो अक्षरनो न्यास मांडयो तेवो श्रुत ज्ञाननुं आलंब होय तेम शुभ कर्मनो न्यास तेतो जोवामां छे पण ते अनुभवनोज अभ्यासछे ते अनुभव अभ्यासरूप आलंबन ते तो ज्ञातानुं ज्ञाता पासेज छे, अने तेमां निरुपा धि के० राग द्वेष कषाय इछादिकविना आत्मानी जे समाधीछे, एटले जे पर रूपने विषे निरुपयोगीपणे रहेवुं तेज शिवरूप, के० मोक्षरूपछे अने जे दोरधूप के० खेद संतापजेछे ते तो पुद्गलनी परछांही के० छांयाछे ॥ ४३ ॥

हवे एज शुभ क्रियाविषे बंध अने एज शुभ क्रियाविषे मोक्ष ए बेउ स्वरूप कही बतावेछे:—अथ बंध मोक्ष स्वरूप कथन —

सवैया तेईसा.—मोक्षसरूप सदा चिनमूरति बंधमई करतूति कही है; जावतकाल वसे जड चेतन, तावत सो रसरीति गही है; आतमको अनुभौ जबलों तबलों शिव

रूप दसा निवही है, अथ नयो करनी जव गनत, बंधविया तव

अर्थ –चिन्मूर्त्ति के० चिदानंद छे ते तो सदा मोक्ष सरूप छे, क्रिया तेतो सदा बंधमयछे यावत काल के० जेटला काल सुधी चत्तन तावतकाल के० तेटला काल सुधी तेज रसरीति ग्रहण कीधीछे, एटले ज्यासुधी आत्मानो अनुभव रहे त्या सुधी शुभ दशा निवही एटले मोक्ष सरूपमा रहे,अप्रमतता केहेवाय, अने पाताुं अथ थयो थको ज्यारे करणीनोज रस लरावे त्यारे तो बंधनाज

हवे मोक्षप्राप्तिनु कारण कहेछे – अथ मोक्ष मार्ग निरूपण–

सोरठा –अंतर दृष्टि लखाव, अरु सरूपको आचरण, ए शिवकारन एई सदा ॥ ४५ ॥

अर्थ –बाह्य दृष्टि टाळीने अंतर दृष्टि थापीने अलक्षनो जापकरवा सरूपनु आचरण करवु, एटले ज्ञान दर्शन चारित्रने आचरिये, तेथकी जातसिद्ध थाय, सदाकालनेविषे एज मोक्षनु कारण छे ॥ ४५ ॥

हवे बाह्य दृष्टिवडे बंध पद्धति थाय ते कहे छे –अथ बंध मार्ग

सोरठा -करम शुभाशुभ दोइ, पुद्गल पिंड विभाव मल; इनसों ३. नांही केवल पाइए ॥ ४६ ॥

अर्थ –शुभकर्म ते पुन्य ने अशुभ कर्म ते पाप ए बेउ कर्मछे अने विभाव जे राग द्वेषादिक मलरूप छे ए बेउनेविषे दृष्टि रहेवाथी मुक्ति नही, अने केवलज्ञाननुं पद पामीये नही ॥ ४६ ॥

ए वात उपर शिष्य प्रश्न करे छे ने तेनो उत्तर गुरु दिये छे–

अथ शिष्य प्रश्न गुरु उत्तर कथन –

सवैया ३१सा – कोउ शिष्य कहे स्वामी अशुभ किया अशुद्ध, शुभ शुद्ध तुम ऐसी क्यों न वरनी? गुरु कहे जवलों क्रियाको परिणाम रहे, ल उपयोग योग धरनी, थिरता न आवें तोलों शुद्ध अनुभव न होऽ क्रिया मोप पथकी कतरनी, बंधकी करैया दोऊ दुहूमें न भली कोऽ विचारमें निषिद्ध कीनी करनी ॥ ४७ ॥

अर्थ –कोई शिष्य पूछे छे के हे स्वामी, तमे एवु व भ न क्रिया जे हिंसादिक ते अशुद्ध छे अने शुभ क्रिया जे दया त्यारे गुरु उत्तर आपेछे के अहो शिष्य, ज्यांसुधी क्रियाना परिणाम रहे

ी उपयोगनी धरनी के० छेत्री एटले उपयोगवंत आत्मा चंचल रहे छे. ज्यांसुधी
क्रियामां उपयोग रहे त्यांसुधी आत्मानी स्थिरता थाय नही. अने आत्मानो
द् अनुभव होय नही. ए उपरथी ए पुन्य पापनी बेउ क्रिया छे ते मोक्षमार्ग
कतरणी समान छे. बंधनी करनारछे एथी बेउ क्रियामां एक पण भली नथी.
ां मुक्तिमार्गनो बाधक विचारी त्यां बेउ क्रिया निषिद्ध कीधी छे ॥ ४३ ॥

े मात्र ज्ञान मोक्षनो मार्ग छे ते कहे छेः—अथ ज्ञान मोक्ष मार्ग यद् कथनः—

सवैया इकतीसाः— मुकतिके साधककौं बाधक करम सब. आतमा अनादिको
रममांहि लुक्यो है: एते परि कहै जो कि पाप बुरो पुन्य भलो. सोइ महा
ढ मोक्षमारगसों चुक्यो है: सम्यक् सुभाउ लिये हियेमें प्रगट्यो ज्ञान. ऊरध
मंगि चल्यो काहूपे न रुक्योहै: आरसीसो उज्वल बनारसी कहत आपु. कारन
रूप व्हैके कारजकों ढुक्यो है ॥ ४७ ॥

अर्थः— जे आत्मा मुक्तिनो साधक छे, तेने सर्व कर्म बाधक छे; एथीज अनादि
ालनो आत्मा कर्ममां लुक्यो एटले ढंकाई रह्यो छे; एम छतां पण जो कोई एवुं कहे
. पाप कर्म नठारुं छे. ने पुन्य कर्म सारुं छे. तेने महा मूढ जाणवो ; ने ते मोक्ष
ार्गथी चुक्यो छे, एम जाणवुं. एवामां कोईने भवस्थ परिपाक थकी सम्यक् स्वभाव
ी प्राप्ति थइ तेवारे हीयामां ज्ञान प्रगट्युं तो ते ऊर्ध्व दशा तरफ उमंगे करीने
ाल्यो. पण कोई कर्मथी रोकायो रह्यो नही. ते आरीसानी पठे उज्वल थईने
ज ज्ञानोपयोगी पणे कारण स्वरूपी थईने पोताना मुक्तिरूप कार्यने पोतेज ढुके छे
ुं बनारसी दास कहे छे ॥ ४७ ॥

हवे ज्ञाननो तथा कर्मनो विवरो बतावेछेः— अथ ज्ञान तथा कर्म विवरनः—

सवैया इकतीसाः— जोलों अष्ट कर्मको विनास नाही सरवथा. तोलों अंत
रातमामें धारा दोई बरनी: एक ज्ञानधारा एक शुभाशुभ कर्मधारा. दुहूकी प्र
कृति न्यारी न्यारी न्यारी धरनी: ज्ञान धारा मोक्षरूप मोक्षकी करन हार. दोषकी
हरन हार भौ समुद्र तरनी: इतनो विशेष जु करमधारा बंधरूप, पराधीन सकति
विविध बंध करनी. ॥ ४९ ॥

अर्थः— ज्यां सुधी आठ कर्मनो सर्वथा विनाश थतो नथी एटलासुधी मुक्ति न
होय त्यांसुधी अंतरात्मा थकी बे धारा वहेछे; तेमां एक ज्ञाननी धाराने बीजी
शुभाशुभ कर्मनी धारा. ए बेननी प्रकृती जुदी जुदी छे. अने धरनी के० क्षेत्र ते
ाप जुदुं जुदुं छे. एमां एटलुं विशेष छे के जे कर्मधारा छे ते बंधरूप छे ; अने स

रण जे शुभ क्रियाते तेथी ते ज्ञानी भिन्न रहे,ममता न धरे. अने आत्मानुं ज स्व र ग्रही आत्माना अनुभवना आरंभना रसनुं कौतुक करे छे. ॥ ५१ ॥

इति श्री नाटक समयसारको पुन्य पाप एकत्वी कथन चतुर्थ द्वार संपूर्णः

दोहरा:—पुन्य पापकी एकता, वरनी अगम अनूप; अब आश्रव अधिकार कु, कहों अध्यातम रूप. ॥ ५२ ॥

अर्थः—पाप पुण्यनी एकता तो अगम छे अने अनुपम छे तेनुं वर्णन कीधुं. हवे हुं आश्रवनो अधिकार छे ते कहुंछुं अने अध्यात्मनुं स्वरूप कहुंछुं ॥ ५२ ॥

आश्रव सुभटनोनाशकरनारज्ञानसुभटनेनमस्कारकरेछेः—अथज्ञान वज्र वर्णनंः—

सवैया इकतीसाः—जे जे जगवासी जीव थावर जंगम रूप, ते ते निज वस क राखे वल तोरिके; महा अभिमानी ऐसो आश्रव अगाध जोधो रोपि रनथंभ ठा ढो भयो मूछ मोरिके; आयो तिहि थानक अचानक परमधाम, ज्ञान नाम सुभट सवायो वल फोरिके; आश्रव पछार्यो रनथंभ तोरि मार्यो ताहि, निरखी बनारसी नमत कर जोरिके. ॥ ५३ ॥

अर्थः—जे जे थावर जंगमरूप जगतवासी जीव छे, तेना सहजवल ने तोडीने ते जीवोने आश्रव जोधाए पोताने वस करी राख्याछे एवुं महा अभिमानी जगतमां आश्रवरूपी अगाध जोद्धो रहेछे, ते रणथंभ रोपीने मूछमरोडीने गाढो थयो छे एम कहेछे के. जगतमां मने जीते एवो कोइ नथी. ते स्थले अचानक पर[illegible] म के० अती तेजस्वी ज्ञान नामनो सुभट उपला आश्रव जोद्धानो [illegible] सवायोवल फोरवीने लडवा ने आव्यो तेणे आश्रव सुभटने पछाड[illegible] रणथंभ तोडी नाख्यो एवा ज्ञान सुभटने निरखीने बनारसी [illegible] नमस्कार करेछे ॥ ५३ ॥

हवे द्रव्यरूपी आश्रव अने भावरूपी आश्रवना लक्षण [illegible] ज्ञाननुं लक्षण पण कहेछेः—अथ द्विविध आश्रव लक्षन तथा ज्ञान [illegible]

सवैया तेइसाः— दर्वित आश्रव सो कहिये जहिं [illegible] भावित आश्रव सो कहिए जहिं राग विरोध विमोह विभा[illegible] कहिये जहिं दर्वित भावित आश्रव नासे; ज्ञानकला [illegible] आहरि और न भासे ॥ ५४ ॥

अर्थः—ज्यां पुद्गल द्रव्य छे ते जीवना [illegible]

द्रवित आश्रव जाणीये. अने जांहां द्रवित आश्रवना प्रसंग थकी - गद्वेष विमोहनो विकाश थाय त्यां नावित आश्रव कहीये, अने ज्यां सम्यक् पद्धति के० सम्यक् स्वरुप कहिये तांहां तेने द्रवित आश्रव अने आश्रवनो नाश थाय, एटले सम्यक् पद्धतिनेविषे ज्ञान कला प्रगटे तेथी - वाश्रवमा बाहिर द्रव्याश्रवमां बीजू नासे नही, सम्यक्ज दीगमां आवे ॥ ५४

हवे सम्यक् स्वरूपनो धणी जे ज्ञाता तेनु लक्षण कहेछे अथ ज्ञाता लक्षण

चोपाई छंद --जो दरवाश्रवरूप न होई, जह नावाश्रव नाव न कोई, दशा ज्ञानमय लहिये, सो ज्ञातार निराश्रव कहिये ॥ ५५ ॥

अर्थ —जे द्रव्याश्रवना स्वरूपमां होय नही, अने जांहां नावाश्रवनु पण नाव कोई नथी,अने जेनी दशा ज्ञानमय होय,तेज जीव ज्ञानी अने आश्रवरहित कहिये

हवे ज्ञातानी समर्थाईथी निराश्रवपणु देखाडे छे --अथज्ञाताकोसमर्थपणोवर्णन-

सवैया इकतीसा -जेते मन गोचर प्रगट बुद्धि पूरवक, तिन परिनामनकी ममता हरतु है, मनसा अगोचर अबुद्धि पूरवक नाव, तिन्हिके विनासवेको उद्यम धरतु है, याहि नांति परपरिनतिको पतन करे, मोखको जतन करे नौजल तरतु है, ऐसे ज्ञानवत ते निराश्रव कहावे सदा, जिन्हको सुजस सु विचक्षण करतु है॥५६॥

अर्थ —जेटला परिणाम प्रगट मनगोचर छे, एटला जिन परिणामन मनमां सनारेछे जाणे छे, अने बुद्धिपूर्वक के० पोतानी अह बुद्धिवडे जे अशुद्ध परिणाम उपजेछे, ते परिणामनी ममता टाळे छे, अने जे नाव मनथी अगोचर के० जनु स्वरूप मनवडे देखाय नही, अने अबुद्धि पूर्वक के० जेने बुद्धिनो प्रचार लागे नही, एवा अनागत काळना जे अशुद्ध परिणाम, तेनो विनाश करवाने उद्यम करे छे ॥ [illegible]

अर्थः— जेम मतिमंद के० अज्ञानी जन जगतमां स्वछंद के० मरजी मुजब र्त्ते, तेम पंमित पण सदा तेवीरीते वर्त्ते, ते आवीरीते चचल चित्तवाला रहे, असंजत वेन के० विचारविना वचन बोले, अने शरीर स्नेहने प्रवर्त्तावे, अने अज्ञानीनी माफक नोगसंयोग राखे, परिग्रहनो संग्रह करे, अने ज्ञान अवस्थामां मोहविलास ए बोज करे, ए रीते अज्ञानीनी अने ज्ञानीनी एक सरखी रीति जोईने शिष्य आचार्यने पूछेछे के, एने सम्यक्वंत निराश्रव केम कहिये ? ॥ ५७ ॥

हवे ए प्रश्ननुं उत्तर गुरु आपेछेः—अथ गुरु उत्तर कथनः—

सवैया इकतीसाः—पूरव अवस्था जे करमबंध कीने अब, तेई उदै आई नाना नांति रस देत है; केई शुन्न शाता केई अशुन्न असातारूप, डुहुसों न राग न विरोध सम चेत है, यथायोग क्रिया करै फलकी न इछा धरै, जीवन मुगतिको विरुद गहिलेत हैं, यातें ज्ञानवंतको न आश्रव कहत कोउ, मुद्धतासों न्यारे नये शुद्धता समेत हैं. ५८

अर्थः—पूर्वकालमां अज्ञानअवस्थानेविषे जे जे कर्मबंध कीधेलां होय तेज कर्मो वर्त्तमानकालमां उदय आवीने नाना प्रकारनो रस आपेछे. तेमां केटला एक शुन्नकर्म ते शातारूप छे, अने केटलाएक अशुन्न कर्म असातारूप छे; एवा बेउ जातना कर्मनेविषे ज्ञानीने राग अने विरोध नथी, एथी ज्ञानी समचित्त छे. अने यथायोग्य के० उदयमाफक क्रिया करे, पण फलनी इच्छा राखे नही. ने जीवता ज मुक्त थयाछे; तेथी जीवन्मुक्तिनो विरुद धारेछे. ए रीते ज्ञानवत मनुष्यने कोई आश्रव केहेतु नथी. ते मूढतायी न्यारो थयो अने शुद्धता समेत छे ॥ ५८ ॥

हवे राग द्वेष मोह अने ज्ञानना लक्षण कहेछे.—अथ राग द्वेष मोहज्ञान लक्षणः—

दोहराः— जो हितनाव सु राग है, अनहितनाव विरोध; भ्रामकनाव विमोह है, निर्मलनाव सु बोध ॥ ५९ ॥

अर्थः—जे हितनाव छे ते राग छे, अने अनहितनाव ते विरोध छे; अने भ्रामकनाव छे तेने विमोह कहिये, अने निर्मलनाव ते बोध एटले ज्ञान कहिये ॥५९

हवे राग द्वेषनुं स्वरूप कहेछे.— अथ राग द्वेष कथन.—

दोहा—राग विरोध विमोह मल, एई आश्रव मूल; एई कर्म वढाइके, करै धरमकी नूल ॥ ६० ॥

अर्थः—राग द्वेष ने विमोह जे छे ते आत्माने मल छे, अने एज दोष आश्रवना मूल छे. अने एज रागद्वेष अने मोह छे ते करमने वधारीने धरमने नुलावी दिएछे ६०

हवे ज्ञाताने निराश्रव कहेछेः— अथ ज्ञातानिराश्रव कथनः

दोहा -- जहा न रागादिक दसा, सो सम्यक परिनाम, यात ..
ह्यो निराश्रव नाम ॥ ६१ ॥

अर्थ — जहा राग द्वेष मोहनी दशा न मले तेने सम्यक परिणाम कहिये.
उपरथी सम्यकवत पुरुषने निराश्रवी नाम आप्यु ॥ ६१ ॥

हवे ज्ञाता जे छे ते निराश्रवपणामा विलास करेछे —अथ ज्ञाता

सवैया इकतीसा — जे कोई निकट नव्य रासी जगवासी जीव, मिथ्या
ज्ञान नाव परिनये हे, जिन्हकी सुदिष्टिमे न राग दोष मोह कहू, विमन
कनिमे तीनो जीति नये हे, तजि परमाद घट सोधि जे निरोधि जोग, शुद्ध
गकी दशामें मिलिगये हे, तेई बध पद्धति विमारि पर सग मारि आपुमें मग
व्हेके आपरूप नये हे ॥ ६२ ॥

अर्थ — जे कोई नव्य राशीमा जगतवासी जीव छे, ते नव्यत्व परिपाकने
निकट के० पासे थया, ने मिथ्यामतिने नेदीने पोतानु स्वरूप जे ज्ञान नाव
नेविषे परिणमी रहेछे, जेनी ज्ञानरूपी दृष्टिमा राग द्वेषने मोह कई पामिये न
ही, अने निर्मल निज स्वनावनी विलोकतामा राग द्वेष ने मोह ए त्रणेने जीतीने
धाछे, अने पाचे प्रमाद तजी पोताना शरीरने साधीने मन वचन अने कायाने
शैलेशीकरणमा निरोध करीने शुद्ध उपयोग दशा जे केवल दशा तेनेविषे मली
गया तेवा ज्ञानी बधनो मार्ग विमारी अने परवस्तुनो सग छोडीने आत्मानेविषे
मगन थई आपरूपे थया ॥ ६२ ॥

शिष्य पूछेछे के, एम ज्ञातानेविषे निराश्रवपणु थशे तो आयुष्यपर्यंत ज्ञाता निरा
श्रवी थशे गुरु उत्तर आपेछे के, ज्ञातापणु तो उपशमनावने क्षयोपशम नाव
वडे चचल छे ते कहेछे —अथ उपशमी क्षयोपशमी व्यवस्था कथन -

सवैया इकतीसा —जेते जीव पमित खयोपशमी उपशमी, तिन्हकी अवस्था
ज्यो लुहारकी समासी है, छिन आगमाहि छिन पानिमाहि तैसे एउ, छिनमें मि
थ्यात छिनु ज्ञान कला नासी हे, जोलो ज्ञान रहै तोलो सिथिन चरन म
जैसे कीले नागकी सगति गति नासी है, आवत मिथ्यात तव नानारूप बध क
जो उकीले नागकी प्रकृति परगासी है ॥ ६३ ॥

अर्थ - मिथ्यात्वनी गाठनेद कीधा पछी जे मिथ्यात्वनो अश उदय आवेछे ते
जेणे खपीजाय अने मिथ्यातपुज उपशम्यो रहे ते जीव क्षयोपशमी कहिये
अने जेने अतर मुहूर्तलगी उपशम्योज रहे तेने उपशमी कहीये एवा बन्ने जात

ते जे जीव पंमित छे तेनी अवस्था ते लुहारनी साणसी समान छे; जेम साणसी घडीमां लोहने ग्रहण करी आगमां होयछे, ने घडीमां तेहज साणसी लोखंमने ठंमो करवा सारु पाणीनेविषे होयछे; तेम ए क्षयोपशमी अने उपशमी जीव क्षण एकमां मिथ्यात नावमां आवे ने क्षणनेविषे ज्ञानकलाना प्रकाशमां रहेछे. एवी अवस्थानेविषे ज्यांसुधी ज्ञानकला रहेछे त्यांसुधी चारित्र मोहनीनी पचीस प्रकृति शिथिल के० ढीली थई रहेछे; जेम मंत्रनी जडीए करीने सर्पनी शक्ति गति शिथिल थई जायछे. तेम ए पण जाणवुं; हवे ए जीवने फरी मिथ्यात्व उदय आवेछे त्यारे तो नाना प्रकारना कर्मबंध करेछे; जेम नागनी जकीलनी करवाथी नागनी पोतानी प्रकृति फरीथी प्रगटे ते रीते जाणवुं. ॥ ६३ ॥

हवे ज्ञानना शुद्धपणानी प्रशंसा कहेछेः—अथ शुद्धनय प्रशंसाः—

दोहा.—यह निचोर या ग्रंथको, कहै परम रस पोष, तजे शुद्धनय बंध है, गहै शुद्धनय मोष ॥ ६४ ॥

अर्थः—आ समयसारग्रंथनुं रहस्य एज छे अने एज उत्कृष्ट रसनो पोषकछे के जे शुद्धतानी नयरीती छांमी तो बंध छे अने शुद्धतानी नयरीति ग्रही तो मोक्ष छे ६४

हवे बे नयनेविषे जीवनो विलास कही बतावे छेः—अथ जीव विलास वर्ननंः—

सवैया इकतीसा.— करमके चक्रमें फिरत जगवासी जीव, व्है रह्यो बहिर मुख व्यापत विषमता; अंतर सुमति आई विमल बडाई पाई, पुद्गलसों प्रीति टूटी छूटी माया ममता, शुद्ध नै निवास कीन्हो अनुभौ अभ्यास लीन्हो, भ्रमभाव छांमिदीनो भिनो चित्त समता, अनादि अनंत अविकलप अचल ऐसो, पद अवलंबी अवलोके राम रमता ॥ ६५ ॥

अर्थः—चौदराजलोकमां कर्मनुं चक्र के० कटक फरी रह्यु छे, तेमां जगतवासी जीव पण फरी रह्यो छे, अने ए फरवामां जीव विषमताए युक्त थयो थको क्यारे इष्ट संयोगी ने क्यारे अनिष्ट संयोगी थई ने तेमां बहिर्मुख थई रह्यो, एटले बाह्य विषय भोगनोज ग्राहक थयो, अने अंतरदृष्टियकी आत्मा न जाण्यो एटलामां अंतरनेविषे सुमति उपजी, तेणे करीने पोतानी निर्मल प्रभुताने पाम्यो, त्यारे परवस्तु जे पुद्गल तेनी प्रीति टूटी. एटला कालसुधी पुद्गलनी माया ममता जे नही छूटी हती ते छूटी. जेम शुद्धनयवडे आत्मानुं स्वरूप कह्युं, तेवा शुद्धनयमां पोते निवास कीधो, अने आत्मस्वरूपमां उपयोग राखीने अनुभवनो अभ्यास लीधो एणी भ्रमभावनो त्याग थयो. अने मन जे छे ते समाधिनेविषे लीन थयुं.

रथी अनादि अनत कालसुधी जे स्वरूपमा कंई बीजो विकल्प न पोतानुं अचल पद अवलंबीने पोतानुं जे रमता रामपणु छे तेने अवलोक

हवे आत्मानु शुद्धपणुं सम्यक दर्शन छे, तेनी प्रशसा करेछे --

सवैया इकतीसा -- जाके परगासमें न दीसे राग दोष मोह, आश्रव हि बंधको तरस है, तिहु काल जामे प्रतिबिंबित अनतरूप, आपु हू ता नततें सरस है, भाव श्रुत ज्ञान परवान जो विचारि वस्तु, अनुभो न बानीको परस है, अतुल अखम अविचल अविनासी धाम, चि नं सो सम्यक दरस है ॥ ६६ ॥

अर्थ -- जे शुद्ध आत्माना प्रकाशमा राग द्वेष मोह न देखाय, अने न होय, तेमा बंधनो तरस के० लागवु ते पण न होय, अने जे शुद्ध प्रकाशमा त्रणे काले अनतरूप प्रतिबिंबित थाय छे, अने निजस्वरूप पण छे, अने सत्तानतमा सरस छे, ते सत्तास्वरूपी अनत पदार्थ छे, तेथी सरस छे, जेना अनतपर्याय सर्व तेहिज धर्म कहे, अने भावश्रुत ज्ञानने प्रमाण करी नो विचार अनुभव करे, अने जाहा वाणीनो स्पर्श नही, एटले जे वचन नथी, अनक्षररूपनो अनुभव पोते करे, ए सयोगीगुणस्थानकनी दशा छे तुलना नथी एटले अतुल, वली जेनी खंडना नथी माटे अखम, एवु अचल छे अविनाशी धाम के० तेजोमय तेहिज चिदानद स्वरूप छे, एवु ईश्वररूप सम्यक दर्शननु स्वरूप कहिये ॥ ६६ ॥

इतीश्री नाटक समयसारविषे बालाबोधरूप आश्रवद्वार पचम सपूर्ण

दोहा -- आश्रवको अधिकार यह, कह्यो यथावत जेम, अब सवर वर्नन करों, सुनों भविक धरि प्रेम ॥ ६७ ॥

अर्थ -- ए रीते आश्रवनो अधिकार कह्यो हवे सवरतत्वनु वर्णन करुं, हो भविक के० भव्य प्राणीओ प्रेम धरीने ते सांभलो ॥ ६७ ॥

हवे सवरनु आदी ज्ञानवस्तु तेने नमस्कार करेछे --अथ ज्ञान वर्णन --

सवैया इकतीसा --आतमको अहित अध्यातमरहित ऐसो, आश्रव महातम अखम्ड अंमवत है, ताको विसतार गिलिवेकों परगट भयो, ब्रह्मम्मको विकासी ब्रह्मवत है, जामें सबरूप जो सबमें सबरूपसो पें सबनि सों अलिप्त आकाश ... है, सो है ज्ञान भानु शुद्ध संवरको भेष धरे, ताकी रुचि रेखको हमारे दमवत है ॥

अर्थ -- आत्मानु अहित करता अने अध्यात्मस्वरूपथी रहित एवु आश्रव

रूप महातम के० महा अंधकार अखंमपणे अंमवत के० सर्व लोकने ढांकी रह्यो छे, तेनो विस्तार गलवाने जे ज्ञानसूर्य प्रगट थयो ते ब्रह्मांम जेवो सर्व लोका लोकने विकाशनो करनारो थयो, अने ब्रह्मांमनुं मंमन जेथकी थायछे, अने जेने विषे सर्व रूप नासे छे; अने जे सर्वरूपे सर्वमां पामिये छे, अने जे सर्व मूर्तिक वस्तुथी आकाशखंमनीपरे अलिप्त छे; ते ज्ञानरूपी सूर्य तथा जे शुद्ध संवरनो नेष धरी रह्या छे; तेनी रुचि रेखाने एटले तेना उदयने अमारो दंमवत के०नमस्कार छे.६८

हवे जड चेतनना नेदज्ञानथकीज संवररूपी परमात्माने उंलखाय छे, ते सम जावेछेः— अथ नेदज्ञान महिमा कथनः—

सवैया तेइसाः—शुद्ध सुछेद अनेद अबाधित, नेद विज्ञान सु तीछन आरा; अंतर नेद सुनाउ विनाव करे जड चेतनरूप डुफारा; सो जिन्हके उरमें उप ज्यो न रुचे तिन्हकों परसंग सहारा; आतमको अनुनौ करि ते हरखे परखे प रमातम धारा. ॥ ६९ ॥

अर्थः— शुद्धपणे स्वछेद के० पोतपोताना न्यारा स्वरूपने बतावनार अनेद के० एक स्वरूप अबाधित एटले कोई प्रमाणांतरें अखंमित एवुं नेदज्ञान ते तीक्ष्ण सुआरव छे, ते सुआरवथी अंतरात्मामां नेदन करीने स्वनाव अने विनावने जुदा जुदा करे ने जमरूप तथा चेतनरूपने डुफार के० न्यारा करी बतावे एवुं नेदज्ञान जेना हृदयनेविषे उपज्युं छे, तेज जीवने परवस्तुनो संग ते सहारा के० रुचे नही. अने तेज जीव पोताना स्वरूपनो अनुनव करी यथार्थपणे अंतरात्मानेविषे जे परमात्मानी धारा छे तेने पारखे. ॥ ६९ ॥

हवे नेदविज्ञान जे छे, ते सम्यक्त ज्ञान छे, तेनी समर्थाइ थकी स्वरूपनी प्रा प्ति थाय छे; ते कहेछेः— अथ सम्यक्त सामर्थता कथनः—

सवैया तेइसाः—जो कबहूं यह जीव पदारथ, औसर पाइ मिथ्यात मिटावे; सम्यक धार प्रवाह बहे गुन ज्ञान उदे मुख ऊरध धावै; तो अनिअंतर दर्वित नावित कर्म कि लेश प्रवेश न पावै, आतम साधि अध्यातमको पथ पूरण व्है परब्रह्मकहावै ॥ ७० ॥

अर्थ.— जो कोई आ जीव पदार्थ छे, ते यथाप्रवृत्तिकरणरूप अवसर पामी ने मिथ्यात्वग्रंथि नेदीने मिथ्यात्वने मिटावे शुद्ध सम्यक अने स्वरूप जलधा रानो प्रवाह वहे अने ज्ञानगुणना उदय वडे उर्ध्व मुख थईने मुक्ति सनमुख दोडे त्यारे अभ्यंतर जे द्रवित कर्म अने नावित कर्म तेना क्लेसनो प्रवेश ते न

थाय जे प्रकृति प्रदेशरूप कर्म ते ऽवित कर्म अने राग द्वेषादिक कर्म ए बने प्रवेश नही करी शके अने आत्मना पद मनीमां आवी ने साधीने पोताना स्वरूपमा पूर्ण थईने परब्रह्म कहेवाय ए सर्वनु कारण सम्यक् दृष्टि तेनो महिमा कहे छे ॥ ३० ॥

सवैया तेइसा — जे मि थ्यात मृ ... महारस ... विज्ञान कला निज ... अपनी महिमा अवधारत त्याग करे ... तु निरंतर ज्ञानि सदाइ ते मनिमान सुवर्ण समान ... लाग निलेप ... शुभाशुभ ...

अर्थ - मिथ्यातग्रंथि भेदीने तथा उपशमरूप महारस ... भेदविज्ञाननी कला पामीने, अने ... भेदविज्ञान थइ पोताना स्वरूपनी प्राप्ति ... पोताना ज्ञान दर्शन चारित्ररूप महिमान अवधारे ... कं०सामग्री तेना त्याग करे अने जना पटमां ... कहियें विरतीनी रीत फुरी अने निरंतर तप थकी ... सदाइ ज्ञानि थाय ... कहियें ते सुवर्णसमान छे तेमने शुभाशुभ कर्मरूप काट लागतो नथी ॥

हवे सर्वनु मूल भेदविज्ञान छे ते मोक्षनु कारण कही समजावे छे - अथ भेदज्ञान महिमा कथन -

अडिल्ल छंद — भेदज्ञान संवरनिदान निरदोष है ... क्रम मोष है भेदज्ञान शिवमूल जगतमहि मानिये ... उपादेय जानिये ॥ ३२ ॥

अर्थ — भेदज्ञान जे ते निर्दोष संवरनु निदान ... मोक्षनु कारण संवर छे अने निर्जरानु ते मोक्षनु कारण ... क्रमनु कारण परंपराथी भेदविज्ञान छे ... शुद्धस्वरूपनो ... भेदज्ञान त्याग जाणवे ता पण तयानु उपादेय ते आदरवा ... हवे स्वरूपनी प्राप्ति थया पछी भेदज्ञाननु ह्यपणु ...

दोहा - भेदज्ञान तबलो भलो ... तबलो मुनि ... जहां तहां विकल्प न काय ॥ ३३ ॥

अर्थ — भेदज्ञान त्यांसुधी भलुंछे ज्यांसुधी मुनि थइ नथी ... प्रगट थाय त्यां विकल्प कांई रहे नहीं ता ... भेदज्ञान ...

भेदज्ञान मुक्तिना उपाय छे ते कहेछे - अथ भेदज्ञानमहिमा ...

चोपाईः—भेदज्ञान संवर जिन्हि पायो, सो चेतन शिवरूप कहायो, भेदज्ञान जिनके घट नांही; ते जडजीव बंध घटमांही. ॥ ३४ ॥

अर्थ.—जे जीवने भेदज्ञानरूप संवरनी प्राप्ति थई तेज चेतन शिवरूप कहियें जेना हृयनेविषे भेदज्ञान नथी ते मूर्ख घटपिण्डनेविषे बंधायलो रहेछे. ॥ ३४ ॥

हवे भेदविज्ञानवडे आत्मानो महिमा वधेछे ते कहेछेः—अथ भेदज्ञानकी महात्म्य.-

दोहराः—भेदज्ञान साबू भयो, समरस निर्मल नीर; धोबी अंतर आतमा, धोवै नीज गुन चीर. ॥ ३५ ॥

अर्थः— भेदज्ञान जे छे ते साबुरूप जाणवुं, अने उपशम रस ते निर्मल पाणी छे अंतर आत्माने धोबी मानवो, ते धोबी पोताना गुणरूपवस्त्रने धुवेछे ॥ ३५ ॥

हवे भेदविज्ञाननी जे क्रिया छे ते कहेछेः-अथ भेदज्ञानकी कर्तव्यता महात्म्य.-

सवैया इकतीसा.-जैसें रजसोधा रज सोधिके दरव काढे, पावक कनक काढी दाहत उपलकों, पंकके गरभमे ज्यों डारिये कतक फल, नीर करे उज्वल नितारि डारे मलकों, दधिको मथैया मथि काढे जैसे माखनकों, राजहंस जैसें दूध पीवै त्यागि जलकों: तैसें ज्ञानवंत भेदज्ञानकी सकति साधि, वेदे निज संपति उछेदे परदलकों. ॥ ३६ ॥

अर्थ.—जेम कोई रज सोधा के० जोनारो रजने सोधीने एटले सोना रूपा प्रमुख द्रव्यने काढवाने पावक के० अग्निने लगाडेछे, ने सोनुं काढीलई पथरा धूल वगेरेने बाली नाखेछे. वली जेम कतकफलने पंकना गर्भनेविषे नाखीये तो ते फल जलने मेलथी जूदुं करेछे, वली जेम दधीनुं मथनहार दधीनुं मथन करी माखणने जूदुं करेछे ने राजहंस पाणी दूध भेगा होय तेमांथी मात्र दूध पीई जायछे. पाणीने जूदुं करेछे तेम ज्ञानवंत प्राणी भेदविज्ञाननी शक्ति साधीने पोतानी ज्ञानसंपत्तिने वेदे अने परदल के० पुद्गलनुं कटक जे राग द्वेषादिक तेने कापी नाखेछे. ॥ ३६ ॥

अथ भेदज्ञान मोक्षमूल यह कथन.—

छप्पय छंद.--प्रगट भेद विज्ञान, आपगुण परगुणजानैं; परपरिनति परि त्यागि, शुद्ध अनुभव थिति ठानै; करि अनुभव अभ्यास, सहज संवर परगासैं; आश्रव द्वार निरोध, कर्म घनतिमिर विनासैं; छय करिविभाव समभाव भजि, निरविकल्पनिज पद गहे; निर्मल विशुद्ध सास्वत सुथिर, परम अनिंद्रिय सुख लहे. ३७

थाय जे प्रकृति प्रदेशरूप कर्म ते इवित कर्म अने राग द्वेषादिक ते
कर्म ए वने प्रवेश नही करी शके, अने अध्यात्मना पंथ तेजीमा थावीने
ने साधीने पोताना रूपमा पूर्ण थईने परब्रह्म केहेवाय ॥ ७० ॥
हवे सवरनु कारण सम्यक दृष्टिने,तेनो महिमा कहे छे —अथ सम्यक दृष्टि महिमा

सवैया तेइसा —नेद मिथ्यात सु नेद महारस नेद विज्ञान कला जिन पाई,
अपनी महिमा अवधारत, त्याग करे उरसों ज पराई, उद्धतरीति वसे जिनके घट
तु निरतर ज्योति सवाई, ते मतिमान सुवर्ण समान लगे तिनकों न शुनाशुनकाई।

अर्थ -मिथ्यातग्रथि नेदीने तथा उपशमरूप महारस वेदीने जे पुरुषे
विज्ञाननी कला पामीछे, अने जे ए नेदविज्ञान वडे पोताना स्वरूपनी प्राप्ति
पोताना ज्ञान दर्शन चारित्ररूप महिमाने अवधारे, उर के० हैया थकी पराई
के०सामग्री तेनो त्याग करे अने जेना घटमा उद्धतरीति के० देशविरति तथा
विरतीनी रीत फुरी अने निरतर तप थकी जेनी सवाई ज्योति थाय छे तेने बुद्धिमान
कहिये ते सुवर्णसमान छे तेमने शुनाशुन कर्मरूप काट लागी शकतो नथी॥७१॥
हवे सवरनु मूल नेदविज्ञान छे ते मोक्षनु कारण कही समजावेछे -

अथ नेदज्ञान महिमा कथन —

अडिल्ल छद —नेदज्ञान सवरनिदान निरदोष है, सवरसो निरजरा
क्रम मोष है, नेदज्ञान शिवमूल जगतमहि मानिये यदपि हेय है तदपि
उपादेय जानिये ॥ ७२ ॥

अर्थ —नेदज्ञान जेछे ते निरदोष सवरनु निदान के० मूलकारण छे अने निर्जरा
रानु कारण सवर छे अने निर्जराजेछे ते मोक्षनु कारण छे ए अनुक्रम प्रमाणे
क्षनु कारण परपराथी नेदविज्ञानज छे अगर जो शुद्धस्वरूपनी अपेक्षाए
नेदज्ञान त्याग जोगछे तो पण नयोनु उपादेय ते आदरवा जोग्य जानिये॥७२
हवे स्वरूपनी प्राप्ति थया पछी नेदज्ञाननु हेयपणु देखाडछे —स्वरूप कथन—

दोहा - नेदज्ञान तबलों नलो, जबलों मुक्ति न होय परम ज्योति प्र
हां, तहां विकल्प न कोय ॥ ७३ ॥

अर्थ —नेदज्ञान त्यांसुधी नलुछे ज्यांसुधी मुक्ति थई नथी तहा परम ज्योति
ट थाय त्यां विकल्प कोई रहे नही तो नेदज्ञान केम करीने रही शके॥७३॥
नेदज्ञान मुक्तिनो उपाय छे ते कहेछे -अथ नेदज्ञानमहिमा कथन -

चोपाईः–भेदज्ञान संवर जिन्हि पायो. सो चेतन शिवरुप कहायो, भेदज्ञान
िनके घट नांही: ते जडजीव बंध घटमांही. ॥ ७४ ॥

अर्थः–जे जीवने भेदज्ञानरुप संवरनी प्राप्ति थई तेज चेतन शिवरुप कहियें
ना हृयनेविषे भेदज्ञान नथी ते मूर्ख घटपिंमनेविषे बंधायलो रहेछे. ॥ ७४ ॥
वे भेदविज्ञानवडे आत्मानो महिमा वधेछे ते कहेछेः–अथ भेदज्ञानकी महात्म्यः-

दोहराः–भेदज्ञान साबू भयो, समरस निर्मल नीर; धोबी अंतर आतमा,
ोवे नीज गुन चीर. ॥ ७५ ॥

अर्थ -- भेदज्ञान जे छे ते साबुरुप जाणवुं, अने उपशम रस ते निर्मल पाणी छे
अंतर आत्माने धोबी मानवो, ते धोबी पोताना गुणरुपवस्त्रने धुवेछे ॥ ७५ ॥
वे भेदविज्ञाननी जे क्रिया छे ते कहेछेः-अथ भेदज्ञानकी कर्तव्यता महात्म्य·-

सवैया एकतीसाः-जैसें रजसोधा रज सोधिके दरब काढे, पावक कनक काढी
ाहत उपलकों, पंकके गरभमे ज्यों मारिये कतक फल, नीर करे उज्वल नितारि
ारे मलकों; दधिको मथैया मथि काढे जैसें माखनको, राजहंस जैसें दूध पीवें
्यागि जलकों; तैसें ज्ञानवंत भेदज्ञानकी सकति साधि, वेदे निज संपति उछेदे
रदलकों. ॥ ७६ ॥

अर्थ –जेम कोई रज सोधा के० जोनारो रजने सोधीने एटले सोना रूपा प्रमु
व द्रव्यने काढवाने पावक के० अग्निने लगाडेछे, ने सोनुं काढीजई पथरा धूल
ोगेरेने वाली नाखेछे. वली जेम कतकफलने पंकना गर्भनेविषे नाखीयें तो तें
फल जलने मेलथी जूडुं करेछे, वली जेम दधीनुं मथनहार दधीनुं मथन करी
ाखणने जूडुं करेछे ने राजहंस पाणी दूध भेगा होय तेमांथी मात्र दूध पीई
ायछे. पाणीने जूडुं करेछे तेम ज्ञानवंत प्राणी भेदविज्ञाननी शक्ति साधीने पो
ानी ज्ञानसंपत्तिने वेदे अने परदल के० पुद्गलनुं कटक जे राग द्वेषादिक तेने
ापी नाखेछे. ॥ ७६ ॥

अथ भेदज्ञान मोक्षमूल यह कथनः–

छप्पय छंदः--प्रगट भेद विज्ञान, आपगुण परगुणजानै; परपरिनति परि त्या
गि, शुद्ध अनुभव थिति ठानै; करि अनुभव अभ्यास, सहज संवर परगासे;
आश्रव द्वार निरोध, कर्म घनतिमिर विनासै; छय करिविभाव समभाव भजि,
निरविकल्पनिज पद गहे; निर्मल विशुद्ध सासुत सुथिर, परम अतिंद्रिय सुख लहे.७७

थाय. जे प्रकृति प्रदेशरूप कर्म ते द्रवित कर्म अने राग द्वेषादिक ते कर्म ए बने प्रवेश नही करी शके, अने अध्यात्मना पथ सेलीमा आवीने साधीने पोताना रूपमा पूर्ण थईने परब्रह्म केहेवाय ॥ ३० ॥

हवे सवरनु कारण सम्यक दृष्टिछे,तेनो महिमा कहे छे —अथ सम्यक

सवैया तेइसा —भेद मिथ्यात सु वेद महारस भेद विज्ञान कला तिन, अपनी महिमा अवधारत, त्याग करे उरसों ज पराई, उद्धतरीति वसे ... तु निरतर ज्योति सवाई, ते मतिमान सुवर्ण समान लगे तिनकों ॥ ३१ ॥

अर्थ -मिथ्यातग्रथि भेदीने तथा उपशमरूप महारस वेदीने जे बुद्धिवंत विज्ञाननी कला पामीछे, अने जे ए भेदविज्ञान वडे पोताना स्वरूपनी पोताना ज्ञान दर्शन चारित्ररूप महिमाने अवधारे, उर के० हैया थकी के०सामग्री तेनो त्याग करे अने जेना घटमा उद्धतरीति के० देशविरति विरतीनी रीत फुरी अने निरतर तप थकी जेनी सवाई ज्योति ... कहिये ते सुवर्णसमान छे तेमने शुभाशुभ कर्मरूप काट लागी शकतो नथी

हवे सवरनु मूल भेदविज्ञान छे ते मोक्षनु कारण कही समजावेछे -

अथ भेदज्ञान महिमा कथन —

अडिल छद —भेदज्ञान सवरनिदान निरदोष है, सवरसो निरजरा क्रम मोष है, भेदज्ञान शिवमूल जगतमहि मानिये, यदपि हेय है उपादय जानिये ॥ ३२ ॥

अर्थ —भेदज्ञान जेछे ते निरदोष सवरनु निदान के० मूलकारण छे अने ... रानु कारण सवर छे अने निर्जराजेछे ते मोक्षनु कारण छे ए अनुक्रम प्रमाणे ... नु कारण परपरायी भेदविज्ञानज छे अगर जो शुद्धस्वरूपनी अपेक्षाए भेदज्ञान त्याग जोगछे तो पण नयोनुं उपादेय ते आदरवा जोग्य जानिये.

हवे स्वरूपनी प्राप्ति थया पछी भेदज्ञाननु हेयपणु देखाडेछे —स्वरूप कथन

दोहा - भेदज्ञान तवलों भलो, जवलों मुक्ति न होय, परम ज्योति परगट जहा, तहा विकल्प न कोय ॥ ३३ ॥

अर्थ —भेदज्ञान त्यासुधी भलुछे ज्यासुधी मुक्ति थई नथी जहा परम ज्योति प्रगट थाय त्या विकल्प काई रहे नही तो भेदज्ञान केम करीने रही शके ॥ ३३ ॥

भेदज्ञान मुक्तिनो उपाय छे ते कहेछे -अथ भेदज्ञानमहिमा कथन -

चोपाई·—भेदज्ञान संवर जिन्हि पायो, सो चेतन शिवरूप कहायो, भेदज्ञान नके घट नांही; ते जडजीव बंध घटमांही. ॥ ३४ ॥

अर्थः—जे जीवने भेदज्ञानरूप संवरनी प्राप्ति थई तेज चेतन शिवरूप कहियें ना हृयनेविषे भेदज्ञान नथी. ते मूर्ख घटपिंडनेविषे बंधायलो रहेछे. ॥ ३४ ॥
वे भेदविज्ञानवडे आत्मानो महिमा वधेछे ते कहेछेः—अथ भेदज्ञानको महात्म्य·-

दोहराः—भेदज्ञान साबू भयो, समरस निर्मल नीर; धोबी अंतर आतमा, वे नीज गुन चीर. ॥ ३५ ॥

अर्थ.-- भेदज्ञान जे छे ते साबुरूप जाणवुं, अने उपशम रस ते निर्मल पाणी छे अंतर आत्माने धोबी मानवो, ते धोबी पोताना गुणरूपवस्त्रने धुवेछे ॥ ३५ ॥
वे भेदविज्ञाननी जे क्रिया छे ते कहेछेः-अथ भेदज्ञानको कर्तव्यता महात्म्य·-

सवैया इकतीसा -जैसें रजसोधा रज सोधिके दरब काढे, पावक कनक काढी हत उपलको, पंकके गरभमे ज्यों मारिये कतक फल. नीर करे उज्वल नितारि रे मलकों; दधिको मथैया मथि काढे जैसे माखनकों, राजहंस जैसे दूध पीवे गि जलकों, तैसें ज्ञानवंत भेदज्ञानकी सकति साधि, वेदे निज संपति उछेदे रदलकों. ॥ ३६ ॥

अर्थ —जेम कोई रज सोधा के० सोनारो रजने सोधीने एटले सोना रूपा प्रमु य द्रव्यने काढवाने पावक के० अग्निने लगाडेछे. ने सोनुं काढीलई पथरा धूल गेरेने बाली नाखेछे. वली जेम कतकफलने पंकना गर्भनेविषे नाखीये तो ते जलने मेलथी जूडुं करेछे, वली जेम दधीनुं मथनहार दधीनुं मथन करी ाखणने जूडुं करेछे ने राजहंस पाणी दूध भेगा होय तेमांथी मात्र दूध पीई ायछे. पाणीने जूडुं करेछे तेम ज्ञानवत प्राणी भेदविज्ञाननी शक्ति साधीने पो ानी ज्ञानसंपत्तिने वेदे अने परदल के० पुद्गलनुं कटक जे राग द्वेषादिक तेने ापी नाखेछे. ॥ ३६ ॥

अथ भेदज्ञान मोक्षमूल पद कथन.—

छप्पय छंद —प्रगट भेद विज्ञान. आपगुण परगुणजाने; परपरिनति परि त्या ि, शुद्ध अनुभव थिति ठाने; करि अनुभव अभ्यास, सहज संवर परगासे; ाश्रव द्वार निरोध, कर्म घनतिमिर विनासे; छय करिविभाव समभाव भजि. निरविकल्पनिज पद गहे; निर्मल विशुद्ध सासुत सुथिर. परम अनिंद्रिय सुख लहे. ३७

अर्थ – भेद ज्ञान जे छे ते प्रगटपणे पोताना तेम पारका ... थी परवस्तुमां जे परिनमन छे तेनुं ज्ञान करे, पोताना शुद्ध ... खे, ने ते अनुभवनो अभ्यास करीने सहज संवरना रूपनो प्रकाश ... द्वारनो विरोध करीने कर्मरूप मेघ अधकारनो नाश करे, अने विभाव दशानो क्षय करीने समभाव के० समाधिने भजे, तेणे करीने जहा नथी एवु पोतानु निर्विकल्प पद तेने पामे एटले जे सुखनेविषे मन उपरथी ते विशुद्ध अनंत कालसुधी एकरूप तेथी शाश्वत स्थिर एवु के० इन्द्रियगोचर नही एवु सुख पामे ॥ ७७ ॥

इति श्री नाटक समयसारको बालावोधरूप संवरद्वार छठो संपूर्ण

दोहा -- बरनी संवरकी दसा, जथा जुगति परमान, मुक्ति वितरनी सुनहु भविक धरि कान ॥ ७८ ॥

अर्थ –संवररूपनी दशा कही ते युक्ति तथा प्रमाणे करी कहीने, ... नी वितरणी के० आपनारी एवी जे निर्जरा छे तेनु वर्णन करुं – हे भव्य लोको तमे कान दईने सांभलो ॥ ७८ ॥

हवे निर्जरानु केवु स्वरूप छे ते कहेछे – अथ निर्जरास्वरूप कथन –

चौपाई – जो संवर पद पाइ अनंदे, जो पूरव कृत कर्म निकंदे, जो ... वहुरि न फंदे, सो निरजरा बनारसि बंदे ॥ ७९ ॥

अर्थ –पोतानु जे शुद्ध स्वरूप राखवु तेनु नाम संवर कहिये, तेनुं ... सरर आनंद करे, अने पूर्व कालनेविषे जे कर्म कीधाछे, तेने जडथी ... अने जे पूर्व कर्मना फंद तेथकी तूटीने पाछु ते फंदमा सपडाय नही तेनु आत्मानी निर्जरा कहिये ते निर्जराने बनारसीदास वंदन करेछे ॥ ७९ ॥

निर्जरानु कारण सम्यक्त छे माटे सम्यक्तनो महिमा वखाणे छे –

अथ सम्यक्त महिमा कथन –

दोहा – महिमा सम्यक् ज्ञानकी, अरु विराग बल जोइ, क्रिया कर... भुजंते, करमबंध नहि होइ ॥ ८० ॥

अर्थ – जे कर्म तूटे तेनु फरीने बंधन थई शके नही ए सम्यक् ... मा छे वली ए सम्यक्ज्ञान साथे वैराग बलनो जोग छे, तेथी अनाकुल क्रिया ... दशा ने तेनुं फल भोगवता थका शुखला वधनवा कर्मनो वध थता नथी ॥ ८० ॥

तेवी रीते ज्ञानवत प्राणी नाना प्रकारनी क्रिया करेछे, पण क्रियाने पुद्ग
वाली जाणी आत्मसरूपथी भिन्न माने छे तेथीज कर्म बंध करतो नथी
हवे विषय भोगवता थका कर्म बंध न थाय एवी ज्ञानवैराग्यनी शक्ति
छे – अथ ज्ञान वैराग शक्ति वर्णन –

सोरठा – पूर्व उदय सबंध, विषय भोगवे समकिती; करै न नूतन
महिमा ज्ञान विरागकी ॥ ८३ ॥

अर्थ – पूर्व संचित कर्म उदय आव्याथी तेना संबंधे सम्यक्ती जीव विषय
गवे छे, पण नवां कर्मबंध करतो नथी, ए सम्यक् ज्ञान तथा वैरागनी शक्ति छे

हवे जे ज्ञाता होय छे ते सम्यक् ज्ञान अने विषयनी अरुची ए बेउने
ते कहेछे – अथ ज्ञाताकी व्यवस्था कथन –

सवैया तेइसा – सम्यकवंत सदा उर अंतर, ज्ञान विराग उभै गुन धारै,
सु प्रभाव लखै निज लछन, जीव अजीव दशा निरवारै, आतमको
व्है थिर, आपु तरै अरु औरनि तारै, साधि सुदर्व लहै शिवसर्म सुकर्म
व्यथा वमिमारै ॥ ८४ ॥

अर्थ – जे समकिती होय ते सदा पोताना अंत करण विषे ज्ञान
वे गुणने धारे जे गुणना प्रभाववडे पोतानु ज्ञातापणु लक्षण जोईने जीव
व दशा एटले जीव अजीवनु स्वरूप निरवारे के० जुदु जुदु जाणे, ते पछी
त्माने यथार्थपणे वेदीने आत्मिक स्वभावमा स्थिरता थई रहेछे, ते
अने सत्यउपदेश आपी बीजाने पण तारेछे, ए रीते पोताना आत्मद्रव्यने
ने मोक्षसुखने पामे, अने कर्मउपाधि सहित जे व्यथा तेनु वमन करेछे ॥ ८४ ॥

हवे विषयनी अरुचिविना ज्ञाननु बल निष्फल छे, अने एवा ज्ञानीने
पक्षनेविषे रहेवाथी मिथ्या दृष्टि ठेरावे छे – अथ मिथ्यादृष्टि व्यवस्था कथन –

सवैया तेइसा – जो नर सम्यकवंत कहावत, सम्यक ज्ञान कला नहि जागी
आतमअंग अबंध विचारत, धारत संग कहै हम त्यागी, भेष धरै मुनिराज
तर, मोह महानल अंतर दागी, सून्य हियै करतूति करै परि,सो सठ जीव
होइ विरागी ॥ ८५ ॥

अर्थ – जे मनुष्य पोते सम्यकवंत केहेवाय अने सम्यक् ज्ञाननी कला न
एटले सम्यक् ज्ञाननी प्राप्ति न थई तेथी आत्माना अंगविषे बंधविचारे नही आ
त्मा अबंध छे एम माने, ने तेथी ते अन्यतर संयोग धारे छे वनी काइ नि

अथ नयनो पक्ष लईने पोते त्यागी छे एम कहे, मुनिराजनी पठे पटंतर के० नेष धरे, पण अंतरनेविषे मोहमहानल के० मोहरूप अग्नि शलगी रही होय; विषय थकी वैरागी न थयो, तेथी क्रिया सून्य थको मुनिराजनी पठे क्रिया करे, पण ते जीव मूर्खज केहेवायछे पण वेरागी कहेवाय नही ॥ ८५ ॥

हवे जे सर्व क्रिया करता थका पण मूढ केवाय छे ते कहे छेः–

अथ मूढ क्रिया वर्णनंः–

सवैया तेइसाः– ग्रंथ रचै चरचै शुन्न पंथ लखै जगमें व्यवहार सुपत्ता; साधि संतोष अराधि निरंजन, देइ सुसीख न लेइ अदत्ता; नंग धरंग फिरै तजि संग छके सरवंग सुधारस मत्ता; ए करतूति करै सठ पें समुझै न अनातम आतम सत्ता. ॥८६॥ ध्यान धरे करि इंद्रिय निग्रह, विग्रहसों न गिनै निज नत्ता; त्यागि विनूति विनूति मिटै तन जोग गहै नवनोग विरत्ता; मौन रहै लहि मंद कषाय सहै वध बंधन होइ न तत्ता; ए करतूति करै सठ पै समुझै न अनातम आतम सत्ता ॥८७॥

अर्थः– ग्रंथ रचना करे, नला मार्गनी चरचा करे, नला मार्गने लखे, जगतमां व्यवहार मार्गमां प्राप्तिथको रहे, संतोषी थईने निरंजनने आराधे, लोकोने सारी शीखामण आपे, अदत्तदान ले नही, परिग्रह संग त्यागीने नंग धरंग फिरे के० दिगंबर थई फरे, अने सुधा के० मुग्धपणे पोताना रसमां मातो थको सर्वांगे छक्यो रहे, एवी एवी क्रिया मूर्ख होय ते करेछे पण अनातम सत्ता के० आत्माथी पृथक जे मोहनी गहलता छे तेने, अने आत्मसत्ता के० शुद्ध जाणपणानी जे सत्ता छे, तेने जुदी जुदी जाणे नही तेमने मूर्ख केहेवा ॥ ८६ ॥

वली मूढनी क्रिया केहेछे के, ध्यान धरे, इंद्रिय दमन करे, विग्रह करेछे ते शरीरनी साथे पोताना आत्मानो संबंध गणे नही. विनूति के० संपत्तिनो त्याग करी विनूति के० नस्म शरीर उपर लगाडे, योग मार्ग ग्रहे, अने संसारना नोगथी विरक्त रहे, मौनपणे रहे, कषायनुं मंदपणुं समजे, वध बंधन सहेतो थको पण तातो नही थाय, क्रोधादिक न करे, एवी क्रिया सठ मूढ होय ते करे छे, पण अनातम सत्ता एटले कर्मादिक प्रनावनी सत्ता अने आत्मसत्ता एटले आत्मानुं सत्य स्वरूप तेने समजे नही माटे तेने मूर्ख समजवो. ॥ ८७ ॥

हवे फरी मूढपणानुं स्वरूप बतावेछेः– पुनः मूढ वर्ननंः–

चौपाईः– जो बिनुज्ञान क्रिया अवगाहै; जो बिनु क्रिया मोख पद चाहै; जो बिनु मोख कहै में सुखिया; सो अजान मूढनिमें मुखिया ॥ ८८ ॥

अर्थ — जे जन ज्ञानविना क्रिया अवगाहे अने क्रियाविना मोक्ष पद वली जे मोक्ष पाम्या शिवाय कहे के हुं सुखी छुं, तेने अजाण मूरखनो जाणवो ॥ ७८ ॥

हवे जेने कर्मसत्ता तथा आत्मसत्तानी भिन्नता भासती नथी तेने ढ कहिये तेनु विवेचन करेछे — अथ महामूढ व्यवस्थाकथन —

सवैया इकतीसा — जगवासी जीवनिसों गुरु उपदेश कहै, तुम्हे इहा अनंत काल बीते है, जागो व्हे सुचेत चित समता समेत सुनो, केवल जामे अक्षर सजीते है, आव मेरे निकट बताउ में तुह्मारे गुन, परम करमसो रीते हैं, ऐसे बैन कहै गुरु तउ ते न धरे उर, मित्रकेसे पुत्र चित्रकेसे चीते है ॥ ७९ ॥

अर्थ — सर्व जगवासी जीवना हित वाछयने अर्थे गुरु एवो उपदेश अहो भव्य प्राणी जीव तमे आ जगतमा मोहनिद्रानेविषे सूता रह्या अनादि अनंतकाल तमोने वीत्यो छे, माटे हवे तो चित्तमा सचेत थईने ने समता सहित थका केवलीना वचन सांभलो, जे केवलीना वचनमां के० इंद्रियना विषय रस तेने जीतेला छे, अने तमे मारी पासे ता गुण बतावु, ते गुण केवा छे, परम एटले उत्कृष्ट सुरसे करी भरेला छे, कर्मथकी रीते के० न्यारा छे, एवा वचन गुरु कहेछे ते जे प्राणी हृदयमां ता नथी ते मित्रना पुत्र जेवाछे, केमके मित्रना पुत्रवडे पोतानु घर चलावाय नथी अने तेने शीखामण शी देवी! अने चित्रामण जेवा छे कारण के ए थकी कांई सत्य क्रिया थती नथी ॥ ७९ ॥

दोहा — एते पर बहुरों सुगुरु, बोले वचन रसाल, सेन दशा जागृत कहे दुहूकी चाल ॥ ८० ॥

अर्थ — ए प्रमाणे सद्गुरु छे ते फरी सरस वचन बोले छे, के जीवने ए नदशा ने बीजी जागृनदशा एवी बे दशा छे तेनी चाल सांभलो ॥ ८० ॥

हवे सेन दशानु वर्णन करेछे — अथ शयन दशा वर्णन —

सवैया इकतीसा — काया चित्र सारीमें करम परजंक भारी, मायाकी संवारी न चादर कलपना, सेन करे चेतन अचेतनता नींद लिए, मोहकी मरोर यहै लोचनको ढपना, वहै बलजोर यहै श्वासको सबद घोर विषे सुख कारजकी दौर यहै सुपना; ऐसी मूढ दसामें मगन रहे तिहु काल, धावे भ्रमजालमें न पावे रूप अपना

अर्थः– कायारूप चित्र साली छे, तेमां कर्मरूप पर्यंक छे, तेउपर मायानी सेज संवारी छे, कल्पना के० मननी विकल्पनारूप चादर छे, अचेतनानी ऊंघ ल ईने एवी सामग्रीमां चेतन शयन करी रह्यो छे, मोहनी मरोड तेणे करीने लोचन ढंकाया छे; उदय बल जोर जे छे, ते श्वासनो घोर शब्द छे, अने विषय सुख कार्य नी दोड एटले करणी करवी ते स्वप्नावस्था छे, अने एवुंज नाम मूढदशा तथा श यन दशा कहिये. अने ए दशानेविषे जे मूढ जन होय, ते त्रणे काल मगन थको धावे छे, एटले भ्रमजालमां दोडेछे, पण पोतानुं रूप पामतो नथी. ॥ ९१ ॥

हवे जीवनी जागृतदशानुं वर्णन करेछेः–अथ जागृतदशा वर्णनंः–

सवैया इकतीसाः–चित्र सारी न्यारी परजंक न्यारो सेज न्यारी, चादर भी न्या री इहां झूठी मेरी थपना; अतीत अवस्था सैन निद्रा वही कोउ पैन विद्यमान पलक न यामें अब छपना; श्वास औ सुपन दोउ निद्राकी अलंग बूझे, सूझे सब अंग लखि आतम दरपना; त्यागी भयो चेतन अचेतनता भाव त्यागी, भाले दृष्टि खोलिके संभाले रूप अपना. ॥ ९२ ॥

अर्थः–आत्मज्ञान पाम्याथकी कायारूप चित्रसारी जुदी जुए, अने कर्मरूप पलं गने पण न्यारो देखे; मायारूप सेज पण जुदी जुए, कल्पनारूप चादरने न्यारी जुए, मतलबके ए ठेकाणे मारी स्थापना जूठी छे एम समजे. अतीत अवस्थानेवि षे एटले सयनदशामां निद्रा लेनार पण कोई बीजा रूपे हुंजलुं, विद्यमान कालमां ते अवस्था नथी. हवे पलकमात्र पण आ अवस्थामां मारो अनाव थनार नथी. श्वास अने स्वप्न ए बे निद्रानी अलंगना संयोगे बूझे, अने आत्मारूप आरिसामां आत्मानुंज सर्व अंग सूझे एवी रीते अचेतनतारूप निद्रानो त्याग करीने चेतन त्या गी थयो त्यारे पोतानी दृष्टि खोलीने जुए, अने पोतानुं रूप संभाले. ॥ ९२ ॥

वली सद्गुरु शिक्षानां वचन कहेछेः–अथ पुनः सद्गुरु शिक्षा कथनंः–

दोहाः–इहि विधि जे जागे पुरुष, ते शिवरूप सदीव; जे सोवहि संसारमें, ते जगवासी जीव ॥ ९३ ॥

अर्थः–ए रीते जे पुरुष जागे छे, तेतो सर्व कालनेविषे शिवरूप के० मोक्षरूप जाणवा. अने जेटला संसारनेविषे सूता छे. तेटला तो जगतवासी जीव समजवा. ॥ ९३ ॥

हवे मोक्षपद उपादेयरूप कहीने स्तुति करेछे.–अथ आत्मद्रव्य स्तुतिकथन.

दोहा–जो पद भोपद भय हरै, सोपद सेउ अनूप; जिहि पद परसत औ र पद, लगै आपदारूप ॥ ९४ ॥

ख तेथी विमुख थई परमात्मारूप थईने कर्मनी निर्जरा करे छे, एटले निर्जरा थायछे. तेथी पोतानी सहज समाधिसाधिने पर जे कर्मपुद्गलादिकनी उपाधि जे राग द्वेषादिक, तेनो त्याग करीने आत्माने आराधी परमात्मा पणु करेछे ॥९६॥

हवे जे ज्ञान समुद्र परमात्मानी प्राप्ति थाय छे, ते ज्ञाननी प्रशंसा करेछेः—

अथ ज्ञान समुद्रवर्णनंः—

सवैया इकतीसाः—जाके उरअंतर निरंतर अनंत दर्व, भाव भासि रहे पैं सुभाउ न टरतु है; निर्मलसौं निर्मल सु जीवन प्रगट जाके, घटमें अघट रस कौतुक करतु है; जानें मति श्रुत औधि मनपर्यें केवल सु, पंचधा तरंगनि उमंग उछरतु है; सो है ज्ञानउदधि उदार महिमा अपार, निराधार एकमें अनेकता धरतु है ॥ ९७ ॥

अर्थः— जे ज्ञान सागरना मध्यभागनेविषे निरंतर अनंत द्रव्य पदार्थ भासी रह्या छे, पण ते द्रव्यनो स्वभाव पोते पामतो नथी, निर्मलमां निर्मल एवुं सुजीवन के० जीवितव्य अने समुद्र; पक्षे सुजीवन के० पाणी ते, जेनुं प्रगटछे, अने घटमें के० हृदयनेविषे अघट के० अक्षणरस कौतुक के० सत्यार्थ वेदननुं जे रस तेनुज कुतोहल करे छे, एटले ए समुद्रनेविषे रस कुतोहल घणा छे, अने जे ज्ञान समुद्रनेविषे मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान मनपर्यवज्ञान ने केवल ज्ञान ए पांचे ज्ञान तरंगरूप छे. उमंग के० पोतपोताने ठेकाणे प्रगट थई रह्यां छे एवो ज्ञानसमुद्र ते उदार प्रधान छे, एनो अपार महिमा छे, एनंविषे सर्व पदार्थ भासे छे तेथी पोते निराधार अने एक स्वरूप छता ज्ञातापणामां अनेकता धरे छे॥९७

हवे ज्ञानविना मात्र क्रियावडेज मोक्षनी प्राप्ति नथी तेनुं वर्णन करेछेः—

अथ मोक्षमार्ग अप्राप्ति कथनंः—

सवैया इकतीसाः— केई क्रूर कष्ट सहे तपसौं शरीर दहै, धूम्रपान करै अधो मुख व्हैके झूले है; केई महा व्रत गहै क्रियामें मगन रहैं, वहै मुनि भारमें पयारकेसे पूले है;इत्यादिक जीवनकों सर्वथा मुगति नांहि, फिरे जगमांहि ज्यों बयारके बघूले है; जिनके हियेमें ज्ञान तिन्हहीको निरवान, करमके करतार भरममें भूले हैं॥९८

अर्थः— कोई अज्ञानी क्रूर कष्ट सहन करेछे अने पंचाग्नि प्रमुख तप करीने शरीरने बालेछे, कईक अज्ञानी अग्निना धुमाडानुं पान करेछे, नीचुं मुख राखी ऊंचा पग करीने झूलेछे. केटला अज्ञानी जैन लिंग लईने पांच महाव्रत द्रव्यथी ग्रहण करेछे, अने क्रियामां मग्न रहेछे, एरीतें मुनिराज पणानो भार वहेछे, पण ते पयारना जेवा पूलेछे, देश भाषायें पयार एटले पलाल, जेना झूलनेविषे कण

होता नथी तेवी रीते निराश जाणवा, इत्यादि केवल क्रिया कलापवडे वैया मुक्ति थती नथी, ते जगतनेविषे वयारना वघूल जेम ऊंचा नीचा फ. छे, पण एक ठेकाणे ठरता नथी, तेवा समजवा, अने जेना कला जागृतरूप थईछे, तेमने निरवाण के० मोक्ष छे, अने जे ले केवल क्रियानाज करनारा छे तेतो नर्मनेविषेज भूली रह्याछे ॥ ९८॥

हवे जे मूढ जन छे तेनी दृष्टि निश्चयमां नथी, पण व्यवहारने विषे छे, तेनेविषे अज्ञान छे ते कहेछे – अथ मूढ व्यवस्था वर्णन –

दोहा –लीन नयो विवहारमें, उकति न उपजै कोइ, दीन नयो मुकति कहासों होइ ॥ ९९ ॥

अर्थ -- जे व्यवहारमा लीन थई रह्यो होय एटले मगन थई रह्या होय, कोई उकति के तत्वदृष्टि उपजे नही, अने पोते अनाथ थईने पोताना पदने नजे, ए रीते पोतानु निश्चयरूप जाण्याविना मुक्ति क्याथी थाय ॥ ९९

दोहा –प्रभु समरो पूजो पढो, करो विविध विवहार, मोक्ष सरूपी ज्ञानगम्य निरधार ॥ २०० ॥

अर्थ -- प्रभुने समरो, नावे पूजो, नें नावसहित पढो इत्यादि व्यवहार पण मोक्ष सरूपी आत्माछे तेतो निरधार के० निश्चय ज्ञान गम्य छे ॥ २००

हवे निश्चय सरूपनेविषे ज्ञान पर्याय रूपी अर्थनु निरूपण करेछे –

अथ पर्यायार्थ निरूपन –

सवैया तेईसा –काज विना न करे जिय उद्यम, लाज विना रनमांहि न फै, सीलविना न सधै परमारथ, सीलविना सतसों न अरूफै, नेम विना न निहचे पद, प्रेमविना रस रीति न बूफै, ध्यानविना न थमे मनकी गति, विना शिवपथ न सूफै. ॥ १ ॥

अर्थ.– अहीं अर्थांतर बतावेछे के, जेम जीव पोताना काम विना रतो नथी जेम लाज विना रणसंग्रामने विषे फूफतो नथी वली जेम शीलविना परमार्थ थतो नथी, अने शील धारण कीधाविना सत्य साथे मळातु थी वली नियम धर्या शिवाय निश्चय पद मलतु नथी, अने जेम प्रेमनी विना रसरीत जणाती नथी, तथा ध्यानविना मननी गति थोनाती नथी, ज्ञानविना शिवपथ के० मुक्तिमार्ग ते सूजतो नथी. ॥ १ ॥

हवे ज्ञानवंतनो महिमा देखामीने तेनी व्यवस्था कहेछेः—

अथ ज्ञानमहिमा धारक व्यवस्था कथनं·—

सवैया तेईसाः— ज्ञान उदै जिनके घट अंतर, ज्योति जगी मति होति न मैली; बाहिज दृष्टि मिटी जिन्हके हिय. आतम ध्यान कला विधि फैली; जे जड चेतन भिन्न लखैं सु विवेक लिये परखैं गुन थैली; ते जगमें परमारथ जानि गहै रुचि मानि अध्यातम सैली. ॥ २ ॥

अर्थः— जेना हृदयनेविषे ज्ञाननो उदय थवाथी पोतानी ज्योति जागृत थईने तेथी मति जे बुद्धि ते उज्वल थई पण मेली नथी; अने पोताना बाह्य शरीरने आत्मा करी माने एवी बाह्य दृष्टी ते मटी गई, अने हृदयनेविषे आत्मध्याननी कला तेनी विधि जे यमनियमादिक ते विधि फेली एटले पसरी, ते वखतथी जड चेतनने भिन्न भिन्न लखे, अने पोतानो विवेक के० भेदविज्ञान तेणेकरी पोताना गुणनी थेली पारखी लीधी. एवा जे जीव तेज जगतमां परमार्थने जाणी तेने रुचिये करी ग्रहण करे, ए रीतें अध्यात्मसेली मान्य करीने परमार्थने जाणे. ॥ २ ॥

हवे मोक्षनी सुगम प्राप्ति देखाडेछेः— अथ मोक्षप्राप्ति कथन.—

दोहा·— बहु विधि क्रिया कलेससों, शिवपद लहै न कोइ; ज्ञान कला परकाशसों, सहज मोक्ष पद होइ. ॥ ३ ॥ ज्ञान कला घट घट वसे, योग युगतिके पार; निज निज कला उदोत करि, मुक्त होइ संसार. ॥ ४ ॥

अर्थः— भात भातनी क्रियाने निमित्ते क्लेश करवो, तेथी मोक्षपद मले नही. पण ज्ञानकलानो प्रकाश थवाथी सेहेज मोक्षपद प्राप्त थायछे ॥३॥ ज्ञानकला तो घट घटनेविषे वसी रहेली छे, पण मन वचन अने कायाना योगनी युक्तियी पार रहेली छे, माटे पोत पोतानी कलाने प्रकाश करवाथी संसारथी मुक्त थवाय छे, एवो सर्वने सद्गुरुनो आशीर्वाद छे. ॥ ४ ॥

हवे मुक्तपणुं अनुभव थकी थायछे माटे अनुभवनी प्रशंसा करेछे·—

अथ अनुभव प्रशंसाः—

कुंमलियाछंदः—अनुभव चिंतामनिरतन, जाके हिय परगास; सो पुनीत शिवपद लहै, दहै चतुर्गतिवास; दहै चतुर्गतिवास, आस धरि क्रिया न मंडै; नूतन बंध निरोध, पूर्वकृत कर्म विहंडै; ताके न गनु विकार, न गनु बहु भार न गनु भौ, जाके हिरदेमांहि, रतनचिंतामनि अनुभौ ॥ ५ ॥

अर्थ·—अनुभवरूपी चिंतामणिरत्न जेना हृदयनेविषे प्रकाशमान थई रह्योछे

ते जीव पुनीत के० पवित्र थईने शिवपदने पामेछे, ने चतुर्गतिनो जे वास
हन करेछे, एटले देवगति, मनुष्यगति, तिर्यंचगति ने नरकगति ए चारे गतिना
ने वाळी नाखेछे अनुभवी जननी रीत एछे के ते आशा धरीने क्रिया
नूतन बंध के० नवा कर्मना बंधने निरोधीने संवर धारण करे, तथा
ने विहमी नाशीने तेनी निर्जरा करेछे, तेना विकारने अहो भव्य जीव तु
नही, अने तेना अतिचारने तु गणीस नही, अने तेना नयने पण
जेना हृदयमा अनुभवरूपी चिंतामणीरत्न प्रकाशी रह्युछे ॥ ५ ॥

हवे अनुभवीनी ज्ञानदृष्टीनु सामर्थ्य वखाणेछे – अथ ज्ञानदृष्टि सामर्थ्य

सवैया इकतीसा –जिनके हियेमें सत्य सूरज उदोत भयो, फैलि मति
मिथ्यात तम नष्ट है, जिनकी सुदृष्टिमे न परचे विषमतासों समतासों प्रीति
तासों लष्ट पुष्ट है; जिन्हके कटाछमे सहज मोष पथ सधै, साधन
तनसो न कष्ट है, तिन्हिकों करमकी किलोल यह है समाधि, डोले यह
रान जोले यह मष्ट है ॥ ६ ॥

अर्थ – जेना हियानेविषे सत्य सूर्यनो उद्योत थई रह्योछे, अने
मतिरूप किर्ण फेली रह्याछे, तेथी मिथ्यात रूप अंधकार ते नाश पाम्या
जे जीवनी सुदृष्टिमा विषमतानो परिचय नथी, एटले समतासाथे प्रीति
छे, ने ममतासाथे तथा मोक्षसाथे लष्ट पुष्ट के० चित्तविनानी प्रीति राखेछे,
ना कटाक्षनेविषे एटले थोडा विलोकनमां सहज स्वभावे मोक्षमार्ग सिद्ध थायछे
साधन के० मनोयोगादिक त्रण योगनो निरोध एटले [illegible]
कष्ट नथी. एवा ज्ञानधारीने जे कर्म बाहेर आवेछे तेने गणतीमा समाधि
रूप जाणेछे जो कदी गती कर्मना उदयथकी बोलेछे तोपण ते जागानन
अने नो बोलेछे तोपण मष्ट के० मौनव्रतिछे ॥ ६ ॥

हवे ज्ञानीने परवस्तुनो त्याग कह्यो अने विशेषपणे तेनाज त्याग वखाणेछे.

अथ परवस्तुको त्याग ताको विशेष वर्नन –

सवैया इकतीसा – आतम सुभाउ परभावकी न सुद्धि तासों, जाको
मन मग्नमें रह्यो है; ऐसो अविवेकको निधान परिग्रह राग, तासो
त्यागो मनुषेकर कह्यो है; अब निज परे भ्रम दूरि करिवेको सद्गुरु
[illegible] समझ्यो है, परिग्रह अरु परिग्रहको विशेष अंग, कहिवेको
[illegible] यह कह्यो है ॥ ७ ॥

अर्थः--जेनुं मन परिग्रहनेविषे मगन थई रह्युं छे, ते जीवने पोताना तथा पारका स्वभावनी शुद्धता थती नथी. परिग्रहनो राग तेतो अविवेकनुं निधान कह्युं छे, जे परिग्रहना रागनेविषे पोताना ने पारका स्वभावनी शुद्धता नथी, ते परिग्रह रागने त्याग; अहींसुधी सामान्य मात्र कह्यो. हवे निजस्वरूपनो भ्रम ने परस्वरूपनो भ्रम तेने दूर करवाना कार्यने घणा प्रकारें सद्गुरू उपदेश करवाने उ छंगवंत थया छे. हवे इहां परिग्रह तथा ते परिग्रहनुं विशेष अंग केहेवाने सद गुरु जे छे ते उद्यम उदीरणा करीने लह लह्यो के० सचेत थया छे ॥ ७ ॥

हवे सामान्यरूप परिग्रहनो राग अने विशेषरूप परिग्रहनो राग तेनो विवरो कहे छेः--अथ सामान्यविशेष कथनंः--

दोहाः--त्याग जोग परवस्तु सब, यह सामान्य विचार; विविध वस्तु नाना विरति, यह विशेष विस्तार ॥ ८ ॥

अर्थः--जेटली परवस्तु छे तेटली बधी त्याग जोग छे. एतो सामान्यपणे परिग्रहना त्यागनो विचार जाणीये; अने ते परवस्तु भात भातनी छे, अने तेना उपर विचार पण भातभातनो छे एने विशेषपणे परिग्रह त्यागनो विस्तार जाणवो. ८

हवे परिग्रह छतां ज्ञातानी परिग्रह उपर अलिप्त दशा कहे छेः-

अथ ज्ञाता अलिप्त कथनंः--

चोपाईः--पूरव कर्म उदै रस भुंजे; ज्ञान मगन ममता न प्रयुंजे; उरमें उदासीनता लहिये, यों बुध परिगह वंत न कहिये ॥ ९ ॥

अर्थः--पूर्व कर्मना उदयथकी जे शुभाशुभ रस उपजे ते भोगवे पण ते रस भोगनेविषे ममता प्रयुंजे नही, मात्र ज्ञाननेविषेज मग्न रहे, पण परिग्रहना संयोग वियोगनेविषे हर्ष विषाद उपजे नही, एवीरीतें जेना मनमां उदासीनता पामीये छइयें. एवा बुध के० पंडितने परिग्रहवंत कहेवाय नही ॥ ९ ॥

हवे ज्ञानीनी निस्पृह दशा वखाणे छेः--अथ ज्ञानी अवांछक कथनंः--

सवैया इकतीसा --जे जे मनवंछित विलास भोग जगतमें, तेते विनासिक सब राखे न रहत है; और जे जे भोग अभिलाष चित्त परिणाम, तेते विनासीक धर्मरूप व्है वहत है; एकता न दुहों माहि ताते वांछा फुरे नांही, ऐसे भ्रम कारजको मूरख चहत है; संतत रहे सचेत परसो न करे हेत याते ज्ञानवंतको अवंछक कहत है॥ १०

अर्थः--मनना मानी लीधेला जे जे जगतना भोग विलास छे, ते ते नाश रूप छे, आपणा राख्या रेहेता नथी. वली जे जे भोग अभिलाषरूप चित्त परिणाम रहेछे

ते ते चित्त परिणाम चचलपणे विनासी धर्म रूपने विषे थई रह्या छे , तेविषे तथा जोग अभिलाषनेविषे अनेकता छे, पण एकता नथी वली ! पणुं छे तेथी एना उपर ज्ञानीनी वांछा फुरती नथी एवा भ्रम कार्यने मूर्ख तेज चाहे छे, जे सतत के० निरतर सावधान रहे अने परवस्तु साथे नही, एज माटे ज्ञानवतने अवचक निस्पृही कहेछे ॥ १० ॥

हवे परिग्रहमां रेहेता छतां ज्ञाताने अलिप्तपणु केवी रीते केहेवाय ते आपीने समजावे छे – अथ ज्ञाता अलिप्त दृष्टांत कथन –

सवैया इकतीसा – जैसे फिटकडी लोद् हरडेकी पुटविना स्वेत वस्त्र मजीठ रग नीरमें, भीग्यो रहै चिरकाल सर्वथा न होइ लाल, भेदे नही पेती रहे चीरमे, तैसे समकितवत राग दोष मोह विनु, रहे निशिवासर नीरमें, पूरव करम हरे नूतन न बंध करे जाचे न जगत सुख राचे न शरीरमें ,

अर्थ – जेम कोई स्वेत वस्त्र होय तेने फटकडी लोदर तथा हरडानां पट दीधा शिवाय मजीठना लाल रगना पाणीमा चिरकाल के० घणाकाल सुधी नावी राखे तोपण ते वस्त्र सर्वथा प्रकारे लाल थाय नही, अंतर रग तेथी ते चीरमा सफेती रहेज, तेमज समकितवत जे जीव होय ते राग ना पटविना निशिवासर के० रात दिवस परिग्रहनी भीडमा रहेछे तोपण कर्मना भोगनी निर्जरा करेछे, अने नवा कर्मनु बधन करे नही, अने सुखने जाचे नही वली शरीरने जोईने राचे नही ॥ ११ ॥

हवे परिग्रहने विषे रेहता छता ज्ञाताने उद्वेग रहितपणु होय छे ते वडे दृढ करावे छे – अथ ज्ञाता अनुद्वेग कथन –

सवैया इकतीसा – जैसे काहु देसको वसैया वलवत नर, जगलमें जाई छत्ताकों गहतु है, वाकों लपटाय चहु ओर मधुमक्षिका पे, कवलीकी ओटसों अन रहतु है, तैसे समकिती शिव सत्ताको सरूप साधे, उदेकी उपाधि रान हतु है, पहिरे सहज को सनाह मनमें उछाह, छाने सुखराह उदवेग न लहतु है।

अर्थ – जेम कोईक देशनो रेहेवासी भील वगेरे बलवत नर जगलमां जईने धपुडाने ग्रहण करे छे, ते वखत ते पुरुषने चारे तरफ मधु मक्षिका के० माखीओ लपटाई जाय छे, पण ते पुरुषना शरीर पर कामली हायछे. तेथी कित के० मखविना अमख रहेछे, तेमज समकिती जीव शिव के० सत्ता के० सत्भूतपणु तेनु स्वरूप जे एक विज्ञानघनपणु तेने साधे छे, ने

उदयनी जे आत्माने उपाधि लागी रहीछे, तेने ते समाधि करी जाणे छे. सहज गुण जे ज्ञान दर्शन चारित्र तद्रूप जे सनाह के० बख्तर ते पेहेरी राखेछे, अने ए रीते जे कर्मनिर्जरा तेनो उछाह मनमां धारण करे एवा अनंत सुखना राह के० मार्गनेविषे रेहेतो थको उद्वेग दशाने पामतो नथी. ॥ १२ ॥

हवे ए रीतमां ज्ञातानो अबंधकपणुं बतावेछेः— अथ ज्ञाता अबंध कथनंः—

दोहराः— ज्ञानी ज्ञान मगन रहे, रागादिक मल खोइ; चित उदास करनी करे, करम बंध नहि होइ. ॥ १३ ॥ मोह महातम मल हरे, धरे सुमति परगास; मुगति पंथ परगट करे, दीपक ज्ञान विलास. ॥ १४ ॥

अर्थः—ज्ञानी पुरुष तो ज्ञानमां मगन रहेछे, अने रमेछे, अने राग द्वेष मोहरूपी जे मल छे, तेने खोइ दिएछे; अने जे क्रिया करेछे ते पण उदासीनरूप करेछे, माटे एवा ज्ञानीने कर्म बंधन थतो नथी. ॥ १३ ॥ वली मोहरूपी महातम के० घोर अंधकाररूप जे मल तेने हरे, अने सुमतिना प्रकाशनार दीपकने धरे, ए रीते मुक्ति पंथने प्रगट करी बतावे, एवोज ज्ञाननो विलास ते दीपकरूप जाणवो. ॥ १४ ॥

हवे ज्ञानदीपकनुं स्वरूप कही देखाडेछेः—अथ ज्ञान दीपक वर्ननंः—

सवैया इकतीसा — जामें धूमको न लेस वातको न परवेस, करम पतंगनिको नाश करे पलमें; दसाको न भोग न सनेहको संयोग जामें, मोह अंधकारको वियोग जाके थलमें; जामें नतताइ नही रागरंक ताइ रंच, लह लहे समता समाधि जोग जलमें; ऐसी ज्ञानदीपकी सिखा जगी अभंगरूप, निराधार फुरी पै दुरी है पुद्गलमें. ॥ १५ ॥

अर्थः-- जे ज्ञान दीपकमां धुमाडानो लेश नथी ने जेमां वायुनो पण प्रवेश नथी, अने जे कर्मरूपी पतंग जीवनो पलकमां नाश करे छे, ने जेमां दशा के० वाटनो भोग नथी, वीजो अर्थ— कोई विकल्प दशा नथी अने जेने सनेह के० तेलनो संयोग नथी. वली जेना प्रकाशमां मोहरूप अंधकारनो वियोग थयुं छे, जे दीपकमां ततताषणुं नथी, वली जेमां लालरगनी रचमात्र लाला नथी अने जे समता समाधिनो जोग ते रूप जे जल तेनेविषे लहलहायमान थयो छे, एवो जे ज्ञानदीपक छे, तेनी शिखा सदा अभंगरूप जागी रहीछे, जे शिखा सर्व पदार्थनुं ज्ञान करवानी आधार छे, अने पोते निराधार फुरी रहीछे, ते पुद्गलमां डरी के० छुपी रही छे ॥ १५ ॥

हवे ज्ञानना स्वभावमां खंमना नथी ते उपर दृष्टांत आपेछे–

अथ ज्ञान स्वभाव अखमित दृष्टांत कथन–

सवैया इकतीसा -- जैसो जो दरब तामें तैसोही सुभाव सधे, कोउ दर्वा को सुभाव न गहतु है, जैसे संख उज्जल विविध वर्ण माटी भखे, माटीसा न से नित उज्वल रहतु है, तैसे ज्ञानवंत नाना भोग परिग्रह जोग, करत विला न अज्ञानता लहतु है, ज्ञानकला दूनी होइ उददशा सूनी होइ, ऊनी होइ थिति बनारसी कहतु है ॥ १६ ॥

अर्थ – जे जेवु द्रव्य छे, तेमा तेरोज स्वभाव सिद्ध छे, पण कोई द्रव्य द्रव्यनो स्वभाव ग्रहण करे नही जेम कोई जळाशयमां संख बेइंद्रीजीव होय सरूपमां उज्वल होय छे, पण भात भातनी माटी खाय छे, तेमछता रंग तेना स्वरूपमां देखातो नथी, तेतो नित्य उज्वलज देखाय छे, तेम प्राणी परिग्रहना जोगथकी नाना प्रकारना भोग भोगवतो छता अने विलास तो छता अज्ञानता पामतो नथी अने ज्ञाननी कळा बमणी थाय छे, अने दशा के० भ्रमदशा ते शून्य थाय छे, अने भवस्थिति के० संसार स्थिति ते के० उंछी थाय छे, एवी रीते बनारसीदासजु केहेवु छे ॥ १६ ॥

हवे सम्यक् ज्ञाननी साथे सम्यक् क्रिया स्याद्वाद मतने आश्रयी कहे छे–

अथ स्याद्वाद प्ररूपन कथन –

सवैया इकतीसा – जोलों ज्ञानको उदोत तोलों नही बंध होतु, वरतै मिथ्यात तब नाना बंध होहि है, ऐसो भेद सुनिकै लग्यो तू विषै भोगनिसों, जोगनिसों उद्यमकी रीतितें विछोहि है, सुनो भैया संत कहे मैं समकितवंत यहतो एकत परमेसरकी द्रोहि है, विषेसो विमुख होइ अनुभो दशा आरोहि मोक्ष सुख ढोहि ऐसी तोहि मति सोहि है ॥ १७ ॥

अर्थ – ज्यां सुधी ज्ञाननो उद्योत छे, त्यांसुधी बंध थतो नथी अने ज्यारे मिथ्यात्व दशावंत छे, त्यारे तो नाना प्रकारनो बंध थाय छे कोई परंतु ज्ञान माहात्म्यनो भेद सांभळीने एवु कहे के तू विषय भोगववा लाग्यो अने मन वचन कायाना योगथकी उद्यमनी रीति जे क्रिया, तेने तें छांडी दीधी हवे के हे संतपुरुष सांभळ तु जे कहे छे, के हु समकितवंत छु पण ए एकांत ते परमेश्वर परमात्मानी द्रोही के० द्रोह करनारी छे माटे तू विषयथी विमुख

अर्थ – जे जीव पोताना पूर्व संचित शुभ कर्मना उदय वडे सुख भ
पण भोगथी उदास रहे छे, अने जे जीवने असाता वेद
जे तो पण विलाप करे नही, अरतिनो विभाग करे नही, अंतरमां
ही राखे, अने शरीरनो संताप सहन करे, वली जेनीपासे आत्मज्ञान छे,
क्रिया करीने फलने इच्छे नही, तेज उत्कृष्ट विचक्षण ज्ञानी केहवायछे,
कर्म करता थका कर्मना कर्त्ता एम तो अमे कही सकशु नही ॥ २१ ॥

हवे एवा ज्ञानीनी व्यवस्था कहे छे ज्ञाता वर्णन –

सवेया इकतीसा – जिनकी सुदृष्टिमें अनिष्ट इष्ट दोउ सम, जिनको
विचार शुभ ध्यान है, स्वारथको त्यागी जे लहेगे परमारथकों, जिनके
नफा न है न ज्यान है, जिनकी समुजमें शरीर ऐसो मानीयतु,
रुपानकोसो म्यान है, पारखी पदारथके साखी भ्रम भारथके तेई
नहीको जथारथ ज्ञान है ॥ २२ ॥

अर्थ – जे ज्ञातानी सुदृष्टि एवी छे के, जेनेविषे इष्ट वस्तु तथा अनिष्ट
बराबर छे, अने जेनो आचार एवो छे के जे भला विचारथी शुभ ध्यानमान रहे
ने विषय सुख प्रमुख स्वार्थने त्यागीने जे अध्यात्मरूप परमार्थ तेनेविषे लाग
छे, वली जेना वचन एवा छे के, जेमा नफो नथी तेम टोटो पण नथी, एटले
ने सुसीख किंवा कुसीख देता नथी मौन वृतिज रहेछे वली जेनी समज
य के शरीरने थानभी छीज के० तुस जेवु अने रूपान के० तरवार तना
वु माने छे, मतलब के आत्माने शरीरथी जुदो जाणे छे वली जे जेवो
होय तेवी तेनी परिक्षा करे छे, अने जेम नय ज्ञानविना पाच दर्शनमां जे
नु भारथ चाली रह्यु छे, तेनो साक्षी छे, पृथवातु थानक छे, तोहेज
अने तेने यथार्थ ज्ञानी कहिये ॥ ॥ २३ ॥

हवे समकितनु साहसपणु वर्णन करेछे - अथ सम्यक्त्वका
सवेया इकतीसा – जमकोसो भ्राता दुखदाता है असाता कर्म, त
रस न साहस गहतु है, सुरग निवासी भूमिवासी औ पतालवासी,
मन कपत रहतु है, उरको उजारो न्यारो देखिये सपत भेसों,
यो आनंद लहतु है, सहज सुवीर जाको सासुतो शरीर ऐसो, ज्ञानी जा
ज आचारज कहतु है ॥ २४ ॥

अर्थ – अहि संसारनेविषे जे असाता वेदनीय कर्म छे, ते केवां दुःख

अहिं उत्प्रेक्षा करे छे:—जमकोसो त्रास्ता के० यमना जाई छे. तेनो उदय थता मू
। जन जे छे. तेनो साहस थही शके नही. सुरगनिवासी के० देवता भूमि
नी के० मनुष्य तिर्यच अने पातालवासी देवता नारकी एवा सर्व त्रिलोकवा
। जीवोनां तन मन असातावेदनीय थकी कांपता रहेछे. हवे ज्ञानी जीवना उ
। अजवाळुं जे छे ते अंतरना चांदरणां जेवुं छे. ते केवु छे? ते समजावे छे के,
सात भय थकी छुटुंज छे. जे अजवाळाथी साते भय प्राप्त थतां नथी, अने ए
नावथी निःशंक थई मोजे छे. अने आनंद पामे छे. सहज सुवीर के० महोटो
ाक्रमीक सुभट, जेनुं ज्ञानरूपी शरीर शाश्वत छे, एवा ज्ञानी जीवो आचार्य के०
हा पुरुष पूज्य जाणवा, एवुं आचार्य कहेछे ॥ २४ ॥

हवे साते भयनां नाम कहेछे:— अथ सप्त भयनाम:—

दोहा:— इह भव भय परलोक भय, मरन वेदना जात; अनरक्षा अनगुप्त
भय. अकस्मात भय सात ॥ २५ ॥

अर्थ:— आ भवनुं भय, परलोकनुं भय, मर्ण भय, वेदना उपजवानुं भय, अ
नरक्षानुं भय, अनगुप्त भय, अने अकस्मात भय. ए सात भय जाणवां ॥ २५ ॥
हवे साते भयनां लक्षण कही जुदां जुदां उलखावेछे.—अथ सप्त भय लक्षन कथनं.—

सवैया इकतीसा.— दसधा परिग्रह वियोगचिंता इह भव, दुर्गति गमन परलोक
भय मानिये; प्राननिको हरन मरन भै कहावै सोई, रोगादिक कष्ट यह वेदना वखा
निये; रक्षक हमारो कोउ नांही अनरक्षा भय, चोर भै विचार अनगुप्त मन आनिये
अनचिंत्यो अबहि अचानक कहांधों होइ, ऐसो भय अकस्मात जगतमें जानिये २६

अर्थ:— शास्त्रमां जे दस भांतिनो परिग्रह कह्यो छे. तेना विजोगनी चिंता रहे ते
ज आ भवनुं भय जाणवुं. दुर्गतिगमननुं जे भय ते परलोकनुं भय कहिये; प्राण छू
टवानुं जे भय ते मर्ण भय; रोग प्रमुखथकी जे कष्ट उपजे ते वेदना भय वखा
णिये; अमारी रक्षा करनार कोई नथी देखातो ए अनरक्षा भय; चोर अथवा दु
श्मण आव्याथी हुं शुं यत्न करी शकीश एवो जे भय तेने अनगुप्त जाणिये. अणचिंत्युं
शुं थशे एवुं जे भय मननेविषे रहे तेनुं नाम अकस्मात् भय जाणवुं ॥ २६ ॥

हवे आ भवनुं भय निवारण रुप मंत्र कहेछे.—अथ इह भव भय निवारण कथनः-

छप्पय छंदः— नख शिख मित परवान, ज्ञान अवगाह निरखत; आतम अं
ग अभंग, संग परधन इम अरखत; छिनभंगुर संसार, विभव परिवार भारखत;

जहाँ उतपति तहाँ प्रलय, जासु संयोग विरह तसु, परिग्रह प्रपंच ॥
इह भय नय उपजै न चित, ज्ञानी निशंक निकलंक निज, ज्ञानरूप निर॰

अर्थ -पगना नखथी ते माथानी शिखासुधी एटले सर्व शरीर प्रमाण गुण जे ज्ञान ते अवगाह के॰ व्याप्ति तेने जुए, एवा नख सिख सहित आत्मानु अंग अचल रहे, तेनी साथे जे पुद्गलछे तेने परधन के॰ परद्रव्य कहेछे सर्व संसार क्षणभंगुर छे, ने तेनेविषे जे विभव परिवाररूप नार छे, ते ॥ गुर छे, अने जेनी उत्पत्ती तेनु विनाश छे, जेनो संयोग तेनो वियोग एवो परिग्रहनो प्रपंच प्रगट परखीएं तो आ भवनु भय चित्तमा उपजे नही, ते जे ज्ञानी होय ते परिग्रहना वियोगनी चिंता न राखे, ने निःशंक रहे, स्कलंक स्वरूप ज्ञानमय सदा जुए ॥ २७ ॥

हवे परलोकभय निवारणनु मंत्र कहेछे – अथ परलोक भय निवारण

छप्पयछंद – ज्ञान चक्र मम लोक, जासु अवलोक मोख सुख, म नाहि, नाहि जिसमाहि दोष दुख, पुन्न सुगति दातार, पाप दुरगति यक, दो खंडित खानिमे, अखंडित है शिवनायक, इह विधि विचार परलोक नहि व्यापक वरते सुखित, ज्ञानी निशंकनिकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंतनित॥

अर्थ – ज्ञान चक्र के॰ ज्ञान विस्तार तेतो ममलोक के॰ मारो लोक छे, प्रचार छे, तेने प्रत्यक्ष जोवो, अने मोक्ष सुख वन्ने रूप छे, अने इतर के॰ तेविना अन्य लोक ते मारो नथी, म्हारो ज्ञान लोक मारी साथे छे जेमा दोष दुःख नथी परलोकमा सुगतिनु देनार पुन्य छे, अने परलोकमा कुगतिनु पनार पाप छे ए वे पुन्य पाप आत्मानी खंडनानी खाणी छे अने हु अस हु शिवनायक के॰ सिद्धरूपी छु एवा विचारथी परलोक भय व्यापे नही, सुखित के॰ सदा सुखवंत वर्त्ते, ए प्रमाणे परलोक भय छांडिने ज्ञानी उ सक थको निकलंक एवु जे निजज्ञानरूप तेने सदा निरखे ॥ २८ ॥

हवे मरणभय निवारणनो मंत्र कहे छे – अथ मरन भय निवारण मंत्र –

छप्पयछंद– फरस जीभ नाशिका, नैन अरु श्रवन अक्ष इति, मन वच वल तीन, सास उस्सास आउ थिति, ए दस प्राणविनाश, ताहि ज ॥ जे, ज्ञान प्राण संयुक्त, जीव तिहु काल न छीजे, यह चित करत नहि मरण नय प्रमाण जिनवर कथित, ज्ञानी निशंक निकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंतनित॥

अर्थ –स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र, ए पाचे इंद्रिय, मनोबल, वचनबल

ायबल ए त्रण, स्वासोस्वास आयुस्थिति, ए दस प्राण आदिनो विनाश थाय, तेने
जगतमां मरणनय कहे छे, पण जीव पदार्थ छे ते ज्ञानरूपी भाव प्राण संयुक्त छे,
तो जीवने ज्ञान प्राण त्रणे काळनेविषे त्रूटे नही, एवो विचार मनमां करवाथी
मरणभय उपजे नही. नय प्रमाण वडे एवुं जिनेश्वरनुं कथन छे, ज्ञानी लोक नि
ंक. पणे पोताना निकलंक स्वरूप ज्ञानरूपने सदा निरंतर निरखत के०
त्यपणे जुए छे ॥ २९ ॥

हवे वेदना भय निवारणरूप मंत्र कहे छेः— अथ वेदना भय निवारण मंत्रः—

छप्पय छंदः— वेदनवारो जीव, जांहि वेदंत सोउ जिय; यह वेदना अभंग,
तो मम अंग नांहि ब्यय; करम वेदना द्विविध, एक सुखमय दुतीय दुख; दोऊ
ोह विकार, पुग्गलाकार बहिरमुख; जब यह विवेक मनमहिं धरत, तब न वेद
ा भय विदित; ज्ञानी निसंक निकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंत नित ॥ ३० ॥

अर्थ— वेदनावारो एटले जाणनारो तेतो जीव छे, अने जेने जाणवुं छे, तेपण
ीवज छे एटले वेदनावंत ते ज्ञानी जीवए ज्ञानरूप वेदन जे अभंग रूप छे तेतो मारुं
अंग छे. अने कर्म वेदना जे छे ते मारी नथी अने ते कर्मरूप वेदना बे प्रकारनी
छे. एक सुखमय वेदना ने बीजी दुःखमय वेदना छे, ए बेउ मोह विकार छे, ए
ी सुख दु खनी वेदना पुग्गलाकार छे, पुग्गलनी छाया बाह्यरूप छे, ज्यारे एवो वि
क विचार मनमां धरे छे, त्यारे वेदनानुं भय वेदी सकतुं नथी. ज्ञानी लोक दो
तेतो वेदना भयथी निसंक रहे अने निकलंक एवुं पोतानुं ज्ञान स्वरूप ते
सदा जोतो रहे ॥ ३० ॥

वे अनरक्षाभय निवारणरूप मंत्र कहे छेः—अथ अनरछा भय निवारण मंत्रः—

छप्पय छंद -- जो स्ववस्तु सत्ता सरूप जगमहि त्रिकाल गत; तास विनास
ोइ. सहज निहचै प्रमाण मत; सो मम आतम दरव, सरवथा नहि सहाय
धर; तिहिं कारन रछक न. होइ भछक न कोइ पर; जब यहि प्रकार निरधार किय,
अनरछा भय नसित. ज्ञानी निसंक निकलंक निज, ज्ञानरूप निरखंत नित. ३१

अर्थ -- स्ववस्तु के० निज आत्मरूप वस्तु, सत्तास्वरूप के० द्रव्यपणे छतु कहेवा
जगतमां त्रणे काळनेविषे पामियें, तेनो क्यारे पण विनाश नथी थतो, एवुं
स्वरूप निश्चयनयना प्रमाणवडे जाणवुं; एज मारुं आत्मद्रव्य जे छे,
बीया प्रकारे कोईनो सहाय धरतु नथी, तेमाटे ए आत्मद्रव्यनो कोई रक्ष
तेमज कोई पर के० बीजो एनो भक्षक पण नथी ज्यारे एवो विचार

हृदयमां नक्की करी राखे त्यारे अनरष्टा नय नाश पामे एवा ज्ञा [illegible]
रह्या नयथी निमर थरा पोताना निरंतर ज्ञानस्वरूपन मग्न निर [illegible]

हवे चारनय निवारण रूप मंत्र कहे छे अथ चारनय निवार [illegible]

छप्पय छंद — परम रूप परगट नाम [illegible] निज महित पर [illegible]
हि माहि महि अगम अगरहित सो मम रूप अनूप अलख अना [illegible]
धन, ताहि चोर फिर [illegible] नहि न आग तन [illegible]
तब अगुन नय उपसमित ज्ञानी निराकार निरंजन निज ज्ञानरूप नि [illegible]

अर्थ — जे परम स्वरूप कहवाय छे अने मान सन्मानादि प्रत्यक्ष [illegible]
मित के० चिन्मय एवुं जेनु लक्षण छे अने तेना स्वरूपनविषे परवस्तु [illegible]
श नथी, माहिमही के० पृथ्वीना रचमा अगम्य छे अने अगरहित छे, [illegible]
अनूपम मारुं रूप छे ते कोईनुं कीधुं नथी। अनमित के० प्रमाणविना एवु [illegible]
ट धन छे, ते धनने चोर कम हरी शके। अने आग के० वीनो कोई नाश [illegible]
गो पामी शके नही त्यारे ध्यान धरीने एवुं चिंतवन करे त्यारे अगुन नय के [illegible]
घाडा रनुं जे नय ते उपशमी जाय अने एवा ज्ञानी जीव ते अगुन नयथी [illegible]
शक थका पोताना निष्कलंक ज्ञान स्वरूपने विषे निरंजना रहे ॥ ३२ ॥

हवे अकस्मातनय निवारण रूप मंत्र कहे छे — अथ अकस्मातनय निवारण [illegible]

छप्पय छंद — शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध सहज सुसमृद्ध सिद्ध सम अलख [illegible]
दि अनंत अतुल अविचल स्वरूप मम चिद विलास परगास [illegible]
थानक जहां कछु नहि कोउ कोउ तहां [illegible] अचानक [illegible]
उपजत तब अकस्मात नय नहि उदित ज्ञानी निराकार निरंजन निज [illegible]
रूप निरंजन निज ॥ ३३ ॥

अर्थ -- जे वस्तु शुद्ध छे [illegible] पोताना स्वरूपने [illegible]
य अविरोधी छे, सिद्धसमान रहित छे अलक्ष छे [illegible]
रहित छे जेनी तुलना कोईथी न थाय माटे अतुल छे [illegible]
चिदविलास के० ज्ञानविलासना जेने प्रकाश छे [illegible]
रहित छे अने समाधि सुखनुं थानक छे त्यां कांई विनाश [illegible]
अणचिंतव्या अचानक नय शके कोई उपजे नही। [illegible]
मां ज्यारे उपजे छे त्यारे अकस्मात नय जे छे ते [illegible]

छे ते अकस्मात नयथी निशंक थको पोताना निष्कलंक ज्ञान स्वरूपने सदा
तो रहेछे. ॥ ३३ ॥

हवे निर्जराना करनार ज्ञानीनी व्यवस्था कहेछेः—अथ ज्ञानी व्यवस्था कथनः—
छप्पय छंदः— जो परगुन त्यागंत, शुद्ध निजगुन गहंत ध्रुव; विमल ज्ञान अं
र, जासु घट महि प्रकास हुव; जो पूरव कृतकर्म, निर्जरा धार वहावत; जो न
बंध निरोध, मोष मारग मुख धावत; निःसंकतादि जस अष्ट गुन, अष्ट कर्म
रि संहरत; सो पुरुष विचछन तासु पद, बनारसी वंदन करत. ॥ ३४ ॥

अर्थः— जे कोई पुद्गलादि गुणनो त्याग करे, अने ध्रुव के० निश्चयरूप एवा शुद्ध
ताना गुणनुं ग्रहण करे; निर्मल ज्ञाननो अंकुर के० उदय जेना घटमां प्रका
त थयो, अने जे पूर्वकृत कर्मने निर्जरानी धर के० श्रेणिविषे वहावि दिये वली
नवा बंधनो निरोध करीने एटले निराश्रव थईने मोक्षमार्गने सन्मुख दोडेछे;
ण श्रेणिमां दोडेछे, निशंकित प्रमुख जेना आठ गुण छे, ते आठे कर्मरूप
त्रुनो संहार करे, तेज विचक्षण पुरुष केहेवाय, अने तेना चरनकमलने वणारसी
स वंदन करेछे ॥ ३४ ॥

हवे आठ अंगनां नाम कहेछेः—अथ अष्टांगके नाम कथनः—

सोरठाः— प्रथम निसंसैजानि, द्वतिय अवंछित परिनमन; तृतिय अंग अ
गलान, निर्मल दृष्टि चतुर्थ गुन ॥ ३५ ॥ पंच अकथ परदोष, थिरी करन छठम
हज; सत्तम वछल पोष, अष्टम अंग प्रभावन ॥ ३६ ॥

अर्थः— पेलुं निसंशय के० निःशंकित, बीजुं समकितनो गुण जे अवांछक प
णारूप मननो परिणाम, त्रीजुं अंग अग्लान, चोथुं गुण निर्मल दृष्टि एटले मूढ दृ
ष्टि नही ते, ॥ ३५ ॥ पांचमुं परदोष अकथन, छठुं अंग समकित स्थिर करवाना
भावरूप, सातमुं सर्व साथे वाछलपणुं अध्यात्मक पोषक, अने आठमुं अंग
प्रभावना गुणरूप ॥ ३६ ॥

हवे अंगना लक्षण कहे छेः— अथ अंग लक्षणः—

सवैया इकतीसाः— धर्ममें न संसै शुभकर्म फलकी न इछा, अशुभकों देखि न
गिलानि आनै चित्तमें; साचि दृष्टि राखै काहू प्रानीको न दोष भाखै, चंचलता भा
नि थिति ठानै बोध चित्तमें; प्यारे निजरूपसों उछाहके तरंग उठे, एइ आठो अंग
जब जागे समकितमें; तांहि समकितकों धरे सो समकितवंत, वहे मोषपावे उ
न आवै फिर इतमें ॥ ३७ ॥

अर्थ — धर्मनेविषे संदेह न होय ते निःशंकित गुण, धुन कर्मना फळनी इच्छा न होय ते निस्पृही गुण, अनिष्ट वस्तुने जोइने चित्तमा ग्लानी न लाववी ते अग्लान गुण, कोईना भगाव्या भगवु नही ने साचनेविषे दृष्टि राखवी ते दृष्टिगुण, कोई प्राणीनो दोष केहेवो नही ते दोषाच्छादन गुण, चंचलता ज्ञानरूप चित्तनेविषे स्थिरता राखवी ते थिरीकरण गुण, आत्म स्वरूपमा प्रेम राखवो ते वत्सल गुण, अने आत्मस्वरूप साधननेविषे उत्साह लहरी केम उठावाणु लीगो रहे ते प्रभावना गुण, एम एक समकेतना आठे अंग जाणे, अने ते आठ गुणे सहित सम्यकत्व धारण करे, ते समकितवंत कहेवाय ने तेवाज समकिती मोक्ष पामे, ने फरीथी आ संसारमा आवे नही ॥ ३३ ॥

हवे निर्जराधारी चैतन्यनुं नाटक कहे छे — अथ चैतन्य नाटक कथन —

सवैया इकतीसा — पूर्व बंध नासे सोतो संगित कला प्रकाशे, नव बंध रोधन तोरन उछरिके, निसंकित आदि अष्ट अंग संग सखा जारी, समता अलाप चारी करे सुख भरिके, निरजरा नाद गाजे ध्यान मिरदंग बाजे, छक्यो महानंदमें समाधि रीझि करिके, सत्तारंग भूमिमें मुकत भया तिहू काल, नाचे शुद्ध दृष्टि नट ज्ञान स्वांग धरिके ॥ ३८ ॥

अर्थ — जेम पूर्वकाळनेविषे उत्कृष्ट स्थीतिथकी बंध करतो हतो तेथी बंध न करता अनुत्कृष्ट स्थितिथकी करवो एम पूर्व बंध नास तेतो संगित कला आलाप चारी प्रकाशे, अने नवा बंधने रोधवु ते रूपतान उठले छे ताननतारवे निःशंकित प्रमुख जे समकितना आठ अंग कह्या ते सहाय जाडी समता सखीने गा तद्रूप स्वर बांधीने आलाप करे छे, अही कर्मनी निर्जरा हतु छे एटले नाश करवारूप कार्यनु निर्जरा कारण छे, ते ध्याननेविषे एक स्वरूपनाद गाजे छे, ते साह धुनी छे तेरूप मृदंग वाजे छे, अही जे महानंदमय थइन गयो तेना सुखी थयो, ते जाणिये रीझ थई, ने पोतानी आत्मसत्ता तन काई गाढूं छे एटले रंग मंडप थया, तेनेविषे त्रणे काळमा शुद्ध दृष्टीसहित ज्ञानरूप वेश पहेरी धरीने नटरूप चैतन्य मुक्त थईने नाचे छे ॥ ३८ ॥

इतीश्री समयसार नाटकविषे बालबोधरूप निर्जराद्वार सप्तम संपूर्ण

दोहा — कही निर्जराकी कथा, शिवपथ साधनहार, अब कछु बंध प्रबंधको कहु अल्प विस्तार ॥ ३९ ॥

अर्थ.— मोक्ष मार्गनी साधनकार जे निर्जरा तेनी कथा हती ते कही, हवे जे
थ थाय छे तेना अधिकारनो अल्प विचार कहेछे ॥ ३९ ॥

हवे बंध जे छे ते छांडवा योग्य छे. माटे ते बंधनो विदारणहार जे समकित
नमस्कार करेछे:— अथ बंध विदारन सम्यक्त वर्णनं:—

सवैया इकतीसा:— मोह मद पाई जिन संसारी विकल कीने, याहिते अजानु
हु विरद वहतु है; ऐसो बंध वीर विकराल महाजाल सम, ज्ञान मंद करे चंद
हु ज्यों गहतु है; ताको बल भंजिवेकों घटमें प्रगट भयो, उद्धत उदार जाको उ
स महतु है; सो है समकित सूर आनंद अंकूर ताही. निरखी बनारसी नमो
मो कहतु है. ॥ ४० ॥

अर्थ:— जे बंधरूप सुभट छे ते मोहरूप मदिरा पाईने सर्व संसारी जीवने विक
करेछे, एथी ए बंधरूप वीर छे ते आजानुबाहुनुं बीरुद वहावेछे के० सार्व
ाम थई रहेला छे, एवो विकराल ए बंधरूप वीर शुभट छे, वली ए महाजाल स
ान छे. अने एज ज्ञान प्रकाशने मंद करेछे, कोनी परे जेम राहु चंद्रने मंद करेछे.
नी परे जाणी लेवुं; हवे एवा बंधरूप वीरनो प्रतिपक्षी जे छे, ते एनुं बल तोड
ाने घटनेविषेज प्रगट थयो छे, जेनो उद्यम उद्धत छे, एटले कोईथी रोक्यो रेहे
वो नथी, अने उदार छे के० श्रेष्ट छे. तथा महत के० मोटो छे, तेतो समकितरूप
ूरवीर जाणवो, ते आनंद अंकूर लईने उदय थयो छे, ते सम्यक्त शूरवीरने जो
पोताना अंग उल्लसित थको बनारसीदास नमो नमो कहेछे. ॥ ४० ॥

हवे चेतनाविना कर्म बंध नथी थतां, माटे ज्ञानचेतना तथा कर्म चेतना ए
ानी समज पाडेछे:— अथ कर्मचेतना ज्ञानचेतना वर्णनं:—

सवैया इकतीसा:— जहां परमातम कलाको परगास तहां, धरम धरामें सत्य सू
जको धूप है; जहां शुभ अशुभ करमको गढास तहां; मोहके विलासमें महा
अंधेर कूप है; फेली फिरै छटासी घटासी घट घन बीच, चेतनकी चेतना दुहांधा
छपचूप है; बुद्धिसों न गही जाय वेनसों न कही जाय, पानीकी तरंग जैसे पा
ीमें गुडुप है. ॥ ४१ ॥

अर्थ:— जे चेतनामां परमात्मानी कलानो प्रकाश थाय छे, ते धर्म धरती छे;
धरतीमां सत्यरूप सूर्यनो तडको छे, एटले उजली जगा छे. वली जे चेतना
ेविषे शुभ अशुभ कर्मना रसनी गढास छे, एटले शुभाशुभ कर्मना रस वडे जे चे
ना घोळाइ रही छे, त्यां मोहराजा विलास करे छे, तेतो घोर अंधकार छे,

ए रीते चेतन पुरुषनी जे चेतना के० संज्ञा छे, तेतो घटाघनवीचके० घवचे छटानी माफक फेली रही छे, अने घटानी माफक फेलीयकी ... ए चेतना ते परमात्मानी कलाना प्रकाशमा तथा मोहविनाशमा ए वेउ गुपचुप छे, एटले चुप थई रही छे, एवी ए चेतना वे तरफ प्रवेश करे छे, बुद्धीथी ग्रहण थाय छे, पण वचनथी कही जाय एवी नथी, जेम पाणीमा गुरुप्प छे तेम चेतना वेउ तरफ गुरुप्प छे ॥ ४१ ॥

हवे बंध द्वारनेविषे बंधनो हेतु कहे छे – अथ बंधनिदान कथन –

सवैया इकतीसा – कर्मजाल वर्गनासो जगमें न बंधे जीव, बंधे न मन वच काय जोगसों, चेतन अचेतनकी हिंसासों न बंधे जीव, बंधे न पचविषे विखरोगसो, कर्मसों अबंध सिद्ध जोगसौ अबंध जिन ... साधु ज्ञाता विषै जोगसों, इत्यादिक वस्तुके मिलापसों न बंधे जीव, रागादि अशुद्ध उपजोगसों ॥ ४२ ॥

अर्थ – कोई कहे छे के कर्मजाल वर्गणा थकी जगतमा जीव बं... वात खोटी एटले कर्म वर्गना जीवना बंधनो हेतु नथी, एवी रीतें कहां, ... चन कायाना योगथी पण जीव बंधातो नथी, चेतन तथा अचेतननी ... की पण जीवने बंध थतो नथी अलक्ष पती छे, तथा अलखरूपी छे, ते इंद्रियना विषयरूप विषरोग वडे पण बंधातो नथी कर्म वर्गनाथी ... बंधाता नथी, वली जिनेश्वर देव छे तेतो त्रणे योगमा छे तोपण अबंध छे, ... छे, ते अनाजोग पणे हिंसा करे छे, तोपण अबंध छे, ज्ञाता विषय जाणे छे पण ते अबंध छे, एरीते कर्म वर्गना प्रमुख वस्तुना मिलापथी जीव ... धातो नथी पण मात्र एक राग द्वेषने मोह अने जीव बंधरूप अशुद्ध ... योज जीव बंधाय छे ॥ ४२ ॥

हवे राग द्वेष अने मोहनेज दृढपणे बंधना हेतु ठरावे छे –

अथ बंधनिदानदृष्टी करन व्यवस्था –

सवैया इकतीसा – कर्मजाल वर्गनाको वास लोकाकाश माहिं, मन याको निवास गति आउमें, चेतन अचेतनकी हिंसा वसे पुग्गलमें, विषे उदेके उरजाउमें, रागादिक शुद्धता अशुद्धता है अलखकी यहे ... बंधके बढाउमें, याहिते विचछन अबंध कह्यो तिहू काल, राग दोष सम्यक् सुनाउमें, ॥ ४३ ॥

अर्थः—कर्म जाल वर्गणानो वास तो लोकाकाशमांज छे, केवल कर्म वर्गणा कारण
कीज जो अमूर्त्ति चेतनद्रव्य बंधभावने पामे, तो लोकाकाशनो बंध केम नही थाय?
मज मन वचन अने कायाना योगनो वास तो चारे गतिनेविषे छे, अने चारे आ
मामां छे. त्यारे योग ते आत्माना बंधना हेतु केम थाय? चेतननां प्राण हर्णथी
हिंसा थाय छे; ते पुद्गल बंधरूप प्राणमांज हिंसा थाय छे, एमज अचेतननी हिंसा
ण पुद्गलमां छे, ते आत्मासाथे स्पर्शती नथी, तो बंध केम थाय? अने विषय भोग
वरते छे, तेतो कर्मना उदयमां छे, अरुजी रह्या छे, अने आत्मा तो तेथी निरालो
. ते बंधाय केम? माटे राग द्वेषने मोहथकी जे अशुद्धता के० मुग्धता थाय ने
रवस्तुने पोतानी करी मानवी ते अलख पुरुषनी अशुद्धता छे. अने एज अशुद्ध
ता बंधने वधारे छे, ए माटे विचक्षण पुरुषने त्रण कालविषे अबंध कह्यो; केमके,
ने सम्यक् स्वभावमां राग द्वेष अने मोह नथी ॥ ४३ ॥

हवे ज्ञाताने अबंध कह्यो तोपण उद्यमी थईने क्रिया करवी ते समजावेछेः—

अथ उद्यम प्रशंसाः—

सवैया इकतीसाः-- कर्मजाल जोग हिंसा भोगसों न बंधे पै तथापि ज्ञाता उ
मी वखान्यो जिन वैनमें; ज्ञानदृष्टि देतु विषै भोगनिसों हेतु दोउ, क्रिया एक
त यों तो बनै नांहि जैनमें; उदै बल उद्यम गहै पै फलकौ न चहै निरदै दसा
होइ हिरदेके नैनमे; आलस निरुद्यमकी भूमिका मिथ्यात मांहि, जहां न संभ
जीव मोहनींद रैनमें ॥ ४४ ॥

अर्थः— जीव छे ते कदापी कर्मजालथी बंधाय नही, अने जोगथकी पण बं
ाय नही, अने हिंसाथकी पण न बंधाय, भोगवडे न बंधाय, तोपण जिनेश्वरना
चनथकी ज्ञाता जीवने उद्यमीज वखाण्युं छे. ज्ञाननेविषे दृष्टि पण आपेछे, अने
वषयभोगमां प्यार पण राखेछे, एवी बे क्रिया एक खेत के० एक आत्माविषे एक
थानकविषे करेछे, एवुं तो जैनवासीमां बने नही; अने जे ज्ञानी होय ते एटलुं
ो करेके जे संहनन के० संघयण प्रमुख कर्मनो उदय बल छे, तेथी यथायोग्य ते
क्रयाविषे उद्यमवंत थाय, अने तेना फलने इच्छे नही, ने हृदयरूप नेत्रनेविषे
नर्दय दशावंत न थाय, अने आलस निरुद्यम तो मिथ्यात्वमांज पामियें, एथी
आलस ने निरुद्यमनी मिथ्यात्व भूमिका छे, जे भूमिकानेविषे जीव मोहनिद्रा लेतो
थको सयनदिशामां रहेछे, अने पोताना स्वरूपने संभारतो नथी. ॥ ४४ ॥

ती केहेवाय, अने जे विषय जोगथी उदासी रहे ते तो अजग समेतीने ... एीने अहो जव्यलोको जोगथी उदास थई, ने मुक्तिने सारो ते ... कहे छे के, 'जेनुं मन चयुने तेने कथरोटमांज गगा छे, मतलब के ... नाता थका गगा स्नाननुं फल पामेछे ॥ ५० ॥

हवे मोक्षना अधिकारनेविषे चार पदार्थनुं सरूप कहे छे —

अथ पदार्थ चतुष्क कथन —

दोहा — धरम अरथ अरु काम सिव, पुरुषारथ चतुरग, कुधी कलप रहे, सुधी गहे सरवग ॥ ५१ ॥

अर्थ — धर्म, अर्थ, काम, ने मोक्ष, पुरुषार्थना ए चार अग छे, ए ... तिषे कुधी के० कुमतिवाळो पोतानी मति कल्पनाने झालीने बेसे छे, पण ... के० पंडित पुरुष छे ते सर्वांगनुं ग्रहण करे छे ॥ ५१ ॥

हवे चारे पदार्थनी न्यारी न्यारी व्यवस्था सुमति अनेकुमतिना मन ... छे छे — अथ पदार्थ व्यवस्था कथन—

सवैया इकतीसा — कुलको आचार ताहि मूरख धरम कहे, पंडित धरम कहे वस्तुके सुभावकों, खेहको खजानो ताहि अज्ञानी अरथ कहे, ज्ञानी कहे ... दरब दरसावको, दपतिको जोग ताहि दुरबुद्धि काम कहे, सुधी काम ... अभिलाष चित्त चावको, इद्रलोक थानको अजान लोक कहे मोक्ष, मतिमान ... बधके अभावको ॥ ५२ ॥

अर्थ — जे मूर्ख जन होय ते पोताना कुळना आचारने धर्म कहे छे ... पंडितजन ता वस्तुना स्वभावने धर्म कहे छे अज्ञानी जन होय ते गहना ... जे सोनुं रूपुं जवाहिर वगेरे छे तेने अर्थ के० द्रव्य कहि जनार छे ... जन होय ते द्रव्यना दरसावने अर्थ कहे छे एटले षट्द्रव्यने अर्थ कहे ... हि जन स्त्री भरतारना जोग संयोगने काम कहे छे, पण सुधी के० पंडित ... चित्तनी इच्छा अभिलाषने काम कहे छे, अने जे इन्द्रना स्थानक छे ... तेने मोक्ष कहे छे, अने जे मतिमान एटले पंडित नर छे तेनार ... अभाव थाय छे, एटले बंधना नाशने मोक्ष कहे छे ॥ ५२ ॥

हवे चार पुरुषार्थने अध्यात्मरूप कहे छे — अथ पुरुषार्थ चतुष्क अध्यात्मद्वार ...

सवैया इकतीसा — धरमको साधन जु वस्तुको सभाव साधि, ... चित्तमे रमे रमन, यहे काम भावना जु सगरे निराम पद सहज ...

ता प्रगटमें; अंतर सुदृष्टिसों निरंतर विलोकै बुध, धरम अरथ काम मोख निज घटमें; साधन आराधनकी सोंज रहै जाके संग, भूलो फिरै मूरख मिथ्यातकी अलटमें॥ ५३॥

अर्थः—धर्मनुं साधन तो तेने कहीये के जे वस्तुना स्वभावने साधवो एटले वस्तुना स्वभावने यथार्थ जाणवो, अर्थनुं साधन तेने कहीये के जे षट् द्रव्यने विलक्षण के० जुदां जुदां जाणवां; काम साधन तेनुं नाम छे के, जे निरास पदनो ग्रह करवो, एटले निस्पृह दशामां रेहेवुं; मोक्षनुं साधन ते छे, के जेवडे पोताना सहज स्वरूप शुद्धता प्रगट भावमां करवी, ए रीते अंतरदृष्टि वडे एटले ज्ञानदृष्टि थकी बुद्धिमान पुरुष धर्म अर्थ काम ने मोक्ष ए चारपुरुषार्थने निरंतर पोताना घटमां देखे; एम चारे पुरुषार्थ साधवानी जेना संघाते सोंज के० सामग्री रहे छे, तोपण मूर्ख जे छे ते मिथ्यातनी अटलमां भूल्या फिरे छे ॥५३॥

हवे शुद्ध व्यवहार नये करी वस्तुनुं सत्य स्वरूप कहेछेः -

अथ शुद्ध नय वस्तु स्वरूप कथनंः—

सवैया इकतीसाः— तिहूं लोकमांहि तिहूं काल सब जीवनिकों, पूरव करम उदै आइ रस देतु है; कोउ दीरघाउ धरै कोउ अलपाउ मरै, कोउ दुखी कोउ सुखी कोउ समचेतु है; याहीमें जीवायो याही माखो याहि सुखी कखो दुखी कखो ऐसी मूढ आपु मानी लेतु है; याही अहं बुद्धिसों न विनसै भरम भूल यहै मिथ्या धरम करम बंध हेतु है. ॥ ५४ ॥

अर्थः— त्रणे लोक तथा त्रणे काल तेनेविषे जगतवासी सर्व जीवने पूर्व संचित कर्म उदय आवेछे, ने ते पोतानो कडवो तथा मीठो रस आपेछे, तेणे करीने कोई दीर्घ आयुष्य भोगवी मरेछे, ने कोई अल्प आयुष्यमांज मरेछे, कोई दुःखी छे, अने कोई सुखी होयछे, कोई समचित के० सम भावमां रहेछे, एम पोत पोतानी कमाईथी सर्व जीव सुखी अथवा दुःखी छे. तेने मूढ प्राणी जे छे ते पोताना साधन मानेछे के, जो में फलाणाने जीवाड्यो, फलाणाने मारी नाख्यो, फलाणाने दुखी कीधो, ने फलाणाने सुख आप्युं. एवो मूढ अहं बुधीथी भर्ममां भुल्यो फरेछे, अने ए भूल एनी मटती नथी, एज मिथ्या धर्म मूढने कर्मबंधनो हेतु थायछे॥५४॥

हवे फरी मूढनीज व्यवस्था कहेछेः— अथ मूढता कथनंः—

सवैया इकतीसाः— जहांलों जगतके निवासी जीव जगतमें, सबै असहाय कोऊ काहुको न धनी है; जैसी जैसी पूरव करम सत्ता बांधि जिन, तैसी तैसी उदैमें अवस्था आइ बनी है; एते परि जो कोउ कहै कि में जीवावों मारों इत्यादि अने

क विकलप वात घनी है सा तो अह वुद्धिमा [illegible] नया निह [illegible]
ज आतम सकति तिन्ह हनी है ॥ ५ ॥

अर्थ – जांहासुधी जीव जगतमा निवास करे छे त्यांसुधी एक जीवा[illegible]
पणे रहेने कोई कोईना सहायकारी नथी. [illegible] कोई कोईना [illegible]
वी जेवी पूर्व कालनविषे कमनना [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
वनी अवस्था बने छे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
यां, इत्यादि अनेक सनना विकल्पनी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
छे अने ते जीव घणो कालन विषे अहंकार बुद्धिमा [illegible] [illegible] मरवानी अहबुद्धि
ने हणी छे, अने ते जीवनो [illegible] [illegible] अवस्था [illegible] [illegible] [illegible] शुद्ध [illegible]
हवे चार प्रकारे करीने जीवनी अवस्था [illegible] [illegible] [illegible] ॥ ५ ॥

अथ चार प्रकार जीव अवस्था [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] –

सवैया इकतीसा – उत्तम पुरुषकी दशा ज्यों [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
विरागी मृदु अंग है, मध्यम पुरुष नारीयर कैसी भांति [illegible] [illegible] [illegible]
य कामन [illegible] है अधम पुरुष बदरीफल समान [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] संग है, अधमसा अधम पुरुष पुंगीफल सम [illegible] [illegible] [illegible]

अर्थ – उत्तम पुरुषनी दशा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] ने अंदरथी कामन छे तमज उत्तम पुरुष बाह्य व्यवहार [illegible]
व्यवहारमा पण मृदु अंग क० कामन छे मध्यम पुरुष [illegible] [illegible]
नारीयल बाह्य व्यवहारमा कठोर अने अभ्यंतर कामन छे [illegible] [illegible] [illegible]
वाहारथी कठण अने हृदयमा कामन होय छे अधम [illegible] [illegible] [illegible]
म बाह्य व्यवहारनविषे [illegible] [illegible] ने माहथी कठोर छे [illegible]
व बाहार [illegible] [illegible] पण अंतरमा [illegible] क० [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
अधमाधम पुरुष पुंगीफल क० सोपारी जेवा छे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] कठोर छे तेम अधमाधम पुरुष माहे अने बाहार [illegible] [illegible] [illegible]

हवे उत्तम पुरुषनी दशा कहा बतावे छे – अथ उत्तम पुरुष [illegible]
सवैया इकतीसा – कीचमा कनक जाके नीचमा नरमदपर [illegible] [illegible]
[illegible] जाके गारमा [illegible] जाके चारु जानि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] जाके जग [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

लोक लाज लारसी; सीठसो सुजस जानै वीठसो वखत मानै, ऐसी जाकी रीत ताही वंदत बनारसी. ॥ ५७ ॥

अर्थः— जे पोताना हैयानेविषे सुवर्णने कादव सरखुं जाणे, अने नरेश पद राज्य गादीने नीच सरखी जाणे, मित्राईने मीचसी के० मरण जेवी जाणे, ने वडाई के० वडाई ते लीपवानी गार जेवी जाणे, रसायन प्रमुख इव्यजोगनी जा ते फेर सरिखी जाणे, मंत्र शक्तीवडे जे करामत थाय तेने कहर सरखी जाणे, पोतानेविषे हहर के० अनर्थ ते सरखी होसछे, अने पुदगलनी छबी राख समान जाणे, माया रूप जाल तथा जगतनो विलास तेने जाल जेवो जा भुवनवास के० घरवास ने तीरना भाल समान जाणे, कुटुंब कार्यने का समान करी जाणेछे, लोकलाज राखवी ते मोहडानी लाल जेवी जाणेछे, सु ने सीठ के० नाकना मेल समान जाणे, भाग्योदयने विष्टासमान जाणे, एवी रीत होय तेने बनारसीदास वंदना करेछे ॥ ५७ ॥

हवे मध्यम पुरुषनी दशा बतावे छेः— अथ मध्यम पुरुष यथाः—

सवैया इकतीसाः— जैसे कोउ सुभट सुभाय ठग मूरखाय, चेरा भयो ठगनीके घेरमें रहतु है; ठगोरी उतरि गई तब तांहि सुधि भई, पर्यो परवस नाना संकट सहतु है तैसेही अनादिको मिथ्याति जीव जगतमें, डोलै आठों जाम विसराम न गहतु है; ज्ञान कला भासी भयो अंतर उदासी पें तथापी उदे व्याधिसों समाधि न सहतु है ॥ ५८ ॥

अर्थ— जेम कोई स्वभावे सुभट होय ने तेने कोई ठग मळे ने ते सुभटने को जडी मूली खवरावे, तेथी ते सुभट ठगनो चेलो थई जाय, अने ठगना घेरामां पड्यो रहे, पछी ते सुभटे जे मूळी खाधेली तेनो असर नीकळी जाय ने पाछो पोतानी शुद्धिमां आवे, तेवारे ते ठगने दुर्जन करी जाणे, पण पोते परवश पड्यो ते नाना प्रकारना संकट सहन कर्या करे छे, तेम अनादि काळनो मिथ्यात्वी जीव परवस पडेलो नाना प्रकारना संकट सहन करेछे, ने आठ प्रहर संसारमां विकल थई ने डोले, पण विश्राम लिये नही, एटलामां ज्ञान कळानो भास थयो, त्यारें अंतरमां उदासी थयो तो पण कर्मना उदयरूप व्याधी वडे समाधि न हेतो थी, आश्रवमांज रहेछे ॥ ५८ ॥

हवे अधम पुरुषनी दशा दृष्टांत दईने देखावे छेः—अथ अधम पुरुष यथाः—

सवैया इकतीसाः— जैसें रांक पुरुषके भाये कानी कोडी धन, उलूवाके भाय

जैसे सजाई विहान है, कूकरके नाये ज्यों पिमोर जिरवानी मग, सूहाके ज्यों पुरीव पकवान है, वायसके नाये जैसे नीबकी निवोरी दाख, बालकं दंत कथा ज्यों पुरान है, हिंसकके नाये जैसे हिंसामें धरम तैसें, मूरखं सुन बंध निरवान है ॥ ५९ ॥

अर्थ — जेम शक पुरुषने काणी काडी ते तेहीज धन मनाय छे, अने वडने सन्याकाल प्रभात मनाय छे, अने कुकडाने पिमोर जीरवानी के० सतुं पाणी ते दहीनो थडो मनाय छे, अने सूकर के० सूअरने पुरीष के० तेज पकवान मनायछे, अने कागडाने लींबोमी तेज द्राक्ष जेवी मनाये बालकने दंत कथा के० लोकनी कथा ते तेज पुराण मनाय छे, ने हिंसकने माज धरम मनाय छे तेमज मूर्खने पुन्यबंध ते निरवाण के० मोक्षरूप छे, ए अधम पुरुषनी दशा जाणवी ॥ ५९ ॥

हवे अधमाधम पुरुषनी दशा दृष्टांतेकरी दृढावेछे —अथ अधमाधम पुरुष

सवैया इकतीसा — कुंजरकों देखि जैसे रोष करी भुंसे स्वान, रोष करै विलोकि धनवंतको, रैनके जगैयाकों विलोकि चोर रोष करै मिथ्यमति सुनत सिद्धतको, हंसकों विलोकी जैसे काग मनि रोष करे अभिमानी देखत महंतकों, सुकविकों देखि ज्यों कुकवि मन रोष करै त्योंही दुर्जन करै देखि संतको ॥ ६० ॥

अर्थ — जेम हाथी जोईने कुतरा रीशे भराईने भुंकेछे जेम निर्धन पुरुष धनने जोईने रीशे भराय छे, जेम राते जागनार पुरुषने जोईने चोर रीशे भराय छे जेम मिथ्याती सिद्धांतने शाभली रीशे भराय छे जेम हंसने जोईने काग रीशे भराय छे, जेम महंतने जोईने अभिमानी रीश करे छे जेम सुकवि के० कविने जोईने कुकवि के० नगरो कवि रीशे बले छे तेम अधमाधम पुरुष साधुने जोईने दुष्ट मन वडे रीशे भराय छे ॥ ६० ॥

हवे वली अधमाधम पुरुषनी चाल कहेछे —अथ पुन अधमाधम पुरुष

सवैया इकतीसा —सरलको सठ कहै वकताकों धीठ कहै विना करै ताकों कहै धनको अधीन है, क्षमीको निबल कहै दमीको अदत्ती कहै मधुर वचन बोलै तासों कहै दीन है, धरमीकों दंभी निसप्रहीकों गुमानी कहे तिसना घटाव तासों कहे भागहीन है, जहां साधु गुण देखे तिन्हकों लगावे दोष ऐसो कछु दुर्जनको हृदा मलीन है ॥ ६१ ॥

अर्थः— सरल चित्तवालाने शठ के० मूर्ख कहे, वक्ता के० कथा कीर्तन वांच रने धीठ कहे, विनय करनारने कहेके एतो धननी आधीनताथी करेछे, क्षमावं ने निरवल कहे, इंद्रिय दमन करनारने अदाता कहे, अने मधुर भाषण करना कहे एतो गरीब बीहामणो छे, धरमीने दंभी कहे, अने निस्प्रहीने अहंकारी हे वे, तृष्ना छोडनारने भाग्यहीन कहे. ज्यां एवां सरलतादिक गुण देखे त्यां षण लगाडे, एवुं दुर्जननुं हृदयुं मलीन के०मेलुं होय छे. अने एवा दुर्जननेज धमाधम पुरुषनी प्रकृति जाणवी ॥ ६१ ॥

हवे मिथ्यादृष्टीनी अहंबुद्धिनुं वर्णन करे छेः— अथ मिथ्यादृष्टी वर्णनंः—

चौपाई— में करता में कीन्ही कैसी; अब यों करों कहौ जो ऐसी; ए विपरीत भाव है जामें; सो वरते मिथ्यात दसामें. ॥ ६२ ॥ दोहराः— अहं बुद्धि मिथ्या दसा, धरै सु मिथ्यावत; विकल भयो संसारमें, करै विलाप अनंत. ॥ ६३ ॥

अर्थ.— हुं कर्त्ता छुं, आ वर्त्तमान कालमां केवी वात करुंछुं, भविष्य कालमां वी कहीस तेवी करीश, एवी अहं बुधी ए विपरीत भाव छे, अने ए भाव मिथ्या दशाना छे ॥६२॥ जे एवी अहंबुद्धि छे तेज मिथ्यात दशा छे, अने ए मिथ्यातद ाने धारण करे, तेज मिथ्यावंत केहेवाय छे, अने एवा पुरुषोज संसारनेविषे वि कल थका संसारमां भटकता दुःख सहता अनंत विलाप करेछे. ॥ ६३ ॥

हवे मूढ प्राणीनी व्यवस्था कही देखाडे छेः— अथ मूढ व्यवस्था कथनंः—

सवैया इकतीसाः—रविके उदोत अस्तहोत दिनदिन प्रति, अंजुलीके जीवन ज्यों जीवन घटतु है; कालके ग्रसत छिनछिन होत छीन तन, आरके चलत मानो काठसो कटतु है. एते परि मूरख न खोजे परमारथकों, स्वारथके हेतु भ्रम भारथ ठटतु है; लग्यो फिरै लोगनिसों पग्यो परजोगनिसों, विषे रस भोगनिसों नेकु न हटतु है. ६४

जैसे मृग मत्त वृषादित्यकी तपतिमांहि तृषावंत मृषा जल कारण अटतु है; तैसे भववासी मायाहीसों हित मानिमानि ठानिठानि भ्रमभूमि नाटक नटतु है; आगे को ढुकत धाय पाछे वछरा चराय, जैसे दृग हीन नर जेवरी वटतु है; तैसे मूढ चेतन सुकृत करतूति करै, रोवत हसत फल खोवत खटतु है. ॥ ६५ ॥

अर्थ.— सूर्यना उदयथी ते अस्तसुधीमा अंजुलीना पाणीनी परें आयुष्य घटतु जायछे, अने क्षण क्षणविषे काल जे छे ते शरीरने ग्रासेछे, तेथी शरीर क्षीण थायछे, ए रीते तन आर के०शरीर तरफ काल ग्रसी रह्योछे, एटले जेम शस्त्र कोई वस्तुने कापे छे तेम कालरूपी शस्त्र शरीरने कापेछे. एवुं कार्य थई रह्युछे तोपण मूर्खजन जे छे

ते परमार्थने खोजतो नथी, पण पोताना स्वार्थने माटेज भ्रमना छे, लोग के० परवस्तु जे काम क्रोधादिक ते साथे लागो फिरेछे, अने तेथी पग्यो के० हलि मली रहेछे, तेथी विषयरसने भोगवता जरा पण ६

अर्थ —वली जेम कोई जबरो मृग होयछे ते वृषादित्य के० वृषसंक्रांतनो मास तेना तापनेविषे अती तृषावत थयो थको मृषा के० जूठी इच्छा धरी अटतु हे के० भटकेछे, तेवी रीते संसारी जीव परस्वरूप मायाजालनेविषे एटले तेने हितकारी मानीने भ्रमरूपी भूमीनेविषे ठराव करी नटनी ते केहेलो छे तो जेवो कोई दृगहीन के० आखविनानो पुरुष होय ने वाटतो होय त्यां पासे वाछडुं होय ते दोरीने चावी नाखतो होय तेने ते शकतो नथी तेथी तेनी मेहनत व्यर्थ जायछे तेम मूढ प्राणी जे छे ते क्रिया करेछे त्यारे रोवत हसत के० अरति अने रतिये करी क्रिप करेली क्रियाना परम फलने खोई देयछे ॥ ६५ ॥

हवे फरी बधना करनार मूढ विषयिनी अवस्था कहेछे —अथ मूढ विषयी

सवैया इकतीसा -- जिये डिढ पेच फिरे लोटन कबूतरसो, उनटो न फरो धुनटतु है, जाको फल दुख ताही सातासो कहत सुख, सहित अगी धारासी घटतु है, ऐसे मूढ जन निज सपती न लखे क्योंही, मेरी निशिवासर रटतु है, याही ममतासों परमारथ विनसी जाइ, कांजीके रस पाई दूध ज्यों फटतु है ॥ ६६ ॥

अर्थ — जेम लोटण खबुतर होय ते जो पाख बंध करीने पेच पाट पाट फरेछे, तेम मूढ प्राणी अनादि कालना कर्मबंध पेचमां पडीने अवलो मार्ग धरेछे, पण कोई रीते सवलो मार्ग धरतो नथी अने जेनु फल छे एवा विषय भोगवछे जे कईक साता उपजे, तेने सुख मानेछे, जेम कोई पेटो तरवारनी धारने चाटे, जेमां मधनी मीठास थोडी होय न तरवारनी मीठास आवता जतां जीभने छेदी नाखे तेनु दुख बहु थाय, तेम मूढ पोतानी ज्ञानादिक संपतीने कदी ओलखता नथी, पण परवस्तुने रात मारी मारी मानी रह्योछे, एज एवी ममतावडे परमार्थ जाणपणु विनसी जायछे, जेम कांजीना पाणीना स्पर्शथी दूध फाटी जायछे, तेम ममतावडे रस सगली जायछे ॥ ६६ ॥

हवे मूढनी मूढबुद्धिनी अवस्था कही बतावेछे — अथ पुन मूढ अवस्था

सवैया इकतीसाः—रूपकी न झांक हिये करमको झांक पिये, ज्ञान दवि रह्यो मिर
जैसे घनमें; लोचनकी ढांकसों न मानै सदगुरु हांक, मोलै पराधीन मूढ
तिहूं पनमें; टाक इक मांसकी झलीसी तामें तीन फांक, तीनि कोसो
लिखि राख्यो काहु तनमें; तासों कहे नांक ताके राखिवेको करे कांक,
सो खरग वांधि वांक धरै मनमें. ॥ ६७ ॥

अर्थ.—आत्मानुं रूप हृदयामां नथी दीठुं, तेथी कर्मनो झांक पीधो, एटले कर्म
रस व्यापी गयो, तेणे करी आत्मानुं स्वरूप जे शुद्ध ज्ञान ते दवाई रह्युं, कोनी
जेम घन के० मेघरूप वादळानेविषे चंद्र ढंकाई रेहेछे. तेम तथा ज्ञानरूप लोचन
र मिथ्यातनी ढांक पडी तेथी सदगुरुनी हांक के० आज्ञा तेने मानतो नथी,
ने मूर्ख पराधिन थको रांक वचन बोलेछे, अने त्रणे काळनेविषे निशंक रहेछे.
मूढता प्रगट करी बतावेछे जे नाकछे ते टांक के० एक मांसनी सीम्हरी छे ते
षे त्रण फांक छे ते प्रत्यक्ष प्रमाणे देखियें छैये, ते त्रण फांक केवा देखायछे
कहेछे, ते जाणे त्रणनो आंक त्रण फांकवाळो कोइए शरीरमांज लखी राख्योछे,
औदारिक अवयवने नाक कहेछे, अने ते नाकने राखवाने कांक के० लडाई
ने विचारे जे मरीजईश तो पण नाक तो रहेसे एवा विचारथी लडाई करेछे खड्ग
छे अने मनमां वांक धरीज राखेछे. ॥ ६७ ॥

हवे मूढना विषय रागीपणानी दशा कहे छेः— अथ मूढ विषय वरननंः—

सवैया इकतीसाः—जैसे कोउ कूकर क्षुधित सूके हाड चावे, हाडनिकी कोर चिहू
र चुंभे मुखमें; गाल तालु रस मांस मूढनिको मांस फाटे चाटै निज रुधिर मगन
ादमुखमें; तैसे मूढ विषयी पुरुष रति रीत ठाने, तामें चित साने हित माने खेद दु
में, देखे परतछ बल हानी मल मूत खानी गहे न गिलानि पगी रहे रागरु खमें॥६७

अर्थ – जेम कोई कुतरो भुख्यो थको हाडकाने चावे छे, ते हाडकुं सूकुं होय
, तो पण तेने चारे तरफ फेरवीने ते चाटे छे, ने तेम चाटतां तेना गाल जीनने
ाळवानी चामडी फाटे छे, अने तेथी लोही नीकळे छे ने तेज पोताना लोही
ा स्वादथी मगन थई जाय छे, तेमज जे मूढ विषयी पुरुष छे, ते रती के०
ी पुरुष संयोगनी रीति जे शृंगार रस तेनेविषे मगन रहे छे, अने तेथी खेद दुः
व उपजे छे, तो पण तेमां सुख माने छे, अने ते कार्यथी प्रत्यक्ष पणे बळनी
हाणी थती जाणे छे, तथा तेने मळ मूत्रनी खाण जुए छे. तेम छतां तेमां गि

ज्ञानपणु ग्रहण करता नथी इगाजा पामता नथी अने रागरूप स्व
मजी रहेने तेना शाक आणता नथी, चाटा तेमा चित लगावी आनंद
हते समाधिनो विकल्पना कहान मा दुः चनना अवस्था कहे

अथ समाधि तथा मन अवस्था कथन –

अडिल्ल छंद – मनो कसमसा निज सहज चतन क्या माह विकल
मिथ्याती कहे रह्या कर विकल्प अनंत अहमति धारि मा मुनि चा
समत निराधि क ॥ ६० ॥

अर्थ – निश्चयनय यइ सहजरूप चतन जे ते मनो कमथी निज स्वभ
व्यवहारमा पडीन माहनु विकल्पणु मानीन मिथ्यामती था रह्या जे तेणे
मा अनंत विकल्प धरीन अहंबुद्धि धारण रह्या जे अने जण समत्व नि
कीदु ने स्थिरता पाम्या तेज माक्ष थया ॥ ६० ॥

हवे मिथ्यात भावथकी व्यवहारनु असंख्यातपणु कहे छे –

सवया ऽकत्रीसा –असंख्यात लाक परवान जा मिथ्यात भाव तइ
भाव करनो उकत है जिन्हक मिथ्यात गया सम्यक दरस जया ते नित
विवहारमा मुकत ह निरविकलप निरूपाधि आतम समाधि माधि जह
ठ पथका ढुकत ह तेई जीव परम दशामे थिररूप ह्व क धरमम थक त
सा कस्त है ॥ ७० ॥

अर्थ – एक लोकाकाश जे तेनी असंख्यातपणु कल्पना करीए तेटला
असंख्यात जे तेप्रमाणेज मिथ्यात भाव जे तेना अध्यवसाय स्थान छे
व्यवहारना करनार कहेवु जे अने जेने मिथ्यात गयु सम्यक दर्शन प्रगटि
ज्ञान थया अने व्यवहारथी मुक्त थाय तेमा विकल्प नथी ते निराकार
जेमा उपाधि नथी ते निरूपाधि एवी समाधिथी ते साधता जे ते
गुणमय थइन माक्ष मारगने ढुंकता जे ते जीव परम दशामा
स्थिर रहीने धर्ममा दृढ पणा कमथी गणाय नथी ॥ ७०

हवे गुरुने शिष्य प्रश्न पूछे छे – अथ शिष्य प्रश्न कथन –

कवित्त छंद – जे जे मोह करमकी परिनति बंध निदान कहे तुम
चेतनमा, तिन्हिका मूल हेतु कहे अन्य कर्म
ने पूछे छे श्री गुरु आगे शिष्य ऽसम पूछत

अर्थः— मोह कर्मनी जे जे परिनति छे, एटले राग द्वेषादिक छे. ते तो तमे स
ंधनुं निदान कह्युं, अने एतो निरंतर शुद्ध चेतन थकी भिन्न छे, ते माटे ए बं
ो हवे मूळ हेतु कहो; ए बंध थाय छे ते शुं जीवने सहज कौतुक छे, के ए
पुद्गल द्रव्य निमित्त छे ते कहो एम शिष्य माथुं नमावीने गुरुने पूछे छे. हवे
उत्तर आपे छे के हे भव्य प्राणी एनु उत्तर सांभळो ॥ ७१ ॥

अथ गुरु वचनः—

सवैया इकतीसाः— जैसे नाना वरन पुरी बनाइ दीजे हेठि उज्जल विमल म
सूरज करांति है, उज्जलता भासे जब वस्तुको विचार कीजे, पुरीकी झलकसों
न भांति भांति है; तैसे जीव दरवको पुग्गल निमित्त रूप, ताकी ममता सो
ह मदिराकी मांति है; भेद ज्ञान दृष्टिसों सुभाव साधि लीजे तहा, साचि शुद्ध
तना अवाची सुख शांति है ॥ ७२ ॥

अर्थः— जेम सूर्यकांति मणी छे तेम बीजो काश्मिरी पाषाण तेवोज छे, ने ते
हा उज्वल छे, ने तेनी नीचे तरेतरेना रंगनी पुरी बनावी आपिये त्यारे तेमां
त भातनो रंग देखाय; पण ज्यारे ते सूर्यकांति मणीना स्वभावनो विचार करि
तारे तो तेनी कांति जे उज्वल छे, तेज मनमां आवे, अने दीठामां तो नीचेनी
ावेली रंगनी पुरणीनी झलक पडेछे तेथीज तरेवार रंग वरण देखायछे, तेरीते
ीव द्रव्यनी अशुद्ध दशानुं निमित्त कारण पुद्गल द्रव्य छे, तेनी ममताथी मोह
प मदिरानुं उन्मत्तपणुं छे, अने ज्यारे जम चेतननी भेद ज्ञान दृष्टीवडे चेतन
स्वभाव साधीये, त्यारे साची शुद्ध चेतनाज भासे. अने अवाच के० वचन गोचर
ही, एवी रीतनी सुख शांति छे तेज भासे. ॥ ७२ ॥

हवे वस्तुना संयोगथी स्वभावमां भेद पडेछे, ते उपर दृष्टांत आपेछेः—

अथ संयोगिका स्वभाव वर्णनः—

सवैया इकतीसा.— जैसे महिमंडलमें नदीको प्रवाह एक ताहीमें अनेक भांति
ीरकी ढरनि है; पाथरको जोर तहां धारकी मरोरि होति कांकरकी खानि तहां
ागकी झरनि है; पौनकी झकोर तहां चंचल तरंग उठे, भूमिकी निचानि तहां
ौरकी परनि है; तैसे एक आतमा अनंत रस पुद्गल द्वंद्वकी संयोगमें विभाव
ी भरनि है. ॥ ७३ ॥

अर्थः— जेम पृथ्वी मंडळ उपर नदीनो प्रवाह एकरूप छे, अने तेज नदीना
वाहमां पाणीनुं व्हेवुं अनेक तरेनुं छे, जे ठेकाणे नदीना प्रवाहमां मोटा मोटा

पयरा आवी अडेला होय त्या धार मरडाईने पडे ठे, अने जाहां काकरी य तां कागनी करनी के० काग एटले पाणीना जरा जनकी उठेठे अने नती फकोर चालती होय तांहा चचल तरग उठेठे, अने जे ठेकाणे होयठे ताहा जोर पडेठे वमल थायठे, तेम आत्मद्रव्य ठे, तेने पुन्न योग ठे अने रस जे ठे ते षट गुणी हानी वृद्धीथी अनत ठे, तेनो सयोग त्मानेविषे विनावनी जरणी थायठे ॥ ७३ ॥

हवे आत्मा अने शरीर एक मेक बंधाई रह्या ठे पण लक्षण नेद जुदा ते बतावे ठे -- अथ आत्मशरीर लक्षन निन्न कथन –

दोहरा – चेतन लक्षन आतमा, जड लक्षन तन जाल, तनकी गि के, लीजें चेतन चाल ॥ ७४ ॥

अर्थ – आत्मानु चेतन लक्षण ठे शरीरनु जड लक्षण ठे, तेथी मता ठोमीने चेतननु शुद्ध ज्ञानपणु तेनु ग्रहण करी लेवु ॥ ७४ ॥

हवे नि केवल आत्मानी शुद्ध चाल कहेठे -- अथ आत्मा यथा-

सवैया तेईसा – जो जगकी करनी सब ठानत, जो जग जानत देह प्रमान पे देहसुं दूसरो देह अचेतन चेतन सोई, देह धरे प्रभु देहसुं पर ठन्न लखै नहि कोई, लछन वेदि विचछन बूझत अछनिसों परतछ न

अर्थ – जे पदार्थ सर्व जगतनी करणी करेठे, एटले चतुर्गति ने जे जगतने जाणेठे, अने जोवत के० देखेठे, पोतानी देहने प्रमाणे ठे देहथी ते जुदो ठे देह अचेतन पिंम ठे, अने आत्मा चतनपिंम ठे ठे, प्रभु ठे पण देहथी मिन्न ठे देहनेविषे प्रछन्न के० ढकाई रह्या ठे, तेने ग्वतो नथी. पण एना जे लक्षण ठे तेने वेदी के० जाणीने विचक्षण जाणेठे एवो ए आत्मा अक्ष के० इंद्रियथी प्रत्यक्ष नथी ॥ ७५ ॥

हवे देहनी चाली कहेठे – अथ देह यथा –

सवैया तेईसा – देह अचेतन प्रेत दरी रज रेत भरी मल खेतकी क्यारी व्याधिकी पोट अराधिकी उट उपाधिकी जोट समाधिसों न्यारी रे जिय देह करै सुख हानि इते पर तोहि तु लागत प्यारी, देह तु तोहि तजेगि निदान पै तू हि तजे क्यों न देहकि यारी ॥ ७६ ॥

अर्थ – देह अचेतन ठे, प्रेत दरी के० जमतारूप प्रेतनी गुफा ठे रज के० वीर्य ते भरी जरेली ठे, अने मलरूप खेतरनी क्यारी ठे

रोगनी पोट छे. आराध के० आत्माने ढुपावाने उंट छे अने उपाधिनी जोट के० मेलारूप छे, एने विषे असमाधिज रहेछे, समाधि रेती नथी. माटे अरे जीव ए देह ते सुखनो नाश करे छे एवी छे, तोपण तने ए देह प्यारी लागेछे. अरे जीव तुं समज के ए देह निदान तनेज तजशे पण तुं ए देहनी यारीनो त्याग करतो नथी.

दोहराः— सुनु प्रानी सदगुरु कहे, देह खेदकी खानि; धरे सहज दुख दोष कों, करै मोछकी हानि. ॥ ७७ ॥

अर्थः— सदगुरु कहेछे के अरे प्राणी सांभलो देह छे ते खेद के० धुलनी खाण छे. एनो सहज स्वभाव वात पित्त कफ रूप दुख दोषने धरनारो छे. अने मोक्षनी हाणी करे छे. ॥ ७७ ॥

हवे देहनुं वर्णन करेछेः— अथ देह वर्णनं.—

सवैया इकतीसाः— रेतकीसी गढी किधों मढी है मसान केसी अंदर अंधेरी जैसी कंदरा है सैलकी; ऊपरकी चमक दमक पट भूखनकी, धोखे लागे भली जैसी कली है कनेलकी; औंगुनकी ओंडी महा भोंडी मोहकी कनोंडी, मायाकी मसूरति है मूरति है मैलकी; ऐसी देह याहिके सनेह याको संगतिसो व्हे रही हमारी मति कोलू केसे बैलकी. ॥७८॥ ठौर ठौर रकतके कुंड केसनिके झूंड, हाड निसों भरी जैसे थरी है चुरेलकी; थोरेसे धकाके लगे ऐसे फट जाइ मानो, कागदकी पुरी किधों चादर है चैलकी; सूचै भ्रम वानि ठानि मूढनिसों पहिचानि करै सुखहानि अरुखानि बदफैलकी; ऐसी देह याहिके सनेह याकी संगतिसों व्हे रही हमारी मति कोलू केसे बैलकी. ॥ ७९ ॥

अर्थः— जाणे रेतीनी गढी बांधी होय के मसाणनी मढी एटले अपवित्र ठेकाणे हाड मांसनुं एक थवुं कर्युं होय, वली जेनी अंदर सैल के० पहाडनी कंदर के० गुफा जेवुं अंधारूं छे, एवा अपवित्र देहरूप स्थानछे तेउपर भूषणना चमक दमकथी शोभे छे, धोखे के० फूठा भ्रमकाथी देह भली लागे छे. ते उपर दृष्टांत छे के, जेम कनेरनी कली उपरथी सुंदर देखाय छे, पण तेमां अंदर बिलकुल सुवास होती नथी; तेथी उचाटकारी लागे छे, अवगुणनी उंरमी छे महाभुंमी छे, अने मोहनी कनोडी के० मोहनी काणी आंख छे, तेथी सुजतुं नथी, अने मायानी मसूरति के० मायानो समुदाय छे; एवी मेलनी मूरती ए देह छे, एना स्नेहथी अने संगथी अमारी मति घोलडी पीलवानुं कोल्हु तेना बलद सरखी बनी गई छे॥७८॥

वली ए देहनेविषे ठेकाणे ठेकाणे लोहीनां कुंभलां छे, ने अपवित्र केशनी फुंम

छे, तेमां हाडका नरेला छे जेम चुडेल व्यंतरीनु स्थानक होय तेवी ए थोडो धको लागवाथी ए देह एवी फुटी जाय छे के, जेम कागलनी पुडी नी मेली चादर छे, ते जेम जरा टकोराथी फाटी जाय, तेम देह फाटी एवी ए देहनी ममताथी भ्रम वाणी के० मिथ्यावाणी सुचे के० कहे, अने लोक एनी पिछान राखे छे, अने ए देह सुखनी हानी करता छे, अने खाण छे एवी ए देहना स्नेह तथा एनी सोबत थकी अमारी बुद्धि छेजडी ना कोल्हाना बलदनी गति जेवी थई गई छे ॥ ७९ ॥

हवे कोल्हुना बलदनी अवस्था अने तेनी बराबर ससारी जीवनी गती स्पष्ट करी बतावे छे, अथ कोल्हुका बैलकी अरु ससारी जीव समानरूप

सवेया इकतीसा –पाटी बंधे लोचनसों सकुचे दबोचनिसों कोच वेदे खेद तनको, धाइवोही धधा अरु कधा माहि लग्यो जोत, वार वार कायर है मनको, चूखसहे प्यास सहे दुर्जनको त्रास सहे, थिरता न गहे सास लहे छिनको, पराधीन घूमे जैसो कोल्हुको कमेरो बेल तेसोइ या जगवासी जनको ॥ ८० ॥

अर्थ – जेनी आख उपर पाटी बाधी छे दबोच के० पगथी ठेलवु, तेथी चाय छे, अने परोणानी आरना धोच वागे छे, तेनी सोचनाथी शरीरने ख हो, ने दोडतो फिरे पोताना धधामा धावतोज रहे, ने खांधे जोतर लागो रहे वार वार आरनो मार पडे छे, ते सहन कर्या करे अने मननो कायर छे, पण वेठे छे, अने दुर्जननो त्रासपण खमे छे, अने स्थिरता पकडतो नथी. वार पण सुखे मोडेथी स्वास लई शकतो नथी, एरीते पराधीन थको जेम क कमेरो, के० काम करनारो बलद घूमेछे, तेम जगत वासी लोक घूमे छे, हे नाई कोल्हुना बलद सरखो तेमनो पण स्वनाव छे ॥ ८० ॥

हवे जगतवासी जीवनी व्यवस्था कहे छे – अथ जगतवासी यथा –

सवेया इकतीसा – जगतमे डोले जगतवासी नर रूप धरी, प्रेतकेसे धों रेत केसे धुहे है, दीसे पटचूखन आडबरसों निके फिरे फीके छिनमांहि थंबर ज्यो सुहे है, मोह के अनल दगे मायाकी मनीसों पगे दानकी लगे कसकेसे फुहे है, धम्मकी बुजि नाही उरझे नरम माहि नाचि नाचि जाहि मरीकेसे चुहे है ॥ ८१ ॥

अर्थ – जगतवासी जीव मनुष्यरूप धरीने डोली रह्या छे, ए केवा छे

चेतना दीप छे, ते जेम जलदी मटी जाय छे, तेम ए पण समजवा. वली रेति ना घुमाडा जेवा छे, तथा वस्त्र चूपणना आडंबरथी शोभायमान देखाय छे. अने क्षणेकमां फीका थई जाय छे, जेम सांझ समे आकाशमां वादल रंग बदले छे, तेम जाणवा वली मोहनी अगनीथी दाझे छे, ने मायानी मनी के० पोतापणुं तेथी पगे के० व्यापी रह्या छे, जाणियें डाभनी अणीउपर लागेला पाणीना बिंदु सर खा छे. गारना बिंदु जेवा छे. धरमनी ओलखाण जेने नथी अने भ्रमनेविषे अरुझी रह्या छे, जेम मरी उतपादनां उदरडां नाची नाची ने मरी जाय छे. तेम ए संसारी जीव नाची नाचीने मरण पामेछे ॥ ७१ ॥

हवे जगतवासीनी मोह व्यवस्था कहेछे·— अथ जगत व्यवस्था कथन·—

सवैया इकतीसाः— जासों तूं कहत यह संपदा हमारी सोतो, साधनि अमारी ऐसे जैसे नाक सिनकी; जासों तूं कहत हम पुन्य जोग पाई सोतो, नरककी साई है वमाई देढ दिनकी; घेरा मांहि पर्यो तूं विचारे सुख आखिन्हिको, माखिनके चूंटत मिठाई जैसे जिनकी; एते परि होहि न उदासी जगवासी जीव, जगमें असाता है न साता एक छिनकी. ॥ ७२ ॥

अर्थ.— अरे प्राणी जेने तूं कहेछे के आ मारी संपत्ति छे, तेने तो साधु लोके एवी रीते नाखी दीधीछे, के जेम नाकना मेलने नाखी देयछे. अने जे वडाईने तुं कहेछे के पुन्यना जोगथी हुं पाम्यो छुं ते तो नरकनी सहायी छे. जे राजादिकनी साहेबीछे. ते दोढ दिवसनी छे. ए परीवारना घेरामां तुं पड्यो थको आंखनुं सुख समजे छे, पण ते मिठाईनी उपर माखीनी पेठे टोळानो गणगणाट थई रह्यो तेम परीवारनो घेरोछे. एवुं छतां जगवासी जीव उदास थतो नथी. साचुं जो जोइये तो जगतनेविषे असाताज छे, एक क्षणमात्र पण शाता नथी ॥ ७२ ॥

दोहराः— यह जगवासी यह जगत, इनसों तोहि न काज; तेरे घटमें जग वसे, तामें तेरो राज ॥ ७३ ॥

अर्थ.— ए जे पुर्वे वखाण्या एवा जगतवासी लोक छे, अने ए लोकोनो ज्यां वास छे, तेने जगत जाणवुं, ए साथे संबंध राखवानुं तारुं काम नथी, पण तारा घटनेविषेज जगतनो वास छे, अने ते जगतमां तारुं राज्य छे ॥ ७३ ॥

हवे जे पिंडे ते ब्रह्मांडे ए वात साची छे, एवुं निर्णय करी आपेछे.—

अथ पिंड ब्रह्मांड वर्ननं:—

सवैया इकतीसा.— याही नर पिंडमें विराजे त्रिभुवन थिति, याहिमें त्रिविध प

रिणाम रूप अष्टि है, याहिमे करमकी उपाधि दुःख दावानल, याहिमें सुख वारिदकी वृष्टि है, यामे करतार करतूति याहिमें विभूति यामें भोग वियोग यामे घृष्टि है, याहिमें विलास सब गर्भित गुपतरूप, ताहिका अंतर सु दृष्टि है ॥ ८४ ॥

अर्थ —मनुष्य पिंडनेविषे कटीनी नीचे पाताल लोकछे, नाभि ते तिर्यक ते उपर उर्ध्व लोकछे, एवी त्रिभुवननी स्थिति जाणवी, अने एनेविषेज कईक णाम उपजे छे, ने कईक नाश पामे छे, ने कई स्थिर छे, एवी त्रिविध अष्टि रही छे, अने एज पिंडमा आत्माने कर्मनी उपाधि वलगी छे, तेज दुखकारी वन के० अग्निनो समुद्र लाग्यो छे, अने एज पिंडमा कोईवारे समा॰ सुख तेज वादलनी वृष्टी जाणवी, ते दावानल उपर मेघनी वृष्टी छे, एज पिंडमां नो कर्त्ता पुरुष छे, एज पिंडमां कर्त्तानी क्रिया छे, ए पिंडमांज विभूति के॰ नादिक संपत्ति छे, एज पिंडमा कर्मनो भोग ने कर्मनो वियोग छे, अने एज मा आत्मानुं घृष्ट के॰ दलन जे शुभाशुभ गुणोमा धमडाई रहेवुं ते छे, पिंडमा गर्भित के॰ मध्यभागमा गुप्तरूपे सर्व विलास छे पण जेना अंतरमां दृष्टीनो प्रकाश छे, तेने सर्व विलास प्रत्यक्षपणे जणाय छे ॥ ८४ ॥

हवे ए वातनो उपदेश गुरु कहे छे — अथ गुरुपदेश कथन —

सवैया तेईसा — रे रुचिवंत पचारि कहै गुरु, तू अपनो पद बूझत नांही, खोज हिये निज चेतन लछन है निजमे निज गूझत नांही, सिद्ध सुभाव अनि उज्जल, मायके फंद अरूझत नांही, तोर सरूप न दुंदकि दोहिमें तोहि मैं है तुहि सूझत नांही ॥ ८५ ॥

अर्थ — पचारी के॰ बोलावीने गुरु कहे छे, के रे रुचिवत भव्य, तुं पद के॰ स्थान तेने जाणतो नथी पोतानुं चेतन लक्षण हृदयामां तोर तानुं लक्षण पोताने विषे छे ते गूझत के॰ गुप्त नथी, तारू सरूप सिद्ध सम स्वछंद के॰ निज आधीन छे, सदा अति निर्मल छे, पण मायानी जालमा पड्यु छे, तेमांथी छूटी शकतो नथी, तारू सरूप द्वंद्वनेविषे नथी एम जाणनी द्विविध दशामां नथी, तारामांज छे, पण तने सूजतुं नथी ॥ ८५ ॥

हवे ज्ञानना प्रकाश वडे ईश्वरताने पमाय ते समजावे छे —

अथ ज्ञान माहात्म्य कथन —

सवैया तेईसा — केइ उदास रहै प्रभु कारन, केइ कहीं उठि जाहि कहींके,

इ प्रनाम करे गढि मूरति, केइ पहार चढे चढि छींके; केइ कहे असमान कें ऊपरि, केइ कहे प्रभु हेठि जमीके; मेरो धनी नहि दूरदिशांतर मोमहि है मुहि सूजतनीके.

अर्थ.— कोई पोताना परमेश्वरने ओळखवाने उदासी थई बेसी रहे छे, कोई क ई तंत्रनेविषे जतो रहे छे, कोई परमेश्वरनी घडेली मूरतिने प्रणाम करे छे, कोई परमेश्वरने पामवाने छीकामां बेसी पर्वतने उपर चढे छे, कोई परमेश्वरने आस्मा न उपर छे एवुं कहे छे, कोई कहे छे के, परमेश्वर जमीननी नीचे छे, ए कुगन वाळानी श्रद्धा छे; पण एविषे मारो निश्चय तो ए छे के मारो धणी तो कांई दूर देश नथी, पण माराविषेज छे. एम अनुभवथी मने सारुं मालम पडे छे ॥ ७६॥

दोहराः— कहे सुगुरु जो समकिती, परम उदासी होइ; सुथिर चित्त अनुभौ करे, यह पद परसे सोइ ॥ ७७ ॥

अर्थः— सद्गुरु कहे छे के जे समकिती होय ते परम उदासी रूप थई चित्त ने स्थिर राखीने निज अनुभव अभ्यासथी पोताना पदने पामे ॥ ७७ ॥

हवे मननी चंचळता दर्शावी तेने स्थिर केम राखवुं ते उपदेशे छेः—

अथ मन स्वरूप कथनः—

सवैया इकतीसाः— छिनमें प्रवीन छिनहीमें मायासों मलीन, छिनकमें दीन छिन माहि जेसो शक्र है; लिये दोर धूप छिन छिनमें अनंतरूप कोलाहल ठानत मथान कोसो तक्र है; नट कोसो थार किधों हार है रहट कोसो नदी कोसो भौर कि कुंभार कोसो चक्र है; ऐसो मन भ्रामक सुथिर आजु केसो होइ ओरहिको चंच ल अनादिहीको वक्र है. ॥ ७८ ॥ धायो सदा काल पै न पायो कहू साचो सुख रूपसों विमुख दुख कूपवास वसा है; धरमको घाती अधरमको संघाती महा, कु राफाती जाकी संनिपातीकीसी दसा है, मायाकों झपटि गहे कायासों लपटि र है, भूल्यो भ्रम भीरमें वहीरकोसो ससा है; ऐसो मन चंचल पताका कोसो अं चल सु ज्ञानके जगेसें निरवान पथ धसा है. ॥ ७९ ॥

अर्थ.— आ मन क्षणमां प्रवीण थायछे, क्षणमां मायानेविषे मलीन थायछे, क्षणमां दीन दशा धरेछे, क्षणमां शक्र के० इंद्र जेवुं बनेछे, क्षणमां दोड धाम करेछे, क्षणमां अनंतरूप धरे छे, जेम दहीने वलोवता कुलाहल थायछे, तेवुं कु लाहल ए मन करेछे, वली नट जे नाचनार घुमे तेवुं, के अरहटनी माळा घुमे ते वुं, के नदीनो वमळ घुमेछे तेवुं, अथवा कुंभारनु चक्र फरेछे तेवुं कहुं, एवो सदा काल मननो भ्रामक स्वभाव छे, एवुं ए मन आज केम स्थिर थाय? जाते चंच

ल अने अनादि कालथी वाकु चालनारुं मन छे वली केवुं छे? ॥८८॥ हमेशा फरेछे, पण एने किहांय साचु सुख प्राप्त थतु नथी, पोताना समाधिसुखथी ख थयुछे, अने ड खरूप कूप वासमां वस्तु छे, वली ए मन धर्मनु घाती ने अधर्मनुं सघाती छे, एवु महा कुराफाती छे, ए मननी दशा तो जेम पने सनेपात थयो होय तेना सरखी छे. झोह तथा वचनाने जट ग्रही कायाना मोहथी मगन रहे, ने भ्रम जालमां पक्षी ज्ञुज़ुंज फरे, जेम ११ मा ससलु आवी पडे ने नमतु फरे, तेवु मन छे ने पताका के० ध्वजा चल के० छेडानी पठे जाणवु ते ज्यारे ज्ञान प्रगटे त्यारे निरवाण के० मार्ग तेने विषे गमन करे एवु छे ॥ ८९ ॥

दोहरा.– जो मन विषय कषायमें, वरते चचल सोइ, जो मन ध्यान सो, रुके सु अविचल होइ ॥ ९० ॥ ताते विषय कषायसो, फेरि सु नि, शुद्धातम अनुनोविषे, कीजे अविचल आनि ॥ ९१ ॥

अर्थ – जो मन विषय कषायरूप राग द्वेषमां वर्त्ते तो चचल जाणवु एमन राग द्वेष गमी ध्यान विचारथी रोक्यु रहे तो अविचल जाणवु ॥९० माटे विषय कषायमां मननी लागणीछे तेने काढी निज शुद्धात्मना लगाडीने आ मनने अविचल करियें ॥ ९१ ॥

हवे मन स्थिर करवाने आत्मानो विचार करवो ते कहेछे.–

अथ विचार शिक्षा कथन –

सवैया इकतीसा –अलख अमूरति अरूपी अविनासी अज, निराधार निरजन निरध है, नानारूप भेष धरे भेष को न लेस धरे, चेतन प्रदेस चेतनाको पंध है, मोह धरे मोहीसो विराजे तोमे तोहीसो न तोहिसो न माहि निरागी निरवध है, ऐसो चिदानद याही घटमे निकट तेरे, ताही तू विचार और सर्व धध है ॥ ९२ ॥

अर्थ – ए आत्मा अलक्ष छे, अमूरति छे, अरूपी छे, अविनाशीछे अज के० न्म्यो नही एवो छे, अने जेने कोईनो आधार नही, ज्ञानरूपी छे, तथा रागविनानो, ने ठिइ विनानो छे, व्यवहारमा जोईये तो नाना प्रकारना वेष धरनारो छे, [जोईये तो वेषनो लेश धरे नही मात्र चेतनाना प्रदेशनु धारण करनारो छे, अने नो पथ के० पुजरूप छे, ए उपदेश मनने वाह्यात्मानो छे, ते वाह्यात्मा मनने छे के, ए चिदानद जेछे ते राजाछे, ने आ पिमनो मोह धरेछे, अने हे मन ए चि०

तारामां ताराजेवो विराजे छे, पण निश्चेनयथकी तारेविषे ने मारेविषे एने मोह नथी, एवुं निरागी निरबंध छे. एवो जे चिदानंद भगवान छे, ते अरे मन जे घट मांहे जिहां तुं वसेछे तेज घटमां ते पण वसेछे माटे ते ईश्वरनोज विचार तुं कर, बीजो विचार सर्व दंद रूपछे. ॥ ए२ ॥

हवे ए चिदानंदनो जे रीते शुद्धानुभव थाय, ते रीते मनने उपदेश करेछेः—

अथ शुद्धानुभव शिक्षा कथनः—

सवैया इकतीसाः— प्रथम सु दृष्टिसों सरीररूप कीजे भिन्न तामें और सूछम शरीर भिन्न मानियें; अष्ट कर्मभावकी उपाधि सोई किजे भिन्न ताहुमें सुबुद्धिको विलास भिन्न जानिये; तामें प्रभु चेतन विराजित अखंमरूप, वहे श्रुत ज्ञानके प्रवान ठीक आनिये; वाहिको विचार करि वाहिमें मगन हुजे, वाको पद साधिवेकों ऐसी विधि ठानिये. ॥ ए३ ॥

अर्थ.—प्रथम सम्यक् दृष्टिवडे शरीररूप बाह्यात्मा भिन्न राखवो, ते बाह्यात्मा नेविषे बीजुं सूक्ष्म शरीर कर्म संबंधी अंतरात्मा छे ते पण भिन्न जाणवो, ते अंतरात्माथी परमात्माना ज्ञान दर्शननुं आछादन थायछे, एवुं अष्ट प्रकारनुं कर्म तेना भावनी उपाधि ते पण भिन्न जाणवी, अने ते अंतरात्मानेविषे सुबुद्धिनो विलास जे भेद ज्ञानादिक ते पण भिन्न जाणीये, अने ते सुबुद्धि विलासमां चेतनरूपी प्रभु जे छे ते अखंमरूपे विराजे छे, अने ते चेतन श्रुत ज्ञानना प्रमाणथी हृदयमां सारीपठे ठराविये, ए रीते हे मन तुं तेनाज विचारमां मग्न रेजे, ने ते चेतननुं पद साधवाने एटले मोक्ष मार्ग ग्रेहवाने एज विधी युक्त छे एम जाणजे. ॥ ए३ ॥

हवे ज्ञाता जीवनुं स्वरूप वर्णवे छेः— अथ ज्ञानी जीव कथनः—

चोपाई— इहि विधि वस्तु व्यवस्था जाने; रागादिक निजरूप न माने; तातें ज्ञानवत जगमांही, करम बंधको करता नांही. ॥ ए४ ॥

अर्थः— ए रीते वस्तुनी व्यवस्था जाणे अने राग द्वेषादिक जे भाव छे, तेने पोतानुं रूप न माने, तेणे करीने ज्ञानवंतने जगतमां कर्म बंधनो कर्त्ता कह्यो नथी थाव कर्म तेने बंध करी शकता नथी. ॥ ए४ ॥

हवे ज्ञातानी क्रिया कहे छेः— अथ ज्ञाताकी क्रिया कथनंः—

सवैया इकतीसा.—ज्ञानी भेद ज्ञानसों बिलेछि पुदगल कर्म, आतमाके धर्मसों निरालो करि मानतो; ताको मूल कारन अशुद्ध राग भाव ताके, नासिवेको शुद्ध अनुभौ अभ्यास ठानतो; याही अनुक्रम पररूप भिन्न बंध त्यागि, आपुमांहि अ

पनो सुनाउ गहि आनतो, साधि शिवचाल निरबंध होतु तिहू काल, त्रिलोक पाई लोकालोक जानतो ॥ ९५ ॥

अर्थ — ज्ञाता होय ते भेद ज्ञानवडे पुदगलिक कर्मनुं विलक्षण छे, आत्मिक धर्मथी पुदगलिक धर्मने जुदो करी जाणे, एम विलक्षण करे, पुदगल धर्मनुं मूल कारण अशुद्ध रागद्वेषादिक भाव छे, तेनो नाश करवा अनुभव अभ्यास जे रीते पूर्वे कह्यो ते प्रमाणे अवस्था देखी अभ्यास राखे, अनुक्रमे प्रथम सुदृष्टिथी शरीररूप भिन्न करवु, ए अनुक्रमे पूर्व सबंधथी बंधने त्यागीने पोतानेविषे पोतानोज ज्ञानादिक स्वभाव ग्रहण करे, हनी साधना करीने त्रणे काल निर्बंध थाय, तेवो थई केवल ज्ञान पामीने लोकने जाणनार थाय ॥ ९५ ॥

हवे सम्यक्त धारीनु पराक्रम कही बतावे छे — अथ सम्यक्तधारी

सवैया इकतीसा — जैसे कोउ हिंसक अजान महा बलवान, खोदि मूल रख उखारे गहि बाहुसों, तैसे मतिमान दर्वकर्म भावकर्म त्यागि, व्है रहे मति ज्ञानकी दसाहुसों, याहि क्रिया अनुसार मिटे मोह अंधकार, जगे केवल प्रधान सवि ताहुसों, चुके न सकतिसों लुके न पुदगलमाहि, धुके लको रुके न फिरि काहुसो ॥ ९६ ॥

अर्थ — जेम हिंसक पुरुष भील प्रमुख जे हिंसाना फलथी अजाण छे, ने महा बलवान छे, ते वृक्षना मूलने खोदीने पछी पोताना भुजना बलथी ने उखेडी नाखे छे, तेम मतिमान के० सम्यक्ती पंडित जे छे, ते पुदगल द्रव्य कर्मने, अने ज्ञानावरणी दर्शनावरणी इत्यादि आठ भाव कर्मने त्यागीने दशावडे अतीत के० कर्मरहित थई रह्यो छे, अने क्षण क्षणमा ए क्रियाना बलथी मोह अंधकारने मटावे छे, अने तेथी केवल ज्ञाननी ज्योति उदय थाय, ति मति ज्ञान प्रमुख सर्व ज्ञानोमा प्रधान छे, अने एथी अनंत वीर्य प्रगटे, ने ए शक्ती ते चुके नही, अने मोक्ष स्थानने जई ढुके, अने कांईथी रोकाय नही.

इतिश्री नाटक समयसारविषे बंधद्वार बालावबोध रूप अष्टम समाप्त

दोहरा — बंध द्वार पूरन भयो, जो दुख दोष निदान, अब बरनों संक्षेपसे मोक्ष द्वार सुखखान ॥ ९७ ॥

अर्थ.— दुखने दोषनुं निदान जे बंध तेनो द्वार संपूर्ण थयुं. हवे सुखनुं स्थान जे मोक्ष तेनो द्वार संक्षेपथी वरणवुं छुं. ॥ ९७ ॥

हवे मोक्षद्वारने आदि ज्ञान विलासने नमस्कार करे छेः— अथ ज्ञान विलास वर्णनंः—

सवैया इकतीसा.— भेद ज्ञान आरासे दुफारा करे ज्ञानी जीव, आतम करम धारा भिन्न भिन्न चरचै; अनुभौ अभ्यास लहै परम धरम गहै, करम भरमको खजानो खोलि खरचै; योंही मोखमुख धावै केवल निकट आवै. पूरन समाधि लहै पूरनके परचै; भयो निरदोर याहि करनो न कछु और, ऐसो विश्वनाथ ताहि बानारसी अरचै ॥ ९८ ॥

अर्थ.— जेम कोई परिक्षानुं करनार पुरुष मुद्रा प्रमुख द्रव्यने सुलाकनी आर वडे भेदी सुधातु छे, के कुधातु छे, तेनो निश्चय करे छे, तेम ज्ञानी जीव छे, ते भेद ज्ञानरूपी आर वडे आत्मा तथा कर्म ए बेउने जुदां करे छे, अने ते बेउने जुदा जुदा चरचे के० तेमां आत्मिक धारानेविषे तो अनुभवनो अभ्यास धारण करे, तेथी परम धरम के० शुद्ध समाधि तेनुं ग्रहण करे; अने कर्मजालने जुदी जाणी छे, तेने सत्ता कर्मरूप खजानो खोलि खरचे के० विखेरी नाखे, तिहां निर्जरा थाय, एवी क्षपक श्रेणीने लीधे मोक्षना सुखने धाय, त्यां केवल ज्ञान ढुकडो आवे अने पूर्ण आत्म स्वरूपना परिचय थकी पूर्ण समाधि पामे, पछी भव भ्रमण दोर छांडीने निरदोर थाय. ते पछी तेने कई बीजुंकृत्य करवानुं बाकी रहे नही; तेथी ते विश्वनो नाथ थयो, तेने बनारसी दास पूजे छे ॥ ९८ ॥

हवे सुबुद्धि विलास वडे आत्मस्वरूप सधाय ते अधिकार कहेछे.—

अथ सुबुद्धि विलास वर्ननः—

सवैया इकतीसाः— काहु एक जैनी सावधान व्है परम पैनी, ऐसी बुद्धि छैनी घांहि मारि दीनी है; पैठी नौं करम भेदि दरब करम छेदि, सुभाउ विभाउ ताकी संधि सोधि लीनी है; तहां मध्य पाती होइ लखी तिन्हि धारा दोइ, एक मुधामई एक सुधारस भीनी है; मुधासों विरचि सुधा सिंधूमें मगन भई, ए ती सब क्रिया एक समै बीच कीनी है ॥ ९९ ॥ दोहरा.— जैसी छैनी लोहकी, करे एक सो दोइ; जड चेतनकी भिन्नता, त्यों सुबुद्धिसों होइ ॥ ३०० ॥

अर्थः—कोई एक जैनी जैन आगमना जाणनारे सावधान थईने परमपैनी के० तीक्ष्ण एवी बुद्धिरूप छैनी के० सोनीनी छीणी ते शस्त्र विशेष, पोताना नाखी दीधी, पछी ते सुबुद्धिरूप छीनी नौं कर्म के० आत्म प्रदेशनेविषे

श्लेष्म रूप जे राग द्वेष परिणाम छे, ते नें करमना नेद तेना पुद्गलरूपी
ने छेदीने स्वनाव अने विनावतानी सधी सोधी लीधी छे, तहा साधनेविषे
पाती के० त्रिह्मईत वनीने ते पुरुषे बे धारा लखी, तेमा एक तो सुधामइ
ज्ञान मय छे, ने बीजी सुधारस नीनी के अमृत रस नीनी ज्ञान समा
अहीं राग द्वेषादिकनी दशा बे, ते मुग्ध दशा छे, तेथी विरचि के० वैराग
सुधा सिंधुमा मग्न थवु, ज्ञान समाधिरूप सुधा समुद्रमा मग्न रेवु, ए जे
ही ते सर्व क्रियानो विचार एक समयमां करे ॥ ९९ ॥ जेम लोढानी छीणी
ना बे नाग करे छे, तेम जड चेतननी एकता नागीने जिन्नता करवी ते
कीज थाय छे ॥ ३०० ॥

हवे जेवु सुबुद्धिनु विलास छे, तेवु कहे छे — अथ सुबुद्धि विलास कथन-

सवैया इकतीसा — (सर्व हस्वक्षर चित्रालंकार) धरति धरम फलहरति
म मल, मन वच तन बल करत समरपन, नखति असन सित चखति
रित, लखति अमित वित करि चित दरपन, कहति मरम धुर दहति नरमपुर,
हति परम गुर उर उपसरपन, रहति जगत हित लहति नगति रति,
ति गति पद मति परपन ॥ १ ॥

अर्थ —सुबुद्धि जे छे ते धरम रूप फलने धारेले, कर्मरूप मलने हरे छे, अने ए
नेविषे मन वळ वचनवल अने कायानुं बल तेने समरपण करे एटले ए
ते क्रियामा कामे लगाडे नखति के० खाय छे सित के० शीतळ नोजन
सनरित के० जीननना स्वादविना नोजन जमे, अमित वितके० परिमाण
पोतानु ज्ञानादिक धन चित्तरूप दर्पण वडे जुए, मर्म धुर के० मर्मनी
जीवनु स्वरूप ते कहे, भ्रम पुर के० मिथ्या नगर तेने बाले, अने
त्कृष्ट गुरुना वचनने ग्रहण करे, अने हृदयनेविषे उपसरपन के० स्थिरता
अने जगतनो हितकारी थको रहे, त्रणे लोकनी नक्ति अने रति के० सुख
लहे, एटले सर्व लोकने पुजनीक थाय होई अगति गति के० जेनेविषे बीजा
मान्यनी गति थती नथी, तेवी मोक्षगति चाहे, एवो सुमतिनो उत्कृष्ट विलास

हवे ज्ञातानो विलास कहे छे — अथ ज्ञाता वर्नन —

सवैया इकतीसा — (सर्व गुरु अक्षर चित्रालंकार) रानाकोसो ज्ञाना
आपा साधे थाना चीने, दाना अंगी नानारंगी खाना जंगी जोधा है, माया
जेती तेती रेतेमें धारेती सेती, फंदाहीको कंदा खोदे खेतीकोसो लोधा है,

...ता हांता जोरे राधातेती तांता जोरे वाढी तेती नांता तोरै चांदी कोस...
है; जानै जाही ताही नीके मानै राही पाही पीके, ठानै वाते मा...
धारावाही बोधा है. ॥ २ ॥

अर्थः— जे बुध के० ज्ञानी छे, ते राणा के० राजा जे पातसाहनुं स्वांग लेतो...
रहे छे. जेम राजा पोताना आत्मानुं साधन करे; अने पोताना मंमलनो साज...
पोताना धाणाने चीन्हे के० नीपेवानी राखे. दानाइ राखे पण नादानी नही राखे...
चारे उपाय वडे नाना रंग करे. खाना जंगी के० लडाईनेविषे जोद्धा थई रहे, तेम...
नी पुरुष आत्म साधन करे, गुणगणा चिन्हे अने त्यागी थको कर्म निर्जरानेविषे...
ना प्रकारना रंग धारे, राग द्वेष दुर्जन साथे लमी हटावी देय, एवी रीते एक प...
ना बे अर्थ थाय छे, जेम लुहार रेतरमीवडे लोढाने घसी नाखे छे. तेम जेटल...
टली माया बेली के० कर्मजाल तथा गजवेल जे क्रोध तेने मेधा के० सुबुद्धि ते रू...
प रेतरमी वडे घसी नाखे; अने फंदना कंदने खोदेछे जेम लोधा के० खेडुत खेतर...
नी धरतीने कंद के० मूलथी खोदी नाखे छे. तेम बाधा के० कर्मबंध तेथी हा...
ताजोरे के० जुदाई करे, अने राधा के० सुबुद्धि ते साथे नातो जोडे; बांदीके०...
कुबुद्धि तेनो नांतो के० संबंध ते तोडे, जेम सोना रूपानी चांदी सोधनार वस्तु उ...
ज्वल करेछे, तेम जे जेने तेने जाणे, हेय जे छांमवा योग्य वस्तु अने उपादेय जे आ...
रवा योग्य वस्तु तेने पण नीके के० ठीक जाणे, पण हेयाने राहीपाही के० फुल...
मान पीकसमान जाणे भीनासथी खीजावेछे, ए रीते माही वातो ठरावे एवो...
चक्र धारानो वेहेनार अबोधा के० पंमित ने ज्ञानी कहीये ॥ २ ॥

हवे ज्ञाताने चक्रवर्त्ति समान कही बतावेछे.—अथ ज्ञाता चक्रवर्त्ति समान कथन.—

सवैया इकतीसाः— जिन्हिके दरव मिति साधत छ खंम थिति, विनसै विभाव
अरिपंकति पतन है; जिन्हिके भगतिको विधान पईनो निधान, त्रिगुनके भेदमान
चौदह रतन है; जिन्हिके सुबुद्धि रानी चूरि महा मोह वज्र, पूरे मंगलीक जे जे
मोखके जतन है; जिन्हिके प्रमान अंग सोहै चमू चतुरंग, तेई चक्रवर्त्ति तनु धरै
पै अतन है. ॥ ३ ॥

अर्थः— जेणे छए द्रव्य प्रमाण करी साध्या तेज जाणे छये खंम साधी लीधा,
अने जेना रागद्वेषादि विभावदशा वणसी जाए तेज जाणिये शत्रुनी पंक्तिनुं प...
...न के० नाश थयो, अने तेने नव प्रकारनी भक्तिनुं विधान के० करवुं तेज तेने
...व निधान छे, ज्ञान दर्शन ने चारित्ररूप जे त्रण गुण छे, अने तेना क्षयोपशम

माफक जे भेद उपजेछे, ते जेना चौद रतन प्रगटमान छे, अने जेम चक्रवर्तिने त होयछे, ते तेना छ खम साधवाना राज्याभिषेक समय होय त्यारे वज्र हाथवडे चूरीने, मुख आगल मंगलीक पूरे तेम जेने सुबुद्धिरूप स्त्री रत्न छे, ते महा मोहरूप वज्रने चूरीने मोक्षना जतनने माटे मंगलीक पूरे छे, एटले मंगल कार्य करे; अने जे प्रत्यक्ष प्रमाणे करीने अर्थनुं ग्रहण करेछे, तथा परोक्ष णे करीने पण अर्थने ग्रहेछे, एवा जेना प्रमाणरूप अंग छे, तेज तेनी सेना थई एम जाणवु, ए रीते ज्ञाता पुरुषे चक्रवर्त्तिनी देह धारी छे, तेम छतां पण ज्ञाता अतनके० अशरीरी जेवु छे ॥ ३ ॥

पूर्वे कही जे नवधा भक्ति तेनु हवे वर्णन करेछे —अथ नवधा भक्ति वर्णन—

दोहा.— श्रवन कीरतन चितवन, सेवन वंदन ध्यान, लघुता समता एकता, नौधा भक्ति प्रमान ॥ ४ ॥

अर्थ — उपादेय स्वरूपने सांभलवु, किरतन करवु चितवन करवुं, सेवा करवी, वंदन स्तुति करवी, ध्यान धरवु, तन्मयता करवी, समाधि करवी, एकमेक पणु, ए नौधा के० नव भेदवडे भक्ति प्रमाण थायछे ॥ ४ ॥

हवे जे ज्ञाता मोक्ष सन्मुख थयो तेनी अनुभव दशा कहे छे —

अथ अनुभवी वचन —

सवैया इकतीसा — कोई अनुभवी जीव कहे मेरे अनुभौमे, लछन विभेद भि न्न करमको जाल है, जाने आप आपुको जु आपु करी आपुविषे, उतपति नाश ध्रुव धारा असराल है, सारे विकलप मोसों न्यारे सरवथा मेरो निहचै सुभाव यह विवहार चाल है, मै तो शुद्ध चेतन अनंत चिन मुद्रा धारी, प्रभुता हमारी एक रूप तिहू काल है ॥ ५ ॥

अर्थ — जे आत्मानो अनुभव पाम्यो तेज अनुभवी जीव एवु कहे छे, के मा रा अनुभवमां लक्षण भेदथकी कर्म जाल हवे भिन्न दीसवा लागी अने आ त्माज कर्त्ता कारक आत्माज करण कारक आत्माज आधार कारकविषे आत्मा ज कर्म कारकने जाणे अने अही कोई पर्यायनी उत्पत्ति अन नाश छे, अने द्र व्य ध्रुवता पणे छे, ए त्रणे धारा अही असराल पणे वही रही छे तो पण ए त्र णे धारा विकल्परूप छे, अने मारेथी तो सर्व विकल्प सर्वथा जुदान छे विक ल्पमा तो कही निश्चय नथी अने मारो तो चेतना स्वरूप निर्भे स्वभाव छ अने आगल कही जे त्रण धारा तेतो व्यवहार नयनी चालमां छे आ जे सिद्धांत वच

कहुं हुं तेणे करीने हुंतो शुद्ध चेतना स्वरूपी हुं, अनंत चिन मुद्रा धारी के० अन
त ज्ञाननो धरवा वाळो हुं, एहवी महारी प्रभुता त्रणे काळने विषे एक रूपेछे॥५
हवे चेतनानुं स्वरूप बतावे छे.— अथ चेतना वर्ननं:—
सवैया एकतीसा:— निराकार चेतना कहावे दरसन गुन साकार चेतना शुद्ध
ज्ञान गुण सार है; चेतना अद्वैत दोउ चेतन दरवमांहि, सामान विशेष सत्ताही
को विसतारहै; कोउ कहै चेतना चिनह नाही आतमामें, चेतनाके नास होत त्रि
विध विकार है; लछनको नास सत्ता नास मूल वस्तु नास, तातें जीव दरवको
चेतना आधार है॥ ६ ॥ दोहरा:— चेतन लछन आतमा, आतम सत्ता मांहि;
सत्ता परिमित वस्तु है, भेद तिहूमें नांहि ॥ ७ ॥

अर्थः— आत्मानो दर्शन गुण जे निराकार कहीये छइये तेतो निराकार चेत
ना थई, अने जे आत्माने शुद्ध ज्ञान गुण सारभूत कहीये छइये तेतो साकार चे
तना थई, विशेषताने लीधो रह्यो छे माटे साकार कहिये, ए रीते निराकार अने साका
रपणे दर्शन तथा ज्ञाननेविषे द्वैत भाव थयो, पण चेतनानेविषे तो अद्वैत भाव
ज रह्यो छे, अने चेतनागुण थकी चेतन द्रव्य छे, तेथी चेतन द्रव्यमां बेउ समाई
गयां. वळी निराकार ने साकारपणुं सामान्य ने विशेषपणाथकी छे, ते तो सामा
न्यता अने विशेषता चेतना द्रव्यनी सत्तानो विस्तार छे; कोई मूढमति वैशिषिक
मुख दर्शन वाळा कहे छे, के, आत्मानेविषे चेतन चिन्ह नथी, चेतना लक्षण
थी, तेने केवुं के, अरे मूढ, जो चेतन चिन्ह न कहिये तो चेतनानो नाश थवाथी
विध विकार उपजशे, ते कया तो मन वचन ने कायाना विकार जाणवा; माटे
लक्षणनो नाश थवाथी वस्तुनी सत्तानो नाश थशे अने वस्तुनी सत्तानो नाश थवाथी
रूप वस्तुनो पण नाश थशे, माटे जीवने जाणवानो तो एक आधार चेतनानोजछे
आत्मानुं चेतना लक्षण छे, सत्ता धर्मविना आत्मा ठरे नही तेथी आत्मा स
विषेज छे, अने पोतपोतानी सत्ता प्रमाणेज सर्व वस्तु छे, वस्तु द्रव्य विचारी
त्यारे उत्पादादि त्रणे वस्तुमां भेद कोई नथी ॥ ७ ॥
हवे चेतना लक्षणनुं शाश्वत तथा अविनाशीपणुं दृढ करावेछे:—
अथ चेतना अविनासी यह कथन:—
ा तेईसा:— ज्यों कलधौत सुनारकि संगति, भूषन नांउ कहै सब कोई; कं
मिटी तिहिं हेतु वहै फिरि औटि तु कंचन होई; त्यों यह जीव अजीव
यो बहु रूप भयो नहि दोई; चेतनता न गई कबहू तिहिं, कारन ब्रह्म

कहावत सोई ॥ ८ ॥ देखु सखी यह आपु विराजत याकि दसा सब सोहे, एकमें एक अनेक अनेकमें, द्वंद लिये डुविधामहि दो है, आपु लखै अपनो पद, आपु विसारकें आपुहि मोहे, व्यापक रूप यहै घट अतर म कौन अज्ञानुमें कोहे ॥ ए ॥ ज्यों नट एक धरे बहु जेप कला ... तुक देखे, आपु लखै अपनी करतूति वहे नट जिन्न विलोकत पेखे, त्यों नट चेतन राउ विजाउ दसा धरि रूप विसेखे, खोलि सुदृष्टि लखे अपनो इंद विचार दसा नहि लेखे, ॥ १० ॥

अर्थ — जेम कलधोत के० सोनु तेने सोनी घडीने जूषण बनावेछे, घाटना सयोगथी लोको तेने जूषण केहेवा लागेछे पण मूल वस्तु जे कंचन ई जतु रह्यु नथी, केमके, ज्यारे ते घाटने अग्नीमा गाली नाखे त्यारे उ केवाय, तेम आ जीव जे छे, ते अजीवरूप कर्म पुद्गल इत्यादिक बीना लना सयोगथी एक कोडी शाडी सताणु लाख कुल कोडीमा बहुरूपे थयो, पण द्विविध नथी थयो, केमके, चेतनता कई गई नथी, तेमाटे ते स्वरूपमा ब्रह्मज केवाय छे, जेनो विस्तार मोटो तेने ब्रह्म कहीये ॥ ८ ॥ आत्मानी नुजूति, ते सुबुद्धि सखीने केहेछे, हे सखी, जो आ आपणो ईश्वर विराजे ए ईश्वरनी दशा सर्व एनेज शोजेछे, एवी विरुद्धता बीजे ठेकाणे न शोजे वडे एकतामा जोईये तो एक रूप छे, अने अपर सत्ताए देखीये तो अने द्वंद दशामा देखीये एटले अज्ञान दशामां देखीये अने ज्ञान दशामां द्विविध रूप छे, ते द्विविधपणु कहेछे — क्यारे तो पोतानु पद जे पो ने सजारीने जुए, अने क्यारेक तो पोताने विसरीने पोते मोहमा पडे हे एहिज ईश्वर घटने अतर व्यापक रूप छे, तेथी जे जे अवस्थामा व्यापेछे ज्ञाननेविषे पण बीजो कोइ नथी अने अज्ञाननेविषे पण बीजो कोइ नथी ॥ए॥ ना उपर दृष्टांत कहेछे —जेम कोई नट होय ते बहु वेष धरेछे, ने तेते वेषनी करेछे, त्यारे जगत तेने कुतुहल समजे, पण नट पोते पोतानी क्रिया जाणेछे, ने धरेला वेषथी पोते जुदोछे, एवु जाणेछे तेम घटनेविषे चेतन राजा रूप न ते विजाव दशा धरीने रूप विशेष करेछे, पण ज्यारे सुदृष्टि खोली जुए पोतानु पद उलखे अने द्वंद विचारनी दशाने पोते लेखामां गणे नही ॥ १० ॥ हवे चेतन नटनी सघली चेतना एक छे, ते कहेछे —अथ चेतनाउपादय पद कथन

अडिल छंद — जाके चेतनजाव चिदातम सोइ है, और जाव जो धर सु

कोइ है; यों चिनमंमित नाव, उपादे जानते; त्याग जोग परनाव पराये मानते ॥

अर्थः—जेनेविषे चेतन नाव छे, तेने चिदात्मा अथवाचिद्रूप कहिये छे, अने ए चेतनानावथी बीजो नाव जे धारेछे, तेतो कोई बीजो छे, एथी चेतना मंमित जे नाव छे तेतो उपादेय रुप जाणवो, अर्थात् पोतानो करी जाणवो, अने चेतना नावथी जे परनाव छे, ते सघलो त्यागवा योग्यछे ने तेने पारको करी मानी लेवो॥११॥

हवे जे सम्यक् दृष्टि चेतना उपादेय राखीने मोक्ष मार्गना साधक थया तेनी अवस्था कहेछेः— अथ सम्यक्दृष्टि मोठ मारगको साधक कथनः—

सवैया इकतीसाः— जिन्हके सुमति जागी नोगसों नये विरागी, परसंग त्यागी जे पुरुष त्रिनुवनमें; रागादिक नावनिसों जिन्हकी रहनि न्यारी, कबहू मगन व्है न रहे धाम धनमें; जे सदीव आपकों विचारे सरवंग सुद्ध, जिन्हके विकल ता न व्यापे कब मनमें; तेई मोक्ष मारगके साधक कहावे जीव, नावे रहो मंदिरमें नावे रहो वनमें. ॥ १२ ॥

अर्थः— जेना हृदयामां सुबुद्धि जागी, अने विषय नोगथी जे वैरागी थया, अने जे रागद्वेषादिक परनाव छे, तेनो सेवना संग के० त्रण लोकनेविषे तेनो त्यागी जे पुरुष छे, अने जे रागद्वेषादिक नाव पदार्थ छे ते थकी जेनी रेहेणी न्यारी छे, तेथी धाम के० घर अने धन तेनेविषे मग्न थई न रहे, अने जे सदा निश्चय दृष्टीए देखीने आत्माने सर्वांग शुद्ध विचारे छे, तेथी जेना मननेविषे विकलता नही व्यापे, एवी दशा लईने जे जीव रह्या छे, तेज जीव मोक्ष मार्गना साधक केहेवाय, पछी ते नावे तो मंदिरमां रहे, ने नावे तो वनमां रहे, पण तेनी दशा सर्व स्थानके एकज होय छे. ॥ १२ ॥

हवे मोक्षगामी जीव विचक्षण पुरुषनी दशा कहेछेः—अथ विचक्षणदशा वर्णनंः—

सवैया तेईसाः— चेतन मंमित अंग अखंमित शुद्ध पवित्र पदारथ मेरो; राग विरोध विमोह दशा समुझे भ्रम नाटिक पुग्गल केरो; नोग सँयोग वियोग व्यथा अविलोकि कहे यह कर्मज घेरो; है जिन्हकों अनुनौ इहि नांति सदा तिन्हिकों परमारथ नेरो. ॥ १३ ॥

अर्थः— जे परमात्मानेविषे दृष्टि देने एवो विचार करे के, जे मारो पदार्थ छे, ते चेतन मंमित छे, अने अखंमित छे, अछेद्य छे, अनेद्य छे, अने शुद्ध छे, पवित्र छे, अने एथी जुदी जे राग द्वेषने मोहनी दशा थई रहीछे, तेने तो भ्रमरुप मिथ्याजाल पुद्गलनुं नाटक करी समजे छे, अने पंचेंद्रियना नोगसंयोग ने वियोग एवी बाह्य

त्माने विषे व्यथा अवलोकी ने एवुं कहे के, एतो कर्मनो पेरो छे, कर्मनो अव एवो अनुभव जेने नित्य रहे, तेने परमार्थरूप मोक्ष ते सदा नेरो के० नजीक छे।

हवे जे मोक्षथी दूर ते चोर, ने मोक्षथी निकट ते साहुकार एवु कहेछे—

अथ चोर तथा साहुकार वर्णन —

दोहरा — जो पुमान परधन हरे, सो अपराधी अज्ञ, जो अपनो धन सो धनपति धरमज्ञ ॥ १४ ॥ परकी संगति जो रचे, बंध बढावे सोइ, जो तामें मगन, सहज मुक्त सो होइ ॥ १५ ॥

अर्थ —जे पुमान के० पुरुष परधनने हरे, ते अपराधी जीव अज्ञ के० कहीये, ने जे पोतानाज धननो व्यवहार राखे, ते धनपती कहिये, धर्मज्ञ के० मेने जाणनार कहियें ॥ १४ ॥ तेम जे परवस्तुनी संगतीए राचे ते चोर ने तेज पोताना बंधने वधारे, अने पोतानी सत्तामा सदाकाल मगन रहे मुक्तरूप थाय ॥ १५ ॥

हवे वस्तु कोने कहिये अने सत्ता कोने कहिये ते बतावेछे —

दोहरा — उपजे विनसे थिर रहे, यह तो वस्तु बखान, जो मरजादा सो सत्ता परवान ॥ १६ ॥

अर्थ — उत्पत्तिवंत, विनाशवंत, स्थिरतावंत एतो वस्तुनु वखाण छे, अने वस्तुनी मरयादा जे परिमाण ते धर्म ने सत्ता कहीये, ए अनुभव प्रमाण मानवुं।

हवे केवा केवा द्रव्यनी केवी केवी सत्ता छे ते कहेछे —

अथ सत्ता व्यवस्था वर्नन —

सवैया इकतीसा— लोकालोक मान एक सत्ता है आकाश दर्व, धर्म दर्व सत्ता लोक परिमिति है, लोक परवान एक सत्ता है अधर्म दर्व, कालके असंख सत्ता अगनिति है, पुदगल शुद्ध परवानकी अनंत सत्ता, जीवकी सत्ता न्यारी न्यारी थिति है, कोउ सत्ता काहुसों न मिले एकमेक होई, सबै हाय यों अनादिहीकी थिति है ॥ १७ ॥

अर्थ — आकाश द्रव्यनी मर्यादा लोकालोक लगे एक छे नथी आकाश एक सत्ता छे, अने धर्मास्तिकाय द्रव्य लोकप्रमाण एक रूप छे तेथी धर्म एक सत्ता छे, अने अधर्मास्तिकाय द्रव्य पण लोक प्रमाण एक रूप छ नथी ए द्रव्यनी एक सत्ता छे, अने कालना द्रव्यना अणु छे ते लोकाकाश प्रदेश प्र० असंख्यात छे, तेथी काल अणुनी असंख्यात सत्ता छे ए रहतु दिगंबर

, अने योग शास्त्रमां पण कह्युं छे, अने लोकविषे पुग्गलरूपी शुद्ध परमाणुनी
ण अनंत सत्ता छे, अने लोकविषे जीव अनंत छे, तेथी जीवनी पण अनंत सत्ता
तेथीज जीवाजीवनी जुदी जुदी क्षेत्रावगाहना छे, जे द्रव्यनी जे सत्ता होय
बीजी कोई द्रव्यनी सत्ता साथे मळे नही, जो एकमेक थई जाय तो सर्व सत्ता
सहाय पणे वर्त्ते, माटे एकमेक न थाय एवी अनादि काळनी स्थिति छे. ॥१७॥
हवे चेतन द्रव्यनी सत्तानुं वर्णन करेछे.— अथ चेतन सत्ता वर्ननं:—
सवैया इकतीसा:— एइ छहो द्रव्य इन्हहीको है जगतजाल, तामें पांच जड
चेतन सुजान है; काहुकी अनंत सत्ता काहुसों न मिले कोई, एक एक सत्ता
अनंत गुन गान है; एक एक सत्तामें अनंत परजाय फिरे, एकमें अनेक इह
परवान है; यहे स्यादवाद यहै संतनिकी मरजाद, यहे सुख पोष यहै
को निदान है. ॥ १८ ॥
र्थः— ए छए द्रव्ये करी एथीज जगतजाल वर्त्तेछे, ते छनेविषे पांच द्रव्य
ी छे, ने एक चेतनरूपी द्रव्य छे ते जाणनार छे, अंही पुद्गलनी अनंत
ही, अने जीवनी अनंत सत्ता कही, एवा अनंतपणे करीने कोईनी सत्ता
थे मळे नही, एटले जुदी जुदी अनंत सत्ता छे, अने प्रत्येक सत्तामां अनंत
न छे, अने एक एक सत्तामां अनंत पर्याय अनंत अवस्था भेदफिरे
वें एकमां अनेक कह्यु ते एरिते छे, स्याद्वाद मतमां ए वात प्रमाण छे,
रुषना वचननी पण एज मरियादा छे, तथा एज मत सुखनुं पोषण क
ने मोक्षनुं निदान एटले मूळ कारण छे. ॥ १८ ॥
चन थकी जे वस्तुनो धर्म ग्रह्यो जाय तेज सत्ताधर्म कहीये तेथी
यनी सत्ता कहेछे.— अथ एक जीव द्रव्यसत्ता वर्ननं:—
तीसा:— साधि दधि मंथनि अराधि रसपंथनिमें, जहां तहां ग्रंथ
सोर है; ज्ञान भानु सत्तामें सुधा निधान सत्ताहीमें सत्ताकी दुर
सुख भोर है; सत्ताको सरूप मोख सत्ता भूलें यहै दोष, सत्ताके उ
वहू ओर है; सत्ताकी समाधिमें विराजि रहे सोई साहु. सत्तातें
सोई चोर है. ॥ १९ ॥
विषे छती देखाय, जेम दहीना मंथनमां घीनी सत्ता साधिये. जे औ
तो तेथी वस्तु नीपजे छे, माटे रस मार्गमां सत्ताविना सिद्ध नथी
तेने सत्ता कहिये, शास्त्रमां ज्यां त्यां ग्रंथोनेविषे सत्तानोज सोर छ

शब्दले ज्ञान रूपी नानुनो उदय जीवनी सत्तामां निपजे, वली ७
सत्तामाज पामिये, निधान पण सत्तामांज पामिये जे सत्तानुं ज्ञान के०
सध्या रूपछे, अने जे सत्तानी मुख्यताछे तेज जोर के० प्रभात रूपछे,
नु जे स्वरूप छे तेज मोक्ष छे, अने सत्ताने छुली जवु एज दोषरूप छे
न करवाथी चीहोवर के०चारे तरफ धामधुम नीपजे, जे पोतानी
तेमा बिराजमान थई रहे तेने साहुकार कहिये, अने जे पोतानी सत्ताथी
अन्यनी सत्ताने ग्रहे तेने चोर कहीये ॥ १९ ॥

हवे सत्तानी समाधिनु वर्णन करेछे —अथ समाधि वर्नन —

सवैया इकतीसा — जामे लोक वेद नाहि थापना उछेद नाहि पाप
हि क्रिया नाहि करनी, जामे राग दोष नाहि जामें बंध मोष नाहि,
स न आकास नाहि धरनी, जामे कुलरीत नाहि जामें हारजीत
शिख नांहि विष नाहि नरनी, आश्रम वरन नाहि काहुकी सरनि
द्ध सत्ताकी समाधि भूमि वरनी ॥ २० ॥

अर्थ — जेमा लौकिक वेदवु नथी, अने जेमा स्थापनानो उछेद नथी.
पाप पुन्यनो खेद नथी, जेमा कोई क्रिया करणी नथी, जेमां राग द्वेष
बंध मोक्ष नथी, जेमा प्रभुताने दासपणु नथी, जेमा आकाश अने धरती
जेमां कुलनी रीत नथी, जेमा हारने जीत नथी, जेमा गुरु अने
मां विष नरनी एटले चालवु हालवु नथी, जेमां कोई आश्रम व्यवहार
था वर्ण व्यवहार नथी, जे कोईनी शरण रूप नथी एवी शुद्ध सत्तानी
माधिरूप वरणवी छे एटले स्वरूपनी शुद्ध समाधिने विषेज शुद्ध

हवे मिथ्यादृष्टिने चोर अने अपराधी कही देखडावेछे —

अथ मिथ्यादृष्टि अपराधि यह कथन —

दोहरा — जाके घट समता नही ममता मगन सदीव, रमता राम
ही, सो अपराधी जीव ॥ २१ ॥ अपराधी मिथ्यामती, निरदै हिरदै
रकों माने आतमा, करे करमको बंध ॥ २२ ॥ झूठी करनी आचरे, झूठे
आस, झूठी भगती हिय धरे, झूठो प्रभुको दास ॥ २३ ॥

अर्थ — जेने केवल जाणपणु जे समता ने समाधि ते नथी अने ने
वस्तुनी ममताविषे मगन थई रहे, ने निज घट अथवा स्वरूपनविषे रमी
यो जे आत्मराम तेने जेणे जाण्यो नथी तेनेज अपराधी चोर जीव कहीये

अर्थः— जे पर वस्तु ज्ञेय ते अपराधी ने तेज मिथ्यामति. तेज निरदय ने ते
ज्ञानो ग्रंथकर्त्ता. एटले जे पररूप पुद्गलने आत्मा माने ते कर्मनो बंध करेछे श
ज्यांसुधी पोतानी वस्तुने न जाणे त्यांसुधी तो जे क्रिया आचरे ते सर्व फू
छे. अने तेने जे मोक्ष सुखनी आशा छे. ते सर्व फूटी छे. पोताना प्रभु जा
॥ विनानी जे भक्ति क्रियामां धरे छे, ते सर्व फूटी जाणवी, अने परमेश्वरने ठ
स्याविना दासपणुं राखवुं ते पण सघळुं फूटुं छे ॥ २३ ॥
हवे मूढ लोकना फूटपणानी व्यवस्था कहे छे — अथ मूढ व्यवस्था यथाः—
सवैया इकतीसाः— माटी भूमी सैलकी सु संपदा वखाने निज. कर्ममें अमृत
ने ज्ञानमें जहर है. अपनोन रूप गहे औरहीसों आपु कहे, साता तो समाधि
ाके असाता कहर है; कोपको कृपान लिये मान मदपान किये, मायाकी म
रि हिये लोभकी लहर है, याही भांति चेतन अचेतनकी संगतिसों, साचसों विमु
भयो झूठमें बहर है ॥ २४ ॥ तीन काल अतीत अनागत वरतमान, जगमें
खंडित प्रवाहको महर है; तामें कहै यह मेरो दिन यह मेरी घरी, यह मेरोई
मेरोई पहर है: पेहको खजानो जोरे तासों कहे मेरो गेह, जहां वसे तासों
कहे मेरोई सहर है; याहि भांति चेतन अचेतनकी संगतिसों, साचसों विमुख
भयो झूठमें बहर है ॥ २५ ॥
अर्थः— सात धातु जे छे पहाडनी धरतीनी माटी जेवी छे, तेने संपत्ति करी व
खाणे छे. पोतानी अशुद्ध क्रियामां अमृत जाणे छे, अने ज्ञानमां फेर समजे छे,
एटले क्रिया थकी सिद्धि जाणे, ने ज्ञान थकी नही जाणे. जे पोतानुं चिदानंद
रूप छे. तेने ग्रहे नही, पण शरीरादिक जे छे तेने आत्मारूप जाणेछे. अने जे
साता वेदनीय उपजे छे. तेने तो समाधि करी जाणे छे, असाता वेदनीयने कहर
उपद्रव माने छे, कोपनुं कृपान जे खड्ग ते लईने रहे छे, मान ने अहंकार
मद पीईने रहेछे, हैयानेविषे मायानो मरोड राखेछे, लोभनी फेर खाया करे
वी रीते अचेतननी संगती थकी एटले जड पुद्गलनी संगतीथी साच थकी
थयोछे, ने फूठमां वहर हे केण्तत्पर थई रह्योछे, ॥२४॥ अर्थ स्पष्ट. २५
चक्र दृष्टि साहुकारनी व्यवस्था कहे छे — अथ सम्यक्दृष्टि व्यवस्थाकथनः—
ा.— जिन्हके मिथ्या मति नही, ज्ञान कला घटमांहि; परचे आतम राम
अपराधी नाहि ॥ २६ ॥

अर्थ – जेनी मिथ्यामति नाश पामीने घटनेविषे ज्ञान कला प्रगटी
आत्मारामने ओळख्यो छे, ते लोक अपराधी नथी साहुकार छे ॥ २६ ॥

हवे ज्ञानीनी व्यवस्था कहे छे – अथ ज्ञानी यथा –

सवैया इकतीसा – जिन्हके धरम ध्यान पावक प्रगट भयो, संसे मोह
विरप तीन्यो बढे है, जिन्हकी चितौनि आगे उदे स्वान भूसि भागे लागे न
ज्ञान गज चढे है, जिन्हिकी समुझिकी तरग अग आगममें आगममें निपुन
तममें कढे ह, तेई परमारथी पुनित नर आठो जाम राम रस गाढ करे
पढे है ॥२७॥ जिन्हकी चिहुटी चिमटासी गुन चूनवेकों कुकथाके सुनवेकों
कान मढे है, जिन्हको सरल चित कोमल वचन बोले सोम दृष्टि लिये
केसे गढेहै, जिन्हिके सगति जगि अलख अराधिवेकी परम समाधि साधि
वढे हैं, तेई परमारथी पुनित नर आठों जाम, राम रस गाढ करे यहेपाठ प

अर्थ – जेना हैयामा धर्म ध्यानरूप पावक के० अग्नि प्रगट थयो, तेथी सं
ह अने विभ्रम ए त्रणे वृक्षरूप छे, ते वढे के० बळी गया छे जेनी निगा
ज्ञानदृष्टि आगल उदयरूप कुतरो नसीने भागी जाय छे अने ज्ञानरूपी
उपर चढी रहेले, तेथी कर्मरूप रज लागती नथी बीजानु न आगम आ छे,
जेनी समजना तरग उठी रह्या छे एवा आगम के० जैन वाणीमा निपुण थ
ने अध्यात्म ज्ञानमा पूर्ण थयो छे, तेनेज सम्यग्दृष्टि कहिए परमार्थने
पुनित के० पवित्र रूप थयो जाणवो आत्मारामना अनुभव रसमा आठे
गढे के० सपूर्ण मग्न थई, एज पाठ पढे छे एटले भणे छे, ॥ २७ ॥ वली
मटी के० हाथनी चिमटी अथवा चिपीयो तेवडे कई नानी वस्तुन पकडी
ये, तेम पारका गुण चुटी लेयाने जेनी एवी चपटी छे अने विकथा सांभळवा
अने कानने बध करी राखे छे जेनु चित्त सरल ने निष्कपटी छे ने निरहंकारी
कोमल वचन बोले छे काम क्रोधादिक विकारविना साम्य दृष्टी राखे छे वली
सेगढेहें के० मीणना घडाजेवु हृदय कोमल राखे छे अने पोताना
स्वरूपने साधवाने जेनी सुमति जागी छे, अथवा आत्मामा लीन
थई छे, तेने साधवाने जेनो मन वध्यो छे तेज सम्यक दृष्टि परमार्थना
न के० पवित्र रूप थई रह्या छे, ने तेज आत्मारामना अनुभव रसमा
ढ मग्न थई एज पाठ पढे छे ॥ २८ ॥

हवे समाधिनुं स्वरूप कहे छेः— अथ समाधि वर्णनः—

दोहराः— राम रसिक अरु राम रस. कहन सुननको दोइ; जब समाधि प[...]
[...] सोइ. तब दुविधा नहि कोइ. ॥२९॥ नंदन वंदन थुति करन. श्रवन चिंतवन जा[...]
[...]न पढावन उपदिसन. बहुविध क्रिया कलाप. ॥ ३० ॥ शुद्धातम अनुभौ जह[...]
[शुभ]आचार तिहि नांहि; करम करम मारगविषें. शिव मारग शिवमांहि. ॥ ३१ ॥

अर्थः— आत्माराम जे छे ते रसिक छे० रस भोगता छे. अने राम छे० स्वरूप ते [...] छे, केवाने सांभळवाने रसिकने रस बेउ छे. पण ज्यारे एनेविषे समाधि प्र[...] थाय छे त्यारे बे पणुं नथी रहेतुं. त्यारे तो रसिक अने रस ए बे एकज छ[...] [...]रूपाराधन छे० रसिक अवस्था थवानो एटली क्रिया करे छे के, नंदन छे० आ[...] [...] माने छे; वंदन छे० प्रणाम करे. थुती छे० गात गातना गुणनी स्तुती करे छे; [...]ने श्रवण गुण सांभळी एहुंज चिंतवन करे, एनोज जाप जपे छे. भणे भणावे [...] उपदेश, एवी रीतें रसिक अवस्थानां गात गातना क्रिया कलाप छे । ३० ॥ पूर्वे कही जे क्रिया तेने करतां करतां जहां शुद्ध आत्मानो अनुभव थाय त[्यां] [...] शुभाचार छुटीजाय. एम व्यवहार ते अर्थानी दशानां छे; कर्म जे छे ते कर्म [मा]रगमांज रहे. एटले संसार मार्गनेविषेज रहे. शुभ कर्म पण संसार मार्गनां छे [...]ने शिव मार्ग ते शिवमांहे एटले शुद्ध आत्माने विषेज छे. ॥ ३१ ॥

चोपाईः— इहि विध वस्तु व्यवस्था जैसी. कही जिनिंद कही मैं तैसी; जे प्र[...]
[...] संजति मुनि राजा, तिनिको शुभाचारसों काजा. ॥ ३२ ॥ जहां प्रमाद द[...]
[...] नहिं व्यापे; तहाँ अवलंब आपनो आपे. ता कारन प्रमाद उतपाती, प्रगट
[...]ह मारगको घाती. ॥ ३३ ॥ जे प्रमाद संजुत गुसांई; उठहि गिरहि गिंदुककी
[...] जे प्रमाद तजि उद्धत होही; तिनिको मोक्ष निकट द्रग सोही. ॥ ३४ ॥
[...]में है प्रमाद जबताई. पराधीन प्रानी तबताई; जब प्रमादकी प्रभुता नासै
[...] प्रधान अनुभौ परकासै. ॥ ३५ ॥

अर्थः— ए रीतें श्री जिनेंद्र देवे वस्तुनी व्यवस्था कही छे. ते तेवीज आ[...] [...]थी में पण कही छे. अने जे मुनिराज प्रमाद दशामां छे. तेने तो शुभाचार [...] शुभ क्रियानुं आलंबन जोगवीज राखे तिहि थाय ॥ ३२ ॥ [...]ने जे मुनिराजने आत्माना अधिक वीर्यपणे जीवे प्रमाद दशा न व्यापे [...]नांहे आलंबन पोते छिरे. तेमाटे प्रमाद तो उतपाती छे, अने प्रगट रीते मो[क्ष] [...]नो घात करनार छे, अने अंतरायनो करनार छे. । ३३ ॥

गुसांई देशी जाषानो शब्द छे, एनो अर्थ मुनिराज थाय छे, जे मुनिराज सयुक्त छे, ते तो गिडुक के० दडानी रीते उठे छे, ने पडे छे, पण मे नही अने जे प्रमाद छोडीने अप्रमादपणे उठीने उजा रहे छे, तेने ही नजीक मोक्ष छे ॥ ३४ ॥ ज्यांहां सुधी घटमां प्रमाद छे, त्यांसुधी ते न छे, अने ज्यारे आत्मानी शक्ती जागे छे, त्यारे प्रमादनी प्रभुता नाश त्यारे तो पोताना प्रधान अनुजवनो प्रकाश थाय छे ॥ ३५ ॥

दोहरा – ता कारन जग पथ इत, उत शिव मारग जोर, परमादी अपरमाद सिव ओर॥ ३६ ॥ जे परमादी आलसी, जिनके विकलप भूरि; थिल अनुजौ विषे, तिन्हिको सिवपथ दूरि ॥ ३७ ॥ जे अविकलपी अनुजवी चेतना युक्त, ते मुनिवर लघु कालमे, होहि करमसों मुक्त ॥ ३८ ॥ जे आलसी, ते अनिमानी जीव, जे अविकलपी अनुजवी, ते समरसी ॥

अर्थ – तेमाटे जगतनो मार्ग प्रमादीनी तरफ छे, अने अप्रमादीनी मार्ग छे, केमके, जे प्रमादी होय ते जगतने जुए अने अप्रमादी मुक्ती जुए छे ॥ ३६ ॥ जे प्रमादी छे, ते आलशी छे तेने जूरि के० घणा विकल्प छे, अने पोताना अनुजवमां तेने शिथिलपणुं रहे छे, अने तेने मुक्ति सरूपाचरण दूर छे ॥ ३७ ॥ अने जे विकल्पविना अनुजवमां वसे छे, ने चेतना युक्त छे, ते मुनीश्वर थोडा कालमां कर्मथी मुक्त थाय छे ॥ ३८ ॥ मादी अने आलशी छे तेने अल्पबुद्धियी अनिमानी कहियें ने जे विकल्प त पोताना अनुजवमां छे, तेने तो सदाय समरसी कहियें ॥ ३९ ॥

हवे अनिमानी तथा ज्ञानीनी अवस्था उपर दृष्टांत आपेछे –

अथ अनिमानी तथा ज्ञानी व्यवस्था कथन –

कवित्त ३२ –जैसे पुरुष लखे पहार अढि, जूचर पुरुष तांहि लघु लग, रुप लखे ताको लघु, उतर मिटे ज्ञुहुको भ्रम जग्ग, तैसे अनिमानी उन्नतगन, जीवकों लघुपद दग्ग, अनिमानीकों कहे तुछ सब, ज्ञान जगे समतारस जग्ग।

अर्थ– जेम कोई माणस पहाड उपर चडयो होय तेने जूचर क० तलाट माणसो न्हानोछे एम जुए, अने तलाटी वाला माणसने पहाड उपर जुए, अने पछी पहाड उपर चडेलो हेठे उतरी तलाटी वानान मने त्यारे भ्रम नाना पणानो दूर थाय, तेम अनिमानी पुरुष उंची गरदन राखनारा जीवने नाना जुए, तुछ जाणे, अने बीजा पुरुषो ते अनिमानी पुरुषने तुछ

म अरपरस विचारमां विषमता रहे छे. ते ज्यारे ज्ञान जागे त्यारे वेदना मनमां षमता मटीने समपणुं आवी जाय ॥ ४० ॥

हवे एकला अभिमानीनी व्यवस्था कहे छेः— अथ अभिमानी यथा.—

सवैया इकतीसाः— करमके भारी समुझे न गुनको मरम, परम अनीति अधरम रीति गहे हैं; होहि न नरम चितगरम घरमहुते, चरमकी दृष्टिसों भरम भूली रहे है; आसन न खोले मुख वचन न बोले सिर नाएहू न मोले मानो पाथरके चहे है; देखनके हाउ भव पंथके वटाउ ऐसें, मायाके खटाउ अभिमानी जीव कहे है.४१

अर्थः—जे करम बंधथी अती भारी छे. छेपने गुण जाणेछे, पण गुणनो मर्म जाणतो नथी. अने परम अन्याय तथा अधर्मनी रीत ग्रही राखेछे. चित्तनेविषे नरमाश तथा दया परिणाम नथी. छेपनो अती घर्म ताप छे, तेथी गरम रहेछे, ज्ञान दृष्टी नथी अने चर्मरूप दृष्टीवडे भरममां भूल्यो फरे छे. कोई विकट आसन बांधे तेने खोले नही, ने मोढेथी वचन बोले नही, मौन व्रती रहे, तेने ज्ञानी महा पुरुष जाणीने कोई माथुं नमावे, तो तेनो सत्कार ने अंग चेष्टा पण न करे, जाणि पथर थवानीज इछा करतो होय नीवली जेम बाळकने भरावबाने हाउ कहीये छइये तेम लोकोने भरावबाने वेष धरी हाउ बनीने वेसे, अने भव भ्रमणना मार्गमां वटाउना सरखो चाले, एरीते माया जाळना खाटनारा अभिमानी जीवने कहीये ॥ ४१ ॥

हवे ज्ञानी जीवनी व्यवस्था कहे छेः— अथ ज्ञानी यथा.—

सवैया इकतीसाः— धीरके धरैया भवनीरके तरैया भयभीरके हरैया वर वीर ज्यों उमहे हैं; मारके मरैया सुवीचारके करैया सुख ढारके ढरैया गुनलोसों लह लहे हैं; रूपके रीझैया सबनैके समुझैया सबहीके लघुभैया सबके कुबोल सहेहैं वामके वमैया दुखदामके दमैया ऐसे रामके रमैया नर ज्ञानी जीव कहे है ॥४२॥

अर्थः—धीरजने धरनार, संसार सागरने तरनार, भवभीडने हरनार, मोटा सूर वीरनी परे पोताने साह्य आपवाने उमंगी रह्याछे, कंदर्पने मारनार, भला विचारनुं करनार, सुख समाधिना ढाळामां ढळनार, आत्माना गुणनो लव एटले अंस तेमां लहलिहि रह्या छे, आत्मरूपना रीझवनार, सर्व नयना सारनो रस समझनार, निरहंकारी पणे सर्वना नाना भाई थई रह्याछे. क्षमावंतपणे सर्वना दुष्ट वचन सहेछे. वाम के० स्त्रीने वमैया के० छोडनार, दुःखनो परंपराना दमनार, एवा आत्मारां मने विषे रमनारा मनुष्यने ज्ञानी जीव कहीये ॥ ४२ ॥

हवे शुद्धात्मना अनुनवनी प्रशंसा करेछे —अथ शुद्धात्म

चोपाई — जे समकिती जीव समचेती, तिन्हिकी कथा कहों तुमसेती, प्रमाद क्रिया नहि कोई, निर्विकल्प अनुनो पद सोई ॥४३॥ परग्रिह त्याग थिर तीनो, करम बंध नहि होइ नवीनो, जहां न राग दोष रस माहे, पमारग सुख सोहे ॥ ४४ ॥ पूरव बंध उदे नहि व्यापे, जहां न भेद पापे, दरव नाव गुन निर्मल धारा, बोधविधान विविध विस्तारा ॥४५ न्हिके सहज अवस्था ऐसी, तिन्हिके हिरदे डुबिधा केसी, जे मुनिछिपक चढि धाये, ते केवलि नगवान कहाये ॥४६॥ दोहरा — इहिविधि जे अष्ट करम वनदाहि, तिन्हिकी महिमा जो लखे, नमे बनारसि ताहि ॥

अर्थ — जे समकिती जीव छे ते समचेती के० वीतरागपणे समतावंत हो नव्य प्राणी, तेनी कथा हु तमने कहुछु जाहा कोई प्रमादनी क्रिया निर्विकार निर्विकल्प अनुनव पद कहीये, एटले अनुनवमा विकल्प नथी जहां परिग्रहनो त्याग छे, अने त्रणे जोग स्थिर छे, त्या नवीन कर्मनो थतो, वली जहा जीवने राग द्वेष रस मोह नथी, तेज प्रगटपणे मोक्ष ख के० प्रारन छे ॥४४॥ वली जहा पुर्वे जे कर्मबंध छे, तेनो उदय नथी, जांहां पुन्य पापना नेदनो विचार नथी, अने जाहा साधुना सतावीस णे नावपणे निर्मल धाराये वही रह्या छे, वली जाहा बोधविधान के० कार नात नातना विस्तारमा छे ॥४५॥ जेनी एवी सहज अवस्था थई हृदयमा आत्म ओळखवानी डुविधा केम रहे? अने एज अवस्थामां जे ज क्षपक श्रेणी चढी उर्ध्व मुख धाये तेतो केवली नगवत जाणवा ॥४६॥

अर्थ — ए रीते करी अष्ट कर्मरूप वनने बालीने पूर्ण आत्मारूपमां जे अने तेना महिमाने जे सत् पुरुष होय तेहिज जुएछे, एटले सत्य पणे तेने बणारसीदास नमस्कार करेछे ॥ ४७ ॥

हवे मोक्ष पदार्थनी उत्पत्तिनो क्रम कहेछे — अथ मोक्ष उत्पत्ति वनन-

छप्पय छंद —नयो शुद्ध अंकूर, गयो मिथ्यात् सूर नशि, क्रमक्रम महज निम शुक्लपक्ष शशि, केवल रूप प्रकाशि, नासि सुख राशि धरम धुव, न दिनि आव, त्यागि गतनाव परम हुव, इह विधि अनन्य प्रभुता धरन सागर नयो, अविचल अखंम अननय अखय, जीव दरव जगमहि जयो ॥

अर्थ —शुद्धतानो अंकुर प्रगट थतां मिथ्यात सूर्यनो नाश पाम्यु, तथा

जवालीया परववाडीयामां चंद्रमां क्रमे क्रमे उद्योतवंत थायछे, एरीते आत्म
क्रमे उद्योत थतां केवल ज्ञान रूपनो प्रकाश थाय, अने आत्मानो नि
धर्म सुख समुद्र ते नासे, ते पछी आयुष्य कर्मनी स्थिती पूर्ण करीने अ
गतिनो नाव छोडीने परमात्मारूपें थाय, एरीते अनन्य प्रभुता एटले सर्व
ता धारण करे, कोनी पेठे तो जेम पाणीनी बुंद बुंद एकठी मली समुद्र
जेम आत्मा गुणना अंस क्रमे क्रमे प्रगट करतो पूर्ण थयो, ते पछी अविच
विक अजय ने अक्षय एवुं जीव द्रव्य जगतनेविषे सदा जयवत थायछे. ॥ ४

हवे अष्ट कर्मनो नाश थयेथी जे आत्माना सहज आठ गुण प्रगट थायछे
कहेछेः– अथ अष्ट कर्म नाशतें अष्ट गुन प्रकाश वर्ननं.–

सवैया इकतीसाः– ज्ञानावरनीके गये जानिये जु है सु सब, दंसनावरन
तें सब देखिये; वेदनी करमके गयेते निरावाध रस, मोहनीके गये शुद्ध च
विसेखिये; आउ कर्म गये अवगाहन अटल होइ, नाम कर्म गयेते अमूरती
क पेखिये, अगुरुलघुरूप होई गोत कर्म गये, अंतराय गयेते अनंत बल लेखियें. ४९

अर्थ.–ज्ञानावरणीय कर्म नाश थता लोकालोकमांजे वस्तु छे, ते सर्व जणाय, एटले,
केवल ज्ञान प्रकाश थाय, अने दर्शनावरणीय कर्मनो क्षय थवाथी लोकालोकना भाव
सामान्यपणे जोईये, एटले केवल दर्शनगुण प्रगट थाय, अने वेदनीय कर्मना क्षय
निरावाध रस उपजे एटले आत्मा वाधपणाथी मुक्त थाय, ते अवाधपणे अनं
सुखरूप गुण उपजे, वली मोहनीय कर्मनो नाश थयेथी विशेषपणे शुद्ध चारित्र
... थाय, एटले यथाख्यात चारित्र स्पष्ट गुण होय, आयु कर्मनाश थयेथी अव
गाहनानी सादि अनंत स्थिति थाय, (आयुकर्मगते निश्चला स्थिनिर्मवति) नाम कर्म
नाश थयेथी अमूर्त्तिकपणुं जीवनुं शुद्ध स्वरूप उपजे, गोत्र कर्मनो क्षय थयेथी
अगुरुलघु गुण उपजे, जेथी जीवमां लघुपणु तथा गुरुपणु न होय. अने अंतराय
कर्मनो नाश थयेथी अनंत वल उपजे. एटले अनंत वीर्यपणानो गुण उपजे छे. ए
आठ गुण उपजे. ॥ ४९ ॥

इति श्री नाटक समयसारनो बालबोधरूप नवमो मोक्ष द्वार समाप्तः

दोहरा.– इति श्रि नाटिक ग्रंथमें, कह्यो मोक्ष अधिकार; अब बरनों संक्षेपसों,
सब विशुद्धीद्वार. ॥ ५० ॥

टले वस्तुनो स्वभाव विचारीने परभावने त्यागीने पोताना सहज,
छे, तेथी सुखी दुःखी इत्यादि विकल्पविना कर्म संयोगरूप उपाधिविना,
तमाने आराधीने ज्ञान दर्शन चारित्ररूप जोगनी जुगति साधी समाधि
हज स्वरूपमा समायछे ॥ ५६ ॥

हवे अनोक्ता जीवनी अवस्थानुं वर्णन करेछे —अथ जीव अनोक्ता

सवैया इकतीसा — चिनमुद्रा धारी ध्रुव धर्म अधिकारी गुन, रतन
हारी कर्म रोगको, प्यारो पन्दितनिको हुस्यारो मोख मारगमें न्यारो
जियारो उपयोगको, जाने निजपर तत्त रहे जगमें विरत्त गहे न ममत
काय जोगको, ता कारन ज्ञानी ज्ञानावरनादि करमको, करता न
न होइ नोगको ॥ ५७ ॥ दोहरा — निरनिलाष करनी करे, नोग
नांहि; तातें साधक सिद्ध सम, करता जुगता नांहि ॥ ५८ ॥

अर्थ — चेतना चिन्हनो धरनार, निश्चल स्वभाव ज्ञातापणु तेनो
ज्ञानादिक गुणरूप रत्नना भंडारनो भंडारी छे, कर्मरूप रोगनो विनाश
पंडितनो प्यारो एटले तत्व ज्ञानीने वल्लभ, मोक्षमार्गमा हुशीयार केव
न, पुद्गलिक धर्मथी जुदो रेनार, मतिश्रुत प्रमुख उपयोगनु अजवालु जेना
मां थयुंछे, पोताना अने परका सर्व तत्वनो जाणनार, जगतमां विरक्त
एटले वैरागी, मन वचन ने कायाना योगनी ममता नही राखनार माटे ज्ञानी
ज्ञानावरणी प्रमुख कर्मनो कर्त्तापण नथी, अने दुःख सुखना नोगनो नाक्ता
॥ ५७ ॥ इच्छाविना क्रिया करवी, अने घटपिंडमां नोगनी रुची नही राखवी,
मुक्तिनो साधक पुरुष सिद्ध समान कह्यो, अने ते कर्त्ता तथा नोक्ता नथी ॥

हवे अहंबुद्धि थकी कर्त्तापणु थायछे ते कहेछे — अथ अहंबुद्धि वर्नन

कवित्तछंद — ज्यों हिय अंध विकल मिथ्यात धर मृषा सकल विकल्प
वत, गहि एकत पछ आतमको, करता मानि अधोमुख धावत, त्यों जिनम
रख चारित कर, करनी करि करतार कहावत, वंछित मुक्ति तथापि मू
विनु समकित नवपार न पावत ॥ ५९ ॥ चोपाई — चेतन अरु जीव
लीन्हा, पुद्गल करम अचेतन चीन्हा, वासी एक खेतके दाऊ, यदपि
मिले नहि कोऊ ॥ ६० ॥ दोहरा — निजनिज नाव क्रिया सहित,
व्यापि न कोइ, करता पुद्गल करमको, जीव कहांसों होइ ॥ ६१ ॥

अर्थ — जेम कोइ हृदय अंधपुरुष विकल मिथ्याधारीने हैयामां

जावे, ते सर्व जूठा छे ते क्रियावादीनो एकांत पक्ष ग्रहीने आत्माने कर्त्ता मानीने अधोमुख के० नीची गतीने पकडी रह्योछे, एवो जे जिनमती छे ते भाव चारित्र विना अने द्रव्य चारित्रयुक्त करणी करेछे, ने क्रिया करण एटले शुभ क्रियानो कर्त्ता पोते केहेवायछे, ते मुक्तिने वांछे तोपण मूढमतिछे, भवनो पार समकित विना पामतो नथी. ॥ ५९ ॥ अने जीवनो अंक के० चिन्ह चेतना जाणवी; अने पुद्गल तथा कर्म ए बेउने जड जाणवा. चेतन अने अचेतन बेउ एक क्षेत्रा वगाहीछे एटले एक क्षेत्रवासी छे, तथापि कोई कोईथी मळे एवा नथी. ॥६०॥ जे पदार्थ छे ते पोतपोताना भावनी क्रिया सहित रहे छे, जेमां व्यापी रहे ते वस्तुने व्याप्य कहीये अने व्यापी रहेनार पदार्थने व्यापक कहीये तेथी पुद्गल व्याप्यमां जीवनुं व्यापकपणुं नथी, माटे पुद्गलीक कर्मनो कर्त्ता जीव क्यांथी थाय अर्थात् न ज थाय. ॥ ६१ ॥

हवे व्यवहारमां जे रीतें जीवनुं कर्त्तापणुं छेछे ते जाणवेछेः—अथ कर्त्ता कथनः—

सवैया इकतीसाः—जीव अरु पुद्गल करम रहे एक खेत, जद्यपि तथापि सत्ता न्यारी न्यारी कही है; लछन सरूप गुन परजे प्रकृति भेद, दुहूमें अनादिहीकी दुविधा व्हैरही है; एते परि भिन्नता न भासे जीव करमकी, जौलों मिथ्या भाउ तौलों औंधी वाउ वही है; ज्ञानके उदोत होत ऐसी सूधी दृष्टि भई, जीव कर्म पिंडको अकरतार सही है. ॥ ६२ ॥ दोहरा.— एक वस्तु जेसी जु है, तासों मिले न आन; जीव अकर्त्ता करमको, यह अनुभौ परवान. ॥ ६३ ॥

अर्थः— जेम आकाश प्रदेशमां पुदगल कर्म अवगाहि रहे छे; तेज आकाश प्रदेशमां जीव प्रदेश पण अवगाहि रहे छे. एम जीव अने पुद्गल एक क्षेत्रना वासी छे, तथापि चेतननी सत्ता अने जडनी सत्ता ए बे जुदी छे. अनादि काल नी लक्षण भेदवडे स्वरूप भेदवडे गुणपर्यायवडे ने प्रकृति भेदवडे ए बेउनेविषे द्विविधता चाली आवेछे तेम छतां लक्षण प्रमुखनी भिन्नता मिथ्यात्व भावने लीधे जीव अने कर्मनी ज्यां सुधी भासे नही, त्यां सुधी उंधोवायु वहे छे एटले जीवने कर्त्ता मानीये छैये. अने ज्ञाननुं उद्योत थवाथी सम्यक्तनी एवी शुद्धता थई के ते थी कर्म पिंडनो अकर्त्ता जीव सही थयो छे. एम जाणवुं ॥ ६२ ॥ जे वस्तु जेवीरीते छे ते साथे आनके० बीजा स्वरूप वाळी वस्तु मळती नथी. एकमेक थती नथी तेथी जीव कर्मनो अकर्त्ता छे: ए अर्थ अनुभव प्रमाणथी समजाय छे ॥ ६३ ॥

हवे मूढ जीव कर्मनो कर्त्ता मानी लेय छे ते कहे छे —अथ

चोपाई — जेदुरमती विकल अज्ञानी, जिन्हि सुरीति पररीति न जानी, मगन नरमके नरता, ते जिय नाव करमके करता ॥ ६४ ॥ दोहरा— ध्यामति तिमरसों, लखे न जीव अजीव, तेई नावित करमके, करता होई ॥ ६५ ॥ जे अशुद्ध परनिति धरे, करे अहं परवान, ते अशुद्ध रता होइ अजान ॥ ६६ ॥

अर्थ — जे जीव डुष्ट बुद्धिवडे विकल छे, अज्ञानी छे, जे पोतानी ने रीत जाणता नथी माया जालमा मग्न छे, भ्रमनानरता के० धणी छे, नाव कर्मना करनारा छे ॥ ६४ ॥ जे जीव मिथ्यामति अंधकारथी जीव ने निन्न पणे जाणता नथी, ते जीव सदाकाल नावित कर्मना कर्त्ता छे, पोतपोताना कर्मनो जे स्वनाव तेनेज नावित कर्म कहिये ॥ ६५ ॥ जे शुद्ध परिणतिने धरेछे, सर्व क्रियामा अहंकार बुद्धिथी अहं कर्त्ता एवु रछे, ते जीव अजाण थका अशुद्ध परिणामना कर्त्ता थायछे ॥ ६६ ॥

अथ शिष्य प्रश्न —

दोहरा — शिष्य कहे प्रज्ञु तुह्म कह्यो, डुविध करमको रूप, दर्व कर्म मई, नाव कर्म चिद्रूप ॥ ६७ ॥ करता दरवित करमको, जीवन होय अब इह नावित करम तुम, कहो कौनकी चाल ॥ ६८ ॥ करता याका कौन कौन करे फल नोग, के पुदगल के आतमा, के डुहुको सयोग ॥ ६९ ॥

अर्थ — हवे शिष्य प्रश्न पुछे छे के, हे प्रज्ञु तमे कह्यु छे के, कर्मनु प्रकारनु छे, एकतो पुदगलमय ते पुदगल पिंमरूप इव्य कर्म छे, अने बीजु व कर्म छे ते चिद्रूप के० चेतनाविकार रूप छे ॥ ६७ ॥ वली स्वामी तमे एवु इव्य कर्मनो करनार जीव कोइ कालमां नथी, त्यारे नावित कर्म तमे कोनी ल कहो छो ? ॥ ६८ ॥ ए नावित कर्मनो कर्त्ता कोण छे, ने एना कर्मनो नोक्ता कोण छे ? पुजल कर्त्ता नोक्ता छे ? के आत्मा कर्त्ता, नोक्ता छे ? किंवा ल अने आत्मा ए बेहुनो सयोग कर्त्ता नोक्ता छे ॥ ६९ ॥

हवे आ प्रश्ननो गुरु उत्तर आपेछे — अथ गुरु उत्तर कथन —

दोहरा — क्रिया एक करता जुगल, यों न जिनागम मांहि, अथवा औरकी, और करे यो नाहि ॥ ७० ॥ करे और फल नोगवे, और बने नहि इम

जो करतासो नोगता, यहे यथावत जेम॥७१॥ नाव कर्म कर्त्तव्यता, स्वयं सिद्ध न हे होइ; जो जगकी करनी करे, जग वासी जिय सोइ ॥७२॥ जिय करता जिय नोगता, नाव कर्म जिय चालि; पुद्गल करे न नोगवे,दुविधा मिथ्या जालि॥७३॥तातें नावित करमको, करे मिथ्याती जीव; सुख दुख आपद संपदा,नूजे सहजसदीव॥७४॥

अर्थः— क्रिया करणी एक होय अने तेना करनारा जुगल के० वे एवी वात जिनेश्वरना आगममां नथी कही, तेम पुद्गल अने जीव ए वेउ एक क्रिया करे नही, अथवा वीजानी क्रिया ठे अने करनार वली वीजोज ठे, एवुं पण ठे नही, एटले पुद्गलनी क्रिया जीव न करे अने जीवनी क्रिया पुद्गल न करे॥७०॥ए रीते करे एक अने तेनुं फल नोगवनार वीजोज होय एवुं वने नही, एवुं जिनेश्वरना आगममां नथी कह्यु, एटले पुद्गलनी क्रियानुं फल जीव नोगवे नही; केमके जे कर्त्ता तेहिज नोगता; जे कर्म करे तेज फल नोगवे, ए वात केवत प्रमाणे खरी ठे.॥७१

नाव कर्मनी कर्त्तव्यता के० क्रिया तेतो स्वयं सिद्ध न थाय, एटले नाव कर्म पोतानी मेले सिद्ध नही थाय. तेथी एवुं ठरे ठे के जे जगतनी क्रिया करे ते नाव कर्मनो कर्त्ता ठे; एटले गमनागमन क्रिया करे तेज नाव कर्मनो कर्त्ता जगत वासी जीव ठे॥७२॥जीवज कर्त्ता अने जीवज नोक्ता ठे, जीवनी चल विचलताथी नाव कर्म उपजे ठे, एथी नावित कर्म जीवनी चाल ठे. ए नावित कर्मने पुद्गल करे नही, तेम नोगवे पण नही, एमां जे अद्वैत मतवाला द्विधा राखे ठे. ते मिथ्या जाल ठे ॥ ७३ ॥ तेमाटे जे मिथ्याती जीव ठे, ते नावित कर्मने करे ठे. तेणे करी सुख दुःख आपदा संपदा सदा सहजे नोगवे ठे ॥ ७४ ॥

हवे एकांत वादिसांख्यमतना वचननुं वर्णन करे ठेः— अथ एकांत वादी वर्ननं.—

सवैया इकतीसा·— केई मूढ विकल एकंत पठ गहे कहे आतमा अकरतार पूरन परम हे; तिन्हसों जु कोउकहे जीउ करता हे तासों, फेरी कहे करमको करता करम हे; ऐसे मिथ्यामगन मिथ्याती ब्रह्म घाती जीव, जिन्हेके हिये अनादि मोहको नरम हे; तिन्हको मिथ्यात दूरि करिवेको कहे गुरु स्यादवाद परवान आतम धरम हे ॥ ७५ ॥

अर्थः— कोई मोह मूढ जीव ज्ञानवडे विकल एकांत पक्ष ग्रहीने एम कहे ठे के, आत्मा अकर्त्ता ठे, परम पूर्ण ठे, ते एकांत वादीने कोई एवुं कहे के, आत्मा कर्त्ता ठे, तेने सांख्यमति प्रमुख एकांत वादी कहे ठे के. कर्मनुं कर्त्ता कर्मज ठे. एवा मिथ्यातमां मग्न मिथ्याती जीव ब्रह्म घाती.ठे. तेमना हैयामां अनादि का

नी सगतीथी उलट पालट थई रह्योछे, जाणे नटनी बाजीनो खेल क
नी तेम खेल करेछे ॥ ९५ ॥

अथ अनुभव व्यवस्था कथन

दोहरा – नट बाजी विकलप दसा, नाही अनुभौ जोग, केवल अनुभौ
को, निर विकलप उपयोग ॥ ९६ ॥

अर्थ – अनुभवमा आत्मद्रव्यनी जे अवस्था पामिये ते कहेछे पूर्वे
जे नट सरखी जीवनी उलट पालट बाजी छे, ते तो विकल्प दशा छे ए द्वा
नुभवमां योग्य नथी नि केवल अनुभव करवाने निर्विकल्प उपयोग
तेज सत्य छे ॥ ९६ ॥

हवे अनुभवमां निर्विकल्प उपयोग आपवु तेनु दृष्टांत कहेछे –

अथ अनुभो दृष्टांत कथन –

सवैया इकतीसा – जेसे काहु चतुर सवारी हे मुगतमाल मालाकी क्रिया
ना नांतिको विज्ञान है, क्रियाको विकलप न देखे पहिरन वालो, मोतीनकी
मगन सुखवान है, तेसे न करे न भुजे अथवा करे सु भुजे, और करे और
सव नै प्रवान है, यद्यपि तथापि विकलप विधि त्याग जोग निरविकल
नो अमृत पान है ॥ ९७ ॥

अर्थ – जेम कोई चतुर पुरुषे मोतीनी माला समारीने बनावी ने तेनां
नातनु विज्ञान छे, पण ते मालानो पहेरनारो तेनी क्रियानो विकल्प जोतो
पण मोतीनी शोभायी मगन ने सुखवान थई रहे छे, जेम मोतीनी मालाना
नेक विज्ञान छे, तेम अही पण अनेक विकल्प छे, आत्मा कर्त्ता नथी, भो
थी, अथवा कर्त्ता छे, भोक्ता छे, अथवा राग द्वेषादिक करनारा बीजा छे, अने
गवनारा बीजा छे, ए सर्वे नय प्रमाण छे यद्यपि ए सर्वे नय प्रमाण छे,
ए सर्वे विकल्प विधि त्यागवा योग्य छे केमके अनुभव जे छे तनो निर्विक
अने अमृतपान समान छे उपादेय छे ॥ ९७ ॥

वे स्याद्वादी आत्माने कर्मनो कर्त्ता जे नयथी मानेछे ते कहेछे – अथ कर्तादर्श

दोहरा – दरब करम करता अलख, यहु विवहार कहाउ, निहच
व, तेसो ताको नाउ ॥ ९८ ॥

अर्थ – पुदगल द्रव्यरूप कर्मनो कर्त्ता अलख पुरुष आत्मा छे, ए व्यव

...ों केवाई शके छे, निश्चय नयमां तो ए वात छे के जेवुं जे द्रव्य होय तेवुं तेवुं
...ाव स्वरूप होय, एथी पुद्गल द्रव्यनी क्रिया पुद्गलवडेज बनेछे.
हवे जेवुं विपरीतपणुं बुद्धिमां भासेछे, तेवु कहेछेः—अथ विपरीत बुद्धिकथनं:—॥ ९८ ॥

सवैया इकतीसा — ज्ञानको सहज ज्ञेयाकाररूप परिनमे यद्यपि तथापि ज्ञान रूप कह्यो है; ज्ञेयज्ञय रूप यों अनादिहीकी मरजाद. काहु वस्तु काहुको ...भाउ नहि गह्यो है; एते परि कोउ मिथ्या मति कहे ज्ञेयाकार प्रति भासनिसों ...ान अशुद्ध व्हे रह्यो है; याहि दुरबुद्धिसों विकल भयो डोलत है समुझे न धर ...म यों भर्ममाहि वह्यो है ॥ ९९ ॥

अर्थ — ज्ञानतो ए सहज स्वभाव छे के, घट पट प्रमुख ज्ञेय के० जाणवाजोग ...ो पदार्थ छे. तेनो जे आकार छे, तेजरूपे आत्मानुं ज्ञान परिणमे, यद्यपि ए वात ...्रमाण छे तो पण ज्ञान जे छे, ते ज्ञानरूपज कहेवाय पण ज्ञेयरूप न कहेवाय ...अने जे ज्ञेय पदार्थ छे ते ज्ञानमां परिणम्यो छे तोपण ज्ञेयरूपज केवाय, पण ज्ञानरूप ...केवाय एवी अनादि काळनी मर्यादा छे, कोई वस्तु बीजी वस्तुनो स्वभाव ग्रहण ...ो नही, तेम जुदो जुदो स्वभावपण धारण करे नही, एवी मर्यादा वंध वातछे, तेम ...ां कोई वेशेषिक प्रमुख मिथ्यामति कहेछे. के ज्ञेय पदार्थना आकार प्रति भासे छे, ...ो ज्ञान पदार्थ अशुद्ध थई रह्योछे, ज्यारे ए अशुद्धपणुं मटी जशे तारे मुक्तिथशे, ...दुष्ट बुद्धिथी मिथ्यात्व मोहनो विकल्प थयो, तेथी अंहि तहिं विकल थईने ...छे. अने धर्म के० वस्तुनो स्वभाव जाणतो नथी. तेथी भ्रममां वह्यो फिरे छे. ९९

...र्वे पदार्थ पोताना स्वभावमां व्यापीरह्याछे ते कहेछे:—अथव्यापकताकथनं:—
...ाई— सकल वस्तु जगमें असहाई; वस्तु वस्तुसों मिले न काई; जीव वस्तु ...ण जेती, सोऊ भिन्न रहे सबनती ॥ ४०० ॥

... — जगतनेविषे सर्व भाव असहाय पणे वर्ते छे. कोई कोईनो सहाय ना ...ज अर्थ प्रगट पणे कहे छे, के एक वस्तु बीजी विलक्षण वस्तु साथे मळे ...नमां जेटली वस्तु छे. तेटलीने जीव जाणे छे. एटले सर्व रूप वस्तु नी ...ी परिणमे छे, तोपण जीव सर्व वस्तुथी जुदोज रहे छे, एम पोतपोता ...रूप छे तेथी जुदा रहेछे ॥ ४०० ॥

...वे व्यवहारनो केवत केवाछे — अथ व्यवहार कथनं —
...करम कें फल भोगवै. जीव अज्ञानी सोई; यह रूपनी व्यवहार ...न होई. ॥ ४०१ ॥

भ्रमरूप तालाने खोलवानी कुंची छे सुबुद्धि शीलरूप सुधा समुद्रमा राधा पण तेवी छे, एम ए बेउ शील प्रकृतीयेंकरी महा सुखदायी छे, उदय करवाने प्राची के० पूर्व दिशा जेवीछे, निदाननी जाचनारी नथी, दीपणे सुबुद्धि अने राधिका छे निरवाची के० वचन गोचर नथी, ए रहेछे, जेनी साची ईश्वरता छे धाम के० जे पोतानु आत्म घर तेनी खबरदार साथे रमी रहीछे ते राम एटले पोताना इष्टनी साथे रमनारी छे राधा रस टले राधावल्लभीना मार्गना रसग्रथमा राधानामे ईश्वरनी प्यारी छे, तेवीज पण छे एवी सतजननी मानेती छे अने स्वस्थपणे रेनारी अने नूर के० शाणी छे एवी सुबुद्धि वर्त्तेछे, माटे सुबुद्धिने राधिका राणी कहेवी ॥ २४ ॥ रीते कुबुद्धि कुबजा थई अने सुबुद्धि राधिका थई ए बे पोतपातानी मति लीधी रहेछे ते कुबुद्धि जे कुबजा तेतो करम बधनी अधिकारणी छे सुबुद्धि राधिका तो विवेकनी खाण छे ॥ २५ ॥ ज्ञानावरणीय आदिक ए छे, ते पुद्गलरूप छे अने मतिनी वक्रता छे ते भाव कर्म जाणीए, जे परिणमन होय तेने विवेक गुणनु चक्र कहीए ॥ २६ ॥

हवे भाव कर्मना चक्रनी उपर दृष्टात कहेछे – अथ कर्म चक्र यथा –

कवित्त छंद – जैसे नर खेलार चोपरको, लाभ विचार करै चित चाउ, धारि सा बुद्धी बलासों, पासाको कुछु परे सु दाउ, तैसे जगत जीव उद्यम चितवे उपाउ, लिख्यो ललाट होइ सोई फल, कर्म चक्रको ५८

अर्थ –जेम कोई चोपटनो खेल करे, ते पुरुष चित्तमा लाभ विचारी चाह राखे, एटले हौंस राखे, पोतानी बुद्धि बलने लुग प्रमुखनो पन रा चोक प्रमुख दाव उपर सारी सलाह राखीने रमे, पण दाव तो पासान तेम जगतनो जीव उद्यम करीने पोताना स्वारथनो उपाय चितवे, लाटमा लख्यु होय तेज फल थाय, कर्म चक्र उदय माफक थाय एनो एन

हवे विवेक चक्र उपर दृष्टात कहे छे – अथ विवेक चक्र यथा –

कवित्त छद – जैसे नर खिलार सतरजको, समुझे सब सतरजकी घात, चाल निरखै दोउ दल, मोह राग न विचारे मात, तैसे साधु निपुन शिव लक्षन लखे तजे उतपात, साधे पुन्य चितवे अभै पद, यह सुविवेक चक्रको ॥ २७ ॥ दोहरा – सतरंज खेले राधिका, कुबजा खेले सारि, याके नि

जीतवो, वाके निसिदिन हारि ॥ २९ ॥ दोहराः— जाके उर कुबजा वसे, सोई अलख अजान; जाके हिरदे राधिका, सो बुध सम्यक वान ॥ ३० ॥

अर्थ — जेम कोईमाणस सेतरंजनो रमनार सेतरजना खेलनी सर्व घात के० युक्ति अने दाव समजेछे. पोताना पराया दल उपर नजर राखी चाल चाले, पोताना प्यादा वजीर हाथी प्रमुख मोहोरा गणतिमां राखी मनमां परने मांत करवो विचारेछे. तेम साधु लोक पंमित छे, ते मोक्ष मार्गमां खेले. लक्षणथी वस्तुने जोय तेमां उत्पातरूप कार्य होय ते छांमी दे, अने पोतानुं साधन करे, चित्तमां अभेद पद विचारे ए विवेक चक्रनी वात छे ॥ २८ ॥ सुबुद्धि राधिका ते सेतरंज खेली रही छे, अने कुमति कुबजा पासा सरखो खेल खेलेछे. तेमां आ सुमती राधिका तेनुं विवेक चक्रमां रातदिन जीतवुं थायछे. अने कुमति कुबजा ते कर्म चक्रमां रातदिन हारेछे ॥ २९ ॥ जेना हैयामां कुमति कुबजा वसे, तेतो अलख आत्माना अजाण छे. अने जेना हैयामां सुमति राधिका वसेछे. तेज समकेतवंत बुद्ध कहेतां ज्ञाता कहिये ॥ ३० ॥

हवे ज्यां शुद्धज्ञान छे त्यां शुद्धक्रिया थाय ते कहेछेः—अथ ज्ञानक्रिया सहकार कथन

सवैया इकतीसाः— जहां शुद्ध ज्ञानकी कला उद्योत दीसे तहां शुद्ध परवान शुद्ध चारित्रको अंस है; ता कारन ज्ञानी सब जाने ज्ञेय वस्तु मर्म, वैराग विलास धर्म वाको सरवंस है; राग दोष मोहकी दसासों भिन्न रहे याते, सर्वथा त्रिकाल कर्मजालको विध्वंस है; निरुपाधि आतम समाधिमें विराजे ताते, कहिये प्रगट पूरन परमहंस है; ॥ ३१ ॥ दोहरा—ज्ञायक भाव जहां तहां, शुद्ध चरनकी चाल; ताते ज्ञान विराग मल, सिव साधे सम काल. ॥ ३२ ॥

अर्थ.— जे प्राणीविषे जे शुद्ध ज्ञाननी कलानो उद्योत देखायछे, ते प्राणीविषे तेज वखतमां आत्मानी शुद्धता प्रमाण करीने शुद्ध चारित्रनो पण अंस थाय ते कारणथी जे ज्ञाता होय तेतो ज्ञेय के० हेय उपादेयरूप सर्व जाणवा योग्य वस्तुनो मर्म जाणे, त्यारे ते हेयने छांमे अने उपादेय रूप सर्व जाणवुं तेने ग्रहे छे, एवो वैराग्यना विलासनो स्वभाव सर्व अंसे करी प्रगट थाय. अने वैराग्य आवाथी राग द्वेष मोहनी दशाथी प्राणी भिन्न रहेछे, तेथी पूर्वकृत कर्मनी निर्जरा थायछे, अने वर्त्तमानकालमां कर्म न बांधे, जे प्रकृति छुटी गई ते आगामिक कालमां बांधे नहीं, एम सर्वथाप्रकारे कर्मजालनो विध्वस थाय. तेवारे राग द्वेषादिक उपाधि रहित आत्म समाधिमां विराजे तेथी तेने पूरण परमहंस प्रगटपणे क

कहेछे के, माहारु स्वरूप करुणा निधान छे तथा सर्वनो सर्वनो हित वत्सल छे अने अम्लान कहेता निर्मल छे काजने छे कर्म चालनो तेने भय नथी, एटले कर्म जेना स्वभावनो नाश करी शके मन वचन अने कायना योगनी जाल तेथी अजीत छे, अने आ स छे, तेतो मोहनो विलास छे, पण माहारो विलास नथी, जगत भ्रमण तेथी हु शून्य छु, गति कर्म जगत करेछे, तेतो मारा अंधकूप समान छे, एथी पाप कोणे कीधुं, हवे कोण करेछे, आगल रहो, आ जे क्रियानोविचार दीलमा आवेछे तेतो स्वप्नानी दोरधाव व्यवहार छे ॥ ४१ ॥

हवे मिथ्या परिणामनुं वरणन करेछे — अथ मिथ्यात परिनाम

दोहरा — मै या कीनौ यौ करौ, अब यह मेरो काम, मन वच ए मिथ्यात परिनाम, ॥ ४२ ॥ मन वच काया करम फल, करम दशा जड दरवित पुद्गल पिंडमे, भावित भरम तरंग ॥ ४३ ॥ तांते भावित धरमसों, सुभाउ अपूर्व, कोन करावे को करे, कोसर लहे सब जूठ ॥ ४४ ॥

अर्थ — में आवु कीधु आम करुछु, हवे आ माहारुं काम छे, ते कहुं ज्ञान चेतना भाग्याविना मन वचन कायामां मिथ्या परिणाम वसेछे, ॥४२॥ मन वचन कायाना जोग छे, ते कर्मनु फल छे, अने कर्मनी दशा जडरूप ए जे मन वचन काया छे, ते पुद्गल द्रव्यनो पिंड छे, तेथी आ मिथ्या तरंग उपजेछे, ॥ ४३ ॥ तेमाटे आत्मानो भावित धर्म एटले शुद्ध जाणपणु अथवा तरंगरूप कर्म स्वभाव विपरीत छे, तेने करावे कोण अने करे कोण भरम कोण छे, एटले अनुमोदे कोण ए प्रपंच सर्व जुठाछे, ॥ ४४ ॥

हवे आ जोगथी क्रिया थाय तेनी निंदा करेछे — अथ क्रियाकी निंदा

दोहरा — करनी हित हरनी सदा, मुकति वितरनी नाहि, गनी बंध पिदे, सनी महा दुख माहि, ॥ ४५ ॥ सवैया इकतीसा — करनीकी धरनीमें मोह राजा वसे, करनी अज्ञानभाव राकसकी पुरीहै, करनी करम काया की प्रनी छाया करनी प्रगट, माया मिसरीकी छुरी है, करनीके जालमें चिदानंद करनीकी ओट ज्ञान भान दुति दुरी है, आचारज कहे करनीसां जीव करनी सदीव निहचे सरूप बुरी है ॥ ४६ ॥

अर्थ — करणी जे क्रिया छे ते सदा अहितनी करनारी छे, मुक्तिना दा

थी, आ क्रियाने आगममां तो बंध पद्धतिमांज गणी छे, तेथी क्रिया महा दुःख सहित छे. ॥ ४५ ॥ क्रियानी भूमिमां महा मोह राजा वसेछे, अने क्रिया छे ते अज्ञान भाव राक्षसनी नगरी छे. एटले क्रियामां अज्ञान राक्षस रही शकेछे. अने क्रिया छे ते तो कर्मनो पडछायो छे. अने काय योगनो पडछायो छे. अने पुद्गलनो पडछायो छे क्रिया छे ते प्रगट माया जाळ छे, तथा ते साकरनी छरी छे, मीठास आपी मारेछे. आ करणीनी जाळमां चिदानंद परमात्मा उरजी के० मग्न थई रह्यो छे, अने क्रियाना ओथे ज्ञानरूप सूर्यनी ज्योति छपी रही छे. श्री आचार्य कहेछे के क्रिया करतो थको जीव व्यवहारीज कहिए. पण निश्चळ रूप देखवाथी क्रिया सदा सर्वदा बुरी छे, एटले खोटी छे. ॥ ४६ ॥

हवे पोतानी समज पामे तेने ज्ञाता कहेछेः— अथ ज्ञाता कथन.—

चोपाई.— मृषा मोहकी परिनति फैली, तातें करम चेतना मैली; ज्ञान होत हम समुझी एती, जीव सदीव भिन्न परसेती ॥ ४७ ॥ दोहराः—जीव अनादि सरूप मम, करम रहित निरुपाधि; अविनाशी अशरन सदा, सुखमय सिद्ध समाधि ॥४८॥

अर्थः— अमारामां पहेला मिथ्या मोहनी परिनति फेलाई छे, एटले मोहथी अशुद्ध थई, त्यारे फेलाणी. तेनो उदय गाढो थयो, तेथी चेतना शुद्ध हती पण अशुद्ध थई, कर्मसहीत चेतना मळीन थई. हवे ज्ञान चेतना प्रगट थता अमे एटली वात जाणी, के जे जीव छे ते निश्चे परजोगथी न्यारो छे ॥४७॥ अनादि काळथी जीव प्राणधारी केहेवायछे. ते मारुं स्वरूप छे ते स्वरूप केवुं छे ते कहेछे. कर्म रहित छे. अने संयोगादिक उपाधि रहित छे. वळी विनाश न पामे, सदा ईश्वर छे; कोईनुं शरण न राखे, अने आ स्वरूप सिद्धसमाधिना सुखमय छे ॥ ४८ ॥

हवे ज्ञानस्वरूप कर्म उपाधिथी भिन्नछे ते कहेछेः— अथ ज्ञान स्वरूपी कथन.—

चोपाईः— में त्रिकाळ करणीसों न्यारा, चिदविलास पद जगत उज्यारा; राग विरोध मोह मम नांही, मेरो अवलंबन मुझमांही ॥ ४९ ॥ सवैया तेइसाः— सम्यकवंत कहे अपने गुनमें नित राग विरोधसुं रीतो, में करतूति करों निरवंछक, मोह विषे रस लागत तीतो; शुद्ध सुचेतनको अनुभौ करि, में जग मोह महा भड जीतो, मोष समीप भयो अब मो कहुं काळ अनंत इही विधि बीतो ॥५०॥ दोहरा.— कहे विचछन में सदा, रह्यो ज्ञान रस राचि; शुद्धातम अनुभूतिसों, खलित न होइ कदाचि ॥ ५१ ॥ पूर्व करम विष तरु भए, उदे भोग फल फूल; में इनको नहिं भोगता, सहज होहुं निरमूल ॥ ५२ ॥

अर्थ – हुं त्रणे कालमा क्रिया करणीथी न्यारो छु माहारे कर्मथी सगनथी तो क्रीयाथी सग केम थाय माहारुं पद के० स्वरूप, चिदविलास के० ज्ञानविलास छे, ते जगतमा अजवालु छे अने राग द्वेप मोहनाव वर्त्ते छे. तेतो माहारुं स्वरू प नथी माहारो अवलव आधार माहारा स्वरुपमां छे ॥ ४ए ॥ समकेती जीव पोताना गुण कहेछे हु नित्य प्रत्ये राग द्वेप मोहथी, रीतो के० रक्त एटले रहित छु हु जे क्रिया करुछु ते राग द्वेप विना वाछारहित करुछुं अने जे ए विषय रस छे ते, मोहतीतो के० मने तिक्त लागेछे एटले कडवां लागेछे शुद्ध पोतानी चेतनानो अनुनव करीने हु जगतमां मोहरूप महासुनट जीत्यो, माहारु एवु स्वरूप पामीने हु मोक्षने सन्मुख थयो, हवे मने एवी रीतथीज अन त काळ वीतो एटले अनत काळ लगे एवोज रहु ए आशसा छे ॥ ५० ॥ विचक्षण ज्ञानी पुरुष आशसा करीने कहे के हु सदा ज्ञान रसमां राची रहु अ ने हुं शुद्ध आत्माना अनुनवथी कोइ पण कालमा खलित न थाउं ए आशसा छे॥५१॥ए पूर्वे कृत पुन्य पापरूप जे कर्म छे, ते विष वृक्ष जाणवा अने ते कर्मना उदय नो जे नोग छे ते विष वृक्षना फल फुल छे हु आ उदय नोगनो नोक्ता नथी राग द्वे पथी रहित छु अनादिकाळना साथे लागेला विषय नोग छे तेसहज निर्मूलथाय ५२ हवे उदासीनताने वैराग्य कहियें तेनो महिमा कहेछे –अथ वैराग्यमहिमाकथन –

दोहरा –जो पूरव कृत कर्म फल, रुचिसों चुजे नांहि, मगन रहे आगे पहुर, शुद्धातम पदमांहि ॥ ५३ ॥ सो बुध कर्मदसा रहित, पावे मोष तुरंत, चुजे परम समाधि सुख, आगम काळ अनत. ॥ ५४ ॥

अर्थ – जे पूर्वकाळमां कर्म कर्यु तेनु फल उदय थयुं ते फलथी रुचि लगा डी नोगवे नही अने आठ प्रहर शुद्ध आत्मपदमां मगन रहे. ॥ ५३ ॥ तेज पंमित कर्मदशा रहित थईने तरत मोक्षपद पामे, ते पछी आगमिक कालमां अनत काळ लगे परम समाधिनु सुख नोगवे ॥ ५४ ॥

हवे ज्ञानि पुरुषनो क्रमे क्रमे महिमा वधे ते कहेछे – ज्ञानी पुरुष महिमा कथन –

छप्पय छद – जो पूरव कृतकर्म, विरष विष फल नहि चुजे, जोग जुगतिकारज करत ममता न प्रजुजे, राग विरोध, निरोध सग विकलप सचि छंमे, शुद्धातम अनुनौ अन्यासि तिन नाटक मंमे, जो ज्ञानवत इह मग चलत, पूरन व्हे केव ल लहे, सो परम अतींड्रिय सुखविषे, मगन रूप सतत रहे ॥ ५५ ॥

अर्थ – जो ज्ञानी थईने पूर्वे कृतकर्म रूप वृक्षना विष फलने नोगवे नही

एटले इष्ट फलथी रतिन उपजे अनिष्ट फलथी अरति न उपजे एवो ज्ञाता ...
ते मन वचन कायाना योगे करी युक्त छे तेथी जोगनी गति के० प्रवृत्तिं ...
करेछे, पण कार्यविषे ममता प्रजुंजे नही एरीतें राग द्वेषनो विरोध ...
ना संगथी जे विकल्प थवेछे, ते सर्व छांडे. शुद्ध आत्माना अनुभवनो ...
करीने शिवनाटक के० जे थकी जीवन्मुक्ति होय एवो नाटक मांडे ...
पुरुष एहिज मार्गे चाले तो पूरण स्वभाव पामीने केवल ज्ञान पामे ...
ज्ञान पामीने उत्कृष्ट अतींद्रिय सुखनेविषे निरंतर मगन रहे. ॥ ५५ ॥

हवे शुद्ध आत्मा द्रव्य छे तेनुं वर्णन करेछेः—अथ शुद्ध ...

सवैया इकतीसा.— निरभै निराकुल निगम वेद निरभेद, ...
त माईयतु है; रूप रस गंध फास पुदगलको विलास, तासों ...
श गाइयतु है, विग्रहसों विरत परिग्रहसे न्यारो सदा, जामें ...
पाइयतु है; सो है ज्ञान परवान चेतन निधान ताहि, ...
सोस नाइयतु है; ॥ ५६ ॥ जैसो नर भेदरूप निरवे ...
रभेद अव भेदको न गहेगो; दीसे कर्म रहित सहित ...
ज थान फिरि वाहिर न वहेगो; कबहु कदाचि अपनो ...
रस राचिके न परवस्तु गहेगो; अमलान ज्ञान ...
भांति आगम अनंत काल रहेगो. ॥ ५७ ॥ ...
टि आपु समौ पाइ अपनो सुभाव गहि लीनो है, ...
सो से सव लीनो, जो जो त्याग जोग सो सो ...
ही और त्यागिवेकों नांही और, वाकी कहा ...
अंग त्यागि वचन तरंग त्यागि, मन त्यागि बुद्धि ...

अर्थः— जे निर्भय केवाय छे, निराकुल ...
हेवाय छे. वेद के० ज्ञानरूप केहेवाय ...
थी छे जेमां सर्व जगत समाय छे. अने ...
र्श छे, तेतो पुद्गलनो विलास छे, तेना ...
इए छे वली जे विग्रह के० शरीर ...
रिग्रह तेथी जुदो छे. जेमां सदाय ...
ण पामीए छे एवुं पदार्थ तो ...
ण छे. अने चेतनानो निधान छे. ...

छे ॥५६॥ हवे बीजुं पण शुद्धात्म द्रव्य सिद्धनु वर्णन करेछे – अतीत कालमां पण शुद्धात्म द्रव्य निश्चेय नयथी अभेद रूप हतो अने व्यवहारनयें भेदरूप हतो हवे केवल रुप पामिने निर्भेद के० भेद रहित जाणीए हवे एवी दशामां कोण मूर्ख भेद ठरावसे नैयायिक लोक जे पोतानी परूपणामां समाधि योग आत्माने कर्म रहित मानीने फरी संसारमां अवतार मानीने छे तेने नमस्कार करेछे पण जे कर्म रहित थयो सुख समाधान सहित थयो. पोतानु स्थानक पाम्यो ते पाछो बाह्य सकटमा केम पडशे जेम धरतीनो भार उतारवा ईश्वर अवतार लेइने दुःख पामेछे एवु मिथ्यादृष्टिनो केवलमाछे पण जीव शुद्ध थईने फरी राग रसमां राचि ने कोई कालमा आपणु स्वभाव त्याग करीने पर वस्तुने ग्रहे नही केमके अम्ला न ज्ञान के० जे ज्ञान फरी करमाय नही एवु ज्ञान विद्यमान कालविषे प्रगट थयुं तेतो आगमिक कालमा अनत काल लगी रहेशे ॥ ५७ ॥ हवे फरीथी अवतार लेवाना कारणनो अभाव कहेछे – अनादिकालथी चेतन मिथ्यात भावरूप विभावमा रमि रह्यो हतो ते समयप्रस्ताव पामीने, विभावथी उपराठो थई पोतानो शुद्ध स्वभाव हतो ते पोतेज लइ लीधो, तेथी ज्ञान दर्शनादिक भाव लेवा योग्य हतो ते लीधो, अने राग द्वेषादिक भाव त्यागवाजोग हतो ते सर्व त्यागी दीधो ते लेवानु बीजु ठेकाणु रह्यु नही, अने त्यागवानु पण बीजु ठेकाणु रह्यु नही हवे इहां बाकी नवु कार्य करवानुं क्यो रह्योछे जे कार्य करवाने फरी अव तार लेवु पडे जे उपाधिसग हतो तेतो सर्व त्यजी ने एटले अंग त्याग के० काय योग त्यागिने वचन तरग त्याग के० वचन योग त्यागीने तथा मनो योग त्यागिने बुद्धि त्याग के० विकल्प त्यागीने आत्माने शुद्ध करी लीधो ॥ ५८ ॥

हवे बाह्य भेष धरवो ते द्रव्यलिंग कहिए ते एकांतपणे मोक्षनु कारण नथी ते कहेछे – अथ एकांत द्रव्यलिंगीकी निंदा –

दोहरा – शुद्ध ज्ञानके देह नहि, मुद्रा भेष न कोइ, ताते कारन मोषको, दर वलिंगि नहि होइ ॥ ५९ ॥ द्रव्य लिंग न्यारो प्रगट, कला वचन विन्यान, अष्ट महारिधि अष्ट सिधि, एक होहि न ज्ञान ॥ ६० ॥

अर्थ –आत्मा तो शुद्ध ज्ञानमय छे अने शुद्ध ज्ञानने देह नथी, अने ज्यारे देह नथी त्यारे ज्ञान ने मुद्रा भेष पण कोइ नथी तेथी मोक्षनुकारण द्रव्य लिंगहोय नही एटले भेष लीधे मुक्ति नथी ॥ ५९ ॥ ज्ञानथी द्रव्यलिंग तो प्रगट पणे जुदोज छे कलाविज्ञान, वचन विज्ञान, ते ज्ञानथी न्यारो छे तथा आचार, श्रुत शरीर,

वचन, वाचना, बुद्धि, उपयोग, संग्रह संलीनता, ए अष्ट महा रिद्धि ठे. अने अ णिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य, इशित्व, वशित्व, ए अष्टमहा सिद्धि ठे. ते पण ज्ञान नथी ॥ ६० ॥

हवे एटला महिमावंत स्थानक ठे, तो पण ए ज्ञानना स्थानक नथी ते कहे्वे:-

अथ ज्ञान अनाव स्थानक कथन.—

सवैया इकतीसा — नेषमें न ज्ञान नहि ज्ञान गुरु वर्त्तनमें, मंत्र जंत्र तंत्रमें न ज्ञानकी कहानी है, ग्रंथमें न ज्ञान नहिं ज्ञान कवि चातुरीमें वातनिमें ज्ञान नहीं ज्ञान कहा वानी है; तातें नेष गुरुता कवित्त ग्रंथ मंत्र वात, इनतें अतीत ज्ञान चेतना निसानी है, ज्ञानहीमें ज्ञाननही ज्ञान उरगोर कहू, जाके घट ज्ञान तोइ ज्ञानको निदानी है ॥ ६१ ॥

अर्थः— नेषमां ज्ञान न पामीए अने गुरुवाई के० गर्वपणुं महोटाइ पणुं ते मां पण ज्ञाननुं स्थानक नथी अने मंत्र तत्र यंत्रमां ज्ञानुनी कहेणी नथी तथा ग्रंथ शास्त्र पढवाथी पण ज्ञान प्राप्त थतु नथी कवितामां चातुर्यतामां ज्ञान नथी. वातनी चतुराइमां ज्ञान नथी. अने जे वाणी ठे ते शुं ज्ञान ठे, अर्थात् वाणी पण ज्ञान नथी माटे नेख गुरु वाइ कविताई, ग्रंथ मंत्र यंत्र तत्र वात ए सर्वथी अतीत के० जुदोज ज्ञान वस्तु ठे, ते चेतननी सहिनाणी ठे. ज्ञानतो ज्यारे जा एवुं. के जे अशुद्ध पणे होय तेतो ज्ञान न कहेवाय, माटे पूर्वें जे स्थानक क ह्या तेथी जूदोज कोइ ज्ञान वस्तु ठे माटे जेना घटमां ज्ञान प्रगट्युं, तेज ज्ञाननुं मूलकारण ठे ॥ ६१ ॥

हवे जे पूर्वें नेष प्रमुखना धारक कह्या तेनी मूढता कहि देखाडे ठे:—

अथ नेषादि धारक मूढ यह कथनः—

सवैया इकतीसा — नेष धरे लोगनिको वंचे सो धरम ठग, गुरुसो कहावे गुरु वाई जाते चहियें, मंत्र तंत्र साधक कहावे गुनी जादूगर, पंमित कहावे पंमिताई जामें लहिये, कवित्तकी कलामें प्रवीन सो कहावे कवि, वात कही जाने सो पवार गीर कहिये; ए तो सब विषेके निखारी मायाधारी जीव, इन्हकों विलोकिके द याल रूप रहिये ॥ ६२ ॥

अर्थ.— नेष धरीने लोकोने, ठगे नरमावे ते धर्म ठग कहेवाय, एटले तेने गु रुतानी चाहना होय ते गुरु केवाय. मंत्र यंत्र तंत्रादिक गुणनुं जे साधक होय ते जादूगर केवाय. अने जेमां पंमिताई रही ठे. ते पंमित केवाय, कवित चातुरिनी

कलामां जे प्रवीण होय तेतो कवि केवाय, वातो बनावी बनावीने कही जाणे ते पवारगर केवाय एटली अवस्थाना धरनारा छे ते सर्व इंद्रियविषयना यात्र क मायाधारी जीव छे तेने जोईने मनमां एवु विचारिये के अहो इति आश्चर्य ए बापडा केम पोतानो स्वार्थ खोयछे एवी रीते तेना उपर दयाउरूप थई रहेवु

हवे जीवना अनुभवनी योग्य दशा कहे छे – अथ अनुभो जोगता कथन –

दोहरा – जो दयालता भाव सो, प्रगट ज्ञानको अंग, पैं तथापि अनुभो दशा, वरतै विगत तरंग ॥ ६३ ॥ दरशन ज्ञान चरण दशा, करे एक जो कोइ, थिर व्है साधे मोष मग, सुधी अनुभवी सोइ ॥ ६४ ॥

अर्थ – जे आत्माने शुद्ध दयालता भाव प्रगटेछे तेतो ज्ञाननु अंग प्रगट थयुं एम जाणीए पण अनुभव दशा जे छे ते तो विगततरंग के० विकल्प रहित वर्त्ते ॥ ६३ ॥ वली दर्शन ज्ञान चारित्रनी दशाने विकल्प रहित एकपणे आत्माने जुएछे, एज रीते स्थिररूप थईने मोक्ष मार्गने साधे छे तेनेज सुधी के० सुबुद्धिवंत अनुभववंत केहिये ॥ ६४ ॥

हवे नि संदेह शुद्ध स्वरूप पामवु तेनो महिमा कहे छे –अथ अनुभो महिमाकथन –

सवैया इकतीसा – जोइ दृग ज्ञान चरणातममें बैठि ठौर भयो, निरदौर पर वस्तुकों न परसे, सुद्धता विचारे ध्यावे शुद्धतामें केलि करे, सुद्धतामें थिर व्है अमृत धारा बरसे, त्यागी तन कष्ट व्है सपष्ट अष्ट करमकों,करे थान भ्रष्ट नष्ट करे और करसे, सोई विकलप विजई अलप कालमाहि, त्यागि भो विधान निरवान पद दरसे॥६५॥

अर्थ – जे कोई दर्शन ज्ञान चारित्ररूपी आत्मानेविषे ज्ञानने ठेकाणे ठेरावीने वाट बांधे, त्यां निरदौर के० संशय रहित थईने परवस्तुनो स्पर्श न करे त्यां निश्चे नय ग्रहण करीने शुद्धताज विचारे, शुद्धताज ध्यावे अप्रमादि थईने शुद्धतामां केलि करे शुक्ल ध्यानना प्रथम पायामां प्रवेशकरी शुद्धतामां थिर थईने महा आनंदरूप अमृतनी धारा वरषावे, आंही अवयवरूप लक्षण छे तेथी शरीरना कष्टने त्यागेछे लीनताथी शरीर कष्ट न जाणे त्यारे स्पष्ट थईने एटले वीर्य फोरवीने आठे कर्मनो स्थान भ्रष्ट करे एटले कर्मोने सत्ता थकी चलायमान करे अने नष्ट करे के० निर्जरा करे ऐसे औरहुकंसे के० ते जीव कर्मोने आकर्षीने निर्जरावे ते जीव विकल्प जालनो विजय करीने अल्प कालमांज विधान के० भवे श्रेणिने त्यागी मोक्ष पद देखे एटले पामे ॥ ६५ ॥

हवे शिष्य पुछे छे के ए अनुभव पामवो महा विषम छे ते उपर गुरु शिक्षादे छे.—

अथ अनुभो शिक्षा कथन.—

चोपाई:— गुन परजंमें दृष्टि न दीजे; निरविकलप अनुभौ रस पीजे; आप समाइ आपमें लीजे; तनपा मेटि अपनपो कीजे ॥ ६६ ॥ दोहरा.— तजि विभाव हुइजे मगन, सुद्धातम पदमांहि; एक मोष मारग यहे, और दूसरो नांहि ॥ ६७ ॥

अर्थ.— आत्माना गुण पर्याय अनेक छे. पण तेमां दृष्टि न देवी. मात्र निर्विकल्प द्रव्यनो अनुभव रस पीवो. आत्मा आधारमां आत्मानो समास करी लेवो एटले लय लगाडवो, एटले आपणे शरीर धारी छोए, ते दशानो काय योग पणुं छे ते मटावी आत्म स्वरूप करीए ॥ ६६ ॥ आत्माना मूल स्वभाव विना बीजो सर्व विभाव पणुं छे, तेहने त्यजीने शुद्ध आत्माना चिदानंद स्वभावमांज मगन थइये, एक अद्वितीय मोक्षनो मार्ग एज छे. तेथी बीजो कोइ मोक्षनो मार्ग नथी॥ ६७

हवे शुद्ध आत्मस्वरूपना अनुभवविना महाव्रत्तिपण द्रव्यलिंगी जाणवा ते कहेछे.—

अथ द्रव्यलिंगी व्यवस्था कथन.—

सवैया इकतीसा:— कइ मिथ्या दृष्टि जीव धारे जिन मुद्रा भेष. क्रियामें मगन रहे कहे हम जती हैं, अतुल अखंड मलरहित सदा उद्दोत, ऐसे ज्ञान भावसों विमुख मूढमति हैं; आगम संभाले दोष टाले विवहार भाले, पाले व्रत यद्यपि तथापि अविरती हैं, आपुको कहवे मोष मारगके अधिकारी मोषसों सदीव रुष्ट दुष्ट दुरगति हे॥ ६८ ॥ दोहरा — जे विवहारी मूढ नर, परजे बुद्धी जीव, तिनको बाहिज क्रीयको, हे अवलंब सदीव. ॥ ६९ ॥

अर्थ:— केक जीव मिथ्या दृष्टि छे अने आचार्य उपदेश रसथी जिन मुद्राभेष धारी छे अने साधुनी क्रियामां मगन रहेछे, अने पोताना मनथी अथवा कोइना पूछवाथी अमे जती छइये एम कहेछे एटले महाव्रत्ति छैये अने जेनी तुलना नथी एवु अखंड के० संपूर्ण विभाव मलरहित सदा प्रकाशवत पोतानुं अनुभवरूप जे ज्ञान भाव छे तेथी विमुख छे माटे मूढमती छे जोपण ते क्रिया करेछे आगम सिद्धांत संभारेछे अने आहारादिकना दोष टाली व्यवहारमां दृष्टि राखेछे एम जयपि महाव्रत पाले छे तो पण निश्चे नयथी ए अविरतीज कहीए एवा जे जीवछे ते पोते मोक्ष मार्गना अधिकारी लोकमा कहेवायछे. पण मोक्षथी एवा रुठयाज रहेछे एटले अनभ्यने पण क्रिया केवल नरमा ग्रैव्यकहादि गति ही छे पाछो ए दुष्ट दुर्गतिमां पडेछे. ॥ ६८ ॥ जे कोइ मूर्ख मनुष्य व्यवहार

माज रहे अने जे जीव पर्याय बुद्धिवत छे ते सुनगतियो जीव होय तो नलो एवी पर्याय बुद्धि धारेछे तेने तो बाह्य क्रियानो अवलंबन सदाय कह्योछे ॥६०॥

हवे व्यवहारे महामूढ छे तेनुं वर्णन करेछे – अथ महामूढ वर्नन –

चोपाई –जेसे मुगध धान पहिचाने, तुष तंडुलको नेद न जाने, तेसे मूढमती व्यवहारी, लखे न बंध मोष विधि न्यारी ॥७०॥ दोहरा –कुमती बाहिज द्रिष्टिसों, बाहिज क्रिया करत, माने मोष परपरा, मनमे हरप धरत ॥ ७१ ॥ शुद्धातम अनुनो कथा, कहे समकिती कोइ, सो सुनिके तासो कहे, यह सिवपथ न होइ ७२

अर्थ –जेम कोइ मननो नोलो पुरुष छे ते धानने तो ओलखे पण तूस अने तंडुल मां निन्नता छे ते न जाणे तेम जे व्यवहारी मूढमती छे तेतो बंधविधि अने मोक्षविधि जूदी जूदी लखी शके नही केवल विधिज जाणे ॥७०॥ जे कुमती होय ते पर्याय बुद्धिथी शाता वेदनी पणे समाधि सुख जाणीने बाह्य इष्टिथी तेनी हेतुरूप बाह्यक्रिया करे अने बाह्यक्रियामा मगन होय तो तेथी तेने निर्जरा मानीने मोक्ष परपरा माने अने मनमा आनद पामे ॥ ७१ ॥ ते मूढने कोइ समकिती जीव शुद्ध आत्मानी अनुनव दशाने मोक्षनुं कारण कहे तो तेनु वचन सानलीने तेने एवु कहे के ए रीतेतो मोक्षमार्ग थाय नही ॥ ७२ ॥

हवे मूढ तथा ज्ञानीनुं लक्षण कहेछे –अथ मूढ तथा ज्ञानी लक्षण कथन –

कवित – जिन्हके देह बुद्धि घट अतर, मुनि मुद्रा धरि क्रिया प्रवानहि, ते हिय अध बधके करता, परम तत्वको नेद न जानहि जिन्हके हिये सुमतिकी कनिका, बाहिज क्रिया नेप परमानहि, ते समकिती मोष मारग मुप, करि प्रस्थान नव स्थिति नानहि ॥ ७३ ॥

अर्थ – जेना हीयामा देह बुद्धि रहेछे एटले देहधारी ने पण निन्नपणे जाणता नथी अने मुनीश्वरनी मुद्रा धारिने क्रियानेज प्रमाण करेछे तेतो हीयानो अध छे अने बधनो करनार छे अने परम तत्वके० मोक्ष तत्वना नेद ने जाणतो नथी अने जेना हीयामा सम्यग द्रष्टिने लीधे सुबुद्धिनी करणीका जागी तेतो बाह्य क्रियाने नेप रूप प्रमाण करेछे तेनेतो समकिती कहीए ते जीव मोक्ष मार्ग ने सन्मुख प्रस्थान के० प्रयाण करी करीने नवस्थितिने निर्भेदांजे छे ॥ ७३ ॥

हवे संक्षेपथी नि केवल उपादेयरूप मोक्ष मार्गनो उपदेश दे छे –

अथ मोक्षको उपदेश संक्षेप मात्र कथन –

सवैया इकतीसा – आचारिज कहे जिन वचनको विसतार, अगम अपार है

कहेंगे हम कितनो! बहुत बोलवेसों न मकसूद चुप भली, बोलीए सु वचन प्रयोजन है जितनो; नाना रुप जलपसों नाना विकलप उठे, ताते जेतो कारिज कथन भलो तितनो; शुद्ध परमातमको अनुभौ अभ्यास कीजे, यहै मोष पंथ परमारथ है इतनो ॥ ७४ ॥ दोहरा:— सुद्धातम अनुभोक्रिया, शुद्ध ज्ञान दृग दौर, मुकति पंथ साधन वहैं, वाग जाल सब और ॥ ७५ ॥

अर्थः— आचार्यजी शिष्यने कहे छे. अहो शिष्य जिनेश्वरनां वचननो विस्तार तो नय प्रमाण करीने अगम अपार छे. अमे केटलोक कहीए, आहीं बहु बोलवुं ते अमारे मकसुद नथी तेथी चुप रहेवुं तेज ठीक छे, अने जेटलुं प्रयोजन छे. तेटलुंज बोलवुं पण नाना प्रकारनु जल्प के० बोलवुं कहियें तो नाना प्रकारना विकल्प उठेछे तेथी जे एक कार्य छे तेपुरतुंज बोलवुं बस छे, शुद्ध परमात्म द्रव्यना अनुभव योगनुं अभ्यास करीए एज मोक्ष मार्ग जाणीए, बधी वातमां एटलोज परमार्थ छे ॥ ७४ ॥ जे क्रियाथी शुद्ध आत्मानो अनुभव थाय तेज क्रियाछे अने शुद्ध ज्ञान दृष्टिनी दोर तेज मुक्ति पंथनुं कारण छे. बीजु सर्व वचनाडंबरछे ॥७५॥

हवे शुद्ध जीव द्रव्यनुं वर्णन करेछेः— अथ शुद्ध जीव द्रव्य वर्नन:—

दोहरा:— जगत चक्षु आनंदमय, ज्ञान चेतना भास; निर्विकल्प साश्वत सुथिर, कीजे अनुभौ तास. ॥ ७६ ॥ अचल अखंडित ज्ञानमय, पूरन वीत ममत्व, ज्ञानगम्य बाधा रहित, सो है आतम तत्व. ॥ ७७ ॥

अर्थः— जे पदार्थ जगतमां चक्षूजेवुं छे अने आनंदमय छे. जेनी ज्योति ज्ञान अने चेतना छे. जेमां कोई विकल्प नथी भेद नथी. अने शाश्वतो छे तथा स्थिर छे. जे पदार्थनो अनुभव करीए तो मुक्ति पामीए. ॥ ७६ ॥ जे कोईकाले पोताना स्वभावथी चलायमान थाय नही एवो अखंडित ज्ञानमयछे. संपूर्ण समाधिवंत अने ममत्व रहित, इंद्रिय ग्राह्य नही तेथी ज्ञान गम्य छे अने अछेद्य अभेद्यपणाथी बाधा रहित छे तेज आत्म तत्व कहीए. ॥ ७७ ॥

इति श्री नाटक समयसार ग्रंथनो दशम सरव विसुद्धि नामा द्वार बालावोधरूप संपूर्ण थयो.

दोहराः—सरव विसुद्धी द्वार यह, कह्यो प्रगट शिवपंथ; कुंद कुंद मुनिराजकृत, पूरन भयो गरंथ. ॥ ७८ ॥

अर्थ.— जे द्वारमां आत्मानी सर्व विशुद्धि पामिये तेज द्वार [illegible] गटप

माज रहे अने जे जीव पर्याय बुद्धिवत छे ते सुजगतियो जीव होय तो नजो एवी पर्याय बुद्धि धारेछे तेने तो वाह्य क्रियानो अवलवन सदाय कह्योछे ॥६९॥

हवे व्यवहारे महामूढ छे तेनु वर्णन करेछे — अथ महामूढ वर्नन —

चोपाई —जेसे मुगध धान पहिचाने, तुष तंडुलको भेद न जाने, तैसे मूढमती व्यवहारी, लखे न बध मोप विधि न्यारी॥७०॥दोहरा —कुमती वाहिज दिष्टिसों, वाहिज क्रिया करत, माने मोप परपरा, मनमें हरप धरत. ॥ ७१ ॥ शुद्धातम अनुभो कथा, कहे समकिती कोड, सो सुनिके तासों कहे, यह सिवपथ न होइ७२

अर्थ —जेम कोइ मननो भोळो पुरुष छे ते धानने तो ओळखे पण तूस अने तंडुल मां भिन्नता छे ते न जाणे तेम जे व्यवहारी मूढमती छे तेतो बधविधि अने मोक्षविधि जूदी जूदी लखी शके नही केवळ विधिज जाणे ॥७०॥ जे कुमती होय ते पर्याय बुद्धिथी शाता वेदनी पणे समाधि सुख जाणीने वाह्य इष्टिथी तेनी हेतुरूप वाह्यक्रिया करे अने वाह्यक्रियामा मगन होय तो तेथी तेने निर्जरा मानीने मोक्ष परपरा माने अने मनमा आनद पामे ॥ ७१ ॥ ते मूढने कोइ समकिती जीव शुद्ध आत्मानी अनुभव दशाने मोक्षनुं कारण कहे तो तेनु वचन सांभळीने तेने एवु कहे के ए रीततो मोक्षमार्ग थाय नही ॥ ७२ ॥

हवे मूढ तथा ज्ञानीनुं लक्षण कहेछे —अथ मूढ तथा ज्ञानी लक्षण कथन —

कवित — जिन्हके देह बुद्धि घट अतर, मुनि मुद्रा धरि क्रिया प्रवानहि, ते हिय अध बधके करता, परम तत्वको भेद न जानहि, जिन्हके हिये सुमतिकी कनिका, वाहिज क्रिया भेप परमानहि , ते समकिती मोप मारग मुप, करि प्रस्थान भव स्थिति भानहि ॥ ७३ ॥

अर्थ — जेना हीयामा देह बुद्धि रहेछे एटले देहधारी ने पण भिन्नपणे जाणतो नथी अने मुनी-वरनी मुद्रा धारिने क्रियानेज प्रमाण करेछे तेतो हीयानो अध छे अने बधनो करनार छे अने परम तत्वके० मोक्ष तत्वना भेद ने जाणतो नथी अने जेना हीयामा सम्यग दृष्टिने लीधे सुबुद्धिनी करणीका जागी तेतो वाह्य क्रियाने भेष रूप प्रमाण करेछे तेनेतो समकिती कहीए ते जीव मोक्ष मार्ग ने सन्मुख प्रस्थान के० प्रयाण करी करीने भवस्थितिने निर्भेदांजे छे ॥ ७३ ॥

हवे सक्षेपथी नि केवळ उपादेयरूप मोक्ष मार्गनो उपदेश दे छे —

अथ मोक्षको उपदेश सक्षेप मात्र कथन —

सवैया इकतीसा — आचारिज कहे जिन वचनको विसतार, अगम अपार है

कहेंगे हम कितनो! बहुत बोलवेसों न मकसूद चुप जली, बोलीए सु वचन प्रयोजन है जितनो; नाना रूप जलपसों नाना विकलप उठे, ताते जेतो कारिज कथन जलो तितनो; शुद्ध परमातमको अनुजौ अन्यास कीजे, यहे मोष पंथ परमारथ है इतनो ॥ ७४ ॥ दोहराः— सुद्धातम अनुजोक्रिया, शुद्ध ज्ञान द्रग दौर, मुकति पंथ साधन वहैं, वाग जाल सव और ॥ ७५ ॥

अर्थः— आचार्यजी शिष्यने कहे छे. अहो शिष्य जिनेश्वरनां वचननो विस्तार तो नय प्रमाण करीने अगम अपार छे. अमे केटलोक कहीए, आहीं बहु बोलवुं ते अमारे मकसुद नथी तेथी चुप रहेवुं तेज ठीक छे, अने जेटलुं प्रयोजन छे. तेटलुंज बोलवुं पण नाना प्रकारनु जल्प के० बोलवुं कहियें तो नाना प्रकारना विकल्प उठेछे तेथी जे एक कार्य छे तेपुरतुंज बोलवुं बस छे, शुद्ध परमात्म द्रव्यना अनुजव योगतुं अन्यास करीए एज मोक्ष मार्ग जाणीए, बधी वातमां एटलोज परमार्थ छे ॥ ७४ ॥ जे क्रियाथी शुद्ध आत्मानो अनुजव थाय तेज क्रियाछे अने शुद्ध ज्ञान दृष्टिनी दोर तेज मुक्ति पंथनुं कारण छे. बीजु सर्व वचनाडंबरछे ॥७५॥

हवे शुद्ध जीव द्रव्यनुं वर्णन करेछेः— अथ शुद्ध जीव द्रव्य वर्ननः—

दोहराः— जगत चक्षु आनंदमय, ज्ञान चेतना जास; निर्विकल्प साश्वत सुथिर, कीजे अनुजौ तास. ॥ ७६ ॥ अचल अखंडित ज्ञानमय, पूरन वीत ममत्व, ज्ञानगम्य वाधा रहित, सो है आतम तत्व. ॥ ७७ ॥

अर्थः— जे पदार्थ जगतमां चक्षूजेवुं छे अने आनंदमय छे. जेनी ज्योति ज्ञान अने चेतना छे. जेमां कोई विकल्प नथी जेद नथी. अने शाश्वतो छे तथा स्थिर छे. जे पदार्थनो अनुजव करीए तो मुक्ति पामीए. ॥ ७६ ॥ जे कोईकाले पोताना स्वजावथी चलायमान थाय नही एवो अखंडित ज्ञानमयछे. संपूर्ण समाधिवंत अने ममत्व रहित, इंद्रिय ग्राह्य नही तेथी ज्ञान गम्य छे अने अछेद्य अजेद्यपणाथी वाधा रहित छे तेज आत्म तत्व कहीए. ॥ ७७ ॥

इति श्री नाटक समयसार ग्रंथनो दशम सरव विसुद्धि नामा द्वार बालावबोधरूप संपूर्ण थयो.

दोहराः—सरव विसुद्धी द्वार यह, कह्यो प्रगट शिवपंथ; कुंद कुंद मुनिराजकृत, पूरन जयो गरंथ. ॥ ७८ ॥

अर्थः— जे द्वारमां आत्मानी सर्व विशुद्धि पामिये तेज द्वार कह्यो ते प्रगटप

अर्थ — प्रथम शिष्य पुछेछे, स्वामी जीव स्वाधिन छे के पराधिन छे? जीव एक छे के गणतिमा अनेक छे? ए केम मनमा जाणवु अने जीव कहेवाय छे तो जगतमा सदायछे के नथी, ए अस्तिपणानो सदेह छे, अने जीव अस्ति के० अविनासी छे के विनाशी छे हवे आवी रीतना प्रश्न उपर सद्गुरु कहेछे के हे शिष्य जीव वस्तु जगतमा छे, पण नास्ति न कहीए, अने ते जीव आपणे स्वाधिन छे अने एक छे यद्यपि गिणतीयें अनेक छे, तो पण लक्षणथी एक छे अविनाशी द्रव्य दृष्टि दीजे तो एमज छे, अने जो पर्याय नय प्रमाण करीये तो जीव पराधीन छे, कर्माधीन छे अने अवचित मरण देखता क्षणभगुर छे गत्यादिक देखता अनेकरूप छे वली अजीव पदार्थ स्थापनानी अपेक्षाये न थी अने जहां पर्याय प्रमाण छे तिहा एछे ॥ ९७ ॥

हवे द्रव्य क्षेत्र काल भावें करीने सर्व वस्तुनु अस्तिनास्तिपणु कहेछे —

अथ दरव क्षेत्र काल भाव अस्तिनास्ति कथन —

सवैया इकतीसा — दर्व खेत्र काल भाव चारो भेद वस्तुहीमें, अपने चतुष्क वस्तु अस्तिरूप मानियें, परके चतुष्क वस्तु नासति नियत अग, ताको भेद दर्व परजाय मध्य जानिये, दरवतो वस्तु खेत्र सत्ता भूमिकाल चाल, सुभाव सहज मूल सकति वखानिये, याही भांती परविकलप बुद्धि कलपना, विवहार दृष्टि अशभेद परवानिये ॥ ९८ ॥ दोहरा — है नाही नाही सु है, है है नाही नाहि, यह सरवगी नयधनी, सवमाने सव माहि ॥ ९९ ॥

अर्थ — द्रव्य क्षेत्र काल भाव ए चारें भेद वस्तुमां विचारीए, आही आपणे वस्तु छे, ते अस्तिरूप मानीए, एटले स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावथी विचारीए त्यारे तो सर्व वस्तु अस्तिरूपें छे, अने जो परवस्तुथी ए चारने विचारियें तो वस्तुनु नास्तिरूप नीपजे छे एटले परद्रव्य परक्षेत्र परकाल परभावथी सर्व वस्तु नास्तिरूपे छे नियत अग के निर्भेनयथी अस्ति छे तेनो भेद द्रव्य पर्यायथी जाणवो ए चार भेदमां द्रव्यथी वस्तु कहीए, वस्तुनी सत्तानी भूमिने क्षेत्र कहियें, वस्तुनी परिणाम चालथी काल कहीए, सहजनी मूलशक्तिने स्वभाव कहीए ए रीतें बुद्धिनी कल्पना करीने परद्रव्य क्षेत्रादिकना जो विकल्प ग्रहण करियें जेम के घट वस्तु ग्रहण करवाथी परद्रव्य परक्षेत्र परकाल परभावनी कल्पनाथी नास्ति छे ए व्यवहार दृष्टिथी वस्तुना अंश भेद प्रमाण थाय ॥ ९८ ॥ अने ए नयी एवु कहेवामां स्वद्रव्यादिकनुं आस्तिपणु लईने परद्रव्यादिकथी नास्तिपणु लईए तथा नही ते छे एम

केहेवामां प्रथम परद्रव्यादिकनुं अस्तिपणुं ग्रहीए; छे अने नथीज एम केहेवामां फरी परद्रव्यादिकनुं केवल नास्तिपणुज ग्रहण करियें छे; एथी सात भांगा उपजे छे, आंही सर्वांग नयना धणी स्याद्वादी सर्व वस्तुमां सर्व भांगा माने छे. ॥ ९९ ॥

हवे चौद नयना भेदथी एकेक भेदे एकांत पक्षीनी जेवी केहेणी छे तेवी कहेछेः—

अथ चतुर्दश नय भेद एकांत पक्ष कथन नाम स्थापनः—

सवैया एकतीसाः— ज्ञानको कारन ज्ञेय आतमा त्रिलोक मेय. ज्ञेयसों अनेक ज्ञान मेल ज्ञेय छांही है. जोलों ज्ञेय तोलों ज्ञान सर्व दर्वमें विज्ञान ज्ञेय छेत्र ज्ञान जीव वस्तु नांही है. देह नसे जीव नसे देह उपजत लसे, आतमा अचेतन है सत्ता अंसमांही है, जीव छिन भंगुर अज्ञायक सरूपी ज्ञान, ऐसी ऐसी एकंत अवस्था मूढ पाही है ॥ ५०० ॥

अर्थ.— प्रथम चउद नयना नाम स्थापना कहेछे.—जे ज्ञेय वस्तुमां ज्ञान उपजेछे. तेथी ज्ञाननुं कारण ज्ञेय छे ए नाम छे, १ त्रण लोक प्रमाणे आत्मा छे, तेथी त्रिलोकमय एवुं नाम छे. २ जेम अनेक ज्ञेय छे, तेम ज्ञान पण अनेक छे. ते अनेक ज्ञान ए नामछे. ३ ज्ञानमां ज्ञेयनी छाया छे ते मेलवुं छे. तेथी मेलन ज्ञेय ए नाम छे. ४ ज्यां सुधी ज्ञेय छे त्यां सुधी ज्ञान छे. ज्ञेय उपरांत ज्ञान नथी तेथी ज्या लगी ज्ञेय ए नामछे ५ सर्व द्रव्य मयी विज्ञान छे. तेनु तेज नामछे. ६ ज्ञेय क्षेत्रने प्रमाणेज ज्ञान छे, तेथी ज्ञेय क्षेत्रमान ए नाम छे. ७ जीव वस्तु जगतमां नथी तेथीनास्ति जीव ए नाम छे, ८ देहनो नाश थवाथी जीवनो पण नाश, तेथी जीव नाश ए नामछे ९, देह उपजवाथी जीव विराजे छे, तेथी देह त्यां जीवोत्पाद ए नामछे १० आत्मा छे ते अचेतन पदार्थ छे तेथी अचेतन ज्ञाता ए नाम छे ११ सत्ताना अंश ते जीव कहिए छे, पण आत्मा अंस मात्रछे ए नाम छे १२ जीव छे. ते क्षणभंगुर छे तेथी एज नामछे १३, ज्ञान छे ते ज्ञायक स्वरूपमां नथी तेथी अज्ञायक ज्ञान ए नाम छे १४ एवी एवी एकात अवस्था मूढ लोको पामे छे, ए नयना भेद जाणवा ॥ ५०० ॥

हवे ज्ञाननुं कारण ज्ञेय. एजे प्रथम नय कर्यु तेनो प्रपंच करी देखाडेछेः—

अथ ज्ञानको कारन ज्ञेय प्रथम नय पक्ष कथन.—

सवैया एकतीसाः— कोउ मूढ कहे जैसे प्रथम समारि भीति. पीछे ताके उपर सु चित्र आछो लेखिये; तैसे मूल कारन प्रगट घट पट जैसो. तैसो तहां ज्ञान रूप कारज विशेषिये; ज्ञानी कहे जैसी वस्तु तैसोई सुभाव ताको. ताते ज्ञान ज्ञेय भिन्न

भिन्न पद पेखिये, कारन कारज दोउ एकहीमे निहचे पें, तेरो मत साचो विवहार दृष्टि देखीये ॥ ५०१ ॥

अर्थ – कोई मूढ मीमांसक ते शिष्य लोकने एम समजावे छे के, जेम प्रथम भितने समारी होय तोपछी तेना उपर चित्र सारुं थाय, अने नरसी उपर नरसुं चित्र थाय, तेम ज्ञाननी उत्पत्तिनु कारण मन छे, पण जेवो घटपट प्रमुख पदार्थ होय तेवुज तिहाज्ञानरूप कार्य विशेष थाय छे, जो घटपदार्थ जाणवा योग्य होय तो घट ज्ञान होय, अने पट पदार्थमा पट ज्ञान होय, तेथी ज्ञाननुं कारण ज्ञेय छे, हवे तेने स्याद्वाद ज्ञानी एम कहेछे के, अहो भाई, जे जेवी वस्तु छे तेनो स्वभाव पण तेवोज छे, जे ज्ञानपदार्थ छे तेनो स्वभाव जाणवानोज छे, अने जे ज्ञेयपदार्थ छे ते जाणवा योग्यज छे, आ अर्थ भेदथी ज्ञान अने ज्ञेय ए बने जुदा पद जाणवा अहीं जे ज्ञेय कारण पणे कह्यो तेज ज्ञान विकल्पे कह्यु, तेथी घटपटादि जगत छे ते जड पदार्थ दूर रह्या,अने ज्ञान छे तेज सामान्य पणे छे तेथी निश्चे नयथी तो ज्ञानमां ज्ञेय पामिये,पण व्यवहार दृष्टि आपता तो ताहारु मत पण साचुछे ५०१

हवे बीजा एकात नय आत्मा त्रिलोकमय छे तेनो प्रपच देखाडे छे –

अथ द्वितिय नय आतमा त्रिलोक प्रमानयहु कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ मिथ्यामति लोकालोक व्यापि ज्ञान मानि, समुझे त्रिलोक पिंड आतम दरब है, याहिते सुछद भयो भोले मुख हू न बोले कहे या जगतमें हमारोई खरव है, तासों ज्ञाता कहे जीव जगतसों भिन्न पै जगतको विकासी तोहि याहीते गरव है, जो वस्तु सो वस्तु पररूपसों निराली सदा, निहचे प्रमान स्यादवादमें सरव है, ॥ ५०२ ॥

अर्थ – कोई नैयायिक वैशेषिक मिथ्याति छे ते ज्ञानने लोकालोक व्यापी मानीने एवु समझे छे के जीवद्रव्य ते विज्ञाननो पिंड छे अने विज्ञान छे ते लोकालोक व्यापी छे तेथी आत्मद्रव्य त्रण लोक प्रमाण छे तेथी पोताने सर्व व्यापी ईश्वर मानीने स्वछद थयो भोले छे अभिमानमां चढयो थको बीजाने मूर्ख मानीने कोईनी साथे मुखथी न बोले जो बोले तो एम कहे के आ जगतमां हमारीज खरव के० सर्व रचना छे हवे तेने स्याद्वाद ज्ञानी कहे छे के अहो भाई जीव जे छे ते जगतथी भिन्न छे पण तेना ज्ञानमां जगतनो विकास छे तेथी ईश्वरपणानो गर्व चढयोछे पण जे वस्तु छे तेतो पोताना स्वरूपमाज रहे छे अने पररूपथी सदा जुदी रहे छे तेथी जगत अने आत्माने निश्चे नयना प्रमाणथी स्याद्वादमां सर्वथा विरोध पामिए ५०२

हवे त्रीजो एकांत नय ते ज्ञेयथी ज्ञाननो अनेक प्रपंच कहि देखाडेछेः—

अथ त्रितीय ज्ञेयसो अनेक ज्ञान कथनः—

सवैया इकतीसाः— कोउ पशु ज्ञानकी अनंत विचित्राई देखे, ज्ञेयको आकार नाना रूप विसतर्यो है; ताहीकों विचारी कहे ज्ञानकी अनेक सत्ता, गहिके एकंत पक्ष लोकनिसों लर्यो है; ताको भ्रम भंजवेकों ज्ञानवंत कहे ज्ञान, अगम अगाध निरावाध रस भर्यो है; ज्ञायक सु भाई परजाईसों अनेक भयो, जद्यपि तथापि एकतासों नहिं टर्यो है; ॥ ५०३ ॥

अर्थः— कोई पशु के० मूर्ख ज्ञाननी अनंत विचित्रता देखेछे. तेनो हेतु कहे छे. जगतमां ज्ञेय वस्तु अनंत छे, तेना आकार अनंत छे. ते ज्ञानमां परणमे छे तेथी ज्ञानपण नानाप्रकारथी विस्तरे छे, अने तेना नाना रूप विस्तारने विचारीने ज्ञाननी अनंत सत्ता माने छे. एवो एकांत पक्ष लईने प्रतिवादी लोकथी लडे छे. हवे स्याद्वादी ज्ञानवंत ते एकान्तपक्षीना भ्रम भांजवाने एम कहेछे के, अहो भाई तुं ज्ञानने ज्ञेयनो आकार परणम्यो जाणीने केम भूले छे? ज्ञान छे ते अगम्य वस्तु छे. निरावाध रसथी भर्यो छे. ज्ञाननो ज्ञायक स्वभाव छे, तेथी यद्यपि पर्याय शक्तिथी ज्ञान अनेकरूप थयुं छे. तथापि ज्ञायक स्वभावथी ज्ञाननी एकताज छे, पण ते एकताथी ज्ञान टलतुं नथी. ॥ ५०३ ॥

हवे चोथा नयमां ज्ञानने विषे ज्ञेयनी छायानो प्रपंच देखाडे छेः—

अथ चतुर्थ ज्ञेय छाया यह कथनः—

सवैया इकतीसाः— कोउ कुधी कहे ज्ञानमांहि ज्ञेयको आकार, प्रतिभासि रह्यो है कलंक ताहि धोइए; जब ध्यान जलसों पखारिके धवल कीजे, तब निराकार शुद्ध ज्ञानमई होइए; तासों स्याद्वादी कहे ज्ञानको सुभाव यहे, ज्ञेयको आकार वस्तु मांहि कहा खोइए; जैसे नाना रूप प्रतिबिंबकी झलक दीसे, जदपि तथापि आरसी विमल जोइए. ॥ ५०४ ॥

अर्थः—कोई कुधी के० कुबुद्धि वैशेषिक मतवालो एम कहे छे के, जो जगत वासी जीवना ज्ञानमांज ज्ञेयनो आकार प्रतिभासे छे, ते आकार तो निराकार ज्ञाननुं कलंक उपजेछे. तेने धोई नाखवो जोइए, तेथी निराकारनुं ध्यान लगाडवुं तेतो जल थयुं, ते जलथी प्रक्षालीने ते ज्ञानने उज्वल करियें तेवारें निराकार शुद्ध ज्ञानमय थवाय छे, हवे आंही स्याद्वादी तेने कहे छे. अरे भाई ज्ञाननो एज स्वभाव छे,

भिन्न पद पेखिये, कारन कारज दोउ एकहीमे निहचे पें, तेरो मत सांचो विवहार दृष्टि देखीये ॥ ५०१ ॥

अर्थ – कोई मूढ मीमांसक ते शिष्य लोकने एम समजावे छे के, जेम प्रथम भितने समारी होय तोपछी तेना उपर चित्र सारु थाय, अने नरसी उपर नरसु चित्र थाय, तेम ज्ञाननी उत्पत्तिनुं कारण मन छे, पण जेवो घटपट प्रमुख पदार्थ होय तेवुज तिहांज्ञानरूप कार्य विशेष थाय छे, जो घटपदार्थ जाणवा योग्य होय तो घट ज्ञान होय, अने पट पदार्थमां पट ज्ञान होय, तेथी ज्ञाननु कारण ज्ञेय छे, हवे तेने स्याद्वाद ज्ञानी एम कहेछे के, अहो नाई, जे जेवी वस्तु छे तेनो स्वनाव पण तेवोज छे, जे ज्ञानपदार्थ छे तेनो स्वनाव जाणवानोज छे, अने जे ज्ञेयपदार्थ छे ते जाणवा योग्यज छे, आ अर्थ नेदथी ज्ञान अने ज्ञेय ए बने जुदा पद जाणवा अहीं जे ज्ञेय कारण पणे कह्यो तेज ज्ञान विकल्पे कलु, तेथी घटपटादि जगत छे ते जड पदार्थ दूर रह्या,अने ज्ञान छे तेज सामान्य पणे छे तेथी निश्चे नयथी तो ज्ञानमा ज्ञेय पामिये,पण व्यवहार दृष्टि आपता तो ताहारु मत पण साचुछे५०१

हवे बीजा एकात नय आत्मा त्रिलोकमय छे तेनो प्रपच देखाडे छे –

अथ द्वितिय नय आतमा त्रिलोक प्रमानपद्ध कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ मिथ्यामति लोकालोक व्यापि ज्ञान मानि, समुझे त्रिलोक पिंम आतम दरव है, याहिते सुछंद नयो मोले मुष हू न बोले कहे याजगतमें हमारोई खरब है, तासों ज्ञाता कहे जीव जगतसों भिन्न पे जगतको विकासी तोहि याहीते गरव है, जो वस्तु सो वस्तु पररूपसों निराली सदा, निहचे प्रमान स्यादवादमें सरव है, ॥ ५०२ ॥

अर्थ – कोई नैयायिक वैशेषिक मिथ्याति छे ते ज्ञानने लोकालोक व्यापी मानीने एवु समझे छे के जीवछे ते विज्ञाननो पिंम छे अने विज्ञान छे ते लोकालोक व्यापी छे तेथी आत्मद्रव्य त्रण लोक प्रमाण छे तेथी पोताने सर्व व्यापी ईश्वर मानीने स्वछंद थयो मोले छे अनिमानमां चढयो थको बीजाने मूर्ख मानीने कोईनी साथे मुखथी न बोले जो बोले तो एम कहे के आ जगतमा हमारीज खरब के० सर्व रचना छे हवे तेने साद्वाद ज्ञानी कहे छे के अहो नाई जीव जे छे ते जगतथी भिन्न छे पण तेना ज्ञानमां जगतनो विकास छे तेथी ईश्वरपणानो गर्व चढयोछे पण जे वस्तु छे तेतो पोताना स्वरूपमांज रहे छे अने परस्वरूपथी सदा जुदी रहे छे तेथी जगत अने आत्माने निश्चे नयना प्रमाणथी स्याद्वादमां सर्वथा विवरोध पामिए ५०२

हवे त्रीजो एकांत नय ते ज्ञेयथी ज्ञाननो अनेक प्रपंच कहि देखाडेछेः-

अथ त्रितीय ज्ञेयसो अनेक ज्ञान कथनः-

सवैया इकतीसाः- कोउ पशु ज्ञानकी अनंत विचित्राई देखे, ज्ञेयको आकार नाना रूप विसतर्यो है; ताहीकों विचारी कहे ज्ञानकी अनेक सत्ता, गहिके एकंत पक्ष लोकनिसों लर्यो है; ताको भ्रम भंजवेकों ज्ञानवंत कहे ज्ञान, अगम अगाध निरावाध रस भर्यो है; ज्ञायक सु भाई परजाईसों अनेक भयो, जद्यपि तथापि एकतासों नहिं टर्यो है; ॥ ५०३ ॥

अर्थः- कोई पशु के० मूर्ख ज्ञाननी अनंत विचित्रता देखेछे. तेनो हेतु कहे छे. जगतमां ज्ञेय वस्तु अनंत छे, तेना आकार अनंत छे. ते ज्ञानमां परणमे छे तेथी ज्ञानपण नानाप्रकारथी विस्तरे छे, अने तेना नाना रूप विस्तारने विचारीने ज्ञानना अनंत सत्ता माने छे. एवो एकांत पक्ष लईने प्रतिवादी लोकथी लडे छे. हवे स्याद्वादी ज्ञानवंत ते एकान्तपक्षीना भ्रम भांजवाने एम कहेछे के, अहो भाई तुं ज्ञानने ज्ञेयनो आकार परणम्यो जाणीने केम भूले छे? ज्ञान छे ते अगम्य वस्तु छे. निरावाध रसथी भर्यो छे. ज्ञाननो ज्ञायक स्वभाव छे, तेथी यद्यपि पर्याय शक्तिथी ज्ञान अनेकरूप थयुं छे. तथापि ज्ञायक स्वभावथी ज्ञाननी एकताज छे, पण ते एकताथी ज्ञान टलतुं नथी. ॥ ५०३ ॥

हवे चोथा नयमां ज्ञाननेविषे ज्ञेयनी छायानो प्रपंच देखाडे छे.-

अथ चतुर्थ ज्ञेय छाया यह कथनः-

सवैया इकतीसाः- कोउ कुधी कहे ज्ञानमांहि ज्ञेयको आकार, प्रतिभासि रह्यो है कलंक ताहि धोइए; जब ध्यान जलसों पखारिके धवल कीजे, तब निराकार शुद्ध ज्ञानमई होइए; तासों स्याद्वादी कहे ज्ञानको सुभाउ यहे, ज्ञेयको आकार वस्तु नांहि कहा खोइए; जैसे नाना रूप प्रतिबिंबकी झलक दीसे, जदपि तथापि आरसी विमल जोइए. ॥ ५०४ ॥

अर्थः-कोई कुधी के० कुबुद्धि वैशेषिक मतवालो एम कहे छे के, जो जगत वासी जीवना ज्ञानमांज ज्ञेयनो आकार प्रतिभासे छे, ते आकार तो निराकार ज्ञाननुं कलंक उपजेछे. तेने धोई नाखवो जोइए, तेथी निराकारनुं ध्यान लगाडवुं तेतो जल थयुं, ते जलथी प्रक्षालीने ते ज्ञानने उज्वल करियें तेवारें निराकार शुद्ध ज्ञानमय थवाय छे, हवे आंही स्याद्वादी तेने कहे छे. अरे भाई ज्ञाननो एज स्वभाव छे,

के ज्ञेयनो आकार वस्तुमां नासे तो आंही आकार गमावी नाखवानी शु मतलब छे जेम आरसीमां नाना रूप प्रति बिंबनो झलकाट देखाय छे तो पण आरसी निर्मल जोइए पण तेने प्रतिबिंबनु कलंक कोई न कहे ॥ ५०४ ॥

हवे पांचमो एकांतनय ते ज्यां लगें ज्ञेय त्यां लगें ज्ञान तेनो प्रपंच कही देखाडेछे

अथ पंचम जोंलो ज्ञेय तोंलो ज्ञान यह कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ अज्ञ कहे ज्ञेयाकार ज्ञान परिनाम जोंलों विद्यमान तोंलों ज्ञान परगट है ज्ञेयके विनाश होत ज्ञानको विनास होइ, ऐसी वाके हिरदे मिथ्यातकी अलट है, तासों समकितवंत कहे अनुभौ कहान, परजे प्रवान ज्ञान नानाकार नट है, निरविकलप अविनस्वर दरव रूप, ज्ञानज्ञेय वस्तुसों अव्यापक अघट है ॥ ५०५ ॥

अर्थ – कोई अजाण पुरुष एवु कहेछे के जेवो ज्ञेयनो आकार तेवु ज्ञाननु परिणाम थायछे, तेथी ज्ञेय विद्यमान ज्यां लगी होय, त्यां लगी ज्ञान प्रगट रहेछे अने ज्ञेयनो विनाश थये ज्ञाननो पण विनाश थायछे, एवी वात मिथ्यामतीना हृदयमा मिथ्यानी अलट लागी रहेछे, हवे तेनाथी सम्यकवंत स्याद्वादी अनुभवनी कथा कहेछे अरे भाई, जेम कोई नट पुरुष छे ते नाना प्रकारना भेष धारीने नाना प्रकारना नाम धरावेछे, तेम ज्ञानरूप नट छे, ते नाना आकार धरीने पर्याय प्रमाणे बहुरूपी थायछे पण जेवु नट द्रव्य एक छे तेवु ज्ञान वस्तु पण निर्विकल्प एक छे, द्रव्यपणे अविनस्वर छे अने ज्ञान वस्तु ते ज्ञेय वस्तुथी अव्यापक छे, एटले ज्ञेयवस्तु ज्ञान वस्तुमां एक मेक न थाय तेथी ज्ञान ज्ञेयनी एकता अघटती छे ॥ ५०५ ॥

हवे छठा एकांतनय सर्व द्रव्यमयी आत्मानो प्रपंच कही देखाडे छे –

अथ षष्टम सर्व दर्वमय आतमा यह कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ मंद कहे धर्म अधर्म आकास काल, पुदगल जीव सब मेरो रूप जगमें, जाने न मरम निज मानें आपा परवस्तु बधे दिढ करम धरम खोवे डगमें, समकिती जीव सुद्ध अनुभौ अभ्यासे तातें परको ममत्व त्याग करे पग पगमें, अपने सुभावमे मगन रहे आठों जाम, धारा वाही पंथिक कहावे मोक्ष मगमें ॥ ५०६ ॥

अर्थ – कोई मूर्ख ब्रह्माद्वैतवादी एवु कहे छे के जो कोईनां मतमां धर्म अधर्म आकाश काल जीव पुदगल ए छ एद्रव्य कहेवाय छे ते सर्व ब्रह्म-छे तेथी मारु पणरूप सर्व जगतमां विस्तरि रह्यु छे बीजो पदार्थ कोई नथी आंही गुरु शि

ध्यने कहे छे. अहो शिष्य एतो ब्रह्माद्वैतवादी मूढ मती छे, ते पोतानो मर्म जाण तो नथी, अने पर वस्तु छे तेने आत्मा जाणे छे. एवा मिथ्यात्वथी ए दृढ कर्म बांधे छे. अने जगतमां पोतानो धर्म खोवे छे. पोतानो स्वनाव गमावे छे. जे सम केती जीव होय तेतो सोहं बीजना ध्यानथी शुद्ध अनुनवनो अन्यास करे, तेथी आत्मतत्व शुद्धज पामे. अने पगले पगले परवस्तुनो त्याग करे, अने पोताना शुद्ध स्वनावमां आठे प्रहर मगन रहे, तेथी ज्ञान धारामां वहेनारो मोक्ष मार्गमां चालनारो कहेवाय छे ॥ ५०६ ॥

हवे सातमो एकांत नय जे ज्ञेय क्षेत्र प्रमाण ज्ञान तेनो प्रपंच कहि देखाडे छे

अथ सप्तम ज्ञेय क्षेत्र प्रमाण ज्ञान यह कथनः—

सवैया इकतीसा.— कोउ सठ कहे जेतो ज्ञेयरूप परवान, तेतो ज्ञान तातें कहुं अधिक न और है; तिहूं काल पर छेत्र व्यापी परनयो माने, आपा न पिछाने ऐसी मिथ्या दृग दौर है; जैन मती कहे जीव सत्ता परवान ज्ञान, ज्ञेयसों अव्यापक जगत सिर मोर है; ज्ञानकी प्रनामें प्रतिबिंबित विविध ज्ञेय, जदपि तथापि थिति न्यारी न्यारी ठौर है ॥ ५०७ ॥

अर्थः— कोई मूर्ख एम कहे छे के जेटलुं ज्ञेय वस्तुनो आकाररूपनुं प्रमाण छे एटले ज्ञेयनो जेटलुं एक नाहानुं मोहोटुं प्रमाण छे. तेटलुं ज्ञाननुं प्रमाण छे. तेथी कोई वधारे बीजो प्रमाण नथी एम ज्ञानने त्रणे कालमां परक्षेत्र व्यापी अने पर वस्तुथी परिणम्यो, एटले ज्ञेयथी एक मेक थयो ज्ञानने माने छे. पण ज्ञानने आत्मारूप जाणे नहीं; एवी मिथ्या दृष्टिनी दोर छे. हवे तेने जैनमती स्याद्वादी कहे छे. अहो नाई, जेटलां आकाश क्षेत्रमां जीव सत्ता छे तेटलाज प्रमाण ज्ञान छे. अने ज्ञान छे ते घट पटादिक ज्ञेय पदार्थथी अव्यापक छे एज जगतना मस्तके मुगट समान छे. जो पण ए ज्ञानना प्रनामां नाना प्रकारना ज्ञेय पदार्थ प्रतिबिंबित थई रह्याछे, तोपण ज्ञानना स्थिति जूदीज छे. अने ज्ञेयनी स्थिति पण जुदीज छे. अने ज्ञाननुंठेकाणुं आत्मा छे ते पण जुदोज छे, अने ज्ञयना पृथिवी प्रमुख जे ठेकाणा छे ते पण जुदाज छे ॥ ५०७ ॥

हवे आठमो नय नास्तिकवादी एम कहे छे के वस्तु नथी एज एकांत नय छे. तेनो प्रपंच कही देखाडे छेः— अथ अष्टम नास्तिकवादी वस्तु नाही यह कथन·—

सवैया इकतीसा.—कोउ शून्यवादी कहे ज्ञेयके विनास होत, ज्ञानको विनाश होइ कहो कैसे जीजियें; तातें जीवितव्यताकी थिरता निमित्त अब, ज्ञयाकार परि

के ज्ञेयनो आकार वस्तुमां नाखे तो आंही आकार गमावी नाखवानी शुं मतलब छे जेम आरसीमां नाना रूप प्रति बिंबनो झलकाट देखाय छे तो पण आरसी निर्मल जोइए पण तेने प्रतिबिंबनु कलक कोई न कहे. ॥ ५०४ ॥

हवे पांचमो एकांतनय ते ज्यां लगें ज्ञेय त्यां लगें ज्ञान तेनो प्रपंच कही देखाडेछे

अथ पचम जोंलो ज्ञेय तोंलो ज्ञान यह कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ अज्ञ कहे ज्ञेयाकार ज्ञान परिनाम जोंलों विद्यमान तोंलों ज्ञान परगट है, ज्ञेयके विनाश होत ज्ञानको विनास होइ, ऐसी वाके हिरदे मिथ्यातकी अलट है, तासों समकितवत कहे अनुभौ कहान, परजे प्रमान ज्ञान नानाकार नट है, निरविकलप अविनस्वर दरव रूप, ज्ञानज्ञेय वस्तुसों अव्यापक अघट है ॥ ५०५ ॥

अर्थ – कोई अजाण पुरुष एवु कहेछे के जेवो ज्ञेयनो आकार तेवु ज्ञाननु परिणाम थायछे, तेथी ज्ञेय विद्यमान ज्या लगी होय, त्यां लगी ज्ञान प्रगट रहेछे अने ज्ञेयनो विनाश थये ज्ञाननो पण विनाश थायछे, एवी वात मिथ्यामतीना हृदयमां मिथ्यानी अलट लागी रहेछे, हवे तेनाथी सम्यकवत स्याद्वादी अनुभवनी कथा कहेछे अरे भाई, जेम कोई नट पुरुष छे ते नाना प्रकारना भेष धारीने नाना प्रकारना नाम धरावेछे, तेम ज्ञानरूप नट छे, ते नाना आकार धरीने पर्याय प्रमाणे बहुरूपी थायछे पण जेवु नट द्रव्य एक छे तेवु ज्ञान वस्तु पण निर्विकल्प एक छे, द्रव्यपणे अविनस्वर छे अने ज्ञान वस्तु ते ज्ञेय वस्तुथी अव्यापक छे, एटले ज्ञेयवस्तु ज्ञान वस्तुमां एक मेक न थाय तेथी ज्ञान ज्ञेयनी एकता अघटती छे ॥ ५०५॥

हवे छट्ठा एकांतनय सर्वे द्रव्यमयी आत्मानो प्रपंच कही देखाडे छे –

अथ षष्टम सर्व दर्वमय आतमा यह कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ मंद कहे धर्म अधर्म आकास काल, पुदगल जीव सब मेरो रूप जगमें, जाने न मरम निज मानें आपा परवस्तु बधे दिढ करम धरम खोवे डगमें, समकिती जीव सुद्ध अनुभो अभ्यासे तातें परको ममत्व त्याग करे पग पगमे, अपने सुभावमे मगन रहे आठों जाम, धारा वाही पंथिक करावे मोक्ष मगमें ॥ ५०६ ॥

अर्थ – कोई मूर्ख ब्रह्माद्वैतवादी एवु कहे छे के जो कोईनां मतमां धर्म अधर्म आकाश काल जीव पुदगल ए छ द्रव्य कहेवाय छे ते सर्वे ब्रह्म-छे तेथी मारु पणरूप सर्वे जगतमां विस्तरि रह्यु छे बीजो पदार्थ कोई नथी आंही गुरु शि

त्रणे कालमां आत्मा अचेतन थय. एवुं माहारो मत छे. हवे पंमित स्याद्वादी क हे छे अहो नाई ज्ञान वस्तु सहज स्वजावे अखमित छे, अने ज्ञेयनो आकार धरेछे तोपण ज्ञेयथी विरक्त छे जेम आरसीमा आकार नासे तोपण ते आकाररूप आर सी न थाय, जो चेतना लक्षणनोपण नाश मानीए तो जीवनी सत्तानो पण ना श थाय, त्यारे जीव वस्तु पण असत् थाय, तेथी जीव तत्व जे छे ते ज्ञान चेतनाना प्रमाणथीज मानीए ॥ १२ ॥

हवे बारमो एकात नय असप्रमाण जीव सत्तानो प्रपच कही बतावे छे –

अथ द्वादशम अस प्रमान सत्ता यद् कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ महा मूरष कहत एक पिममाहि, जहालों अचित चित अग लहलहे हे, जोगरूप नोग रूप नाना कार ज्ञेय रूप, जेते नेद करम के तेते जीव कहे हे, मतिमान कहे एक पिममांहि एक जीव, ताहीके अनत नाव अस फेलि रहे हे, पुग्गलसों निन्न कर्म जोगसों अखिन्न सदा, उपजे विन से थिरता सुनाव गहे हे ॥ १३ ॥

अर्थ –कोई बौधमती महा मूर्ख एम कहेछे के, एक शरीरमा ज्या लगी अचि त चित अंग के० घटपटादिक अचेतन विकल्प अथवा नर अमर तिर्यचादि चेतन अ ग ते सचित विकल्प चकचकी रह्याछे, योगपरिणामथी योगरूप नोगपरिणामथी नोगरूप एम ज्ञेयनां नानाप्रकार रूप जेटलां कर्म के० क्रियाना नेद थायछे ते टलाने जीव सख्या कहेछे, एटले जीव सत्ता अस प्रमाण थई, हवे बुद्धिवत स्याद्वा दी एम कहेछे के, अहो नाई एक पिंममा एक जीव छे अने ते जीवना ज्ञान परि णामे करीने अनत नाव नासनरूप अस फेली रह्या छे पण जीव छे ते पुदगल थी निन्न छे, अने कर्मयोगथी अनिन्न के० निराकुल छे, तेमां नाव अस अनत उ पजेछे अने अनत विणसे छे पण जीवतो स्थिरतारूपज ग्रही रह्यो छे ॥ १३ ॥

हवे तेरमो एकातनय क्षणनगुर जीवनो प्रपच कही देखाडे छे –

अथ त्रयोदशम छिननगुर जीव यद् कथन –

सवैया इकतीसा – कोउ एक छिनवादी कहे एक पिममांहि, एक जीव उपजत एक विनसतु है; जाही समै अतर नवीन उतपति हुइ ताही समै प्रथम पुरातन वसतु हे; सरवग वादी कहे जेसे जलवस्तु एक, सोइ जलविविध तरगनि लसतु है तेसे एक आतम दरव गुनपरजेसों अनेक नयो पें एक रूप दरसतु है ॥ १४ ॥

अर्थ – कोई एक क्षणवादी बौध एम कहेछे के एक पिममा एक जीव उपजे

छे. एक जीव विणसे छे. जे समे पिंममां नवा जीवनी उत्पत्ति न थाय ते समे पेहलो पुराणो जीव छे ते वसे छे, पछी ते विणसेछे. एम शृंखला बंध उपजे विणसे छे, तेने सर्वांगवादी जैनमती एम कहेछे के अहो जाई, जेम तलाव प्रमुख जलाश्रयमां जल वस्तु एक छे तेज जल विविध तरंगे करी लसित के० जिन्न जिन्न देखाय छे, तेम एक आत्मा द्रव्य छे ते गुण पर्यायथी अनेक रूप थयो छे तोपण द्रव्यार्थिक नये एक रूपेंज देखीए छे. ॥ १४ ॥

हवे चउदमो एकांतनय ज्ञायक अज्ञायकनो प्रपंच कही बतावे छेः–

अथ चतुर्दशम अज्ञायक ज्ञायक नय यह कथनः–

सवैया इकतीसाः– कोउ बाल बुद्धि कहे ज्ञायक सकति जोलों, तोलों ज्ञान अशुद्ध जगत मध्य जानिये; ज्ञायक सकति काल पाई मिटि जाई जब, तब अविरोध बोध विमल वखानिये; परम प्रवीन कहे ऐसी तो न बनें बात, जैसे बिनु परगास सूरज मानिये; तैसें बिनु ज्ञायक सकति न कहावे ज्ञान, यहतो न पछ परतक्ष परवानिये. ॥ १५ ॥

अर्थ.– जेनी बालकना जेवी तुछ बुद्धि छे. एवो कोई शुन्य वादी तथागत कहेछे के, ज्यां लगे ज्ञानमां ज्ञायक शक्ति छे, त्यां लगें जगतमां ज्ञान अशुद्ध कहेवायछे, तेनो एज परमार्थ छे, के जे ज्ञायकपणुं छे ते विकल्परूप छे. अने विकल्पथी ज्ञान अशुद्ध थाय छे, तेथी निर्विकल्प ज्ञान शुद्ध छे. ज्यारे जवितव्यताने वशथी पोतानो समय प्रस्ताव पामीने ज्ञायक शक्ति छे ते मटी जाय, त्यारेज विकल्पना विरोधथी रहित एवुं बोध के० ज्ञान ते विमल के० शुद्ध वखाणीए. हवे एने परम प्रवीण स्याद्वादी कहेछेः– अरे जाई जे तुं ज्ञायक एकतामां विकल्प मानीनें शंका पामेछे, अने ज्ञायक पणुं अशुद्ध मानेछे, ए वात बने नही. जेम प्रकाशविना सूर्य मान्यो न जाय, अने प्रकाशथीज सूर्य मान्यो जाय, तेम ज्ञायक शक्तिविना ज्ञानपण कहेवाय नही, जो तमे अनुमानप्रमाणथी तमारो पक्ष साधन करता नथी, तो प्रत्यक्ष प्रमाणथी पण तमारो पक्ष प्रमाण कीधो न जाय, तेथी तमारो पक्ष छे ते पक्षाजास छे. ॥ १५ ॥

हवे जेणे चउद एकांत नय हटावी दीधा एवो जे स्याद्वाद तेनी स्तुतिकरेछे–

अथ स्यादवाद प्रशंसा कथनः–

दोहरा.– इह विधि आतम ज्ञान हित, स्यादवाद परवान, जाके वचन विचारसों, मूरख होइ सुजान ॥ १६ ॥ स्यादवाद आतम सदा, ता कारन बल

वान, शिव साधक बाधा रहित, अपे अखंमित आन ॥१७॥ स्यादवाद अधिकार यह, कह्यो अलप विसतार, अमृत चद मुनिवर कहे, साधक साधि दुवार ॥१८॥

अर्थ— आवी रीते आत्माना ज्ञाननो हितकारी स्याद्वाद मत छे, तेज प्रमाण जाणवो जे स्याद्वादनी वचन युक्तिमां पूर्वे मूर्ख होय ते सुजाण थाय ॥१६ जे स्याद्वाद स्वरूप छे तेज आत्मानी दशा छे ते कारणथी स्याद्वाद छे ते महा बलवान छे मोक्षनुं साधक छे, अने कोई युक्तिथी भांगे नही, तेथी ते बाधा रहित छे अक्षय छे .अने सर्व नयमा फेलि रह्यो छे तेथी अखमित एनी आण छे ॥१७॥ श्री आचार्य एम कहे छे के, आ कईक स्याद्वादनो अधिकार अल्पविस्तारथी कह्यो हवे श्री अमृतचद आचार्य बारमो साध्य साधक द्वार कहे छे ॥ १८ ॥

इति श्री नाटक समयसारना इग्यारमां स्याद्वाद नामा द्वारनो अधिकार बालाबोध सहित समाप्त ॥ ॥ ॥ ॥

हवे साध्य वस्तु अने साधक वस्तुनु स्वरूप देखाडे छे —

अथ श्री साध्य साधक स्वरूप कथन—

सवैया इकतीसा —जोइ जीव वस्तु अस्ति प्रमेय अगुरु लघु, अजोगी अमूरतिक परदेशवत हे, उतपतिरूप नाशरूप अविचल रूप, रतनत्रयादि गुण भेदसों अनत हे, सोई जीव दरव प्रवान सदा एकरूप, ऐसो शुद्ध निह्चे सुभाउ विरतंत हे, स्यादवाद मांहि साधि पद अधिकार कह्यो, अब आगे कहिवेकों साधक सिधात हे ॥ १९ ॥

दोहरा — साधि शुद्ध केवल दशा, अथवा सिद्ध महत, साधक अविरत आदिबुध, छीन मोह परजत ॥ २० ॥

अर्थ — जे कोई जीव वस्तु छे ते द्रव्यथी अस्तिपणे प्रमेयपणे अगुरु लघु पणे अजोगीपणे अमूर्त्तिक पणे, प्रदेशवत पणे, प्रवर्ते छे, तेमां जे नास्तिपणु नही ते अस्तिपणु जाणवु, अने प्रमाण ग्रहण करवा योग्य छे, तेथी प्रमेयपणुं छे अपुद्गलीक पणाथी अगुरु लघुपणु छे, इत्यादि धर्म छे उत्पत्तिरूप पर्यायथी विनाश रूप पर्यायथी अविचलरूपथी ज्ञान दर्शन चारित्र रत्नत्रय कहिए. इत्यादिक गुणोना भेदथी अनत पणु लीधो वर्त्ते छे तेज जीवद्रव्य एकरूपज सदा प्रमाण छे ते एकरूपने अस्तित्व प्रमेयत्वादिक धर्म करी आगल कह्यो तेज शुद्ध निश्चयनयथी एनो एवो स्वभाव वृत्तांत छे तेज साध्य पद कह्यु एटले साधवालायक वस्तु ते स्याद्वाद अधिकारमां कह्यु हवे आगल एने साधवानु सिद्धांत साधकते

॥ १७ ॥ शुद्ध केवलीनी दशाने साध्य वस्तु कहीए. अथवा महंत सिद्धपणुं ते साध्य वस्तु छे. अने चोथा अविरत गुणठाणाथी मांमीने बारमां क्षीण मोह गुणठाणा पर्यंत नव गुणठाणाना धणी जे बुध के० पंमित छे. ते सर्वेने साध्य कहीए.२०

हवे अविरत्यादि साधकनी व्यवस्था कहेछे.– अथ साधक व्यवस्था कथन.–

सवैया इकतीसाः– जाको अधो अपूरव अनवर्त्ति करनको, भयो लाभ भई गुरु वचनकी बोहनी; जाके अनंतानुबंध क्रोध मान माया लोभ. अनादि मिथ्यात मिश्र समकित मोहनी, सातों परकिति खपी किवा उपसमी जाके, जगी उरमांही समकित कला सोहनी; सोइ मोक्ष साधक कहायो ताके सरवंग, प्रगटी शगतिगुन थानक आरोहनी. ॥ २१ ॥ सोरठाः– जाको मुगति समीप, भई भव स्थिति घट गई; ताकी मनसा सीप, सुगुरु मेघ मुकता वचन. ॥ २२ ॥

अर्थः– जे जीवने अधो के० यथाप्रवर्त्ति करणनो अने अपूर्व करणनो तथा अनिवृत करणनो लाभ थयो, एटले ए सम्यक्त प्राप्तिना त्रण करण छे तेनो लाभ थयो, अने जेने गुरु वचननी बोहनी थई एटले गुरु उपदेशनो लाभ थयो, तेथी अनंतानुबंधी क्रोध मान माया अने लोभ, तथा अनादिकालनी मिथ्यात मोहनी, मिश्रमोहनी अने सम्यक्त मोहनी, ए सात प्रकृति जेनी क्षय थई, अथवा उपशमी अथवा सातेमा कंइ खपी कंइ उपशमी, एवी जेना हैयामां सुहामणी समकितनी कला जागी. तेज जीव मोक्षनो साधनारो कहेवाय. तेना सर्व अंगमां एटले बाह्य अभ्यंतर अंगमां गुणस्थानक आरोहणी के० चढवानी शक्ति प्रगटी॥२१॥ जेने भवस्थितिना परिपाकथी मुक्ति समीप थई, अने संसारनी स्थित घटी गई, ते पुरुषनी मनसा शीप समान थई, त्यां सदगुरु ते मेघ समान थयो, ते सदगुरुना वचन तेनी मनसारूप सीपमां अमौलिक मोती जेवा थया थकां रुचे छे॥ २२ ॥

हवे सदगुरुने मेघनी उपमा कहीने स्तवे छेः– अथ गुरु प्रशंसाः–

दोहरा – ज्यों बरषे बरषा समे, मेघ अखंमित धार, त्यों सदगुरु बानी खिरें, जगत जीव हितकार ॥ २३ ॥

अर्थः– जेम वरसाद कालमां मेघ अखंमित धारायें वरसे. तेमज सदगुरु होय ते जगतवासी जीवने हित कारक अमृत वाणी खेरे छे ॥ २३ ॥

हवे सदगुरुना उपदेश आक्षेपणी धर्म कथा कहे छेः– अथ उपदेश कथन.–

सवैया तेईसाः– चेतनजी तुमजागि विलोकहु लाग रहे कहाँ मायाकि तांई, आय कहींसुँ कहीं तुम जाउगे माया रहेगि जहांकि तहांई; माया तुह्मारि

न जाति न पाति न वसकि वेली न असकि कांई, दासि किए विनु लातनि मारत, एसि अनीति न कीजे गुसाई ॥ २४ ॥ दोहरा – माया छाया एक हे, घटे वढे छिनमाहि, इन्हकी सगति जे लगे, तिनहि कहुं सुख नाहि ॥२५॥ सवैया तेईसा – लोगनिसो कछु नातों न तेरों न तोसों कछू इह लोगकों नांतो, ए तों रहेरमि स्वारथके रस, तू परमारथके रस मातो, ए तनसों तनमे तनसे जड, चेतन तू त नसो नित हातो, होहि सुखी अपनो वल तोरिकें राग विराग विरोधका तातो ॥ २६ ॥ सोरठा – जे डुखुद्धीजीव, ते उतग पदवी चहे, जे समरसी सदीव, तिन्हको कछू न चाहिए ॥ २७ ॥ सवैया इकतीसा – हासीमे विपाद वसे विद्यामें विवाद वसे, कायामे मरन गुरुवर्त्तनमे हीनता, सुचिमे गिलान वसे प्रापतिमें हानि वसे, जैमें हारि सुदर दशामे छवि छीनता, रोग वसे भोगमें सयोगमे वियोग वसे, गु नमे गरव वसे सेवामाहि दीनता, और जगरीति जेती गर्भित असाता सेती, साताकी सहेली है अकेली उदासीनता ॥ २८ ॥ दोहरा – जिहि उतंग चढि फिरि पतन, नहि उतंग वहिकूप, जिहि सुख अतर भयवसे, सो सुख है डुखरूप ॥ २९ ॥ जो विलसे सुख सपदा, गये ताहि डुख होइ, जो धरती वहु त्रिणवती, जरे अगनि सों सोई ॥ ३० ॥ इति गुरुउपदेस समाप्त दोहरा – सव्वदमाहि सतगुरु कहै, प्रगटरूप जिन धर्म, सुनत विचक्षण सद्दहे मूढन जानै मर्म ॥ ३१ ॥

अर्थ – अहो जीव चेतन, तमे मोह निद्रा तजीने जागो, अने सत्य स्वरूप वे खीने मायारूप सपदाने शु वलगी रह्याछो, पृथिवी प्रमुख अढार भारादीक जे छे तेमा तमे क्याथी आव्या छो ? अने कही दशामा जाशो ? अने जेनी सा थे तमे राची रह्याछो, तेतो मायाजाल सपदा ज्यानी त्या रहेशे ए मायाजाल तमा री जाती नथी, तथा पाती नथी अने माया तमारा वसनी वेली नथी, अने तमा रा अश के० एक देशनी पण काई नथी, तेथी तमारे अने मायाने सवध तो को ई पण नथी अने तमे पोतानी करीने जाणोछो तेथी ए कहेवत साची करो छो, के दासी कर्या वगर लात मारो छो, तेथी उतपात थाशे माटे हे महत पुरुषो एवी अनीति न करवी ॥ २४ ॥ माया अने छाया एक सरखीज छे क्षणमा वधे छे अने क्षणमा घटे छे तेथी ए मायानी सगते जे लागी रहेछे तेने क्यारे पण सुख थातु नथी ॥ २५ ॥ आ जे पुत्र कलत्रादिक तु पोताना जाणे छे तेतो पारका लोका जेवा छे, ए लोकोनी साथे तारो काई नातो नथी अने ए लोकोने पण ता हारी साथे कोई प्रकारनो नातो नथी ए जे पुत्रकलत्रादि लोको छे तेतो पोता

नो म्योग्यनो ग्नघ। ताकिंग। माथ ग्मा। ग्ह्यो ते. अने अरे चेतन तु ता पोताना। च तना रूप परमारथना ग्ममां गची ग्ह्यो बुं. वली ए जे लोको ठे ते ताग तनथी तनमय थई ग्ह्या ठे. एटले ताहाग शरीरथी मोहीत ठे. अने ए शरीर तो जम् ठे अने तु तो चेतन ठे. तेथी ते जडथी ताहारी सदा जिन्नता ठे. माटे गग अने ६प रूप मोह कर्मनो नातो तोमी पोतानुं बळ फोग्वीने सुखी था॥ २६ ॥ जे जीव गग ६पथी दुष्ट बुद्धि थई ग्ह्यो ठे. तेतो इंडादिकनी उंची पदवी चाहे ठे, अने जे जीव सदाई समरसी नावमां रहे ठे. तेने कोई उंच पदवीनी चाहना थाती न थी. ॥ २७ ॥ ज्ञानीने सारी मानीए ठे पण तेमां विपवाद वसे ठे, विद्याने सारी जाणीए ठीए पण तेमां विवाद जगडो वसे ठे. कायाने सारी जाणीए ठीए पण ते मां मरणदोष ठे, गुरुताई के०वडाईने सारी जाणीए ठीए, पण तेमां कोईकवारे हीण ता ठे, पवित्राई सारी जाणीए ठीए, पण एने आदि के०अंते डुगछा उपजे ठे, प्राप्ति सारी जाणीए ठीए पण तेनी साथे हाणी लागी रही ठे, जीतवुं नलुं ठे पण तेनी साथे हारवुं लाग्युंज ठे, ज्ञानीनी सुंदर दशा नली ठे पण अंते कांती क्षीण थई जाय ठे, नोगनुं सुख सारुं ठे, पण तेमां रोगनी उत्पत्ति ठे, इष्ट संयोग नलो ठे पण तेनी साथे वियोगपण तैयार थई रहे ठे. प्रीती नली ठे पण तेनीसाथे अप्री ति पण उपजे ठे, औदार्यादिक गुणमां गर्व अहंकार वसे ठे, राज सेवा सारी ठे, पण तेमां दीन पणुं वसे ठे. अने बीजी जेटली जगतवासी जीवोनी रीत सारी जाणी ए ठे, तेतो सर्व अंतर गर्जित अशाता सहित ठे. तेथी एकली उदासीनताज शा तानी साहेली ठे. माटे समरस नावज श्रेष्ट ठे ॥ २८ ॥ जे उंचे ठेकाणे चढी ने पठी नीचे पडवुं थाय, ते उत्तंग ठेकाणुं न कहेवाय. पण ते ठेकाणुं कुवा जेवुं कहेवाय, तेम जे सुखना अंदर डुःख वसे ठे ते सुख पण डुःखरूप कहेवाय ठे॥ २ए केमके सुख संपदा विलसे ठे पण पठी तेना नाशथी डुःख थाय ठे. जेम तृणोवाली ध रती अग्निथी बली जाय ठे. पण तृणविनानी धरती कोई रीते बलती नथी, ए दृष्टां ते जाणी लेवुं ॥ ३० ॥ एरीते गुरु उपदेश सुचनीकामात्र संपूर्ण थयुं, सदगुरु जे ठे ते जिनधर्मने प्रगट रूप शब्दमांज कहे ठे. एटले वचनमां वखाणे ठे. ते जिन धर्मने सांजली विचक्षण पुरुष होय ते सर्दहे ठे, अने मूर्ख होय ते तेनो मर्म जाणे नही ३१

हवे कोईकने उपदेशनी रुचिठे, अने कोईकने नथी तेनुं स्वरूप कहे ठेः—

अथ उपदेश रुचि अरुचि कथन —

सवैया तेइसा.— जेसे काहू नगरके वासी द्वे पुरुष नूले, तामें एक नर सुष्ट ए

क छल करको, दोउ फिरे पुरके समीप परे कुवटमें, काहू ओर पथिककों पूछे प थ पुरको, मानो कहे कुटारो नगर है तुमारे ढिग, मारग दिखावे नहु रवे चातुर कों, तन पर छल पहिचाने पैन माने छल, तिसें प्रवान तैसें उपदेश गुरुको ॥२१॥ सवैया इकतीसा.— जैसें काहू जगतमें पावसको समो पाइ अपने सुभाइ महा मेघ बरषतु हे; आमल कषाय कटु नीवन मधुर खार, तेसो रस वाढें जहा जेसा दरषतु हे; तेसें ज्ञानवंत नर ज्ञानको बखान करे, रसको उमाहो हे न काहू परख तु है, वहे धुनि सुनि कोउ गहे कोउ रहे सोइ, काहूको विषाद होइ कोउ हरषतु है ॥ २२ ॥ दोहरा.— गुरु उपदेश कहा करे, दुराराधि ससार, वसे सदा जाके उदर, जीव पंच परकार ॥ २३ ॥

अर्थ.—जेम कोई नगरना रासी बे पुरुष नगरमांथी निकळीने दिशा भूली गया, ते बे पुरुषमां एक तो छल के० हैयाना सरल स्वभावनो हतो, अने एक हैयानो छल हतो, पछी ते बन्ने पुरुष नगरनी समीपज फरवा लाग्या पछी कोई बीजा वाटमार्गुने नगरनो मारग पुछवा लाग्या, त्यारे ते कहेवा लागो जे तमारु गाम ता तमारी समीप छे, एम कही ते बेनेने मारग देखाडे, अने रुडी रीते पुर के० नगरने खोज करी समजावे, पण बतावे तेमां जे सरल हैयानो छे, तेतो साचु माने, पण छल हैयानो छे ते माने नही, तेम गुरुनो उपदेश छे तेपण पुरुषना हैया प्रमाणे छे ॥ २१ ॥ जेम कोई अरण्यमां वरसाद पोतानो समय पामीने स्वभावथी भला मेघ वरसे छे त्यारे आमली प्रमुख खाटा रसवाळा तथा बावळ प्रमुख कसा एल रसवाळा, अने चित्रा प्रमुख कडवा रसवाळा, जाल प्रमुख नीव रसवाळा, शेरडी प्रमुख मधुर रसवाळा, अने लोण प्रमुख क्षार रस वाळा झाडोमां तेठ ना गुण प्रमाणे रस वृद्धि थाय छे, तेम ज्ञानी आचार्य प्रमुख पोताना वचन वर्गणा मधुर घोगे गिरे के० प्रकाशे छे, ते ज्ञाननुं वखाण करतां पोताना अनुभ व रसमां मगन थई रह्या छे, पण ते वखते कोई योग्य अयोग्य श्रोतानी परिक्षा करता नथी, पछी ते श्रोता पुरुषोमां ते ज्ञाननी ध्वनि सांभळीने कोई तेनी वा णीने ग्रहे छे, कोई सुई रहेछे, निद्रा करे छे, कोई मिथ्यादृष्टिने विषादपणुं थाय छे, अने कोई सम्यग् दृष्टि छे ते हर्ष पण पामे छे ॥ २२ ॥ माटे गुरुनो उपदेश शु करे आ संसारी लोक दुराराध्य छे, समजाववा कठण छे, जे संसारना उदरमां पांच प्रकारनी श्रद्धावाळा जीवो छे, ते सदा वसीज रह्या छे ॥ २३ ॥

हवे पांच प्रकारना जीवना नाम कहे छेः— अथ पंच प्रकार यथाः—

दोहराः—मूंघा प्रभु चूंघा चतुर, सूंघा रोचक सुद्ध, ऊंघा दुरबुद्धी विकल, घूंघा घोर अबुद्ध ॥ ३५ ॥

अर्थः—एक तो मुंघा तेतो प्रभु स्वामी छे, बीजा चुंघा के० चतुर छे, त्रीजा सुंघा के० रुचिवंत छे, चोथो ऊंघाके० दुष्ट दुरबुद्धि छे, अने विकल छे पांचमा घूंघा के० घोर कुबुद्धि छे ॥ ३५ ॥

हवे मूंघानुं लक्षण कहे छेः— अथ मूंघा यथाः—

दोहराः— जाकी परम दशाविषे, करम कलंक न होइ; मूंघा अगम अगाध पद, वचन अगोचर सोइ ॥ ३६ ॥

अर्थः— जेनी उत्कृष्ट दशा वर्णवेली छे, जेमां कोई कर्मरूप कलंक देखाय नही, एवो जे अगम तथा अगाध पद छे एटले सिद्ध पद छे जे वचननो विषय थई शके नही तेने मूंघा कहिये. ॥ ३६ ॥

हवे चुंघानुं लक्षण कहेछेः— अथ चुंघा यथाः—

दोहराः—जे उदास व्हे जगतसों, गहे परम रस पेम; सो चूंघा गुरुके वचन, चूंपे बालक जेम. ॥ ३७ ॥

अर्थः— जे जीव जगतथी उदासी थई रहे छे, अने जे परम दशामां रही तेना प्रेम सवादने ग्रहे छे. एटले उत्कृष्ट दशा नावे छे, तेतो गुरुना वचनने बालकनी परे चुंपे छे. अने पुष्ट थाय छे, ते चुंघा कहेवायछे. ॥ ३७ ॥

हवे सुंघानुं लक्षण कहेछेः— अथ सुंघा यथाः—

दोहराः— जो सु वचन रुचिसों सुने, हिए दुष्टता नांहि; परमारथ समुझे नही, सो सुंघा जगमांहि. ॥ ३८ ॥

अर्थः—जे रुचियें करी आगमना अंग जे सु वचन तेने सांभले छे, जेना हृदयमां दुष्टता नथी, पण सूक्ष्म तत्वने समझे नही तेने जगतमां सुंघा पुरुष कहीयें.॥ ३८

हवे ऊंघानुं लक्षण कहेछेः— अथ ऊंघा यथाः—

दोहराः— जाकों विकथ [illegible] र लगे [illegible] गम अंग अनिष्ट; सो ऊंघा विषई विकल, दुष्ट रिष्ट पापिष्ट. ॥

अर्थः—जेने [illegible], अने आगम अंग अनिष्ट लागे छे. तेतो [illegible] [illegible] ंत पापकर्मी थई रहेछे.

हवे द्रव्य क्षेत्र काल नावे करीने आत्मानु अखंमितपणुं कहे ठे –

अथ द्रव्य क्षेत्र काल नाव कथन –

सवैया इकतीसा –जेसे एक पाको आवफल ताके चारि अस, रसजाली गुठली ठीलक जव मानिये, यों तो न वनें पे एसें वनें जेसे दहेफल रुपरस गंध फास अखम प्रवानिये, तेसे एक जीवको दरव पेत्र कालनाव, अस नेद करि निन्न निन्न न वखानि ये, दर्व रूप पेतरूप कालरूप नावरूप, चारों रुप अलख अखम सत्ता मानिये॥६१

अर्थ – शिष्य कहेछे हे स्वामी द्रव्य क्षेत्र काल नावरुप वस्तुना चार अंशत मे कह्या ठो, त्या एवु दृष्टांत आपवु के, एक आंबफल ठे तेना रस, जाली एट ले रेसो गोटली अने गल ए चार अंस ठे, तेमज वस्तुना द्रव्य क्षेत्र काल नाव ए अंश होय के न होय, हवे गुरु कहे ठे हे शिष्य आहीं तु अंशके० खम समज्यो ते थी ए दृष्टांत दीधु तेतो वने नही पण आहीं अखमपणामा चार अंस जाववा तेनु दृष्टांत ए ठे के तेज आंब फल ठे तेमा रुप, रस, गंध ने स्पर्श ए चारे अखम्प णे प्रमाण करिए ए चार रस ठे, तेम एक जीवनु द्रव्य क्षेत्र काल नावरुप अंस नेद करीने रस जाली गोठलीने गल ए खम खम वखाणीये नहीं आहीं जे सा ध्यरुप आत्म सत्ता ठे ते द्रव्यथी अखंमितपणे, आत्मा द्रव्यरुप ठे अने क्षेत्रथी अखमपणे असंख्यात प्रदेशाअवगाहपणे ठे, कालथी अखम त्रिकाल वर्तिठे ना वथी अखम ज्ञायक नावपणे ठे, एम जीवना चार अंश अखमपणे मानीये॥६१॥

हवे साध्यपदमा ज्ञान ज्ञेयनु विशेष पणु अने अविशेष पणु कहेछे –

अथ ज्ञान ज्ञेय विशेष कथन –

सवैया इकतीसा –कोउ ज्ञान वान कहे ज्ञान तो हमारो रूप, ज्ञेय षटदर्व सो हमारो रूप नाही हे, एक नें प्रवान एसें दूजी अव कहों जेसें, सरस्वती अक्षर अरथ एक गंही हे, तेसें ज्ञाता मेरो नाम ज्ञान चेतना विराम, ज्ञेयरुप सकति अनंत मुऊ पाही हे, ताकारण वचनके नेद नेद कहों कोउ, ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयको विलास सत्ता माही हे ॥ ६२ ॥ चोपाई –स्वपर प्रकाशक सकति हमारी, तायें व चन नेद भ्रम नारी, ज्ञेय दशा द्विविधा परगासी, निज रुपा पररूपा नासी॥ ॥ ६३ ॥ दोहरा – निजरूपा आतम सकति, पररूपा परवस्त, जिनि लखि लीनो पेच यह तिनि लिख लियो समस्त ॥ ६४ ॥

अर्थ – कोई ज्ञानवंत प्राणी पोताना अनुनव प्रमाणथी एम कहेछे के जे ज्ञा न छे तेतो अमारु रुप छे अने जे षट द्रव्य ज्ञेयछे तेतो अमारु रूप नथी तेथी

ान अने ज्ञेय विशेष पणामां छे. गुरु कहे छे, एतो एकज नय प्रमाण छे. ह
वीजा नयथी जेम अविशेष पणुं थाय छे. तेम कहुं छुं. जेम सरस्वती के० वि
ारूप अर्थ छे. तेम अक्षर के० विद्यारुप अर्थ एकगो रहे, तेम ज्ञाता ते तो मा
ारुं नाम थयुं. अने जे ज्ञान छे तेतो चेतनानो विराम के० प्रकार छे. अने जे
ान ज्ञेय पणे परिणम्यो छे. ते तो ज्ञेयरूप शक्ति छे एवी अनंत शक्ति माहारीज
ासे छे. ते कारणथी वचन भेद करीने ज्ञान अने ज्ञेयनो भेद कोई भले कहो प
वीजो नय देखवाथी ज्ञाननो ने ज्ञेयनो विलास आत्म सत्तामांज छे. तेथी अवि
ाष पणुं छे. ॥ ६२ ॥ जेथी हमारी शक्ति एवी छे जे पोतानो प्रकाश करे अने
रनो पण प्रकाश करे तेथी स्व पर प्रकासक छे, तेथी ज्ञान अने ज्ञेय ए वचन भे
जे भेद छे, तेज भारी भ्रम उपजावेछेः पण वस्तु एक छे. ज्ञेय के० जे जाणवा यो
य तेतो दशा वे प्रकारे करीने कही एक तो निजरूपा बीजी पर रुपा कही छे॥६३
ांही जे निजरूप ज्ञेय दशा कहीए ते तो स्वरूप प्रकाशक आत्म शक्ति छे, अने जे वी
ी पर रूप ज्ञेय दशा ते परवस्तु छे जेणे एवातनो पेच जाण्युं तेणे तो समस्त जाण्युं६४

हवे एज पेच स्याद्वादमां जोड़ए ते स्याद्वादरूप वस्तुनुं वर्णन करेछेः—

अथ स्याद्वाद रूप वस्तु वर्ननः

सवैया इकतीसा-- करम अवस्थामें अशुद्धसो विलोकियत, करम कलंकसो र
हित शुद्ध अंग है, उभै नै प्रवान समकाल शुद्धाशुद्धरूप, एसो परजाइ धारी जीव
ाना रंग है, एकही समेमें त्रिधारूप पें तथापि याकी, अखंडित चेतना सकति स
वग है, यहे स्याद्वाद याको भेद स्याद्वादी जानें, मूरख न माने जाको हियो ढ
भंग है. ॥ ६५ ॥ निहचे दरव द्रिष्टि दीजें तव एकरूप, गुन परनति भेद भाव
ों वहुत है, असंप प्रदेश संयुगत सत्ता परवान, ज्ञानकी प्रभासों लोकालोकमा
जुत है, परजे तरगनिके अंग छिनभंगुर है, चेतना सकति सो अखंडित अचुत है,
ोहि जीव जगति विनायक जगत सार, जाकी मौज महिमा अपार अदभुत है,
६६ ॥ विभाव सकति परिनतिसों विकल दीसे, शुद्ध चेतना विचारतें सहज सं
है; करम संयोग सों कहावे गतिको निवासी निहचे सरूप सदा मुकत महंत है
ायक सुभाउ धरे लोकालोक परगासी सत्ता परवान सत्ता परगास वंत है; सोहै जी
जानत जहां न कौतुको महान जाके कीरति कहान अनादि अनंत है. ॥ ६७ ॥
अर्थः— कार्मण शरीर सहित आत्मानी कर्म अवस्थामा दृष्टि दइए तो आ
ाने अशुद्ध देखीए छीए. अने कर्म कलंक रहित केवल आत्मामाज दृष्टि द

डए तो जो शुद्ध अग छे अने ए बेउनय समकालेज प्रमाण करीए तो शुद्धाशु द्धरूप कह्यु जाय. एमा पर्यायनी धारायें करीने जीवना विचित्र प्रकार छे. शुद्ध अशु द्ध अने शुद्धाशुद्ध ए त्रणरूप आत्माना एकज समे पामीए, यद्यपि एम छे तथा पि त्रणेरूपमां आत्मानी अखण्डित चेतना शकति सर्व अगमा व्यापि रहि छे, तेने स्याद्वाद कहीए, तेनो भेद जे स्याद्वादी होय, तेज जाणे पण जेतु हृदय दुरजन के० सम्यक दृष्टि रहित छे ते मूर्ख एनो भेद न जाणे ॥ ६५ ॥ निश्चयनयथी द्रव्य उपर दृष्टी आपिये तो आत्म द्रव्य एकरूप छे अने ए आत्म द्रव्यना गुण परिणतिरूप भेद नयथी जोइये तो आत्मा बहुरूपे छे अने आत्मानी सत्ता अ सख्यात आकाश प्रदेश सयुक्त छे, अने ते सत्ताने प्रमाण आत्मा कह्यो जायछे अने ज्ञाननी प्रभा विचारीएतो लोकालोक प्रमाण क्षेत्रथी सयुक्त आत्मा कह्यो जायछे, तथा क्षणक्षणमा पर्याय रुप तरगना अग विचारीएतो जीव क्षणभगुरज कहेवाय छे, अने तेने चेतना शक्तिथी विचारीए तो सदा सर्वदा अखण्डज कहेवा य. अने अच्युत कहेवाय छे तेज जीव जगतनो विनायक के० धणी अने जगत मां सारभूत पदार्थ छे जेनी मोज अने महिमा अपार छे अने अद्भूत छे ॥ ६६ ॥ वळी जीनु पण स्याद्वाद कहेछे —रागद्वेषादिक विभाव शक्तिथी परिणम्यो देखीए तो आत्मा विकल देखाय छे, अने तेनी शुद्ध चेतनाज विचारीएतो सहज सतरूप दीसे छे. कर्म सजोग सहित आत्मा विचारीये तो चारे गतिनो वासी अने चारा सी लाख योनीनो वासी कहेवाय छे, अने निश्चयनयथी एनु सरूप जो विचारी ए तो सदा सर्वदा मुक्तिरूप महत छे, अने जो एने ज्ञायक स्वभाव धारी विचारीए तो लोकालोक प्रकाशक अमेय कहेवाय. अने जोए आत्मानी प्रकाशवत सत्ता विचारिये तो पोतानी सत्ता प्रमाण आत्मा होय, ते जीव वस्तु साध्य छे जे जहांन के० जगतने जाणेछे, जे महोटा कौतुकी पुरुष छे, जेनी कीर्ति अने कथा अनादि अनत काल लगी प्रवीन चालती आवेछे ॥ ६७ ॥

हवे साध्यरूप केवल दशानु वर्णन करे छे — अथ केवल दशा वर्नन —

सवैया इकतीसा — पंच परकार ज्ञानावरनको नास करि, प्रगटी प्रसिद्ध जग मांहि जगमगी है, ज्ञायक प्रभामे नाना ज्ञेयकी अवस्था धरि, अनेक भई पें एकता में रसमगी है, याही भांति रहेगी अनत काल परजत, अनत शकति फोरि अनत सों लगी है, नरदेह देवलमें केवलमें सरुप सुद्ध, ऐसी ज्ञान ज्योतिकी सि खा समाधि जगी है ॥ ६८ ॥

अर्थ — मति ज्ञानावरण प्रमुख पांच प्रकारना ज्ञानावरणीय कर्मनो नाश करीने प्रसिद्ध के० प्रत्यक्षपणे प्रगटी एवी जे ज्ञान ज्योतिनी सिषा जगतमां जगमगी रही छे. ते ज्ञान ज्योतिनी शिषा पोताना ज्ञायकपणारूप प्रजामां नाना प्रकारना ज्ञेयनी अवस्था धरीनें अनेक रूप थई छे, तेपण ज्ञायक पणानी जे एकता छे तेना रसथी मली रही छे. तेज रीते अनंत काल पर्यंत रहेशे. अने अनंत वीर्य फोरवीने अनंत पदथी लागी रहे शे. जेवारे मनुष्यना देहरूप देवलमां शुद्ध केवल ज्ञान स्वरूपे एवी ज्ञान ज्योतिनी सिखा जेवी समाधि छे, ते जागृत थई एटले सर्व विषमता नाव मटि गयो ॥ ६८ ॥

हवे अमृतचंद्र आचार्य छे ते चंद्रमां छे. अने तेनी कलारूपि त्रण धारा छे, तेनुं जुदा जुदा अर्थेथी वर्णन करे छेः—अथ अमृत चंद्र कलाके तीन अर्थ कथन·—

सवैया इकतीसा — अक्षर अरथमें मगन रहे सदा काल, महा सुख देवा जैसी सेवा काम गविकी ; अमल अवाधित अलप गुन गावना है, पावना परम शुद्ध नावना है नविकी, मिथ्यात तिमर अपहार वर्द्धमान धारा. जैसी उन्ने जाम लों किरन दीपे रविकी, ऐसी है अमृत चंदकला त्रिधारूप धरे, अनुनो दशा गरंथ टीका बुद्धि कविकी ॥ ६९ ॥ दोहरा.— नाम साधि साधक कह्यो, द्वार द्वादशम ठीक, समय सार नाटक सकल, पूरन नयो सटीक ॥ ७० ॥

अर्थ.— अमृतचंद्रनी अनुनव दशारूप कला छे तेतो अक्षर अर्थमां के० मोक्ष पदार्थमां सदाकाल मगन रहे छे, अने जेवी कामधेनुंनी सेवा सुखदायक थाय तेवी सुखदायक छे ; अने अमृत चंदनीग्रंथ टीकारूप कला छे तेज पाठला वर्णने करी युक्तछे, अने अमृतचंद कविनी बुद्धि छे, तेतो अक्षर अर्थ के० शब्दार्थ तेमां मगन रहे छे, आगल वीजुं वर्णन पूर्वली रीते जेम अमृत चंदनी अनुनव दशानी कला अने ग्रंथनी टीकानी कला अने कवीकला ए त्रणे कला अमल छे, अवाधित छे, अलख पुरुषना गुणनो गायन करतीज रहे छे तेथी पावन छे, नव्यत्व पणानी परम शुद्ध नावना छे,अने ए त्रणेकला, मिथ्यात्वरूप अंधकारनी अपहरण करनार छे, अने चडते परिणामे छे, जेम चढता बे पोहोर लगी सूर्यना किरण चढता चढता दीपे छे, तेम ए कलापण वधती वधती दीपे छे, एवी अमृतचंद्र आचार्यनी कला छे ते त्रण प्रकारनुं रूप धारण करे छे, एक तो अनुनव दशा वीजी ग्रंथनी टीका करी ते अने त्रीजी काव्य बंध करतां कविकला कीधी॥ ६९

साध्य साधीक नामे बारमो द्वार ठीक कह्यो, अमृतचद आचार्यनुं करेलुं कलस रूप समयसार नाटक ग्रथ टीका समेत संपूर्ण थयु ॥ ७० ॥

इतिश्री नाटक समयसारनो साध्य साधकनामा बारमु द्वार बालाबोधरूप संपूर्ण थयो ग्रथाग्रथ ८००० मान छे

हवे ग्रथनी अते अमृतचद्र आचार्य कवि आलोचनाकरेछे –अथ कवियालोचन – दोहरा – अब कविजन पूरव दशा, कहै आपसो आप, सहज हरष मनमे धरै, करै न पश्चाताप ॥७१॥ सवैया इकतिसा – जो मे आप छांडि दीनो पररूप गही लीनो, कीनो न वसेरो तहा जहा मेरो थल है, भोगनिको भोगी रहि करमको कर्ता भयो, हिरदे हमारे राग दोष मोह मल है, ऐसी विपरीति चाल भई जो अ तीत काल, सो तो मेरी क्रियाकी ममताताको फल है, ज्ञान दृष्टि भासी भयो क्रिया सो उदासी वह, मिथ्या मोह निद्रामे सुपनको सो छल हैं ॥७२॥ दोहरा – अमृत चंदमुनिराज कृत, पूरन भयो गरथ, समयसार नाटक प्रगट, पचमगतिकोपथ ७३

अर्थ - हवे कलसनो करनार कविछे ते पोतानेज पोतानी पूर्वदशा कहेछे पोताना मर्म जाण्याथी सहज हर्ष उपज्यो छे ते आलोचनामां धारे छे, पण प स्तावो करतो नथी ॥७१॥ अतीत काले जे माहारु आत्मानुं स्वभाव हतो ते म छांडि दीधो, अने पर जे कर्मादिक पररूप हतो ते मे लई लीधो, अने ज्यां समा धिविषे माहारो निवास हतो, त्यां मे वास न कीधो पाच इंद्रियोना विषय भोग नो भोगी थईने कर्मनो कर्ता थया, अमारा हैयामा राग द्वेषरूप महा मोह मल हतो एवी उलटी चाले चाल्यो तेनो अतीत कालमां वात वीती एवु जे कार्य थयु तेनो मारी क्रियामा ममता भावी तेनु फल थयु हवे तो ज्ञान दृष्टि भासी तेथी क्रियाथी उदासी थयो, अने जे अतीत कालमां अवस्था थई तना मोह मिथ्यात निद्रामा स्वपना जेवो छेतर थयो ॥७२॥अमृत चद आचार्यना करेलो ग्रथ संपूर्ण थया, आ समयसार नाटक जे ग्रथ छे ते प्रगट पणे पचम गतिके० मुक्तिना पंथ छे ॥७३॥ इति श्री समयसार नाटक ग्रथ अमृतचद आचार्यकृत संपूर्णम् ॥

हवे बणारसीदास कहेछे – दोहरा – जाकी भगति प्रभावसा, कीनो ग्रथ निरवाहि, जिन प्रतिमा जिन सारखी, नमे बनारसी ताहि ॥ ७४ ॥

अर्थ – जेनी भक्तिना प्रभावे करीने गहनाथी ग्रथहनो ते निर्वाहकरीगे त्यी श्रा कलसना जिन प्रतिमा छे त श्रीजिनेश्वर सरखी छे तेने बणारसीदास नमसे

हवे जेवा श्री जिनेश्वर देव महात्म्यवंत छे, तेवी जिन प्रतिमा पण महात्म वत छे ते कहेछेः— अथ जिन प्रतिमा महात्म्य कथनः—

सवैया इकतीसाः— जाके मुख दरससों जगतके नैननिकों थिरताकी बानी बढी चंचलता विनसी; मुद्रा देखे केवलीकी मुद्रा यादि आवे जहां, जाके आगें इंद्रकी विभूति दिसे तिनसी; जाको जस जंपत प्रकास जगे हिरदेमें, सोई सुद्ध मती होइ हुती जो मलिनसी; कहत बनारसी सु महिमा प्रगट जाकी, सोहे जिनकी छबी हे विद्यमान जिनसी ॥ ७५ ॥

अर्थ.— श्री जिन प्रतिमाना मुख दर्शन थवाथी जे तेना भक्तजन छे तेना नयनने कंइ आगल सम्यक् दशा के० संवर दिशा पामेली होय तेनी स्थिरतानी वाणी वधे, अने जे भावपदार्थमा चंचलता होय तेनो नाश थाय. अने पद्मासन स्थित मुद्रा आकार ज्यां देखे, त्यां केवलीनी मुद्रा याद आवे छे. ते केवलीनी मुद्रा एम संभारवामां आवे छे के, जेनी आगल इंद्रनी संपदा छे ते त्रण समान देखायछे, एटले चोसठ इंद्र महिमा करेछे, अने ते दशा सांभलवामां आवे तेवारे त्यां जे केवलीना जश कहेवायछे, तेना गुणनो प्रकाश हृयामां जागेछे, अने त्यां जे पहेली मति सम्यक् दशामां मेली जेवी हती ते शुद्ध थई, तेथी वणारसीदास कहेछे के जिन प्रतिमानी एवी प्रगट महिमा छे के ते विद्यमानजिनेश्वर समानज मानवी ॥७५॥

हवे जिन प्रतिमानो भक्तिवत छे तेनुं वर्णन करेछे.—अथ प्रतिमा माने ताको वर्णन

सवैया इकतीसा.—जाके उर अंतर सुदृष्टिकी लहरि लसी, विनसी मिथ्यात मोह निद्राकी ममारषी, सैली जिन सासनकी फैली जाके घट भयो, गरवको त्यागी षट दरवको पारषी, आगमके अक्षर परे हैं जाके श्रवनमें, हिरदे भंमारमें समानी बानी आरषी; कहत बनारसी अलप भवस्थिति जाकी, सोइ जिन प्रतिमा प्रवाने जिन सारषी ॥ ७६ ॥

अर्थः— जेना हीयामां सम्यक् दर्शननी लेहेर विराजमान थई रही छे. अने मिथ्यात मोहनीय रूप निद्रानी मुर्छा ते विनास पामी छे, तथा जेना घटमांथी जिन शासननी सेली के० तत्व समजवामां अने तत्व समजणमां अहं बुद्धिरूप अभिमाननो त्याग थयोछे, अने जे छ ए द्रव्यने परखनारो छे. जेना श्रवणमां आगमना अक्षर पडे छे. एटले सिद्धांत सांभले छे, वली ऋषेरियं आर्ष आर्षित ऋषि संबंधी वाणी ते जिनवाणी कहिये, ते जेना हृदयरूप भंमारमां समाणी छे.

एटले जरी छे, वणारसी दास कहे छे के जेनी भवस्थिति अल्प आवी रही छे, तेज पुरुष जिन प्रतिमाने जिन सरिखी प्रमाण करेछे ॥ ७६ ॥

हवे वणारसी दास पोतानी कथनी कहेछे — अथ वणारसी कथन —

चोपाई — जिन प्रतिमा जन दोष निकंदे, सीस नमाइ बनारसिवंदे, फिरि मन माहि बिचारे ऐसा, नाटक ग्रंथ परम पद जैसा ॥ ७७ ॥ परम तत्व परचे इसमांही, गुन थानककी रचना नाही, यामें गुनथानक रस आवे, तो गरथ अति शोभा पावे ॥ ७८ ॥ दोहरा — यह बिचारि संक्षेपसों, गुनथानक रस योज, वरनन करे बनारसी, कारन सिव पथ खोज ॥ ७९ ॥

अर्थ — जिन प्रतिमा छे तेज मनुष्यना राग द्वेष मिथ्यात्वनुं निकंदन करनार छे, तेथी वणारसीदास मस्तक नमावीने तेने वंदे छे पछी बनारसीदास मनमां एम विचारे छे के, आ नाटक ग्रंथमां जेवु परमपद छे तेवु आंही कहेछे ॥७७॥ आ ग्रंथमां उपादेयरूप परम तत्व, आत्म तत्वनो परिचय छे पण गुणस्थानकनी रचना आ ग्रंथमां नथी हवे जो आ ग्रंथमा गुणस्थानकनो रस आवे तो आ ग्रंथ सारी शोभा पामे ॥ ७८ ॥ ए प्रमाणे विचारीने संक्षेप मात्र गुणस्थानकना रसनी योजनो वणारसी दास वर्णन करे छे ते वर्णन शिवपथनुं कारण छे अने शिवपथनी खोजना छे ॥ ७९ ॥

हवे गुणस्थानकनु स्वरूप छे तेवु कहेछे — अथ गुनथानक सरूप कथन —

दोहरा — नियत एक विवहारसों, जीव चतुर्दश भेद, रंग जोग बहु विधि भयो, ज्यु पट सहज सुपेद ॥ ८० ॥

अर्थ — निश्चे जीव एकरूप छे अने व्यवहारनयथी जीव चौद भेद छे आ हीं दृष्टांत आपेछे, जेम वस्त्र सहज रंगमां सफेद छे पण रंगना जोगथी विविध प्रकारना रंगनो थाय तेम गुणस्थानकथी जीवनो तेवो भेद छे ॥ ८० ॥

हवे चौद गुण स्थानना नाम कहेछे — अथ चतुर्दश गुनथानक कथन —

सवैया इकतीसा — प्रथम मिथ्यात दूजो सासादन तीजो मिश्र, चतुर्थो अव्रत पंचमो व्रतव्रत है, छठो परमत सातमो अपरमतनाम, आठमो अपूरव करन सुख धाम है, नोमो अनिवृत्तिभाव दशमो सूक्ष्मलोभ, एकादशमो सु उपसांत मोह बाम है, द्वादशमो छीन मोह तेरहो सजोगी जिन, चौदमो अजोगी जाकी थिति अंक पांच है ॥ ८१ ॥ दोहरा — बरने सब गुन थानके, नाम चतुर्दश सार, अब बरनों मिथ्यातके, भेद पंच परकार ॥ ८२ ॥

अर्थः– प्रथम मिथ्यात, बीजो सास्वादन, त्रीजो मिश्र, चोथो अविरत, पांचमो रंच मात्र व्रत एटले देशव्रती, छगो प्रमत्त, सातमो अप्रमत्त, एवा नाम छे. आठमो अपूर्वकरण अथवा निवृत्ति बादर, ए बे नाम छे ते आंही सुखनो संच के० मिलाप छे, नवमो अनिवृत्ति बादर, दशमो सूक्ष्म लोभ, अग्यारमो उपसांत मोह, आंही मोहनी वंचना छे एटले मोहथी छुटवुं छे. बारमो क्षीण मोह क्षीए, तेरमो सयोगी जिन, ते केवली थयो, चौदमो अजोगी जिन, जेनी स्थिति अ इ उ ऋ ऌ ए ह्रस्व पांच अक्षर जेटली छे. ॥ ८१ ॥ एम सर्वे चउदे गुण स्थानना नामनु सत्यार्थ वर्णन कीधुं ते शोभे छे. हवे अनुक्रमें पहेला मिथ्यात गुणगणाना पांच प्रकारथी पांच भेद छे ते कहुंछुं. ॥ ८२ ॥

हवे पांच मिथ्यात्वना नाम कहेछे·– अथ पंच मिथ्यातके नाम कथन.–

सवैया इकतीसाः– प्रथम एकंत नाम मिथ्यात अभिग्रहीक, दूजो विपरित अभिनिवेसिक गोत हैं; तीजो विनै मिथ्यात अनाभिग्रह नाम जाको, चोथो संसै जहां चित भोरकोसो पोत है; पंचमो अज्ञान अनाभोगिक गहलरूप, जाके उदे चेतन अचेतनसो होत हैं; ए पांचो मिथ्यात भ्रमावे जीवको जगतमें, इन्हके विनास समकितको उदोत है. ॥ ८३ ॥

अर्थः– पांच मिथ्यात्वमां पेहेलो एकांत पक्षना ग्राही अभिग्रहिक नामे मिथ्यात्व छे· बीजो मिथ्यात पेहेला मिथ्यातथी विपरित छे· तेनुं अभिनिवेसिक एवुं गोत के० नाम छे, त्रीजो विनय मिथ्यात सर्वनो पूजनार छे जेनुं नाम अनाभिग्रहिक छे, चोथो संसयिक मिथ्यात ज्यां चित्त छे ते भ्रमण करतुं रहे भमराना वचानी माफक, पाचमो अज्ञान मिथ्यात, ए अनाभोगीक पणाथी अजाणपणे एकेंद्रियादिकमां गहलरूपी छे. निद्रानी छाकनुं स्वरुपी छे· जेना उदयथी चेतन छे ते अचेतन थई रह्युछे. जेना नाम लीधा ते एज पांचे मिथ्यात जीवने जगतमां भमावेछे· ए पांचे मिथ्यात्वनुं विनाश थएथी समकेतनो उद्योत थायछे ॥ ८३ ॥

हवे एकातवादी अभिग्रहीक मिथ्यातनुं लक्षण कहेछेः– अथ एकांत यथा·–

दोहराः– जो इकंत नय पक्ष गहि, छके करावे दक्ष; सो इकंत वादी पुरुष, मृषावंत परतक्ष. ॥ ८४ ॥

अर्थ.– साते नयमा हर कोई एक नयनो पक्ष ग्रहीने पोताना जाणपणामां छकी जायछे, अने दक्ष के० तत्ववेत्ता कहेवाय, ते एकांत मतनो स्थापक मीमांसक नैयायक प्रमुख पुरुष छे ते प्रत्यक्षपणे अभिग्रहीक मिथ्याती छे ॥ ८४ ॥

हवे जाणपणामां तो काईक अनेकांतपणु छे. पण हठयकी विपरीत कहेछे माटे तेनुं लक्षण कहेछे — अथ विपरीत यथा —

दोहरा — ग्रथ उकति पथ उछपे, थापे कुमत सुकीय, सुजस हेत गुरुता ग्रहे, सो विपरीती जीय ॥ ८५ ॥

अर्थ — ग्रंथमां जे कह्यो एवो मार्ग तेने उथापीने नन्हवादिक पोतानी कुमति थापे पोतानी प्रसिद्धि थवाने माटे गुरुता के० आचार्यपणो ग्रहेछे, ते जीव अनेकाततायी विपरीत थयो तेने आनिनिवेसिक मिथ्यामती कहीए ॥ ८५ ॥

हवे जेनो विनय मिथ्यात छे एवा अननिग्रहिक मिथ्यातीनु लक्षण कहेछे

अथ विनय मिथ्यात यथा —

दोहरा — देव कुदेव सु गुरु कु गुरु, गिने समान जु कोइ, नमें जगतिसों सब निको, विनय मिथ्याती सोइ ॥ ८६ ॥

अर्थ — सु देवने अने कुदेवने सु गुरुने अने कु गुरुने जे कोइ समानज गणे छे, अने तामली तापसनीपरे परिणाम प्रवर्ज्या लेइने नक्तियी सर्वेने नमेछे, पण गुणदोषनी खबर न होय ते विनय मिथ्यात्व कहिये ॥ ८६ ॥

हवे जेना जाणपणामा सदेह छे, ते सशय मिथ्याती कहिये तेनु लक्षण कहेछे

अथ ससय यथा —

दोहरा — जो नाना विकलप गहे, रहे हिए हेरान, थिर व्हे तत्व न सदहे, सो जिय ससयवान ॥ ८७ ॥

अर्थ — जे अपार नय जाल देखिने जीवमा सशय राखे, नानाप्रकारना चित्त विकल्प ग्रहे अने हेरान थई रहेछे स्थिरता राखीने तत्वने सर्दहे नही तेज जीव सशयवत मिथ्याती कहीये ॥ ८७ ॥

हवे पांचमा अज्ञान मिथ्यातीनु लक्षण कहेछे — अथ अज्ञान यथा —

दोहरा — जाको तन डुख दहलसों, सुरति होति नहि रच, गहल रुप वरते सदा, सो अज्ञान तिरयंच ॥ ८८ ॥ पच नेद मिथ्यातके, कहे जिनागम जोइ, सादि अनादि सरूप अब, कहों अवस्था दोइ ॥ ८९ ॥

अर्थ — शरीरमा डुखना दहेलथी जेने हेय उपादेयनी, रचमात्र सुरता रेती नथी, मुर्छित रूपे जे सदा वर्त्ते छे ते एकद्रियादिक तिर्यच अज्ञान मिथ्याती कहिये ॥ ८८ ॥ श्री जिनेश्वरना आगम सिद्धांत जोईने मिथ्यातना पाच नेद कहेछे -- जे

नी आदि पामीए तेतो आदि मिथ्यात्व कहीए, अने जेनी आदि न पामीए तेतो अनादि मिथ्यात्व कहिये, एवी एवी मिथ्यात्वनी अवस्थानुं स्वरूप हवे कहेछे॥ ८९॥

प्रथम सादि मिथ्यात्वनुं लक्षण कहेछेः– अथ सादि यथाः–

दोहरा.– जो मिथ्या दल उपसमे, ग्रंथ भेद बुधि होइ,
फिरि आवे मिथ्यातमें, सादि मिथ्याती सोइ ॥ ९० ॥

अर्थः– जे मिथ्यात मोहनीयना दलने उपसमावीने मिथ्यात्व ग्रंथी भेदीने ज्ञाता समकेती थईने पाछा मिथ्यातमां आवे ते सादि मिथ्यात्व कहीए एना मिथ्यातमां हवे आदि थई तेथी सादि मिथ्याती कहिये ॥ ९० ॥

हवे बीजो अनादि मिथ्यातनुं लक्षण कहेछेः– अथ अनादि यथा कथनः–

दोहराः– जिनि गरंथि भेदी नही, ममता मगन सदीव; सो अनादि मिथ्यामती, विकल बहिर्मुख जीव. ॥ ९१ ॥

अर्थ.– जे जीवे मिथ्यात्व ग्रंथी भेदी नथी अने सदासर्वदा काल लगण ममतामांज मगन रहे, ते जीव अनादि मिथ्याती कहीए, अने जे बहिर्मुख रहे जेने परमात्मा द्रव्यनी दृष्टि नथी, ते बहिर्मुख जीव कहीए. ॥ ९१ ॥ इति श्री बणारसीदास कृत नाटक समयसारनेविषे प्रथम गुनस्थानकनो अधिकार संपूर्ण थयो.

दोहराः– कह्यो प्रथम गुण थान यह, मिथ्या मत अभिधान; अलप रुप अब बरनवुं, सासादन गुन थान. ॥ ९२ ॥ सवैया इकतीसा – जैसे कोउ क्षुधित पुरुष खाइ खीर खांड, वोन करे पीछे के लगार स्वाद पावे हे; तैसे चढि चोथे पांचएके छठे गुनथान काहु उपसमीको कषाइ उदे आवे हे; ताहि समे तहां गिरें परधान दशा त्यागी, मिथ्यात अवस्थाकों अधोमुख व्हे धावे हे; बीच एक समे वा छ आवली प्रमान रहे, सोइ सासादन गुनथानक कहावे हे. ॥ ९३ ॥

अर्थ·– जेनुं मिथ्यात एवुं नाम छे, ते पेहेलुं गुणस्थानक सूचना मात्र कह्युं, हवे संक्षेप मात्र सास्वादन गुन स्थाननुं स्वरूप कहुंछुं. ॥ ९२ ॥

अर्थः– जेम कोइ क्षुधावंत पुरुष छे ते खीरखांड खाय पछी तेने वमन करेछे ते वमननी पछी पण खीरखांडना भोजननो लगारेक स्वाद पामेछे. तेम कोइ जीव उपशम सम्यक पामीने चोथे अविरत गुनस्थाने रह्यो छे. अथवा उपशम सम्यक पामताज सरखो समान पांचमां गुणठाणे अथवा छठे गुणठाणे चढयों त्यां समकेतनी उज्वलता न थई, अने अनंतानुबंधी उपशमि कषाय हतां ते उदय थयो, ते समयमां ते त्रणे गुण ठाणाथकी ते उपशम सम्यक्तनी प्रधान

दशा जे श्रेष्ट दशा तेने त्यागीने फरी मिथ्यात दशाने उधे मुखे उलटो रहेछे, एटले मिथ्यात्व पामतामा अने सम्यक्त छूटतामां वचे एक समयकाल प्रमाणे अथवा उत्कृष्ट छ आवलिका प्रमाणे जे सम्यक अश रहेछे तेनेज सासादन गुन स्थानक कहिए ॥ ८३ ॥ इति द्वितीय गुन थानक समाप्त

दोहरा – सासादन गुन थान यह, नयो समापत बीय, मिश्र नाम गुन थान अव, बरनन करो त्रितीय ॥ ८४ ॥ सवैया इकतीसा – उपसमी समकिती केतो सादि मिथ्यामती, दुहूनिको मिश्रित मिथ्यात आइ गहे हे, अनतानुबंधी चोकरीको उदे नांही जामे, मिथ्यात समे प्रकृति मिथ्यात न रहेहे, जहां सद्दहन सत्यासत्यरूप समकाल, ज्ञान भाव मिथ्या भाव मिश्र धारा वहे हे, जाकी थिति अतर मुहूरत वा एक समे, एसो मिश्र गुन थान आचारज कहे हे

अर्थ – आ बीजो सासादन नामे गुणस्थान सपूर्ण थयु हवे त्रीजु मिश्र गुनथाननुं वर्णन करुछु ॥ ८४ ॥

अर्थ – उपशम सम्यकि मिथ्यात मिश्र अने सम्यक्त रूप त्रण पुज करीने ज्यारे मिश्र पुजमा जीव वर्त्ते, अथवा सम्यक्तथी पडीने फरी मिथ्यात्वमां आवी सादि मिथ्यात्वी थईने मिश्र पुज उदय थयाथी मिश्रमा वर्त्ते, ए बेउने मिश्र गुणस्थानक कहियं, केमके मिथ्यात्व सम्यक्त थको वर्त्ते छे जेथी ससार अनतो वधे ते अनतानुबंधीनी चोकडी कहिए, तेनो जेमां उदय नथी अने मिथ्यातपणु शमे तथा उपशमेछे, त्यां मिथ्यात्वनी प्रकृतिनो उदय रहेतो नथी ज्यां समकाले सत्यासत्य रूप श्रद्धा छे एटले श्रद्धामां साचु खोटुं बेउ छे तिहा ज्ञान भाव छे, ते मिश्र धारामां वहेछे अने मिथ्यात्व भाव पण सम्यक्त धाराथी मिश्रित धारा थकी वहेछे जेनी उत्कृष्टि स्थित अतर्मुहूर्त काळनीछे, अथवा जघन्य एक समयनी छे एतु नाम त्रीजु मिश्र नामे गुणठाणु आचार्यजी कहेछे इति तृतीय गुनस्थान समाप्त ८५॥

दोहरा – मिश्र दशा पूरन भई, कही यथा मति भाषि, अथ चतुर्थ गुनथान विधि, कहों जिनागम साखि, ॥ ८६ ॥

अर्थ – मिश्र गुणठाणानी जेवी दशा छे, ते जेवी पोतानी बुद्धि छे तेवी रीतें भाषाबद्ध कही ते सपूर्ण थई हवे श्री जिनागमनी शाख लईने चोथा सम्यक्त गुणठाणानी विधि कहुछु ॥ ८६ ।

हवे चोथा सम्यक्त गुणठाणानु वर्णन करेछे –अथ सम्यक्त वर्णन –

सवैया इकतीसा – केई जीव समकित पाइ अर्ध पुदगल, परावर्त्त काल तांई

चोखे होई चित्तके. कोई एक अंतर मुहूरतमें ग्रंथि भेदि. मारग उलंघि सुख वेदे मोष वितके; ताते अंतरमुहूरततें अर्द्ध पुग्गललों. जेते समें होही तेते भेद समकितके; जाही समे जाको जब समकित होई सोई, तबहीसों गुन गहे दोष दहे इतके. ॥ ९७ ॥ दोहराः— अथ अपूर्व अनवर्त्ति त्रिक, करन करे जो कोइ; मिथ्या ग्रंथि विदार गुन, प्रगटे समकित सोइ ॥ ९८ ॥

अर्थ.— सम्यक्त पामीने चित्तनो चोखो थईने अर्द्ध पुद्गल परावर्त्त काल लगण संसारमां रहेछे, अने कोईक जीव तो एकज अंतमुहूर्त्त कालमां मिथ्यात ग्रंथी भेदी समक्त पामीने चारे गतिनो मार्ग उलंघन करी मोक्षरूप वित्तना सुख वेदे. पण संसारमां रहे नही तेथी सम्यक्त पामीने जघन्य संसार स्थित एक अंतर मुहूर्त्तनी छे अने उत्कृष्टि संसार स्थित अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तनी थायछे. हवे एटली संसार स्थितिनी वचमां एक एक समयनी वृद्धि करता जेटला ते स्थितिना भेद थाय तेटला सम्यक्तना भेद पामीए ए रीते सम्यक्तना घणा भेद पामिये; जे समे जेने सम्यक्तनु उदय होय ते समे ते जीव त्यारथी पोताना गुण ग्रहेछे; अने इतके के० ते संसार अवस्थाना दोषनुं दहन करेछे. ॥ ९७ ॥ अथ के० यथाप्रवृत्ति करण, अपूर्व करण, अनिवृत्ति करण ते त्रणे करण जे कोई भव्यजीव करे छे त्यां कोईक वखते एक, आयुकर्मविना बाले कर्मनी स्थिति अंत कोडा कोडी सागरोपम प्रमाण रहे. त्यारे यथाप्रवृत्ति करण थाय पछी मिथ्यात ग्रंथी भेदवाथी अपूर्वकरण थाय. अने सम्यक्त प्रगटवाथी अनिवृत्तिकरण थाय, जे कोई ए त्रणे करण करी मिथ्यात ग्रंथी विदारीने सम्यक्त स्वरूप पामे तेज सम्यक्त कहिये

हवे अष्ट प्रकारथी सम्यक्त विवरण करे छेः— अथ अष्टरूप कथनः—

दोहरा.— समकित उतपति चिन्ह गुन, भूषन दोष विनास; अतीचार जुत अष्ट विधि, वरनों विवरन तास ॥ ९९ ॥

अर्थ.— सम्यक्तनुं स्वरूप, १ सम्यक्तनी उत्पत्ति. २ सम्यक्तनुं चिन्ह, ३ सम्यक्तनो गुण, ४ सम्यक्तनुं भूषण. ५ सम्यक्तना दोष, ६ सम्यक्तनो विनाश, ७ सम्यक्तना अतिचार, ८ ए सर्व आठ प्रकार थया. तेनो विवर्ण करूंछुं ॥ ९९ ॥

हवे प्रथम सम्यक्तनुं स्वरूप कहेछे.— अथ सम्यक्त यथा —

चोपाई.— सत्य प्रतीति अवस्था जाकी; दिन दिन रीति गहे समताकी; छिन छिन करे सत्यको साको, समकित नांउ कहावे ताको ॥ १०० ॥

अर्थ.— सत्यना जेनी प्रतीत छे ते साचानेज सर्दहेछे, एवी जेनी अवस्थाछे

अने दिवसे दिवसे वधती वधती क्षमा निर्लोभता प्रमुख समतानी रीत ग्रहण करेछे एवु सत्य कार्य पहेला कठीन कर्युं, तेथी हवे क्षण क्षणमा सत्यनो सा को के० महा कार्य करेछे ते जावनु नाम सम्यक्त कहीए ॥ ६०० ॥

हवे सम्यक्तनी उत्पत्ति कहेछे – अथ उत्पत्ति यथा –

दोहरा – केतो सहज सुजावको, उपदेशे गुरु कोइ, चिहुं गतिसेती जीवकों, सम्यक् दरशन होइ, ॥ ६०१ ॥

अर्थ – नदीने किनारे उजा पाणीना कल्लोल आवता जाताना न्यायथी एट ले सरिडपल घोलना न्यायथी कोइने सहज स्वजावमाज समकित उपजे, कोई गु रुना उपदेश थकी सम्यक्त उपजे, जे जीव चारे गतिमा सयन निद्रा करी रह्यो हतो तेने जे सम्यक्त उपजे छे ते एवा एवा प्रकारथी उपजेछे ॥ ६०१ ॥

हवे जेथी सम्यक्त उपज्यु जाणीए ते सम्यक्तना लक्षण कहे छे –अथ लछन यथा

दोहरा – आपा पर परचेविषे, उपजे नहि सदेह, सहज प्रपच रहित दशा समकित लक्षण एह ॥ ६०२

अर्थ – आत्मा अने आत्माथी बीजा जे कर्मादिकना पुद्गल छे, एटले बीजा पाचे द्रव्य तेना परिचय प्रतीतिमा, सदेह उपजे नही अने सहज सनावमा आ त्मदशा ते मायानी प्रपच रहितथाय ए सम्यक्तना लक्षण कहिये ॥ ६०२

हवे सम्यक्तना गुण कहेछे – अथ गुन यथा –

दोहरा – करुना वछल सुजनता, आतमनिंदा पाठ, समता जगति विरागता, धरम राग गुन आठ ॥ ६०३ ॥

अर्थ – दया तथा सर्वनु हित वाछक पणु सर्व साथे मैत्री जाव राखवु आत्मनि दानु पठन करवु, इष्ट अनिष्ट उपर समजावे रहेवो, देव गुरुनी जक्ति, वैरागरस माज निज्यो थको रहेवु धर्मथी राग राखवो ए सम्यक्तना आठ गुण छे ॥६०३॥

हवे सम्यक्तना पाच जूषण कहे छे – अथ पच जूषण यथा –

दोहरा – चित प्रजावना जावजुत, हेय उपादयवानि, धीरज हरष प्रवीनता जूषन पच वखानि ॥ ६०४ ॥

अर्थ – चित के० ज्ञान एटले जिन शासननो जेवी रीतें प्रजाव वधे तेवा जा वमा रहेवु हेय उपादेयनु ज्ञानवत थई, धैर्यमा रहेवु, सम्यक्तपामीने हर्ष राखवु, तत्वविचारमां प्रवीणता राखवी, ए पाच सम्यक्तनां जूषण वखाणिए ॥ ६०४ ॥

हवे सम्यक्तना पचीस दोष कहेछे:– अथ पंचवीस दोष यथा:–

दोहरा:– अष्ट माहामद अष्ट मल, षट आयतन विशेष; तीन मूढता संजुगत, दोष पचीसी एष. ॥ ६०५ ॥

अर्थ:– अष्ट महामद छे, अने आठ मल छे, छ आयतन विशेष छे, अने त्रण मूढता छे; ए सर्व एकठा करीए तो पचीस दोष थाय. ॥ ६०५ ॥

हवे आठ जातना मद कहेछे:– अथ अष्ट मद यथा:–

दोहरा:– जाति लाभ कुल रूप तप, बल विद्या अधिकार; इन्हको गरव जु कीजिये, यह मद अष्ट प्रकार. ॥ ६०६ ॥

अर्थ:– जातिमद, लाभमद, कुलमद, रूपमद, तपमद, बलमद, विद्यामद, तथा अधिकार के० ऐश्वर्यमद ए आठ वस्तुनो जे गर्व करवो तेज आठ प्रकारना मद कह्याछे. ॥ ६०६ ॥

हवे आठ प्रकारना मल कहे छे.– अथ अष्ट मल कथन.–

चोपाई:– आसंका अस्थिरता वांछा; ममता दृष्टि दशा दुरगंछा; वत्सल रहित दोष परभापे; चित्त प्रभावना मांहि न राखे. ॥ ७ ॥

अर्थ:– धर्म उपर अने जिनशासन वचन उपर शंका राखे, धर्ममां स्थिरता नही. स्वर्गादिकनी वांछा धरे, कुटुंबादिकविषे ममत्व भाव राखे, ए धर्म मलीन छे एवी दुगंछा करे, स्वामी वत्सल न करे, पारका दोष प्रकाशे, ज्ञान प्रमुख विविध प्रकारनी प्रभावनामां चित्त न राखे. ए आठ मल जाणवा ॥ ७ ॥

हवे छ आयतन दोष कहेछे ते छ स्थान मिथ्यात्वना कहेछे:–अथ षडायतनयथा –

दोहरा:– कुगुरु कुदेव कुधर्म धर, कुगुरु कुदेव कुधर्म; इनकी करे सराहना, यह षडायतन कर्म. ॥ ८ ॥

अर्थ:– कुगुरुने माननार, कुदेवने सेवनार, कुधर्मने माननार, कुगुरु प्रशंसा, कुदेव प्रशंसा, कुधर्म प्रशंसा, ए छएनी प्रशंसा करे ते आयतन कर्म दोष छे.॥८॥

हवे त्रण मूढता दोष कहेछे.– अथ मूढत्रय यथा कथन:–

दोहरा.– देव मूढ गुरु मूढता, धर्म मूढता पोष; आठ आठ षट तीनि मिलि, ए पचीस सब दोष. ॥ ९ ॥

अर्थ.– सुदेव समजे नही ए पेली मूढता, सुगुरुने समजे नही ए बीजी गुरु मूढता. सुधर्मने समजे नही ए त्रीजी धर्म मूढता. ए अविद्यानो पोषक छे ए रीते आठ मद, आठ मल, छ आयतन, त्रण मूढता, सर्व मली पचीस दोष यथा. ए

हवे पाच प्रकार सम्यक्तनो नाश करे ते कहेछे -- अथ नाश पचक यथा --

दोहरा -- ज्ञान गर्व मतिमदता, निठुर वचन उदगार; रुद्रभाव आलस द सा, नास पच्च परकार ॥ १० ॥

अर्थ -- ज्ञानना गर्वथी, बुद्धिनी मदताथी, कठण वचनना उदगार के० कहेवाथी, रौद्र भाव धरवाथी, आलसु पणाथी, एवी रीते पाच प्रकारे सम्यक्तनो नाश थायछे

हवे दिगबर सप्रदायथी सम्यक्तना पाच अतिचार कहेछे --अथ अतीचारपचकयथा -

दोहरा -- लोग हास नय नोग रुचि, अग्रसोच थिति चेव, मिथ्या आगमकी नगति, मृषा दरसनी सेव॥ ११ ॥चोपाई --अतीचार ए पच प्रकारा, समल करहि स मकितकी धारा, दूषन नूषन गति अनुसरनी, दसा आठ समकितकी वरनी॥ १२॥

अर्थ -- सम्यक्तनी क्रियाथी मने लोक हससे एवो मनमा नय राखे, पाच इ ड्रियना विषयनोगनी रुचि राखे, आगल माहारु शु थाशे एवी पोतानी स्थितिनु चिन्तन करतो रहे, मिथ्यात दर्शनना जे आगम सिद्धांत छे तेनी नक्ति करे, पाच मु मिथ्या दर्शननी सेवा करे ॥ ११ ॥ ए पाच प्रकारना अतीचार ते सम्यक्त नी उज्वल धाराने मल सहित करेछे, एवी दूषण गतिनी पाछल लागी अने नूष ण गतिने पाछल लागी रहे ए समकितनी आठ दशाने वरणी ॥ १२ ॥

हवे जे सात प्रकृतिना क्षय अथवा उपशमथी सम्यक्त उपजे ते कहेछे --

अथ सम प्रकृति यथा --

दोहरा -- प्रकृति सात अब मोहकी, कहो जिनागम जोइ, जिन्हको उदै नि वारिके, सम्यक दरशन होइ ॥ १३ ॥ सवैया इकतीसा -- चारित मोहकी चारि मिथ्यातकी तीनि तामे, प्रथम प्रकृति अनतानुबधी कोहनी, बीजी महामान रस नीजी माया नई तीजी, चोथी महालोन दसा परिगह पोहनी, पाचइ मिथ्यात म ति छठी मिश्र परनति, सातई समे प्रकृति समकित मोहनी, एई षट विगवनि तासी एक कुतियासी, सातो मोहप्रकृति कहावे सत्ता रोहनी ॥ १४ ॥

अर्थ -- हवे मोहनीयनी सात प्रकृति श्री जिनेश्वरनो आगम जोई कहुछु जे सात प्रकृतिनो उदय निवारवाथी सम्यक्त दर्शन प्रगट थायछे ॥ १३ ॥ मोहनी कर्मना बे नेद छे -- एकतो चारित्र मोहनी, बीजी मिथ्यादर्शन मोहनी, तेमां चारित्र मोहनीयनी चार प्रकृति, अने मिथ्या दर्शन मोहनीनी त्रण प्रकृति मळी सात प्रकृति छ, तेमा प्रथम प्रकृति अनतानु बधी कोहनी के० क्रोधनी, बीजी प्रकृति म हा अनिमानना रसमा नीनो थको रहे ते अनतानुबधी मान, अने त्रीजी प्र

कृति महामायामय ते अनंतानुवंधी माया, चोथी प्रकृति महालोभ दशामां प रिग्रहनी पोषण करनार ए अनंतानुवंधी लोभ, पांचमी प्रकृति मिथ्यात मोहनी, छठी प्रकृति मिश्रपरिणाम एटले मिश्र मोहनी, सातमी प्रकृति जे छे ते पहेली छए प्रकृतिनुं सम थयो एटले दवाई गई ते सातमी सम्यक्त मोहनी जाणवी, एमां धुरली छ प्रकृतितो विंगवनितासी के० वाघणी जेवी छे एनी गेल लागी तो कांइ छूटती नथी, अने एक सातमी प्रकृति कुतियासी के० कुनार्या जेवी छे तेनोपण भरोसो नथी ए साते मोहनीयनी प्रकृति ते जीवना सद्भावनी रोकनार छे. ॥१४॥

हवे साते प्रकृतिथी सम्यक्तना भेद उपजे ते कहे छेः— अथ सम्यक्त भेद कथन

छप्पय छंद — सात प्रकृति उपसमहि, जासु सो उपसम मंमित; सात प्रकृति छय करन, हार छायकी अखंमित; सातमांहि कछु खिपहि, कछुक उपसम करि रखे; सो छय उपसमवंत, मिश्र समकित रस चखे; षट प्रकृति उपशमइ वा खिपइ, अथ वा छय उपशम करे; सातई प्रकृति जाके उदय, सो वेदक समकित धरे ॥ १५॥

अर्थः— जेने ए सात प्रकृति उपसमी जाय तेतो उपसमी, पंमित के० ज्ञाता होय तेनुं नाम उपशम सम्यक्त कहीए; अने जे ए साते प्रकृतिनो क्षय करनार होय तेने क्षायकी कहीए, ते अखंमित ज्ञायक सम्यक्त होय, वली ए साते प्रकृतिमां कंई खपावे, कंई उपशमावी राखे, तेतो उपशम लक्षण सहित, तेमां मिश्ररूप सम्यक्त रसने चाखे, ए सातो प्रकृतिमां छ प्रकृति उपशमे अने सातमी सम्यक्त मोहनीय तो प्रकृति उदय आवी वेदे छे. अथवा छ प्रकृति क्षय थईछे अने सातमी वेदे छे. अथवा छ प्रकृतिमां कोई प्रकृतिनो क्षय थयो छे. अने कोइनो उपशम थयोछे, अने सातमी प्रकृति वेदे छे ते वेदक सम्यक्त धारी कहीए ॥ १५ ॥

हवे सर्वे सम्यक्तना नव भेद कहे छेः— अथ नवविधि सम्यक्त वर्ननंः

दोहराः— छय उपसम बरते त्रिविध, वेदक चार प्रकार; छायक उपशम जुग लजुत, नौधा समकित धार ॥ १६ ॥

अर्थः— क्षयोपशमसमकित त्रण प्रकारनो वर्त्ते छे. वेदक सम्यक्तना चार प्रकार छे, क्षायक सम्यक्तनो एक प्रकार छे अने उपशम सम्यक्तनो एक प्रकार, ए क्षायकने उपशम बेहुना मलवाथी सर्वे मली नव प्रकारनो सम्यक्तधारी थाय ॥ १६ ॥

हवे क्षयोपशम सम्यक्तना त्रण प्रकार कहेछेः— अथ क्षयोपशम त्रई यथाः—

दोहराः— चारि खिपहि त्रय उपसमहि, पण षय उपसम दोइ; षै षट उपसम एक यो, षय उपसम त्रिक होइ ॥ १७ ॥

अर्थ –माते प्रकृतिमा अनतानुबंधीनी चोकडी खपी गइछे, अने त्रण दर्शन मोह नी उपसमी छे, तेने क्षयोपशम सम्यक्त कहिए अथवा चार अनतानुबंधी अने मिथ्यात मोहनी ए पाच प्रकृति क्षय गईछे, अने वे उपशमी छे, तेने पण क्षयोपशम सम्यक्त कहीए, अथवा मिश्र मोहनी लगण छ प्रकृति क्षय गई, अने सातमी उपश मावीने, तोपण क्षयोपशम सम्यक्त कहीए एम त्रण प्रकारे क्षयोपशम सम्यक्त थाय हवे क्षयोपशम सहित सम्यक्त मोहनी वेदवाथी जे क्षयोपसम वेदक नीपजे छे ते ना वे प्रकार छे -- अथ क्षयोपशम वेदक द्विक यथा कथन --

दोहरा – जहा चारि प्रकरती खिपहि, द्वे उपसम इक वेद, षय उपसम वेद क दशा, तासु प्रथम यह भेद ॥ १८ ॥ पच खिपे इक उपसमे, इक वेदे जिहि ठौर, सो षयउपसम वेदकी, दशा दुतिय यह ओर ॥ १९ ॥

अर्थ – ज्या अनतानुबंधी चार प्रकृति क्षय थाय छे अने मिथ्यात मिश्र ए बेय प्रकृति उपशमेछे अने एक सम्यक्त मोहनी वेदेछे आवी दशामा जे क्षयो पशम सहित वेदक समकित थयोछे तेनो आ प्रथम भेद छे ॥ १८ ॥ वली ज्यां चार अनतानुबंधी अने मिथ्यात मोहनी ए पांच प्रकृति खपीछे, अने एक मिश्र मो हनी उपशमी छे अने एक सम्यक मोहनी वेदे छे त्यारे क्षयोपशम सहित वेदक समकितनी आ बीजी दशा थई ॥ १९ ॥

हवे जे क्षायिक सहित वेदक छे -- अने उपसमसहित वेदक छे तेनो प्रकार कहे छे –

अथ क्षायक वेदक उपशम वेदक यथा कथन -

दोहरा– षप षट वेदे एक जो, ष्यायक वेदक सोइ, षट उपसम इक प्रकृति विद, उपसम वेदक होइ ॥ २० ॥ ष्यायक उपसमकी दशा, पूरव षट पद माहि, कही प्रगट अब पुनरुक्ति, कारन वरनी नाहि ॥ २१ ॥

अर्थ – ज्या चारे अनतानुबंधि अने मिथ्यात मोहनी मिश्र मोहनी ए छ प्र कृति खपी छे अने एक सम्यक्त मोहनी वेदे छे, त्यारे क्षायिक वेदक सम्यक्त क हिये अने ए छ पूर्वे छ प्रकृति कही ते जेणे उपशमावी छे, अने एक सम्यक्त मो हनीय वेदे छे, त्यारे उपशम वेदक सम्यक्त कहिये ॥ २० ॥ क्षयोपशम नामे ने उपशमक्षयोपशम तेनी दशा ना पाछला षटपद के० छप्पय छदमां कही छे, तेनो ए प्रकृति छ तेना उपशम करीगयो, एवु प्रगट कह्यु छे तेथी आहि फरी कहेवाथी पुनरुक्तता समजे ते कारणथी फरी वरणवी नथी ॥ २१ ॥

ह्वे सम्यक्तना मूळ भेद चार अने उत्तर भेद नव छे ते कहेछे:— अथ भेद विवरन.—

दोहरा:— षय उपसम वेदक षिपक, उपसम समकित च्यारि; तीन च्यारि इक इक मिलत, सब नव भेद विचारि. ॥ २२ ॥

अर्थः—क्षयोपशम सम्यक्त, वेदक सम्यक्त, क्षायक सम्यक्त, उपशम सम्यक्त, एवा मूळ चार भेद समकितना थया. वळी क्षयोपशमना त्रण भेद, वेदकना चार भेद अने क्षायकनो एक भेद, उपशमनो एक भेद, ए सर्व मळी समकितना नव उत्तर भेद थया. ह्वे निश्चयादिक सम्यक्तनी व्यवस्था कहेछे.—अथ निश्चे व्यवहार सामान्यविशेष.—

सोरठा — अब निहचे विवहार, अरु सामान्य विशेष विधि; कहों च्यारि परकारि, रचना समकित भूमिकी. ॥ २३ ॥ सवैया इकतीसा:— मिथ्या मति गांठि भेद जगी निरमल ज्योति, जोगसों अतीत सोतो निहचें प्रवानिये; वहे दुंद दसासों कहावे जोग मुद्रा धरे, मति श्रुति ज्ञान भेद विवहार मानिये, चेतना चिह्न पहिचान आपपर वेदे, पौरुष अलप ताते समान बखानिये; करे भेदाभेदको विचार विसताररूप हेय गेय उपादेयसों विशेष जानियें. ॥ २४ ॥ सोरठा:— थिति सागर ते तीस, अंतर मुहुरत एक वा; अविरति समकिति रीत, यह चतुर्थ गुन थान इति २५

अर्थः— ह्वे निश्चेथी अने व्यवहारथी सामान्य विशेषपणे कहेछे सम्यक्तनी भूमिनी चार प्रकारनी रचना छे ते कहेछे. ॥२३॥ प्रथम मिथ्यात ग्रंथी भेदिने जे आत्मानी निर्मळ ज्योति जागी छे. अने जे ज्योति मन, वचन, कायाना जोगथी अतीत छे तेतो सम्यक निश्चेनयथी प्रमाण करीए. बीजुं ते सम्यक द्वंद्व दशाथी वर्त्तमान थाय छे. एटले बहु विकल्पथी धामधूम दशाथी वर्त्ते छे. त्यारे तो एवुं कहेवाय छे के ए जोग मुद्रा धारी छे आ मति ज्ञानी छे. आ श्रुत ज्ञानी छे. एवा भेद व्यवहारनयथी मानिये छे त्रीजुं ए आत्माना चेतनारूप चिन्ह के० लक्षण जाणीने आत्म द्रव्य अने परद्रव्यने वेदे छे. परतु अंतरायना उदयथी पुरुष पराक्रम अल्प छे. एटले अविरति छे. तेथी ए सामान्यपणे सम्यक्त कहीए, चोथुं गुण अने गुणिनो भेदाभेद विचार विस्ताररूप करे जेम आत्मा गुणिने ज्ञानादिक गुण छे. तेना भेदाभेदनो विचार करवो एवा हेय ज्ञेय उपादेयनां विचार सहित ए विशेषपणे सम्यक्त जाणिए. ॥ २४ ॥ अविरत सम्यकतनी उत्कृष्टि तेत्रीस सागरोपम स्थिति अथवा जघन्यथी एक अंतर मुहूर्तनी स्थिति ... क्तनी रहस्य मर्यादा ए बे प्रकारें होय, ए चोथुं गुणस्थानक ... ॥ २५ ॥

हवे पांचमां गुणस्थानकना विवरणनो आरंज करेछे —अथ पंचमगुनथानक आरंन

दोहरा — अब वरनो इकवीस गुन, अरु बावीस अनप्य, जिन्हके संग्रह त्यागसों, सोहे श्रावक पप्य ॥ २६ ॥

अर्थ — तेमा प्रथम पाचमा गुणस्थानक लायक श्रावकना एकवीस गुण कहुं अने बावीस अनक्ष्य छे ते कहुछु जे गुणने संग्रह करवाथी अने जे अनक्ष्यने त्यागवाथी श्रावकनो पक्ष गुणसंग्रहीत शोनायमान थाय ते कहुछु ॥ २६ ॥

हवे श्रावकना एकवीस गुणना नाम कहेछे —अथ श्रावक इकवीसगुन कथन —

सवैया इकतीसा — लज्जावंत दयावंत प्रसंत प्रतीतवंत परदोपकों ढकैया पर उपगारी है, सोम दृष्टि गुन ग्राही गरिष्ट सबकों इष्ट सीष्ट पक्षी मिष्टवादी दीरघ विचारी है, विशेषज्ञ रसज्ञ कृतज्ञ तज्ञ धरमज्ञ, नदीन न अनिमानी मध्य विवहारी है, सहजै विनीत पाप क्रियासों अतीत एसो, श्रावक पुनीत इकवीस गुन धारी है॥२७॥

अर्थ — लज्जावंत १, दयावंत२, सतमूर्ति ३, प्रतीतवंत ४, परदोषनो ढाकनार ५, परउपकारी ६, सोमदृष्टि ७, गुणग्राहक ८, गुरुवाई ९, सर्वनो वल्लन १०, शिष्टाचारनु पक्षी ११, मिष्टवचन बोलनार १२, लांबो विचार विचारे १३, विशेष ज्ञाननो जाणनार १४, शास्त्ररस जाणनार १५, करेला उपकारने जाणे १६, ते उपकारने जाणे १७, धर्मने जाणनार १८, अदीनपणु ग्रहे अनिमानी रहे नही १९, एवा मध्यम वेहेवारमा रहे के जेथी सहज स्वनावे विनयवंत होय २०, अने पापक्रियाथी रहित होय २१, एवा पवित्र श्रावक एकवीश गुणना धरनार थाय ॥ २७ ॥

हवे जघन्य श्रावकने बावीस वस्तु अन्नक्ष्य छे —अथ बावीसअनक्ष्य वर्नन —

कवित्त छंद —उंरा घोरवरा निसनोजन, बहु बीजा वेगन संधान, पींपर वर उंबरि कटूंबरी, पाकर जोफल होइ अजान, कंद मूल माटी विष आमिष, मधु माखन अरु मदिरापान, फल अति तुछ तुसार चलित रस, जिनमत ए बावीस अखान ॥ २८॥

अर्थ — गमोरा हेमा करहा १, काचा घोलना वमा २, रात्री नोजन ३, बहु बीज फल ते दाडम प्रमुख ४, वेगण ५, अथाणु पाणीमाहेलो ६, पीपलनी पीपी ७, वमवृक्षना फल ८, घोलरना फल ९, कटुंबरनां फल १०, पाकरीना फल ११, अजाण्याफल १२, कंदमूलनी जाति सर्वे १३, माटीनीजाति १४, अफीमप्रमुख १५ मांस १६ मधु १७, माखण १८, मदिरापान १९, बहु तुच्छ फल काचु फल २०, हीम २१, जेनो वर्ण, रस, गंध, स्पर्श फरी गयो होय ते चलित रस २२, ए बावीस वस्तु श्री जिनेश्वरना मत धारीने अनक्ष्य छे ते खावी नही ॥ २८ ॥

दोहरा — अब पंचम गुन थानकी, रचना वरनो अल्प;
जामे एकादश दशा, प्रतिमा नाम विकल्प. ॥ २९ ॥

अर्थ.—हवे देशविरतीनामें पांचमा गुनथानननी रचना अल्पमात्र वर्णवुं छुं संक्षेपमात्र करीने ते गुणथानमां अग्यार प्रतिमा धारी छे प्रतिमा एवुं नाम चारित्र विकल्पनुंछे. २९

हवे अगीआर प्रतिमाना यथार्थनाम कहेछे.—अथ एकादश प्रतिमा नामकथन

सवैया इकतीसाः— दंसन विशुद्धकारी वारह विरतधारी सामायक चारी पर्व पोसह विधि वहे; सचित्तको परिहारी दिवा अपरस नारी, आठो जाम ब्रह्मचारी निरारंभी व्है रहे; पाप परिग्रह छंमे पापकी न शिक्षा मंमे, कोउ याके निमित्त करे सो वस्त न गहे; एते देस व्रतके धरैया समकिती जीव, ग्यारह प्रतिमा तिन्हे भगवंतजी कहे ॥ ३० ॥

अर्थः— दर्शन विशुद्धनी करनारी दर्शन प्रतिमा १, बारे व्रतनी धरनारी विरति प्रतिमा. २, जहां सामायकनो उच्चार छे ते सामायक प्रतिमां. ३ जहां पर्व आव्याथी पोसह करवो ते पोसहप्रतिमा. ४, जहां सचित्त वस्तुनो परिहार कहियें ते सचित्त परिहार प्रतिमा. ५, ज्यां दीवसे स्त्री स्पर्श न करवो ते दिवस अस्पर्श प्रतिमा. ६, आठे प्रहर ब्रह्मचर्यमां रहेवुं ते ब्रह्मचर्य प्रतिमा. ७, सर्व आरम्भनो जिहां त्याग करवो ते निरारम्भी प्रतिमा. ८, परिग्रहने त्यागवो ते परिग्रह त्याग प्रतिमा, ९, ज्यां पापोपदेश न देवुं ते पापोपदेश त्याग प्रतिमा. १०. कोई आपणा निमित्त आहारादिक वस्तु करे तेले नही ते उद्देशिक त्याग प्रतिमा. ११, ए अगीयार प्रकारे करीने देश विरत धारी सम्यक्ति जीव कह्या छे तेनी आ इग्यार प्रतिमारूप प्रतिज्ञा भगवंतजी कहे छे ॥ ३० ॥

हवे ए प्रतिमानो अर्थ कहेछेः— अथ प्रतिमा कथनः—

दोहरा.— संयम अंस जग्यो जहां, भोग अरुचि परिनाम, उदे प्रतिज्ञाको भयो, प्रतिमा ताको नाम. ॥ ३१ ॥

अर्थः— जहां संयम चारित्रनो अंस जाग्यो, अने भोग अरुचिना परिणाम थया, त्यां कोई प्रतिज्ञानो उदय थयो तेनुं नाम प्रतिमां कहीए. ॥ ३१ ॥

हवे प्रथम दर्शन प्रतिमानुं विवरण करेछेः— अथ प्रथम प्रतिमा यथा.—

दोहराः— आठ मूलगुण संग्रहे, कुवसन क्रिया न कोइ; दर्शन गुन निर्मल करे; दर्शन प्रतिमा सोइ ॥ ३२ ॥

अर्थः—आही पेहेला कह्या छे करुणा वत्सल सुजनता इत्यादिक सम्यक्तना आठ मूल

गुण छे तेनो सग्रह करे, ज्यां साते व्यसननी क्रिया नथी एवा सम्यक्त दर्शनना गुण निर्मल करे, तेज दर्शन प्रतिमा कही इहा व्रत नथी एनो काल एक मासनो छे ॥३१॥

हवे बीजी प्रतिमानो विवरो कहेछे –अथ द्वितीय प्रतिमा यथा –

दोहरा – पच अनुव्रत आदरे, तीन गुण व्रत पाल, सिक्षा व्रत च्यारों धरे, यह व्रत प्रतिमा चाल ॥ ३२ ॥

अर्थ – पांच अणुव्रत, त्रण गुणव्रत अने सामायक धारे १, पोसह धारे २, देशावगासग करे ३, अतिथ सविभाग करे तथा चार शिक्षाव्रत धारे, ते व्रत प्रतिमा जाणवी तेनो काल बे महीनानो छे ॥ ३२ ॥

हवे त्रीजी सामायक प्रतिमानो विवरो कहेछे -- अथ तृतिय प्रतिमा यथा –

दोहरा -- दर्वभाव विधि सजुगत, हिये प्रतिज्ञा टेक, तजि ममता समता गहे, अतर मुहुरत एक ॥ ३४ ॥ चोपाई - जो अरिमित्र समान विचारे, आरत रूद्र कुध्यान निवारे, सजमसहित भावना भावे, सो सामायकवत कहावे ॥ ३५ ॥

अर्थ – दश दोष वचनना टालवा, बार दोष कायाना टालवा, ए द्रव्यविधि अने दश दोष मनना टालवा ते भावविधि जाणवी, तेणे करीने सयुक्त, अने हैया मा एक शो आठ पचपरमेष्टी मत्रनो स्मरण लागो रहे, एम बीजी पण कोई प्रतिज्ञानी टेक राखीने, ममता तजीने, समता ग्रहण करवी, एम एक अतरमुहूर्त काल पर्यंत सामायक चारित्र थाय ॥ ३४ ॥ जे कोई शत्रु मित्रने समान विचारे, आर्तध्यान रौद्रध्याननुं निवारण करे, पच सवर सहित थाय बार भावना भावे, तेज सामायकधारी श्रावक कहिए, ए त्रीजी प्रतिमा त्रण मासनी होय ॥ ३५ ॥

हवे चोथी पोसह प्रतिमानो विवरो कहेछे – अथ चतुर्थ प्रतिमा यथा –

दोहरा – सामायक कीसी दसा, चार पहर लों होइ,
अथवा आठ पहर रहे, पोसह प्रतिमा सोइ ॥ ३६ ॥

अर्थ – जे पूर्वे सामायकनी दशा कहीछे तेवी दशा चार प्रहर लगी होय, अथवा तेवी दशा आठ प्रहर लगे रहे तेज पोसह प्रतिमा धारी श्रावक कहीए, ए चार मासनी प्रतिमा जाणवी इहा आठम चउदश अमास पूनमने दहाडे तथा पर्वदिन आवेथी पोसह करे ॥ ३६ ॥

हवे पाचमी सचित्त परिहार प्रतिमानो विवरो कहेछे –अथ पचमी प्रतिमायथा –

दोहरा – जो सचित्त भोजन तजे, पीवे प्रासुक नीर,
सो सचित्त त्यागी पुरुष, पच प्रतिज्ञागीर ॥ ३७ ॥

अर्थः— जे सचित्त भोजननो त्याग करे अने फासु जल पीए. ए रीते जे पुरुष सचित्त वस्तुनो त्याग करे ए पेहली प्रतिमाथी एटली वधती. क्रिया करे तेनो पांचमी प्रतिमानो धरनार जाणवुं ए प्रतिमा पांच मास सुधी रहे. ॥ ३७ ॥

हवे छठी ब्रह्मचर्यप्रतिमानो विवरो कहेछेः— अथ षष्ठी प्रतिमा यथाः—

चोपाईः— जो दिन ब्रह्मचर्यव्रत पाले; तिथि आए निसि द्यौस संभाले; गहि नौवाडी करै व्रत रक्षा; सो षट प्रतिमा साधक अक्षा. ॥ ३८ ॥

अर्थः— सचित्तनो परिहारि तो प्रथमनीज रीते छे. अने दिवसे ब्रह्मचर्य व्रत धारे पाले. अने पंचमी पर्व आवे दीवसरात्रमां एटले आठ प्रहर ब्रह्मचर्य पाले तिहां नववाड करीने ब्रह्मचर्यव्रत्तनी रक्षा करे. ते पुरुष छठी प्रतिमानो साधनहार होय ते छमास लगणनी जाणवी ॥ ३८ ॥

हवे सातमी ब्रह्मचर्य प्रतिमानो विवरो कहे छे.— अथ सप्तमी प्रतिमां यथा.—

चोपाईः— जो नववाडि सहित विधि साधे; निशिदिन ब्रह्मचर्य आराधे; सो सप्तम प्रतिमाधर ज्ञाता; शील शिरोमनि जगत विख्याता ॥ ३९ ॥

अर्थ.—जे श्रावक नववाड सहित जे ब्रह्मचर्यव्रत्तनी विधि छे, ते विधियें ज रात दिवस ब्रह्मचर्यने आराधतो रहे. अने जे आगल छ प्रतिमानी क्रिया कही छे तेने तो लीधेज रह्यो छे. एवो जे श्रावक छे. तेनो सातमी ब्रह्मचर्य प्रतिमानो धरनार ज्ञानी पुरुष शील शिरोमणि जगतमां प्रख्याति पामशे जाणवो ॥ ३९ ॥

हवे आंही प्रसंगथी नव वाडनो विवरो कहे छेः— अथ नववाडि यथा.—

कवितछंदः— तियथलवास प्रेमरुचि निरखन, देपरीछ भाखन मधुवेन; पूरवभोगकेलि रसचिंतन, गुरु आहार लेत चितचेन; करि सुचि तन सिंगार बनावन, तियपरजंक मध्यसुखसेन; मनमथ कथा उदर भरि भोजन, ए नववाडि जान मतजेन ४०

अर्थ.— ज्यां स्त्रीओ वसे त्यां वासन करवो. प्रेमरुचि राखीने स्त्रीना अंगोपांग देखवा नहीं, दृष्टिदोषदुं निवारण करीने. आडुं पडदुं आपीने स्त्रीना मधुर वचन सांभले नहीं, पूर्व काळमां जे भोग क्रीडा करी होय तेनो रस चिंतवे नहीं, चित्तना चेनने अर्थे घृतादिक सहित गरिष्ट आहार लेवो नहीं. स्नान मंजनथी शरीरने पवित्र करीने शृंगार शोभा सजे नहीं. स्त्रीने सुवाना पलंगमां सुखसेन करे नहीं. मनमथ जे कंदर्प तेनी कथा कहे नहीं. पेट भरीने भोजन न करे, ए नव वाडो जैन मतमा जाणवी ए बहुज आनंद कारी छे ॥ ४० ॥

हवे आठमी निरारंभ प्रतिमानो विवरो कहे छे — अथ अष्टमी प्रतिमा यथा —

दोहरा — जो विवेक विधि आदरे, करे न पापारंभ, सो अष्टम प्रतिमा धनी, कुगति विजे रन थंभ ॥ ४१ ॥

अर्थ — जे कोई श्रावक पाछली सर्व क्रिया करतो थको विवेक सहित विधि विशेष आदरे, अने पापनो आरंभ पोताना हाथे न करे तेतो आठमी निरारंभ प्रतिमानो धरनार श्रावक कुगतिना विजयनो रणथंभ रुप थई रह्यो छे ॥ ४१ ॥

हवे नवमी परिग्रह प्रतिमानो विवरो कहे छे — अथ नवमी प्रतिमा यथा —

चोपाई — जो दसधा परिग्रहको त्यागी, सुख संतोष सहज वैरागी, समरस संचित किंचित ग्राही, सो श्रावक नौं प्रतिमा वाही ॥ ४२ ॥

अर्थ —जे नवविध परिग्रहनो त्यागी होय, सुख संतोष सहित वैरागी होय, उपशमरसथी भीज्यो रहेतो होय, किंचित ग्राही कहेता कईएक असन वशननु ग्रहण करनारो होय अने बीजी क्रिया सर्वे आठमी प्रतिमानी परे होय, ते श्रावक नवमी प्रतिमानो धरनार होय ए प्रतिमा नवमास लगी रहे ॥ ४२ ॥

हवे दसमी पापोपदेश त्याग प्रतिमा कहेछे — अथ दसमी प्रतिमा यथा —

दोहरा — परकों पापारंभको, जो न देइ उपदेश, सो दशमी प्रतिमासहित, श्रावक विगत कलेश ॥ ४३ ॥

अर्थ — नवमी प्रतिमा लगण गृह कुटुंब परिवारने पापनो उपदेशआपे पण आहीं पापारंभनो उपदेश त्यागे ते श्रावकने दशमी प्रतिमासहित जाणिये तेज श्रावक क्लेश रहित थयो एम जाणवु ॥ ४३ ॥

हवे अग्यारमी उचितग्राही प्रतिमानो विवरो कहेछे —अथ अग्यारमी प्रतिमा यथा

चोपाई — जो सुछंद वरते तजि डेरा, मठमंडपमहि करे बसेरा, उचित अहार उदंड विहारी, सो एकादश प्रतिमा धारी ॥ ४४ ॥

अर्थ — जे आपणां घर बार डेरा छांडीने स्वछंद वर्त्ते, अने मठ मंडपमां वास करे, आधाकर्मि आहार त्यागे, योग्य आहार ले अने उद्दंड व्यवहारी थइ साधु जेवु थाय, ते अगीआरमी प्रतिमनो धरनार थाय ए श्रावकनी करणी छे ॥ ४४ ॥

हवे अग्यारमी प्रतिमानी व्यवस्था कहेछे —अथ एकादश प्रतिमा यथा —

दोहरा — एकादश प्रतिमा दशा, कही देशव्रत माहि, वही अनुक्रममूलसों, गही सु छूटी नांहि ॥ ४५ ॥

अर्थ — ए अगीआर प्रतिमांनी दशा पांचमां देशविरति गुणस्थानकमाहे क

ही हवे प्रथमथी जे आगलनी प्रतिमाओ ग्रहण करेली छे तेतो अनुक्रमे ग्रहीज रह्यो छे पण तेथी छुटो नथी अने चढति चढति क्रिया करतो रहेछे॥४५॥

हवे अग्यार प्रतिमा धारीमां जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट, दशा कहेछेः—

अथ जघन मध्यम उत्कृष्ट कथनः—

दोहरा.— षट प्रतिमा तांई जघन, मध्यम नव परजंत; उत्तम दशमी ग्यारमी, इति प्रतिमा विरतंत ॥ ४६ ॥

अर्थः— छठी दिवश ब्रह्मचर्य प्रतिमा लगण जघन्य श्रावक होय, अने नवमी परिग्रह त्याग प्रतिमा लगण मध्यस्थ श्रावक थाय, दशमी अगीआरमी प्रतिमानो धणी उत्तम श्रावक होय एटले प्रतिमानुं वृत्तांत कह्युं इति प्रतिमा अधिकार समाप्त

हवे पांचमां गुणस्थाननी स्थिति कहेछे.— अथ पंचम गुनस्थानक स्थिति.—

चोपाई.— एक कोटि पूरव गनिलीजें; तामें आठ वरष घट कीजे; यह उत्कृष्ट काल थिति जाकी, अंत मुहुर्त्त जघन्य दसाकी ॥ ४७ ॥

अर्थः— एक कोटि पूर्ववर्षनी संख्या कीजे तेमां आठ वर्ष घटामीए पछी जे वर्ष रहे ते देश व्रति गुणस्थानकनी उत्कृष्टि कालस्थिति जाणवी, अने आदेशव्रत्ति गुणस्थाननी जघन्यदशानी स्थिति एक अंतर्मुहूर्त्त कालमांन होय ॥ ४७ ॥

हवे एक पूर्वकालनी वर्षसंख्या कहेछेः— अथ पूर्वसंख्या कथनः—

दोहराः— सत्तरि लाख करोड मिति, छप्पन सहस करोडि; एते वरष मिलाइ करि, पूरव संख्या जोडि. ॥ ४८ ॥

अर्थ —सित्तेरलाख कोटि वर्ष एटली मिती के० प्रमाणता उपर छपन हजार कोटि वर्ष मेलवीयें तेवारे पूर्वकालनी जोमिना वर्ष संख्या थाय तेना ७०५६००००००००००. एटला अंक थाय, लोक वेहेवारमां सात लख पांचननील साठ अर्व कहिए. ॥४८॥

हवे अंतर्मुहूर्त्त कालनो जघन्य उत्कृष्ट प्रमाण कहुंछुंः—अथ अंतमुहुरतप्रमान

दोहरा — अंतर मुहुरत द्वै घडी, कछुक घाटि उतकृष्ट; एक समे एकावली, अंत मुहूर्त्त कनिष्ट. ॥ ४९ ॥ यह पंचम गुनथानकी, रचना कही विचित्र; अब छत्तम गुनथानकी, दसा कहुं सुनु मित्र ॥ ५० ॥

अर्थ.— बे घमीमां एक समय ओछो थाय, त्यारेतो उत्कृष्ट अंतमुंर्त्त थाय अने एक आवलीने एक समय ते कनिष्ट के० जघन्य अंतमुहूर्त्त काल होय ए दिगंबर संप्रदायथी छे ॥ ४९ ॥ एम देशव्रति पांचमां गुणस्थाननी विचित्र पुरुपे रचना कहीछे हवे हे मित्र छठा गुणस्थाननी दशा कहुंछुं ते सांभलो ॥ ५० ॥

हवे प्रमत्तनामे छठ्ठा गुणठाणानी अवस्था कहुछु —अथ प्रमत्तगुनस्थानक
दोहरा — पंचप्रमाद दशा धरे, अठाइस गुनवान, थविर कल्प जिन कल्प
त, हे प्रमत्त गुनथान ॥ ५१ ॥

अर्थ --धर्मरागादि पांच प्रमादनी दशा धारेछे अने साधुना अठ्ठावीस गुण धा
छे आंही अठ्ठावीस गुण कह्या ते दिगंबर सम्प्रदायथी थिवर कल्पथी थिवरनो आचा
र अने जिनकल्पथी जिननो आचार तेणेकरी युक्त छे एम प्रमत गुण स्थान होय

हवे पांच प्रमादना नामनी गणती करेछे -- अथ पच प्रमाद यथा –
दोहरा — धरमराग विकथा वचन, निद्राविषय कषाइ, पच प्रमाद दसासहि
त, परमादी मुनि राइ ॥ ५२ ॥

अर्थ --धर्मउपर राग राखे, विकथा वचन बोले, निद्रासेवे, रस ते इंद्रिसुखना वि
षय सेवे, कषाय सेवे, ए दशासहित जे मुनिराज होय ते प्रमादी कहीए ॥ ५२ ॥

हवे श्री मुनिराजना अठावीस मूल गुण कहेछे - अथ अठाइस मूलगुन कथन
सवैया इकतीसा -- पच महाव्रत पाले पच सुमती सम्हाले, पच इंद्रि जीति भ
यो भोगी चित चेनको, षट आवशक क्रिया दवित भावित साधे, प्रासुक धरा
में एक आसन है सेनको, मजन न करे केसलुंचे तन वस्त्र मुंचे, त्यागे दतवन पें
सुगध स्वास चेनको, ठाढो करषे अहार लघु भुंजी एकवार, अठाइस मूल गुन
धारी जती जैनको ॥ ५३ ॥

अर्थ - सब्बाउ पाणाइ वायाउवेरमण इत्यादिक पच महाव्रत पाले इर्यासुमति
प्रमुख पांच सुमति सम्हालीने करे अने पाच इंद्रिनो जीतनार एटले जेने इंद्रियोनाविष
य सेवता चित्तमा चेन नउपजे, तेथी विषयोनो त्यागी थाय सामायक प्रमुख छ आव
श्यकक्रिया छे ते द्रव्यथी पण साधे अने भावथी पण साधे ए २१ गुण थया फासू पृथ्वी
प्रमुख सज्यामा प्रमाणोपेत एक शयन आसन राखे ए २२ गुण थया स्नान न
करे केश लोच करे शरीरथिपे वस्त्रनो त्याग करे दांतण नकरे स्वासवदननो सु
गध मूखगुण प्रमुख नले, उभो उभो अहारकरे लघुता के० अतप्रांत आहार
भुजे तेपण एक टेक खाय ए अठावीस मूल गुणनो धरनार जैन दर्शनी जती
होय ॥ ५३ ॥ ए दिगमबर सम्प्रदायथी गुण कह्या छे

हवे पाच महाव्रत कहेछे — अथ पच महाव्रत यथा –
दोहरा — हिंसा मृषा अदत्त धन, मैथुन परिग्रह साज, किंचित त्यागी अनुव्रती, सबि त्यागी मुनिराज ॥ ५४ ॥

अर्थः— जीवघात असत्य चोरी मैथुन परिग्रहसामग्री ए पांचे आश्रवने किंचित त्यागे ते अणुव्रती श्रावक कहिए अने सर्वथा त्यागे ते मुनिराज कहिए॥५४॥
हवे पांच प्रकारनी समिति एटले सावधानपणुं कहेछेः—अथ पंच सुमति यथाः—

दोहराः— चले निरखि भाखे उचित, भखे अदोष अहार;
लेइ निरखि डारे निरखि, सुमति पंच परकार ॥ ५५ ॥

अर्थ.— जोईने चाले ते इर्या सुमति, योग्य वचन बोले ते भाषा सुमति, दूषणरहित आहार लीए ते एषणा सुमति, वस्त्र पात्र निरखीने ले ते अदान सुमति मलमुत्रादिक जोइने परठवे ते पारीठावणीया सुमति, ए पांच प्रकारे सुमति॥५५॥
हवे जे अवश्य करीए ते आवश्यक कहीए तेना नाम कहेछे, अथषडावश्यकयथा

दोहराः— समता वंदन थुति करन, पडिकमनो सज्झाउ, काउसग्ग मुद्राधरन ए षडावसिक भाउ. ॥ ५६ ॥

अर्थ.— सामायक धरवी १ गुरुवंदना करवी २ चोवीशजिनेश्वरनी स्तुति करवी ३ अतिचारथी निवर्त्तनाते पडिकमना ४ स्वाध्याय करवी ५ काउसग्गमुद्रा धरवी ए छ आवश्यक कहीए. ॥ ५६ ॥
हवे थिवर कल्प अने जिनकल्पनो भेद कहेछे.—अथ स्थिविर कल्पी जिनकल्पी —

सवैया इकतीसा.— थविर कलपी जिनकलपी दुविध मुनि, दोउ वनवासी दोउ नगन रहत है; दोउ अठाईस मूल गुन के धरैया दोउ सरव तियागी व्है विरागता गहत है; थविर कलपिते जिन्हके सिष्य साखा होई,बेठके सभामें धर्म देसना कहत है; एकाकी सहज जिन कलपी तपस्वी घोर, उदेकी मरोरसुं परिसह सहत है. ॥ ५७ ॥

अर्थ.— थिवर कल्पी अने जिन कल्पी ए बे प्रकारना मुनिश्वर होय ए बे वनवासमां रहे. अने बेहु नागारहे ए बे अठावीस मूल गुणना धारनार ए बे सर्वस्व के० सर्व परिग्रहना त्यागी थईने वैराग्यभाव धरे एवा कह्या पण ते बेमां स्थिवर कल्पी ते कहीए जेने शिष्य शाखा होय, अने सभामां बेसिने धर्म देशना करे अने जे जिन कल्पी होय ते एकाकी होय घोरतपस्वी होय अने कर्म उदयनी मरोरथी जे परिसह उपजे छे ते सहन करे ए दिगमबर संप्रदायिक वचनो छे.॥५७॥

हवे प्रसंगथी बावीस परिसह साधुने सहेवा योग्य तेना नाम कहेछे.—

अथ बावीस परीसह यथा कथन —

सवैया इकतीसाः—ग्रीषममें धूप थिति सीतमें अकंप चीत, भूखेधरेधीर प्यासे नीर न चहतु है; डंस मसकादिनों न डरे भूमि सेन करे,वध बंध विथामें अडोल व्है र

हतु है, चर्या दुख भरे तिन फाससो न थरहरें, मल दुरगधकी गिलान न गहतु हैं, रोगनको न करें इलाज एसो मुनिराज, वेदनीके उदे ए परीसह सहतु है ॥ ५८ ॥

अर्थ — उष्ण कालमा तडकामा आताप सहे, शीत कालमां शीत सहेवाथी चित्तमां कपे नही, भुख्यो छता धीरज राखे अनेपणी ग्रहे नही प्यासवत थको स दोष पाणीनी चाहना करे नही नागा शरीरने मास मसकादि करडे तोपण मरे नही धरतिये सय्या करे मरणांत कष्ट आवे जातजातना वध बधनादिक कष्ट तेथी अमोल रहे पण चलायमान न थाय चर्या के० विहारनु दु ख भरे तदरीले विहारमां तथा सयनासनमा कठोर त्रण स्पर्शथी थरहरे नही मेलनी जे दुर्गध छे तेथी तेनी दुगछा न करे रोगनी वेदना सहे पण तेनो इलाज न करे एवा मुनिराज होय ते वेदनीय कर्मना उदयथी ए इग्यार परिसह उपजे छे तेने सहे छे ॥ ५८ ॥

कुडलीया — एते संकट मुनि सहे, चारित मोह उदोत , लज्जा सकुच दु ष ध रे, नगन दिगबर होत, नगन दिगबर होत, श्रोत रति स्वाद न सेवे, त्रियसनमुख दृग रोकि, मान अपमान न वेवे, थिर व्है निर्भय रहे, सहे कुवचन जग जेते, भिक्षुक पद सग्रहे, लहे मुनि सकट एते ॥५९॥ दोहरा —अल्प ज्ञान लघुता लखे मति उतकरष विलोइ, ज्ञानावरन उदोत मुनि, सहे परीसह दोइ ॥ ६० ॥ स हे अदरसन दुरदसा, दरसन मोह उदोत, रोकेउमग अजाचकी, अतरायके होत

अर्थ — हवे चारित मोहनीना उदय थवाथी मुनिराज सकट सहेछे ते सक टनी गणतरी कहेछे नगन दिगबर थई जे लज्जाथी सकोच दु ख उपजे छे तेने धरे एटले सकटथी न लागे १ वली नगन दिगबर थइ श्रोत के० इद्रीयना र ति स्वादने न सेवे, २ स्त्रीना हाव भावथी चुके नही ३ कोइ सत्कार करे काइ असत्कार करे तेउपर विषम भाव लावे नही ४ कोइ भयथी लागे नही स्थिर र हे निर्भय रहे ५ जगतमां जे कइ कुवचन छे आक्रोसना वचन छे ते सर्व सहन करे ६ भिक्षा ग्रहणथी भिक्षुक पद सग्रहे पण ते सकटथी लाजे नही ए सात सकट चारित्र मोहनीना उदयथी मुनि लहेछे ते सहन करे छे ॥ ५९ ॥ हवे ज्ञानादिना अल्पज्ञानथी मनमा पोतानी लघुता थाय ते सहन करे पोता ना मतिना उत्कर्षथी उत्कृष्टपणु जोइने गुस्ता सहे, एवी ज्ञानावरणी कर्मना उ दय थाना अज्ञान परिसह अने प्रज्ञापरिसह ए बे परिसह उपजे छे ते सहन करे ॥६०॥ दर्शन मोहनीयना उदय थवाथी सम्यक् दर्शननी मलिनता उपजे तेनी दुष्ट दशा सहे पण सम्यक दर्शनथी न लागे अतराय कर्मनो उदय थवाथी अ

जाननो उमंग रोकी रहे तेथी अजानने सहन करे ए बावीस परिसह कह्या॥६१॥
हवे जे कर्मथी जे परिसह उपजे ते कहे छे. अथ बावीस परिसह विवरनन –
सवैया इकतीसाः– एकादश वेदनीकी चारित मोहकी सात, ज्ञानावरनीकी दोइ एक अंतरायकी; दंसन मोहकी एक द्वाविंसति बाधा सब, केई मनसाकी केइ बाकी केई कायकी, काहुकों अलप काहूसों वहोत उनी साला, एकहीं समेमें उठे आवे असहायकी; चर्याथित सज्जामांहि एक सीत उस्नमांहि, एक दोइहोहि तीनि नांही समुदायकी ॥ ६२ ॥ दोहराः– नानाविध संकटदशा, सहिसाधे शिव पंथ, थिविरकल्प जिन कल्पधर, दोक सम निगरंथ. ॥ ६३ ॥
अर्थ.– अग्याआर संकट तो वेदनी कर्मना उदयथी उपजे छे चारित्र मोहनीय कर्मथी सात बाधा उपजे छे ज्ञानावरणनी करेली बे बाधा उपजे छे अंतरायनी कीधी एक बाधा उपजेछे दर्शन मोहनीनी करेली एक बाधा उपजे छे, सर्वे मळी बावीस बाधा थइ ते बावीसने परिसह कहीए बावीस बाधामां कोई मननी छे कोइ वचननी छे कोइ कायानी छे आ बावीस बाधामाहेली कोइने अल्प एक बे उपजे कोइने बहु उपजे तो एकज समे ओगणीस बाधानुं उदय थाय तेमां असहायनी के० जे बाधा बाधासाथेज बोलेछे पण साथे बने नही त्यारे तेमां एकज बाधा एक समे थई ते असहायनी कहीए. जेम चर्यापरिसह चालवाथी उपजे छे निषेद्या परिसह रहेवाथी उपजेछे शय्या परिसह रहेवाथी उपजे छे. अने शितबाधा तथा उष्ण बाधामां एक समयमां एकज बाधा उपजे तेथी आ पांच परिसहमां एक अथवा बे अथवा त्रण एक समयमां थाय पण समुदायरूप पांचे न थाय. ॥ इति परिसह अधिकार समाप्त थयो इति परिसह अधिकार –
अर्थ.– एवां नाना प्रकारना संकट छे तेनी दशा सहन करीने मुक्तिमार्ग साधे, तेथी थिविर कल्पना धरनार अने जिन कल्पना धरनार ए बेहु निग्रंथ समान छे
हवे थिवर कल्पमां अने जिनकल्पमां कंइ तफावत छे ते कहेछेः–
अथ स्थिविरकल्प जिनकल्प तारतम्य कथनः–
दोहरा – जो मुनि संगतिमे रहे, थविरकल्पि सो जानि, एकाकी जाकी दसा, सो जिनकल्प वषानि. ॥ ६४ ॥ चोपाई –थविर कलप मुनि कछुक सरागी; जिन कलपी महांत विरागी, इति प्रमत्त गुनथानक धरनी, पूरन भई जयारथ वरनी. ६५
अर्थ – जे मुनीश्वर गछना गणनी संगतमां रहेछे, तेतो थिवरकल्पी जाणीए जेने गणनी निश्रा नथी जेनी एकाकी दशा छे तेतो जिनकल्पी कहिए ॥ ६४ ॥

ए बेउ निग्रथमा थिवरकल्पनो धरनार कइक सराग दशामा छे, अने जे जिनक ल्पी छे ते महावैरागी छे एटले प्रमत्त गुणगणानी जे भूमिका बाधी अने यथार्थ साचपणे वरणी ते पूर्ण थई ॥ ६५ ॥

हवे सातमा गुणस्थाननु वर्णन करेछे – अथ सप्तम गुनथानक वर्नन –
चोपाई – अब बरनो सप्तम बिसरामा, अप्रमत्त गुनथानक नामा, जहा प्रमा द क्रिया विधि नासे, धर्मध्यान थिरता परगासे ॥ ६६ ॥ दोहरा –प्रथम करनचा रित्रको, जासु अंत पद होइ, जहां अहार विहार नहि, अप्रमत्त है सोइ ॥ ६७ ॥
अर्थ – मुक्तिरूप मदिरमां चढतां ते सातमो विसामो छे, अने अप्रमत्त गुण स्थानक जेनु नाम छे ते हवे वखाणे छे जे गुणस्थानमां धर्मरागादिकेकरी प्रमा दनी विधि नासेछे, जे पूर्वला गुणस्थानकमां धर्मध्यान चचल हतो ते आंही स्थि रपणे प्रकाश करेछे ॥ ६६ ॥ प्रथम गुणस्थानना अंतपदमां एटले छेला सम यमां चारित्रमोहनी कर्मने भेदवानो यथा प्रवृत्तिनामे प्रथम करण थयुं, आंही धर्मध्याननी स्थिरता एवी छे के ज्यां अहार विहार क्रिया नथी ते अप्रमत्त गु णस्थानक होय ए वचन दिगबर सप्रदायनु छे ॥ ६७ ॥

हवे आठमा गुणस्थानकनु वर्णन कहेछे -- अथ अष्टम गुनस्थानक वर्नन –
चोपाई – अब बरनो अष्टम गुनथाना, नाम अपूरव करन बखाना, कछुक मोह उपसम करि राखे, अथवा किंचित क्षयकरि नाखे ॥ ६८ ॥ जो परिनाम न थे नहि कबहीं, तिन्हको उदो देखिये जबहीं, तब अष्टम गुनथानक होई, चारि त करन दूसरो सोई ॥ ६९ ॥

अर्थ – जेनु नाम अपूर्व करण वखाणीए छीए, हवे आंही श्रेणी चढवामां जे उपसमीर थको चढेछे तेतो आंही कइक मोहने उपशमावी राखेछे, अथवा जे क्ष पक थको चढे छे तेतो आंही चारित्र मोहनो कइक क्षय करि नांखेछे ॥ ६८ ॥ एवु जे परिणाम पेहेलां कोइ कालमां थयु नथी ते परिणामनु ज्यारे प्रगट पणु देखियेछीए, त्यारेनो आठमुं गुणस्थानक होय तेने छेछे समय चारित्र मोहनीय कर्म भेदवाने अपूर्व करण नामे बीजु करण होय तेनु नाम निवृत्ति पण छे ॥६९॥

हवे नवमा गुणस्थाननु वर्णन करेछे – अथ नवम गुणस्थानक वर्णन –
चोपाई – अब अनवृत्ति करन सुनु भाई, जहा भाव थिरता अधिकाई, पूर व भाव चलाचल जेते, सहज अडोल भए सब तेते ॥ ७० ॥ जहां न भा

व उलटि अध आवे; सो नवमो गुनथान कहावे; चारित मोह जहां बहु छीजा; सो हे चरन करन पद तीजा. ॥ ७१ ॥

अर्थः— प्रथम अनिवृत्ति करण गुणस्थाननो व्यवहार कहुं छुं ते सांजलो. जे गुणस्थाननेविषे स्थिरता भावनी अधिकाई छे. अने पूर्वभाव कषायना उदयथी जेटला चलाचल भाव होय तेवा सर्व आंही सहज अमोल थया छे ॥ ७० ॥ ज्यां भावथी चढीने फरी तिहांथी पडी नीचेना गुणस्थानके न आवे एवो अनिवृत्ति कहेवाय, आंही अनिवृत्तिनो परमार्थ सिद्धांतमां बीजीरीते छे, ते तो नवमुं गुणस्थान कहेवाय, ज्यां चारित्र-मोहनीय कर्म घणुंज त्रुटी गयो छे तेज ए चारित्र मोहनीय कर्म भेदवानो त्रीजो अनिवृत्ति करण थयो. ॥ ७१ ॥

हवे दशमु गुन स्थानक कहु छुंः— अथ दशम गुनथानक वर्ननंः—

चोपाईः—कहो दशम गुन थान दुसाखा, जहां सूछम शिवकी अभिलाषा; सूछम लोभ दसा जहाँ लहिए; सूछम संपराय सो कहिए. ॥ ७२ ॥

अर्थः— जिहां उपशम्यक् अने क्षपक एवी बे शाखा वर्त्ते छे. जे गुण स्थानमां सूक्ष्म शिव पदवीनी अभिलाषा छे. एवी ज्यां सूक्ष्म लोभ दशा पामियें, ते सूक्ष्म संपराय कहीए, संपराय एवुं कषायनुं नाम छे. ॥ ७२ ॥

हवे अग्यारमुं उपसंत मोह नामे गुणथान कहुंछुं—अने तेनी प्रभुतानुं प्रमाण कहुंछुं. अथ एकादशम गुनथान वर्नन—

चोपाई.--अब उपसंतमोह गुनथाना; कहों तासु प्रभुता परवाना; जहां मोह उपसमे न भासे; जथाख्यात चारित परगासे. ॥ ७३ ॥ दोहरा -- जाहि फरसके जीव गिरि, परे करे गुन रद; सो एकादसमी दसा, उपसमकी सरहद. ॥ ७४ ॥

अर्थ.— जे गुणस्थानमां मोहनीय कर्म सर्व उपशमी जाय पण उदयमां भासे नही अने यथाख्यात चारित्रनो प्रकाश थईने जेवुं निसंग आत्मानु सहज रुप छे तेवु प्रगटेछे. ॥ ७३ ॥ जे उपशम श्रेणि चढीने अने जे गुणस्थानने फरसीने अवश्यज जीव तिहांथी पडे अने जे गुण प्रगटे ते सर्व रद करे, ए अगीयारमी दशा थई, एटले उपसंत मोह गुणस्थान थयुं एटले उपशमनी मर्यादा थई. ७४॥

हवे बारमा क्षीणमोह गुनस्थाननुं वर्णन करुंछुं.—अथ द्वादशम गुनथानक वर्ननं—

चोपाईः— केवल ग्यान निकट जहां आवे; तहां जीव सब मोह खिपावे; प्रगटे यथाख्यात परधाना. सो द्वादशम छीन गुन थाना. ॥ ७५ ॥

अर्थ.— जे गुणस्थानने केवल ग्यान निकट आवे छे. अने त्यां जीव

हनीय कर्म खपावीने बीजा पण घाती कर्म सर्व खपावे, अने ज्यां प्रधान उत्कृष्ट यथा रव्यात चारित्र प्रगटे एवा प्रकारथी जे छे ते बारमो क्षीण मोह गुणस्थानक कहीए॥७५

हवे आही लगण पाछला छगथी मांडी सात गुणस्थानमां उपशम श्रेणीनी अपेक्षाये जेकाल स्थिति छे ते कहेछे -अथ षट गुनथानक स्थितिकथन उपशम श्रेणिक अपेक्षा

दोहरा — षट सत्तम अठम नवम, दश एकादश बार, अंतर मुहुरत एक वा, एक समे थिति धार ॥ ७६ ॥ छीन मोह पूरन भयो, करि चूरन चित चाल, अ ब सजोग गुण थानकी, वरनो दसा रसाल ॥ ७७ ॥

अर्थ —छठुं, सातमु, आठमु, नवमु दशमु, अग्यारमु, बारमु, ए सात जे गुणस्थान छे तेनी स्थिति एक अंतर मुहूर्त्तनी छे अथवा सात गुनस्थाननी जघन्य एक समयनी स्थिति धारो ॥७६॥ मोहमय जे चित्तनी चाल हती तेनुं चूर्ण करीने क्षीण मोह गुण स्थानक पूरण थयु हवे सजोगीगुन थानकनी रसाल दशानु वर्णन करुछु ॥७७॥

हवे तेरमा गुणथाननुं वर्णन करुंछु — अथ त्रयोदशम गुन स्थानक वर्नन —

सवैया इकतीसा -- जाकी दुःख दाता घाती चोकरी विनसगई चोकरी अघा ती जरी जेवरी समान है, प्रगट भयो अनंत दरसन अनंत ज्ञान वीरज अनंत सुख सत्ता समाधान है, जामे आव नाम गोत वेदनी प्रकृति ऐसी एक्यासी चोरासी वा पचासी परवान है, सो है जिन केवली जगत वासी भगवान, ताकी जो अवस्था सो सजोगी गुन थान है ॥ ७८ ॥

अर्थ — जे आत्म गुणना घातना करनार एवा ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनीय, अंतराय, ए घाती कर्मनी चोकडी दुःख दाता हती ते जेनी विनाश थई गई, अने जे आत्माना गुणनो घात न करे एवा वेदनी, आयु, नाम, गोत्र, ए चार अघाति कर्मनी चोकडी रही ते बलेली दोरी समान रही छे दर्शनावर णीय कर्मक्षय थयाथी जिहां अनंत केवल दर्शन प्रगट थयो अने ज्ञानावरणी क्षय थयाथी जिहां केवल ज्ञान प्रगटयु अंतराय कर्म क्षय थयाथी अनंत वी र्य प्रगटयो मोहनीय कर्म क्षय थयाथी अनंत सुखसत्तामय अने समाधि प्रगटी अने जेमां आयु कर्म,नामकर्म, गोत्रकर्म, वेदनीकर्म, एचारनी सर्व ८५ प्रकृति रही छे तेमां कोईना आहारिक शरीर आहारक अंगोपांग, आहारक संघातन, आहारक बंधन,तथा जिननामविना, ऐसी प्रकृती रही छे अने कोईने जिननाम सहित छे तथी (८१) रही छे तथा कोईने अहारक चतुष्कने अने जिननामनथी माटे ८४ छे तथा को ईने जिननाम सहित पचासी प्रकृतिनु प्रमान छे एवी दशानो धरनार जे छे ते

जिन होय केवली होय जगतनुं भगवान होय तेनी जे अवस्था छे तेनेज सयोगी गुणस्थानक कहीए. ॥ ७७ ॥

हवे सजोगी गुणस्थानकवाळानी मुद्रा देखाडेछेः—

सवैया इकतीसाः—जो अमोल परजंक मुद्रा धारी सरवथा अथवा सुकाउसग्ग मुद्रा थिरपाल है; खेत सपरस कर्म प्रकृतिके उदे आए, विना मग भरे अंतरिक्ष जाकी चाल है; जाकी थिति पूरव करोडि आठवर्ष घाट, अंतरमुहुरति जघन्य जग जाल है; सो है देव अगारह दूषन रहित ताकों बनारसी कहे मेरी वंदना त्रिकाल है. ७९

अर्थ.— जे अमोलपणे सर्वथा प्रकारे पर्यंक मुद्रा धारी होय एटले पद्मासनवाळीने सदा सर्वदा बेसेछे, अथवा काउसग्गमुद्रा स्थिरपणे पाले ए वचन दिगंबर संप्रदायनुं छे, अने क्षेत्र, स्पर्श रूप जे कर्म प्रकृति छे तेनो उदय थयाथी केवली विहार करेछे पण बीजा पुरुषनीपठे चाले नही पण केवली मगलुं भर्याविनाज आकाशमां अधर चालें चाले ए परूपणा दिगंबर संप्रदायनी छे; जे सयोगी गुणस्थाननी स्थिति आठ वर्षे न्यून पूर्वकोटी वर्षनी थाय केमके जन्मथी आठ वर्षलगी केवळज्ञान उपजतो नथी,अने आ गुनथानानी जघन्यस्थिति एक अंतरमुहूर्तनी थाय जगतजालमां एटलुंज रहेवुं होय त्यांही जे एवी अवस्थानो धरनार होय ते तो अढार दूषण रहित देवाधिदेव थाय बनारसीदास कहेछे के तेने मारी त्रिकाल वंदना छे॥७९

हवे अढार दूषणनां नाम कहेछेः— अथ अगारस दोष कथनः—

कुंभलीयाः—दूषन अठारह रहित, सो केवलि संजोग; जनम मरण जाके नहीं, नहिं निंद्रा भय रोग, नहिं निंद्रा भय रोग, सोग विस्मय न मोहमति; जरा खेद परस्वेद, नाहिं मद वैर विषे रति; चिंता नांही सनेह, नाहिं जह प्यास न भूषन; थिर समाधि सुख सहित, रहित अठारह दूषन. ॥ ८० ॥ कुंडलीयाः— बानी ज हां निरक्षरी, सतधातु मल नांहि; केस रोम नख नहि बढे, परम उदारिक मांहि; परम उदारिक मांहि, जांहि इंद्रिय विकार नसि, जथाख्यात चारित प्रधान थिर सुकल ध्यान ससि ; लोकालोक प्रकास, करन केवल रजधानी; सो तेरम गुनथान, जहां अतिशय मयबानी. ॥ ८१ ॥ दोहरा.—यह सजोग गुनथानकी, रचना कही अनूप, अब अयोग केवल कथा, कहों यथारथ रूप ॥ ८२ ॥

अर्थः— जे अढार दूषणथी रहित ते सजोगी केवली कहिए जेने जन्म नथी मरण नथी, निद्रा नथी, भय नथी, रोग नथी, सोग नथी, विस्मय नथी, मोहमति नथी, जरानो खेद नथी, परसेवो नथी १० मद नथी ११ वैर नथी १२ विषय

उपरति नथी १३ चिंता नथी १४ स्नेह नथी १५ जेने तरस लागे नही १६ भूख लागे नही १७ अस्थिरपणु नथी १८ तेथी समाधिसुख सहित स्थिररूप थायछे, एवा अढार दूषण रहित छे ए अढार दोष दिगंबर संप्रदायथी छे सिद्धांत संप्रदायमा १८ दूषण जुदा कह्या छे ॥ ८० ॥ आ गुणस्थाननी अवस्थामा निरक्षरी वाणी होय ने मस्तकमा अहंकार ध्वनीरूप होयछे, अने शरीरमा सात धातु अने सात धातुना मल थता नथी ए दिगंबर संप्रदायथी कहेलु छे अने जेना शरीरमा केश, रोम, नखनी वृद्धि थती नथी, एतो उदारीक शरीरमा पण एटला दोष नथी, तेथी देवाधिदेव परम उदारीक शरीरमाज कहिए, ज्या जेने इंद्रियविकार नाशी गयाछे, ने ज्या प्रधान उत्कृष्ट यथाख्यात चारित्र प्रगट थयु छे, ज्या शुक्ल ध्यानरूप चंद्रमा स्थिररूप थयोछे अने ज्या लोकालोकना प्रकाशनी करनारी केवल ज्ञानरूप राजधानी विराजी रही छे, ते तेरमुं सयोगी गुणस्थानक कहिए, ज्या पातरीश अतिशय मयवाणी छे ॥८१॥ए सयोगी गुणथाननी सर्वेथी अधिक अनूप रचना कहीछे हवे अयोगी केवलीनी दशा यथार्थरूप के० जेवीरीते बनीछे तेवी रीतनी कहुछुं ८२ हवे चौदमा अयोगी गुणस्थाननुं वर्णन करुछु अथ चतुर्दश गुनस्थानक वर्नन

सवैया इकतीसा — जहा काहू जीवकों असाता उदे साता नाहि, काहूकों असाता नांहि साता उदे पाइये, मन वच कायसों अतीत भयो जहां जीव जाको जस गीत जग जीत रूप गाइये, जामें कर्म प्रकृतिकी सत्ता जागी जिनकीसी, अंतकाल हेसमेमें सकल खिपाइये, जाकी थिति पंच लघु अक्षर प्रवान सोइ, चौदहो अयोगी गुन थाना ठहराइये ॥ ८३ ॥

[illegible] जे गुणस्थानमा कोई जीवने अशाता वेदनीनो उदय छे अने शाता [illegible] उदय नथी, एटले शाता वेदनी सत्तारूप छे अने कोइने शाता वेदनी [illegible] अशाता दुःखरूप उदयमा नथी, एटले सत्तामा छे अने ज्यां [illegible], वचनयोग, काया जोगथी जीव अतीत एटले र[illegible] [illegible]तने जीतया रूप गाइए छीए एटलो छे अने

दोहराः– चौदहगुनथानक दशा, जगवासी जियनूल; आश्रव संवर नाव द्वे, वंध मोक्षके मूल. ॥ ७४ ॥

अर्थः– जगतवासी जीव अशुद्ध थको नूलमां पड्यो छे तेनी ए चौद गुणस्थानकथी चौद दशा थाय छे. आंही तत्व दृष्टिमां जोतां जे आश्रव संवर नाव छे तेज वध मोक्षना मूल छे; एटले आश्रव वंधनुं मूल छे अने संवर मोक्षनुं मूलछे हवे आश्रव संवरनी जुदी जूदी अवस्था कहेछे. अथ आश्रव संवर व्यवस्था कथन.

चोप.ई– आश्रव संवर परनति जोलों, जगत निवासि चेतना तोलों; आश्रव संवर विधि विवहारा; दोऊ नवपथ शिवपथ धारा.॥७५॥आश्रव रूप वंध उतपाता, संवर ज्ञान मोप पद दाता, जा संवरसों आश्रव छीजे, ताकों नमस्कार अव कीजे.७६

अर्थः– ज्यां सुधी आश्रव संवरनुं परिणाम परिणमे छे, त्यांसुधी चेतन रूप ईश्वर जगत निवासी थई रह्योछे. आंही आश्रवनी विधि छे ते व्यवहारमां छे अने संवरनी विधि छे ते पण व्यवहारमां छे. ए बन्नें केवळ व्यवहार पंथ ते संसार मार्गनी धारा अने मोक्ष मार्गनी धारा पण छे. ॥७५॥संसारमां जे वंधरूप उत्पात छे ते तो आश्रवरूप छे. अने जे मोक्षपदनो दाता ज्ञान छे ते संवर रूप छे. जे संवरथी आश्रव क्षय थयो होय तेने हवे नमस्कार करीए छीए. ॥ ७६ ॥

हवे ग्रंथनी अंते मंगलाचरण रूप संवर रूपी ज्ञानने नमस्कार करेछे.–

सवैया इकतीसा– जगतके प्रानी जीवव्हैरह्यो गुमानी एसो, आश्रव असुर दुःख दानी महा नीम हे; ताको परताप खंडिवेको परगट नयो, धर्मको धरैया कर्म रोगको हकीम हे, जाके परनाव आगे नागे परनाव सव, नागर नवल सुख सागरकी सीम हे; संवरको रूप धरे साधे शिवराह एसो, ज्ञानी पातसाह तार्को मेरी तसलीम हे.७७

अर्थः– जगतना वासी जेटला प्राणी छे. ते सर्वेने जीतीने जे गुमानी थई रह्यो, एवो आश्रवरूप जे असुर छे. ते महा दुःखदायक छे. तेनो प्रताप खंडवाने जे ज्ञानरूप वादशाह प्रगट थयो छे ते केवो छे के धर्मनो धारण करनार छे. अने कर्मरूप रोग गमाववानो हकीम छे जे ज्ञान वादशाहनो प्रनाव आगळ काम क्रोधादिक राग द्वेषरूप पुद्गलना नाव छे ते सर्वे नासी जाय छे; अने नागर केळवचतुर छे. जे पेहेलां कोइ वारे न पामेलो एवो जे नवो सुख समुद्र ते स्वरूप तेनी सीम छे. संवररूपनो धरनार अने मुक्तिमार्गनो साधनार एवो जे ज्ञानरूपी वादशाह छे. तेने मारी तसलीम छे. एटले नाटक करीने ज्ञान वादशाहने मुजरो कीधो छे. ॥ ७७ ॥

इति श्री समयसार नाटक वालावबोधरूप अर्थ सहीत समाप्त **थयो**.

चोपई —नयो ग्रंथ सपूरन नापा, वरनी गुनथानककी सापा, वरनन ओर कहां लौ कहिये, जथा सकति कही चुप व्है रहीयें ॥ ८८ ॥ लिहए करन ग्रथ उदधि का, ज्यों ज्यो कहिये त्यों त्यों अधिका, ताते नाटक अगम अपारा, अलप कवीसुरकी मतिधारा ॥ ८९ ॥ दोहरा — समयसार नाटक अकथ, कविकी मति लघु होइ, तातें कहत बनारसी, पूरन कथे न कोइ ॥ ९० ॥

सवैया इकतीसा —जेसे कोउ एकाकी सुभट पराक्रम करि जीते केही जातिचक्री कटक सो लरनो, जेसे कोउ परविन तारु भुज नारु नर तरे केसे स्वयंभूरमन सिंधु तरनो, जेसे कोउ उद्दिमी उछाह मनमाहि धरे, करे केसे कारज विधाताको सो करनो, तेसे तुछ मती मोरी तामें कविकला थोरी, नाटक अपारमे कहांलो याहि वरनो? ९१

अथ जीव महिमा कथन --

सवैया इकतीसा -- जेसे वटवृक्ष एक तामे फल हें अनेक फल फल वहु बीज बीज बीज वट है, वटमांहि फल फलमाहि वीज तामे वट कीजे जो विचार तो अनतता अघट है, तेसे एक सत्तामें अनत गुण प्रजा प्रजामें अनत नृत्य नृत्यमें अनत ठट हे, ठटमें अनत कला कलामे अनत रूप, रूपमें अनत सत्ता एसो जीव नट है ॥ ९२ ॥ दोहरा — ब्रह्म ज्ञान आकाशमें, उडे समति पग होइ, जथा सकति उद्दिम धरे, पार न पावे कोइ ॥ ९३ ॥ चोपाई -- ब्रह्म ज्ञान नभ अत न पावे, सुमति परोछ कहाला धावे, जिहि विधि समयसार जिनि कीनो, तिन्हके नाम धरे अब तीनो ॥ ९४ ॥

अथ कवि त्रयी कथन नाम --

सवैया इकतीसा — कुंदकुंदाचारज प्रथम गाथा वद्ध करे, समेसार नाटक विचारी नाम दयो हे, ताहीके परपरा अमृतचद भये तिन्ह, ससकृत कलस समारि सुख लयो हे, प्रगट्या वनारसी गृहस्थ सिरीमाल अवकिये ह्व कवित्त हिए वोध वीज वयो है; शबद अनादि तामे अरथ अनादि जीव, नाटक अनादियो अनादिहिको भयो है

अथ कविव्यवस्था कथन -

चोपाई -- अब कछु कहु यथारथ वानी, सुकवि कुकविकी कथा कहानी, प्रथम सुकवी कहावे सोई, परमारथ रस वरने जोई ॥ ९६ ॥ कलपित वात हिए नहिं आने, गुरु परपरा रीति वखाने, सत्यारथ सैली नहि छंडे, मृषा वादसों प्रीति न मंडे ॥ ९७ ॥ दोहरा — वद सवद अक्षर अरथ, कहे सिद्धांत प्रवान, जो इहि विधि रचना रचे सो हे सुकवि सुजान ॥ ९८ ॥

चोपाई·– अब सुनु कुकवि कहूं है जेसा; अपराधी हिय अंध अनेसा; मृषा भाव रस बरनें हितसों; नई उकति नहि उपजे चितसों ॥ २९९ ॥ ख्याति लाभ पूजा मन आनें; परमारथ पथ भेद न जानें; बानी जीव एक करि बूझे; जाको चित जड ग्रंथि न सूझे ॥ ३०० ॥ बानी लीन भयो जग डोले. बानी ममता त्यागि न बोले; है अनादि बानी जगमांही. कुकवि बात यह समुझे नांही. ॥ ३०१ ॥

अथ बानी व्यवस्था कथन –

सवैया इकतीसा – जेसें काहू देसमें सलिलधार कारजकी. नदीसों निकसि फिरि नदीमें समानी है; नगरमें ठोर ठोर फेली रही चहूं ओर, जाके ढिग बहे सोई कहे मेरो पानी है. त्योंही घट सदन सदनमें अनादि ब्रह्म, वदन वदनमें अनादिहीकी बानी है; करम कलोलसों उसासकी बयारि बाजे. तासों कहे मेरी धुनि एसो मूढ प्रानी है. ॥ ३०२ ॥ दोहरा·– एसे मूढ कुकवि कुधी, गहे मृषा पथ दोर : रहे मगन अभिमानमें, कहे औरकी और. ॥ ३०३ ॥ वस्तु सरूप लखे नही. बाहिज दृष्टि प्रमान; मृषा विलास विलोकके, करे मृषा गुन ज्ञान. ॥ ३०४ ॥

अथ मृषा गुन ज्ञान यथा·–

सवैया इकतीसा.– मांसकी गरथि कुच कंचन कलस कहे. कहे मुख चंद जो सलेखमाको घरु है, हाडके दसन आहि हीरा मोती कहे ताहि, मांसके अधर ओठ कहे बिंब फरु है; हाड दंभ भुजा कहे कौलनाल काम जुधा. हाडहीके थंभा जंघा कहे रंभा तरु है, योंही झूठी जुगति बनावे औ कहावे कवि. एते पर कहे हम सारदाको वरु है. ॥ ३०५ ॥ चोपाई – मिथ्यावंत कुकवि जे प्रानी, मिथ्या तिनकी भाषित बानी, मिथ्यावंत सुकवि जो होई, वचन प्रवान करे सब कोई. ३०६ दोहरा·– वचन प्रवान करे सुकवि, पुरुष हदे परवान. दोऊ अंग प्रवान जो, सोहे सहज सुजान. ॥ ३०७ ॥ अथ नाटक समयसार व्यवस्था कथनः–

चोपाई – अब यह बात कहों हे जेसे, नाटक भाषा भयो सु एसे, कुंद कुंद मुनि मूल उधरता, अमृतचंद टीकाके करता. ॥ ३०८ ॥ समेसार नाटक सुख दानी, टीका सहित संसकृत बानी, पंडित पढे ढटमती बूझे. अलपमतीकों अरथ न सूझे. ॥ ३०९ ॥ पांडे राजमल्ल जिनधर्मी, समयसार नाटकके मर्मी, तिन्ह गरंथकी टीका कीनी, बालाबोध सुगम करि दीनी. ॥ ३१० ॥ इहि विधि बोधवचनिका फेली, समोपाइ अध्यातम सेली, प्रकटी जगतमांहि जिनवानी, घर घर नाटक कथा बखानी. ॥ ३११ ॥ नगर आगरामांहि विख्याता, कारन पाइ [illegible]ा,

पच पुरुष अति निपुन प्रवीने, निसिदिन ज्ञानकथा रस भीने ॥ ७१२ ॥ दोहरा – रूपचद पडित प्रथम, दुतिय चतुर्भुज नाम, तृतिय भगौती दासनर, कौरपाल गुनधाम ॥ ७१३ ॥ धर्मदास ए पच जन, मिलि बेसे इक ठोर, परमारथ चरचा करे, इन्हके कथा न और ॥ ७१४ ॥ कबहू नाटक रस सुने, कबहू और सिद्धांत, कबहू बिग बनाइके, कहे बोध विरतंत ॥ ७१५ ॥ अथ बिगयया –

दोहरा – चित चकोर करु धरम धरु, सुमति भगौती दास, चतुर भाव थिरता भए, रूपचद परगास ॥ ७१६ ॥ इहि विधि ज्ञान प्रगट भयो, नगर आगरे माहि, देसदेस महि बिस्तर्यो, मृषा देश महि नांहि. ॥ ७१७ ॥ चोपई – जहा तहां जिनवानी फेली, लखे न सो जाकी मति मेली, जाके सहज बोध उतपाता, सो ततकाल लखे यह बाता ॥ ७१८ ॥ दोहरा.– घटघट अंतर जिन बसे, घटघट अतर जैन, मत मदिराके पानसो, मतवाला समुझें न ॥ ७१९ ॥

चोपाई –बहुत बढाय कहालो कीजे, कारजरूप बात कहि लीजें, नगर आगरा माहे बिख्याता, बनारसी नामे लघु ज्ञाता ॥ ७२० ॥ तामे कवित कला चतुराई, कृपा करे ए पचा भाई, ए परपच रहित हिय खोले, ते बनारसीसो हसि बोले ॥ ७२१ ॥ नाटक समैसार हित जीका, सुगमरूप राजमली टीका, कवित बद्ध रचना जो होई, भाषा ग्रथ पढे सब कोई ॥ ७२२ ॥ तब बनारसी मनमहि आनी, कीजे तो प्रगटे जिनवानी, पच पुरुषकी आज्ञा लीनी, कवित बधकी रचना कीनी ॥ ७२३ ॥ सोरहसे तिरानवे बीते, आसुमास सित पक्ष बितीते, तिथि तेरसि रविवार प्रवीना, तादिन ग्रथ समापत कीना ॥ ७२४ ॥ दोहरा॥ सुख निधान सकबध नर साहिब साहि किरान, सहस साहि सिर मुकुटमनि, साहजहा सुलतान ॥ ७२५ ॥ ताके राज सुचेनसों, कीनो आगम सार, इति भीती व्यापी नही, यह उनको उपगार ॥ ७२६ ॥ अथ ग्रथका जोड कथन –

सवैया इकतीसा – तीनसे दसोत्तर सोरठा दोहा छद दोउ, जुगलसे तेतालीस इकतीसा आने है, छासी सु चोपई्ये सेतीस तेइसे सवैये, बीस छप्पे अठारह कवित बखाने है, सात पुनिही अडिल्ले चारि कुडलीए मिले, सकल सातसे सताईस ठीकठाने है, बत्तीस अक्षरके सलोक कीने ताके लेखे ग्रथ सख्या सत्रहसे सा नवसिकाने है ॥ ७२७ ॥ दोहरा – समयसार आतम दरव, नाटक भाव अनत, सोहे आगम नाममे, परमारथ विरतंत ॥ ७२८ ॥

॥ इति परमागम समयसारनाटक नाम सिद्धांत सपूर्णम् श्री रस्तु ॥

थी अकाम निर्जराने योगे गर्भज मनुष्य थाय, अथवा गर्भज तिर्यंच पंचेंद्रि
य, ते जेवारे गर्भज पचेंद्रितीर्यंच अथवा गर्भज मनुष्य थाय, तेवारे प्रबल
धिकरणी थयो, तिहां पांचे आश्रव प्रबलपणे सेवे तिहां प्राण तथा पय
पूरणहोय तेनेलीधे त्रिकाल वेदन स्वकीय परकीयना विकल्पजालमां पडे, ते
उत्कृष्ट कर्मस्थितिनु धणी थाय, आर्त्त रौद्र ध्याननी प्रबलता थाय, ते दुष्ट
ननायोगे कर्मस्थिति दीर्घकरे, इहां कोइकजीव प्रबल हिंसादिक कारणनेयोगे
सातेनरकोने विषे जाय, अथवा किवारेक मुर्छादिक अधिकरण योगे पाछो एके
ंद्रियमां पण जाय, तिहां अनंतकाल रुले

अथवा किवारेक छेदन भेदन ताडन तर्जन शीत तापादिक सहनकरतो जा
ति शरलपरिणामी माटे तीव्रसंक्लेश न करे तो अकामनिर्जराकरी कोइकजीव देवगति
पामे, अथवा कोईजीव मनुष्यथाय तेमांजो देव थयोतो अतिशय विषयाशक्तमा
माचीने तीव्रसंक्लेशे विषयाशक्त थको मरीने प्राये तिर्यंच पचेंद्री गर्भजथाय, तिहां
बहुल हिंसादिक सेवनकरी नरकेजाय, अथवा पाछोपडी एकेंद्रियचक्रमा जाय, फ
री तिहांथी निकली पचेंद्रियपणु पामतां उत्कृष्ट कायस्थिति योगे असंख्य पुद्गल
परावर्त्त वीतीजाय

अथवा कोईदेवमरी मनुष्यथाय, तिहां कारण अपरिपाकपणाथी बहुलतायें
अनार्यक्षेत्र अनार्यकुलमां उपजे, तिहां प्रबल कषाय विषयादिक अशुद्धहेतुना
योगे अढारे पापस्थानकसेवी, किवारे सातेनरकोनेविषे जेवा जेवा कर्म बांधे तेवां
तेवां कर्मानुसारे ते ते नरकमा जई उपजवुथाय, एम यथावधी उपजे, तिहां नरक
संबंधी आकराड ख असंख्यकाल पर्यंत सहन करे, ते नरकदु खना विपाक भव
भावनादिक ग्रंथथी जाणवा

अथवाकोई तो मनुष्यभवपामी घरकुटंबनी तीव्र मूर्छामां मूर्छितथको अज्ञान
योगे परिणम्यो तो फरी तिर्यंचगति यावत् एकेंद्रिय चक्रमापडे वली ते दशापाम
ा अनंतानंत काल व्यतिक्रमीजाय, तथा कोईमनुष्य विशिष्टज्ञानविना मूढचेतना
त प्ररुतियें सरलथको सहेजे कषायनी मदतायें मनुष्यपण थाय, तिहांभवनी का
परिपाकविना अशुद्धकारणनी बहुलतानेयोगे मिथ्यात्वादिक अशुद्धहेतुनी पुष्ट
यें कर्मस्थिति उत्कृष्टिकरे, ते उत्कृष्टकर्मस्थिति लखियेंछेयें ॥ गाथा ॥ माहेरा
कोडी, सत्तरिवीसचनामगायाण ॥ तीसायराणि चउन्न, तित्तीसायराइ आ

उस्स ॥ १ ॥ अर्थ ॥ तेकर्मबंध बांधवाना चारहेतुछे, मिथ्यात्व अविरति कषाय अने योग. ए चारहेतुनी प्रबलतायें कर्मस्थिति उत्कृष्टी बांधेछे.

तिहां सर्वकर्मनो उत्पादकपोषक मोहनीय कर्म छे, जेम इंमाथी मुरगी अने मुरगीथी इंडुं तेम मोहनीयकर्मथी आठेकर्मबंध, आठे मली मोहनीयकर्मनी पुष्टीकरे, माटे मोहनीयकर्मनी मुख्यताकही. मोहनीयकर्मने राजपदनी उपमाकही, ते मोहनीयकर्मनी अठ्यावीस प्रकृतिमां मिथ्यात्व मुख्य कर्मप्रकृतिछे. समस्त संसारमां सर्वजीवोने समस्त दुःखनोहेतु एकमिथ्यात्वछे. ते मिथ्यात्वमोहनीय एकवारनुंबांध्युं उत्कृष्टो सित्तेरकोडाकोडी सागरोपमलगेथी विपाकआपे, तेहनो विपाक अत्यंत मदिरापाननी घुमि सरिखोछे, जेम मदिरानुं पानकरनार पुरुष मित्रने शत्रुनी बुद्धियें मारवादोडे अने शत्रुने हंसीहंसी मलवादोडे.

तेम तीव्रमोहना उदयथी जीवने अजीवजाणे अने अजीवने जीवजाणे तथा धर्मने अधर्मजाणे, अधर्मने धर्मजाणे, मार्गने उन्मार्गजाणे. उन्मार्गने मार्गजाणे, साधुने असाधुजाणे, असाधुने साधुजाणे, मुक्तने अमुक्तजाणे, अमुक्तने मुक्तजाणे, ए दशप्रकारें मिथ्यात्व विपाक आपे.

तथा नामकर्म अने गोत्रकर्म एकवारनुंबांध्युं उत्कृष्टो वीसकोडाकोडी सागरोपम स्थितिरहे. ते नामकर्मनो विपाक चित्रकार सरिखो विचित्रपणे छे केमके जे वर्णरहित गंधरहित स्पर्शरहित रूपरहित रसरहित अने समस्तदोष रहित, असंख्यातप्रदेशी लोकप्रमाण अखंड अनंत ज्ञान दर्शन चारित्र स्वरूपी संघयण संस्थान रहित, एवा अरूपी आत्माने एकेंद्रिय वेंद्रिय कुरूपी सुरूपी रीगणो कुबडो काणो [illegible] अतिमहोटो तो हजारयोजनप्रमाण अति सूक्ष्म तो वालनी अणीउपरें असंख्यात [illegible] गोलेगोले असंख्य निगोद निगोदे निगोदे अनंत जीव, इत्यादिक जीवने [illegible] ख्यान रूप विपाकआपे एवुं ए नामकर्मछे.

गोत्रकर्मनो विपाक कुंभारना मांडा सरखो छे, केमके एजीव [illegible] णी निर्मलसमान जगतने वंदनीय स्वरूपी छे, तेज जीवने संसार [illegible] खोर जेने कोई अटके नही कदापि अटके तो जलादिक स्नान [illegible] विष्टा चर्म हाडनुं भक्षण करनारो स्वान घरमां आवे, [illegible] तो तेनी कांई शंका न आणे, शोचपण न करे, अने [illegible] आपनो धारक तत्त्वातत्त्व सर्व उचित वस्तुनो जाण, सर्व [illegible] शुभ करणी करवा समर्थ, तेहनुं दर्शन हाशी अपल [illegible]

ना करेनही, तेथी तेने वस्ति बाहिर रहेवु पडे, ए सर्व विपाक नीच गोत्रना जा
वा तथा उंच गोत्रना विपाक ते जे कोई जीव मूर्ख जड दुष्ट निर्धन निर्गुण कुरूप
कुछित होय, अने कुकर्मनो कर्त्ता होय, कर्म चमाल होय, एवु छता पण महोट
कुलमां अवतार लीधो होय, तो दोषे नखो पण लोकमां आदर सन्मान सत्कार
पामे, जो अशुद्धाचरण देखी निंदा थाय, तोपण अवशर उपर तेहने सउ
कोई तेडीने विनयकरे, जे ए महोटा छे, महोटा कुलना छे, ओलादीने, केटलाक
दोष ढाक्या जाय इति गोत्र कर्मविपाक

ज्ञानावरणी अने दर्शनावरणी तथा वेदनीय अने अतराय एचारेकर्मनी स्थि
ति एकवार बांध्या त्रीसकोडाकोडी सागरोपम पर्यंत विपाकआपे

तेमां ज्ञानावरणीकर्म आखनापाटा समानछे, जेने एकर्मनो तीव्रोदयहोय ते
प्राणी काईज जाणेनही, केमके जीवना सर्व आकाश तथा काल प्रमुख द्रव्यप
र्यायथी अनतगुणा ज्ञानगुणना पर्यायछे, ते सर्वपर्याय ए ज्ञानावरणीकर्मे आव
रयाछे, एक अक्षरना अनतपर्यायछे, तेमांहेलो एकपर्यायनु ज्ञान निगोदिआ जीव
ने उपजतांहोय, बाकी सर्वपर्यायनु ज्ञान ढाक्युछे, एक अक्षरनो अनतमो नाग उ
घाडोरहे, तेपण द्रव्यस्वनावेरहे, पण कर्मनी रायतिनथी, एक जीवद्रव्य ते बीना स
र्वद्रव्यना द्रव्य गुण पर्यायना त्रिकालिक उत्पाद व्ययनो एकसमयमा ज्ञायक चिदा
नदयनरूपी एहवु चेतनराजछे तेने ए ज्ञानावरणीकर्म जडरूप अतिगुप्तकरीनाखे,
पण तेहना उपर कोईरीते अनुकपाकरेनही, काष्टप्रायकरे, चेतनना मुख्य ज्ञानगुण
ने आवरे. ए ज्ञानावरणीय कर्मना विपाक जाणवा

दर्शनावरणीयकर्म वेत्रीतरिखु दरवान दोढीदार सरिखु छे, जेम राजाप्रतन्न य
योछता दरवान खुसी नहोयतो ते अटकावी राखे, पण राजानी नेटकरवानआपे
तेम एकर्मना विपाक जे पूर्वोक्त स्वरूप जीवने अधकरे, न्यूनइद्रीय अन्यइद्रीयकरे
बधिर करे सर्व श्रुतकरणीआदरे, ते अवसरे सर्वघाती निद्रा आवी तेनो श्रुतनिमित्त
व्यर्थकरी नाखे, ए दर्शनावरणीय कर्मनो विपाक जाणवा

वेदनीयकर्म मधुलिप्त तरवारनी धारा समानछे तेमां मधुना आस्वाद सरिखी
शातावेदनीयछे अने जीन छेदायाना दुःख सरिखी अशाता वेदनीयछे एकर्मना
विपाक गर्भगतदुःख जन्मसमयना दुःख समस्त रोगोत्पत्तिनादुःख मरण समय
नादुःख वियोगोदयनादुःख विषय अप्राप्तिनादुःख आव महानयनादुःख शीतदुःख
तापदुःख तथा तिर्यचना नवमां वध बंधन नारवहन शकटवहन कृषिक्रियागत दु

ख खासीक्रियाडुःख नासावेधडुःख क्षुधाडुःख प्यासाडुःख मृगयाडुःख असवारी नाडुःख दूरपंथ गमनडुःख जातिवैरीनाडुःख धर्मबुद्धिये हनन समयना डुःख पिंजरामां पडवानाडुःख इत्यादिक अनेकडुःख तिर्यंचगतिमांहे, तथा नरकगतिमां क्षेत्रवेदना शरीरगत अनेक रोगजन्यडुःख परमाधामिकृतडुःख अन्योन्य प्रहरण प्रहार डुःख ए सर्वे अशातोदय वेदनीयना विपाकजाणवा, तथा शातावेदनीयोद यथी सर्वइच्छित खावा पीवानाजोग वली खेलवुं स्त्रीविलास राग रंग सुख सत्या मान महत्व राजलीला कामनासिद्धि निरोगता इत्यादिक सर्व शातावेदनीयना वि पाक हे. एकर्म जीवना अव्याबाधगुणने बाधकरनारुंहे. समस्त देव मनुष्यना त्रिकालिक पुजलिकसुख एकगकरीने तुल्यनाकरियें तो सिद्धनासुखने अनंतमे जागे पण न आवे, एहवा सहजानंदी जीवने एकर्म शुजाशुज पुजलपिंमर्मा रखडावे ए वेदनीयकर्मनो विपाककह्यो.

अंतरायकर्म राजाना जंमारीशरिखुंहे. जेम राजा सुप्रशन्नथई कोईने इव्य आप वानो आदेशकरे, पण जो जंमारी अनुकूल न होय, तोकोईपण निमित्ते विलंबक रीआपे, धकाखवरावे, पण इव्य आपेनही, तेम ए कर्मनाविपाके दान शक्ति न पामे कदापि दानइछा न करे अने इछाकरेतो उलटो कोई एहवो विकल्पउठे के, जेथकी दानआपवानी बुद्धिज जूलीजाय, पण आपीशकेनही, तेमज लाज मेलववाने अर्थे पण घणीज पोतानी बुद्धि केलवी चतुराईथी उद्यमकरे, सर्ववातें खबरदारीराखे, अने कार्यपण सलुखाईमां आवे, जेथकी एवी आशा थायके आ उद्यममां रुडीप्रा प्ति अवश्यथशे तेथी हर्षवत पण थाय एटलामां कोईलाजांतराय कर्मना उदयथी एहवां कारणो आवी बने के जेथकी लाजने ठेकाणे उलटो त्रोटोथईपडे, ते ला जांतराय कर्मनो विपाक जाणवो तेमज जोगांतरायकर्मना विपाके जोग न पामे,कदा पि पामे तो रोग शोग जयादिक कारणे जोगवी शकेनही एमज उपजोग वस्तुपण एना उदयथी न पामे, कदापिपामे तो तेनो कोईपण हरकतनेलीधे उपजोग करीशके नही, तेमज वीर्यांतरायना उदयथी शरीर निर्बलतापामे, अनेक औषध रसायन खाय तोपण उलटो कोई कुपथ्यादिकने योगे रोग थाय, डुर्बलतानी वृद्धि थाय, परवसादिकने योगे मननीहोंस मनमांसमें पण चिंतितकार्य करी शकेनही, एरीतें अंतरायकर्मनो विपाक जाणवो.

आयुकर्मनी उत्कृष्टीस्थिति तेत्रीस सागरोपमनीछे, ते एक शुजायु वीजुं अशु जायु एवे प्रकारेछे, एकर्म हेड शरिखुंछे, जेम ज्यां लगण हेडमां पग प

सम्यक्त्व स्वरूपस्तव

डयुहोय त्यालगण किहापण जवाई शकायनही, तेम आयुकर्म वांध्यापछी एटलो धर्मकरणीकरे क्षायिक सम्यक्त्वादिक उपार्जे तोपण वांधेलीगती अवश्य गववीपडे, पण छूटेनही, वीजा कर्मोनोउदय तोअपवर्त्तन सक्रमणादि करण य नि फलकरे, पण ए कर्मतो भोगव्याविना छूटेजनही, वीजा शुभाशुभकर्म उंच न च परिणाम योगे दल वृद्धि हानीथाय, पण एकर्मतो यथावधे अवश्य भोगवुंज जोय, जोपण नरकादिकना डु खथणाय अनिष्ट लागे, तोपण छुटेनही, एरीते आयुकर्मनो विपाक जाणवो

एरीतें आठेकर्मनी प्रकृति स्थिति रस अने प्रदेशवंधना परवशपणे अनंतानंत पुद्गलपरावर्त्त थया जन्ममरणादिरूप, भीषण कातारमां भम्यो, एम भमता भमतां कोईकवारे डुर्लभ मनुष्यभवादि सामग्रीयोग मल्यो, पण मिथ्यात्वनी प्रबलता तुये अथवा पाचकारणना परिपाकविना किहापण सम्यक्त्वनी प्राप्ति नथई, केव भवपूर्णथयो इहा प्रसगे योगविंडुग्रंथमांकहेली सम्यक्त्व प्राप्तिनी शैली लखियेंछइये 1

जे भव्यजीवछे तेने भव्यताना उदयेकरी अकाम निर्जराये कर्मखपावता पाच कारणनी अनुकूलतायेंकरी वे पुद्गलपरावर्त्त शेप ससार रहे, तेवारे धर्मशब्द सामा न्ये सद्दहे, जे धर्मशब्द शाभलवा सन्मुख निर्विवेकपणेहोय तेने श्रवणसन्मुखी भा वकहियें, पण तथाविध आदरपीपासाकाईहोयनही पण सहज मिलेतो विमुखनही

पछे तिहांथी ससार परिभ्रमणकरतो जीव उच्च भावमा आवे, तेवारे दोढपुद्ग ल परावर्त्तरहे मार्गगवेषणा मार्गश्रवण मार्गसन्मुख मार्गानुसारी मार्गप्राप्ति इत्यादि कनाम इहाथी आगथाय, धर्मभणी वसे जिनोक्तमार्गनु श्रवणहोय कोइकरीतें रुचि थाय पण तीव्रभावें गवेषणानहोय, एने मार्गपतित कहिये, एटले मार्गेपडयो कोइ भवे एवीरुचीथईपछी, ससारपरिभ्रमणकरतां एकपुद्गल परावर्त्तरहे तेवारें जिनमा र्गानुसारीपणु शुद्धाशुद्धनी गवेषणामात्रहोय, एरीतेकरतां इहां धर्मयौवनकानअा न्यायसपन्न विभवप्रमुख पात्रीसगुणपामे, मित्रादिकदृष्टी पामवानो अवशर होय, एहने मार्गानुसारी कहियें, इहा षटदर्शननो भिन्नताजाणे, जिनोक्तमार्गे व्यव हारें प्रवर्त्ते, इहांथी मिथ्यात्वमदपडयु, तेथी व्यवहारें द्रव्यधर्मपणपामे, पण सम्यक्त्व प्राप्ति न थाय, इहा पहेला त्रण अनुष्ठाननी प्रबलता होय, सर्वक्रियाकरे तेदेखी वी जा अनेकजीव धर्मपामे, पण पोताने नहोय तेक्रियानुफल स्वर्गादिकथाय, पण नि र्जरा अर्थे नथाय ॥ २ ॥ इतिद्वितीय गाथार्थ

हवे सम्यक्त्व प्राप्तिनो उपायकहेछेः—

पल्लोवलमाऽऽअद्दा. पवत्तिकरणेणकोविजऽकुणइ ॥
पलिआ असंखज्जागुण. कोम्किोम्कि अरठिइ सेसं॥ ३ ॥

अर्थ ॥ इहां चरम पुज्जलपरावर्त्तमां मिथ्यात्वनी मंदतायाय तिवारें सम्यक्त्व पामवाना कारण त्रण करणछे, तेनानाम एक यथाप्रवृत्ति वीजोअपूर्व त्रीजोअनिवृत्ति. तेमां इहांप्रथमकरणनो अवसरछे तेकहेछे, ए सम्यक्त्वगुण पामतां सुधीमां सर्वेनाधारण आठ दृष्टांतकह्यांछे तेमां यथाप्रवृत्तिकरणकरतां वे दृष्टांतलागे ते दृष्टांतनी आवश्यकोक्त गाथा लिखुंछुं.

"पल्लयगिरि सरिउवला, पिवीलिआ पुरिसपह जरगहीआ ॥कोद्दव जल वच्छाणिअ सामाइयलाभदिछंता ॥ १ ॥ एगाथानोअर्थकहेछे एक पालानुंदृष्टांत, वीजुं पर्वतथी नदिप्रपातस्थानेरहेला पाषाणनुं दृष्टांत, त्रीजुं पीपीलिका ते कीमीनुंदृष्टांत. चोथुं त्रणपंथीपुरुषनुं दृष्टांत. पांचमु ज्वरग्रहीतनुं दृष्टांत, छठुं मदनकोद्रवनुं दृष्टात, सातमुं मलिनजल दृष्टांत, आठमुं समलवस्त्रदृष्टात, ए आठ दृष्टांत सर्वे सम्यक्त्वनो लाभ थतासुधीमां लागे, ते यथा स्थानके लखीसुं, पण इहांतो यथा प्रवृत्तिकरणे वे दृष्टांतलागेछे ते कहिये छैये.

तिहां सम्यक्त्वपामता करण त्रणछे १ यथाप्रवृत्तिकरण २ अपूर्वकरण ३ अनिवृत्तिकरण; तेमा यथाप्रवृत्तिते 'अनतिक्रम्यकरोतीति' यथाप्रवृत्ति, ए व्युंत्पत्तिनो अर्थ —यथाके० जेम अनादिनी चालछे तेमनीतेम प्रवृत्तिनुं करणके० जीवपरिणामनुं प्रवर्तनछे जिहां, तेने यथाप्रवृत्तिकरणकहियें, एटले अनादिनुंजे चाल परिणामछे ते प्रवर्तन फलुंनथी, अनादिचालें प्रवर्तेछे पण कारणपरिपाकना जोरथी मिथ्यात्वनी मंदतायाय, तेथी पालाने दृष्टांते जेम पूर्वे भर्यो धाननोपालो तेमां थोडुंधाननाखियें अने घणुं धानकाढीये तेवारें तेपालो कालांतरे खालीथाय तेम कर्मरूप धानेकरी समस्त आत्मप्रदेशरूप पालोभर्योछे तेपालो जीवने अनाभोगथी एटले इछाविना सहजें अकामनिर्जराथी छेदनभेदनादिकथी अशुभविपाकावशरें मिथ्यात्व तथा अनंतानुवंधी कषायनी मंदतानायोगें कर्मविपाके वहु व्यापक न होय तेवारे कटमाफक निर्जरावणीथाय, अने मिथ्यात्व कषायनी मंदता माटे नवाकर्मपण घणावाधंनही, मंदवीर्यमाटे प्रदेशग्रह पण थोडुंग्रहणकरे एटले घणी निर्जरा थाय अने वंध अल्पथाय तेथी कर्मस्थिति रूपधान्यनुं पालो घटाडे.

तथा बीजुदृष्टांत नदीना पाषाणनुं, जेम पर्वतथी नदीमांपडे तिहां नीचेरहे लुं पाषाण तेनदीनी जलधारा पडवाथी थरहो परहो घोलाय अथडाय, ते पाषा ए घोलना घचनानेयोगे घसाईने घोलघाटमांआवे, फरसमां सुहालोथाय, एरीतें स हेज स्वनावेकोईक घाटमांआवे पण कोइए एनो विचारपूर्वक घाट कस्योनथी

तेम जीवते पाषाणरूप, नदीप्रवाह ते कर्मोदय प्रवाहे पचतो अकाम निर्जराथी पूर्वोक्तन्याये निर्जरायेकरी कोइक धर्मप्रवृत्तियोग्य घाटमांआवे. (आकारमांआवे)

ए बेदृष्टांतेकरी एकआयुकर्मवर्जिने बाकीसातेकर्मनी उत्कृष्टिस्थितियोग्य बंधप रिणामने घटाडे, तथा पूर्वबंधहोय तेपण निर्जरे, तेवारे सितेरकोडाकोडी मिथ्या त्व बांधतोहतो ते परिणाम टलीने पल्योपमने असंख्यातमे नागे न्यून एक को माकोडीनी स्थितिबंधना परिणाम राखे, तथा पूर्वबंधहोय तेपण सर्व स्थिति घटीने एक कोमाकोडीनी स्थिति सेषरहे, एरीतें एक आयुकर्म मूकी बाकी सा ते कर्मनी स्थितिघटामीनाखे एटले त्रीसकोमाकोमी स्थितिवाला कर्मोनी ओगण त्रीस कोडाकोडि घटाडी पल्योपमने असंख्यातमेनागे न्यून एक कोडाकोडी सागरोपम राखे, ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अने अंतराय ए चार कर्मनी एटली स्थितिराखे, तथा नाम अने गोत्र ए बेकर्मनी उत्कृष्टी वीसकोडाकोडी साग रोपमनी स्थितिमाथी ओगणीस कोडाकोडीघटाडीने पल्योपमने असंख्यातमें ना गें न्यून एक कोडाकोडिराखे, एटलासुधी जे जीवना परिणामनी योग्यताथयी एनु नाम यथाप्रवृत्तिकरण कहिये, ए करण जीव ससारमां नमता नमता अनंतिवार करे, पल्योपमने असंख्यातमेंनागे उंठी एककोडाकोडी सागरोपमनी शातकर्मनी से षस्थितिरही तिहांसुधी यथाप्रवृत्तिकरण कहिये, आगले ग्रंथीदेशआव्यो खरो पण ए करणयोग्य परिणामे आगल न जवाय इति प्रथमकरण

बीजु अपूर्वकरण ते जे पहेला ससार परिभ्रमण करता कदापि एवु, करण जे जीवपरिणाम विशेष ते पाम्योनथी माटे अपूर्वकरण कहिये, ए अपूर्वकरण परि णामें घन निबिड रागद्वेष परिणतीमयी जे ग्रंथी तेने नेदवामांमे, जे नेदे तेह अध्य वसायने अपूर्वकरण कहियें

त्रीजु अनिवृत्तिकरण ते जे अध्यवसाय फल प्राप्तिविनानिवर्त्ते पडेनही, एटले पूर्वे आव्योजे अपूर्वकरणरूप परिणाम ते पाछो जायनही तेने अनिवृत्तिकरण कहियें, ते अनिवृत्तिकरणरूप परिणामेकरी जीव सम्यक्त्व पामे ते त्रीजुकरण इ हां ए त्रण करणनी साखआपवाने कल्पनाष्यनी गाथा लिखेने "अंतिमकोडा

कोडी, सव्वंकम्माण आउवज्जाणं ॥ पलियाअसंखिज्जइ, नागेखीणेहवइगंठी ॥ १ ॥ गंठित्तिसुडुप्भेउं, कक्कडघणरूढमूढगंठीव ॥ जीवस्सकम्मजणिउं, घणरागदोसपरि णामो ॥ २ ॥ जागंठीतापढमं, गंठीसमइच्छउनवेवीयं ॥अनियट्टी करणंपुण, सम्म त्तपुरक्खडे जीवे ॥ ३ ॥ ए त्रणगाथानो अर्थ लेशमात्र लखियेंछे.

आयुवर्जीने सातेकर्मनी अंतिम के० छेल्ली कोडाकोडिस्थिति पल्योपमने अ संख्यातमेंभागे न्यूनरहे बाकीसर्वखपीजाय एहवे इहां गंठी करणस्थानकछे ॥ १ ॥ गंठीकहेवीछे सुडुप्भेउं के० अत्यंतदुःखें भेदवायोग्य कर्कश वक्र गूढ गुप्त कोइ ख दिरादि कठीण काष्टनागांठनीपरें जेवीतेवीरीतें भेदाय नहिंदायनही ए उपमायें अ नादिनुं जीवने कर्मजनित घन के० निबड राग द्वेष परिणति संचयरूप ग्रंथी ते वज्रवत् दुर्भेद्यछे ॥ २ ॥ जिहांगंठीछे तिहांसुधीआवे तेने पढम के० प्रथम यथा प्रवृत्तिकरण होय, पछी गंठीसमइछउ के० ग्रंथी समर्थनकरतां सामर्थ्यवंतथई ग्रंथी भेदतां बीजुं अपूर्वकरण होय; तथा पुण के० वली अनियटीकरण के० अनिवृत्ति करण ते सम्मत्तपुरक्खडे के० सम्यक्त्व अवश्यप्राप्त भव्यपणे आगलकर्युं जेणे जीवे, एटले सम्यक्त्व अवश्यपामवुं जेना मुखआगल रह्युंछे तेजीवने त्रीजुंकरण होय॥३॥

एरीतें धाननोपालो तथा नदीनुपछर ए बे दृष्टांतें कोइकजीवें यथाप्रवृत्तिकरणें पल्योपमने असंख्यातमेंभागें न्यून एककोडाकोडि सागरोपमनी सातेकर्मनी शेप स्थिति कीधी, एटले सम्यक्त्व प्राप्तिनो निश्चेंथयो एरीतें शिष्यबोल्यो तेवारे गुरुक हेछे इहां सम्यक्त्व प्राप्तिनुं निश्चेंथयोनथी ते गाथायें करीकहेछे.

तत्थविगंठीघणराग दोसपरिणइमयं अभिंदिंतो ॥
गंठियजीवो विहहा, नलहइ तुह दंसणं नाह ॥ ४ ॥

अर्थः— तत्थविके० तिहांपण कांइकउणी एककोडाकोडी स्थिति शेप सातकर्म नी कीधी तोपण अभव्य अथवा दुर्भव्यत्वादिक दूपण ने लीधे हाहाइतिखेदे रा गद्वेपपरिणाममईग्रंथीदेशगत जीवपण ग्रथीने अणभेदतोथको हे नाथ ताहरुं दर्श नजे श्रीमुखे कहेलुं सम्यक्त्वते पामीशकेनही? केमके ए यथाप्रवृत्ति करणगुणेतो अभव्यपण आवे एवुं आवश्यक वृत्तिमां कह्युंछे के अभव्यपण कोइक अकामनि र्जराकरतो ग्रंथीदेशसुधीआवे तिहां अरिहंतनी ऋद्धीदेखीने अथवा अन्यकोई पुजली कऋद्धीनी इछायें प्रवर्त्तमानथको चारित्रलीये तिहांमात्र श्रुतसामायकनो लाभ तेने होय, पण शेप दर्शन सामायिकादिक पामेनही, एम संसारमां भमताथका व्यव

हार रासियाजीवप्राये जिहांशुधी चरमावर्त चरमकरण न पामे तिहांसुधी अनंतिवार ग्रंथीदेशसुधीआवी पाछापडे ॥ ४ ॥ इतिचतुर्थगाथार्थ

हवे जीव जे रीतें ग्रंथीनेदे ते रीत कहेछे —

पहिलिय पिविलिय नाएण, कोविपज्जत्त सन्निपंचिंदी॥
नवो अवड्ढपुग्गल, परियट्टवसेस ससारो ॥ ५ ॥

अर्थ —पहिलियपिविलियनाएणके० इहां ग्रंथीदेशपाम्यापछी कोइकजीव अपूर्वकरणकरे ते पथीजे वाटमार्गु तथा पिपिलीकाजे कीडी तेने नायए के० न्यायें दृष्टांतेंकरे तेदृष्टांत देखाडवाने नाष्यनी गाथाउ लिखुछु

जहइहतिन्निमणुस्सा, जतडविपहसहावगमणेण ॥ कालाइक्कमनीया, तुरतिपत्तायदोचोरा ॥ १ ॥ दहुंमग्गतडच्छे, तेएगोमग्गउपडिनियत्तो ॥ बीउंगहियोतइउं, समइकतोपुरपत्तो ॥ २ ॥ अडवीनवोमणुस्सा, जीवोकम्मठिईपहोदीहो ॥ गठीयनयठाण, रागद्दोसायदोचोरा ॥ ३ ॥ नग्गोठिइपरिवुढी, गहियोपुणगठिउंगउतइउं ॥ समत्तपुरएव, जोइज्जा तिन्निकरणाइ ॥ ४॥ खिईसहावियगमण, थाणूसरण तउसमुप्पयण ॥ गणयाणुसिरेवा उद्दरणवामुअगीण ॥ ५ ॥ खिइगमणपिवपढमं॥ थाणूसरणचकरणमपुव्व ॥ उप्पयणपिवतत्तो, जीवाणकरणमनियट्टिं ॥ ६ ॥ थाणुवगठिदेसो, गठियसत्तस्सतछवठाण ॥ उसरणपिवतत्तो, पुणोविकम्मठिइविवढि ॥ ७ ॥

हवे ए सातगाथानो अर्थ किंचितमात्र लिखुछु जहइह के० जेमइहां कोइक तिन्निमणुस्सा के० त्रणमनुष्यछे, ते सहावगमणेण के० स्वनावगमनेकरी सहेजे निप्रयोजने जतिपह के० अटवीपंथेजायछे ते जाताजाता घणी अटवी उलंघीगयापछी कालाइक्कमनीया के० कालअतिक्रमवेकरी नयपाम्या, एटले असूरवखतें अटवीनो पंथ तेथी मरवालागा, एटलामा तुरति के० तुरत पत्तायदोचोरा के० बेचारआवी लागा. ॥ १ ॥ पछी ते त्रणमनुष्यें दिहुमग्गतडच्छे के० मार्गनेतटे एटले मार्गनेमुखें ढुकडा बे चोरोदेखीने ते के० ते त्रणमाथी एगोमग्गाउ के० एकतो मार्गथकी पाछो निवर्त्यो, एटले पाछोनासीगयो तथा बीउंगहियो के० बीजानेतो ते चोरलोकोपे ग्रहणकीधो एटले पकडीलीधो, अने तइयोसमइक्कतो के० त्रीजोमनुष्यते चोरोने सम्यक्प्रकारें अतिक्रम्यो, एटले पोतानु बलवीर्यफोरवी चोरोने हतप्रहतकरी पुरंपत्तो के० पुरप्रतेपहोतो एटले इछितस्थानके निर्नयपणे पहोतो ॥२॥ ए दृष्टांत सम्यक्त्व प्राप्तिमा उपनयनावे उतारेछे —

अडविन्नवो के० नवभ्रमणरूप तो अटवीकहियें, तेमां मणुस्साजीवो के० मनुष्य ते त्रण उत्कृष्ट जातना संसारी जीव कहिये, अने कम्मठिईपहोदीहो के० कर्मस्थितिते महोटो दीर्घ मार्गकहियें, तथा गंठियनयठाणं के० ग्रंथीदेश ते नयनुं स्थानक कहियें, वली रागदोसायदोचोरा के० राग अने द्वेषरूप वे चोरजाणवा ॥ ३ ॥ तेत्रणमांथी दुर्भव्य अथवा अभव्यजीव तेतो भग्गो के० पाछो भागो (नासीगयो) तथा अचरमकरणी अथवा अपरिपक्व कारणीतो ग्रंथीदेशेंजरह्यो, इहां ग्रंथीदेशे भव्य अथवा अभव्य उत्कृष्टो संख्यात असंख्यात कालसुधीरहे पछी भव्यने शेष अर्द्धपुद्गलपरावर्त्त संसाररह्योहोयतो ग्रंथीभेदे अधिक संसारीपाछोफिरे इहां ग्रंथीदेशें भव्य अथवा अभव्य रह्यांथका द्रव्यश्रुत भिन्न दशपूर्वसुधी पामे द्रव्यचारित्रपामे.

अभव्य पूर्वश्रुत न पामें, केटलाक ग्रंथोने अनुसारे तथा वृद्ध परंपरायेंपण अभव्यने पूर्वश्रुत न होय, तथा कोइक ग्रंथने अनुसारे लब्धिदशपूर्वसंपूर्णने पूर्वलब्धिकहियें, ते अभव्यने न होय पण शेषहोय, पछी बहुश्रुतकहेतेखरुं पुरेपुरा दशपूर्व तथा अधिक यावत् चउदपूर्वसुधि जे भणे ते नियमा सम्यक्त्वीहोय केमके कल्पभाष्यमां कह्युंछे यतः चउदस दसय अभिन्ने, नियमासम्मत्तसेसएभयणा ॥ इति तेमाटे उत्कट कारणयोगे वीजो पुरुषतो ग्रंथीदेशेज टकीरह्यो, तथा त्रीजो चरमकरणी प्राप्त भव्य सम्यक्त्ववंत वीर्योल्लासवधते राग द्वेष परिणतिरूप ग्रंथीभेदी ने सम्यक्दर्शन रूप नगरेंज पहोंचे एम त्रणेकरणनो उपनय जोईआ के० जोडवो॥४॥

हवे त्रणगाथायें पीपीलिकानुं दृष्टांत समजावेछे.— खिइसहाव के० जेमक्षिति जे पृथ्वी तेनाउपरे सहजस्वभावें कीडीफिरेछे गमनकरेछे पण तेमां कोइनी प्रेरणानथी, हवे तेमां एक कीडीतो फरती फरती थाणुजे खीलो अथवा भीतप्रमुख तिहांसुधी आविने वली पाछीफरीजाय, तथा कोइक कीडीतो थाणुजे खीलो भीतते उपरें चढवामांरु तेचढीने थाणुना उपर वेसी रहे, तथा वली कोइक कीडी थाणु उपरें चढीने उडीजाय, तथा कोइक कीडी खिलाथी अथवच पाछीउतरे ए मूइंगीणं के० मृदंगीजे कीडी तेनुं दृष्टांत जाणवुं ॥ ५ ॥

हवे एनो उपनय उपमान देखाडेछे, खिइगमणंके० क्षितिगमन एटले कीडीनुं पृथवी उपरें फरवुं खीलाना मूलसुधी आववु ते पढमंके० प्रथमना यथा प्रवृत्तिकरण सरिखुंछे, तथा कोइक कीडी थाणुंतरणंचके० खीलेचढी ते सरिखुं वीजुं

मपुवंके० अपूर्वकरणठे, तथा कोइक कीडी खीलेचढीने तेखीलाथी उपपणके
डीगई ते सरिखु जीवने त्रीजु अनिवृत्तिकरण कहिये ॥ ६ ॥
थाणुवगठिदेसोके० थाणुंजे खीलो तिहांज टकीरहेवु ते ग्रथीदेशें रहेवु ए
गठीयसत्तस्सतब्भवछाणके० ग्रथीगतजीवनु कोइकालसुधी तिहा रहेवुहोय, ते स
खुठे, तथा उसरणपवितत्तोके० ते खीलारूप गठीदेशथी ओसरे एटले पाछु
ते पुणोवि के० फरी कर्म्मस्थितिनी वृद्धिकरे फरी उत्कृष्टी कर्मस्थितिबधारे ॥७॥
ए सातगाथाये वे दृष्टातकह्या तेणेकरी कोइ सज्ञीपर्याप्तो पचेद्री नव्यजीव मु
क्तिजावा योग्यहोय, जेने अवढ्ढपुग्गलपरियट्ट के० अर्द्धमात्र पुद्गलपरावर्त्त शेष
ससार बाकी रह्यो होय, एहवो एटले लक्षणेपूरण जे जीव होय ते जीव जे करे ते
आगली गाथाये कहेठे ॥ ५ ॥ इति पचमगाथार्थ

अपुव्वकरणमुग्गर, घायविहिय डुट्ठगठिन्नेउसो ॥
अतमुहुत्तेणगउ, नियट्टिकरणे वि सुज्झतो ॥ ६ ॥

अर्थ – हवेपूर्वोक्त लक्षणवत जीव ते ग्रथीदेशसुधीआवे, तिहा परिणाम निर्म
लतानी वृद्धिहोय ते कहेठे, अपुव्वके० पूर्वेकोइवारे पाम्योनही, एहवुजे परिणा
तेने अपूर्वकरण कहिये, ते अपूर्वकरण कहेवुठे जे निबड आकरी अत्यतकठिण
एवी पूर्वोक्तरूपजे ग्रथी तेने नेदवाने मुग्गरके० वज्र सरिखु ठे तेने घायके०
घायेंकरीने विहियके० विहित एटले कर्योठे डुट्ठग्रथीनु नेदजेणे, सोके० तथानूत
ते जीव प्रतिक्षणे विशुद्धमान परिणामनी निर्मलता वधते थके अतर मुहूर्त
मात्रमां पूर्वोक्त अनीवृत्ति करणेगयो एटले ग्रथीनेदकरता अतर मूहूर्तलागे तिहां
चढते परिणामें ग्रथीनेदकरी अनिवृत्तिकरणे जाय, इहा अपूर्वकरणनी विशुद्धता
थकी अनिवृत्तिकरणनी निर्मलता वधीअतरठे, माटे अपूर्वकरण अने अनिवृत्तिक
रणनी निन्नता थई ॥ ६ ॥ इतिषष्टिगाथार्थ

हवे ते अनिवृत्तिकरणे गयोथको जीव जे करे ते कहेठे

सो तत्थकरणे सुद्धमोव, वयरी जय जणियपरमआनद ॥
सम्मत्तलद्धइजीवो, सामन्नेण तुद्द पसाया ॥ ७ ॥

अर्थ – ॥ सोतत्थके० तेजीवने तिहां अनिवृत्तिकरणे अती विशुद्ध परिणाम
जोरथी मिथ्यात्व मोहनीयना पुजनीस्थिति बे थाय, तेमा पहेली स्थिति अ
मुहूर्तनेद एटले एक अतरमुहूर्तमा खपीजाय, एटली स्थितिना मिथ्यात्व मो

स्तीर नामा रसेनादजीव ते महोटीस्थितिजे कोडाकोडी सागरोपमना पर्योप मना असंख्यातमो जाग न्यूनते ते स्थितिमांथी नजीकनेचीजे. एटले बीजो पत्यो पमने असंख्यातमेजागे न्यून एककोडाकोडी सागरोपम प्रमाणवली तेमाथी अं तर मुहूर्तप्रमाण थेत्र नीची मेलीने वृदीरीवी. वली अंतरथी तेनुं महोटो पुज ळजागाकर्यो एटले न्यानीस्थिति तथा महोटीस्थितिनें वचमा आंतरोरड्यो ते वारे ए देहुस्थितिनी वचमां जे खाली जगाथई तेनेअंतरकरणकहियें एम ए हां अनिवृत्तिकरणना जोरथी अंतरकरण करे.

अने प्रथम स्थितिगत दलियानें अंतरमुहूर्तमां भोगवे अने महोटीस्थितिमांथी आवता दलियानें उपशमावे स्तिबुकि उदयकरे अंतरमुहूर्त उदयनआवे एवाकरे एटले अनिवृत्तिकरणे ए कार्यकरे एटलो मिथ्यात्वस्थितिना वेजागकरी अंतर करणकरे अने बीजुं अंतरमुहूर्तवेद्य प्रथम लघुस्थितिने खपावे एटले अनिवृत्तिकर णनो कालपूरोथाय तेवारे आगल अंतरकरणमां धसे दोडे जाय प्रवेशकरे. तेवारे तिहां अंतरकरणने प्रथमसमये रेनाथ तमारे प्रसादे क्षायिकादिकनीपरे विशिष्टतो नही पण सामान्यपणे अल्पकालीन उपशमनामा समकितपामे. ते सीरीतेंपामें ते नी उपमाकहेछे,रणेसुहडोव्वरि जयजणियपरमआणंदके० जेमसुभटहोय ते रणने विषे वैरीने जीतवाथी परमानंदपामे. तेम अनादिकाल रागद्वेषरूप महोटागंठ्र तज्जा नित गुरुकर्मस्थित्यादि अनंतानुबंधिया चार वैरीने जीतवाथी परमानंद सरिखुं स म्यक्त्व जीवपामे यदुक्तं आवश्यकादिग्रंथे.

पावति खवेऊणं, कम्माइ अहा पवत्ति करणेणं ॥ उवलनाएण कहमवि, अ निअपुवि तउगठि ॥ १ ॥ तंगिरिवरंच जेतु, अपुव्वकरणुग्गवज्जधाराए ॥ अंतोमुहु त्तकालं, गंतुमनियट्टिकरणंमि ॥ २ ॥ पइसमयंसुज्झंतो, खविउ कम्माइ तच्छवहुआ ई ॥ मिच्छतं मिउईए, खीणणुइयमिउवसते ॥ ३ ॥ संसारगिम्मतवियो ॥ तत्तोगो सीसचंदणरसोव्व, अईपरमनिवुइकरं, तस्संतेलहइसम्मत्तं ॥ ४ ॥

हवे ए चारगाथाओनो अर्थ लिखेछे अनादिकालनुं संसारचक्रमां भ्रमतोथको जीव पावतिके० पामे, मिथ्यात्वमोहनीयादिक कम्माइके० कर्मोंने खवेऊणंके०ख पावीने ते अहापवत्ति करेकणके० यथाप्रवृत्तिकरणेकरीने कर्मो खेपवे, तेनुंदृष्टांत उवलनाएणके० उपजजे पूर्वोक्त नदीना प्रवाहनो पाखाण, तेना दृष्टांतेखेपवे, प छी अनिअपुव्विके० पूर्वकोइवारे नेदीनथी एवीजे रागद्वेष परिणतिमई मिथ्यात्वग्रंथी तं के० ते ग्रंथीने शीरीतेभेदे के गिरिवरंके० गिरवरजे पर्वतते भेतु के० भेदवाने जेम व

ज्र वलगानछे, तेम अपूर्वकरण परिणामरूप उग्र वज्रधाराये करीने जीव
दतो अतर मुहूर्तकालमा अनिवृत्तिकरणेगयो, पछीते अनिवृत्तिकरणे गयो
करे तेआगली गाथाये कहेछे ॥ २ ॥

पइसमयंके० प्रतिसमये एटले समय समयप्रते विशुद्धमान परिणामिय
हा बहुलाकर्मोने खेपवे, तेवखते जे मिथ्यात्वना दलिया उदयआव्या, तेने क्ष
अने जे उदय न आव्या उदयाभिमुख न थया ते दलियाने उपशमावे, एटले
रणादिक करणवडे पण विपाकोदय अथवा प्रदेशोदय जे थईशकेनही तेने उप
माव्या कहिये, एम इहा अनिवृत्तिकरणे केटलाक मिथ्यात्वना दलियाखेपव्या, अ
केट लाक उपशमाव्या, अने मिथ्यात्व स्थितिना बे भागकरी विचमां अतरकरण
कर्यु ॥ ३॥ हवे ते अतरकरण करता जे थयु ते आगली गाथायें कहेछे

ससारगिम्मके० जेम कोईक पथी जन ग्रीष्मकालमा मध्यान समये निर्जल
नमा सूर्यनापडेला किरणने परितापें पडेला लूना अजडतापेकरी अतिव्याकुल थया
होय, तेने कोई शीतल स्थानकमले वली तिहाकाई बावनाचदननु रसछाटे तेवारे
ते पथी सातापामे केवो आनदमग्न होय

तेम इहा भव्यजीव रूप पथी अनादिकालनु ससाररूप उग्र गीष्म कालें जन्म
मरणादिकरूप निर्जलवनमा कपायरूप उग्रतापे पीड्यो रागशोगादिरूप लू अजड
एटले दुख तेणेकरी अदुज्यो (दग्धथयेलु) अने तृष्णारूप महाटी पीपासा ते
णेकरी परावभ्यो थको एवो भव्यपथी ते अनिवृत्तिकरणरूप शुद्ध गरलमार्ग पा
मि दूरथी अतरकरणरूप शीतलस्थानकदेखी हर्षवतथको धमीतिहा पहोतो, एटले
गोशीर्षजे बावनाचदन तेहनोजे रस तेहनीपरें शीतल अईपरमके० अतिशय परम
उत्कृष्ट अनिवृत्तिकरण परम सुखसाताकरण एहवु तस्सतेके० ते अनिवृत्तिकरणने
अते अने अंतरकरणने प्रथमसमये घनसारवत् शीतल सम्यक्त्वपामे तेवारें अनता
वधी तथा मिथ्यात्वरुत परिताप सर्व मटीजाय गाढ तृष्णा पीपासा मटीजाय॥४॥

इहा अनादिकालनु परमशत्रु परम दुखदातारूप एहवा मिथ्यात्वनु दुख अ
तर मुहूर्तसुधी दफेथाय (दूरथाय) अनादिनो प्रथम दुखांत इहांथयो इहां ति
ह्रात संज्ञीमां कालनिष्टायें गुणदोष भ्राति तथा विरह आश्री चारभांगा कह्याछे
ना नामकहेछे १ अनादिअनत २ अनादिसात ३ सादिसात ४ सादिअनत
ए चारभांगानु अर्थकहेछे जेने मिथ्यात्वादिक अनादिछे अने ते किवार मट
पण नही एवा अनव्यादिकने अनादिअनत प्रथमभागोछे अने जे भव्यजीवें

प्रथम सम्यक्त्वपाम्युं तेवारें ते जीवें अनादिना मिथ्यात्वनुं अंतआण्युं तेमाटे तेने अनादिसांत बीजोभांगो जाणवो; तथा जे जीव सम्यक्त्वपामी वली सम्यक्त्व वमन करी मिथ्यात्वें गया तेवारें मिथ्यात्वनी आदिथयी, पछी केटलोक काल मिथ्यात्वे रही वली शुभसामग्रीना योगथी फरी सम्यक्त्व पाम्यो तेवारें मिथ्यात्वनो अंतथयो ए त्रीजो सादिसांतनामा भांगोथयो, तथा चोथो सादिअनंतनामा भांगो तेक्षायिक सम्यक्त्वादि क्षायकभावें जेने जे गुण प्रगट थया तेगुण तेने होय पण मिथ्यात्वीने न होय, केमके ग्रंथी भेद कस्यापछी जे मिथ्यात्व होय, ते तो सादिसांत भांगे ज होय, माटे जेने सम्यक्त्वादिक क्षायकगुण प्रगट्या ते सादि, अने ते गुणआव्या जाय नही ते अनंत, एटले भव्य मिथ्यात्वीने त्रणे भांगाहोय, अने अभव्य मिथ्यात्वीने एकज अनादिअनंत भांगोहोय, यदुक्तंः—मिछत्तमभवाणं, तमणाइमणंत येमुणेयव्वं॥भवाणं तमणाइ, सपज्जवसियंतु सम्मत्ते॥१॥अर्थ.—अभव्यने मिथ्यात्व अनादि अनंत भांगेहोय, अने भव्यने अनादि सपर्यवसित भांगें मिथ्यात्वहोय इति॥१॥७॥

हवे सम्यक्त्व केटले भेदेंहोय ते आगमनी गाथायें कहेछेः—

तंचेगविहंडविहं, तिविहं तह चउविहंच पंचविहं ॥
तछेगविहं जंतुह, पणीय भावे सु तत्तरुई ॥ ८ ॥

अर्थः—एक प्रकारें बे प्रकारें त्रण प्रकारें चारप्रकारें अने पांच प्रकारे पण आगममां सम्यक्त्व कह्युंछे, ते भेदोना स्वरूप विवरीने कहेछे.—तछेगविहंके० तिहां एकविध सम्यक्त्व ते जंके० जे हे परमेश्वर तुहके० ताहरा पणियंके० प्रकास्या जे जीवादिकभाव पदार्थ तेनेविषे तत्वरुचिहोय अर्थात् परमार्थ बुद्धिहोय, शकज दोषरहित अने शकलगुणे संपन्न एहवा अरिहंतदेवें भाष्युंजे तत्वते सत्यछे, एहवी रुचि परमार्थबुद्धि, तद्रूप आगममां कह्युंछे. 'तमेवसच्चनिस्संकं जंजिणेहिंपवेइयं' इत्यादि रुचिरूप, यदुक्तंयोगशास्त्रेः—रुचिजिनोक्ततत्वेषु सम्यक्श्रद्धानमुच्यते जायतेतन्निसर्गेण गुरोरधिगमेनय १

ए उपला श्लोकनो अर्थ करेछे —श्री जिनेश्वर भाषित जीवाजीवादिक तत्वनेविषे जे सम्यक्श्रद्धान के० निश्चल प्रतीत तेने तत्वरुचि कहियें, ते तत्वरुचि श्रद्धान मिथ्यात्वदलना रसनी मंदताये जातिस्मरणादिक निमित्तें ईहापोह करतां करतां सहेजे पोतानीमेलें तत्वश्रद्धान पामे ते निसर्ग सम्यक्त्व कहेवाय, अथवा शुभगुरुनी उपासना करतां सिद्धांतवाणी सांभलतां जे पामे ते उपदेसिक श्रद्धान कहियें ॥ १ ॥ इत्यादिक लक्षण जे तत्वरुचि ते एकविध सम्यक्त्व कहियें ॥ ८ ॥

अर्थः— ज्ञान दर्शन चारित्ररूप शुद्ध श्रद्धा नासन रमणता पूर्वक रत्नत्रयीरू प आत्मानुंजे शुभपरिणाम तेने निश्चयतसमम्मतके० निश्चय सम्यक्त्व कहिये, एटले आत्मानेज निश्चय सम्यक्त्व कहियें, केमके आत्मा ने आत्माना गुण ते कांईजूदानथी परिणामे अनन्यछे एकछे गुण गुणी नावें अभेदेज रह्याछे केमके अभेदपरिणामे परिणम्योजे आत्मा ते तद्गुणरूपज कहेवाय. यदुक्तं योगशास्त्रेः— आत्मैवदर्शनज्ञान चारित्राण्यथवायते ॥ यत्तदात्मैवस्वगुणैः शरीरमधितिष्ठति॥१॥

प्रायें अप्रमत्तसाधुने निश्चयनय सम्यक्त्व पूर्णकहेवायछे केमके जेवुं जाण्युं ते वोज त्यागनावछे अने श्रद्धापण तदनुरूपछे माटे स्वरूपोपयोगी जीवने आत्मा तेहिज ज्ञान दर्शन चारित्रछे. कारणके आत्मा रत्नत्रयात्मक अभेदनावें शरीरमां रह्योछे. माटे रत्नत्रयीने शुद्धोपयोगे वर्त्तताजीवने निश्चय सम्यक्त्व कहियें.

तथा इयरके० इतर ते वीजुं व्यवहारसम्यक्त्वछे. ते हे प्रनु तहारा सिद्धांतने विषे सम्यक्त्वना हेतुजे मिथ्यात्वीनुं संस्तव परिचय प्रमुख जे अतिचारादिक दोषछे तेना त्यागथी थाय तथा देव गुरु नक्ति बहुमान योगे शासनोन्नति हेऊहिं के० हेतुयें थाय. यदुक्तं गुणस्थानक विचारग्रंथेः— देवेगुरुचसंघेच सद्भक्तिशासनोन्नति॥ अव्रतो पिकरोत्येव स्थितिस्तुर्येगुणालये ॥ १ ॥ अर्थ.— देव गुरु तथा श्री संघ तेनी बहुमान सहित नक्तिकरे शासनोन्नतिकरे अविरति गुणगणे रह्योथको पण आगमोक्त विधिमार्गे निरतिचार सम्यक्त्वप्रवृत्ति सहितहोयतेने व्यवहार सम्यक्त्व कहियें ॥ ११ ॥

हवे त्रीजा वे प्रकारें सम्यक्त्व कहेछे तेमां एक निसर्ग सम्यक्त्व प्राप्ति अने वीजी उपदेशजन्य सम्यक्त्व प्राप्ति. इहां शिष्यपूछेछेके निसर्गके० सहेजे सम्यक्त्वनी प्राप्ति केवीरीतेंथाय? तेवारे गुरु दृष्टांत गर्जित सम्यक्त्व प्राप्तिनो उपाय कहेछे—

जल वछ मग्ग कुद्दव. जराइ नाएण जेणपन्नत्तं॥ नि
स्सग्गुवएसभवं ॥ समत्तं तस्स तुप्र नमो ॥ १२ ॥

अर्थः— ए गाथामां पांच दृष्टांत कह्याछे. तेमां जलनो तथा वस्त्रनो अने कोद्रवनो ए त्रणदृष्टांत आगल पुंज त्रय नावनायस्ये वर्णवतावशे. अने मार्गनो तथा ज्वरनो ए वे प्रस्तुतछे ते कहेछे—जेमकोइक पंथी मार्गथी भ्रष्टथयो थको बीजाकोई ना उपदेश पाम्याविनाज भमतो भमतो पोतानीमेळे सहेजे मार्गचढे, अने कोईक पंथ भ्रष्ट थयलो पंथी यथाविध पामना उपदेशी कोई सद्गुरुनो योग न मलवाथी मार्ग पामेजनही सिद्धांतेनिदर्शनंदृ अनेत्रीजोत्रृन्द वीजानेपूछीनेमार्गपामे.

तेमज वली ज्वरनो दृष्टांत कहेछे -- जेम कोईकने तापज्वर आव्यो ते कोईने औषध कर्याविनाज पोतानी मेले जतोरहे, अने कोईकने तो औषध चूर्ण धागादि (दोरादिक) प्रयोगकरवाथी ज्वरजायछे, तथा कोईकनेतो असाध्यज्वर कोईरीतें जायजनही एरीतें ए बे दृष्टांत सम्यक्त्व प्राप्तिविषे जोडवा ते आवीरीते --

कोईक शुक्लपक्षी कालादिक कारण परिपाकवत चरमावर्त्ति चरमकरणी एवो नव्य जीव ते सहेजे आपे आप विचारतेथके सम्यक्त्वपामे ते निसर्ग सम्यक्त्व कहियें, तथा कोईक जीव पूर्वोक्त कालादिक योग्यतावत होय पण सद्गुरुने योगे उपदेश सानली अनादिनी मूलमटाडी देव गुरु धर्म सद्दहणारूप सम्यक्त्वपामे तेने उपदेश सम्यक्त्व कहिये एरीते नाएणके० ए न्याये (दृष्टांत) द्वाराये निसर्गोद्भव सम्यक्त्व तथा उपदेशोद्भव सम्यक्त्व ते हे प्रभु तुमे कह्यु परूप्युं तेमाटे परमोपकारी एहवा तुजने माहरो नमस्कार थाओ ॥ १२ ॥ एम बेप्रकारनु सम्यक्त्व त्रण रीते कह्यु

हवे त्रणप्रकारे सम्यक्त्व कहेछे --

तिविह कारग रोअग, दीवग नेएहि तुह मय विऊहि ॥
खाउवसमोवसमिय, खाइय नेएहि वा कहियं ॥ १३ ॥

अर्थ -- हेनाथ तुहमय के० तहारा मतना विऊहि के० वेत्ता जे गणधरादिक, तेऐ कारक रोचक अने दीपक एम तिविह के० त्रण नेएहि के० प्रकारें सम्यक्त्व कह्युछे, वा के० अथवा क्षायोपशमिक उपशमिक अने क्षायिक एरीतें पण त्रणनेदें सम्यक्त्व कहियंके० कह्युछे ॥ १३ ॥

हवे कारकादिक सम्यक्त्वना लक्षण कहेछे --

ज जह नणिय तुमए, त तह करण मि कारगो होइ ॥
रोअग सम्मत्त पुण, रुइमित्त करतु तुह धम्मे ॥ १४ ॥

अर्थ -- हेनाथ जे जेम यथार्थनावे विधिमार्ग तुमे नणियं के० प्रकाश्यो ते तेमज आज्ञाने अनतिक्रमतोथको एटले तुमारी आज्ञासहित आगमोक्त शैलीपूर्वक यथाशक्तियें दान पूजा व्रत नियमादिक करे तेने कारक सम्यक्त्व कहियें, तथा पुन के० वली बीजु रोचक सम्यक्त्व, ते तुहधम्मेके० तहारा धर्मनेविषे रुईमित्तकरतुके० रुचिमात्रकरे, श्रीजिनोक्त धर्मकरवानी इच्छारहे शुद्धश्रद्धाराखे कोईने धर्म प्रवृत्ति करतोदेखीने रूडुमाने परतु पोते नारीकर्मा माटे क्रियानुष्टानादिक करी शके नही तेने रोचक सम्यक्त्व कहियें ॥ १४ ॥

हवे दीपक सम्यक्त्व कहेछेः–

सयमिह मिछद्दिठी, धम्मकहाईहिं दीवइ परस्स ॥
दीवग सम्मत्तमिणं, जणंति तुह संमय मईणो ॥ १५ ॥

अर्थः– सयमिह के० स्वयं पोतेतो मिथ्यादृष्टी अभव्य दुर्भव्य होय, पण अंगारमर्दकाचार्यनी परे धम्मकहाईहिंके० धर्मकथादिकेकरी आदिशब्दथी सामायिगणना अनुष्ठानना अतिशयेंकरीने एटले दंभरचना विशेषेकरी, पर जे बीजा भव्य भद्रक जीवोहोय तेने धर्मकरी दीपावे, एटले आगला जीवोना घटमां प्रकाशक रावे. परंतु पोताने अंतरंगपरिणामें श्रद्धानहोय एहवाने हे प्रभु तहारा समयजे सिद्धांत तेना जाणपुरुषो दीपक सम्यक्त्व कहेछे.

इहां शिष्यें प्रश्नकर्युंजे पोते मिथ्यात्वी मिथ्यात्वे वासित अंतःकरण वालाने सम्यक्त्वी केमकहोछो ? तेवारे गुरुकहेछे हे शिष्य, जो मिथ्यापरिणामीछे तोपण आगला प्राणीउंने धर्म पमाडवानो हेतुथायछे, अथवा शासनोन्नतिकरेछे, माटे कारणे कार्यनो उपचारकरी सम्यक्त्व कहियें, सम्यक्त्वनो हेतुछे माटे सम्यक्त्व कहिये, यदुक्तं सिद्धांतेः–विहियाणुठाणं पुण, कारग मिहरोयगं तु सद्दहणं॥मिछदिठीदीवइ, जंत त्तेदीवगं तंतु ॥१॥ अर्थः–विहियाणुठाण के० विहित एटले नीपजाव्युंछे कर्युंछे आगमानुसारें धर्मानुष्टानजेणे ते कारक सम्यक्त्व कहियें; अने रोयगं के० रोचक सम्यक्त्व ते शुद्धसद्दहणारूप रुचिथाय तेने कहिये, वली मिछदिठी के० पोतें मिथ्यादृष्टीथको परने तत्वदीपावे, परने सम्यक्त्व प्रकाशकरे तेने दीपक सम्यक्त्व उपचारें कहिये॥ १५

हवे बीजीरीतें प्रकारांतरें त्रणभेद सम्यक्त्वना कहेछेः–

अपुव्वकय तिपुंजो, मिछ मुइन्नं खवित्तु अणुइन्नं ॥
उवसामिय अनियट्टि, करणाउ परं खउवसमी ॥ १६ ॥

अर्थः– इहां त्रण सम्यक्त्वनी विगत ए प्रकरणनेविषे प्रकरणकारना आशयथी अवचूरिकारनो आशय भिन्नपणेछे. पण ठीक शब्दार्थ मलतोनथी माटे आवश्यक विशेषावश्यक अर्थदीपिका सुदर्शनाचरित्र कल्पभाष्य प्रमुखग्रंथोने सम्मत प्रकरणकारनो आशयछे ते विगत लखियेछेः–प्रकरणकारें सिद्धांत तथा कर्मग्रंथिक ए बेहुना अभिप्राय ग्रहणकरी प्रकरण रचनाकरीछे. तेमां सिद्धांतकारनो ए आशय छे जे अनादि मिथ्यादृष्टीने कोई तथाविध सामग्रीनो सद्भाव एटले प्राप्तिथई यथाप्रवृत्तिप्रमुख त्रणकरण करतां अपूर्वकरणना अध्यवसायथी ग्रंथी भेदी शेषमि

थ्यात्व स्थितिना त्रण पुंज करी प्रथम शुद्धपुंजनेवेदे ए त्रणपुंजनी स्थापना करि येछैये –(○ शुद्धपुंज ◎ मिश्रपुंज ● अशुद्धपुंज) ते कारणथी उपशम सम्यक्त्वपा म्याविनाज प्रथम क्षयोपशम सम्यक्त्वपामे, तथा वली कोईक नव्यजीव यथाप्रवृ त्यादिक करणत्रय अनुक्रमें पूर्वोक्तविधियेंकरी अंतरकरणने प्रथम समये उपशम सम्यक्त्वपामे पण उपशमें रह्यो पुंजत्रण करेजनही, अंतरमुहूर्त काल प्रमाण शु द्धनिर्मल अपौद्गलिक उपशमभावनवेदी तिहांथी चलायमान थयोथको अवश्य मि थ्यात्वेजाय, अपरपुंजतो छेनही माटे इलिकाने दृष्टांतेफरीपाछो सगणजे मिथ्या त्व स्थानकथी आव्यो तेफरी मिथ्यात्वेंज जाय, जेम इलिजे कोईजातनी लट इय ल एककाष्ठादिक पदार्थेथी आगल जावाने चाहनाकरे त्यारे आगलागात्रनु विक्षे प केo विस्तारवुकरे, आगला शरीरनाभागने चारेतरफविस्तारता स्थानक अणपा मता पाछीपूर्वस्थानके जिहांथी सरीर उपाड्युहतु तिहांजआवे यदुक्तं कल्पनाष्ये – आलवणमलहंति जहसछाणनमुचएइलिया ॥ एवअकयतिपुंजो मिछचियउवसमी एइ ॥ १ ॥ ए गाथानो अर्थ सुगम प्रथम लखाइजगयोछे

एम स्थानांतरगमनना भाव माटे उपशम सम्यक्त्वी मिथ्यात्वेंज जाय ए सि द्धांतिकनो अभिप्रायछे, तथा कर्मग्रंथ वाला एममानेछे के जेकोई अनादि मि थ्यादृष्टी ससारीजीव जेवारे चरमावर्त तथा चरमकरण करवाने अवसर पहेला सम्यक्त्व प्राप्तिकालेज यथा प्रवृत्त्यादि करणत्रय करवा पूर्वकज अंतरकरणकरे, तिहां उपशम सम्यक्त्वपामी अवश्य त्रणपुंज करे, एटले यथाप्रवृत्तिकरणे ग्रंथीदे शेआवे, तथा अपूर्वकरणे ग्रंथीभेदकरे, तथा अनिवृत्तिकरणे मिथ्यात्वस्थितिना बे भागकरे, एकअंतरमुहूर्तवेद्य न्हानीस्थितिकरे, बीजी देसूणी कोमाकोडी प्रमाण म होटी स्थितिकरे एवी बे स्थितिकरे

एरीतें बे स्थितिकरी तेमांथी न्हानीस्थिति खेंचीलेई नेवचमां अंतरकरे एटले बे स्थि तिनीवचमां खाली जायगारहे एमकरे, पछी न्हानीस्थितिने अनिवृत्तिकरणना अध्य वसायेंकरी खपावीने, पछी अंतरकरण जे बे स्थितीनावचे खाली जायगारहीछे, तेमां प्रवेशकरे, त्या अंतरकरणमां प्रवेशकरवाने पहेले समयेज उपशम सम्यक्त्व पामे, ते अंतरकरणओलघतां अंतर मुहूर्त प्रमाण कालजाय तेनेज उपशम सम्यक्त्व कहियें

हवे अंतरकरणमा वर्त्ततो औषधसरिखु जे उपशम सम्यक्त्व, ते सम्यक्त्वेंकरी ने कोदरावा धान अथवा मलीनजल अथवा मलीनवस्त्र ए त्रणेना सरिखुजे मि थ्यात्व मोहनीयकर्म तेने सोधीने त्रणेभागे वेंचीनाखे, तेमां पहेलो भागतो शुद्ध

निर्विष तथा स्वछ निर्मल जाणवो अने बीजोनाग अर्द्धशुद्ध तथा थोडोक गदलुं अने थोडोमलीन जाणवो वली त्रीजो नाग संपूर्ण अशुद्ध यथास्थित तथा कलुष अतिमोहोलो तथा मलीन गलोच जाणवो. हवे ए त्रणे वस्तुना दृष्टांते विवरीने विपदरीतें देखाडेछेः—

जिम मीणसहीत कोद्रव धानने छाशजलादिक औषधनायोगे एकनाग मीणरहीतकस्यो, बीजोनाग अर्द्धशुद्ध कस्यो, अने त्रीजोनाग जेमहतो तेमनोतेमरह्यो, ते अशुद्धछे, तथा जेम कोईक वस्त्रमलीनहतुं ते क्षारादिक औषधनायोगे अतिस्वछ निर्मल थाय, बीजुं थोडाऔषधानो प्रयत्नमाटे थोडुंनिर्मलथाय अने त्रीजुं मलीनज रहे, तथामलीन जलजेमनिर्मल फलादिकनायोगे अतीस्वछथाय, बीजुं थोडुंनिर्मल थाय त्रीजुं मलीनज रहे, एम त्रण दृष्टांतें अंतरकरण गत उपशमसम्यक्त्वरूप औषधनायोगे करी मिथ्यात्वमोहनीयना दलियां मिथ्यात्वरूप मीणमां नस्यांहतां तेनो एक नागतो शुद्धकस्यो मीणरहीत कस्यो, अने बीजोनाग अर्द्धमीणरहीत थयो, एटलामां अंतरमुहूर्तना कालनीसमाप्ति थई तेथीते बीजो नागतो अर्द्धशुद्धथयो अने त्रीजोनाग शुद्धकरवानेतो पोची शक्योज नही तेथी ते त्रीजो नागतो संपूर्ण मिथ्यात्वरूप मीणसहित विषथी नरेलोज रहिगयो.

हवे ते त्रणपुंजनां त्रण नामथयां, तेमां पहेलो शुद्धपुंजते दर्शनमोहनीयकहियें, हवे ते जीव अंतरकरण गत उपशम काल, पूरोथयेथके एटले जेटलोवखत अंतरकरणनो तेटलोज वखत उपशम सम्यक्त्वनोछे ते उपशम सम्यक्त्वनोकाल अंतरमुहूर्त्तप्रमाण पूरोथयेथके जो परिणामनी विशुद्धीरहे तो शुद्धपुंजनो उदयथाय, तेनुंनाम क्षयोपशम सम्यक्त्व कहिये, एटले मिथ्यात्वरूप मीणामां नरेलां दलियांजे शुद्धकस्यां तेहनो उदय क्षयोपशम सम्यक्त्वकहियें.

इहां शिष्य प्रश्नकरेछे के जो निर्विषदलियांकस्यां तोपण जातेंते दलियांपोते मिथ्यात्वनांछे, निर्विषथीतो रस रूप गंधादिक गयुं पण गुणने आवरणकरनारां दलियांतो तेमनां तेमजछे, तो सम्यक्त्वश्रद्धा नासना केमथाय? तेवारें गुरुकहेछे के जेमकोई अत्रक अथवा अपर पाषाणादिक ते जातेंमलीनहोय तेनेकोई औषधादिक योगेंकरी ते पाषाणादिकमांथी कालासरूप कलुषता काढीनाखे तेवारे ते दल निर्मलथाय, पछीतेने आंतरेजे वस्तुरहीहोय ते सर्वदीगमांआवे, पण छानीरहेनही तेमज इहां दर्शनमोहनीयकर्मना दलमध्ये अशुद्धपरिणतिरूप मिथ्यात्व विषेंकरी मलीनथयेलुं अत्यंतकालासपणुं नरेलुंहतुं ते उपशम सम्यक्त्वरूप औषधनी

महीमाथी दूरथाय, पछी निर्विषदलियांरह्यां ते स्वछ अन्नपटल सरिखांछे ते निर्मलदलियां काईश्रद्धा नासनमां विपरिणाम करेनही, तेथी जो जाते मिथ्यात्वदलियांछे तोपण निर्विषछे (निर्मलछे) तेथी तेने क्षयोपशम सम्यक्त्व कहियें

यदुक्तं विशेषावश्यकवृत्तौ —तद्यथेत्तुप्रदीपस्य स्वछाभ्रपटलेगृह ॥ नकरो त्यावृति काचि देवमेतद्रुवेरपि ॥१॥ एकपुंजी द्विपुंजी च त्रीपुंजी वानुक्रमात्; एने पश्चानुपूर्वैलेवु एटले त्रीपुंजी द्वीपुंजी एकपुंजी दर्शन्युनयवाश्चेव मिथ्यादृष्टिश्चकीर्त्तित ॥ २ ॥ इहा लोकनेविषे जेम अन्नखना पडातरे रहेलुंदीपक सर्वस्थानके उद्योतकरे, पण तिहा अभ्रक जोआडोछे तोपण काई न्यून प्रकाश दीपकलुं करीशकेनही, ते वीजरीते सोधेला मिथ्यात्वदल तेपण कांई न्यून श्रद्धाकरेनही

तिहा त्रिपुंजी ते सम्यक्दर्शनी द्विपुंजी ते मिश्रदर्शनी अने एक पुंजी मिथ्यादृष्टिहोय, तथा उपशम सम्यक्त्वथी आगलें जो काईक उज्वल काईकमलीन एहवा मिश्रपरिणामथाय तो मिश्रमोहनीयनो उदयथाय, एटले मिश्रपुंजनो उदय आवे अनेजो अनतानुबधीना उदय बलथकी अतिमलिन परिणामथया तो मिथ्यात्व मोहनीयनो उदयथाय एटले अशुद्धपुंजनो उदयआवे

एरीते ससारमा केटलाक त्रीपुंजी केटलाक द्विपुंजी केटलाक एकपुंजी, तेमां क्षयोपशमी त्रिपुंजीहोय तथा मिथ्यात्व क्षय करवाने सम्यक्त्व मोहनीयनी उज्वलताकरे तेवारें द्विपुंजीहोय, अथवा अपुंजी एटले पुंजरहित पण क्षायक सम्यक्त्वीहोय तथा जिवारें मिश्रउद्वेलन करे अथवा क्षपवे तेवारे एकपुंजीज होय इहां पुंजत्रयनो सक्रम कल्पनाप्ये एमकह्योछे प्रवर्द्धमान परिणामी जे सम्यक्त्वीहोय ते मिथ्यात्व दलिक पुंजने आकर्षीने सम्यक्त्वपुंजमा अथवा मिश्रपुंजमां सक्रमावे तथा मिश्रपुंजने सम्यक्त्वी सम्यक्त्वमा सक्रमावे

तथा मिथ्यादृष्टी मिश्रपुंजने मिथ्यात्व पुंजमानाखे अने सम्यक्त्व पुंज मिथ्यात्वपुंजमा सक्रमावे, पण मिश्रपुंजमां न नाखे, तथाचोक्त —मिछत्तमिश्रखीणे तिपुंजीसम्मदीठिणोनियमा ॥ खीणमिउमिछत्त दुएगपुंजीवखवगोवा ॥ १ ॥ एरीतें कर्मग्रंथिकमतें प्रथम उपशम सम्यक्त्वजपामे अने ते उपशमि नीयमा त्रणपुंजकरे, उक्तच कर्मग्रंथे -कम्मग्गयेसुधुव पढमोवसमी करेइ पुंज तियं ॥ तवडिउपुणगछइ सम्मेमीसमिमिछेवा ॥१॥ अर्थ सुगमछे एरीतें सिद्धांतिकमार्गें तथा कर्मग्रंथिकमार्गें भिन्न भिन्न आशय छे ते प्रकरणकरनारे तो वेहुना आशयलेई प्रकरणनी रचना करीछे

तिहां सिद्धांतकारना आशयें कोई मिथ्यादृष्टी यथाप्रवर्त्यादि करणत्रयें करी

अंतरकरणकरे तिहां अंतरकरणमां उपशम सम्यक्त्वपामे पण पुंजत्रय करेनही अं तरमुहूर्त्त उपशम सम्यक्त्ववेदीने पठी मिथ्यात्वेंजाय ए आशय प्रकरणकारें सातमी गाथामां अनिवृत्तिकरणे अतर करणकरी सामान्ये मात्र उपशम सम्यक्त्वपामे पण पुंजत्रण न कर्यां एमकह्युंठे, वली कोईजीव यथाप्रवृत्तिकरण करी पठी अपूर्वकरणे ग्रंथीनेदी पुंजत्रयकरी अनिवृत्तिकरणे क्षयोपशम सम्यक्त्वपामे ए आशय अपुव्वक यत्तिपुंजो एम सोलमी गाथामां कह्योठे, एटले अनादि मिथ्यादृष्टी प्रथम क्षयोप शम सम्यक्त्वजपामे ए सिद्धांतसैलीठे.

तथा कर्मग्रंथानिप्रायें तो अनादि मिथ्यादृष्टी जीव पहेलां करणत्रयपूर्वक अं तरकरणे उपशम सम्यक्त्वीथईने त्रणपुंजअवश्यकरे. पठी जे पुंजनो उदयथाय ति हांजाय एटले कोई शुद्धपुंजेजायतो क्षयोपशम सम्यक्त्वीथाय तथा जो मिश्रपुंज नो उदय थायतो मिश्रगुणठाणेजाय अने अशुद्धपुंजेगयो तो मिथ्यात्वीथाय ए अनिप्राय कर्मग्रंथसेलीनो ठे, ते ग्रंथकारें सत्तरमीगाथायें अकयतिपुंजोउस्सर इत्या दि आशयकह्यो, एरीते सिद्धांतिक तथा कर्मग्रंथिक बेहुएमजी उपशम सम्यक्त्व पाम वाना वे मार्गकह्या तथा क्षयोपशम सम्यक्त्वपामवाना पण वे मार्गकह्या, एटलीवा त प्रसंगथी कही हवे मूलगाथानो शब्दार्थ लिखियेठे.

अपुव्वकयत्तिपुंजो इत्यादिक अपूर्वकरणे कर्याठे त्रणपुंजजेणे मिहजे मिथ्यात्व तेनादल उइस्स के० उदयआव्या तेने क्षपवीने क्षयकरीने अने अणुइन्नं के० उद य न आव्या जे मिथ्यात्वनादल तेने उपशमावीने अनियट्टीकरणाउ परखउवसमी के० अनिवृत्तिकरणथी आगल क्षयोपशम सम्यक्त्व पामे ॥ १६ ॥

हवे कर्मग्रंथनी सेलीयें उपशम सम्यक्त्व प्राप्तिनो उपाय कहेठेः—

अकय ति पुंजो ऊसर, दव ईलिय दड्ढ रुक्ख नाएण ॥
अंतरकरणुवसमिउ, उवसमियोवाससेणि गउ ॥ १७ ॥

अर्थः— अकयतिपुंजोत्ति के० जेणे त्रणपुंज पूर्वेकर्यानथी एटले पुंजकर्याथी आगल जेम वनमां दावानल बलतो ऊसरके० उखरखेत्र एटले जिहां खारीजमी न रणरूपहोय अथवा केवल वेलुएटले रेतिनीनूमिहोय सुकी नदीप्रमुखनी; तेने कखरनूमिकहियें, तथा जेनूमिउपर पूर्वेदवलागी गयोहोय अने घासलाकडी तथा रुख्य के० जाडप्रमुख वली साफथई गयाहोय ते दवदग्ध नूमिकहियें एटले एक ऊ खरनूमि अने बीजी दवदग्धनूमि ए वे ठेकाणा जो बलती ईलियके० अग्नीपामें

तो पोतानीमेले उलवाइजाय नाएणके० एन्यायें मिथ्यात्व वेदनरूप जे दावानल ते अंतरकरणरूप ऊखरखेत्रपामीने सहेजे पोतानीमेले उवसमिउके० उपशमि जाय उलवाईजाय तेथी जीव उवसमिउके० उपसम्यक्त्व पामे.

केमके पूर्वें अनिवृत्तिकरणना जोरथी जे जे मिथ्यात्वना दलिया उदयआ व्याते क्षयकीधा अने जे उदयनथी आव्या ते उपशमाव्या, एटले आवता रोकी राख्यां तथा विष्कंभित, उदयकस्या अने वली दूरेराख्यां एम विचमां अतरमुहूर्त गम्य निर्मल, प्रदेशोदीरणादि करण ने अयोग्य एहवुं अतरकरणकीउ

इहां शिष्य प्रश्नकरेछे के पूर्वे क्षयोपशम सम्यक्त्व पामवाने अवसरे एम कह्यु हतु जे उदयआव्या मिथ्यात्वदल ते क्षयकीधां अने उदय न आव्या ते उपशमा व्या ए लक्षणकह्यु हतु अने वली उपशम सम्यक्त्व काले पण एमजकहोछो तो क्षयोपशम तथा उपशममां कांई, फेरपडयोनही तेमछतां गणतिमां जूदाकेम कहोछो?

हवे गुरु उत्तर कहेछे के क्षयोपशममां तो शुद्धदलियानो उदयछे तेमां कोई मिथ्यात्व पुजमांथी दलिउंनजोने उदय आवे ते प्रदेशोदयछे इतितत्व

हवे ते अनिवृत्तिकरणना बलथी मिथ्यात्वनी एक न्हानी अने एक महोटी एवी बे स्थितिकरी तेमां पेली लघुस्थितिने क्षेपवी अने बीजी महोटी स्थितिने दूरथंनावी विचमां अतरकस्यो, तेमां प्रवेशकरे तेने पहेलेसमये उपशम सम्यक्त्व होय, पछीते उपशम सम्यक्त्वना जोरथी अतरमुहूर्तमां शेष विष्कंभितउदय मि थ्यात्व स्थिति, तेना शुद्ध अर्द्धशुद्ध अने अशुद्ध एवा त्रणपुजकरे एटले उपशम सम्यक्त्वनो कालपूरोथयो कहेवाय पछीते जीवना जहेवा परिणामरहे तेवा पुज नो उदयथाय ए उपशम सम्यक्त्व एकजवार होय अने ए सहज मोक्षनुबीजछे

इहां प्रथम सम्यक्त्व पामतां कोईक जीवतो एकलु सम्यक्त्वज पामीने रहि जाय अने कोईक जीव सम्यक्त्वसाथे देशविरतिपणु पण पामे अथवा सर्वविरति पणपण साथेज पामे यदुक्त बृहत्शतकचूर्णौ — उवसमसम्मदिट्ठी अंतरकरणे ठिओ कोई देस विरयंपि लभेइ कोई पमत्तापमत्तभावपि सासायणो पुण न किं पि लहेइ इति एनोअर्थ सुगमछे

इहां उपशमकाल पूर्णथयाथी परिणामनी निर्मलताये शुद्धपुजनो उदयथा वे तेथी क्षयोपशम सम्यक्त्वथाय ते वली कालांतरें सका करवा कुतीर्थसंसर्ग कु शास्त्र श्रवणादिक अतिचारनी प्रबलताथी मिथ्यात्वदलनी उदीरणताथी मिथ्या त्वे मिश्रितथाय तो तत्काल मिथ्यात्वगुणठाणेजाय मिथ्यात्वीथाय ते वली स

ख्यात् असंख्यात कालांतरे शुभनिमित्ते करी. प्रपतित सम्यक्त्वीजीव फरी सम्यक्त्व पामे तेवारेंपण अपूर्वकरणे त्रणपुंजकरी अनिवृत्तिकरणे शुद्धपुंजोदय क्षयोपशम सम्यक्त्वपामे. इहां शिष्यपुछेछे जे पहेला सम्यक्त्व लाभकालें तो किवारे प्रथम न पाम्या तेमाटे अपूर्वकरणकह्यो पण हमणा तो जे पूर्वपाम्युं हतुं तेनोज फरीलाभ थयो तो तेने शीरीतें अपूर्व कहिये ?

हवे गुरुकहेछे अपूर्वसरिखुं अपूर्व एटले जे वस्तुने थोमाज वखतपामियें पण घणावखत नपामियें तेने अपूर्वजकहियें केमके संसारसंबंधी अन्यपर्याय प्राप्तिनी संख्याआगल ए लीगणतिमांछे माटे एने अपूर्वज कहिये एरीतें वृद्धवचनछे सिद्धां तिक नो ए अभिप्रायछे.

तथा फरी सम्यक्त्वनी प्राप्तिनीपरें देशविरति अथवा सर्वविरति नी प्राप्तिना व खतेपण यथाप्रवृत्ति तथा अपूर्वकरण ए बन्नेकरे पण अनिवृत्तिकरण न करे मात्र अपूर्वकाल समाप्ति समयेज देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुंपामे जेवारें देशविर ति अथवा सर्व विरतिपणुंपामे तेवारे यावत् अंतरमूहुर्त्त लगें तो अवश्य ते जी वना प्रवर्द्धमान परिणामहोय अने अंतमुहूर्त्त वीत्यापछी कोईना प्रवर्द्धमान परिणामथाय अथवा कोईना हीन हीन थाय अने कोई स्वभावस्थजरहे.

तथावली जे उपयोगविना सहेजे परिणामनी मलिनताये देशविरतिथी पड्यो अथवा सर्वविरतिथी पड्यो ते फरी परिणामनी निर्मलताने योगें करणकरयावि नाज देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुं पामे, वलीजे उपयोगेपड्या एटले उपयो गीतोहोय पण पोताना कुमत कदाग्रहादिक दोषेकरी विपर्याशथई कुविकल्प पूर्व क पड्याथका मिथ्यात्वेंगया ते जघन्यथी अंतरमुहूर्त तथा उत्कृष्टो प्रभूत् घणोका लगये थके फरी देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुं पामें ते पूर्वोक्त करण करयाथी ज पामे एम कम्मपयमीग्रंथे टीकामां कह्युछे तथा सिद्धांतिक ने मतें तो विराधि त सम्यक्त्वी गृहित सम्यक्त्वथकोपण कदाचकोईक छठीनरकपृथ्वी सुधीपणजाय खरो, अने कर्मग्रंथिक मतेंतो वैमानिक विना अन्यस्थानके न उपजे तेमाटे गृही त सम्यक्त्ववत छे एहवुं प्रवचन सारोद्धार वृत्तिमांकह्युछे.

तथा आवाप्त सम्यक्त्वगुणथी पड्योथको कर्मग्रंथिकना मतेतो उत्कृष्टस्थितिक कर्मप्रकृतिबांधे अने सिद्धांतने अभिप्रायेंतो भिन्न ग्रथिक उत्कृष्टस्थितें कर्मप्रकृति बांधेजनही ए सर्व प्रसंगेकह्युछे एटलें अंतरकरणगत उपशम सम्यक्त्वकह्युं.

तथा उवसमियो वा स सेणिगउ कं० अथवा उपशम सम्यक्त्व स्वश्रेणीयेहोय

एटले स्वश्रेणिते उपशमश्रेणि चढतापण होय, यदुक्तं —उवसमसेढिगयस्सय, होइ उवसामिअंतसम्मत्त, जोवा अकय तिपुंजो, अखविअमिच्छो लहइसम्म ॥ १ ॥ ए गाथानो अर्थ सुगमछे

हवे स्वश्रेणिजे उपशमश्रेणी तेनी विधि अनुक्रमे लिखेछे, तिहां प्रथम उपशम श्रेणि चढवायोग्यना लक्षण गुणस्थान क्रमारोह ग्रंथथीलिखियें छैये —पूर्वज्ञ शुद्धिमान् युक्तो, ह्यार्यसंहननैस्त्रिभि सध्यायन्नाद्यशुक्लांश स्वाश्रेणीश्रयतेक्रमात् ॥ १ ॥

अर्थ — पूर्वगत श्रुतनो धरनारहोय शुद्धिमान् के० नित्य अप्रमत्त निरतिचारवत चारित्रियो होय, वली केटलाकने मतेतो अविरत्यादिक चारगुणठाणावाला पण उपशमश्रेणीना प्रारंभक होय, तथा आद्यसंहनन के० वज्रऋषभनाराच ऋषभनाराच नाराच ए आद्यना त्रण संघयणमांथी अन्यतर संघयणी अने ध्यायनाद्यशुक्लांश के० शुक्लध्याननो प्रथम पाद ध्यातोथको एवोते उपशमश्रेणी मांडवायोग्य तिहां अप्रमत्त गुणठाणे अनंतानुबंधी कषायनी चोकडी तथा मिथ्यात्व मिश्र अने सम्यक्त्व ए त्रणमोहनी मली साते प्रकृति उपशमावीने संज्वलननो लोभवर्जित वीस मोहनीय कर्मनीप्रकृति ते अपूर्वकरण गुणठाणे तथा अनिवृत्तिकरण गुणठाणे उपशमावीने पछी सूक्ष्मसंपराय गुणठाणेलोभमोहनीय प्रकृतिने अणु अणु करी पछी उपशांत मोह गुणठाणे तेहिज अणुरूप लोभप्रकृतिने उपशमाव एम सर्वोपशमकरे यदुक्त गुणस्थान क्रमारोहग्रंथे — अपूर्वादिद्वयैकैक गुणेषु शमकक्रमात् करोतिविंशतेशांति लोभाणुत्वंचतत्शम ॥ १ ॥ अर्थ सुगमछे

तथा इहां उपशमश्रेणीवाला बेप्रकारेहोय एक स्वल्पायु बीजो दीर्घायु तिहां स्वल्पायुवंत तो श्रेणीसमाप्ति अवसरे मरणपाम्यो थको अहमेंद्रपणे उपजे सर्वार्थसिद्धि पर्यंत देवतामांय यदुक्त — श्रेण्यारूढकृतेकाले हमेंद्रेष्वेवगच्छति पुष्टायुस्तूपशांतांत नयेच्चारित्रमोहन ॥ १ ॥ अर्थ — जे स्वल्पायुहोय अने प्रथम संघयणीहोय ते सर्वार्थसिद्धिपर्यंत जाय, अहमेंद्रने जेनाउपर कोइनु हुकमनही एहवा कल्पातीत देवनामा कहवे अने बीजा तथा त्रीजा संघयणवालात अनुत्तरलगे देवलोकपर्यंत कहवे पण आगल न जाय

तथा पुष्टायु सम्यक्त्वी तो उपशांतमोह गुणठाणापर्यंत मोहनीयकर्मनु पूर्ण उपशमकरे तेवारे उपशम सम्यक्त्व होय, यदुक्त —शांतिदृग्वृत्तमोहत्वा दत्रस्यादोपशमिक सम्यक्त्वचारित्र भावश्चोपशमात्मक ॥ १ ॥ अर्थ —इहां उपशांत मोह गुणस्थानके दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय उपशमावाथी सम्यक्त्व चारि

व्रते उपशम भावमांहोय तथा भावपण उपशमहोय तथा जेने तद्भवे मोक्षजवुं होय तेने क्षायिक सम्यक्त्व पणहोय. तेने उपशांतमोह गुणठाणे पांचेभाव होय पणतेकुल जाणवा पण इहांतो केवल उपशमनीज विवक्षाछे तथा इहां उपशांतमोह गुणठाणे चढ्यो ते अवश्यपडेज. यडुक्तं —क्षुतमोहोदयंप्राप्यो पशमीच्यवतेन तः ॥ अथरुतमजंतोयं पुनर्माशिन्यमस्नुते ॥ १ ॥ अर्थ.– उपशमी चारित्रमोह नीयनो उदयपामीने उपशांतमोह थको पडे फरी मोहजनित प्रमादनी रजुवना मांपडे ए एमजयटमानछे केमके जेम मोहोलुं गडलुंप्राणी होय तेने कोई औषधनेजोरे मेलहेठोकरियें तेवारे निर्मलजल उपर तरतुंरहे तेपाणी कोई वायुप्रमुख नी प्रेरणानिमित्त पामी फरी गडलुं (मेलुथाय) ए प्रभाव प्रमादोदयनाछे. यडुक्तंः— सुअकेवलीआहारग उजुमइउवसंतगाविउपमाया ॥ हिंमंतिजवमणंतं तयणंतरमेव चउगइया ॥ २ ॥ अर्थ.– श्रुतकेवलीजे चउदपूर्वि तथा आहारक शरीरनाधणी वली ऋजुमईजे मनपर्यवज्ञानी रजुमतीवाला पण विपुलमतीना धणीनहीं तथा उपशांतमोह इग्यारमां गुणठाणावाला ए सर्वप्रमादना योगथी तेहिजभवने अनं तर अनंताभवभ्रमण चारगतिमां वालेकरे तेमाटे मोक्षने वांछनार प्राणीयें सर्व था प्रमाद नहीजकरवो.

इहां शिष्यपूछेछे के उपशमीनो अवश्यपडे तो उपशमीने मुक्तिनी योग्यता छे के नथी? गुरुकहेछे सातभव प्रमाण अवशेष आयुवालो उपशमी सम्यश्रेणीक थ को अधुरीश्रेणीथकोज पाछोफिरे ते सातमें गुणठाणेआवी फरी क्षपकश्रेणीचढे ते सातभवने अंतर क्षीणमोह बारमें गुणठाणेथई अंतगड केवली थको मोक्ष जाय, इहां सातभवते मुहूर्त्तनो इग्यारमो भागकहियें जेप्राणी तद्भवमोक्षगामी होय ते एकभवार उपशमश्रेणीमाहें उपशमथी उतरी क्षपकश्रेणीयेंचढे अनेजे तद्भव मोक्षगामी नहोय ते एकभवमा बेवारपण कोईकजीवश्रेणीकरे पण तद्भवें सिद्धि वरे नही यडुक्तं सिद्धांते.–जीवोहुइक्क जम्मंमि. इक्कसेटी करेइ उवसमगो ॥ खयंपिकुञ्जा नोकुञ्जा दोवारेउवसामगो ॥ १ ॥ अर्थ.– जे जीव एक जन्ममां एकवार उपशमश्रेणी करे ते मोक्षपणपामे अने जे बे वारकरे तेने क्षपकश्रेणीनहोय इहां अचरम शरी री उपशमी पमथायका प्रथम गुणस्थानके मिथ्यात्वें जाय यडुक्तं गुणस्थानक मारो हः—अपूर्वाद्यात्त्रयोप्युर्ध्वः मेकंयान्तिसमोद्यता ; चत्वारोपिच्युतायाद्यं सप्तमंचांत्यदेहि नः ॥ १ ॥ अर्थः—उपशमश्रेणीचढतां अपूर्वाद्याके०अपूर्व अनिवृत्तिने सूक्ष्मसंपराय ए त्रणगुणठाणावाला उंचाचढतां एकेक गुणठाणो चडे एटले अपूर्वगुणथी अनिवृ

निवादरें जाय अने अनिवृत्तिबादरथी सूक्ष्मसंपरायें जाय अने सूक्ष्मसंपरायथी उप शांतमोह गुणठाणे जाय एम एकेकगुणठाणेचढे तथा उपशमथी पडता अपूर्वादिक चारगुणठाणाथीपडत्तां मिथ्यात्वेंजाय अथवा अंतदेहीजे चरमशरीरीहोय ते पडतां सातमें गुणठाणे आवी अटके, तेवली सातमागुणठाणाथी फरी क्षपकश्रेणीयेंचढे परतु जे एकवार उपशमीहोय ते क्षपकश्रेणीकरे पण बेवार उपशमी होयते क्षप कश्रेणी न करे यदुक्तं—उवसमसेणिचउक्क जाईजीवस्स आजव नूण, तापुणदोणान्न हे खवगसेणीपुणोएगा ॥ १ ॥ आ ससारमा रहेतोथको जीव मोक्षपामे तिहांसुधी चारवखत उपशमश्रेणीकरे तेवली एकजवमा बेवारकरे अने क्षपकश्रेणीतो आखा ससारमां एकजवारकरे इतिगाथार्थ ॥ एवात प्रसंगेथई ॥ १७ ॥

हवे क्षपकश्रेणीनुं स्वरूपकहेछे प्रथम क्षायकनी अनुक्रमणिका कहेछे —

मिच्छाइखएखइउ सोसत्तगिखीणिठाइवद्धाऊ ॥

चउतिन्नवनाविमुक्को तप्भवसिद्धीविइयरोवा ॥ १८ ॥

अर्थ — पूर्वे सिद्धांताभिप्राये अपूर्वकरणेकरयाछे त्रणपुजजेणे ते जीव शुद्ध पुजोदयें वर्त्ततो यथा कर्मग्रथाभिप्राये अतरकरणगत उपशमवर्ले कर्याछे त्रणपुज जेणे ते जीव जेवारे शुद्धविपाकोदय वेदतो एटले क्षायोपशमसम्यक्त्वें वर्त्त तो चोथागुणठाणाथी माडीने क्षायिकप्रारचे' तिहा प्रथम अनतानुबधी चार क षाय तथा मिथ्यात्वमोहनीयपुज मिश्रमोहनीयपुज अनेसम्यक्त्वमोहनीयपुज ए त्रणपुज अने पूर्वोक्त चार कषाय ए सातेप्रकृतिनो क्षयकरे तेवारे क्षायक सम्य क्त्वीथाय तेना वे भेदछे एक बद्धायुक्षायिक सम्यक्त्वी बीजो अबद्धायुक्षायिक स म्यक्त्वी तिहाजे अबद्धायु एटले जे जीवें आगलाभवनु आयुबाध्युनथी एवो क्षा यिक सम्यक्त्वीजीवतो तद्भवेज मोक्षेजाय, अने जेणे आवताभवनु आउपुबांधीने पछी सातप्रकृति क्षपकरी क्षायक सम्यक्त्व पाम्यो ते जीव त्रणभवे अथवा चार भवें मोक्षजाय तिहाजो देवभवनु अथवा नरकभवनु आयु बाध्युहोय तो त्रीजे भवे मोक्षजाय, तथा असख्यात वर्षना आउपावन युगलिया मनुष्य तिर्यंचनु आयुबांध्युहोय तो चोथेभवें मोक्षपामे, केमके युगलधर्मि अवश्य देवगतिपामे, ति हांथी चवी मनुष्यथई मोक्षजाय, माटे चारभवकरे, इहां आयुबांध्यापछी कोईजी व क्षायिक सम्यक्त्वपाम्यु तो ते जीव सातप्रकृति क्षयकरीने एटलेजरहे पण आगल क्षपकश्रेणीचढेनही ते भवेतो क्षायिक मात्रेंजरहे पछी पूर्वोक्तरीतें त्रीजेभ वें अथवा चोथेभवें सिद्धिवरे ए प्रसगथी वातकही

हवे क्षपक श्रेणीनुं स्वरूपकहेछेः—अणमिछमिस्ससम्मं अठ नपुंसछिवेयछक्कंच पुमवेयंचखवेई कोहाइएयसंजलणा ॥ १ ॥ गइआणुपुविदोदो जाईनामंचजावचउरें दी आयावंउज्जोयं थावरनामंचसुहुमंच ॥ २ ॥ साहारणमपज्जंतं निद्दानिद्दंचपय लपयलंच थीणंखवेइताहे ओतंजंचअछन्नं ॥ ३ ॥ वी समिकणनियंठो ॥ दोहेस मएहिं केवलोसेत्ते पढमेनिद्दंपयलं नामस्स इमाइ पयडीउ ॥ ४ ॥ देवगइ आणुपुव्वी विकविसंघयण पढम वज्जाइ असुयरसंठाण तिछयराहारनामंच ॥ ५ ॥ चरिमेना णावरणं पंचविहंदंसणंचउवियप्प पंचविहमंतरायं खवित्ताकेवलीहोइ ॥ ६ ॥ इ ति श्रेणीस्वरूपं. ए त्रणप्रकारें सम्यक्त्व कह्युं. ॥ १८ ॥

हवे चार प्रकारे सम्यक्त्व कहेछेः—

चउहाउ सासाणं, गुमाइ वमणुव्व माल पमणुव ॥
उवसमिउ उपडंतो, सासाणो मिछ मऽप्पत्तो ॥ १९ ॥

अर्थः— चउहाउ के० चारप्रकारें सम्यक्त्वहोय ते आवीरीतें के त्रण सम्य क्त्वतो पूर्वेकह्या अने जेवारें तेनीसाथें सासाणं के० सास्वादन नामे सम्यक्त्व लेजीयें तेवारें चारप्रकारें सम्यक्त्वथाय हवेसास्वादननुं स्वरूपकहेछे.

उपशम सम्यक्त्वनो काल अंतरमुहूर्तछे तेमांथी जेवारें कोइकजीवने नवित व्यनानायोगें मिथ्यात्वे अवश्यजावुंछे तेवारें उपशमकालमां उत्कृष्ट छ आवलिका प्रमाण काल वाकी शेपरह्योहोय अने जघन्यथी एकसमय रह्योहोय अथवा तेनी वचमानो जेजेरहेने मध्यमकाल कहियें एटलो उपशम सम्यक्त्वनो काल शेपरहे तिवारें उपशमावेलाजे अनंतानुबंधी कपायनादल तेनो उदयथाय ते जीवने सम्य क्त्व घकां गोलना वमननीपरें तथा माल पतननीपरें एटले जेम गोलप्रमुख मधु ररसनुं भोजनकरी पाछुं वमनकरे तेवारें भोजन करती वखतेंजे मधुरताना स्वाद नी लेजतहोय तेवो लेजत काइ वमन करती वखतें न होय पण कांइक गल च टयो अनिश्चित स्वादलागे केमके जोपण वमनतोछे तोपण मीठासनुंछे तेम उपश मथी पडयो अने हजी मिथ्यात्वे पहोतुंनथी तेना विचलाकालमां सास्वादन स म्यक्त्व ते गुडवमन सरखोहोय ते वमतां सम्यक्त्वनो अनुभवदेखाडयो अने मा लथकी पडवा भरियो कालस्थिति देखाडयो. जेम मालथकी पडतां सावधानहोय तोपण वेगुंकाइथी ते अवश्य भूमी फरसे तेम सम्यक्त्वनी श्रेणीगत सावधान होय तोपण अनंतानुबंधी दलना उदयबले ढली सम्यक्त्वथी इति तत्त्वं.

हवे सास्वादन शब्दनो अर्थलिखेछे सहआसादेन वर्त्तते इति सास्वादन सम्यक्त्वनो आस्वादमात्ररहे तेथी सास्वादनकहियें अथवा आके० समस्तपणे शातन करे पातनकरे मुक्तिमार्गथी च्यवकरे ते आशातनकहियें एटले अनतानुबंधी कषायवले सम्यक्त्वगुणथी भ्रष्टकरेमाटे आशातने ते आशातनसहीत अवस्यहोय माटे गाहाशातन कहिये अने प्राकृतसूत्र माटे सासायणकहियें यदुक्तं विशेषावश्यके – उवसमसम्मत्ताउ चइऊणमिछ्यपावमाणस्स ॥ सासायणसम्मत्तं तय तरालमिछावलिय ॥ १ ॥एनोअर्थ सुगमछे एरीतें चार प्रकारें सम्यक्त्वकह्यु ॥१०॥

हवे पाचप्रकारे सम्यक्त्व कहेछे –

वेयग जुअ पचविह ॥ तचतुडपुंजखयंमितइयस्स ॥
खयकाल चरमसमए ॥ सुद्धाणु वेयगो होइ॥ ११ ॥

अर्थ – पूर्वे कह्याजे चार सम्यक्त्व तेनीसाथे वेयगके० वेदक सम्यक्त्व छ अके० युक्तकरियें तेवारें पचविहके० पाचप्रकारे सम्यक्त्वहोय जे सम्यक्त्वना अत्यंत शुद्धपुजलने वेदीये अनुभविये ते वेदकसम्यक्त्वकहियें तेहथी शुद्धपुजलथी अनर्थांतरछे अभेद छे माटे ए सम्यक्त्वपण वेदक कहेवाय एटले जे क्षपकश्रेणी प्रतिपन्न तेचके० ते प्रथम अनतानुबंधीचोकडी तथा डुपुजखयमिके० मिथ्यात्वपुज अने मिश्रपुज ए बेपुज क्षयथयेछते तइयस्सखयकाल चरमसमएके० शुद्ध रहेला सम्यक्त्व पुजना दलियापण उदेरी उदेरी उदयें अनुभवी अनुभवी निर्जरा करता करता निठव्युछे उदीरणा वल जिहा एटले चरमावलिकायें उदीरणा करण लागेनही एटले त्रीजा सम्यक्त्व पुजने क्षये करता जेवारे छेलो सर्वोदित पुगलग्रास चरम समय वेय शुद्धअणुनु वेदन एटले शुद्धक्षायोपशम पुगलनेवेदे ते वेदक सम्यक्त्व कहियें यदुक्त विशेषावश्यके –वेयगसमत्तपुण सव्वोइय चरम पुग्गलावछे ॥ खीणे दसण मोहे, तिविहमि रकाइयंहोइ ॥ १ ॥ इहां शिष्य प्रश्नकरेछे के तुमे चरम शुद्धग्रासनु वेदन ते वेदक कह्योछो तेवारे क्षयोपशममां अने वेदकमा श्यो फेरथयो केमके शुद्धपुजनु वेदन बे ठेकाणे सरिखुछे तो जुडनाम केम कह्योछो ? तेवारे गुरु उत्तरकहेछे के तें साचुकह्यु पण एमां विशेष एछे के ए वेदकतो अशेष समस्त पुगलानुभव वत अत्यंत शुद्धछे अने इतरजे क्षयोपशम सम्यक्त्व छे तेतो उदित अनुदित बे पुगल उदयानुभव वर्त्तछे एटलो विशेषछे परमार्थें जोतातो क्षयोपशमजछे समस्त मोहनीय क्षयकरवाना कालनो जे चरमसमय

मात्र ते वेदक सम्यक्त्व कहिये. जेम सूक्ष्मलोभना खंम वेदवाथकी सूक्ष्मसंपराय गुणस्थानक कहिये. तेम शुद्धक्षयोपशम पुंजना वेदवाथकी वेदक सम्यक्त्व थाय छे, एम वेदक सम्यक्त्व सहित सम्यक्त्वना पांचभेद थाय इति वेदकस्वरूपं ३०

हवे ए पांचे सम्यक्त्वनो काल कहे छेः—

अंतमुहुत्तो वसमो, छावलिय सासण वेयगो समउ ॥
साहिय तित्तीसायर, खइउ डु गुणो खउवसमो ॥ ३१ ॥

अर्थः— उपशम सम्यक्त्वनो काल उत्कृष्टो अंतरमुहूर्त्तछे, अने सास्वादननो काल उत्कृष्टो छ आवलिनोछे, तथा वेदक सम्यक्त्वनो काल एक समयछे, अने क्षायिक सम्यक्त्वनो उत्कृष्टकाल सर्वार्थ सिद्धिनी अपेक्षायें साधिक तेत्रीससागरोपमनो छे, साधिककह्यातेतो मनुष्यभवनी अपेक्षायेंकह्या; केमके क्षायक सम्यक्त्ववतजीव ते त्रणभव अथवा चारभव उत्कृष्टो संसारमांरहे, उक्तंच पंचसंग्रहेः—तइय चउछे तम्मि, भवम्मि सिय्यंति दंसणे खीणे ॥ जं देव निरय संखाउ, चरम देहेसु ते हुंति ॥ १ ॥ अर्थः— बद्धायु क्षायकसम्यक्त्ववतजे होय ते देवगति अथवा नरकगतियें जाय. तेवारे तद्भवांतरे तृतीयभवें मोक्षजाय; तथा कोई क्षीण सप्तकी जो तिर्यंचमांउपजे तो अवश्य असंख्य वर्षना आउखावाला युगल तिर्यंचमां उपजे, पण संख्यात वर्षायु तिर्यंचमां क्षायक सम्यक्त्ववंत न उपजे, पछी तिर्यंचमांथी देवथाय, अने देवमांथी मनुष्यथई मोक्षजाय, अने जे अबद्धायुवत्त होय तेतो तेहिजभवें क्षपक श्रेणीपुरीकरी सिद्धथाय, तथा एकजीव आश्री अथवा अनेकजीवआश्री सम्यक्त्वनो उपयोग जघन्यथी तथा उत्कृष्टथी अंतरमुहूर्तज होय. अने क्षयोपशमरूप सम्यक्त्वनी लब्धीतो एकजीवने जघन्य अंतरमुहूर्त अने उत्कृष्टीतो डुगणो के० क्षायकथकी बमणो छासठ सागरोपम अने मनुष्यभवें अधिकहोय, तेथी उपरांत सिद्धजथाय, एटले बारमादेवलोकसुधी त्रणवार गमनथाय, तिहां उत्कृष्टायु बावीस सागरोपमनुंछे, अने मनुष्यनो भव अधिकगणतां छासठसागरोपम जाजेराथाय, अने विजयविमान आश्री बे भव करवापरूे तिहांपण उत्कृष्टायु तेत्रीस सागरोपमनुंछे, अने मनुष्यभव गणतां साधिक छासठसागरोपम क्षयोपशम सम्यक्त्वनो कालमानथाय, एम नानाप्रकारना जीवो आश्री सर्वकाल छाशठ सागरोपमछे, यदुक्तं सिद्धांते —दोवारे विजयाइसु, गयस्स तिन्नीअ अच्चुए अहवा ॥ तइ अइरेग नरभविय, नाणा जीवाण सवद्धा ॥ १ ॥ एनोअर्थ सुगमछे ए पांचेसम्यक्त्वनो कालकह्यो.

दव्वाण सव्वभावा, सव्वपमाणेहिं जस्सउवलद्धा ॥ सव्वाहिं नयविहीहिं वित्थाररुइत्ति नायव्वो ॥ ८ ॥ अर्थ – द्रव्यजे धर्मास्तिकायादिक ते तेना सर्वभाव जे द्रव्य गुण पर्याय उत्पाद व्यय ध्रौव्य तेने सर्वनय भग प्रत्यक्ष परोक्षादिप्रमाणे स्याद्वाद सैली सहित अनेक सप्तभगी परुपणायेजाणे ते सातमीविस्तार रुचि

दसण नाण चरित्ते, तव विणए सच्चसमीइ गुत्तिसु ॥ जोकिरिया भावरुइ, सोखलु किरिया रुइनाम ॥ ए ॥ अर्थ –जेने दर्शन ज्ञान चारित्र तप विनय समिति गुप्तिप्रमुख बाह्य क्रियाथी वणु रगहोय क्रियाभावमां घणी चाहना रहे तेने आठमी क्रियारुची कहिये

अणभि गाहिय कुदिट्ठी, सखेव रुइत्ति होइ नायव्वो ॥ अविसारउ पवयणे, अणभि गहियो असेसेसु ॥ १० ॥ अर्थ – जेप्राणी अणभिगहिय के० अनभिग्रहिक कुदृष्टीजे कुमार्ग शाख्यादिक दर्शनोनो आग्रह धरेनही थोडु कह्यायकी घणुजाणे कुमतिये पमेनही समोविचारे चिलातिपुत्रनीपरे तथा प्रवचनजे जिनागम तेनेविषे घणु अविसारद के० निपुणतो न होय तोपण सरलगुणेकरी कदाग्रह धरेनही जिनमार्गनी प्रतीत माने तेने नवमीसक्षेप रुचीकहियें

जो अत्थिकाय धम्म, सुअ धम्मखलुचरित्तधम्मच ॥ सद्दहइ जिणाभिहिय, सा धम्मरुइत्ति नायव्वो ॥ ११ ॥ अर्थ – जे भव्यजीव अत्थिकायधम्म के० पचास्तिकायनु स्वरूप जाणे तथा श्रुतधर्म अने चारित्रधर्म ने बाह्य अतरगभावें श्री जिनोक्तमार्ग सद्दहे सकल स्वभाव विभाव स्वरूप जाणे तेने हेयोपादेय भावें यथायोग्य सद्दहे ते दशमी धर्मरुचि कहिये ए दशरुचि ते सम्यक्त्वना भेदछे

हवे ए सम्यक्त्वगुणनी प्राप्ति ते मिथ्यात्वना त्यागथी थाय ते मिथ्यात्वना भेद पाचछे तेमाजे लौकिक प्रवाहधर्मे जेजे सारनी सपरिग्रही कुशीलसेवनादिक जे धर्म गुरुंग्रह्यो तेहिज सारकरीजाणे तेनु हवताणे अमारोधर्म तेज सारछे एम कदाग्रहकरे पण मध्यस्थथई परिक्षाकरी शुद्धनेग्रहेनही ते अभिग्रहिक मिथ्यात्व

जे एम कहेके सर्व दर्शनरुडाछे सर्वने वादियें पण नदियेनही एवी पोतानी मदबुद्धिजे जडतापणु तेनेलीधे काचने तथा मणीने सरखाकरे पण परिक्षाकरी शुद्धने ग्रही शकेनही ते बीजु अनभिग्रहिक मिथ्यात्व

जे जाणीजोईने खोटु बोले कुमति कदाग्रहना जोरथी विरुद्ध परुपणाकरी ड रत ससार वृद्धिकरे जमाली प्रमुख नन्हवनीपरे ते त्रीजु आभिनिवेशिक मिथ्यात्व

जे श्री जिनोक्त सिद्धांतना नाव सांनली संशय धरे जे ए केमहसे एम मगम ग्योरहे ते चोथुं सांशयिक मिथ्यात्व कहिये.

जे एकेंद्रियादिक समूर्छिम जीवोने अनादिनुं पठवाडे लागोरह्योठे प्रायें अस न्नीयासुधीतो अनानोगिकज होय ते पांचमुं अनानोगिक मिथ्यात्व जाणवुं

अथवा संसारीजीवोने बीजापण चारप्रकारें मिथ्यात्वहोय ते कहेठे एक देव गत लौकिक बीजो गुरुगत लौकिक त्रीजो लोकोत्तर देवगत चोथो लोकोत्तर गुरु गत तेमां हरी हर शक्ति प्रमुखने माने पूजे ते लौकिक देवगत मिथ्यात्व, ब्राह्मण तापसादिकने गुरुबुद्धमाने पूजे ते लौकिक गुरुगत मिथ्यात्व, वलीजे सप्रनाव जि नबिंबने इंद्रिय सुखने अर्थे माने पूजे ते लोकोत्तर देवगत मिथ्यात्व, अनेजे सुसा धुने इहलोक सुख यश मान प्रतिष्टा अथवा धन धान्य पुत्रादिकनी आस्थाधरी माने उद्दे दानआपे ते लोकोत्तर गुरुगत मिथ्यात्व कहियें. -

तथा जीवे अजीवसन्ना अजीवेजीव सन्ना मग्गे उमग्गसन्ना उमग्गेमग्गसन्ना सुदेवेअदेवसन्ना अदेवेसुदेवसन्ना सुसाहुसु असाहुसन्ना असाहुसुसाहुसन्ना धम्मे अधम्मसन्ना अधम्मेधम्मसन्ना ए दशप्रकारें विपरीत वासनारूप मिथ्यात्वठे.

तथा जे वली रक्षाबंधन संक्रांतिपूजन एम एकवर्षमां शतपर्व आराधन ते सर्व लौकिक पर्वगत मिथ्यात्वठे तथा दीवालीप्रमुख कल्याणीकना दिवशे इंद्री यसुखने साधे विशेष पूजारचनादिक करे ते लोकोत्तर पर्वगत मिथ्यात्वठे ए सर्व मली एकवीसनेदे मिथ्यात्व ते संसारीजीवोने संसारमां नमाडेठे.

तथा वली धर्मार्थिजीवने चारप्रकारें मिथ्यात्व टालवानो उपयोग राखवो ते कहेठे तेमां प्रथम प्रदेशमिथ्यात्वठे ते जे आत्मप्रदेशे पूर्वबंध मिथ्यात्वनादलियां र ह्याठे ते सत्तागत अथवा उदयगत दलियांठे ते प्रदेशगत मिथ्यात्वठे ते जेवारे जीव जिनवाणीसांनली यथार्थनावजाणी सदहे सकल पुद्गलिकनावने हेयसदहे केवल स्वरूपलानते यथार्थ परिणति परिणमन तेनेज सुखनुंमूलजाणी सदहे आदरकरे एवीवांठायें प्रदेशमिथ्यात्व टलीजाय.

बीजुं परिणाम मिथ्यात्व ते जे पोताना प्रमाददोषेकरी शुद्धश्रद्धाफरीने कुश्र द्धायाय जेम पूर्वधरने निद्रादिक दोषेकरी पूर्वगलीतथाय मरीने निगोदादिकेजाय जेम प्रसन्नचंद राजऋषी दूरवाक्य सांनली चेतनाफरीगइ ते परिणाम मिथ्यात्वक हिये ए मिथ्यात्व ते जिनवाणीनेविषे तीव्रोपयोगी रहेवाथी टलेठे.

त्रीजुं परुपणामिथ्यात्व ते उत्सूत्रनाषवाना जे महोटादोष तेने कहियें एथी अ

नतसंसार भ्रमणकरे धर्मबीजनो ध्वंसकरे जे सद्दहणा राखीने मरणांत कष्टपडे तो पण श्रीजिनवाणी विरुद्ध प्ररुपणानकरे तेने ए मिथ्यात्वनु दोषटले

चोथु प्रवर्त्तिमिथ्यात्व ते जे मिथ्यात्वनी करणीकरे मिथ्यात्व प्रवर्त्तावे तेने कहियें ए मिथ्यात्व सुसाधु तथा सुश्रावकनी संगति करवाथी तथा रागद्वेषने मंद करी मध्यस्थभावे थइ परिक्षाकरी शुद्धप्रवर्त्तन करवाथी टलेछे

एमए मिथ्यात्वजेछे ते जगतमा जेटली दु खनीजातोछे ते सर्वेनु मूलकारणछे कोप्योदुष्ममन कोप्योव्याल तथा वेताल जे नकरीसके ते दु ख एमिथ्यात्वआपेछे व्याधि मृत्यु दारिद्र तथा वनवासथीपण मिथ्यात्व सेवनते अनंतगुणु दु खदाइ छे जेणे मिथ्यात्वजीत्यो तेणे सर्वेजगतजीत्यो इन्द्रादिकनी ऋद्धिपामवी सुलभछे पण मिथ्यात्व टालवु दु करछे तेमाटे आत्मसुखार्थिजीवे विशेषथकी मिथ्यात्व सोधन करवु निर्मल श्रद्धान करी आठगुणयुक्त सकादिदोष विमुक्त सम्यक्त्व दृढकरवु

हवे आठगुणेकरी सम्यक्त्वनी पुष्टीकरे ते आठगुण कहेछे गाथा ॥ निस्संकिय निक्खिय, निवितिगिच्छा अमूढदिठीय ॥ अववुह थिरीकरणे, वच्छलप्पभावणेअठ ॥ १ ॥ श्रीजिनागमनेविषे सूक्ष्मविचार अतिंद्रियादिक भावजेछे ते साचा सद्दहे पण संदेहनरा नआणे अने सातभय पण मनमा आणेनही ते प्रथम निसंकगुण

बीजो निकंखागुण जे अन्यदर्शनना कष्ट मंत्र चमत्कारादिक उन्नतदेखी तेनी वांछना नकरे आरंभायरेनही अथवा धर्मना पुण्यरूपफलनी इच्छा नराखे केमके जिहां इच्छानी आतुरता तिहांपुण्यरस ओछोथाय जिहां इच्छा तिहांकर्मबंधछे अने पुण्यनो धर्मक्रियानो वस्तुस्वभावछे तेतो अवश्यजथाय तेने इच्छारूप दोष तो सा मु कमनाखरे अने जे निस्पृहपणे धर्मक्रियानुफलछे ते निरविछिन्ने माटे ए निकंखागुणथी धर्मफल वृद्धिनेपामेछे

त्रीजु निविनिगिछागुण ते जे कर्मसबंधी फलनो संदेह राखेनही जेम कोई मनुष्य धर्मकरणी करतो कांई पूर्वकृत पापप्रकृतिने उदयदु खेपीडतो थको मंदबुद्धिनो धणी एमविचारे जे हुधर्मकरुछु तोपण पीडाकेम पामुछु ए धर्मक्रियानु फल पामेछे नही थाय एवीमकारे पण एम नविचारेजे एतोपूर्वकृत कर्मफल उदय आव्याछे पण वर्त्तमान जे धर्मक्रिया करुछु ते आगल अवश्य आवगज तेमाटे श्रीजिनभद्र कहछे कल्याण कम्माण न मुक्ख अत्थि, माटे जे निविनिगछा गुणवतहोय ते सन्देह धरेनही श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमणे कहयमड दु खने निविहार ग्मि विम्हउंशानि ॥ नेयगं दणुनणेण, नाणापरणा दगणरु ॥ १

अथवा अशुभपुद्गल एकनरवागणे पण अशुभपुद्गलदेखी दुगंछा करेनही तथा पुण्योदये शुभसंयोग मिल्यायका खुसीनथाय अहंकार करेनही पापोदयथी अशुभसंयोगमिल्या दिलगीरथायनही ते निर्विनिगंछा गुणकहियें.

चोथो अमूढदृष्टीगुण ते जे श्रीआगमसिद्धांतमां निगोदप्रमुखना सूक्ष्मविचार सांभलतां मुंझायनही जे पोतानी धारणामां आवे ते धारीराखे अने जे धारणाबुद्धियें नआवे ते सद्दहे, तिहां एमविचारेजे सर्वदोषथी विमुक्त एहवा जिनेश्वरते अन्यथा वादीनहोय. यदुक्तं आगमेः—अनइसकुजंबुज्झिज्जा, सव्वणुमय मवितहं ॥ तहाचिंतएमइयं. अन्नहान वयंतिजे॥१॥अणुवकय पराणुग्गह, परायणा जंजिणा जगप्पवरा ॥ जिय राग दोसमो हाय. नन्नहा वाइणो तेण ॥ २ ॥ अर्थः— जेजिनवाणी सांभलतां खबर नपडे. समजवामां नआवे, तेना हेतु लिखेछे. कोईक श्रोताते पूर्वभव कृत ज्ञानविराधन कर्मोदययथेयके मतिदुर्बलताथी न समजे तिवारें आचार्य तथा विधि उपदेशक कोई हेतु दृष्टांतादिक वचनेकरी श्रोताना चित्तमां उतारे, एहवा महापुरुषोने विरहे तथा नीतोन्यायना अणजाणवायकी एटले अनेक नय युक्तिना ग्रहणपणाविना अथवा ज्ञानावरणीकर्मना प्रबलोदयथी न समजे, तेवारें आत्मार्थि अमूढदृष्टी जीव एवो विचारकरे जे हेतु उदाहरण अथवा अनेक युक्तिदृष्टांतें घणा वखत कहेतायकां पण मने सारीपठे समजण पडतीनथी ते म्हारे पूर्वोक्त दोषना योग्यथी जाणवी, पण सर्वज्ञमत तो अवितथ सत्यजछे, एम कहे तेवारें कोई पृछाकरे जे एकांते जिनोक्त रचनाज सत्यछे एवुं तें किमजाण्युं? तेवारें अमूढदृष्टी श्रोता उत्तर कहेछेः—अणुवकय के० जे जिनेश्वर ते केवांछे प्रत्युपकारनी चाहनाविना परने अनुग्रह उपकार करवाने तत्परछे, तथा जंजिणा के० जे कारणमाटे जिनेश्वरते जगतमां प्रवर के० श्रेष्टछे, रूप वल तेजकांति बुद्धि ऋद्धि सिद्धिप्रमुख गुणे सर्वोत्कृष्टछे; अने वली जियराग के० जीत्याछे मूलथी राग द्वेषने मोहजे अज्ञान ए त्रणदोष जेमांथी गयाछे माटे जिनेश्वर अन्यथावादीहोयज नही तेथी परमयथार्थवात ते आगमनीजछे ए अमूढदृष्टीनामा चोथोगुण.

पांचमो अवबूह गुण ते पोतानी आत्मामां अनंत ज्ञानदर्शनादिक गुणछे ते छुपावेनही उद्दंकदुःख मेटवाने दीनतादिक न चापे शुद्धसत्ता जेवीछे तेवीजकहे अने पुद्गलिक सुखदुखते अज्ञानदशा कृत उपाधिछे आत्मा ए रागद्वेष उपाधिथी न्यारोछे. इमज परजे अन्यसाधक तेमांपणजे गुणहोय ते प्रगटकरीकहे पण छुपावेनही ते पांचमोगुण.

छठो थिरीकरणगुण ते पोताना परिणाम परभावमांथी काढी ज्ञानध्यानमां जोडे, नित्ये धर्मक्रियाकरतोहोय ते अवश्य थिरयोगवंत थयोथको करे, पण चप लताना कारणमिले तोपण अथिरपणु ग्रहेनही साध्यसाधनथी भगेनही, तथा कोई भव्यप्राणी शुभाशुभ कर्मोदयनिमित्ते धर्मथी पडतोहोय तेने सडुपदेशादिक आपी अथवा तेने कोईरीते सहायीथईने तेनुं परिणाम थिरकरे, पण भगवा न आपे ते छठो स्थिरीकरण गुण जाणवो.

सातमो वत्सलतागुण आ वर्त्तमान शासनमां जे भव्य धर्मरुचि जीवोतायें सामायक पोसह पडिकमण यात्रा पूजादिक धर्मकरणी करताहोय, जेहनी सदह णा एकहोय ते पोताना साधर्मी कहिये, तेनी भक्तिकरवी ते वत्सलताकहियें अ थवा सर्वजीव जाते आपणासाहमीछे, एकसत्तायें सरखाछे, वास्ते सर्वजीवनी वात्सलता करवी. जीवदयापाळवी, अथवा अंतरगभावे जीवना ज्ञानादिकगुण वे तेने ज्ञानध्यानेकरी पोषवा (पुष्टकरवा) एटले ज्ञान ध्याननो घणो अभ्यास करवो ए सातिशा वात्सल्यगुण सातमोछे

आठमा प्रभाविकगुण ते जैनशासननी उन्नतिकरवी, संघयात्रा रथयात्रा अथवा महोटा तप जप उजमी उपधान प्रतिष्ठा पूजादिकना घणामहोत्सवे अठ्ठाइ दाना दिकनी उदारताकरी जेथी अन्यदर्शनीउंपण अनुमोदनाकरे एवी धारायें धर्म स न्मुखथावे, सद्दर्शननी वृद्धिकरे, घणाजीवोने धर्मजोडावे, एवा कारण मेळवे जेथकी जैनशासनने प्रभावे (दीपावे) ए बाह्यप्रभाविकगुण अथवा पातानी आत्माना ज्ञानादिकगुण तेने वधारवा पुष्टकरवा ते अंतरप्रभाविक गुण ए प्रभावनागुण आठमा कह्या.

हवे श्री सम्यक्त्वना सडसठभेद विशुद्ध व्यवहारथी कहेछे —

निस्सुद्धि लिंग लक्खण, दूसण भूसण पभावगागारा ॥
सद्दहण जयण भावण, ठाण विणय गुरु गुणाड्य ॥ ७४ ॥

अर्थ — निस्सुद्धि के० सम्यक्त्वनी त्रणशुद्धिछे, तेमां पहेली मनशुद्धि श्रीजिन तथा जिनमत ए बे विना अपर सर्व असारछे एम चितवे ते मनशुद्धि बीजी व चनशुद्धि ते श्रीजिनेश्वरनु आराधन करतां सर्व कार्यनी सिद्धिथायछे अन कोई पु रुषन कु रननी उदयथी जे कार्य न थयु ते अन्य देवथी थशेनहि, माटे अरिह तनी सेवाथी कामना सिद्धिथायछे, वास्ते स्वप्नमांपण अन्यदेवनी प्रार्थना न करे,

एवुंजे निसंकपणे बोलवुं ते वचनसुद्धि कहियें. त्रीजी कायशुद्धिते कोई पूर्वकृत अशुनोदयथी कोई मिथ्यादृष्टी डुष्टराजा अथवा चोर अथवा डुष्ट देवादिकजेठे ते णे खड्गादिके जेद्यो, निह्नादिके यंत्र घाणीप्रमुखे पील्यो, अग्नी प्रमुखे दाज्यो, एवा महोटा मरणांत कष्टआवे, पण एक श्रीजिनेश्वरविना अपर देवने वज्रजंघनीपरे नमेनही ते कायशुद्धि कहियें.

लिगके० लिंगत्रणठे. ते कहेठेः—जे श्रीजिनागम सांनलवानी घणीज इछाराखे इंद्रियसुखना अनेककार्यमूकी आगम सांनलवाने तत्परहोय ते प्रथम सुश्रुषा लिंग कहियें. बीजुंलिंगते धर्मकरणी करवाने परमरागहोय जेटला धर्मकरणीयठे तेहिजकार्यमाने बाकी सर्व नवपूरणमाने ते बीजुंलिंग. त्रीजुंलिंगते जे श्रीजिनेश्वर तथा जिनमार्गानुसारी गुरु तेना वैयावच्चमां यथायोग्य निश्चलानिग्रह रूप नियमें प्रवृत्ते ते त्रीजुंलिंग जाणवुं.

हवे जेथकी हृदयगत् सम्यक्त्व लिखियें जाणियें तेलक्षण पांचठेः--ते कहेठे तेमां पहेलुं लक्षण समठे, तेजेम रागद्वेषनी मंदता, तेम समतानी वृद्धि, सुखडुःखना उदये हर्षविषाद धरेनही ते समकहियें. एटले समपणेहोय पापोदये पुण्योदयें अव्यापकहोय तेसम नामा प्रथम लक्षण जाणवुं. बीजुं संवेग लक्षण ते नित्यें मोक्षानिलापरहे, जे जे मोक्षना कारणठे ते ते उपरें आदर घणुंहोय, परजावथी विमुखरहेते बीजुं लक्षण. त्रीजुं निरवेद्यलक्षणते जे सप्तांग सहित एकछत्र राज्यपाम्युंहोय तोपण एमजाणे जे ए बंदीखाने पड्योछुं. ए कारागारथी के वारें बूटीस, सर्व पुजलिकनाव ते बंधनरूपगणे, समस्त संसारथी उदासरहे, ते निरवेद्य लक्षण त्रीजुं जाणवुं चोथुं अनुकंपनलक्षण ते जे सर्व संसारीजीव उपरें अनुकंपाधरे, एटले संसारीजीवोना डव्यडुःख देखीने तेना उपर परम मैत्रीनावधरी, यथा शक्तियें उपकारकरे, मनमां एवी चाहना राखेजे कोई जीव पाप नकरे कोईजीव डुःखी नथाय, सर्व संसारीजीव डव्य नाव डुःखथी बुटे, धर्मपामे महारी शक्तिफुरे तो सर्वने धर्मरुचिवंतकरुं, जेम एना जन्ममरणना डुःखटले, एवी वासनाते अनुकंपा लक्षण चोथुं जाणवुं. पाचमुं आस्तिक्यता लक्षणते श्रीजिनशासन तथा जिनधर्मउपरें परम आसताहोय, परमरंगहोय एरीतें धर्मरंग वासीतहोय ते आस्तिक्यता लक्षण पांचमुं जाणवुं.

हवे पांच दूषण सम्यक्त्वना कहेछेः—तेमां प्रथम संकादूषण ते जे जिनवाणीमां संदेहधरे ते शंकाकहिये. तेना बे नेदठेः—एक देशविषयी बीजो सर्वविषयी. तेमां

सर्वविषयसंका ते धर्मछे के नथी अथवा जिनधर्म सत्यछे किंवा असत्यछे एमवि चारणाते सर्वथी सकाजाणवी अने जे देशसकाते जीव सर्वगतछे के असर्वगतछे पृथ्वीमां जीवपणुं केमछेरे अथवा निगोदादि स्वरूप केम घटमानथाय ? कई युक्तिए मानिये अथवा वर्तमानकालें चारित्रछे के नथी इत्यादिक देशसका जाणवी तथा पूर्वकहीजे सर्वसका ए बे सका सम्यक्त्वने दूषवे ते सकानाम प्रथम दूषण जाणवु

बीजु कांक्षादूषण ते जे परदर्शननो अभिलाषधरे तेने आकांक्षा दूषणकहियें ते बेप्रकारेछे एक देशथी आकांक्षा बीजी सर्वथी आकांक्षा तमा सौगतादिक एकन दर्शननो अभिलाषधरे ते तो देश विषय आकांक्षा, अने जे सर्वपारसमीधर्मनी थाकां क्षाधरे ते बीजी सर्वविषय आकांक्षा, एबीजुदूषणकहु सम्यक्त्व मलीनकरे ए श्रीजिनागममां अविस्वास रूप दूषणछे

त्रीजुं वितिगिछादूषण ते जे तपस्यादिक धर्मकरणीकरता तत्क्षणफलनो संदेह धरे, ए धर्मक्रिया फलसे के नहीफलस, केमके क्रिया बे प्रकारनी जगतमां देखाय छे, एक फलआपे बीजी अफलपण थाय, आषाढाचार्यनी पर सदहणापडे, इहां कोईशिष्ये पूछयु जे सकाते संदेहरूपछे, अने आ विचिकछापण सदहरूप कहोछो तो ए बेमां शोविशेषपणुछे जेथी भिन्न भिन्नकहोछो एम शिष्ये पुछयाथी गुरुकहे छे सका दूषणते द्रव्यगुण विषेछे अने विचिकछा क्रिया विषेछे ए त्रीजु दूषण

चोथु प्रशंसादूषण ते कलिंगी तापस साख्यादिक देखीने अहा ए महाटा त पस्वीछे, इत्यादिक वर्णन ते आससाकहियें, ए प्रसंसाकरता अलगुणाकरणे करी स म्यक्त्व मलीनकरे, मुग्धबुद्धि मिथ्यादृष्टी लोकने विषे अत्यादरथाय मिथ्याधर्मनी सदापुष्टीथाय, केमके लोककहेके जनधर्मीपण एनी प्रसंसाकरेछे, तो ए महागुणी छे इत्यादिक दूषणाथी सम्यक्त्व मलीनथाय ए चोथुदूषण

पाचमु दूषणते जे कुलिंगी अन्यदर्शनी साथे सस्तव परिचयकरे नित्य भेगार हे, तेनी क्रियाना वर्णन महिमा सांभली श्रद्धादोषदलीथाय अने तेनी मुलभ क्रियादेखी दर्शन दृढता सिथिलथाय, माटे अन्य दर्शनीनो परिचय त्यजवा ए पांचमुं दूषणछे

हवे पांच भूषण कहेछे —प्रथम स्थैर्यभूषणते जे श्रीजिनधर्मने विषे स्थिरताहो य, पण युक्ति कुयुक्ति सांभली चपलचित्त करेनही ते स्थैर्यभूषण बीजु प्रभावना भूषणते श्रीजिनशासननी अनेक सघयात्रा पुजा प्रतिष्टादिकना महोत्सव करेत बीजु प्रभावना भूषण जाणवु त्रीजु भक्तिभूषणते श्रीजिनशासन उपर घणीभक्ति

राखे, जेम कोई दरिद्री रोगी अपराधी कलंकी प्रमुख दोषनिधान महादुखियो दीन हीननिद्राचरावस्था अनुभवतो, एवा दुःखी पुरुषने कोई उपकारी सामर्थ्यवान पुरुषें करुणालावी तेना सर्वदुःखफेडी महोटा धन धान्य राजऋद्धि समृद्धियें स हितकर्यो, हवेते दरिद्रीपुरुषने उपकारना करनार उपर केहवी भक्तिहोय तेथी अधिक भक्ति देव, गुरु, धर्म, उपरेंराखे ते त्रीजुं भक्तिभूषण कहियें. चोथुं भूषण श्रीजिनशासननेविषे कुशलता आगमनेंलीयुक्ति प्रयुक्ति हेतुदृष्टांत मांहे अतिनिपु ण ए भूषणवंत क्यांय खलायनही जिहांजाय तिहां आगमनी कुशलताथी अन्य दर्शनीमां जैनमार्ग दीपावे कोई स्थानके हारेनही, परिकर्म्मित बुद्धिवले प्रश्नो मार्गदीपावे घणाने जैनधर्मपमाडे ते चोथुंभूषण.

पांचमुं तीर्थसेवा भूषण ते जे द्रव्यभावथी तीर्थनी सेवामां रसीयोहोय तिहां द्रव्यथी तीर्थ ते श्रीसिद्धाचलादिक पुण्यक्षेत्र जिहां तरतमयोगें घणाजीव सिद्धि वस्या घणाजीव रत्नत्रयीपाम्या घणासम्यक्त्वदृष्टी देवनिवासि ते एवां पुण्यक्षेत्रें अनेक जनसमुदाययुक्त विधिपूर्वक जायछे तिहां ते महापुरुषोना चरित्रने बहुमा द करता पुण्यक्षेत्रना योगथी घणा कर्मोनी निर्जराथाय, केमके बंध तथा निर्जरा ते द्रव्य क्षेत्र काल भाव ए चारने अनुकूलता माफक थायछे शुभद्रव्यादिक चा रने निमित्ते पुण्यनी वृद्धिथायछे, तेथी निकटसंसारीथायछे. वली अशुभद्रव्यादिक चारने योगे संसारदुःख दुर्गतिनी वृद्धिथायछे, माटे कर्मक्षय निमित्ते द्रव्यतीर्थज बुं अने भावतीर्थ ते द्वादसांगी अथवा चतुर्विध संघ तेनी सेवा भक्तिबहुमान क रतां आत्मा निर्मलथाय, बीजाजीव धर्मपामे ए तीर्थसेवानामे पांचमुंभूषणकर्युंछे.

हवे आठप्रभावक कहेछे पावयणी धम्मकही, वाई निम्मित्तउ तवस्सीय ॥ वि ज्जा सिद्धो अ कवि, अठेव पभावगा भणिया ॥ १ ॥ अर्थः— पावयणीके० प्रावचनीते जिनमार्गमा कुशल जिनमार्गदीपावे, तेथी प्रभावक कहीयें. बीजुं धर्म कथामां अतिनिपुण होय ते घणा दुर्बोधजीवोने धर्मपमाडे, शासननी उन्नतिवधा रे, माटे बीजो प्रभावकजाणवुं. त्रीजो प्रभावक वादी तेएकवातने शेकडावखतथा पे, वलीतेज शेकडावखत उत्थापे पण किहां खलायनही. प्रतिज्ञा हेतु दृष्टांत यु क्ति कुयुक्तिमां निपुण, एवा तीक्ष्णबुद्धिमान वादी स्याद्वादमां निपुण ते राजद्वारें बहुजनसमक्ष जयपताकावरे, शासनने दीपावे माटे वादीप्रभावकत्रीजो जाणवो चोथो निमित्तभाषी प्रभावक ते जे पूर्व आम्नायनायोगथी भूत भविष्य वर्तमान कालनी वातकहे ते निमित्त कुशल; कोई तथाविध अवशरे राजद्वारादिकमां शा

त्तिकेवारेणं ते वृत्ति कहेतां आजीविका तेहिज महोटा कांतार एटले अटवी ए टले कोई पापोदयथी एवुं द्रव्य क्षेत्रादिक योग मलिजाय के जेथकी आजीविका नी दुर्लनताथईजाय त्रणदिवस पर्यंत जिहांसुधी शक्तिफुरे परिणामटके तिहां सु धीतो टक्योरहे पन्ने जाणेजे हवे टकातेनही एवुंदेखे तेवारें कोई विरुद्ध कारणे आजीविका करवीपडे ते छठो आगारजाणवो. ए छए आगारतो जे उत्सर्ग पाली शकेनही तेनेछे, पणजे दृढ परिणामी होय ते सावास्ते आलंबनलहे, जे मंदहोय ते लाकडी लेइने चाले तो तेने कोई विरुद्धपण कहे नही.

हवे चार सद्दहणा कहेछे तेमां प्रथम परमार्थजे तत्वार्थ तत्वज्ञान शास्त्ररह स्य तेनो परिचयकरे, केमके तत्वज्ञान पाम्याविना जे उद्यमछे ते कष्टरूपछे, माटे तत्वज्ञान परिचय ए प्रथम सद्दहणाकहियें. बीजी तत्वज्ञाननी सकलपरमार्थनाजा ण जे मुनिराज तेनी सेवाकरे, एवा मुनीने सेव्याविना तत्व प्राप्तिपणनथाय, माटे तत्व ज्ञाननी सेवना ते बीजी सद्दहणाजाणवी. त्रीजी व्यापन्नदर्शनी वर्जन ते व्यापन्नके० गयुंछे दर्शन जेथकी, एटले श्रद्धाभृष्ट थयेला स्वदर्शनी, तेनी संगतन करवी, हीणानी सोबतकरतां साधुजनपण हीणोकेहेवाय, वास्ते दर्शन भ्रष्टनुं संग वर्जवुं ए त्रीजी सद्दहणा जाणवी. चोथी कुदृष्टी संगवर्जन.ते मिथ्यात्वी ता पसादिकनी संगतनकरे, रासजसंगे गायकुटाणी माटे धर्मार्थिये कुलिंगीनुं संगवर्ज वु एचोथी सद्दहणा जाणवी

हवे छ प्रकारे जयणाकहेछे तेमां प्रथम अन्यदर्शनी जे तापसादिक तथा तेना देवजे ब्रह्मा विष्णु महेस शक्ति प्रमुख २ तथा तेणे ग्रहणकरेलाजे अरिहं तना चैत्य प्रतिमां बद्रिनाथ प्रमुख एटलानी साथे छप्रकारनो व्यवहार नकरवो छ प्रकारनी जयणा कहियें तेनानाम कहेछे एक वंदननकरवुं बीजुं विशेष बहुमान पूर्वक पंचांग प्रणिपातादिक तेने नमन कहीयें ते पण नकरवुं त्रीजुं दानजे अन्न वस्त्रादिक तेपण नक्तिपूर्वक धर्मसाधनार्थे नआपवुं. उचित अनुकंप जाणीदेवुं ते नी मनाई नथी. चोथुं अनुग्रह प्रदान जे वारंवार तेडीतेडीने देवुं ते पण नकरवुं. पांचमुं आलाप ते बोलाव्याविना आगलथी एकवार बोलवुं तेपण नकरवुं, छठो संलापते वारंवार बोलवुं तेपण नकरवुं. ए छ बाना करतां सम्यक्त्वजाय माटे छ बाना वर्जवा ए छ प्रकारनी जयणा कहियें.

हवे सम्यक्त्वनी जावना कहेछे.—समस्त धर्मनुं मूलते सम्यक्त्वछे एवुं जाववुं ते प्रथम जावना. तथा समस्त धर्मरूप नगरनो द्वार तेपण सम्यक्त्वछे एवु जाव

वु ते बीजी नावना तथा धर्मरूप प्रासादनो पाड्यो अथवा पीठते पण सम्यक्त्व जठे एवु नाववु ते त्रीजीनावना, तथा सम्यक्त्वते आत्मार्थिकजीवोने निधान अखुट खजानोठे एवु नाववु ते चोथीनावना, समस्त धर्मनो आधार ते सम्यक्त्व जठे एवी वासना ते पांचमी नावना जाणवी, तथाधर्मरूप अमुल्यचीजने राखवा नु नाजनते सम्यक्त्वठे एम नाववु ते ठठी नावना जाणवी

हवे सम्यक्त्वना ठ गण कहेठे शुद्धपद पणामाटे अस्ति ते जीवठे एम दृढ निश्चे जाणवु ते प्रथम गणठे तथा सास्वत नित्यठे ड्व्यथी किवारे नाशनथी ए बीजुगण तथा पुण्य पापनो कर्त्ता तेपण ए जीवजठे ए त्रीजुगण. तथा वली पुण्य पापनो नोक्ता तेपण जीवजठे ए चोथुंगण तथा निर्वाण जे मुक्ति सिद्धठे ए पांचमुंगण तथा ते मुक्तिपामवानो उपायपणठे ते ठठुगण ए ठ गणविशेषनी चर्चा दर्शन सितरी प्रमुख ग्रंथथकी जाणवी ए ठगणनी अप्रतीत अविश्वास ते मिथ्यात्व जाणवु माटे ठ गण रुडीरीते सद्दहवा आगमरुची गुरुपासेथी धारवा

हवे सम्यक्त्वनी निर्मलताने अर्थे दशनो विनयकरवो ते कहेठे – अरिहंत ते विचरता तीर्थंकर २ ज्योतिस्वरूपी सिद्ध ३ चैत्यजे प्रजुना देरासर ४ श्रुतसिद्धांत ५ वीतरागनो धर्म ६ मोक्षमार्गना साधक साधु ७ पाचप्रकारना आचार ते पोतेपण पाले अने परने पलावे ते आचार्य ८ जे ड्यारअग पोते नणे अने परने नणावे ते उपाध्याय ९ पवयणीते चउदपूर्वधर १० दर्शनजे सम्यक्त्व ए दशनो विनयकरवो एदशनो यथायोग्य अनुकूलपणेथयीने विनय करताथका सम्यक्त्व अतिनिर्मल थाय

विछार तुह समया, सया सरताण नवजीवाण ॥
सामिय तुह पसाया, हवेऊ समत्त सपत्ति ॥ २५ ॥

अर्थ –हे सामिन् तुहसमया के०तद्दारा परूप्या सिद्धांतनो विछार के० विस्तार तेने सया के०सदाकाल सरताण के०अनुसरतां अन्यासकरता एवा नवजीवाण के० नव्यजीवोने तुहप्पसाया के०तादृश पशायथी सकल सिद्धांतनोपार एवोजे समत्त के०सम्यक्त्व तेनी सपत्ति के०प्राप्ति ते सम्यक्प्रकारे निरावरणनावे हवेयु के०थाउ ए प्रकरण करनारनी आसीसठे इति सम्यक्त्वस्तव वालावबोध सपूर्ण मगमस्तु

॥ अथ प्रशस्तिलिख्यते ॥

॥ दोहरा ॥ यह विधि समकित गुणतणी ॥ प्रापति आगम माहि ॥ नाषी नि

सुणी सद्दहे ॥ तस दो डुरगति नांहि ॥ १ ॥ सुरपति सुख लेवो सुगम ॥ सुजन रक्ष इक ठत्त ॥ डुर्लन नरनव जगतमें ॥ समकित गुण संपत्त ॥ २ ॥ दान दया संयम क्रिया ॥ समकित युत शिव हेत॥नहि तो मंडुक चूर्णपरि॥नव वंधन संकेत ॥ ३ ॥ विण समकित संयम क्रिया ॥ करे अनंती वार ॥ पार न पावे तेह युत ॥ अड नवमे निस्तार ॥ ४ ॥ एक सहित दश गुण वधे ॥ शुन्य अंक कहिवाय ॥ वो वियुक्त गुण सवि क्रिया ॥ नहितो कष्ट कहाय ॥५॥ पुन्यदिशी पूरव नली ॥ जिहाँ उदयाचल थान ॥ कल्याणक सवि जिनतणा ॥ तिण ए दिशि परधान ॥ ६ ॥ सुविहित सूरि गुणे नस्या ॥ (श्री) पुन्यसिंधु सूरीस ॥ वाचक ज्ञानसागर तणि ॥ नितु जस नामे सीस ॥ ७ ॥ तास शिष्य पूरव तणा ॥ तीरथ नेटण काज ॥ शुन सकुने सूरतथकी ॥ करि प्रयाण शुन साज ॥ ८ ॥ यमुना सुर तटनी तटे ॥ वंदन श्रीजिनपाय ॥ नगर मगसुदावाद लगि॥ अनुक्रम पहुता जाय ॥ ए ॥ साव सखा गोत्रे नलो ॥ साह सुगाल सु नाम ॥ डुखमां काले धर्मनो, कस्यो सुगाल सुगाम ॥ १० ॥ समतसिखर गिरिराज पर ॥ वीसे टूंके स्तूप ॥ थापी तिम इकवी समो ॥ कस्यो प्रसाद अनूप ॥ ११ ॥ पंचम आरे परगडो ॥ कस्यो उद्धार प्रसिद्ध ॥ मानव नव सफलो करी ॥ जगमांहे जश लीध ॥ १२ ॥ तसु सुत नागनिधी नलो ॥ दाता धर्मी दक्ष ॥ राजसना मंमन समी ॥ अनिनव अनय प्रत्यक्ष ॥ ॥१३॥साह मुला नामे निपुण ॥ आगम रुचि प्रिय धर्म ॥ तास कहणथी ए कियो ॥नाषामय स्तव मर्म ॥ १४ ॥ आगे वहुश्रुते वहु लिख्या॥ समकित नेद विशेष ॥ वाकुं लखि नाषा लिखुं ॥ उनमें कूण विशेष ॥ १५ ॥ तोनी तस आसय अगम ॥ हुं छद्मस्थ अयाण ॥ नूल चूक जे मुऊतणी ॥ वुध जन लाजो गण ॥ ॥ १६ ॥ आगम जलधि अपार हे ॥ मुज मति नौका तुछ ॥ क्यों निवहे नादो नदी ॥ पकरे नेडी पुछ ॥१७॥ अल्पमति में अज्ञान हुं ॥ जाणुं न वहुत रहस्य॥ कृपाकरी मोपें कृति ॥ करजो शुद्ध अवस्य ॥ १८ ॥ सज्जन मुऊशिरमोर हे ॥ हुं सज्जनको दास ॥ संतकृपाथी मुज हुसे ॥ ए सफलो नम्रयास ॥१ए ॥ कुमति कदाग्रह भ्रमथकी ॥ वितथ लखाणुं जेह ॥ श्रीसंघ साखे मुऊहुउ ॥ मिछाडुक्कड तेह ॥ २० ॥ दूलन चारुं अंगमें ॥ समकित एह अमूल ॥ नविजन तस उद्यम करो ॥ जिम शिवसुख अनुकूल ॥ २१ ॥

इतिश्री सम्यक्त्व स्वरूपस्तव वालाववोध सहित समाप्तः

॥ श्रीशासनतिलकाय नमः ॥
॥ अथ श्रीषष्टिशतक बालावबोध व्याख्यासहित प्रारंभ ॥

प्रथम व्याख्याकर्त्तानु मंगलाचरण

दोहा – शासननायक जगतिलो, प्रणमी वीर जिणंद ॥ षष्टीशतक प्रकीर्णना, अर्थ लिखु मतिमंद ॥ १ ॥ अर्थ – शासनना नायक एटले अधिपति जगति जो एटले त्रण जगतनेविषे तिलक समान, एहेवा जे श्रीवीरजिनंद, तेमने प्रण म करीने आ षष्टी शतक प्रकर्णनो अर्थ, मारी मंदमतिने अनुसारे लखुं ॥१॥

मूलप्रकरणकर्त्तानु मंगलाचरण –

मूल आर्यावृत्तम् – अरिहं देवो सुगुरू, सुद्ध धम्मं च पंच नवकारा ॥ धन्नाण कयछाण, निरंतर वसइ हिययम्मि॥१॥दोहा –धन्य कृतारथके हिये, श्रीअरिहंतसुदेव ॥ सुगुरुवसे जिनधर्मपुनि,पाचनमणनितमेव॥१॥व्याख्या –अरिहं–देवइंद्रकृत पूजादिकने योग्य, अथवा अ-नथी, रह–रथ जेने समीप, अथवा अ-नथी, रह–छानो काई पदार्थ जेनाथी, अथवा अ नथी, रह–त्याग आत्मगुणगणनो जेने, अथवा अ- नथी, रह–प्राप्ति पुत्रकलत्र धनादिकनी जेने, एवो देवा–देव तथा सु–रूडा शोभायमान ज्ञान क्रियावान गुरू–धर्मशास्त्रार्थना उपदेश देवावाना अथवा तेनु कथन करवावाळा, शुद्ध–निर्मळ ते कषायमळ रहित सम्यक्त्व विनय दयामूल श्रीजिनभाषित एवो धम्म–जे दुर्गतिनेविषे पडता प्राणीउंने धारे ते श्रीवीतरागनो धर्म जाणवो, पण अन्य हरिहरादिकना नही च–समुच्चयार्थ छे, एटले जे पदनी साथे बोलवु योग्य होय ते पदनी साथे एनाथी बाना छे वली पंच–अरहंतादिक पांच परमेष्टी, तत्संबंधी. नवकारा–नमस्कार, ए रपदार्थ ते धन्नाण–धन्य जे पुण्यवान प्राणीउ, कयछाण–कृतार्थ प्राणीउंना ए निबद्ध जे रागद्वेष तथा मोहरूप गांठी भेदीने निर्मळ सम्यक्त्ववान छे, तेउंना हिययम्मि–हृदयनेविषे एटले अंत करणनेविषे निरंतर–अंतराय व एटले सदासर्वदा वसइ–वसेछे एथी पापी दरिद्री एवा जे मिथ्यादृष्टि त हृदयनेविषे वसे नही एवु सूचन कर्यु एनो फलितार्थ आछे -- जे धन्य अ

ने कृतार्थ पुरुषो होय तेमना हृदयनेविषे सुदेव, सुगुरु, शुद्धधर्म तथा पंचपरमेष्टीने नमस्कार ए चार पदार्थो निरंतर वास करी रहेछे, परंतु बीजाना हृदयमां रहेता नथी ॥ १ ॥

अवतरण.--पोताथी बीजुंकांई नवने तोपण अरिहंत देवनुं आराधन अवश्य करवुं ते कहेछेः— मूल.—जइ न कुणसि तव चरणं, न पढसि न गुणेसि देसि नो दाणं, ता इत्तियं न सक्किसि, जं देवो इक्क अरिहंतो ॥ २ ॥ दोहाः—जो न करै तप दान तूं; न पढै न गुणे तत ॥ तद आणंद जपो सदा, देव एक अरिहंत ॥ २ ॥ व्याख्याः— जइ-जो तवचरणं— तपचारित्रने तुं न कुणसि— न करी शकतो हो न पढसि— सूत्र तथा प्रकरणादिने नणी शकतो न हो. न गुणेसि—प्रथम नणेला सूत्र अथवा प्रकरणादिकनुं मनन अथवा विचार करी शकतो न हो, अने दाणं— सुपात्रादिकने कांई पण दान देवुं ते नदेसि—तुं दई शकतो न हो ता—तो पण इत्तियं— आटलुं. न सक्किसि— तुं करी शकतो नथी? जं— जे, देवोइक्क अरिहंतो— देव तो एक अरिहंतज अमारे आराधवा योग्य छे, तेनी साथे सुगुरु तथा सुधर्म पण लई लेवा. एनो नाव ए छे के, बीजुं कांई पोताथी बनी शकतुं न होय तोपण अर्हद्देव, गुरु, सुसाधु तथा सुधर्म ऊपर श्रद्धा राखीने तेमनेज मानवुं ते सर्वोत्तम छे. ॥ २ ॥

अवतरण —संसारनां दुःखनो नाश करनार मात्र एक वीतरागनो धर्मज छे, बीजो कोई नथी एम कहेछे. मूल —रे जीव नव दुहाइं, इक्कं चिय हरइ जिणमयं धम्मं ॥ इयराणं पणमंतो, सुह कय्ये मूढ मुसिओसि॥३॥ दोहा —नव दुःख हरन जिनेंद मत, धर्म एक रे जीव ॥ परसुर नमतो तूं मुस्यो, सुन कारजमें क्लीव ॥३॥व्याख्या.—रे जीव—हे जीव इक्कंचिय— एकज जिणमयं— जिनमत ते श्रीवीतराग नाषित धम्मं—धर्म, नव दुहाइ— संसारसंबंधी जन्मजरा मरणादिक दुःखोने हरइ— हरण करेछे एटले नाश करेछे. एमज सुदेव अने सुगुरु पण जाणवा पण इयराणं—इतर जे वीतराग देवथकी अन्य देव हरि हर ब्रह्मादिक छे तेओने, सुहकय्ये—पोताने सुख थवाने अर्थे, पणमतो—प्रणाम करतां मूढ—हे मूर्ख, मुसिओसि—तुं मूंनायो छे एटले ठगायो छे एनो फलितार्थ --सुदेव सुगुरु तथा सुधर्मने मूकीने कुदेव, कुगुरु तथा कुधर्मने जे सेववुं तेथी कांई कल्याण थतुं नथी ॥ ३ ॥

अवतरणः— वली पण एज नावनी पुष्टी करेछेः— मूल — देवेहिं दाणवेहि य, सुउ मरणाउ रक्खिउ कोई ॥ दढ कय जिण समत्ता, बहु अवि अजरामर

पत्ता ॥ ४ ॥ दोहा -- सुण्यो न देव रु दानवे, मरणथि राख्यो कोय ॥ बहुत वि अजर अमर थया, निश्चल समकित जोय ॥ ४ ॥ व्याख्या — देवेहि- सुरो ए, य- तेमज दाणवेहि- असुरोए मरणाओ- मरण थकी कोई- कोईने पण रक्खिओ-रक्षण कर्युं छे एवु सुओ-सांजल्यामां अथवा दीठामां आव्युं नथी अने दटकयजिणसम्मत्ता-जेणे निश्चय करी एकजजिन देव सत्य मान्यो छे, अथवा मिथ्यात्वमोह उच्छेदकरूप जे जिनप्ररूपित धर्म तेना तत्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यक् दर्शन जेणे निश्चय कर्यो छे, एवा बहुअवि-घणा प्राणीओ अजरामर-मोक्षस्थानने पत्ता-पाम्या, पामेछे अने पामशे एनो जावार्थ — एवु क्याय सांजल्यामां अथवा दीठामां आवतु नथी के कोईने देवे अथवा दानवे मरणथी बचाव्यु छे, परंतु जेणे श्रीजिननो जापेलो धर्म पाळी सम्यक्त्व पाम्यो छे एवा घणा प्राणीओ मोक्षने पाम्या छे, उपचारथी पामे छे अने पामशे, ॥ ४ ॥

अवतरण — सम्यक्त्व सकल सुखनु कारण छे, अने मिथ्यात्व सकल दुःख अथवा अनर्थोनु कारण छे, तोपण वळा सम्यक्त्वने अंगीकार करीने मिथ्यात्वने केम मूकी देता नथी? ते दृष्टांते करी कहेछे — मूल - जह कुवि वेसा रत्तो, मुसिज्जमाणोवि मन्नए हरिसं ॥ तह मिछ वेस मुसिआ, गयपि न मुणंति धम्मनिहिं॥५॥ दोहा —जिम वेस्या रत कोइ नर, मने ठगातो सर्म ॥ तिम मिथ्या वेस्या ठग्यो, लखे न गत निधि धर्म ॥ ५ ॥ व्याख्या —जह—जेम कुवि—कोईक माणस वेसारत्तो—वेश्यानेविषे रक्त एटले आसक्त थयो थको मुसिज्जमाणो—खराब थवा मांड्यो होय एटले वेश्याए तेनु धन वगेरे स्त्रीना सगथी जेटली हाणी थायछे ते थयु करवा मांड्यु होय तोपण ते हरिसं—हर्षने मन्नए—मानी लियेछे, तह—तेम मिछ वेस मुसिआ—मिथ्यात्वरूपिणी वेस्याएकरी ठगायला लोकनु सर्वस्व गयपि—गयु छतां पण न मुणंति— जाणता नथी एनो जावार्थ आ छे — जे मनुष्यो मिथ्यात्वमां मुंझाई रह्या छे तेओ धम्मनिहिं—चारित्र धर्मनु निधान जे सम्यक्त्व अथवा धर्मनिधि ते सम्यक्त्वरूप निधान तेनी हाणी थई छतां पण जाणता नथी

अवतरण — मिथ्यात्वी जीव धर्मरूप निधाननो नाश थएलो देखता नथी, एवु पांचमी गाथमां सामान्यपणे कह्यु, तेज आ छठी गाथामां कुलाचार आश्रीविशेषपणे कहेछे — मूल —लोअ पवाह सकुल, कमम्मि जइ होइ मूढ धम्मुत्ति ॥ ता मिछाणवि धम्मो,वक्काय अहम्म परिवाडी॥ ६ ॥ दोहा — लोक प्रवाह स्वकुल क्रमे, धर्म होय जो बाल ॥ तो धर्म मिथ्यात्व कुल, थरि अधर्मरी चाल ॥ ६ ॥ व्या

ख्या:– लोअ पवाहे–अजाण लोकोनी विचार रहित जे प्रवृत्ति ते लोकप्रवाह कहियें. ते रूप सकुल क्कमम्मि– स्वकुलक्रम एटले पोताना वंश परंपरानो आचार पाळ्याथी मूढ––हे मूर्ख एटले विवेक विकल, जइ–जो धम्मुत्ति होइ–धर्म थतो होय ता–तो मिच्छाणवि–चंडाल. माछीगर, भिल्ल तथा म्लेछादिक अनार्यने पण धम्मे–धर्म थाय , तथा अहम्म परिवाडी–अधर्मनी परिपाटी एटले पापपद्धति अथवा श्रेणी थक्काय––थाकी एटले एक ठेकाणे रहीने पुन्यपणाने पामी एवुं थशे एनो भावार्थ आ छे –हे मूर्ख. जो लोकप्रवाहरूप पोतानो कुलाचार पाळवाथी धर्म थतो होय, तो म्लेछ लोकोने पण धर्म थवो जोये. तथा अधर्मनी परिपाटी थाकी एटले लोकमांथी अधर्मनो अनावळ थई जवो जोये. माटे जेओ लोकप्रवाहरूप स्वकुलाचारनेविषे धर्मने मानेछे, तेओए म्लेछादिक अनार्योनेविषे पण धर्मनुं स्थापन कर्युं एम थशे; अने धर्म तथा पाप ए बे पदार्थ जुदा ठरशे नही. ॥ ६ ॥

अवतरणः– एनीज लोक अने लोकोत्तरनेविषे विशेषता बतावे छे.– मूलः लोयम्मि राय नीई, नायं न कुलक्कमम्मि कइयावि ॥ किं पुण तिलोय पहुणो, जिणिंद धम्माहि गारम्मि ॥ ७ ॥ दोहाः–कुलाचार करि जो नही, राजनीतिमें न्याय॥ जैनराजमें तो किसुं, कुलाचार करि नाय ॥ ७ ॥ व्याख्याः– लोयम्मि–लोकनेविषे एवो नायं–न्याय छे के, कुलक्कमम्मि–कुलक्रम एटले कुलाचारनी अपेक्षाए करी कइआवि– कदापि रायनीई–राजनीति न–नथी प्रवर्त्तती; त्यारे पुण–वळी कुलाचारे करी तिलोय पहुणो–त्रिलोक प्रभु एहवा जे जिणिंद–जिनेंद्र तेना धम्माहि गारम्मि– धर्मरूप अधिकारनेविषे प्रवृत्ति किं– केम थाय? अपितु नज थाय. अहीं अर्थनी योजना आवी रीते करवीः– कुलनो आचार अवश्य पाळवो, पछी ते सारो होय के नरशो होय तोपण तेनो तिरस्कार करवो नहीं, एवी कांई राजनीति पण होती नथी, केमके जो एहेवी राजनीति होय तो धर्म अने अधर्मनी व्यवस्था भिन्नपणे थाय नही माटे राजनीतिनो संबंध कुलाचारनी साथे होतोज नथी एथी कुलाचार पाळवो एहेवो नियम नथी, एटले कुलाचार धर्मथी विरुद्ध होय तो तेनो त्याग करवामां कांई अटक नथी. एवुं लोकमां पण सिद्ध थायछे , त्यारे त्रिलोकपति जे जिनेंद्र तेना धर्मरूप अधिराजना अधिकारनेविषे कुलाचारनी अपेक्षा केम होय ! एटले कुलाचारना आग्रहनेविषे धर्म होतो नथी. एनो भावार्थः– जेम राजानी आज्ञाएकरी राजनीति होयछे, तेम जिनेंद्र देवनी आज्ञाए शुद्ध धर्मरूप अधिराज अथवा अधिकार होयछे; अन्यथा न होय. ॥ ७ ॥

अवतरण–एवी रीते लोकप्रवाहरूप कुलाचार सेव्याथी जिनधर्मनी पण मिथ्ता थती नथी, त्यारे तेथी ससारनी निवृत्तिनो सनव ते शीरीते थाय ? ते देखाडेछे – मूल – जिए वयए विअन्नूणवि, जीवाए ज न होइ नव निरई ॥ ताकह अवि अन्नूण, मिछत्त हयाए पासम्मि ॥ ८ ॥ दोहा ॥ कर्मे जिन मत निपुनके, जो नव विरति न होय ॥ तौ मिथ्यात्व हत मूढके, पास विरति किम जोय ॥ ८ ॥ व्याख्या – जिए वयए वियन्नूणवि जीवाए–जेओ जिन वचनोना जाएनारा छे, एहेवा केटलाएक जीवोने पण कुगुरु तथा कुग्रहनायोगथी ज- जो नवनिरइ–नवविरति एटले ससारनी निवृत्ति न होइ- नथी थती ता–त्यारे मिछत्तहयाए–मिथ्यात्वेकरीने हणायला एहेवा अवि अन्नूण–जिनागमना अजाए लोकछे तेउने पासम्मि–पासे नवविरति एटले ससारनी निवृत्ति कह–केम थाय ? अपितु नज थाय एनो नावार्थ – केटलाएक जिनागमना जाएनारा मनुष्योने पण कुगुरु तथा कुग्रहजे डुराग्रहतेना प्रसगथी ससारनी निवृत्ति थती नथी, तो मिथ्यात्वेकरी हणायला जे अजाए लोक, तेउने नवनी निवृत्ति ढुकडी ते केम होय ? एटले ते चारित्र धर्म क्याथी पामे के जेथी कर्मबध त्रूटे ? अर्थात् चारित्र धर्म नज पामे ॥ ८ ॥

अवतरण – एवी रीते विरतिनु डुर्लनपणु देखाड्यु, हवे अविरति जीवोने जाईने विरति जीवोने शु थायछे ते कहे छे – मूल –विरयाए अविरए, जीवे दठूण होइ मण तावो ॥ हा हा कह नवकूवे, वुड्डता पिछ नच्चति ॥ ए ॥ दोहा –देख अविरती जीवकू, ताप विरति मन होय ॥ हा हा किम नव कूपमे, बूडत नाचे जोय ॥ए॥ व्याख्या – अविरए– अविरति जे हिंसादि अढारे पापना सेववा वाला, जीवे– जीवोने दठूण– देखीने विरयाए– विरतिवत पुरुषोना मएतावो–चित्तनेविषे करुणारूप ताप होइ– थायछे तेनु स्वरूप आवु छे – हा हा– खेदनी वात छे कह– केम नवकूवे–ससाररूप अधकूपनेविषे वुड्डता–बूडता ते अविरति अपच्चखाणी अनाणी प्राणी नच्चति– नाचेछे एटले नृत्य करे छे अथवा खुशी थायछे हे आत्मोन्, पिछ– देष, डुर्गतिनु कारण जे पाप, ते करी करीने वापडा जीवो खुशी थायछे , एउनु कल्याण ते अमे केम करी शकीये ? एवी रीते अनेक प्रकारे निरतिवत पुरुषोना मननेविषे ताप अथवा खेद थायछे, पण वीजा कोई प्रकारनो ताप विरतिवत पुरुषोने थतो नथी ॥ ए ॥

अवतरण – अविरतिने जोईने विरतिना मनमा दयानाव उत्पन्न थायछे, एम कह्यु , हवे वीजा सर्व पापोनु फल कडवुज छे, तेमा पण मिथ्यात्वनु फल अति

दुष्ट ने ते देखाडे छे.— मूल —आरंभ जन्मि पावे. जीवा पावंति तिरक दुरकाई ॥ जं पु ण मिछत्त लव, तेणं न लहंति जिण बोहिं ॥ १० ॥ दोहा —आरंभज पापे करी, जीव महा छुख पाय ॥ त्रिणि मिथ्यात्व लव करी, लहे न समकित नाय ॥ १० ॥ व्याख्या — आरंभजन्मि—जीवने उपद्रव करवो. ते आरंभ थकी उत्पन्न थया जे पावे—पाप. ते करवाथी जीवा—जीवो तिरक दुरकाई—तीक्ष्ण दुखोने पावंति—पामेछे, एटले दुः खनेज पामेछे पण तेथी सम्यक्त्व न पामे एम नथी थतुं; किंतु सम्यक्त्व पाम वानो तेउने संनव होयछे; अने प्राप्त पण थाय छे. पुण—परंतु जं— जो मिछत्त लव--विपरीत प्ररूपणादिक मिथ्यात्वनो लवमात्र पण जो जीवने आवीने वलगे तो तेणं—तेनां योगथी जिणबोहिं—जिनबोधि ते श्री जिनभाषित सम्यक् दर्शन. तेने पर नवे न लहंति—पामतो नथी एनो नावार्थः—बीजां पापो कर्या छतां प ण नवांतरनेविषे सम्यक्त्वनी प्राप्ति थवानो संनव छे, परंतु मिथ्यात्वना लवना सं योगथी नवांतरमां सम्यक्त्वनी प्राप्ति थती नथी माटे बीजां पापो करतां मिथ्या त्व पापनुं वधारे दुष्टपणुं देखाड्युं छे ॥ १० ॥

अवतरणः—जे उत्सूत्र तेज मिथ्यात्व छे ते प्रगट करी देखाडे छेः— मूलः—जिण वर आणा नंगं, उमग्ग उस्सुत्त लेस देसणउ ॥ आणा नंगे पावं, ता जिणमय दुकरं धम्मं ॥ ११ ॥ दोहा·—देशना य उत्सूत्रकी, होय जिणाज्ञा नंग ॥ आज्ञा नंगे पाप तद, दु कर जिण धरमंग ॥ ११ ॥ व्याख्या.— उमग्ग उस्सुत्त लेस दे सणउ—उन्मार्ग उत्सुत्रनोलेश देखाडवाथी उत्पन्न थयो जे जिणवर आणानंगं— जिनवरनी आज्ञानो नंग (नंग कह्याथी अत्यंतानाव नही पण नंगनी पठे अ थवा खंमनी पठे थायछे ते दुःखनो हेतु होवाथी तेज अहीं जिनाज्ञानो नंग जाणवो) आणानंगे—जिन आज्ञानो नंग थयाथी पावं—पाप थायछे; ता—तेथ की जिणमय--जिनमत ते श्री जिनेश्वरनो नापेलो धम्मं--सम्यक्त्वादिक धर्म ते दुकर--दुष्कर छे; एटले करवो घणो कठण छे. माटे जेम जिन आज्ञानो नंग अ थवा खंमन न थाय तेम नव्य जीवोए करवुं जोये ॥ ११ ॥

अवतरण.—आ—मर्यादाए करी ज्ञा— जणाय जीवादिक पदार्थो जेथी तेने आ ज्ञा कहेछे; एहवी श्रीवीतरागनी वाणी छे. क्षायोपशमिक नाव तजीने उदयिक नाव नुं सेवन करवुं ते उन्मार्ग; अने श्री वीतरागनां वचनोथी जे उलटुं बोलवुं तेने उत्सूत्र कहेछे. तो जिन आज्ञा रहित जे धर्म ते पाप फलनां देनार छे, ते देखा डेछे. मूल —जिणवर आणा रहियं, वक्षार ताविं केवि जिण दवं॥ बुडंति नव समु

ह, मूढा मोहेण अन्नाणी ॥ १२ ॥ दोहा – केइ मूढ अन्याय करि, आण नग जिम थाय ॥ तिम जिण द्रव्य वधारता, बुडे नवोदधिमाय ॥ १२ ॥ व्याख्या – केवि– केटलाएक मोहेण– मोहे करीने अन्नाणी– अज्ञानी शुद्धज्ञान विकल एह वा मूढ– मूर्ख तत्वज्ञानना अजाण जिणवरआणारहिय– जिनवरनी आज्ञायकी रहित थया थका जिणदव जिनद्रव्यने– वद्धारतावि वधारता ठतां पण नव समुद्र– ससार समुद्रनेविषे बुड्डति– बुडे ठे नमेठे ॥ १२ ॥

अवतरण –अगारकर्मादिक कर्मरूप कुव्यापार पोते कखाथी अथवा कोईना हा थे कराव्याथी, अथवा देवद्रव्येकरी गृहादिक स्थावर मिलकत खरीद करी अथ वा करावीने नाडे आपवी तथा नीच लोकोने जिनद्रव्य व्याजनी आशाए धीरवा थी, तथा पोते बलवान ठतां जोर देषाडीने जबरजस्तीथी कोईनी पासेथी काई द्रव्य लई लेवु तथा माली, सुतार, शिल्पी (कडिया) इत्यादिकनी पाशेथी वचनाकरीए टले वगीने जे देव द्रव्यनी वृद्धि करवी ते जिनआज्ञाथी रहित ठे ए वृद्धि जिन आज्ञा प्रमाणे कहेवाय नही पण जिनआज्ञाथी बाहेर कहेवाय तथा कुकजा एटले नरनी कलाए करी देवद्रव्य वधारवानो शास्त्रोनेविषे निषेध कखो ठे घणो लान थतो होय तोपण ए द्रव्य कोईने अग उधार देवानो निषेध कखो ठे सुव र्ण तथा रत्नादिकनां आनूषणो रापीने तेना व्याजथी देवद्रव्यनी वृद्धिकरवी कही ठे अने सुश्रावको तथा न्यायोपार्जित धनना नागे करी देवद्रव्यनी वृद्धि क रवी एम शास्त्रोमां कह्युंने. माटेज अयोग्य मनुष्यने देशना देवी नही ते कहेठे – मूल – कुग्गह गह गहियाण, मुद्धो जो देइ धम्म उवएस ॥ सो चम्मासी कुक्कर, वयणम्मि खिवेइ कप्पूरं ॥ १३ ॥ दोहा – कुग्रह ग्रह ग्रहि जीवकू, जो शुद्ध ध र्म सुणाय ॥ चर्मनखी कूकरमुखे, सो कर्पूर खवाय ॥ १३ ॥ व्याख्या – कुग्गह इनिनिवेश मिथ्यात्वरूप जे कुग्रह तद्रूप गह–ग्रह जे नूतादिक तेणेकरी गहिया ए–ग्रहण थएला जे लोको तेयाने मुद्धो–मुग्ध जो–जे धम्मउवएस–धर्मना उ पदेशने देइ–दिये ठे, सो- ते चम्मासीकुक्करवयणम्मि–चर्मादिकन नक्षण करनार कूतराना मुखमां जाणे कप्पूर–कर्पूर नोजन खिवेइ–क्षिपति एटले नाखेठे एनो नावार्थ – जे मनुष्यो कुग्रहरूप नूतेकरी ग्रसायला ठे तेउने शुद्ध धर्मनी देश ना देवी ते कूतराना मढाडामां उत्तम नोजन आपवानी पेठने, अर्थात् योग्य अधिकारी जाणीने धर्मोपदेश करवो ए तात्पर्य ठे ॥ १३ ॥

सिद्धांतथी बाहेर पोतानी मतिए करी कल्पेलो पाते अंगीकार करेला जे अस

त्य पदार्थ. तेने जूगे उपदेश देईने पुष्ट करवो ते अनिनिवेश मिथ्यात्व कहेवाय ठे. अने जे हेय उपादेयना ज्ञानेकरी रहित होय तेने मुग्ध कहेने.

अवतरणः—अयोग्य पुरुषने उपदेश देवामां रोषनो संनव ठे ते कहेठेः—मूल—रोसो विखमा कोसो, सुत्तं नासंतयस्स धन्नस्स ॥ उस्सुत्तेण खमाविय, दोस महा मोह्द आवासो ॥ १४ ॥ दोहाः— सूत्र नाषि नर धन्य तस. रोषवि उपशम कोश उत्सूत्रीकी पिण क्षमा, महा मोह घर दोष ॥ १४ ॥ व्याख्या—सुत्तं नासंतयस्स धन्नस्स—सूत्रनुं नाषण कर्त्ता जे धन्य पुरुष ठे, तेनो रोसोवि—रोष एटले क्रोध ठे ते पण खमाकोसो—क्षमानो कोश एटले नंडार ठे; अने उस्सुत्तेण—उत्सूत्रेकरी खमावि य—क्षमा पण दोस—दोष अथवा द्वेषरूप ठे; महामोह आवासो—ते महामोह एटले अज्ञाननो आवास एटले महेल ठे. एनो नावार्थः—सूत्र नाषी शुद्ध प्ररूपक गीतार्थ पुरुषनो क्रोध पण क्षमानो नंडार ठे, केमके, ते शिष्यादिकने शुन साधननो हेतु ठे, अने उत्सूत्र नाषी अगीतार्थ पुरुषनी क्षमा पण क्रोधनो नंडार ठे, केमके, ते शिष्यादिकने अशुन साधननो हेतु ठे. ॥ १४ ॥

अवतरणः—कोईक ठेकाणे क्रोध शुननो हेतु थायठे अने क्षमा अशुननो हेतु थायठे माटे जिनधर्मनुं सम्यक् जाणपणुं घणुं कठण ठे ते कहेठे. मूल—इक्कोवि न संदेहो, जं जिण धम्मेण अत्थि मुरक सुहं ॥ तं पुण डुविन्नेयं, अइउक्कड पुन्न रहियाणं ॥ १५ ॥ दोहा—जो शिवसुख जिणधर्मथी, एकनि नहि संदेह ॥ पुन्य हीणके जाणवो, कठिण मोक्ष सुख तेह ॥ १५ ॥ व्याख्या.— इक्कोवि—एक पण नसंदेहो—संदेह नथी, जं—जो जिणधम्मेण—जिणधर्मनुं आराधन करवुं ठतां मुरकसुहं—मोक्षसुख अत्थि—ठे; एटले जिनधर्मना आराधनथी निश्चये करी मोक्ष थायठे एमां एके संदेह नथी. पुण—वली तं—ते जिनधर्म डुविन्नेय—डुःखेकरी जाणवा योग्य ठे; एटले जाणवाने अशक्य ठे. ते कोणेजे अइउक्कड पुन्नरहियाणं—अति उत्कट एटले अति प्रधान सम्यक्त्वरूप पुन्य थकी रहित प्राणी ठे तेने, अर्थात् अनिनिवेश मिथ्यात्वीने जिनधर्मनुं सम्यक् जाणपणुं थवुं घणुं कठण ठे ए नाव ठे. ॥ १५ ॥

अवतरण.—स्त्रीनी चोसठ कला अने पुरुषनी बोतेर कला इत्यादि स्थूल पदार्थोथी जिनधर्मनुं डुर्लनपणुं देखाडे ठे.— मूल — सव्वंपि वियाणिज्जइ, लप्नइ तह चउरिमाइ जणमज्झे ॥ इक्कंपि नाय डुलहं, जिण मय विहु रयण सुविन्नाणं ॥ १६ ॥ दोहा— चतुराई सबही कला, लहिये जगत सुजाण ॥ पिण डुर्लन इक जैन मत, विधी रत्न विज्ञान ॥ १६॥ व्याख्या — सव्वंपि—सर्व पण विया ज्जि

नेविपे जाएयामा आवेछे, तह–तिम चउरिमाइ–चतुराईपणु एटले उचित कार्यने विपे कुशलपणु जणमज्झे–अविवेकी लोकोनेविपे पण लग्नइ दीगमा आवेछे, काई ङ्रत्न नथी, केमके ससारनी चतुराई जीवे अनत वार पामेली छे परतु नाय–हे नाई इक्कपि–एकज डुल्लह–डुर्लभ छे एटले डु खे करी पमाय एवु छे त जिएमय विहि रयण सुविआएण–जिनमत सबधी विधि रत्ननु नलु जाणपणु तथा करवा पणु तेज एक डुर्लभ छे, केमके, विवेकी पुरुषने जिनशासन सबधी विधिरत्ननु स म्यक् जाणपणु तथा करवापणु सनवे पण बीजाने सनवे नही ए नाव छे ॥१६॥

अवतरण --जिनमतविधिरत्नना सम्यक् जाणपणानु डुर्लभपणु देखाम्धु ते जाण पणानेज सम्यक्त्व कहेछे, माटे हवे सम्यक्त्वनु डुर्लभपणु देखाडेछे -- मूल – मि बत्त वहु लयाए, विसुद्ध सम्मत्त कहण नवि डुलह ॥ जह वर नरवइ चरिय, पाव नरिंदस्स उदयम्मि ॥ १७ ॥ दोहा -- बहुलताय मिथ्यात्वकी, डुलन सु समकित ह्यान ॥ जिम पापी नृपके उदै, वर नरनाय कथान ॥१७॥ व्याख्या – मिच्छत्त वहु लयाए- मिथ्यात्व तथा मिथ्यात्वीओना बहुल पणाने लीधे, एटले व र्तमान डुपम कालमा देदीप्यमान असयतपूजा नामे दशमा अछेराना महिमाए करी ड्व्यलिंगी कुलिंगी तथा तेओना सेवको अनिनिवेशादिक मिथ्यात्वीओ घणा छे माटे विसुद्धसम्मत्तकहणमवि–अनिनिवेश मिथ्यात्व मलरहित निर्मल सम्यक्त्व नु कथन करवु पण डुलह--डुर्लभ छे अहीं दृष्टात कहेछे –जह– जेम पावनरिंद स्स उदयम्मि--पापी एटले अन्याई राजानो उदय थयो छतां वरनरवइ चरिय–प्रधा न न्यायवत नृपतिना चरित्रनु वर्णन करवु डुर्लभ छे तेम ते पण जाणी लेवु ॥१७॥

अवतरण --विशुद्ध सम्यक्त्वनु कथन करवु पण डुर्लभ छे, तथापि उत्सूत्र नाषी ड्व्यलिंगीनो त्यागकरवो योग्य छे ते कहेछे -- मूल - वहु गुण विज्जा निलओ, उसुत्त नासी तहा विमुत्तव्वो ॥ जह वर मणि जुत्तो विहु, विग्घ करो विसहरो लोए ॥ १८ ॥ दोहा -- बहु गुण विद्या गेहजो, तदपि उसूत्री हेय ॥ जिम वर मणिजुत विघ्न कर, विषधर लोक विपेय ॥ १८ ॥ व्याख्या -- वहु गुण–जोप ण घणी थाकरी क्रिया करवादिरूप घणा गुण विज्जा–चौद श्रुतरूप विद्यानु नि लओ–घर छे, अथवा बहु गुणवाली विद्यानु घर छे, तहावि–तोपण उस्सुत्तना सी–उत्सूत्र नापण करनारा ड्व्यलिंगीनो मुत्तव्वो–त्यागकरवो योग्य छे एविषे दृ ष्टात कहेछे –जह–जेम वरमणिजुत्तोवि–श्रेष्ट मणि रत्नेकरी युक्त छता पण हु–निश्च य करी विग्घ करो–विघ्नने करनारो एहेवो विसहरो–विषधर जे सर्प ते लोए–लोकने

विषे अथवा लोकोए छांडवा योग्य छे. एनो भावार्थः—जेम सर्प अमूल्य मणिने धारण करनारो छतां विषमयी होवाथी त्याग करवा योग्य छे; तेम कोई पुरुष बहु गुणयुक्त विद्यावान छतां उत्सूत्रभाषी होय तो अवश्य त्याग करवा योग्य छे.॥१८॥

अवतरण:— अतिशय करी जे मोह ते व्यामोह कहेवायछे. तेम उत्सूत्रभाषी द्रव्यलिंगी जे गुरु ते, कुलक्रमथी चाल्या आवेछे, माटे तेने केम मूकाय! जो हुं त्याग करुं तो सज्जन लोको मारो त्याग करे, अथवा वमाडए अंगीकार करेलो चाल मुकी दैये तो बाप दादानुं नाम जाय, इत्यादिक जे विचार करवो ते स्वजन व्योमोह कहेवायछे; तेज दर्शावेछेः— मूल —सयणाणं वामोहे, लोआ घिप्पंति अछ लोएण ॥ नो घिप्पंति सुधम्मे, रम्मेहा मोह माहप्पं. ॥ १९ ॥ दोहा.—स्व जन नेह धन लोभ करि, सेवे लोक मिथ्यात ॥ रम्य धर्ममें नवि रमैं, है अज्ञान उतपात ॥१९॥ व्याख्याः— सयणाणंवामोहे—स्वजनना व्यामोहेकरी, अछलोहे—अर्थना लोभेकरी, एटले मंत्र तंत्रादिकनुं अर्थ जे प्रयोजन अथवा अर्थ जे धन तेना लोभेकरी, लोआ -सामान्य लोक जे छे ते, घिप्पंति—ग्रहण करेछे एटले पो ताने वश करेछे; अने रम्मे- रमणीय जिन भाषित सुधम्मे—जे सारो धर्म छे ते नोघिप्पंति—ग्रहण करता नथी हा—मोटी खेदनी वात छे; जुवो मोहमाहप्पं—मो हनुं केटलुं माहात्म्य एटले महिमा छे एनो भावार्थः—स्वजन अथवा धनना लोभे करीने लोको मिथ्यात्वनुं सेवन करे छे; अने रम्य जे जिन धर्म तेने मूकी दिये छे ए मोहनुं महात्म्य छे ॥ १९ ॥

आशंकाः—सर्व लोक मोहने वश थया थका मिथ्यात्वनी सेवना करेछे एम कह्याथी सर्वने अधर्मनो प्रसंग प्राप्त थशे! ए शंकानुं निराकरण करेछे.—मूलः— गिहवावार परिस्सम, खिन्नाए नराण वीसमण ठाणं ॥ एगाण होइ रमणी, अ न्नेसि जिणिंद वर धम्मं ॥ २० ॥ दोहा.— गृह व्यापार परिश्रमे, खिन्न थया नर ताहि ॥ इकनारी विश्राम हे, अन्य जिनागममांहि. ॥ २० ॥ व्याख्याः— स्त्री पुत्रादिक कुटंब परिवार गिह एटले घरने अर्थे, वावार—दंत लाख रसादिक अनेक विध व्यापार करतां थयो जे परिस्सम—परिश्रम एटले खेद तेणे करी खि न्नाण—खिन्न एटले थाक लाग्याथी आकुल थयला एवा एगाण—एकेक नराण— मनुष्यने वीसमणठाणं—विश्रामनुं स्थान ते रमणी—स्त्री होइ—छे. केमके, तेउ भारी कर्माजीवो छे माटे. अने अन्नेसि—बीजाने एटले लघुकर्मी जीवोने विश्रामनुं स्थान जिणंदवर धम्मं—जिनेंद्रनो भापेलो प्रधान धर्म छे. अर्थात् जे भारी कर्मी प्राण

सो ने तेउने स्त्रीनो सग प्रीय लागेछे, अने जे हलुकर्मी माणशो छे तेथोने जिन धर्म कर्त्तव्य प्रीय लागेछे ॥ २० ॥

अवतरण —मूढ तथा अमूढ पेट भरवामा सरखा छे, पण कर्मविपाकेकरी सरखा नथी ते कहेछे मूल — तुल्लेवि उअर भरणे, मूढ अमूढाण पिछ सु विवाग ॥ एगाण नरय दुक्क अन्नेसि सासय सुक्क ॥ २१ ॥ दोहा — सम पिण उदर भरे जुओ मूढ अमूढ विपाक ॥ मूढ लहे नरकादि दुख, निपुण लहे शिव नाक ॥ २१ ॥ व्याख्या — जेना अरस परस उयर भरणे—उदरनु भरवु एटले पेट भरवु अथवा घरना व्यापार कार्यनु करवु ते तुल्लेवि—तुल्य एटले सरखा छे तोप ण मूढ अमूढाण—मूढते अविवेकी अजाणजाक अने अमूढ ते विवेकी धर्मना जाण लाक छे. तआना विवाग—विपाक एटले कर्मना शुभाशुभ रस ने पिछसु—हे भाई तु देख, एगाण—एक एक केटलाएक निर्विवेकी महारम्भी महापरिग्रही. तथा मि थ्यादृष्टि जीवा ने तआने नरयदुक्क—नरकनु दुःख ने उपलक्षणथी तिर्यंच तथा निगोदनु दुःख पण जाणवु अन्नेसि—बीजा ज सम्यकदृष्टि देशविरति धर्मक्ष विवे की जीवा ने तआने सासयसुक्क माटे स्थिति आश्री देवलोकसबधी शाश्वत सुख ने उपलक्षणथी परपराएकरी मोक्षना सुखना पण संभव छे मढ तथा अमूढ ना विपाकमा एटलु फरक ने माटे मूढपणानो त्याग करवा योग्य छे ॥ २१ ॥

अवतरण —हवे ए गाथाए करी अमूढपणानी प्राप्तिनो उपाय प्रगट करीने कहे छे — जिण मय कहा पबधा सवग करा जियाण सव्वावि ॥ सवेगा सम्मत स म्मत सुद्ध दसणया ॥ २२ ॥ ता जिन आण परेण, धम्मामा अव सुगुरु पासम्मि ॥ अइ अहिय सद्धाओ तस्साएसस्स कहगाओ ॥ २३ ॥ दोहा — जिनमत कथा प्रबध सव दाय सवेग उपाय ॥ सवेग तु समकित वत समकित शुद्ध गिनाय ॥ २२ ॥ ता जिन आण धर धरम सुणवा सुगुरु सकाश ॥ अथवा तत उपदेशका श्र द्ध श्रावक पास ॥ २३ ॥ व्याख्या — सव्वावि— सर्व जिणमय कहा पबधा जिन मतना कथाना प्रबंध अथवा जिनमत ना निपाण—हलुकर्मी जीवने सवेग करा—सवेग ने मोक्षाभिलाष तेना करनार छे अने सवेगा सम्म त—सवेग ते सम्यक्त्व छेना छे एटले सम्यक्त्व जेनो सवेग होय ते सद्ध दस णया—शुद्ध मन करनार सम्यक शुद्ध दर्शनाय थाय सम्मत—सम्यक्त्व होयते ता तस्मात्—हलु कर्मी जीवाने जिन मतना कथाना सर्व प्रबध अथवा प्र ब निबध सवेगना जनक छे ॥ २२ ॥ ता—ते कारण माटे जिनआणपरेण—

जिनराजनी आज्ञानेविषे जे तत्पर प्रधान छे ते मनुष्ये. सुगुरु पासम्मि-नाग गु रुनी पासे एटले सम्यक् ज्ञान दर्शन तथा चारित्रवान गुरुनी पासे धम्मो-धर्म सोअव्व-सांभळवुं योग्य छे. अह-अथ एटले जो तेवा मुनि महाराजनो योग न थाय तो उचियं-उचित प्रमाणे तस्सुवएसस्स-ते सुगुरु भाषित धर्म उ पदेशनो कहगाओ-वक्ता पण पोतानी मतिथी कहेनार नही एहवो सढाओ-श्राव क जे धारणादिक गुणेसहित होय तेने समीपे धर्म सांभळवो पण बीजानी पासे थी सांभळवुं नही एनो भावार्थ --जिनाज्ञा पाळनार प्राणीए सुगुरुनी पासेथीधर्म नुं श्रवण करवुं. तेनो योग न थाय तो कोई धारणादि गुणे सहित श्रावकनी पा सेथी सांभळवु पण अनेरा पासेथी कदी पण सांभळवुं नही. ॥ ७३ ॥

अवतरण.-- धर्मोपदेश सांभळ्याथी सम्यक्त्वादिकनुं जाणपणुं थायछे ते अेटले ते कहेछे:- मूळ:- स कहालो उवएसो. तन्नाणं जेण जाणई जीवो ॥ सम्मत्त मिछ भावं. गुरु अगुरु धम्म लोअ ठिई ॥ ७४ ॥ दोहा:- कथा ज्ञान उपदेशतें जाणे जातें जीव ॥ समकित अरु मिथ्यात्वनो, भाव त्रिलोक थितीव ॥ ७४ ॥ व्याख्या:- सकहा- ते कथा सो उवएसो-ते उपदेश तन्नाणं- ते ज्ञान जेण-जेणे करी जीवो- जीव सम्मत्तमिछभावं-सम्यक्त्व तथा मिथ्यात्वना भाव अथवा स्व रूपने गुरुअगुरु-सुगुरु अने अगुरु एटले कुगुरुना भावने तथा धम्म-जिन धर्मनी स्थितिना भावने अने लोअठिई लोकनी स्थितिना स्वरूपने जाणइ-उपा देय तथा हेयपणे जाणे एनो भावार्थः-- जेणेकरी जीव सम्यक्त्वादिकना स्वरू पने जाणी शके नही ते कथा पण नही ते उपदेश पण नही अने ते ज्ञानपण कहेवाय नही. ज्ञानादि रत्नत्रय संयुक्त ते सुगुरु कहेवाय छे, तेथी विपरीत ते कुगुरु कहेवायछे. रात्रि भोजननी विरति प्रमुख ते धर्मस्थिति कहेवायछे; अने ध न धान्यादिक करी प्राये गृहस्थ शोभेछे, अथवा लोकविरुद्ध न करवुं ते लोकस्थि ति कहेवायछे. ॥ ७४ ॥

अवतरणः-- जिन वचन सांभळ्यापछी पण केटलाएक भारी कर्मी जीवोनुं मि थ्यात्व जतुं नथी ते कहेछे. मूळ:-- जिण गुण रयण महा निहि, लद्धूणवि किन जाइ मिछत्तं ॥ अह पत्तेवि निहाणे, किवणाण पुणोवि दारिद्दं ॥ ७५ ॥ दोहा:- जिन गुण मणि निधि पाय कर, किम न जाय मिथ्यात ॥ निधि पाये पिण कृपणके, वलि दरिद्र विख्यात ॥ ७५ ॥ व्याख्या:-- जिण गुण निहि-जिनराजना सम्यक् [illegible] न चारित्रादिक गुणरूप र

[illegible]ज्ञानरूप मह्या निज्जिने लद्धणवि–पामीने पण एटले सांभलीने पण अभिनिवेश मिथ्यात्वी जीवोनु मिछत्त–मिथ्यात्व ते अतत्वश्रद्धानरूप किनजाइ–केम जतु नथी एवा शिष्ये प्रश्न कर्यो तेनो गुरु उत्तर आपेछे – अह–अथ निहाणे पत्त–रत्न तथा सुवर्णनु निधान प्राप्त थयु छतां पण किवणाण–कृपण पुरुषोनु पुणोवि–तो पण दारिद्द–दारिद्र्य केम जतु नथी, अर्थात् कृपण पुरुषने रत्न अथवा सुवर्णादि नु निधान मल्यु छता पण तेनु दारिद्र्य जतु नथी, तेम जिन गुण रत्न सिद्धांत [illegible]निधिरूपने पामीने सांभलीने पण भारी कर्मी जीवोनु मिथ्यात्व जतु नथी॥२५॥

[illegible] – जेम जिनागम सम्यक्त्वादिक धर्मनु कारण छे, तेमज जिनना उप[illegible] पर्युषणादिक रूडा पर्वो पण सम्यक्त्वादिक धर्मनु कारणछे ते कहेछे मूल – सा जयउ जेण विहिया, सवछर चाउमासिय सुपव्वा ॥ निद्धंधसाण जा[illegible] जेसि पवारओ धम्ममई ॥ २६ दोहा – धर्म पर्व संवत्सरी, चतुर्मासि आ[illegible] ॥ [illegible] जेणे जयतु ते, पापी सुमति धरेय ॥ २६ ॥ व्याख्या – सो–ते [illegible] जयउ–जयवंता थावो जेण–जेणे सवछर चाउमासिय सुपव्वा–सांवत्सरिक पर्यू[illegible] [illegible] चतुर्मासिक प्रमुख (उपलक्षणथी चौदस पूर्णमासि अष्टम्यादि पर्व[illegible] [illegible] विहिया–उत्पन्न कर्या छे, जेसि–जे पर्वोना प्र[illegible]–प्रभावथी निद्धंधसाण -निद्दय प्राणीयोनी एटले निर्दय प्राणीयोनी [illegible]–धर्म करवानी मति तथा जिन धर्म प्रशमरवानी मति एटले बुद्धि [illegible]–[illegible] एवा भावार्थ – पर्युषणादिक सुपर्वनेविषे चतुर्विध श्रीसंघ, [illegible] धर्मनेविषे उद्यम करेछे, तेने जोइ निर्दय प्राणीउनी पण जैन [illegible] करवानी अथवा प्रशमरवानी मति थायछे, त्यारे दयावत प्राणीयोनी [illegible] वर्णन करवु शक्य छे ते जिनराज जयवंता थाओ ॥२६॥

[illegible] – [illegible] ॥ निम्न अणुमगाउ, धम्मीणवि होइ पाव मई ॥ [illegible] – [illegible] नामपण तारा, अशुभ नाम पण तारा ॥ धर्मीन पण [illegible] ॥ २७ ॥ व्याख्या – तस्स–तनु नामवि–नाम प[illegible] [illegible] जण–जणे मिछ पवाउ–मिथ्यात्वना पर्व [illegible] तेना उत्सव कर्या छ जेसि– जे पर्वोना अ[illegible] [illegible] धम्मीणवि–धर्मी लोकोनी पण पाप [illegible] एवो भावार्थ –जेनी, पु

सेटी. विजयादशमी. गणेश चोथ. नाग पंचमी. पाप नवमी. वछ बारस, धन तेरस इत्यादिक अनेक मिथ्यात्वना पर्वोने दिवसे घणा पाप. उपद्रव. अ कुतुहल थाय छे. जेना प्रसंगथी धर्मी पुरुषोनी पण पाप मति थाय छे. त्यारे अ लोकोनी तो शी वात कहेवी! माटे जे पुरुषे मिथ्यात्व पर्वोनी स्थापना करीछे ते पु तुं नाम पण अशुभ जाणवुं; एटले तेनुं नाम लीधाथी पण पाप लागेछे ॥ ७

अवतरण--उपरनी बे गाथाना अनुसारे तो ज्यारे सुपर्व आवे छे. त्यारे सर्वने धर्ममति उत्पन्न होवाथी वधा धर्मी थवा जोये; अने ज्यारे कुपर्व आवे छे त्यारे फरी तेओनीज पाप बुद्धि थई जवाने लीधे वधा पापी थवा जोये. त्यारे कोईनो स्थायीभाव सिद्ध थशे नही एटले सर्व जन पापी अने धर्मी ठरशे. ए आशंका दूर करवाने उत्तर कहे छे-- मूल --मज्झिम पुण एसा, अणुसंगेणं हवंति गुण दोसा ॥ उक्किठ पुस पावा, अणुसंगेणं न घिप्पंति ॥ ७८ ॥ दोहा-- ल्हेवे संगे जे हवे. ते नर मध्यम होय ॥ अति धर्मी अति पातकी. ते तो फिरे न कोय ॥ ७८ व्याख्याः-- पुण तेमां मज्झिम- मध्यम पुरुषनी स्थिति एटले मर्यादा एसा-ए छे; अणुसंगेणं- अनुसंगे करीने एटले परना प्रसंगे करीने गुणदोसा- गुणवान तथा दोषवान हवंति-थायछे, एटले गुणीना प्रसंगथी गुणी तथा निर्गुणीना प्रसंगथी गुण रहित थाय छे, ए मध्यम पुरुषनी स्थिति छे, परतु उक्किठ पुसपावा- जे उत्कृष्ट पुण्यवंत धर्मी तथा जे उत्कृष्ट पापी अधर्मी छे ते अणुसंगेणं- पर प्रसंगकरी न घिप्पति- ग्रहण कर्या जता नथी एनो भावार्थ-- उत्कृष्ट धर्मीने पापीनो प्रसंग थाय तो पण तेनी पापमति थती नथी, अने उत्कृष्ट जे पापी होय तेने धर्मीनो प्रसंग थाय तोपण तेने धर्म मति थती नथी; अने जे मध्यम पुरुष होयछे तेजज न्यूनाधिकताने पामे छे. जे अति पापी तेमज अति पुन्यवान नहोय ते मध्यम पुरुष कहेवाय छे. ॥ ७८ ॥

अवतरण.--वली एनेज वली दृढावेछे.--मूलः--अइसय पाविय पावा, धम्मिअ प ...सु तोवि पाव रया ॥ न चलंति सुद्ध धम्मा, धन्ना किवि पाव पव्वेसु ॥ ७९ ॥ दोहा -अति ...य पापी पापरत, रहे सुपर्वे जेम ॥ पाप कुपर्वे धर्मथी, धन्य चले नहि तेम ॥ ७९ ॥ ...ख्या --जे माटे एम छे तो--तेमाटे अइसय पाविय पावा-अतिशय एटले उत्कृष्ट ...युं छे पाप जेणे, एटले जे उत्कृष्ट पापी पुरुष छे. ते धम्मिअपव्वेसुवि-धर्मी पुरु ...संबंधी पर्यूषणादिक पर्वोनेविषे पण पावरया--पाप रत होयछे, एटले पाप क ...विषे आसक्त रहेछे. किवि- तेमज केटलाएक धन्न--धन्य एटले पुन्यवंत प्राणी

उ पापपव्वेसु–पाप पर्वोनेविषे पण शुद्ध धम्मा–शुद्ध धर्मथकी नचलंति–चलायमा न थता नथी अने नवीन धर्मी जीवोने स्थिर राखवाने अर्थे दर्शन भ्रष्ट पासत्था दिकनो तथा अन्य दर्शनी कुलिंगीनो प्रसंग पण करता नथी, घणो कहेवाथी शु

अवतरण - जेम सुपर्व अने कुपर्व ए बे प्रकारना पर्व कह्याछे, तेम सुलक्ष्मी तया कुलक्ष्मी ए बे प्रकारनी लक्ष्मी छे ते बतावेछे -- मूल – लच्छीवि हवइ डुवि हा, एगा पुरिसाण खवइ गुण रिद्धि ॥ एगाय उल्लसती, अपुन्न पुन्नाण नावाउ ॥ ३० ॥ दोहा – लक्ष्मी दोविध एक तो, नर गुण धण क्षयकार ॥ एक दिपावे पुन्यक्, पाप पुन्य अनुसार ॥ ३० ॥ व्याख्या –लच्छीवि–लक्ष्मी पण डुविहा- बे प्र कारे हवइ- छे तेमां एगा–एक तो अज्ञान कष्टादिके करी प्राप्त थएली जे छे ते पुरिसाण–पुरुषोनी गुणरिद्धी–ज्ञानादिक गुणरूप रिद्धिने खवइ–क्षय करेछे, एट ले नाश करेछे य–वली एगा–एक सुपात्र दानादिकेकरी प्राप्त थएली जे लक्ष्मीछे ते पुरुषोनी ज्ञानादिक गुणरद्धिने उल्लसती–उल्लासने पमाडे छे एटले वधारेछे अपुन्न पुन्नाणु नावाउ- पाप धर्मना अनुनाव थकी एटले प्रनावथकी ते लक्ष्मी बे प्रकारे थायछे अपुन्न–पाप अज्ञान कष्टादिक, तेना प्रनावथी प्राप्त थएली जे लक्ष्मी ते गुणरद्धिने नाश करेछे, अने पुन्न–पुन्य धर्म सुपात्र दानादिक, तेना प्रनावथकी प्राप्त थएली जे लक्ष्मी ते गुण रुद्धिनी वृद्धि करेछे ॥ ३० ॥

अवतरण – ते लक्ष्मी लेवा देवामां जेम दोष थायछे तेम कहेछे -- मूल – गुरुणो नट्टा जाया, सड्ढे थुणिकण लिंति दाणाइ ॥ डुन्निवि अमुणिय सारा, दु सम समयम्मि बुड्डति ॥ ३१ ॥ दोहा – नाट थया गुरु श्राद्धने, स्तवी लेत दा नादि ॥ तत्व अजाण दुए बुडे, डुसम्म समए प्रादि ॥ ३१ ॥ व्याख्या –गुरुणो- नाममात्र गुरु कपन माह निंग रजोहरण मुख वस्त्र धारीने आजीविकानो कर नार, नट्टा जाया–नाट थया एटले नाटनी पठे कीर्त्ति वचनाना बोलनार थया सड्ढे–नाममात्र श्रावकने थुणिकण–स्तवीने एटले अहो महानाग्य, पुन्यवत, अ हो कल्पवृक्ष, मनोरथिन पूरक, देवगुरु नक्तिकारक, जिन आज्ञा प्रतिपालक, श्रा द्धव्रत धारक, दीन दीनोद्धारक, धीर गनीर औदार्यादि गुण गणरत्नत इत्यादि द स्तवना करीने दाणाइ–अशनादि आहार वस्त्र पात्र वयज पाद पुस्तकादिक वस्तु लिंति–लियेछे डुन्निवि–ते बन्ने एटले स्तवना सांनलीने वस्तुने देवावाला श्रावक अने स्तवना करीने वस्तुने लेवावालो कुगुरु अमुणियसारा–जेउए सिद्धा

तनो सार एटले परमार्थ जाण्यो नथी, तेउ दूसमसमयम्मि–दुषम कालरूप समुद्रनेविषे वुड्डंति–बूडेठे; एटले नरक निगोदादिकनेविषे प्राये घणा कालसुधी भमेठे.३१

अवतरणः– गत गाथामां परमार्थने न जाणनारा बूडेठे एम कह्युं, ते परमार्थने न जाणनारा घणा ठे अने परमार्थने जाणनारा थोडा ठे ते कारण सहित कहेठे. मूलः– मिछ पवाहे रत्तो, लोओ परमछ जाणओ थोवो ॥ गुरुणो गारव रसिआ, सुद्धं धम्मं निगूहंति ॥ ३२ ॥ दोहाः– मिछ प्रवाहे रत घणा, लोक स्तोक सुद्ध ॥ गारविरस लंपट गुरु, गोपै धर्म विसुद्ध ॥ ३२ ॥ व्याख्या.– मिछपवाहे–मिथ्या एटले विचार रहित फूगनेविषे रत्तो–रक्त एटले आसक्त एवा लोओ–जे लोक ठे; ते घणा ठे. ते लोकोथकी तथा सम्यक्त्वना पडिवाइ थकी परमछ जाणओ–परमार्थना जाण पुरुषो हमणा घणाज थोवो–थोडा ठे; कारण के गारव रसिआ–ऋद्धि रस साता गौरवनेविषे रसिक एवा गुरुणो–नाम मात्र गुरुठे; ते सुद्धं धम्मं–निर्मल जिन भाषित तपसंयमरूप धर्ममार्गने निगूहंति–गोपवेठे. केमके, शुद्ध मार्गनी प्ररूपणा करीश तो मने कोण वांदशे! तथा पूजशे! एवी स्थापना करीने शुद्ध मार्गने प्रकाश करता नथी, माटे परमार्थना जाण पुरुष थोडाठे.३२

अवतरण:– वली बीजो हेतु बतावे ठे. मूलः– सव्वोवि अरिह देवो, सुगुरु गुरु भणइ नाम मित्तेणं ॥ तेसिं सुरूवं सुहयं, पुन्न विहूणा न पावंति ॥ ३३ ॥ दोहा – अरिह देव सुगुरु गुरु, नाम मात्र सवि कहत ॥ ताके सुभग सुरूपकं, पुन्यहीण नहि लहत ॥ ३३ ॥ व्याख्या.– परंपरा गत जे श्रावक कुल, तेनेविषे उपजेला ते सव्वोवि–सघाउने पूठीये तो नाममित्तेणं–नामात्र करीने भणइ–एम कहेठे के, अरिह देवो–अरिहंत जे वीतराग ते देव, सुगुरुगुरु–संविज्ञ गीतार्थ ते गुरु, उपलक्षणथी श्रीवीतराग भाषित श्रुत चारित्ररूप ते धर्म; एम नाममात्रथी कहेठे, केमके, तेसिं–ते देव गुरु तथा धर्मनुं सुहयं–सुख दायक इष्टकारी एवुं जे सुरूवं–स्वरूप, तेने पुन्नविहूणा–रुडा पुन्यथी रहित प्राणी न पावंति–पामता नथी. माटे परमार्थना जाण वर्त्तमान कालनेविषे थोडा अथवा कोई विरला ठे. ॥ ३३ ॥

अवतरण:– शुद्ध मार्गना उपदेशक तो ठे तोपण हमणा परमार्थना जाण पुरुष थोडा केम कहोठो? एवो शिष्यनो संशय दूर करवा निमित्त गुरु कहेठे के अहो भद्र, सांभल –॥ मूलः– सुद्धा जिण आणरया, केसिं पावाण हुंति सिर सूलं, जेसिं ते सिरसूलं केसिं मूढाण ते गुरुणो ॥ ३४ ॥ दोहा.– शुद्ध जिनाज्ञा रत हुवे, के खलने शिर शूल ॥ जेने ते शिरसूल हुए, ते गुरु मूढ अनुकूल ॥ ३४ ॥ व्याख्या.–

जिण आणरया– जिन राजनी आज्ञा पाळवानेविषे रक्त एटले सावधान होवाने लीधे सुद्धा– निर्मल चित्तवाळा एवा जे संविज्ञ गीतार्थ शुद्ध मार्गोपदेशक छे ते केसिं पावाण–केटलाएक पापी श्रमणोना सिरसूल–माथानु सूल हुंति– थायछे, एटले शुद्ध मार्गनी देशना कोईक प्रकारे सांभळीने त्रासने पामे छे एवा जेसिं– जे पापी श्रमण केवल वेशधारी होय छे, तेउने ते शुद्ध मार्ग उपदेशक पुरुष सिरसूल–माथाना शूळना जेवा लागे छे ते–ते पापी श्रमण नि केवल वेषधारी के सिंमूढाण– केटला एक मूढ अजाण लोकोना गुरुणो–गुरु छे, एटले पूज्य छे एनो भावार्थ – जे पापी श्रमण पापमी जैनाभास नि केवल वेष धारी संविज्ञ पक्षीना गुणे करीने पण रहित एवा तथा तेउना सम्यक् ज्ञान विकल एवा भक्त लोक तो घणा होय छे, पण सत्य असत्यना विवेकी परमार्थ कुशल कोई विरलाज होय छे

अवतरण – अशुद्ध मार्ग प्ररूपक कुगुरुने तथा तेना भक्त लोकोने जोईने ग्रंथकार खेद सहित वचन कहे छे ॥ मूल – हा हा गुरु अ अकर्ज्जं, सामी न हु अत्थि कस्स पुक्करिमो ॥ कह जिण वयण कह सुगुरु, सावया कह इय अकर्ज्जं ॥३५॥ दोहा – गुरु अकार्य हानहि घणी, करिये कहा पुकार ॥ सुगुरु श्राद्ध जिन वचन कह, कहा अकार्य असार ॥ ३५ ॥ व्याख्या – हा हा–अति मोटो खेद थाय छे, गुरु अ अकर्ज्जं–कुगुरुने मानवु तथा पूजवु इत्यादिरूप वर्त्तमान समयनेविषे मोटु अकार्य थाय छे, एवी रीते दयालु सुगुरुना वचन सांभळीने कोई एक बोल्यो के त्यारे पुकार करो, एटले कोई सुधर्मा राजा प्रमुखनी पासे फिरियाद करो त्यारे गुरु कहेवा लाग्या के हे भद्र, सामी–सुराजकुलोत्पन्न लोकहित कारक दुर्नीति निवारक कोई राजा नअत्थी–नथी तो हु–निश्चये कस्स–कोनी आगळ पुक्करिमो–अमे पुकार करिये ! माटे फिरियाद करवी निरर्थक छे, एवा गुरुना वचन सांभळीने वळी ते बोल्यो के, त्यारे प्रथम 'हा हा गुरु अ अकर्ज्जं' ए वाक्य तमे केम बोल्या ? गुरुए कह्यु एटला वास्ते के, कह–क्यांहा जिणवयण– सकल नय समूह, अखिल दोष रहित, एवां जिनवचन एटले सर्वज्ञ भाषित वचन, अने कह– क्यांहां सुगुरु सावया– सुगुरु तथा श्रावक अने कह– क्यांहां गुरु अ अकर्ज्जं– सम्यक् ज्ञान क्रिया थकी भ्रष्ट अविधि मार्गना उपदेशक, एवा जे कुगुरु, तेउनी सेवनारूप मोटु अकार्य जे छे ते केटलो अनर्थ कारी छे ! ! [illegible] नामादिक लई, तथा अशुद्ध मार्गनी प्ररूपणा करी करीने ते

कुगुरु पोताने तथा पोताना जक्त लोकोने दुर्गतिमां नाखे ठे; एवा करुणा जाव थी 'हा हा गुरु अ अकज्जं' ए वाक्य बोलवामां आव्युं ठे ॥ ३५ ॥

अवतरणः– पूर्वे गाथामां कुगुरुनी सेवनारूप मोटुं अकार्य कह्युं ते यथार्थ जाणीने कोईक लघुकर्मी जव्यजीव ते गुरुनो त्याग करे तेने मूढ लोक दुष्ट कहेठे, ते दृष्टांतेकरि कहेठे.–मूल.–सप्पे दिठे नासइ, लोउ न हु किंपि कोइ अरके ई ॥ जो चयई गुरु सप्पं, हा मूढा जणइ तं दुठं ॥ ३६ ॥ दोहाः– साप देख नासे कुई, लोक कहे कछु नाहि ॥ कुगुरु सापथी जे नसे, मूढ कहे खल ताहि ॥ ३६ ॥ व्याख्याः–लोउ–लोक सप्पे दिठे–सर्पनेदेखीने नासइ–नाशी जाय तेने कोइ–कोई माणस किंपि–कांई अरकेइ–कहेता न–नथी. हु–निश्चये, एटले तेने कोई एम कहेतो नथी के तुं कायर ठे, बीकण ठे, अथवा नपुंसक ठे इत्यादिक कोई नरशुं वचन कहेता नथी, उलटुं सारुं कहेठे, के तारुं मोटुं जाग्य जे तुं सापनी पासेथी नाशी गयो. अने जो–जे पुरुष कुगुरु सप्पं–कगुरुरूप सर्पने चयइ–त्याग करेठे एटले तेने मूकी दियेठे, हा–इतिखेदे मूढा–मूढ अज्ञानी लोक तं–ते कुगुरुरूप सर्पने मूकी देनारने दुठं–दुष्ट, जाग्यहीण, पोताना बाप दादादि पूर्वजोनी कुलमर्यादानुं उल्लंघन करनार ठे एम जणइ–कहेठे; पण सारुं कहेता नथी; एटले तुं कुगुरुरूप सर्पथी बची गयो ए घणुं सारुं थयुं माटे तुं मोटो जाग्यवान ठे एम कहेता नथी; केमके सर्प अने कुगुरुमां केटलुं अंतर ठे ते तेउ जाणता नथी. ॥३६॥

अवतरणः– हवे सर्प अने कुगुरुमां घणो अंतरायठे ते कहेठे.– ॥ मूलः– सप्पो इक्कं मरणं, कुगुरु अणंताइ देइ मरणाइ ॥ तो वरिसप्पं गहियुं, मा कुगुरू सेवणं जद्दं ॥ ३७ ॥ दोहाः– एक मरणकूं साप दे, कुगुरू मरण अनंत ॥ श्रेष्ठ साप ग्रहवुं तदा, कगुरु सेव नहि संत ॥ ३७ ॥ व्याख्याः–सप्पो–सर्प इक्कंमरणं–एकजवार मरणने दियेठे; अने कुगुरु– अगीतार्थ तथा विधिमार्गना अजाण जे कुगुरु ते अनंताइ मरणाइ देइ–अनंतवार मरणने दियेठे; ज्यारे अगीतार्थ कुगुरुनी एवी कथा ठे, त्यारे जे सर्व गुणेकरी रहित कुगुरु होय तेनुं शुं कहेवुं! तो–ते माटे जद्दं–हे जड, सप्पंगहियुं–सर्पने मणिलेवादिकने अर्थे जे ग्रहण करवुं ते वर–श्रेष्ठ ठे पण कुगुरुसेवणं–कुगुरुनी सेवा अथवा पूजा मा- करीश मा. अर्थात् हे जड, रखे कुगुरुनी सेवना तु करे कदापि करवी नही, तुं पोतानुं कल्याण इछनार तथा सरल स्वजावनो होवाथी आ उत्तम सीखामण हुं तने आपुंठुं॥३७॥

अवतरणः–एवी रीते पूर्वे गाथामां सर्पथकी पण कुगुरुने जूंमो कह्यो तेम

छतां तेने लोको गुरुबुद्धिए नमेछे तेनुं कारण शुं? ते छलायाने लीधे मानेछे एम दृष्टांत सहित कहेछे — जिण आणा विचयंता, गुरुणो भणिऊण ज न मिच्चंति॥ ता किं कीरइ लोओ, छलिओ गड्डरि पवाहेण ॥ ३८ ॥ दोहा — जिण आज्ञाथी रहितने, गुरुकहि जो शिर नाय ॥ गड्डर प्रवाहे जण छल्यो, तो सुं करिये न्याय॥ ॥ ३८ ॥ व्याख्या — जिण आणा— समिति गुप्ति महाव्रतादि जिण भाषित क्रिया अनुष्ठानरूप जे जिनराजनी आज्ञा, तेने विचयंता—विशेषे करी त्याग करनार एवो जे कुगुरु, तेने गुरुणो— गुरु भणिऊण— कहीने एटले जाणीने ज— जो नमिच्चंति—लोक नमेछे, ता—तो किंकरइ—शु करिये! एनो कोई उपाय नथी केम के, गड्डरि पवाहेण—गाडरीना प्रवाहनी पठे विचार रहित मूर्ख लोकोनी जे चाल तेणे करीने लोओ—लोको छलिओ—छलाई गया छे तें जाणे दिग्मूढपणाने, अंधपणाने, बधिरपणाने पाम्या होयनी! एवा ए लोक थई गया छे तथा तेओने जाणे ग्रहग्रह तथा भूत वलग्या होयनी! तथा तेओनी उपर योग चूर्णादिक नाषीने जाणे कोईये वश करी लीधा होयनी! केमके सिद्धांतथी वधुं विपरीत आचारे चालेछे, तेमज बीजाने पण चलावेछे एवा कुगुरुने गुरु करीने मानेछे माटे ए लोक गाडरीया प्रवाहे करी छलाया छे, तेओने हवे सुधारवानो कांई उपाय विचारमा आवतो नथी ॥ ३८ ॥

अवतरण —पूर्व गाथामां कह्यु के लोको छलाई गयाछे ते उपर कोई एवी आशंका करेके, लोको गुरुने दाक्षिण्यताने लीधे नमता हशे! एटले चतुराईवाला जाणीने नमता हशे! तेने हितोपदेशक गुरु कहेछे के, भाई ए ठेकाणे लोको चतुराईथी रहितछे, ते सांभल —मूल —निद्दक्खिन्नो लोओ,जइ कुवि मग्गेइ रुट्टिया खंम॥कुगुरूण संग चयणे, दक्खिन्नहो महामोहो॥३९॥ दोहा —लोक अदाक्षिण कोइ जो, मागे रुटिया भाग॥कुगुरु संगत्यागनविषे,दाक्षणता धिग राग॥३९॥ व्याख्या —निद्दक्खिन्नो—दाक्षिण्यथीरहित लोओ-आ लोको छे, केमके, जइ जो कुवि-कोई पण भूखेकरी पीडित रांक माणस रुट्टियाखम—रोटीनो खंम एटले रोटलीनो एक ककडो मग्गेइ—अन्नदाता, सेठ साहेब इत्यादिक चाटुक वचने करी मागेछे, तो पण तेने ते आपतां नथी, उलटां भ्रूंच नो चोलीने कहाडी मूकेछे अने कुगुरूण संग चयणे—कुगुरुनो संग त्यागवाने विषे दक्खिन्न—दाक्षिण्यपणु करेछे एटले एमने मारा बाप दादादिक मानता आवेला छे, वली मारा गछना कहेवायछे, माटे केम छोडाय! एम लोक कुगुरुनी दाक्षिण्यतामां मोटो खेद छे, महामोहो—ए मोह अज्ञान छे के,

दीन दुःखीने एक रोटीनो ककडो आपतां कष्ट लागे छे, अने दुर्ग—दुर्गति प्रापक जे कुगुरु, तेने अति सरस असन प्रधान वसन प्रमुखेकरी सन्माने छे; माटे ए मोटुं अज्ञान लोकोनेविषे प्रवर्त्ते छे. ॥ ३९ ॥

अवतरणः— पूर्व गाथामां दृष्टीरागी लोकोनुं मूढपणुं कह्युं, हवे तेओना नाम मात्र गुरुनुं मूढपणुं कहे छेः— मूलः— किं भणिमो किं करिमो, ताण हयासाण धिठ दुठाणं ॥ जे दंसिऊण लिंगं, खिवंति नरयम्मि मुद्ध जणं ॥ ४० ॥ दोहाः— नाखें नरके मुग्ध जन, देखाडी मुनि वेष ॥ ते हताश खल धीठने, कहिये किसुं विशेष ॥ ४० ॥ व्याख्याः— हयासाण—उत्तरोत्तर कल्याणरूप हणाई छे आशा जेनी एवा धिठ दुठाणं—धीठ एटले अकार्य करवामां अति चतुर अने दुष्ट एटले दोषवाला ताण— तेओने किं भणिमो— शुं कहेवुं! अने किं करिमो— शुं करवुं? जो उपकार करिये तो परघातादि उपद्रव करवाने सावधान थाय; ते आंधला सिंहना नेत्र उघाडवाना दृष्टांते जाणी लेवुं; एटले कोई आंधलो सिंह जोई तेनी ऊपर दया आणीने कोई पुरुष कांई इलाज करीने तेने देखतो करे तो तेनाज प्राण लिये. तेम कुगुरुनी ऊपर उपकार कर्यो होय तो तेना बदलामा अपकार शिवाय बीजो फायदो थवानो नथी. त्यारे कोई कहेशे के तेओनी ऊप र अपकारज करवो तो ते पुण्यवानने अघटित छे; माटे तेओने शुं कहेवुं! अने शुं करवुं कांई कहेवुं! अथवा करवुं उचितज नथी. केमके, जे—जे लिंग—रजोहरण तथा मुख वस्त्रादिक साधुनो वेष तेने दंसिऊण—देखाडीने मुद्धजण—मुग्ध जन ए टले विवेक विकल लोक, तेओने नरयम्मि—नरकनेविषे खिवंति—नाखे छे. ॥ ४० ॥

अवतरणः—पूर्व गाथामां कुगुरुओनुं मूढपणुं देखाड्युं, हवे तेओनी स्तुतिने मिषे निंदा करे छेः— ॥ मूल — कुगुरुवि संनिमोहं, जेसिं मोहाइ चंडिमा दठुं ॥ सुगुरूण उवरि भत्ती, अइ निविडा होइ भव्वाणं ॥ ४१ ॥ दोहा —ते प्रसंसिये कुगुरु पण, जसु मोहादिक द्वेष ॥ सुगुरु परभवी जीवके, थाए भगति विशेष ॥ ४१ ॥ व्याख्या.— कुगुरुवि- कुगुरुने पण संनिमोहं- हुं- प्रशंसुं छुं; केमके, जेसिं— जेना मोहाइ चंडिमा—मोहादिके करी जे चंडपणुं अथवा. क्रूरपणुं, तेने दठुं—देखीने भव्वाणं- मोक्षाभिलाषी भव्य प्राणीयोने सुगुरूण उवरि—सुगुरुनी ऊपर अइनिविडा- अतिदृढ भक्ति होइ—थाय छे. एटला वास्ते कुगुरुनी प्रशंसा करिये छैये, परंतु तेना गुणोनुं वर्णन करी प्रशंसा करता नथी. ॥ ४१ ॥

अवतरण — पूर्व गाथामां जे भव्य जीव कह्या ते सम्यक् दृष्टि जाणवा तेओनुं

सम्यक्त्व उल्लासने पामवानु कारण कहे छे – मूल – जह जह तुट्टइ धम्मो, ज ह जह डुठ्ठाण होइ अइ उदउ ॥ समदिट्ठि जियाण ॥ तह तह उल्लसइ समत्त ॥ ४१ ॥ दोहा ॥ जिम जिम खलनो अति उदे, जिम जिम तूटे धर्म ॥ तिम तिम समकित जीवको, उल्लसे समकित सर्म ॥ ४१ ॥ व्याख्या – जह जह–जेम जेम धम्मो–जिन जाषित धर्म तुट्टइ–तूटेछे एटले हाणीने पामे छे, वली जह जह–जेम जेम डुठ्ठाण- दर्शन भ्रष्ट, निन्ह्व, पासछा, उसन्ना तथा कुशीलियादिक अ ने अन्य दर्शनी त्रिदंमी, परिव्राजक, तथा विप्रादिक डुष्ट लोकोनो अइ उदउ- अ ति उदय एटले अतिशय जोर सत्कार तथा पूजादिक होइ- थाय छे तह तह–तेम तेम समदिट्ठि जियाण- सम्यक् दृष्टि जीवोनु सम्मत्त- सम्यक्त्व उल्लसइ- उ ल्लासने पामे छे, एटले विशेष दीपे छे ए मोटो आश्चर्य छे शिष्यने गुरु कहे छे के, कांई आश्चर्य नथी, वस्त्र, पात्र, वसति, आहार तथा पोतपोताना श्रावक इ त्यादिनी ऊपर लडी मरशे, अने साधु कहेवाशे वली कलहना करनार, मारकू टना करनार गुर्वादिक मोटा सत्पुरुषने पण असमाधि उत्पन्न करनारा थशे उ पम कालमा घणा असयति थया थका सयति कहेवाशे, अने कोईक विरला धर्मार्थी सुसाधु थशे एवा श्री महावीर स्वामीना वचन संजारी संजारीने तथा ते पूर्वोक्त लोकोने जोई जोईने श्री वीर वचननी आस्था ते सम्यक्त्वनु आस्तिक्यता नामे पाचमु लक्षण दृढ थाय छे ॥ ४१ ॥

अवतरण – पूर्वोक्त गाथामा जेम डुष्ट पापी लोकोनो हमणा अति उदय क ह्यो तेम हमणा जिनमतनो अति उदय केम थतो नथी? ते प्रश्नोत्तररूप गाथा एकरी कहेछे -- मूल – जअ जतु जणणि तुल्ले, अइ उदय ज न जिणमए होइ॥ तं किठ काल सजव, जियाण अइ पाव माहप्प ॥ ४२ ॥ दोहा – जग जननी सम जिनमते, जो अति उदय न होय ॥ कलि कालज जणनो अति, पाप म हातम सोय ॥ ४२ ॥ व्याख्या – जअजतुजणणितुल्ले–जगतना जीवने मातानी तुल्य, जिणमए–एवो जे जिनमत, तेनो अइ उदय–अति उदय ज–जो न–नथी होइ–थतो न–ते किठकालसजवजियाण–क्लिष्टकाल एटले कलिकालमा उत्पन्न थएला जे जीव तेउना अइपावमाहप्प–उत्सूत्र देशनादिक दोषरूप अति पापनु महात्म्य छे एवो जावार्थ – जिनमतनो उदय तो श्री डुप्पसह अणगारसुधी व र्त्तशे, तोपण जेवा तीर्थंकर महाराज हत्ता जिनमतनो उदय हतो, तेवो जिन मतनो अति उदय नथी थतो, तेनु कारण दोष डुष्ट कलिष्ट पचम कालनेविषे उ

न्नन्न थया जे जीव पापंमी लोक. तेना उत्सूत्र देशनादि महादोषरूप अति पा
पनो प्रताप छे. माटे जैन मतनो अति उदय केवी रीते थाय! ॥ ४३ ॥

अवतरण·– पूर्वे गाथामां कह्युं के जिनमतनो अति उदय थतो नथी ते दु
ष्ट लोकोना अति पापनुं महात्म्य छे; ते दुष्ट लोको पापे करीने पूर्ण होयछे ते
कहेछे – मूल – धम्ममि जस्स माया, मिच्छत्त गहो उस्सुत्ति नोसंका ॥ कुगुरुवि
करइ सुगुरु, विउसोवि स पाव पुन्नत्ति ॥ ४४ ॥ दोहा – जिसके माया धर्ममें,
लागो ग्रह मिथ्यात ॥ सो उत्सूत्री नरम नह, कहे उजटि सवि वात ॥ ४४ ॥
व्याख्या·– जस्स–जेने धम्ममि–जिन धर्मनेविषे माया–कपट वर्त्तेछे, एटले पूजा
धनादिक लाभ यश कीर्त्तिने अर्थे लोकनी दृष्टिए करी जे धर्म करवो ते बधी मा
या जाणवी ते जेने छे, मिच्छत्तगहो–अतत्व श्रद्धान मिथ्यात्वनो गृह हववा
द वर्त्तेछे जेने वली उस्सुत्ति– उत्सूत्र भाषी छे, नोसंका– उत्सूत्र भाषवा
थकी नरक निगोदनेविषे अनंत कालसुधी निवास थशे एवी जेने शंका नथी;
वली जे कुगुरुवि–कुगुरुप्रते पण सुगुरु–सारो गुरु करइ–करेछे, एटले आ उत्तम
गुरु छे एम मानेछे, स–ते विउसोवि–विद्वान छतां पण एटले द्रव्यथकी घणा
शास्त्रो भणेलो छतां पण पाव पुन्नत्ति–हिंसादिक अढारे पापेकरी पूर्ण जाणवो.॥

अवतरण·– पूर्वे गाथामां कह्या प्रमाणे जे पापेकरी पूर्ण होय ते कांई पण
धर्म कार्य करी शके नही; धर्म कार्य जिनाज्ञा प्रमाणे कर्याथी सुखदायक थाय
छे; अन्यथा न थाय ते कहेछे – मूल – किच्चंपि धम्म किच्चं, पूया पमुहं जिणिं
द आणाए ॥ भूअ मणुग्ग हरहिअं, आणा भंगाउ दुहदायं ॥ ४५ ॥ दोहा.–
जिन पूजादिक कार्य पण सफल जिनाज्ञा थाय ॥ आणा भंगरहित दया, कार्य
सवी दुखदाय ॥ ४५ ॥ व्याख्या – पूया पमुहं–पूजा प्रमुख एटले जिन पूजा,
सामायक प्रतिक्रमण, शास्त्राभ्यास, तथा जिनभुवन करावववा प्रमुख धम्मकिच्चं
धर्मकृत्य जे किच्चंपि–करवुं तेपण जिणिंद आणाए–जिनेंद्रनी आज्ञाए करी सुखदाई
थायछे. भूअमणुग्गहरहिअं–भूत अनुग्रह रहित एटले जीव दयाए करीने रहित
जे जिन पूजा तथा सामायकादिक धर्म कार्य करवु ते जिन आणानो भंग कर्या
जेवुं थायछे. माटे सिद्धांतमां कह्युं छे के, वीतरागनी आज्ञानो भंग करवा थकी
पूर्वोक्त सर्व धर्मकार्य दुहदायं–जन्म मरणादिक दु खना देनारां छे. जिन राजनी
आज्ञानुं आराधन कर्याथीज मोक्ष थायछे. अने जिनराजनी आज्ञा विराधवा
थकी नरकादिक दु ख थायछे. ए जिनागमनुं गुह्य छे. ॥ ४५ ॥

अवतरण -- जिनाज्ञाविना कष्टादिक जे करवु ते सर्व संसारनो हेतु थाय छे ते कहे छे -- मूल - कष्ठं करंति अप्पं, दमंति दव्वं चयंति धम्मत्थी ॥ इक्कं न चयंति मिछत्त विसलव जेण बुडुंति ॥ ४६ ॥ दोहा -- कष्ट करे आपा दमे, द्रव्य तजे पण जोय ॥ तजे नही मिथ्यात्व लव, बुडे जेहथी लोय ॥ ४६ ॥ व्याख्या -- कष्ठं करंति-- लोच करवो, उघाडे पगे चालवु, धरती ऊपर सूवु, तथा अणसणादि अनेक प्रकारनु बाह्य तप, इत्यादिक कष्ट जे छे ते मूर्ख करे छे अप्प--आत्माने, एटले मनने तथा इंद्रियोने दमंति--मूर्ख दमे छे, वली दव्वं--धनादिक द्रव्य तेने धम्मत्थि--धर्मना अर्थी थका जे मूर्ख चयंति-- त्यागे छे, पण इक्कं मिछत्तविसलव--एक मिथ्यात्व उत्सूत्ररूप विषलवने न चयंति-- मूकी देता नथी जेण--ने मिथ्यात्व उत्सूत्ररूप विषलवे करी मूर्ख अज्ञानी दुःख समुद्रनेविषे बुडंति--बूडे छे, ए मोटी खेदनी वात छे ॥ ४६ ॥

अवतरण -- पूर्व गाथामां उत्सूत्र भाषीनु मूढपणु देखाड्यु, हवे शुद्ध पुरुषनो संग करवो अने अशुद्ध पुरुषनो संग त्यागवो ते कहे छे ॥ मूल - सुद्ध विहि धम्म राउं, वढई सुद्धाण संगमे सुअणु ॥ सोविय असुद्ध संगे, निउणाण विगलइ अणुदियहं ॥ ४७ ॥ दोहा - वधे मीत संतसंगथी, वर विधि धरम सुराग ॥ घटे कुसंगे प्रति दिवस, विज्ञनो पण ते राग ॥ ४७ ॥ व्याख्या -- सुअणु--हे सुजन, हे धर्मोपदेश योग्य, सुद्धाण- जे शुद्ध पुरुष, सुसाधु, तथा सुश्रावक होय तेनो संगमे--समागम अथवा परिचय कखाथी सुद्ध विहि धम्मराउं--शुद्ध विधि ते राग द्वेष मल रहित रत्नत्रयी मोक्ष मार्ग विधि तद्रूप जे जिन भाषित धर्म तेनेविषे राग एटले प्रीति वढइ-- वधे छे एटले वृद्धिने पामे छे अने हे सुजन, सोविय--ते पण शुद्ध विधि धर्मनो राग, असुद्ध संगे--अशुद्ध पुरुष एटले उत्सूत्र भाषी पासत्थादिकनो संग अथवा परिचय करवाथी निउणाणवि--निपुण पुरुषो पण अणुदियहं- निरंतर दिन दिन प्रते गलइ--गले छे एटले हाणीने पामे छे त्यारे अनिपुण पुरुषोने हाणी थाय तेमां शु कहेवु ! माटे उत्सूत्रभाषी पासत्थादिकनो संग सर्वथा वर्जवो, अने शुद्ध प्ररूपक आचारवंत पुरुषनो परिचय करवो ॥ ४७ ॥

अवतरण -- पूर्व गाथामां अशुद्ध पुरुषना संगनो त्याग करवो एम कह्यु, एथी एम जाणवु के जे अशुद्ध पुरुष होय छे ते शुद्ध पुरुषनी ऊपर द्वेष करवा वाला होय छे, माटे तेना समीपे बलविनाना पुरुषे वसवु नहीं, ते कहे छे -- मूल -- जो से वइ सुद्ध गुरु, असुद्ध लोआण सो महा सत्तू ॥ तम्हा ताण सयासे, बल रहियो

मा वसिज्जासु ॥ ४८ ॥ दोहा·-- शुद्ध गुरू जे सेवतो, ते अशुद्ध जण शत्रु ॥ तो वल रहित वसो नही, ज्हां असुद्ध जण तत्र ॥ ४८ ॥ व्याख्याः— जो—जे लोक सुद्ध गुरु—निर्मल ज्ञान दर्शन चारित्र गुणे गुणवंत गुरु प्रते सेवइ—सेवे ठे; सो-ते लोक अशुद्ध लोआण—उत्सूत्र भाषी पासठादिकना दृष्टीरागी नक्त लोक, तेउने म हासत्तू—महा शत्रु एटले वैरीना जेवां लागे ठे; तम्हा—ते कारण माटे ताण—ते असुद्ध लोकोना सयासे—समीपे वलरहिउ—धर्मे आश्री निर्नय पणुं अने शरीर ध नादिक शक्ति संपन्न एम अभ्यंतर बाह्य ए बे प्रकारना वले करी, रहितजे होय तेणे मा वसिज्जासु—वसवुं नही; केमके, जे द्वेषी माणस होय ते सारा गुणने पण दूषण दिये ठे; माटे अशुद्ध लोकोना समीपे वसवुं तेमां घणो उपद्रव रह्यो ठे; ते थी बीजे कोई ठेकाणे रहेवुं ते सारुं ठे! ॥ ४८ ॥

अवतरण -- पूर्वे गाथामां खल पुरुषोनी पासे रहेवानुं निवारण कर्युं तेनुं कारण कहेछे.— मूल — समय विऊ असमछा, सुसमछा जछ जिणमए अविऊं॥ तछ न वढइ धम्मो, पराहवं लहइ गुणरागी ॥ ४९ ॥ दोहा·-- जिन मत विड असमर्थ जन, जहां समर्थ अजाण ॥ धर्म न वाधै तह लहे, गुणरागी अपमान ॥ ४९ ॥ व्याख्या.— जछ—जहां समयविऊ—जिन आगमना जाण पुरुष असम छा—क्षेत्र कालादिक दोषेकरीने असमर्थ ठे, अने जिणमए—जिन मतनेविषे अविऊ—जे अविद ठे एटले अजाण ठे; ते सुसमछा—अति कलह, क्लेश तथा मार कूट कर वाने समर्थ ठे; तछ—तिहां धम्मो—शुद्ध विधि धर्म नवढइ—वृद्धिने पामे नही; उ लटुं गुणरागी—गुणानुरागी पुरुष पराहवं—पराजवने एटले तिरस्कारपणाने लहइ—लहे एटले पामेछे, माटे अशुद्ध पुरुषोना समीपे असमर्थ होय तेणे न वसवुं. ॥४९॥

अवतरणः— जे सामर्थ्यवान उन्मार्गी तथा उत्सूत्री होय तेनो जिनमार्गने विषे प्रवेश करवा देवो नही ते कहेछे — मूल — जं न करइ अइ भावं, अमग्ग से वी समछउ धम्मे ॥ ता लठं अहकुज्या, ता पीडइ सुद्ध धम्मठी ॥ ५० ॥ दोहा सबल कुमार्गी धर्ममें, जो न करे अति भाव ॥ तो सुंदर अथ जो करे, तो सुध धर्मि डुख दाव ॥ ५० ॥ व्याख्या — समछउ—मुष्टि चपेटादिक प्रहारनी अपेक्षाए करी कुछित समर्थवंत एवो जे अमग्गसेवी—अविधिमार्गी एटले उन्मार्गनो सेव नार, उत्सूत्रनो बोलनार, सम्यक्त्वरहित लिंगधारी लोक तथा तेउना नक्त लोक ते धम्मे—जिन धर्मनेविषे जं—जो अइभाव—अति भावप्रते नकरइ—करे नही; एट ले त्यां पसारो अथवा प्रवेश करे नही; ता—तो लठं—लष्ट ठे एटले सुंदरछे अह—

अथ जो ते अविधि मार्गना सेवनार लोक जिनधर्मनेविषे अति नाव एटले प्रवेश कुण्या--करे ता--तो सुद्ध धम्मत्थी--शुद्ध धर्मना अर्थी जे नव्य प्राणी ठे तेउनेपी डइ--पीडे एटले अठता आळ प्रदान डुर्वचन हेलनादिके करी डुःख दिये, माटे ते उन्मार्गि लोकोनो जिनधर्मनेविषे प्रसार न थाय एटले आववु न थाय तोज सारुं ५०

अवतरण -- पूर्व गाथामा कह्यु के, समर्थ उन्मार्गीनो जिनधर्मनेविषे प्रवेश थाय तो ते धमार्थीने पीडा करेठे, हवे धर्मार्थी पुरुषोनो कोई परानव करी शके नही ते कहेठे -- मूल - जइ सव्व सावयाण, एगत्त ज तु मिछवायम्मि ॥ धम्मछियाण सुदर, ता कहणु परानव कुण्या ॥ ५१ ॥ दोहा -- मिथ्या वादे होय जो, श्रावक जन सब एक ॥ धर्मी जनकूं वर तदा, किम ये डुख अविवेक ॥ ५१ ॥ व्याख्या - मिछवायम्मि--मिथ्यावादनेविषे सव्व सावयाण--नाम मात्र सर्व श्रावकोनु ज -जो एगत्त--एकत्वपणुं ठे, तु--वळी जइ -जो एकत्वपणु धर्मविधिवादनेविषे धम्मछियाण--धर्मार्थी पुरुषोनु होय ता--तो सुदर--हे सुदर, हे न इ, ते नाम मात्र श्रावक लोक धर्मार्थी पुरुषोनो परानव--परानव अथवा तिरस्कार तु--इति वितर्के कह--केम कुण्या--करे? अपि तु नज करे धर्मार्थी पुरुषानु पण धर्मविधिवादनेविषे एकत्वपणु नथी केमके, ए विषम काळनो प्रनाव ठे माटे नाम मात्र जे श्रावक ठे ते धर्मार्थी पुरुषोनो परानव करेठे एनो नावार्थ आ देरासरनेविषे अमारो तथा अमारा गोत्री होय तेओनो मूल नायकनी पूजा आरती करवानो अधिकार ठे, बीजानो अधिकार नथी तथा चडिकादि गोत्र देवो देवता अमारा पूर्वज मानता आव्याठे, ते अमे तमारा कह्याथी केम मूकीये? नगरादिकनेविषे सुविहितनो प्रवेश थतां पूर्वे कोई समये ओठव थयो नथी ते अमे वेगा थता केम थाय! इत्यादिक जे मिथ्यावाद तेनेविषे नाममात्र श्रावकोनु जे एकत्वपणु ठे, तेमा विधि चैत्यादिक धर्मविधिवादनेविषे धर्मार्थी पुरुषोनु सवपट्टांक एकत्वपणु होय तो हे सुदर, कोई पण धर्मार्थी पुरुषोनो परानव करी शके नही

अवतरण -- पूर्व गाथामां धर्मार्थीनुं वर्णन कह्यु, हवे ते धमार्थीने सहाय करनारा गुणोने कहेठे -- मूल -- तं जयइ पुरिस रयण, सुगुणह्व हेम गिरिवर महग्घ ॥ जस्सा सयम्मि सेवइ, सुविहिरउं सुद्ध जिण धम्म ॥५२॥ दोहा --सुगुण महर्घ महा गिरि, जयसों पुरुष रतन्न ॥ जसु आश्रय आचार रत, करे सुधर्म जतन्न ॥ ५२ ॥ व्याख्या -- त पुरिस रयण--ते पुरुष रत्न जयइ- जयवत ठे, अथवा जयवत थाओ, जस्स सयम्मि--जेना आश्रये एटले जेना आधारे सुविहिर

ठे--सुविधिरत पुरुष एटले विधिमार्गनेविषे तत्पर पुरुष शुद्ध जिणधम्मं कदाग्रहादिक मल कलंक रहित जिनधर्मप्रत्ते सेवइ- सेवेछे एटले आराधेछे, एवो पुरुषरत्न सुगुण इं--औदार्य, धैर्य, गंभीर, क्षमा विनयादिक सुष्ट गुणरूप धनेकरीने सहित छे, वली ते पुरुष रत्न केवो छे? हेम गिरिवर महग्घं—मेरु पर्वतनी परे महर्घ छे एटले अति मह्योंगो अथवा अमूल्य छे. ॥ ५२ ॥

अवतरणः— पूर्व गाथामां कह्यु के, धर्मने सहायता करनारो अमूल्य पुरुष छे; तेनोज फरी पुष्टी करेछे.— मूल.— सुरतरु चिंतामणिणो, अग्घं न लहंति तस्स पुरिसस्स ॥ जो सुविहिरय जणाणं, धम्माधार सया देई ॥ ५३ ॥ दोहा.— ते सुपुरुषके मूलकू, सुरतरु मणी न पाय ॥ विधिरत जनकूं जो दिए, धर्म सहाय्य सदाय॥ ५३ ॥ व्याख्याः— जो- जे पुरुष सुविहि रयणाणं- सुविधि रत लोकोने धम्माधारं- धर्मनो आधार एटले धर्मनो अवष्टंब साह्य, देइ- दियेछे, सया- सदा सर्वदा, तस्स पुरिसस्स—ते पुरुषनो अग्घं—अर्घ एटले मूल ते सुरतरु चिंतामणिणो—कल्पवृक्ष चिंतामणिरत्न उपलक्षणथी कामधेनु कामकुंभ छे ते नलहंति—नथी पामता; केमके. ते पुरुषने शिवसुखदायक अमूलक सम्यक्त्व रत्ननी प्राप्ति छे माटे कल्पवृक्ष चिंतामणि प्रमुख छे ते ते पुरुषना मूलने नथी पामता, एटले तेनी तुलना करी शकता नथी. ॥ ५३ ॥

अवतरण — पूर्व गाथामा धर्मने सहाय्य करनार पुरुषना गुणनुं कीर्त्तन थयुं ते सांभलीने ते सत्पुरुषोतो लज्जाने पामेछे; त्यारे तेनुं गुण कीर्त्तन करवामां फल शुं छे एवी शंकानुं निवारण करवानेअर्थे कहेछे — मूल.— लज्जंति जाणि मोहं, सप्पुरिसा नियय नाम गहणेणं ॥ पुण तेसि कित्तणाउ, अम्हाण गलंति कम्माइ ॥ ५४ ॥ दोहा — लाजे निज नामोच्चरे, हुं मानुं सत पुर्ष ॥ वलि त्हेना गुण गाय हम, कर्म टले कटु तुर्ष ॥ ५४ ॥ व्याख्या.— सप्पुरिसा—सत्पुरुष जे छे ते जोपण नियय नाम गहणेणं—निजक नामनु ग्रहण करवाथी एटले आ दाता, परोपकार कर्त्ता, इत्यादिक गुणे करी सहित पोतानुं नाम सांभलवाथी लज्जंति--लज्जाने पामेछे. जाणिमोहं—एम छे ते हुं जाणुंछुं, तोपण तेसि कित्तणाउ—तेना गुण कीर्त्तन करवाथी पुण—वली अम्हाण—अमारा कम्माइ—ज्ञानावरणादिक पाप कर्म गलंति—गलेछे, एटले क्षय थायछे, माटे सत्पुरुषना गुण कीर्तन निरंतर करवा.

अवतरण.— पूर्व गाथामां सत्पुरुषोनेविषे रहेला गुणोनुं जे वर्णन करवुं ते निर्जरानो हेतु छे एम कह्युं, हवे आज्ञा रहित धर्म सेवनारनी वार्ता कहेछे.—मूल

आणा रहियं कोहाइ संजुयं अप्प ससणठंच ॥ धम्म सेव ताण नय कित्ती नेय धम्म च ॥ ५५ ॥ दोहा -- आण नंग क्रोधादि जुत, आप प्रसस निमित्त ॥ धर्म सेवता लोकने, नही धर्म नहि कित्त ॥ ५५ ॥ व्याख्या -- आणारहिअ-आश्रव हेय, संवर, उपादेय ए वीतरागनी आज्ञा तेणे करी रहित वली कोहाइ सजुय क्रोधादि सयुक्त एटले क्रोध मान माया लोन ए चार कषाये करीने सहित, तथा अप्प ससणठ--आत्म प्रशसाने अर्थे पोतानी शोनाने अर्थे ए प्रकारे धम्म-जिन धर्म प्रते सेवताण -सेवनारा लोकोनी नयकित्ती--कीर्त्ति नथी, एटले विवेकी पुरुष जे छे ते तेउनी श्लाघा करता नथी च-वली नेयधम्म-- ते धर्म पण नही के जे डुर्गतिमां पमता प्राणीने राखे नही ॥ ५५ ॥

अवतरण -- पूर्व गाथामां कह्यु के, आज्ञारहित धर्मना सेवनारनी कर्त्ति नथी होती अने तेउने धर्म पण नथी होतो, तो पण काईक तो कीर्त्ति तथा धर्म थतो हशे, ए आशका दूर करवाने कहेछे — मूल — इयर जण ससणाए, हिछ उस्सुत्त नासिए न नय ॥ ही ही ताण नराण, डुहाइ जइ मुणइ जिण नाहो॥५६॥ दोहा — नीच प्रससाए नणे, उत्श्रुत धीठ निलाज ॥ जो नावी डु ख तेहने, सो जानै जिन राज ॥ ५६ ॥ व्याख्या — इयर जण ससणाए—जिनोक्त धर्मना अजाण इत्तर जन सामान्य लोकोए करेली जे प्रशसा, तेणे करीने हिछ—ह्टि थएला एटले प्रसन्न थया थका उस्सुत्त नासिए—उत्सूत्र नापण करता न नय-जेने नरकादिकनेविषे नमवानुं नय नथी, ही ही -मोटी खेदनी वात छे ताण नराण -ते नरोना अनागत कालसबधी डुहाइ--जे डु ख छे, ते प्रते जइ- जो जिण नाहो—जिननाथ मुणइ—जाणे छे, तो पण ते डु खप्रते समस्त प्रकारे कहेवाने समर्थ नथी, केमके, डुख अनत छे माटे ॥ ५६ ॥

अवतरण — पूर्व गाथामा उत्सूत्र नाषीने अनत डु ख थाय छे एम कह्यु, हवे बोधीने अनत ससार भ्रमणनो नाश थाय छे ते कहे छे — मूल — उस्सुत्त नासगाण, बोही नासो अणत ससारो ॥ पाणच्चएवि धीरा, उस्सुत्त ता न नासति ॥ ५७ ॥ दोहा — बोधि नाश उत्सूत्रिके, जामण मरण अनत ॥ प्राण तजे पण धीर तत, नहि उत्सूत्र नणत ॥ ५७ ॥ व्याख्या -- उस्सुत्त नासगाण-जिनराजना वचनथी विरुद्ध ते उत्सूत्र कहेवाय छे, तेनु नापण करनार एटले बोलनार, तेने बोहीनासो-श्री जिन धर्मनी प्राप्ति ते बोधी सम्यक्त्व तेनो नाश थाय अने अणत ससारो—अनत ससार थाय एटले अनत कालसुधी चार गतिमां भ्र

मवुं थाय ता--ते कारण माटे पाणच्चएवि--प्राण तज्याथी पण एटले प्राण कंठने विषे आव्या हता पण धीरा- बुद्धिमान जे पंमित पुरुष छे ते उस्सुत्तं--जिन वचन थी विरुद्ध न नासंति- बोलता नथी ॥ ५७ ॥

अवतरणः-- पूर्व गाथामां उत्सूत्र बोलवुं नही, एटले जे धीर पुरुष होयछे ते उत्सूत्रनुं बोलवुं अविधि जाणीने त्याग करेछे; हवे ते अविधिनी प्रशंसा पण न करवी ते कहेछेः-- मूल -- मुद्धाण रंजणत्थं, अविहि पसंसं कयावि न करिय्या ॥ किं कुल बहुणो कत्थवि, थुणंति वेसाण चरियाइ ॥ ५८ ॥ दोहाः-- अविधि कीर्ति न कर कदा, रुजु जन रंजन हेत ॥ शुन कुल वधु कि नी किया, वेस्या चरित थुणेत ॥ ५८ ॥ व्याख्याः-- मुद्धाण रंजणत्थं--अजाण लोकोने रंजन करवाने अर्थे अविहि पसंसं--पोतानो गच्छ मूकी बीजानी पाशे जई सामायक पडिकमण शास्त्र श्रवणादिक कांई न करवुं जेम तेम पूजा सामायकादिक धर्मकृत्य करवुं, विधि अविधि कांई न जोवुं, इत्यादिक जे उत्सूत्र तेरूप अविधिनी प्रशंसा एटले नि कारण जे अविधि करवानी अभिलाषा जे अविधिनी प्रशंसा तेने सत्पुरुष कयावि--कदापि एटले कोई काले पण न करिय्या--करे नही; एज वात दृढ करवाने वास्ते अहीं दृष्टांत कहेछेः-- किं--शुं कुलबहुणो-- कुलवधु एटले कुलवान स्त्रीओ कत्थवि-- कोई ठेकाणे पण वेसाण चरियाइ-- पोतानी इच्छाए चालवुं, सरस आहार करवो, अति उद्भव वेश पहेरवो, परपुरुषने नोगववुं, जोबननो लाल मानवो, इत्यादिक वेस्याना जे चरित ते प्रते थुणंति--स्तवे अथवा वखाणे, अपि तु नहीज वखाणे केम के जो तेना वखाण करे तो कलंक लागे. तेम जे सत्पुरुष छे ते अविधिनी श्लाघा करेज नही केमके, जो करे तो तेने उत्सूत्रनो कलंक लागे. ५८

अवतरण:-- पूर्व गाथामां अविधिनी प्रशंसा ते जिन आज्ञाना नंगनो हेतु होवाथी तेनो निषेध कस्यो, हवे ते जिन आज्ञाना नंगनो नय कोईने होयछे ने कोईने नथी होतो ते कहे छे.-- मूल.-- जिण आणा नंग नयं, नवसय नीयाण होइ जीवाणं ॥ नवनय अनीरुयाणं, जिण आणा नंजणं कीडा ॥५९॥ दोहा -- नवनयथी अति नीरु जे, आण नंग नय तास ॥ नवनयथकी अनीरुनें, आणा नंग न हास ॥ ५९ ॥ व्याख्या -- नवसय नीयाण-- नवसतनीत एटले नरकादिकना शेकडा नवथकी बीहोता एवा जीवाणं-- जीव जे छे तेओने जिणआणा नंगनयं-- जिन आज्ञाना नंगनो नय होइ--थाय छे; केमके, ते नवसत नीत जीव एवो विचार करेछे के जो राजानी आज्ञानो नंग कस्यो होय तो बंधादिक अने

क प्रकारना दुःखनी प्राप्ति थायछे, तो जिन आज्ञानो भंग करवाथी जीव निश्चे करी नरकादि चार गतिमां प्राए अनंत कालसुधी अनंत दुःख भोगवे तेमां शुं कहेवुं ! माटे जिन आज्ञाना भंगनो भय सत्पुरुष भवसतभीतने होयछे, अने भवभय अभीरुयाण– जे नरकादिक भवना शोकडायकी नथी बीहोता एवा जे जीव तेओने तो जिण आणाभजण कीडा– जिन आज्ञानो भंग करवो, तथा विराधवु ते क्रीडारूप छे एटले एक हासीरूप छे ॥ ५९ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कह्यु के, जे जीवोने भवनी भीति नथी ते जिन आज्ञाने विराधे छे, एथी एम न जाणवु के, जे शास्त्रोथी अजाण होय छे तेज विराधे छे, अने जे जाण होय ते नथी विराधता ! किंतु शास्त्रना जाण होय छे ते पण कोई दुष्ट कर्मना उदयथी जिन आज्ञाने विराधे एमां काई आश्चर्य नथी ते कहे छे – मूल – को असुआण दोसो, ज सुअ सहियाण चेयणा नहा ॥ धिद्धी कम्माणजओ, जिणोवि लद्धो अलद्धुत्ति ॥ ६० ॥ दोहा –जोनसि सुत युत चेतना, किसो असुतनो दोष॥ धिग् धिग् कर्मनकू यदा, लभय अलभ जिन पोस॥६०॥ व्याख्या – सुअ सहियाण–श्रुत सहित जे लोक छे, तेउने एटले घणा सिद्धांतना जाण लोकोनी ज–जो चेयणनहा–चेतना नाशने पामी एटले जिन आज्ञानी श्रद्धाने अनाथे अभिनिवेश मिथ्यात्वना उदये करी चेतना विपरीत पणाने पामी तो असुआण–अश्रुत लोकोनी एटले जे जिनोक्त सिद्धांत भण्या नथी एवा लोक छे तेउनो को दोसो–शु दोष कम्माण–कर्मने धिद्धि–धिक् धिक् थाउ एटले कर्मने धिकार छे जओ–जे कारण माटे जिणोवि लद्धो–जिन एटले तीर्थंकर, पाम्या छतां पण अलद्धुत्ति- अण लाध्या अथवा अण पाम्या जेवु थयु जमालि प्रमुखने, ते सत्य छे केमके, सिद्धांतमां कह्यु छे के, मनुष्य जन्म अने सिद्धांत सांभळवु दुर्लभ छे ते कदाच सांभळे पण सांभळीने तेनी श्रद्धा आववी परम दुर्लभ छे केमके, मोक्ष मार्ग सांभळीने पण घणा भ्रष्ट थाय छे ॥ ६० ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कर्मने धिकार होजो एम कह्यु, माटे कोईनो उपहास करवा नहीं ते कहे छे - मूल – इयराणवि उवहास, तम कुत्त नाय कुल पसूयाण॥ एम पुण कारि अग्गी, ज हास सुद्ध धम्ममि ॥ ६१ ॥ दोहा – करवु पर उपहासने तें अयुक्त निनदास ॥ कुल प्रसूतके अगनि से धरमविषे जो हास ॥ ६१ ॥ व्याख्या – नाय–हे नाथ इयराणवि उवहास–इतर सामान्य नीच लोकोना पण उपहास करवो न–ते कुल पसूयाण–कुल प्रसूत एटले कुलीन पुरुषोने अयुत–अ

युक्त छे एटले अयहित छे. पुण–तथा सुद्ध धम्मंमि–निर्मल कषाय मल रहित धर्म विषे तथा शुद्ध धर्म हते जं हासं–अज्ञानी लोकोने जे हास्य आवे छे एस– ए होंट अग्गी–वचनथी न कहेवाय; एवो रोंक अग्नि छे केमके. हास्य छे ते कोधा दि कषायनुं कारण छे ते कोड पूर्व संचित तप चारित्रने बाळी भस्म करी नाखे छे. ते जीवने माथे उत्कृष्ट अनंत काळ सुधी कुंभराग्ना, चाकनी पठे संसार कांतारमां भमावे छे. माटे कोईनो उपहास करवो नही ॥ ६१ ॥

अवतरणः– पूर्व गाथामां कह्युं के जे शुद्ध धर्मनो उपहास करे ते अज्ञानी छे, तेने पण जे सुमण सुजन होय ते. परम हित देवानी इच्छा करे एम कहेछेः– मूल – जेसिं जिणिंद वयणे. संतोसो जाण मिच्छ पावम्मि ॥ ताणपि सुद्ध हिय या. परम हिय दाउ मिच्छंति ॥ ६२ ॥ दोहा – मिथ्याले संतोष जस. जिन वर वचने द्वेष ॥ तसु पण सुद्ध मनादिक. परम सुहित उपदेश ॥ ६२ ॥ व्याख्या.– जाण– जेओने जिणिंद वयणे–जिनेंद्रना हास्य कषायादिक दोष वर्जित जे वचन. तेओनेविषे दोसो -द्वेष वर्ते छे अने मिच्छपावंमि–हिंसा जाव मिथ्यात्व दर्शन शल्य अढार पाप तेनेविषे संतोसो–संतोष वर्त्तेछे एटले प्रसन्नता वर्त्ते छे, ताणपि–तेओने पण सुद्ध हियया–निर्मल छे हृदय जेओना एवा जे पुरुष ते परम हियं दाउं इछं ति–सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र मोक्षना उपायरूप परम हित देवाने इछेछे. ॥६२॥

अवतरणः– पूर्व गाथामां कह्यु के, जिनधर्मनो द्वेषी अने मिथ्यात्व पापनो अति रागी होय तेनी उपर पण उपकार करवो तेनुं कारण शुं? ते कहेछेः– मूल – अहवा सरल सहावा, सुअणा सव्वह हुंति अवियप्पा ॥ ढहुंत विसजरा णवि, कुणंति करुण दुजीहाणं ॥ ६३ ॥ दोहाः– सरल स्वभावी सजन व्हे. नि र्विकल्प सब ठोर ॥ मसित साप उपर अपो, करे कृपा क्या ओर ॥ ६३ ॥ व्याख्या.– अहवा–अथवा सरल सहावा–सरल एटले निष्कपट स्वभाव छे जे ओनो एवा जे सुअणा– सुजन एटले संत पुरुष छे ते सव्वह–सर्व स्थानकनेविषे अवियप्पा–इष्ट राग द्वेष विकल्प रहित हुंति– होयछे. एटले शत्रुमित्रनेविषे सम चित्तवर्त्ती होयछे. ढहुंतविसजराणवि दुजीहाणं–मूकी दीधो छे अथवा वमनकर्यो छे मुखथकी विषनो जर एटले समूह जेणे, एवा जे द्विजिह्न एटले सर्प तेओनी उपर पण करुणं–करुणा एटले दया कुणंति–करेछे, त्यारे बीजानी उपर दया करे तेमां ते शुं कहेवुं! अहो सर्प समान दुर्जन अने विष समान तेओनां दुर्व

चन जाणवा एवा डुर्जननी उपर पण जेने दयाजाव वर्त्तेठे एवा सज्ज
हित करवानी इछा केम नही करे। अपि तु करेज ॥ ६३ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां श्रावकनु सम्यक्त्व दृढ करवाने कथन कयु
साधुनु सम्यक्त्व कह्यु नही तेथी एवो विचार थायठे के साधुने सम्यक्त्व ह
ते शका दूर करवाने कहेठे – मूल – गिहि वावार विमुक्के, बहु मुणि लोएवि
ठि सम्मत्त ॥ आलबण निरयाण, सढाण नाय कि जणिमो ॥ ६४ ॥ दोहा
गृह व्यापार रहित घणा, मुनि पण समकित हीन ॥ इह सालबन श्राद्धकू का
ये किसु कुलीन ॥ ६४ ॥ व्याख्या – गिहि वावार विमुक्के–गृहस्थ सबधी अ
गार कर्म्मादिक अनेक प्रकारना व्यापार कुव्यापार थकी विमुत्त–रहित एटले इ
व्येकरी गृहस्थना व्यापारेकरी रहित एवा जे बहुमुणिलोगवि–घणा जे साधु जन
तेउनेविषेपण नहि सम्मत्त–सम्यक्त्व नथी तो आलबण निरयाण–माता पिता
नो आग्रह, पुत्र कलत्र भ्रातादिकनो मोह, श्रेष्टादिकनी दाक्षिणता इत्यादिक जे
आलबन तेनेविषे निरत–तत्पर एटले पूर्वोक्त आलबनोएकरी कुदेव कुगुरु तथा
कुधर्मने सेवता एवा जे सढाण–नाममात्र श्रावक तेउनेविषे सम्यक्त्वनो प्राप्ति
नो नाय–हे भ्रात, कि जणिमो–शु अमे कहिये? केमके जो गृहस्थ व्यापारथा
लबन रहित इव्य मुनिनेविषे सम्यक्त्वनी नास्ति ठे, तो पुत्र कलत्रादिक अने
आलबनोएकरी सहित व्याकुल एवा जे नाम श्रावक तेउनेविषे सम्यक्त्व केम
होय। अपि तु न होय ए जाव ॥ ६४ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामा सम्यक्त्व पामवानो उद्यम प्रथम करवो एम देखाड्यु,
हवे उत्सूत्रनो निषेध करवो ते कहेठे – मूल – नसय न पर कोवा जइ जीअ
उसुत्त जासण विहिय ॥ तावुहिति निघ्रतं, निरछय तवफडा डोर ॥ ६५ ॥
दोहा – किमहिन उत् श्रुत जापवु, उत् श्रुत जाप्यु जोय ॥ ता महि बूडित
जव्य तू निरर्थ जप तप होय ॥ ६५ ॥ व्याख्या – सय–स्वयमेव एटले पोता
नो बुद्धिए करीने न–उत्सूत्र न बोलवु, पर–गुर्वादिकनी अपेक्षाए करीने न–उ
त्सूत्र न बोलवु वा–अथवा कोण जाणे केम ठे केम नथी। जिनागम अति ग
जीरार्थ ठे, विधि जोता तो तीर्थनो उछेद थाय, माटे जेम चाले तेम चलाव्या
जवु एम जे बोलवु ते उत्सूत्र, इत्यादिक उत्सूत्र बोलवु नही तथा कोप–क्रोध
थकी उपलक्षणथी मान माया लोज हास्य जयादिकथी उत्सूत्र न बोलवु जीअ–
रे जीव, जइ–जो उसुत्त जासण–उत्सूत्रनु जाषण एटले कथन विहिय–कयु

ता–तो संसार समुद्रनेविषे बुड्डिसि–तुं बुडीश. निब्भंत–निश्चे तवफडाडोवं–तपनो फटाटोप एटले आडंबर ते उत्सूत्र बोलवाथकी निरच्छयं–निरर्थक छे, एटले फोकट छे. माटे तपक्रियाए करीने संसारथी तूं छूटवानो नथी. ॥ ६५ ॥

अवतरणः– पूर्व गाथामां जेने जिनवचन परिणम्या नथी तेनुं स्वरूप कह्युं, हवे जेने जिनवचन परणम्या छे तेनुं स्वरूप कहेछेः– मूलः– जह जह जिणिंद वयणं, सम्मं परिणमइ सुद्ध हिययाणं ॥ तहतह लोअ पवाहे, धम्मं पडिहाइ नड चरियं. ॥ ६६॥ दोहा – जिम जिम जिनवच सुमनने, प्रगटे सम्यक् प्रकार॥ तिम तिम लोक प्रवाहमें, धर्म जाति नट चार ॥ ६६ ॥ व्याख्याः– जह जह–जेम जेम सुद्ध हिययाणं- निर्मल हृदयवंत पुरुषोने जिणिंदवयणं–जिनेंद्रनां वचन सम्मं–सम्यक् प्रकारे परिणमइ–परिणमे छे एटले अत्यंत रुचेछे, तह तह–तेम तेम लोअपवाहे– लोक प्रवाहनेविषे धम्मं– जे आपमतिनो धर्म छे ते नडचरियं– नट चरित एटले नटना खेलनी परे तेने पडिहाइ– प्रतिभासेछे एटले देखाय छे, तेवा पुरुषोने सम्यक्त्व थाय. ॥ ६६ ॥

अवतरणः– पूर्व गाथामां जिनेंद्र वचन आश्री कह्युं; हवे तेनुंज दृढपणे कथन करेछेः– मूल.– जाण जिणिंदो निवसइ, सम्मं हिययम्मि सुद्धनाणेणं ॥ ताण तिणं व विरायइ, समिच्छ धम्मो जणो सयलो ॥ ६७ ॥ दोहाः– शुद्ध ज्ञान कर जसु हिये, सम्यक वशो जिनेश ॥ तसु आगे तृण जिम दिपे, मिथ्या धर्मि अशेष ॥ ६७ ॥ व्याख्याः– जाण हिययम्मि- जेना हृदयनेविषे जिणिंदो–जिनेंद्र तीर्थनाथ सम्मं–सम्यक् प्रकारे सुद्ध नाणेणं–निर्मल ज्ञाने करीने निवसइ– वसे छे; ताण–तेने समिच्छ धम्मो–मिथ्या धर्म सहित एवा जे सयलो–सकल जणो-लोक छे ते तिणंव–तृणोनी परे अकिंचित्कर एटले कांई हित वल करवा समर्थ नथी एवो ते मिथ्यात्वी लोक विरायइ–विराजे छे, भासेछे एटले देखायछे. ॥६७॥

अवतरणः– पूर्व गाथामां जेना हृदयमां सम्यक् प्रकारे जिनेंद्र देव वगेरे ते जिनधर्मथकी चलायमान थाय नही, एम देखाड्युं. हवे तेथी जे इतर छे तेनुं स्वरूप कहेछे – मूलः– लोअ पवाह समीरण, उद्दंड पयंड चंड लहरीए ॥ दढ सम्मत्त महाबल, रहिआ गुरुआविहल्लंति ॥ ६८ ॥ दोहा.– लोक प्रवाह पवन उदंड, चंड प्रचंड लहरेय ॥ दृढ समकित अति बलविना, गुरुआ पण हल्लेय ॥ ६८ ॥ व्याख्या.– लोअ पवाह समीरण--लोक प्रवाहरूप पवन, तेने उद्दंड– आगम विरुद्ध उठतां वचनरूप अति ऊंची एवी पयंड–प्रचंड दुःखदायक क्रोध

ना वचनरूप माहोमाहे मलेनी श्रेणी जे चम- रोड अतिशय नयकारी एवी ल हरीए-लहेरीयोएकरी प्रेख्या ठता एवा, वली दृढसम्मत्त महाबल रहिया-दृढ स म्यक्त्वरूप महा बलेकरीने मोटा पराक्रमे करीने रहितठता एवा गुरुश्रावि-वा ह्य गुणेकरीने मोटा पण ते हल्लति-हालेछे एटले मोलम मोला थायछे अमुक एम कहेछे, अने अमुक एम कहेछे तेमा कोनु खरु मानिये! आनु के पहेलानु! शु करिये! एवी रीते मोलम मोला थायछे पण तत्व निश्चे करी शकतो नथी ॥६८॥

अवतरण - पूर्व गाथामा लोक प्रवाहरूप पवननी लहेरोएकरी जे प्रेख्या होयछे ते अज्ञानी हायछे, एम कह्यु, हवे तेनु स्वरूप कहेछे - मूल - जिण मय लव हीनाह ज दुःख पावणति अन्नाणी, नाणीण सनरित्ता, नयण हियय थरहरइ ॥ ६९ ॥ टीका - जिनमतनी निंदा करी, जो अज्ञानि दुख पाय ॥ ते सानरि ज्ञानी तणा, नय करि कंपे काय ॥ ६९ ॥ व्याख्या -जिणमय लवहीलाए-स्या द्वादनी एक लवमात्र हीलनाए करी अन्नाणी-अज्ञानी जीव ज दुःक-जे दुःख ते पावणति-पामे छे ते दुःखने सनरित्ता-सनारीने अथवा न सनरित्ता-ते दुःख न सम्भार नाणीण-ज्ञानवान पुरुषानु नयण-नयेकरीने हियय-हृदय थरहरइ-थर थर कंपायमान थाय छे एटले ते अज्ञानी जीवनी उपर अनुकंपा आवे छे वळी पोते पण जिनमतनी हीलना थकी रखेज बीहे छे ए भाव ॥ ६९ ॥

अवतरण - पूर्व गाथामा जिनमतनी हीलना करवाथी अज्ञानी जीव जे दुःखने पामे छे ते दुःखने याद करीने ज्ञानी पुरुषनु हृदय नये करी थर थर कंपे छे एम कह्यु, हवे ज्ञानी जीव अज्ञानीना दोषने जाता नथी ते कहे छे - मूल - ते चार अना यीण मिच्छदिट्ठीण नियमि कि दोस ॥ अप्पाणि वि न याणंति नच्यइ कह्ण सम्मत्त ॥ ७० ॥ टीका - मिथ्यादृष्टि अज्ञानिना दोष जुवे शु धार ॥ नहि ना शुं आतम स्वरूप समकित धार ॥ ७० ॥ व्याख्या - ते जीव-ते नथी जाणता अना यीण मिच्छदिट्ठीण-अज्ञानी ने मिथ्यादृष्टि ते तेउना दोस-जिनमतना हीलनादिक दोष प्रत्ये कि-शु नियमि-नु करवु ते, तु ना तो अप्पाणि-आत्मान पण जिन धा र-शु नथी जाणता ते अनेक रीते दुःख थकी जिनमत आश्रित जिनमतनी हीलना कहेता नथी ए थणा दुःख पाम्या, एम शु तु नथी जाणता? अथवा तु जे वली नच्चइ-सानगणना रचनथी नणाय छे ते सम्मत्त-सम्यक्त्व ज्ञान नो-केम करी अनेकमत उपरनो न्याय प्रमाण अथवा नणाय छे पणम मन अथवा नणाय नहीं ॥ ७० ॥

अवतरण — पूर्वे गाथामां कष्ट करीने सम्यक्त्व जणाय ते एम कह्युं, त्यारे शिष्ये आशंका करी के, गोत्र देवतादिक तथा पालक्षादिकने पूजतां लोकवृत्तिए करीने कोइएक रुची जाय तेमां शुं दोष छे ? इच्छा तो शुद्ध जिनधर्मनी छे? एनो उत्तर कहेछे — मूल — मिच्छत्त मायरंतवि, जे इह वंछंति सुद्ध जिण धम्मं ॥ तेग ह्यावि जरेण, भुत्तुं इच्छंति खीराई ॥ ३१ ॥ दोहा — आचरता मिथ्यात्वने, जे चाहत जिन धर्म ॥ ज्वर पीडित ते पय पिवा, वांछे विकल विशर्म ॥३१॥ व्याख्याः— मिच्छत्त मायरंतवि—कुदेव, कुगुरु, कुधर्म सेवनरूप मिथ्यात्वने आचरतां अथवा ते वतां लोकनी वृत्तिए करी कोइएक दिवसे पण जे—जे पुरुष इह—आ जगतनेविषे सुद्ध जिणधम्मं—निर्मल जिन धर्मने वंछंति—वांछे छे. ते पुरुष जरेणं—ज्वरे करीने एटले तापे करीने थह्यावि—ग्रस्त एटले पीडाता थका पण खीराइ—क्षीरादिकप्रते भुत्तुं—खावाने इच्छंति—इच्छे छे, एवा न्याय करेछे. एटले जे मिथ्यात्वप्रते सेवतो थको जिनधर्मनी इच्छा करेछे ते करवु तेनुं सर्व नव दुःखने अर्थे छे. ॥ ३१ ॥

अवतरण — पूर्वे गाथामां मिथ्यात्वने आचरतो छतो पण जे जिनधर्म करवानी इच्छा करेछे. एम कह्युं. हवे तेना दोष देखाडता छतां दृष्टांत सहित दार्ष्टांत कहेछे.— मूल.— जह केइ सुकुल वहुणो. सील मयलंति लिंति कुल नामं ॥ मिच्छत्त मायरतवि, वहंति तह सुगुरु केरत्तं. ॥ ३२ ॥ दोहाः— जिम केइक सुकुल वधू. व्रत हत लियकुल नाम ॥ आचरता मिथ्यात्व तिम, वहे सुगुरु अनुगाम.॥ ॥ ३२ ॥ व्याख्या — जह—जेम केई—कोइएक सुकुल वहुणो—सारा कुलमां उत्पन्न थएली स्त्रीओ सील मयलंति— अंग उपांग गोपीने राखवां, पर पुरुषोनी साथे वातो न करवी. अति उद्भट वेष न पहेरवो, नीची दृष्टि करी चालवुं, कामविकारनी कथा न करवी, घरने बारणे ऊभा न रहेवुं, बारी गोखलानी बाहर मुख कहाडीने न जोवु, लाज तथा शरमने मूकीने वातनो विस्तार न करवो. आलस न मोटवुं, जाणी जोईने बगासा न नाखवां, कडकडां न कहाडवां, पर पुरुषने प्रेम सहित न जोवुं, कार्यविना कोई सगावालाने घेर पण न जावुं, इत्यादिक शील आचारने मलीन करती छती लिंतिकुलनामं—सेनापति, गाथापति श्रेष्टी इत्यादि मोटाना कुलनुं नाम लेती एटले अमे मोटा कुलनी छैए, एम कहेती मोटा कुलने कलंकित करेछे तह—तेम मिच्छत्त मायरतवि—कुदेव तथा कुगुरुसेवा, अने उत्सूत्रप्ररूपणादिक मिथ्यात्वने आचरतां छतां पण नामसाधु अने नामश्रावक ते सुगुरु केरत्तं—सौधर्मा स्वामी प्रमुख सुगुरुना केडवापणाप्रते वहंति— वहेछे एटले धारण

करेछे अर्थात् पोते उत्सूत्री अनाचारी छतां संविज्ञ गीतार्थ सुगुरुना केडवापणाने धारेछे ते उलटुं आचारवंत गुरुने उत्सूत्री अनाचारी लोकमांहे प्रसिद्ध करेछे पण ते बापडाने अज्ञानने वसे खबर पडती नथी ॥ ७२ ॥

अवतरण -- पूर्व गाथामां मिथ्यात्वनुं आचरण करतां घणा दोष लागेछे एम कह्युं, हवे उत्सूत्रविषे वात कहेछे -- मूल -- उस्सुत्त मायरतवि, ठवति अप्प सु साव गत्तम्मि ॥ तेरुद्दरोरघछवि, तुलंति सरिस धनढ्ढेहिं ॥ ७३ ॥ दोहा -- आच रता उत्सूत्र जे, मानै आपसुसढ्ढ ॥ रांइ दरिद्दे दु खि ते, तुले साथ सुधनढ्ढ॥७३॥ व्याख्या --उस्सुत्त मायरतवि--अविधिए जिनपूजा सामायक पडिकमणादिक उत्सूत्र प्रते आचरता छता पण एटले सेवतां थका अने जे सुसावगत्तम्मि--सुश्रावकपणा नेविषे अप्प--पोताने ठवति- स्थापेछे ते--ते पुरुष शुं करेछे ! रुद्दरोरगछवि--रौद्र रोरेकरी एटले अतिशय दारिद्रे करी ग्रस्तछतां पण एटले पीडया थका अने धणढेहिं सरिस--धनाढयनी साथे एटले महाधनवाननी साथे तुलंति- तुलना करे छे, एटले पोतें दारीद्री छतां धनाढयनीसाथे बरोबरीपणुं करेछे ॥ ७३ ॥

अवतरण -- पूर्वे गाथामां उत्सूत्र बोले ते मूढ कहेवाय एम कह्युं, हवे जे मूढ होय ते न्याय जाणे नही ते कहेछे -- मूल -- किवि कुल कमम्मिरत्तो, किवि रत्ता सुद्ध जिणवर मयम्मि ॥ इय अंतरम्मि पिछह, मूढा नाय न जाणंति ॥ ७४ ॥ दोहा -- केइ कुलाचारे रता, केइ रत जिन मतमांहि ॥ जुओ भ्रात इति अतरे, लखे न्याय सठ नांहि ॥ ७४ ॥ व्याख्या -- किवि--केटलाएक पु रुष छे ते कुलकम्ममि--कुल कर्मनेविषे एटले सत्य असत्य विचार रहित, अ विधि मल कलंक सहित, लोक प्रवाहनेविषे रत्ता--रक्त छे एटले आसक्त छे, अने किवि--केटलाएक पुरुषो छे ते सुद्ध जिणवरमयम्मि--निर्मल अविधि मल कलंकरहित अनेकांत स्याद्वाद जिनवर मतनेविषे रत्ता--रक्त छे एटले सावधान छे, इय--ए प्रकारे अंतरम्मि--पुरुषोमा प्रगट अंतर छतां कुलक्रम मिथ्यात्वनेविषे जे रक्त ते अविवेकी, अने शुद्ध जिनमतनेविषे जे रक्त ते विवेकी, ए प्रकारे पुरुषो मां प्रगट अंतर छे ते मूढा--मूढ ज्ञान विकल प्राणी नायं--न्यायने नयाणंति--नथी जाणता एटले कुलक्रम छे ते संसारनो हेतु छे, शुद्ध जिनेंद्रमत छे ते मोक्ष नो हेतु छे ए खरे खरो जे न्याय तेने नथी जाणता पिछ--हे श्रोताओ तमे जुओ ए केटली आश्चर्यनी वात छे ! ॥ ७४ ॥

अवतरण -- पूर्वे गाथामां कह्यो जे न्याय ने विपरीतपणे जाणीने कोई एक

जीव मिथ्या दृष्टि पाखंमीउनो संगमात्र मूके पण तेणे कहेलो धर्म मूकी दिये नही ते अयुक्तपणुं छे एम कहे छे.– मूलः– संगोवि जाण अहिउ, तेसिं धम्माइ जे पकुव्वंति ॥ मुत्तूण चोर संगं, करंति ते चोरियं पावा ॥ ७५ ॥ दोहा.– अहि तकारि जसु संग पण, जे तसु धर्म करेय ॥ चोर संग तजि चोरिने, करे पापि न र तेय ॥ ७५ ॥ व्याख्याः– जाण–जे मिथ्यादृष्टि पाखंमीउनो संगोवि–संगपण अहिओ–अहितकारी छे, जन्म जरा मरणादिक दुःखने देवा वालो छे; तेसिं–ते मिथ्यादृष्टि पाखंमी लोकोनुं कथन करेलुं थापेलुं जे धम्माइ–पाप नवमी चामुंडा कालिकादिक पूजना प्रमुख धर्म तेने जे– जे पुरुष पकुव्वंति–अतिशय करीने करे छे ते पावा–पापी जुओ शुं न्याय करे छे! चोरसंगं–चोरना संगने मुत्तूण–मूकीने एटले सूली आरोपण, कान नाशिकादिक छेदन जेमां कांइक संशय हतो ते चोर नो संग मुकीने तेना संगथी संतोष न पामीने पाप मति ते चोरीयं–चोरी पणा प्रते करंति– करेछे; एनो जाव–जेमां शूली देवानो अथवा कान नाशिकादिक छेदन क रवानो कांइ पण संशय नथी एवी जे चोरी तेने करे छे जुवो ए केटलो अज्ञान छे.

अवतरण.–पूर्व गाथामां मिथ्यात्वीना धर्मनी स्थापना करे ते पापी कहेवाय एम कह्यु, हवे तेज वात विशेषे करी कहे छे – मूलः– जह पसुमहिस लरका, पव्वं होमंति पाव नवमीए ॥ पूअंति तंपि सढ्ढा, हा हीला वीयरायस्स ॥ ७६ ॥ दोहाः– पातक नवमी पर्वमें, पसु मरता जसु पास ॥ तेने पूजित श्राद्ध जन, हा जिन हेला हास ॥ ७६ ॥ व्याख्याः– जह–जे स्थानकनेविषे तथा जे चामुंडा कालिका ज्वाला प्रमुखनी आगल पाप नवमीए पव्वं–पाप नवमी शुक्र आसु चैत्र संबंधी नवमी तिथी प्रमुख जे पर्व तेनेविषे पसुमहिस लरका लाखो गमे पशु ता ग बोकडा महीष पामा उपलक्षणथी मनुष्य सूकरादिक होमंति–होमाया जाय छे, मराया जाय छे, रुधिरना कर्दम थाय छे. तंपि–ते चामुंडादिक देवीओप्रते सढ्ढा–कुल क्रमथी चालतुं आवेलुं ग्रहण कर्युं छे जिनमत जेणे. ते श्रावक लोक पूअं ति–पूजे छे, हाथ जोडे छे, मस्तक नमावे छे, नैवेद्यादिक चडावे छे, जे श्रावक ना म धरावीने एम करे छे ते हा–इति खेदे करी वीयरायस्स–वीतराग देवनी हीला–हीलना एटले निंदा करे अथवा करावे छे; मिथ्यात्वी लोक एम बोले छे जे जगारुक रुधिर घणो पण जे मरे, एक कीडाना मरवाथी बीहे, एवा श्रावक लोको आवी आवीने अमारी चामुंडा देवीने पूजे छे माटे जैनना देवथकी अमारी चामुंडादि

तं. सगमं कढंति केवि धुरि धवला ॥ तह मिछाउ कुडुंबं, इह विरला केवि कढं ति ॥ ७९ ॥ दोहाः— जिम कादव खूतो शकट, काढे केइक धोरि ॥ तिम कुटुंब मिथ्यात्वथी, काढे केइ सजोर ॥ ७९ ॥ व्याख्याः— जह— जेम केवि केटलाएक धु रिधवला— प्रधान वृषन ठे ते अइकलम्मिखुत्तं— अति कादवमां खूतेलुं एवुं जे शगमं— शकट एटले गाडुं तेने कढंति—कहाडेठे : तह— तेम इह— आ दूसम आ रानेविषे केविविरला— केटलाएक विरला हलुकर्मी आसन्न सिद्धि कदाग्रह रहित पुरुष ठे ते मिछाओ— पूर्वोक्त मिथ्यात्वरूप कादवमांथी कडुवं— पोताना पुत्र क लत्रादिक कुटंब परिवारने कढंति—कहाडेठे, अने जिनभाषित धर्मनेविषे जोडेठे पण सर्व प्राणी जोडवा समर्थ नथी. ॥ ७९ ॥

अवतरण -- पूर्व गाथामां मिथ्यात्वमां पडेला जे कुटुंब तेने कोई विरला पुरु ष कहाडे पण वधा कहाडी शके नही एम कह्यु, पण जिनदेवने जोवाथकी सर्व जीव सम्यक्त्व पामशे ते शंका निवारण करवाने वास्ते कहेठे.— मूल -- जह व द्दलेण सूरं, महियल पयडंपि नेय पिछंति ॥ मिछत्तस्स य उदए, तहेव न नियं ति जिण देव ॥ ८० ॥ दोहाः— जैसे महितल प्रगट भी, घन युत रवि न दि खाय ॥ तैसे उदय मिथ्यात्वके, नहि दीसत जिनराय ॥ ८० ॥ व्याख्याः— महि यल पयडंपि सूर—घट पटादिक वस्तु देखाडवाथकी महीतल पृथ्वीमंमलनेविषे प्र गट एवो जे सूर्य, तेने पण जह—जेम वद्दलेण--वादलाए करीने एटले मेघ घटाए करीने लोक नेयपिछंति--नथी देखता. तहेव--तेमज मिछत्तस्सय उदए--पूर्वोक्त मिथ्यात्वनो उदय थयो ठतां जिणदेवं--जिनदेव प्रत्ये लोक न नियंति--नथी देख ता, च शब्दथी सुगुरु तथा सुधर्म प्रत्ये पण नथी देखता, जेम वादलाएकरीने सू र्यनो विंव देखाय नही, तेम मिथ्यात्वना उदयथी सुदेव सुगुरु देखाय नही वादल खशी जाय त्यारे सूर्य देखायठे; तेम मिथ्यात्व टल्याथी जिनदर्शन थाय ठे. एटले त त्वथकी जिनदेवनुं स्वरूप उलखाय ए भाव; पण वीजी रीते नही एम जाणवुं. ८०

अवतरण -- हवे मिथ्यात्वनो उदय थयाथी जीव मिथ्यात्वनेविषे आसक्त था यठे, अने गुणी पुरुषनेविषे मत्सर करे ठे, एवा जीव थायज नही तो सारुं ते कहेठेः— मूलः— किं सोपि जणणि जाओ, जाणो जणणीइ किं गओ विद्धिं ॥ ज इ मिछरओ जाओ, गुणेसु तह मछर वहइ ॥ ८१ ॥ दोहा -- किम ते जायो जणनिये, जायो तो किं पुष्ट ॥ मिथ्या मगन थयो जदी, तिम गुण मछरि दुष्ट ॥ ॥ ८१ ॥ व्याख्या.-- किं—शुं सो--ते अपिनिश्चे जणणिजाओ— ...यो,

जणणीइ–जो माता ए जायो–जन्म्यो तो ते विद्धि–वृद्धिने किं–केम गयो–पा
म्यो ! एटले ते पुष्ट केम थयो ! एम केम कहेवु पडयु ! जइ–जो मिछरओ–मि
थ्यात्वनेविषे रत एटले आसक्त एहवो जाओ–थयो वली जो गुणेसु–सम्यक्
ज्ञान दर्शन चारित्रादि गुणे युक्त जे पुरुष तेनेविषे तह–तथा समुच्चय अर्थनेविषे
मच्छर–मत्सर इर्षा एटले द्वेषभाव प्रत्ये वहइ–वहेछे, करेछे एटला वास्ते हे शिष्य,
कहवु पडयु जे ते माताए केम जन्म्यो ! अने जो माताए जन्म्यो तो केम ते वृ
द्धिने पाम्यो ! केमके पूर्वोक्त जे लौकिक लोकोत्तर मिथ्यात्व, तेनेविषे पोते प्रवृ
त्ति करवाथी परने प्रवृत्ति कराव्याथी अने गुणी पुरुषनेविषे द्वेषबुद्धि करवाथी प्राए
अनंत भवभ्रमण छे वली कुपुत्रनी माता पण प्राए सारी होती नथी, कदाच
कोई सारी होय तो कुपुत्रने जोगे माताने मलिनता आवे माटे कुपुत्र न जन्म्योजसारुं

अवतरण – पूर्व गाथानो अर्थसांभलीने कोई बोल्यो के, देव तथा देवी प्रमु
ख आपणने कोई उपद्रव करे नही माटे मानीए छैए ते शंका दूर करवाने कहेछे –
मूल – वेसाण वंदियाणय, माहण डुंबाण जरकसिरकाण ॥ भत्ताजरकठाण, वि
याण जंतिदूरेण ॥ ८२ ॥ दोहा – वेस्या ब्राह्मण भाट डुंब, जक्षसिद्ध इन कया।
नइ भ्यार मनगत भे, विरतीथी अजगाय ॥ ८२ ॥ व्याख्या – वेसाण–वेश्या
नो वंदियाण–चारण भाटादिक लोकोनो माहण डुबाण–ब्राह्मण लोकोनो डुंबो
नो, जरक सिरकाण–जक्ष व्यंतर देव शेष गणेशादिकनो एटले मिथ्या दृष्टि देवी
देवताओनो भता–भक्त अथवा सेवक छे तेज तेओनो जरकठाण–जक्षने मागवा
नुं स्थानक छे एटले वेश्या चारण भाटादिक सरिखा जे मिथ्यादृष्टि देव देवीओने
माने अथवा पूजेछे तेओनेज ते आवीने नडेछे अने दुःख दियेछे, ते तेथानीन पासे
थी जइ मागेछे पण विरयाण–विरति पुरुषोथकी दूरेण–दूर जंति–जायछे ए
मे ते मिथ्यादृष्टि देव देवीना त्यागी छे, वंदन नमस्कारादिक आदर पण कांई
करता नथी तेथकी ते देव देवीओ दूर जायछे ॥ ८२ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामा विरति पुरुषोथकी मिथ्यादृष्टि देवता दूर जायछे एम
कह्यु, माटे विरति पुरुष शुद्ध मार्गनेविषे सुखे चालेछे ते कहेछे – मूल – सुद्धे मग्गे
जाया, सुहेण गछंति सुद्ध मग्गंमि ॥ जे पुण अमग्ग जाया, मग्गे गछंति तं चुज्ज ॥
॥ ८३ ॥ दोहा – सुगं सुद्ध माग्ग चलै, थया सुद्ध मग जेय ॥ जात कुमार्गी मा
र्गमें, अचरज तेय ॥ ८३ ॥ व्याख्या – सुद्धे मग्गे जाया–शुद्धमार्गनेविषे उ
त्पन्न थया एटले जे शुद्ध परंपराए साधु श्रावकना कुलनेविषे उत्पन्न थया ते

जीव सुद्ध मग्गम्मि–सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र रूप निर्मल जे मोक्षमार्ग तेनेविषे सुहेण–सुखे सुखे गच्छंति–गमन करेछे. एटले जायछे, एमां कांई आश्चर्य नथी. पुण–वली जे–जे प्राणी अमग्ग जाया–कुमार्गनेविषे उत्पन्न थया ते एटले अन्य दर्शननेविषे तथा उत्सूत्र भाषी उन्मार्गे चालनार जैनाभास निन्हव पासत्था ओसन्नादिकना कुलनेविषे उत्पन्न थया ते जीव सुगुरुना मुखनी वाणी सांभलीने मग्गे–मोक्षमार्गनेविषे गच्छंति–गमन करेछे अथवा जायछे. तं–ते चुज्जं–आश्चर्य छे ॥८३॥

अवतरणः– पूर्व गाथामां कह्युं जे कुमार्गनेविषे उत्पन्न थया ते मोक्षमार्गे चाले ते मोटो आश्चर्य छे. एवुं सांभलीने कोई कहेछेके एमां शुं आश्चर्य छे? ए आशंका दूर करवाने कहेछेः– मूलः– मिच्छत्त सेवगाणं, विग्घसयाइंपि बिंति नोपावा ॥ विग्घ लवंमि विपडिए, दढ धम्माणं पणच्चंति ॥ ८४ ॥ दोहा– मिथ्यात्वीके विघन सत, पण बोलत नहि दुष्ट ॥ पडे विघन लव धर्मिके, तो नाचे अघ पुष्ट ॥ ८४ ॥ व्याख्या.– मिच्छत्त सेवगाणं– मिथ्यात्वनुं सेवन करनार, एटले कुदेव कुगुरु मिथ्यादृष्टि देवी देवताना पूजनारने विग्घसयाइंपि–रोग सोग भय कष्ट मरणादिक सेंकडा गमे विघ्न थायछे, पण ते सेंकडा विघ्नोना समूह प्रत्ये पावा– जे पापी मिथ्यात्वी लोक छे ते नो–नथी बिंति– बोलता अने दढधम्माणं–दृढ धर्मी पुरुषोने विग्घ लवंमि विपडिए– लवमात्र विघ्न पडवाथी पण एटले लगारेक खास श्वास ज्वरादिक थवाथी पण ते पापी मिथ्यादृष्टि लोक पणच्चंति–अतिशय करी नाचे अथवा कूदेछे; दृढ धर्मी पुरुषोनो अवर्णवाद बोलेछे माटे जे कुमार्गनेविषे उत्पन्न थईने शुद्ध मार्गनेविषे चाले ते मोटो आश्चर्य जाणवो. केम के कुमार्गमां उत्पन्न थईने सुमार्गे चाले एवो संभव थतो नथी. ॥ ८४ ॥

अवतरण.– पूर्व गाथामां कह्युं के जे पापी लोक छे ते दृढ धर्मी पुरुषोने लगारेक विघ्न पडे ते जोईने नाचेछे; केमके, तेओते उन्मार्गनेविषे उत्पन्न थया एवुं जाणता नथी ते कहेछे – मूल:–सम्मत्त संजुआणं, विग्घंपि हु होइ उदय समयंमि॥ परमुच्छवपि निच्छ. ण तंचुज्जं अइ महाविग्घं. ॥ ८५ ॥ दोहा.– समदृष्टी के विघन पण, उछव सरिखो होय ॥ अनि उछव मिथ्यात्व हत. महा विघ्न सम जोय ॥ ८५ ॥ व्याख्या.– सम्मत्त संजुआणं–सम्यक्त्व सहित पुरुषोने विग्घंपि हु–मरणादिक विघ्न पण निश्चये करी उदय समयंमि–उदयकाले होइ–थायछे केमके, सम्यक्त्ववान प्राणी आ लोकनेविषे नाम नवकारादिक शुभकरणी करतांथकां होयछे. ते मरीने पण प्रधान देवगतिने पामेछे. माटे तेने मरणादिक विघ्न उत्सव

ब्यछे, अने जे मिछत्त सजुत्त–मिथ्यात्व सयुक्त छे ते परमुछवपि–परम उत
त्सव छतां पण अइ महाविग्घ–अति महा विघ्नयुत छे केमके मिथ्यादृष्टि
महा मोह मिथ्यात्व दवानलने योगे सततात्मा होयछे माटे अहीं डुखी
मरीने डुर्गतिनेविषे जायछे एवी रीते परलोकनेविषे पण डुखी थायछे ते
उन्मार्गीमां जे उत्पन्न थाय ते जाणता नथी ॥ ७५ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कह्युं के, सम्यक्त्ववान प्राणीने विघ्न पण उत्सव
जेवो थायछे, ते केवी रीते ते कहेछे – मूल – इदोवि ताण पणमइ, हीनतो नियय
रिद्धि विछार ॥ मरणते वि हु पत्ते, सम्मत्त जे न छडुति ॥ ७६ ॥ दोहा – निज स
पतकू हीजतो, नमे इड पण तास ॥ जे समकित छांडे नही पडे मरणकी त्रास
॥ ७६ ॥ व्याख्या – हु–निश्चेकरी मरणतेवि पत्ते–मरणात समय प्राप्त छता पण
एटले कंठगत प्राण थया छता पण जे–जे पुरुष सम्मत्त–जिनोक्त तत्व श्रद्धान
सम्यक्त्वने न छडुति–नथी मूकता ताण–ते पुरुषोने इदोवि–देवेंद्र पण पणमइ–
प्रणाम करेछे ते शु करतो थको प्रणाम करेछे ? नियय रिद्धिविछार–निजक स
धी एटले पोता सबधी ऋद्धि समृद्धिनो जे विस्तार तेने हीनता–हीनता करत
थको एटले तृण तुल्य मानतो थको प्रणाम करेछे ॥ ७६ ॥

अवतरण –पूर्व गाथामा कह्युं के, कंठगत प्राण छता पण सम्यक्त्वनो त्याग
करता नथी एहेवु दृढपणु होवानु कारण शु छे ते कहेछे – मूल – छडुति निय
य जीयं, तिणव मुरकछिणो न उण सम्म ॥ लप्भइ पुणोवि जीय, सम्मत्त हारिय
कत्तो ॥ ७७ ॥ दोहा – मोक्षार्थी तृण जिम तजे, निज जीवित न समत्त ॥ जी
वित वनि पण पामिये, हुय्यु न समकित कत्त ॥ ७७ ॥ व्याख्या – मुरकछिणो–
जे मोक्षनो अर्थी छे ते नियय जीय–पोताना जीवितने एटले आयु तथा प्राण
ने तिणव–तृणनी पठ छडुति–छांडेछे अथवा त्यागी दियेछे उण–पुन एटले वर्ना
सम्म–सम्यक्त्वने न–नथी मूकता शु जाणीने नथी मूकता ? जीय–जीवित छे
ते ता पुणोवि–वली पण लप्भइ–प्राप्त थशे, केमके ज्या सुधी मोक्ष नथी त्यां
सुधी जीवित ता जन्म जन्मनेविषे छे, पण सम्मत्त हारिय–सम्यक्त्व रत्न हार्यु
कत्ता–क्याथी प्राप्त थाय केमके सम्यक्त्व रत्न हार्यु फरीने प्राप्त थवु अति डु
र्लभ छे एम श्रीवीतराग कह्युं छे माटे पोताना जीवितनो त्याग करवो पण मो
क्षनो अर्थी सम्यक्त्वना त्याग करता नथी ॥ ७७ ॥

अवतरण – पूर्वे गायामा सम्यक्त्व हार्यु फरी प्राप्त थवु दुर्लभ कह्युं ते ना

नी पूया–जल पुष्प चंदन धूप दीपादिरूप विधिपूर्वक पूजा ते सम्मत्त गुण
सम्यक्त्व ज्ञानादिक गुणनी कारिणी– करवा वाली तथा सम्यक्त्व ज्ञानादि
ए प्रगट करवाने कारणभूत भणिआ–जिनागममा कही छे सावि य– वनी
ण पूया– तीर्थंकरनी पुष्प चदनादिरूप अविधि पूर्वक पूजा ते मिछत्तयरि–
थ्यात्वनी करनारी भिण समये–जिन आगमनेविषे देसिआ–देखाडी छे एम ज
पोने अहो भइ तीर्थंकरनी विधिपूर्वकज पूजा करवी श्रेय छे ॥ ९० ॥

अवतरण –पूर्वे गाथामां जे तत्वने जाणनार होयछे ते विधिपूर्वक जिनपूजा क
रे एम देखाड्यु पण एवी रीते तत्वने जाणनार कोण होय छे ते कहेछे–

मूल – न न भिण आणाए ते चिय मन्नइ न मन्नए सेस ॥ जाणइ लोयपवा
हे न हु तन सा अ ननिक ॥ ९१ ॥ दोहा – जो जा जिन आज्ञा सहित,
तहिन मानें नाय ॥ और न मानें तत्व नक, लोकिके विद सोय ॥ ९१ ॥ व्या
ख्या – जे जे भिण आणाए–जे जे वचन जिन आज्ञाए करीने छे ते चिय–तेवज
वचन मन्नइ–ते पुरुष मानेछे सेस–ते टाली ओर जिन आज्ञा विरुद्ध जे वचन
तेने न मन्नए– नथी मानता पण जे हु–निश्चे लोयपवाहे– लोक प्रवाहनेविषे
रहेला सार पदार्थ कांइ पण न–नथी जाणइ–जाणता सा–
त पुरुष तत्वाविक–तत्वज्ञानी जाणतां पण एथी बीजा कांई तत्वना जाणनथी॥९१॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कह्यां जे अर्थ, ते प्रगट करवाने अर्थ उपनय म
हित निगमन करतां छतां एटले समाप्ति करतां छतां कहे छे – मूल – भिण आ
णाए धम्मो आणा रहियाण फुड अधम्मुत्ति ॥ इय मुणि ऊणय तत्त जिण आ
णाए कुणह धम्म ॥ ९२ ॥ दोहा – आणा रहित अधम कुर धम जिनाज्ञा
सार ॥ ९२ ॥ व्याख्या – भिण आ
णाए–जिन आज्ञाए करीने धम्मो– क्षमा दयादिकरूप धम ते आणा रहियाण–
आज्ञा रहित ते पुरुष तन फुड– प्रगटपणे अधम्मुत्ति– इत्यादि पद समाप्तिने अर्थे इय–ए प्रकार तत–
स्वरूप जाणीने मुणि ऊणय धम अधम बन्नेनो स्वरूप जाणीने भिण आणाए– जिन आज्ञाए करीने
धम कुणह– धम करो ॥ ९२ ॥

अवतरण – पूर्व गाथामां कह्युं जिन आज्ञाए धर्म करो एम कह्यु

[illegible] मानवना नथी जाणतान पद [illegible]

तेने दोष देखाडतां छतां कहेछे:- मूलः- साहीणे गुरु जोगे, जे नहु निसुणंति सुद्ध धम्मत्थं ॥ ते दुठ चिठ चित्ता, अह सुहमा भवभय विहूणा ॥९३॥ दोहाः- भवभय रहित सुभट तथा, दुष्ट धीठ नर तेय ॥ छते सुगुरु स्वाधीन जे, शुद्ध धर्म न सुणेय ॥ ९३ ॥ व्याख्याः- साहीणे-स्वाधीन पणुं छतां गुरुजोगे-शुद्ध धर्मोपदेशक गुरुनो योग समागम छतां जे-जे पुरुष सुद्ध धम्मत्थं-शुद्ध धर्मार्थप्रतें एटले विषय कषाय मलरहित सम्यक् ज्ञान क्रियारूप धर्म परमार्थने हु-निश्चे न नथी, निसुणंति-सांभलता. ते-ते पुरुष केवा छे? दुठधिठ चित्ता-दुष्ट धीठ चित्तवा ला जाणवा एटले रागद्वेष मिथ्यात्व कदाग्रह सहित चित्त ते दुष्ट चित्त कहिये; वारंवार कहिये तोपण कुचाल छोडे नही ते धीठपणुं; ते धीठपणाए करी ...त चित्त होय ते धीठचित्त कहिये एवा चित्तवाला अह-अथवा ते केवा ? भवभय विहूणा-संसार भ्रमणरूप संग्रामना भयथकी विहूणा-रहित

ठक्कुराणवि, आणा भंगेण होइ मरण दुहं ॥ किं पुण तिलोअ पहुणो. जिणिंददेवाइ देवस्स ॥ ए८ ॥ दोहाः- एक मर लघु नृपनी, आण भंगथी थाय ॥ सुंवली त्रिभुवन नृपनी, आण हणे कहवाय ॥ ए८ ॥ व्याख्याः- इयराण ठक्कुराण वि-इतर बीजापण ठाकुर सामान्य राजाओनी आणा भंगेण-आज्ञाभंग करवाथी मरण दुहं-मरणादिक दुःख होइ-होयछे. तो तिलोयपहुणो-त्रिलोकना प्रभु एटले स्वामी एवा जिणिंद देवाहिदेवस्स-जिनेंद्र देवाधिदेवनी आज्ञा भंग करवाथी अनंत जन्म मरण थाय ते दुःखनुं किंपुण-शुं वर्णन करिये! अनंत दुःख कही शकाय नही संविज्ञ गीतार्थेनी परंपराथी चालतो आवेलो जे अर्थ, तेने प्रमाण न करवुं एटले मानवुं नही ते आज्ञा भंग कहेवायछे. ॥ ए८ ॥

अवतरणः-पूर्व गाथामां जिन आज्ञानो भंग करवाथी अनंत दुःख थायछे एम कह्यु, पण जेओ दया धर्मनेविषे उद्यमवान होयछे, तेओने जिन आज्ञाएकरी शुं थायछे ते कहेछेः- मूल - जग गुरु जिणस्स वयणं, सयलाण जिआण होइ हिय करणं ॥ तातस्स विराहणया. कह धम्मो कहणु जीवदया. ॥ एए ॥ दोहाः- जगहितकर जिनवर वचन, ते कारण भविलोय ॥ तास विराधे धर्म किम, जीवदया किम होय. ॥ एए ॥ व्याख्याः- जगगुरु जिणस्स-त्रण जगना गुरु एवा जे श्रीजिनवर, तेमनुं-वयणं-वचन कहेवुं छे ? सयलाण जियाण- एकेंद्रियथी लईने जावत् पंचेंद्रिय सकल जीवोने हिय करणं-हित करनार एटले कल्याणनुं करनार होइ-छे. ता-ते कारणमाटे तस्स-ते जिनवचननी विराहणया-विराधना करवाथी एटले खंडना करवाथी नु-इति वितर्के कहधम्मो-धर्म ते क्यांथी! अने कह-क्यांथीणु जीवदया-निज परजीवनी अनुकंपा एटले करुणा अपितु कांईज नथी; जिनवचननी आराधनाएकरीनेज चारित्र धर्म अने दया प्रमाण छे, अन्यथा नथी. ॥ एए ॥

अवतरणः- पूर्व गाथामा जिन आज्ञानी विराधना कही, ते जिन आज्ञानो प्रकार देखामत्तां कहेछे - मूल - किरियाइ फमा मोवं, अहियं माइंति आगम विहूणं ॥ मुद्धाण रंजणढं, सुद्धाणं हीलणढाए ॥ १०० ॥ दोहाः- सूत्र रहित दर्शो अधिक, क्रिया तणो मंमाण ॥ रुजु रजण मुनि हीलवा, फिरे मूढगत त्राण ॥ १०० ॥ व्याख्या - आगम विहूणं-सिद्धांतोक्त विधिवें करीने रहित अने सिद्धांतमांह नथी कह्यो जे प्रकार तेणेकरीने सहित. एटले सिद्धांतमां पुष्प ने वेद्यादिक पूजा करवी. कही छे, ते न करवी एम कहे; वली जिनपूजा सामायक प्रतिरुपणादिक धर्म कर्त्तव्य विधि पूर्वक करवुं एम कह्यु छे. ने जेम तेम करवुं;

विधि अविध प्रमुखने जोवु नही एम कहे, इत्यादिक जे उत्सूत्र प्ररूपणा ते आगम विहीण कहिये, एवु किरियाइ फडाडोव–बाह्य तप नियम व्रतादि धर्म अनुष्ठानरूप क्रियानो जे फटाटोप एटले आमंबर तेने मुनिराजथी अहिय–अधिक साहति–साधेछे एटले करेछे, जे निन्हवादिक लिंगिया लोक छे ते, एम करेछे ते शा सारु आमंबर करेछे? मुद्धाण रजणत्थ–मुग्ध लोक एटले जिन धर्मना अजाण भोला लोकोना चित्तने रजन करवाने अर्थे, तथा सुद्धाण हीलणत्थाए–शुद्ध पुरुषोनी एटले सिद्धात नापित अर्थना कथनार पुरुपोनी हीलना करवाने अर्थे ते अज्ञानी मूढ सम्यक ज्ञान रहित क्रियानो आमंबर अधिकतर देखाडेछे ॥१००॥

अवतरण –पूर्व गाथामा अशुद्ध धर्म देखाडवावालाने मूढ तथा अज्ञानी कह्यु हवे जे शुद्ध धर्मनुं दान करेछे ते पुरुषो केवा होयछे ते कहेछे – मूल – जो देइ सुद्ध धम्म, सो परमप्पा जयम्मि न हु अन्नो ॥ किं कप्पदुम सरिसो, इयर तरू होइ कइयावि ॥ १०१ ॥ दोहा – शुद्ध धर्मकू जो दिए, सो जिनराज न और॥ सुरतरु समतरु अन्य क्या! होय कहो किण ठोर ॥ १०१ ॥ व्याख्या – जो–जे साधु श्रावक सम्यक् दृष्टि कोइ सुद्धधम्म–निर्मल कषाय मल रहित श्री वीतराग नापित धर्मप्रते देइ– दिये, सो– ते परमप्पा– परमात्मा छे एटले तीर्थंकरतुल्य छे हु– निश्चय जयम्मि– जगतनेविषे तेनी तुलना करनारो अन्नो– बीजो कोई नथी ए वातमा कोई वितर्क करे तो तेने एम कहिये के, किं–शु कप्पदुमसरिसो– कल्पवृक्षना जेवो इयरतरू–कोई बीजो वृक्ष कइयावि–कोई काले होइ–थाय! ते कहो त्यारे ते वितर्क करनरो बोल्यो के कदापि न थाय माटे तमे कह्यु ते सत्यछे १०१

अवतरण –पूर्व वे गाथामां अशुद्ध धर्म प्रकाशकनी उपेक्षा अने शुद्ध धर्मदायकनी प्रशसा करवानुं जे जणाव्यु ते तो जे वस्तुनो गुण दोष जाणे ते करे, केम के, ते मध्यस्थ पुरुष होयछे पण जे वस्तुना गुण दोषथी अजाण होय ते मध्यस्थ पुरुषमां गणाय नही ते कहेछे – मूल –जे अमुणिअ गुण दोषा, ते कहअ बुहाण हुति मज्झत्था ॥ अह तेवि हु मज्झत्था, ता विस अमिआण तुल्लत्त ॥ १०२ ॥ दोहा – जे गुण दोष अज्ञान ते,किम बुधमें बुध होय॥ अथवा ते बुध होय तो, सम विष अमृत होय ॥ १०२ ॥ व्याख्या – जे–जे पुरुष अमुणि अगुणदोसा–वस्तुना गुण अने दोष नथी जाणता, ते–ते पुरुष बुहाण–बुध एटले पडित पुरुषोनेविषे मज्झत्था– मध्यस्थ राग द्वेष रहित समचित्तवाला कहअ–केम हुंति– थाय! एटले जे वस्तुना गुण तथा दोषने जाणतो नथी ते बुध मध्यस्थ पुरुषने तुल्य केम गणाय!

अपितु नहीज गणाय. अह– वली तेवि–तेनेपण हु–जो मज्झ–मध्यस्थ कहिये एटले वस्तुना अजाण जीवपण जो समचित्तवाला होय ता– तो विसअमिआण– विष अने अमृत बन्नेने तुल्लत्त– तुल्यता थाय. पण एमतो कोई प्रकारे थाय नही वस्तु धर्मने जे जाणनारो होय तेनेज मध्यस्थ पंडित कहिये. अने वस्तु धर्मनो जे अजाण होय तेने अमध्यस्थ पुरुष कहिये ए भावार्थ. ॥ १०२ ॥

अवतरणः– हवे गुणनो राग अने दोष त्याग पूर्वक उपदेशना मिसे करीने क हे छेः– त्रण तत्व आराधवा योग्य छेः– मूल·– मूलं जिणिंद देवो, तव्वयणं गुरु जणं महासयणं ॥ सेसं पावठ्ठाणं, परमप्पाणं च वज्जेमि ॥ १०३ ॥ दोहा.– मूल जिनेश्वर तद्वचन, गुरु जन गाढा सैन ॥ शेष पाप थानक तजू, निज प नो दिन रैन ॥१०३॥ व्याख्याः–मूलं–प्रथम जिणिंद देवो--जिनेंद्र देव बीजो तव्व एं–ते जिनेंद्र देवसंबंधी वचन सिद्धांत त्रीजा महा सयणं–परम हितकारी माटे मोटा स्वजन एहेवा गुरुजणं–गुरुजन एटले ते जिनेंद्र देवना साधु मुनिराज , ए त्रण तत्व सेववा योग्य छे. सेसं– शेष बीजा परमप्पाणं च--पर संबंधी एटले अन्य दर्शनी संबंधी अने पोतासंबंधी एटले लोकोत्तर मिथ्यात्व संबंधी पावठ्ठाणं-जे पा प स्थानक छे ते सर्वने वज्जेमि-हुं वर्जु छुं एटले त्याग करुं छुं ॥ १०३ ॥

अवतरण·– कोई कहेशे के, एकनो अंगीकार करवो अने बीजानो त्याग कर वो ; एम कस्याथी तमारामांज राग द्वेषनी प्राप्ति थशे ? ते शंका दूर करवाने कहे छेः– मूलः– अम्हाण राग रोसं, कस्सुवरि नहि इह गुरु विसए ॥ जिण आणरया गुरुणो, धम्मठ्ठं सेस वोसरिमो ॥ १०४ ॥ दोहाः– राग रोस किन ऊपरे, नहि हमने छे एक ॥ धर्म हेत जिन आण रत, छे गुरु और विवेक ॥ १०४ ॥ व्याख्या.– अह्मारे रागरोस–राग द्वेष कस्सुवरि–कोईनी ऊपर नहि–नथी. गुरु विसए–गुरु संबंधी वार्त्ता, इह–एम छे. जिण आणरया–जिनराजनी आज्ञामां रत अथवा तत्पर एवा गुरुणो–गुरु धम्मठ्ठं–मोक्ष साधन जे धर्म तेने अर्थे अ मारे सेववा योग्य छे सेस– शेष एटले बीजा जे जिनराजनी आज्ञाथी बाहि छे ते सर्वने वोसरिमो–अमे वोसराविए छैए, एटले त्याग करीए छैए. जे वीतराग नी आज्ञामां होय तेने गुरु मानिये छैये ; अने बीजाउनी ऊपर तो अमारे मध्य स्थ भाव वर्त्ते छे. माटे हे भद्र, कोईनी ऊपर अमे राग द्वेष करता नथी ॥१०४॥

अवतरण·– हवे गुरुनेविषे पण राग द्वेषनो अभाव होयछे [illegible] कहेछेः– मूल – नो अप्पणा पराया, गुरुणो कइयावि हुंति [illegible]

ण रयण मंमण, ममिय सव्वेवि ते सुगुरु ॥ १०५ ॥ दोहा – निज पर गुरु न करे कदा, तत्व ज्ञात गत गर्व ॥ जैन वचन मणि ममणे, मंमित ते गुरु सर्व ॥ ॥ १०५ ॥ व्याख्या – अप्पणा–ए आपणा गछना गुरुणो- गुरु छे माटे एमनेज वादवु अने एमनी पासेथीज व्याख्यान सांभलवु, तथा व्रत पच्चरकाण करवा, अने पराया–ए परगछना गुरु छे माटे एने वादवु नही, एनी पासेथी व्याख्यान सांभलवु नही, व्रत पच्चरकाण काई न करवु, एवी चाल ते सुद्धाण–सम्यकदृष्टि श्रावक लोकोनी कइयावि–कदापि नो–नही हुंति–होय केमके, जिणवयण रयण मंमण मडिय- जिन वचनरूप रत्नना मंमन एटले आभूषणे करी जे मंमित विभूषित छे, ते सव्वे वि–ते सर्वेपण सुगुरु–रूडा गुरु छे, सम्यकदृष्टि श्रावक लोकाने वांदवा पूजवा योग्य छे अने जे जिनवचनथी उपरांठा चाले छे ते वांदवा पूजवा योग्य नथी.

अवतरण – सुगुरुनुज शामाटे ग्रहण करवु ? ए शंका दूर करवाने कहेछे – मूल – वलि किज्जामो सज्जण, जणस्स सुविसुद्ध पुन्नजुत्तस्स ॥ जस्स लहु सग मेवि, सुधम्म वुद्धी समुल्लसए ॥ १०६ ॥ दोहा – शुद्ध पुन्य युत सजन जन, तसु जइये बलिहार ॥ जसु लघु संगमथी हुवे, धर्म वृद्धि विस्तार ॥१०६ ॥ व्याख्या – सुविसुद्ध पुन्न जुत्तस्स–अति निर्मल श्रुत चारित्र धर्मरूप पुन्य, तेणे करी संयुक्त एवा जे सज्जण जणस्स–परम हितकारी होवाथी सज्जन जन एटले साधु जन तेनी वलि किज्जामो- वली पूजा तथा सेवा अमे करिये छेये एटले अमे तेनी बलिहारीये जैये छैये जस्स- जेनो लहुसगमेणवि- लघु एटले अल्पमात्र संगम एटले परिचय करवाथी पण सुधम्म- जिनभाषित धर्मनी वुद्धि- विचारणा समुल्लसए- अति उल्हास एटले अति आनंदने अथवा अति विस्तारने पामेछे ए कारण माटे सुगुरुज ग्रहण करवा योग्य छे ॥ १०६ ॥

अवतरण – सांप्रत सुगुरुनु वर्णन करवाना अधिकारनेविषे स्मृतिना उपयोगमा आव्या जे श्रीजिनवल्लभसूरीजी, ते सुगुरु होवाथी तेमनी स्तवना करता कहे छे – मूल – अज्जवि गुरुणो गुणिणो, सुद्धा दीसंति तडयडा केवि ॥ पहु जिण वल्लह सरिसो, पुणोवि जिणवल्लहो चेव ॥ १०७ ॥ दोहा – केइ आज पिण या करा, दीसे गुणि गुरु शुद्ध ॥ प्रभु जिनवल्लभ सारिखो, वलि जिनवल्लभ बुद्ध॥१०७॥ व्याख्या – अज्जवि- आजपण एटले चालता समयमा पण गुणिणो- ज्ञानादि गुणोकरीने गुणवंत एवा सुद्धा- दंभरहित अथवा निर्मल चित्तवाला एवा तडयडा- आकरी तप क्रियाना करवावाला शुक्ला तथा श्लाका-एवा, केवि–केटलाएक गुरुणो-

गुरु एटले साधुजन दीसंती- देखीए छैये, नजरे जोइये छैये. उपलक्षणथी सांभली ये छैये. पुणोव—वली पण पहुजिणवल्लह सरिसो—प्रभु जिनवल्लभ सरखोतो जिण वल्लहोचेव- जिनवल्लभज संभवायछे; ने तेज कर्ण अचक्षुने दर्शनज थतुं होयनी!

अवतरण:—हवे जिनवल्लभ सूरिना जेवा सर्वोत्कृष्ट पुरुषोनां वचनोथी पण केटलाएकने सम्यक्त्वनी प्राप्ति थती नथी, ते दृष्टांतसहित कहेछे — मूल — वयणे वि सुगुरु जिणवल्लहस्स केसिं न उल्लसइ सम्मं ॥ अह कह दिणमणि तेयं, उलु आणं हरइ अंधत्तं ॥ १०८ ॥ दोहा:— गुरु जिनवल्लभ वचनथी, उलसै सम्मन जास ॥ हैरै घूककी अंधता, कैसे भानु प्रकाश ॥ १०८ ॥ व्याख्या:— सुगुरुजिणवल्लहस्स- सुगुरु जिनवल्लभजीना वयणेवि- वचनो छतां पण एटले उपदेश सांभलता छता पण केसिं- केटलाएक भारीकर्मा जीवोनुं सम्मं- सम्यक्त्व ज्ञान चक्षु न उल्लसइ- उल्लासने पामता नथी एटले उघडता नथी अह—अथ एटले एनी उपर दृष्टांत कहेछे:— दिणमणितेयं- सूर्यनुं तेज सर्वत्र प्रकाश करतुं छतां उलुआणं- उलूक एटले घूवड पक्षीनो अंधत्तं—अंधकार कह- केम एटले कया प्रकारे हरइ- हरे एटले दूर करे; अपि तु नहीज करीशके. ॥ १०८ ॥

अवतरण:— वली जे श्रीजिनवल्लभसूरीनां वचनोथकी भवना स्वरूपने देखता छतां सम्यक्त्वने अंगीकार करता नथी, तेवा पुरुषोना धिठपणाने धिक्कारता छतां कहेछे:— मूल:— तिहुअण जणं मरंतं, दहूण नियंति जे न अप्पाणं ॥ विरमंति न पावाउ. धिद्धी धिठत्तणं ताणं ॥ १०९ ॥ दोहा:— मरता जग जन जोइने, जे न करैं वस मन्न ॥ पापथकी विरमे नही, ते नर धीठ अधन्न. ॥ १०९ ॥ व्याख्या:— मरंत—मरता एवा जे, तिहुअण जणं— त्रण भवनना जन एटले लोकने दहूण— देखीने जे— जे पुरुष अप्पाणं— पोतानी आत्माने न नियंति— नथी देखता. अने पावाओ—हिंसा तथा मृषादि पाप व्यापार थकी न विरमंति— विराम पामता नथी, एटले निवर्त्तता नथी; ताणं— ते पुरुषोना धिठत्तणं—धीठ पणाने धिद्धी—धिक् धिक् होजो, एटले धिक्कार थाउ. ॥ १०९ ॥

अवतरण:— हवे तेनाज कुस्नेहपणाने कहेछे:— मूल:— सोएण कंदिऊणं, कुट्टेऊणं सिरं च उअरंच ॥ अप्पं खिवंति नरए, तं पिहु धिद्धी कुनेहत्तं ॥ ११० ॥ दोहा.— शोक विलाप करी उदर, शिर कूटी उर देह ॥ नाखै नरके जीवने, धिग् धिग् ते कुनेह ॥ ११० ॥ व्याख्या:— सोएण—शोककरीने कंदिऊण—आक्रंदन अथवा विलाप कर्याथी च—वली सिर—मस्तक उअरं—उदर एटले पेट च शब्दथी

वरु एटले वरादिक प्रते कुट्टकण–कूटी पीटीने नरए–नरकनेविषे जे अर्प्यं–
त्माने खिवति–क्षेपेछे एटले नाखेछे, हु–जे कारण माटे तेनुं जे कुनेत्त–कुस्न
पणु छे, तंपि–तेने पण धिद्धी- धिक् धिक् होजो एटले धिक्कार थाओ ॥ ११०

अवतरण -- हवे शोकादिक कीधाथकी उलटो अति दोष होयछे तेज कहेछे -
मूल – एग पियमरणदुह, अन्न अप्पावि खिप्पए नरए ॥ एगच मालपडण,
अन्न लगुडेण सिरिघाउ ॥ १११ ॥ दोहा – प्रिय मरणनु एक दुख, बीजु न
रक मझार ॥ इकतो पडवु मालथी, बीजो मम्म प्रहार ॥ १११ ॥ व्याख्या – ए
ग–एक पिअमरणदुह--पुत्र कलत्रादिक प्रियजन स्वजन लोकोना मरवानु दुख
अन्न–बीजु नरए--नरकनेविषे अप्पा- आत्मा खिप्पए–क्षेपिये छेए एटले ना
खीये छेए ए मोटो आश्चर्य छे अहीं दृष्टातकहेछे – एगच -एक तो मालपडण–
एकादि मालथकी पडवु, अने अन्न -बीजु लगुडेण--लाकडीए करीने सिरिघाउ–
माथाऊपर घात करवो एटले जे पडयो तेनु माथु फोडी नाखवु ए मोटो अन्याय छे

अवतरण – एम क्यांथी करे? एवी आशका करीने हमणा सुगुरुवादिकनु दु
र्लभपणु प्रगटकरता छता कहे छे – मूल -- सपइ दूसम काले, धम्मठी सुगुरु
सावया दुलहा ॥ नाम गुरु नामसड्ढा, सरागदोसा बहू अछी ॥ ११२ ॥ दोहा –
धर्मार्थी दूषम समै, दुलभ साधुने श्राद्ध ॥ नाम साधु श्रावक बहू हग रागादि
सबाध ॥ ११२ ॥ व्याख्या – सपइ--साप्रत एटले वर्त्तमान काल दूसम काले--दू
सम कालनेविषे धम्मठी -श्रीजिन भाषित मोक्ष पद साधक शुद्ध विधि धर्मना
अर्थी अभिलाषी एवा, सुगुरु सावया--सुगुरु सु साधुने श्रावक समणोपासक दु
लहा- दुर्लभ छे , अने सराग दोसा--राग द्वेषे करीने सहित एवा, नाम गुरु- स
म्यग् ज्ञानादि गुणे करीने रहित केवल नाम मात्र गुरु साधु, तथा नाम सड्ढा--
नाममात्र श्रावक तेतो बहु अछी - घणा छे ॥ ११२ ॥

अवतरण -हवे सुगुरु श्रावकपणानो हेतु कहे छे -- मूल -- कहियपि सुद्ध
धम्म, काहिवि धन्नाण जणइ आणद ॥ मिछत्तमोहिआण, होइ रई मिछ
धम्मेसु ॥ ११३ ॥ दोहा - शुद्ध धर्मनी वात पण, धनने रति उपजाय ॥ मि
थ्या मोहित मूढने, मिथ्यात्वे रति थाय ॥ ११३ ॥ व्याख्या - कहियंपि-- क
ही छे तोपण सुद्ध धम्म–निर्मल वीतराग भाषित धर्म एटले विस्तार सहित क
ह्यो जे जिन धर्म ते काहिविधन्नाण-- केटलाएक धन्य पुरुषोने पण एटले था
कज धन्य पुन्यवत प्राणीओने आणद -आनद एटले आत्मिक हर्ष जणइ--उत्प

तेम धर्म ममाण सव, विन समकित न फलंत ॥ ११६ ॥ व्याख्या — इक वड्डिला रहियं--गामाना पइडां रोकवानी खीज़ीए करी रहित एवु, सवग सगड-सर्वांग शकट छतां पण एटले वीजां मर्व अंगेकरी सहित गाडु छता पण जह-नेम हु--निश्चे नचलइ--नथी चालतु तह--तेम सम्मत्त परिहीण--सम्यक्त्व रहित एवेवु जे धम्मफमामोव--दान दया शील तपादिक धर्मनो फटाटोप एटले जे आमवर ते न चलइ--नथी चालतो, एटले अव्यावाध अक्षय मोक्ष फल नथी आपतो, उलटुं विशेपतर छुखनु कारण थाय छे ॥ ११६ ॥

अवतरण — शिष्य वितर्क करेछे के, जे सम्यक्त्वविना अन्य धर्म आमवर छे, ते हितने करता नथी, एवु वाक्य मिथ्यात्वीनेविषे रोषरूप थशे? ए आशंका दूर करवाने कहेछे — मूल — न मुणति धम्मतत्त, सच्च परमत्थ गुणहियं अहियं॥ बालाण ताण उवरिं, कह रोसो मुणिय तत्ताण ॥ ११७ ॥ दोहा — धर्म तत्व श्रुत आत्महित, अहित न जाणे जेह ॥ ते अजाण पर रोप किम, जिनमत कुशल करेह ॥ ११७ ॥ व्याख्या — धम्मतत्त--जेमा जिनोक्त धर्मनु सरूप रहेलुछे, एवा जे सच्च-- शास्त्रसिद्धात तेने जे पुरुप नमुणति-- नथी जाणता, वली जे पुरुष परमत्थ गुणहियं-- परमार्थ जे मोक्षपद तेनु साधन सम्यक् ज्ञानादिक गुण तद्रूप जे हित तेने जाणता नथी, वली जे पुरुप अहियं-- अहित एटले मिथ्यात्व अविरति कपायादि नवभ्रमणनु कारणरूप जे अहित तेने नथी जाणता, ताणबालाण-- ते बाल अज्ञानी जीवोनी उवरिं--उपर मुणियतत्ताण-जेउए जिन धर्म तत्व एटले परमार्थ जाण्यो छे, ते पुरुषोने कहरोसो--रोप केम थाय? अपितु नज थाय केम के, जे ज्ञाता पुरुप होय छे ते द्रव्य तथा भाव ए वे अनुकंपा सहितज होय छे॥ ११७॥

अवतरण — हवे जे बाल अज्ञानी लोको छे तेउनुज बालपणु दृष्टांत सहित देखाडे छे.— मूल — अप्पाविं जाण वयरी, तेसिं कह होइ परजिए करुणा॥ चोराण वंदियाणय, दिठ्ठतेण मुणेयव्व ॥ ११८ ॥ दोहा — जसु वेरी निज आतमा, तसु परदया न होय ॥ याचक चोरतणो इहा, उदाहरण जग जोय ॥ ११८ ॥ व्याख्या — जाण--जे लोकोनो पोतानो अप्पा-- आत्मा पण वयरी-- वेरीछे एटले शत्रुनी तुल्य छे, केमके हिंसा असत्य अदत्त तथा परदारागमनादि अहित कार्य करेछे माटे. तेसिं--ते बाल अज्ञानी लोकोने परजिए--पर जीवानी उपर करुणा--दया कह--केम होइ--थाय? अपितु नज थाय, एटले जेन पोतानो आत्मा पण शत्रुनी पठे शत्रु वर्ते छे, तो तेने वीजा जीवानी उपर दया ते केम वने? अ

पितृ नहीज वर्ने ते चोगण–चोरने वली वंदियाण–वंदिक पुरुषोने एटले परधन अभिलाषी पुरुषोने दिठंतेण–दृष्टांते करीने मुणेयव्वं–जाणवुं एटले जेम चोरादि कने परनी दया आवती नथी, तेम कुष्टाचारी इह परलोक विरोधकारी, उत्सूत्र नाषी जे होय तेने परजीवनी दया आवे नही. ॥ ११७ ॥

अवतरणः– हवे बाल स्वनावप्रते विचार करीने ते बालना स्वरूप तथा ल क्षणने कहेछेः– मूलः– जे रज्ज धणाईणं, कारणनूया हवंति वावारा ॥ तेवि हु अइपावजुया, धन्ना छड्डंति नवनीया ॥ ११९ ॥ दोहा.– जे छे राज धनादिनो. हेतुनूत व्यापार ॥ ते अति पाप वणिज तजे. उत्तम नव नीतार ॥ ११९ ॥ व्याख्या – रज्जधणाईणं–राज एटले राजादि पदवीनो, धणीमादि धनादिकनो आदि शब्दथी शब्दादिक इंडियविषयनो कारणनूया–कारणनूत एटले हेतुरूप. एवो जे– जे वावारा–व्यापार हवंति–छे, एटले बाह्य व्यापार शत्रुहनन राजसेवा कृषी कर्म दंतवाणिज्यादि. अने अंतर व्यापार पंचाग्निताप अज्ञान कष्ट क्रियादिरूप तेवि– ते व्यापार पण हु–निश्चय अइपावजुया–नरक निगोदादिकना कारणमाटे अति पापसहित छे एम जाणीने ते व्यापारने धन्ना–जे धन्य पुन्यवंत उत्तम पुरुष छे ते छड्डंति–छोडेछे एटले त्याग करेछे. ते उत्तम पुरुष केहेवायछेः–नवनीया–नवनी त छे एटले जे संसारथकी बीहीना छे, अने उदास रहेछे तेज महा मतिछे.११९

अवतरण.– धन्य पुन्यवंत सत्ववंत जे उत्तम पुरुष छे तेनुं स्वरूप कह्युं; हवे अ धम पुरुष जे हीण सत्वि छे तेनुं स्वरूप कहेछे –मूलः–बिइयाय सत्तरहिया, धण सयणाईहिं मोहिया लुद्धा ॥ सेवंति पावकम्मं, वावारे उयर नरणठा ॥ १२० ॥ दोहाः– मोहित धन स्वजनादिके, लुब्ध सत्व करि हीण ॥ पाप नजे व्यापारमें, मध्यम पेटाधीन ॥ १२० ॥ व्याख्याः– बिइयाय–प्रथम उत्तम पुरुष कह्यो, तेनी अपेक्षाएकरीने बीजा जे अधम पुरुष छे ते पावकम्मं–स्वामी झोह, विश्वासघात, चोरी, परधन हरणादी तथा अंगार कर्मादि पंदर कम्मादान तथा हिंसादि अ ष्टादश पापस्थानकने सेवंति–सेवेछे, वावारे–व्यापारनेविषे उयरनरणठा–उदर ए टले पेट नरवाने अर्थे, ते अधम पुरुष केवा छेः– सत्तरहिया–सत्व एटले शुन पराक्रम रहित एवा, वली ते अधम पुरुषो केवा छेः– धणसयणाईहिं धन स्वज नादिके करीने आदि शब्दथी शब्दरूपादिक इंडिय विषये करीने मोहिया–मोहित एटले मूढ थएला एवा, वली ते अधम पुरुष केवा छे? लुद्धा–लोनी एटले ला लची अति छे एवा जाणवा. ॥ १२० ॥

अवतरण – बीजा अधम पुरुषनुं स्वरुप कह्युं हवे त्रीजा अधमाधम पुरुषनुं स्वरुप कहेछे – मूल – तइया हमाण अहमा, कारणरहिया अनाणगव्वेण ॥ जे जपति उस्सुत्त, तेसि धिद्धित्थु पंडिच्चं ॥ १२१ ॥ दोहा – अधम अधम कारण विना, करि अज्ञान अभिमान ॥ जे उत्श्रुत भाषन करे, धिग धिग तेहुं ज्ञान ॥ ॥ १२१ ॥ व्याख्या – तइया–त्रीजा अहमाण–अधमोनेविषे अहमा–अधम एटले त्रीजा अधमाधम पुरुष ते कारण रहिया–धनलाभ कुटंब पोषणादि कारण रहित थता अनाणगव्वेण–अज्ञानना गर्वे करीने जे–जे उस्सुत्त– उत्सूत्रप्रते जपंति–जपेछे अथवा बोलेछे तेसि–तेना पडिच्च–पांडित्यने धिद्धित्थु–धिक्कार धिक्कार थाओ धनलाभादि कारणे जे उत्सूत्र बोलवुं, ते दुर्गतिने देवावालुं छे, माटे कारणने लीधे पण उत्सूत्र बोलवानो निषेध छे त्यारे कारणविना तो विशेषपणे निषेधज जाणवो माटे कारणविना अने अज्ञान अभिमाननी बुद्धिथी जे उत्सूत्र भाषण करेछे ते अधमाऽधम पुरुष जाणवो तेना पंडितपणाने धिक्कार धिक्कार छे जे नीचथी पण नीच होय तेने अधमाधम कहिये ॥ १२१ ॥

अवतरण – उत्सूत्र बोलनारने शासारु अधमाधम कह्यो? अने तेना पंडितपणाने शासारु धिक्कार थाओ एम कह्युं? ते देखाडता थता कहेछे – मूल – ज वीरजिणस्स जिओ मिरई उस्सुत्त लेस देसणओ ॥ सागर कोडाकोडि, हिंमइ अइभीमभवरण्णे ॥ १२२ ॥ दोहा – जीव मरीची वीरनो, उत्श्रुत लेस उच्चार ॥ सागर कोडा कोडि जो, भमियो भवकातार ॥ १२२ ॥ व्याख्या – ज–जे कारण माटे वीरजिणस्सजीओ–वीर जिनेश्वरनो जीव मिरई–भरत पुत्र मरीचीने नवे उस्सुत्त लेस देसणओ–कपिले ज्यारे वारवार पूछवा मांड्युं, त्यारे एम बोल्या के, हे कपिल रुपन जिणसाधुओनेविषे पण धर्म छे अने अहीं अमारामां पण धर्म छे, एतद्रूप उत्सूत्रनो जे लेश, तेनी देशना थकी अइभीमभवरण्णे–अति भीम रौद्र भव अरण्य जे ससार कातार तेनेविषे सागर कोडाकोडी– सागरोपमनी कोडाकोडीसुधी एटले एक कोडाकोडी सागरोपमसुधी हिंमइ–हीमेछे एटले भमेछे, एम वर्तमान निर्देशनी अपेक्षाए कह्युं, परमार्थे तो भम्योछे एम जाणवुं ॥ १२२ ॥

अवतरण – हवे उत्सूत्रनुं निगमन करता थता कहेछे – मूल – ता जइ इमंपि वयणं, वारवार सुणिज्ज समयम्मि ॥ दोसेण अवगणित्ता, उस्सुत्त पयाइ सेवंति ॥ ॥ १२३ ॥ दोहा – वारवार ए श्रुत वचन, साजनि जोतो हेय ॥ सेवे बहु उत्सूत्र पद, दोष न माने जेय ॥ १२३ ॥ व्याख्या – ता–ते कारणमाटे जइ–जो इम–ए

प्रत्यक्ष. वयणं–मरीचिउक्त उत्सूत्र वचनो प्रत्ये समयम्मि–सिद्धांतनेविषे वारंवार–वारंवार सुणीत्त–सुणीने एटले सांभळीने अपि–पण दोसेण–अभिनिवेष मिथ्यात्वादिक दोषेकरी अथवा द्वेषेकरी अवगणित्ता–अवगणनाए करीने एटले अपमानताए करीने उस्सुत्तपयाऽ–उत्सूत्रना पदने सेवंति–जे सेवेछे एटले जे बोलेछे. ॥ १२३ ॥

मूलः–ताण कहंजिण धम्मं, कह नाणं कह दुहाण वेरग्गं॥ कूडाभिमाण पंडिय, नडिया वुड्डंति नरयम्मि॥१२४॥ दोहा–तसु जिन धर्म किहां थकी, ज्ञानसु दुख वैराग॥ कूटमान पंडित नटित, नरके खेलत फाग॥१२४॥ व्याख्या–ताण–ते पुरुषोने कह–केम जिण धम्मो–जिन धर्म थाय! कह–केम नाणं–यथार्थ ज्ञान थाय! कह–केम दुहाण–नरकादिकनां दुःख थकी वेरग्गं–वैराग्य एटले उदासपणुं थाय! अपितु ते उत्सूत्र भाषीउने जिनधर्मादिक कांई प्राप्त न थाय. केमके, जिन धर्म आज्ञाए करीने पूर्वे कह्युं छे ते कारण माटे कूडाभिमाण पंडिय–कूड अने अभिमान अथवा कूडा अभिमान अहंकारे करी सहित जे पंडित पणुं ते कूटाभिमान पंडितपणुं कहिये. तेणे करीने ते पुरुष नडिया–नडेला एटले पीडायला नरयम्मि–नरकनेविषे एटले नरकरूप अंधकूपनेविषे वुड्डंति–बूडे छे. एम जाणीने उत्सूत्र न बोलवु एज सार छे ॥ १२४ ॥

अवतरणः–हवे जे उत्सूत्र भाषी जीव छे, तेने हितोपदेशनुं दान देवुं नही, केमके, ते ए दान लेवाने अयोग्य छे ते कहे छे– मूल – मामा जंपह बहुअं, जे बद्धा चिक्कणेहिं कम्मेहिं ॥ सव्वेसि तेसि जायइ, हिउवएसो महादोसो ॥ १२५ ॥ दोहाः- जे बाध्या खल कर्म करि, ते सबहीके थाय ॥ हित उपदेश सु दोष मय ॥ बहु मानण इण न्याय ॥ १२५ ॥ व्याख्या – उत्सूत्र भाषी कदाग्रही अयोग्य जीवने बहुअं–घणो हितोपदेश मामा जंपह–कहेवो नही. केमके, जे–जे पुरुष चिक्कणेहिं कम्मेहिं–चीकणा कर्मे एटले अति क्लिष्ट ज्ञानावरणादिक कर्मे करि बद्धा–बांधेला अथवा निगडेला छे. तेसि सव्वेसि–ते सर्वने हिउवएसो–हितोपदेश एटले मोक्ष मार्गनो उपदेश ते महादोसो–महा दोषरूप अथवा महा द्वेषरूप जायइ–थाय छे, माटे अयोग्य जीवने घणो हितोपदेश कहेवो नही ॥ १२५ ॥

अवतरण – धर्मने अयोग्य जीवने हितोपदेश करवाथी क्लेशमात्र थाय तेनुं कारण कहे छे – मूल – हिययम्मि जे कुलुसा, ते किं वुज्झंति धम्म वयणेण॥ ताताण कए गुणिणो, निरत्थयं दमइ अप्पाण ॥ १२६ ॥ दोहा – जसु कुलुष मन केम सो, जिन वचने बूजेय ॥ तो तेने अर्थे गुणी, फोकट आत्म दमेय॥१२६॥

व्याख्या – हिययम्मि–हृदयनेविषे एटले चित्तनेविषे जे- जे पुरुष कुसुद्धा–कुसु
एटले अशुद्ध छे, एटले अभिनिवेश मिथ्यात्वादिक दोषरूप कलंक पंके करीने म
न छे, ते–ते पुरुष किं–केम धम्मवयणेण–जिनधर्मसंबंधी वचने करी बुज्झंति–ब
पामे! अपितु नहीज पामे, ता- ते कारण माटे ताणकए–ते दुष्ट चित्तवालाने अर्थ
णिणो- ज्ञानादिक गुणेकरी गुणवंत पुरुषने ते निरत्थयं- निरर्थक एटले फोकट अप्प
णं–आत्माने दमइ- दमेछे, एटले क्लेश उपजावेछे. अहीं फलीतार्थ एम समजवु के, जे
गुणी पुरुष होयछे ते परने गुण करवानी बुद्धिमाटे हितोपदेश कर्त्ता काई पण पोताने
क्लेश माने नही, पछी परने गुण थाओ वा न थाओ ए गुणीनो सहज स्वभावछे माटे
गुणी पुरुषनो कीधेलो उपदेश फोकट नथी ते उपदेश पोताने स्वाध्याय तप छे १२६

अवतरण -- गुणी पुरुष एम कहेछे के अहो भव्य, जिनधर्म करवादिक तो
दूर रहो, पण एक जिन धर्मनु श्रद्धान छे तेपण दुःखनु हरण करनारु छे, तेज कहे
छे - मूल - दूरे करण दूरम्मि साहण तह पभावणा दूरे ॥ जिण धम्म सद्दहाण,
पि तिक्खदुक्खाइ निट्ठवइ ॥ १२७ ॥ दोहा – करनो अरु साधन तथा रहो प्रभाव
ण दूर ॥ शुद्ध धर्म श्रद्धान पिण हरै कठिण दुखपूर ॥ १२७ ॥ व्याख्या – क
रण- विधिए करीने दान शील तप भावनारूप जिनधर्मनु जे करवु, तेतो दूरे–दूर
रहो. तथा साहण–पूर्वोक्त जिनधर्मनु साधन एटले कथन करवु तेपिण दूरम्मि–दूर
रहो, तथा पभावणा–प्रावचनी धर्मकथी प्रमुख अष्ट प्रकारना प्रभावकपणे करीने
जे जिनधर्मनी प्रभावना करवी एटले जिनधर्मनो महिमा वधात करवा तेपण दूरे–
दूर एटले छेटे रहो, मात्र जिण धम्मसद्दहाणपि–जिनभाषित धर्मनु एक श्रद्धान रुचि
पणु पण तिक्ख दुक्खाइ–तीक्ष्ण दारुण जे नरकादिक दुःख तेने निट्ठवइ–निष्ठापेछे
एटले नसाडेछे, अर्थात् बीजु कांई न बने तो पण एक जैनधर्मनु श्रद्धानकरवु १२७

अवतरण – ते श्रद्धाननु लक्षण ए के सिद्धांतनु सांभळवु ते सिद्धांत सांभ
ळवानी पोतासंबंधी इच्छा देखाडता छता कहेछे – मूल – कइया होही दिवसो
जइया सुगुरुण पायमूलम्मि ॥ उस्सुत्त लेस विसलव, रहिओ निसुणेसु जिण ध
म्म ॥ १२८ ॥ दोहा – ते दिन क्यारे आवशे ज्यारे सद्गुरु पास ॥ उत्सूत्रांशे
रहित जिन, धर्म सुणीसु खास ॥ १२८ ॥ व्याख्या – दिवसा–ते दिवस दिवस
कहेवाथी ते घडी ते मुहूर्त्त ते पक्ष, ते मास ते वर्ष कइया–क्यारे होही–थशे'
जइया–ज्यारे सुगुरूण–सुविहित गीतार्थ धर्माचार्य सुगुरुना पायमूलम्मि–पादमूल
एटले समीपे जिणधम्म–जिनभाषित धर्मने निसुणेसु–हु सांभळीश केवो थया

थको हुं सांनलीश! उस्सुत्त लेसविसलव रहिओ–उत्सूत्रना लेशरूप विषलवेकरी ने रहित थतो एटले गुरुने समीपे सांनलवाथी मनमां रहेला जे उत्सूत्र वाक्य, तेना लेशरूप विषना लवेकरी रहीत थयो थको हुं सांनलीश. ॥ १२० ॥

अवतरणः– ते दिवस क्यारे थशे एम शासारु कह्युं? गुरुनुं तो कांई दुर्लनपणुं नथी; केमके, गुरु तो जोवामां घणा आवेछे, ते उपर कहेछेः– मूलः– दिठा वि केवि गुरुणो, हियए न रमंति मुणिय तत्ताणं ॥ केवि पुण अदिठुच्चिय, रमंति जिणवल्लहो जेम ॥ १२ए ॥ दोहाः– दीठा पण केइक गुरु, न गमे जाण हियेय॥ केइ अदीठाहि जगमें, जिम जिणवल्लन श्रेय. ॥१२ए॥ व्याख्याः– केवि–केटलाएक दिठावि–नजरे जोएला पण काने सांनलेलानी शी वात करवी! गुरुणो–साधु समाचारीमांहे निपुण एषणीय आहारना लेवावाला एवा गुरु ते मुणियतत्ताणं–जेणे जिनशासननो तत्वपरमार्थ जाण्यो छे, तेना हियए–हृदयनेविषे नरमंति–रमता नथी एटले रुचता नथी, केमके तेना हृदयनेविषे तो जे सम्यक् ज्ञान क्रिया संवेग गुणे करीने सहित गुरु होय ते रुचेछे, पण एकलुं ज्ञान एकली क्रियादिक वाला रुचता नथी. पुण–वली केवि–केटलाएक अदिठुच्चिय–नही दीठेला ज्ञानक्रिया संवेग सहित गुरु पण रमंति–रमेछे रुचेछे; जेम–जिम जिणवल्लहो–ज्ञान क्रिया संवेग सहित जिनवल्लन सूरि नही दीठेलो अमारा चित्तनेविषे रुचेछे; तेमना रचेला ग्रंथो जोतां तथा तेमना संतानीक साधुनी समीपे तेओना ज्ञान वैराग्य क्रियानुष्टान सांनलतां अति प्रिय लागेछे एम नेमीचंद्र नंमारी कहेछे. ॥ १२ए ॥

अवतरणः– एम छतां पण जे पुरुष कुगुरुने पण सुगुरुनी परे माने छे, तेनुं निराकरण करता छता कहेछेः– मूलः–अजया अइ पाविठा, सुद्ध गुरू जिण वरिंद तुल्लत्ति ॥ जो इह एवं मन्नइ, सो विमुहो सुद्ध धम्मस्स ॥ १३० ॥ दोहाः– आरंनी अति पापिने, जिनवर सुगुरु समान ॥ जे जाणे ते जीव जिन, धर्म विमुख वेनान ॥ १३० ॥ व्याख्याः– ते कुगुरु केवा छे? अजया–यत्न रहित छे, एटले षट् जीवनि कायना वद्ध करवानेविषे जे तत्पर छे; ते कारण माटेज अइ पाविठा–अति पापिष्ट छे; एटले पाप कर्म बांधवानेविषे प्रधान छे एटले मुख्य छे एवा जे कुगुरु छे, तेने पण सुद्ध गुरु जिणवरिंदतुल्लत्ति–निर्मल गुरु गौतम गणधरादिकने सदृश अथवा घणुं शुं कहिये जिनवरेंद्र तुल्य छे, एव–ए प्रकारे इह–जगतनेविषे जो कोई मूढ पुरुष मन्नइ–मानेछे एटले जाणे छे; सो–ते पुरुष सुद्ध

धम्मस्स -श्री वीतराग नापित श्रुत चारित्ररूप निर्मल जे धर्म, तेने निमुहो-
ख जाणवो एटले अवला मुखवालो जाणवो ॥ १३० ॥

अवतरण -- धर्मने करतो थको पण धर्मथी निमुखपणु केम कह्यु ? ए अ
कानु समाधान करतां कहे ठे – मूल – जो तं वदसि पुज्जसि, वयण हीनेसि
स्स रागेण ॥ ता कह वदसि पुज्जसि, जणजाय ठिइपि न मुणेसि ॥१३१॥ दोहा -
वांदे पूजे जेहने, होले तेनो वेण ॥ वांदे पूजे किम तदा,जन थिति नूये सैन
॥ १३१ ॥ व्याख्या – जो–जे जिनराजप्रते त–तु वदसि–वांदे ठे, पुज्जसि–पूजे
ठे, अने पोताना उत्सूत्र नापी हीणाचार्य गुरुने रागेण–रागे करीने तस्स–ते वद
नीयथी तो जिनराजनुज वली वयण–आगमरूप वचन हीलेमि–तेनी तु हीनना करे
ठे, एटले निंदा करेठे, रे मूढ, जिनराजनां वचनोनी हीलना करे ठे, ता–तो क
ह–केम जिनराजने वदसि–तु वांदेठे, पुज्जसि–तु पूजठे, जणवायठिइपि–रे मूढ,
तु जनवादनी लोक व्यवहारनी स्थिति एटले मर्यादाने पण नमुणेसि– नथी जा
णतो, के जेने वांदिए तेना वचन जो न मानिये तो वांदवु तथा पूजवु व्यर्थ
जाणवु ए नावार्थ ठे ॥ १३१ ॥

अवतरण -- लोकव्यवहारनी जे स्थिति ठे ते कहेठे -- मूल -- लोएवि इम
नणिय, जो आराहिज्ज सो न कुविज्जा ॥ मन्निज्ज तस्स वयण, जइ इच्छसि इच्छि
यं काउ ॥ १३२ ॥ दोहा -- कह जन जे आराधिए, न कोपाइये तेह ॥ मानी
जो तसु वेन जो, वठित तु वाठेह ॥ १३२ ॥ व्याख्या -- लोएवि–लोकोत्तरनी
तो शी वात ! लौकिक व्यवहारनेविषे पण इम नणिय–एम कह्यु ठे जो–जे देव
दानव राजादिक मोटा पुरुष आराहिज्ज–आराधिए, पूजिये सो–ते देव दानव
राजादिकने न कुविज्जा–कुपित न करिये एटले तेने जे वातथी कोप चढे ते वात न
करिये तस्स–ते देव दानव राजादिकनु वयण–वचन मानिये एटले प्रमाण क
रिये इच्छिय काउ–इच्छित करवाने एटले पोताना मन वठित पूरण करवाने जइ–
जो इच्छसि–तु इच्छेठे तो ए प्रकारे पुत्र मित्रादिकने लोक व्यवहारनेविषे लोकसी
खामण दीए ठे, तो लोकोत्तर व्यवहारनी वात ता मोटी ठे ॥ १३२ ॥

अवतरण – एम नगवन् वचन सांनल्या ठता पण धर्म करवाने दोष
कहीने हवे स्यांहा जे निश्चल पुरुष ठे तेनी स्तवना करतो ठतो कहेठे – मूल –
सम दर्के लोए, सुडरक सिठमि डुरक उदयम्मि ॥ धन्नाण जाण न चलइ, सम्म
ताण पणमामि ॥ १३३ ॥ दोहा – इष्ट उदय डुख प्रगट जन दूसम दड ठ

तादृशविशिष्ट बुद्धि नथी माटे नियजमयाए–पोतासबंधी जडपणानो वली कम्मरु रुत्तस्स–प्रथम सुगुरु जोग न थवानी अपेक्षाए करीने कर्मना नारीपणानो नेव–न थीज वीतसिमो–श्रमे विश्वास करता, केमके, पुन्नेण–तादृश निशिष्ट पुन्येकरीने धन्नाण–धन्य पुन्यवत प्राणीउने कयन्नाण–जेणे अर्थ सिध्द कस्यो ठे एटले जेणे बोध बीजरूप अर्थ नीपजाव्यो ठे तेने सुध्द गुरु–बाह्य अन्यतर परिग्रह रहित निर्मल गुरु मिलइ–मले ठे ॥ १३५ ॥

अवतरण – वली कोई शिष्यादिक अथवा वादी वितर्क करे ठे के एमां तमारे शु प्राप्ति थई? तेविषे कहेठे – मूल – अहय पुणो अउन्नो, ता जइ पत्तो अह न पत्तो अ ॥ तहवि हु सो मह सरण, सपइ जो छुग पहाण गुरु ॥ १३६ ॥ दोहा – वलिहु अपुन्य तदा जदी, लाधो नवि लाधोय॥ तेपिण ते मुफ सरण अब, छुग प्रधान गुरु जोय ॥ १३६ ॥ व्याख्या – पुणो–वली अहय अउन्नो–हु अपुन्य हु एटले तादृश वसिष्ट पुन्येकरी रहित हु ता–ते कारण माटे जइ–जो पत्तो–पूर्वोक्त गुरु में पाम्यो,अह–अथवा न पत्तोअ–न पाम्यो, तहवि–तापण हु–निश्चे सपइ–सप्रति एटले वर्तमानकालनेविषे जो–जे छुगपहाणगुरु–छुगप्रधान गुरु ठे,सविज्ञ गीतार्थ आचार्य ठे, उपलक्षणथी तेमनी निश्राए जे उपाध्याय अथवा साधु ठे सो–ते मह–अमारे सरण–शरण आधारठे आत्मगुणवृध्दिने अर्थे विश्रामनु ठाम ठे १३६

अवतरण – कोई आशका करे के, एवी सुगुरुनी प्राप्ति थवाथी पण शु थयुं? एवो सशय दूर करवाने कहेठे – मूल – जिणधम्म डुन्नेयं, अइसय नाणीहि नज्जए सम्म ॥ तहवि हु समय ठिईए, ववहार नएण नायव्व ॥ १३७ ॥ दोहा – सम्यक् जाणे केवली, जैनधर्म डुर्ज्ञेय॥ तदपि जाणणा योग्य हैं श्रुत व्यवहारे तेय ॥ १३७ ॥ व्याख्या – जिणधम्म–श्रुत चारित्र लक्षण जिनजाषित धर्म ठे ते डुन्नेय–डु खे जाणवा योग्य ठे केमके, उत्सर्ग अपवाद निश्चय व्यवहारादिक अनेक आगमे नयोए करीने कहेलो ठे माटे जिनधर्म डु खे जाणवा योग्य ठे, अइसय नाणीहि–अवधिज्ञानी चौदपूर्वधर तथा दशपूर्वधरादि अतिशय ज्ञानीओने सम्म–सम्यक् प्रकारे जिनजाषित धर्म नज्जए–जाणीए ठेए पण अनिपुण बुध्दिने गम्य नथी, माटे जिनधर्म डु खे जाणवा योग्य कह्यो, एम निश्चयनये करीने ठे तहवि–तोपण हु–निश्चय समयठिईए–सिध्दांतनी स्थिति मर्यादाए करीने ववहार नएण–सिध्दांतोक्त साधु श्रावक सम्यक् दृष्टिना व्यवहारे एटले व्यवहार नयेकरीने जिनजाषित धर्म नायव्व–जाणवा योग्यठे, विधिपूर्वक यथाशक्तिए आराधवा योग्य ठे १३७

अवतरणः— कोई आशंका करे के, एम कहेलुं छे ते केम मानवुं? तेने कहे
छे.— मूलः— जम्हा जेणहिं नणियं, सुय ववहारं विसोहियं तस्स ॥ जायइ विसु
द्ध बोही. जिण आणाराहगत्ताओ ॥ १३७ ॥ दोहा — शोधित श्रुत व्यवहारनें,
निर्मल समकित थाय ॥ जिण आणा राधन थकी, जे कारन जिनगाय ॥१३७ ॥
व्याख्या.— जम्हा–जे कारणमाटे जिणेहिं–जिन तीर्थंकरोए नणियं--कह्युं छे. सुय
ववहार–श्रुत व्यवहारे करीने एटले सूत्र निर्युक्ति वृत्ति नाष्य चूर्णि ए पांचने श्रुत
कहियें; ते श्रुतना व्यवहारे करीने विसोहियं तस्स–चारित्रनी विशुद्धी करनार
जे पुरुष, तेने विशुद्ध बोही–विशुद्धबोधी एटले अति निर्मल सम्यक्त्व जायइ–
थाय. शयाथी? जिण आणा राह गत्ताओ–श्रुतव्यवहारे करीने चारित्रनी विशुद्धि
करवा रूप जिन आज्ञानुं आराधकपणुं थवाथी. ॥ १३७ ॥
अवतरण.— कोई आशंका करे के, तमे कह्युं जे सिद्धांतनी स्थितिए करीने
अने व्यवहार नये करीने जिनधर्म जाणवा योग्य छे; एवी रीते कहेवाथी जिन
धर्म देखाडवावाला गुरु पण सिद्ध थाय छे; तेम छतां तेनेविषे शी शंका छे? ते
नी उत्तर कहेछेः— मूलः— जे जे दीसंति गुरु, समय परिरकाइ ते न पुज्जंति ॥
पुणमेगं सद्दहणं, डुप्पसहंतं जाउ चरणं ॥ १३७ ॥ दोहा·— जे जे गुरु अब देखि
ते न मिले श्रुत न्याय ॥ पिण श्रद्धा इक छे चरण, डुपसह अंत गवाय ॥१३७
ख्याः— सांप्रतकाले जेजेगुरु– जे जे गुरु धर्माचार्य उपाध्याय साधु दीसंति–दे
छे; समय परिरकाइ–सिद्धांतनी परिक्षाए करीने एटले सिद्धांत कथित व्य
नयनी विचारणाए करीने जे धर्माचार्य गुरु छे ते नपुज्जंति–ते नथी पूराता
नथी मलता परिक्षाने नथी सहन करी शकता; शाथी? सिद्धांत कथित
नने यथार्थपणे न करवाथी. अहीं कोई शंका करे के, एम तो चारित्रनी
थई? त्यारे ग्रंथकर्त्ता कहेछे के, पुणमेगं सद्दहणं–वली अमारे एक जिनव
द्धान छे. जाउ जे कारणमाटे सिद्धांतमां कह्युं छे. डुप्पसहंतं–डुप्रसहआ
धु अंतसुधी एटले डुप्रसह आचार्यसुधी चरणं–चारित्र वर्त्तशे. ए अमारे
न छे. माटे अमे चारित्र मानियें छैए. चारित्रनो निषेध करता नथी; पण
हारे करीने प्रवर्त्ततो देखीए तो कहियें के, कुगुरुने सुगुरु केम कहेवाय. १३७
ण.— जे श्रद्धान छे ते शुं करवायोग्य छे ते कहेछेः— मूलः— ता एगो
मज्झत्थमणोहि समयदिठीए ॥ सम्मं परिरिकयव्वो, सुत्तूण पवाह हल
७ ॥ दोहाः— तो मध्यस्थ मनेयि इक, युग प्रधान श्रुत न्याय ॥ रूढी

रीते परिखवो, तजि प्रवाह् हलवाय ॥ १४० ॥ व्याख्या – ता– ते कारणमाटे पवाह् हलबोलं– लोकप्रवाह् संबंधी जे हलबोल विचार रहित जे कलकल तेने, मुत्तूण– मूकीने वली समयदिठ्ठीए– श्री आचारांग निसीथ व्यवहारादिक सिद्धांतनी दृष्टिए करीने मज्झत्थएहिं– मध्यस्थ राग द्वेष कदाग्रह् रहित जेओनां मन छे ते पुरुषोए एगो जुगपवरो– एक जुगप्रवर एटले सम्यक् ज्ञान क्रियाएकरी सहित एक जुग प्रधान आचार्य होय ते सम्म–सम्यक् प्रकारे परिक्खियव्वो–परखवो निश्चय करवो, पण आचार्यादिकना आचारे करि रहितने आचार्यादिक मानवु नही १४०

अवतरण – कोई आशंका करे के, प्रवाह् हलबोलने मूकीने एम कह्यु, पण लोक प्रवाह्नो हलबोल जो पोते निपुण होइयें तो शु करे? एनुं निवारण करतां कहेछे – मूल – संपइ दसमच्छेरय, नामायरिएहिं जणिय जणमोहे ॥ सुद्ध धम्मओ निउणवि, चलंति बहु जण पवाहाओ ॥ १४१ ॥ दोहा – अब दशम चरज नामगणि, जनित नीच जन कर्म ॥ लोक प्रवाहे निपुण पण, पडिया तजि शुभ धर्म ॥ १४१ ॥ व्याख्या – संपइ–सांप्रत एटले वर्त्तमान दुषमा कालने विषे दसमच्छेरय– आरंभ परिग्रह्मा आसक्त सदा ब्रह्मचारी असयत थका सयत कहेवरावता तेओने जे पूजवु तथा वंदन नमस्कारादिक करवु, ते असंयत पूजा नामे दशमो आश्चर्यछे, वली नामायरिएहिं–नाम मात्र आचार्य केवल लिंगोपजीवि द्रव्यथकी ने भावथकी साधुनी क्रियाए करीने रहित दशमो आश्चर्य नामाचार्य ए बन्ने जाणिय–जाण्यु छे अथवा उपजाव्यु छे, जण–नीच पामर लोकोने उचित मोहे–मोह एटले अति राग तेने एवा जे निउणवि–निपुण पण एटले धर्म कर्मनेविषे चतुर पण सुद्धधम्माउ–शुद्ध शिव कल्याणकारी जिन भाषित जे धर्म तेथकी चलंति–चलेछे, भ्रष्ट थायछे, तो बीजा अनिपुण पुरुषोनी शी वार्ता! केमके, निपुण पुरुष पण धर्मथकी चलेछे, बहु जण पवाहाउ–घणा लोकोनो जे प्रवाह् गतानुगतिक एटले विवेकरहित बोलवु चालवु प्रवर्त्तवु, तेणे करीने ते निपुण पुरुष पण जिन धर्मथकी चलेछे पडेछे माटे लोक प्रवाह्ने मूकीने छेटे रहेवु, भ्रष्टाचार नामाचार्यनो पण परिचय न करवो जो जिनधर्म विधिमार्गनी अभिलाष राख्यो होय तो ए भाव ॥ १४१ ॥

अवतरण – एवी रीते जेओ लोक प्रवाह्मां पडेला छे तेओनु दुष्टपणु देखाड्यु, हवे जे जिनधर्मथी पडेलानु आलंबन लिएछे तेनो दोष, अने जे नथी लेतां तेनो गुण बोलता छता कहेछे – मूल – जाणिज्ज मिच्छदिट्ठी, जे पडणा लंबणा

ठे ठे तेनु स्वरूप कहे ठे – मूल – अभिमाणविसोपगमत्र्यं च पूत्रि देव गु रुणो य ॥ तेहि पि जञ्रो माणो, हीही तं पुव्व डुक्खरिअं ॥ १४४ ॥ दोहा – मा नविषोप समाववा, शुद्ध देव गुरु धर्म ॥ ते सेवे पण मद थयो, हा ते पूर्व कु कर्म ॥ १४४ ॥ व्याख्या – देवगुरुणोय– अढार दोष रहित, बादश गुण सहि त जे अरिहत देव तेनी, तथा सत्तावीश गुणालंकृत गुरु सुसाधु तेनी, पूत्रति– स्तवनातथा वत्कीर्तना करवी, उपलक्षणथी अभ्युत्थान जक्ति बहुमान वदन न मस्कारादिक करवां ते अइमाण विसोपसोपव य च– जात्यादि अभिमानरूप विषने उपशमाववाने अर्थे ठे, च शब्द थकी मिथ्यात्वादि दोष उपशमाववाने अर्थे ठे, केम के, सुदेव सुगुरुनी स्तुति करवाथी अभिनिवेश कदाग्रह अज्ञान अ भिमान टले अने शुद्ध सम्यक्त्वनी प्राप्ति थाय एम आगममां कह्यु ठे तेहिपि– ते देव गुरुये करीने जञ्रो– जो माणो– मान अभिमान देव गुरुविषे थयो केम थयो ते कहे ठे – आ चैत्य मारा पूर्वजोना ठे, एने मूकीने बीजा चैत्यमां उत्स वादिक करवाने केम जवाय? इत्यादिक देवविषे अभिमान, वली ए गुरु मारे अ गीकार करेला ठे, ए गीतार्थ क्रियावत गुणवत ठे तेविना बीजा गुरुओ जले गुण वान होय तो पण तेनी उपर राग धरे नही, उलटु मत्सर जाव आणे इत्यादि गुरु विषे अभिमान थयो, ही ही–ए मोटी खेदनी वात ठे तंपुव्वडुच्चरिय–तेपूर्वनवडु ष्कर्म चरित ठे एटले ते पोतानो दोष ठे एमां बीजा कोईनो दोष नथी॥१४४॥

अवतरण -- जेने खोटा अभिमानरूप धन ठे, ते सदैव असद्भुत पदार्थ ने माने ठे, तेने उपालन सहित प्रगट दोष जणावीने निर्जत्स्ना करता ठता कहे ठे -- मूल – जो जिणआयरणाए, लोओ न मिलेइ तस्स आयारे ॥ हा हा मू ढ करिंतो, अप्प कह नणसि जिण पणय ॥ १४५ ॥ दोहा – जिन आचरण थ की जुदो, जे जण तसु आचार ॥ रे सठ करतो किम कहे, हु जिन जगत उदार ॥ १४५ व्याख्या – जोलोओ– जे पासडादिक लोक ठे ते जिण आयरणाए– जिन जाषित आचरणानी साथे नमिलेइ– नथी मलता, तस्स– ते पासडादिक नो जे आयारे– निजमति कल्पित जे आचार ठे तेने करिंतो - अगीकार करतो ठतो हा हा– मोटी खेदनी वात ठे मूढ– हे मूर्ख, अप्प– पोताने जिणपण यं– जिनने विषे सुगुरुने विषे नमस्कार करवावालो, स्नेह करवावालो कह– के म नणसि– तु कहे ठे, जो जिनजाषित आचरणाने आचरतो होय तो तारु कह्यु सजवे, माटे फुव बोलीने शासारु– फोकट आत्माने विटबना करेठे ॥ १४५ ॥

अवतरणः— अही कोई वितर्क करे के, जिन आचरणा मूकीने कोई पासछा दिकनी कहेली आचरणा अंगीकार करता हशे, तेनो उत्तर कहेछेः— मूलः— जं चिय लोओ मन्नइ, तंचिय मन्नंति सयल लोआवि ॥ जं मन्नइ जिणनाहो, तंचि य मन्नंति किवि विरला ॥ १४६ ॥ दोहाः— जाकूं माने लोक तस, माने लोक अनेक ॥ माने जास जिनेंद्र तसु, माने कोइक छेक ॥ १४६ ॥ व्याख्याः— लोओ-पासछादिक लोक जंचिय- जेआचरणाने मन्नई- मानेछे सयल लोआवि— तादृशवि वेक विकल सकल लोक पण तंचिय—ते पासछादिकनी नापेली आचरणाने म न्नंति—मानेछे, जेम लींबडानो कीडो लींबडाने सारुं मानेछे, तेम, वली जिणनाहो—जि ननाथ जं—जे आचरणाने मन्नइ—मानेछे, सम्यक् जाणेछे, तेम किवि विरला—केटलाए क विरला लघुकर्मी जीव तंचिय—ते जिननाषित आचरणनेज मन्नंति—मानेछे, यथाशक्तियें पाले, आराधे छे, जिनधर्म पालवुं ते नदीना पूरनी सांमे जवा बरा वर छे. माटे कोईक लघु कर्मी जीव जिननाषित धर्म आचरणने मानेछे किंव हुना एटले घणुं कह्याथी शुं! ॥ १४६ ॥

अवतरणः— अही कोई वितर्क करे के, लोको प्रायेकरी लोकोनुंज कहेलुं मानेछे, जिनराजनुं कहेलुं मानता नथी, एवो तेओनो स्वनावज छे; ते नले पण जिनराजनुं कहेलुं न मान्या छतां अने लोकोनुं कहेलुं मान्या छतां जे दोष थायछे ते कहे छेः— मूलः— साहंमि आउ अहिओ, बंधसुआईसु जाण अणुराओ ॥ तेसिं नहु सम्मत्तं; विन्नेयं समयनीईये ॥ १४७ ॥ दोहाः— साधर्मीथी अधिक जस, परि जन ऊपर प्रेम ॥ तास न समकित मानिये, आगम नीती एम ॥ १४७ ॥ व्या ख्याः—जाण—जेने साहम्मिआउ—सम्यक्त्वादि गुणे करीने जे सरखा ते साधर्मी, कहि यें तेथीपण बंधसुआइसु—बांधव पुत्रादिकनेविषे आदि शब्दथी माता पितानार्यादिक नेविषे अहिओ—अधिक अणुराओ—अणुराग स्नेह वर्त्ते छे. तो तेसिं—तेने नहु—नही ज सम्मत्तं—सम्यक्त्व, होय ए वात समयनीईये—सिद्धांतनीतिएकरीने विन्नेयं—विशेषप णे जाणवा योग्य छे. साधर्मीनी साथें कोई प्रकारनो कलह अथवा क्लेश करवो नही. वली साधर्मी सीदातो होय तो तेने सहाय करवुं, केमके, शास्त्रमां कह्युं छे के, संसारमां साधर्मीना जेवुं बीजुं कोई सगपण नथी. साधर्मीनी सेवा नक्ति वाछलताए करीने सम्यक्त्व विशेष निर्मल थाय. माटे बंधु सुतादिक सर्व स्वज ननो अनुराग ते करमबंधनुं कारण ए दोष जाणी साधर्मीनेविषे अधिकतर धर्मा नुराग निरंतर राखवो एजश्रेय गुण छे. ॥ १४७ ॥

षष्टी शतक

अवतरण – एवी रीते लोकाचारने माननारनो दोष प्रगट करीने हवे काचार संबंधी निषेधनो उपदेश कहेछे – मूल – जइ जाणिसि जिण ना यायारा विपरकए नूओ ॥ ता तं त मन्नतो, कह मन्नसि लोअ आयार ॥ दोहा – जिनपति लोकाचारथी, जो तु जाणे भिन्न ॥ तो किम लोकाचार माने प्रभु मन्न ॥ १४८ ॥ व्याख्या – जइ–जो जाणिसि–तु जाणेछे, जिणना जिननाथ एटले जिनवरेंद्र छे ते लोआयारा–दर्शनभ्रष्ट पासत्थादिक तथा च शैनी ब्राह्मण परिव्राजक त्रिदंडी तापसादिक जे लोक तेओना आचारथकी वि रकए नूओ–विपक्षनूत छे, एटले न्यारो छे अथवा ते लोकोना आचारोनो नि नाथ विपक्ष नूत छे एटले शत्रुरूप छे एम जो हे नइ तु जाणेछे, ता–तो तं– तु तं–ते जिननाथने मन्नतो–मानतो अथवा जाणतो छतो लोअआयार–लोक ना आचारने कह–केम मन्नसि–तु मानेछे ॥ १४८ ॥

अवतरण – तु लोकाचारने केम मानेछे? एम कह्यु तेनेज फरी दृढ करेछे, तथा जिनेंद्रने मान्या थका पण जे मुग्ध लोको छे ते बीजा देवाने मानेछे ते दे खाडता छता कहेछे –मूल – जे मन्नेवि जिणिंद, पुणोवि पणमति इअर देवाण॥ मिछत्त सन्निवायग, गह्गाण ताण कोविज्जो ॥ १४९ ॥ दोहा – जिनवरने प्रण मी वली, जे प्रणमे अन देव ॥ सन्निपात मिथ्यात हत, तस कुण वद इहेव ॥१४९॥व्याख्या – जे–जे मुग्ध तत्वना अजाण छे, ते जिणिंद–जिनेंद्र देवने पण म न्नेवि मानेछे अने पुणोवि–वली पण इयरदेवाण–इतर जे जिनेंद्र दवथी बीजा ह रि हर ब्रह्मादिक रागी द्वेषी मिथ्यादृष्टि देव छे तेने पणमति–प्रणम ने एटले पूजे छे ताण–त मिच्छत्तसन्निवायगगहाण–मिथ्यात्वरूप सन्निपात राग करि ग्रस्त थएला गत्रायना अथवा व्याप्त थएलानो कोविज्जो–वैद्य कोण थाय? अपितु तेनो कोई वैद्य नथी केमके जने अमृत समान जिन धर्म पुरिस विषसमान मिथ्या धर्म जेवा थया तेना हितोपदेशक गुरु वैद्यराज शु उपाय करे? ॥ १४९ ॥

अवतरण – हवे मिथ्यात्वरूप सन्निपात रोगेकरी ग्रस्त थएना शु करेछे त कहेछे – मूल – एगो अ गुरू एगो वि सावगो चेइआणि विवहाणि ॥ तत्थ य ज निणदव्व परप्पर तं न विच्चंति ॥ १५० ॥ दोहा – गुरु एक वनि श्रा वक एक, चैत्य विविध विवेर ॥ ताम जो जिनद्रव्य ते दिए परस्पर नर। १५०॥ व्याख्या –एगोयगुरु–एकज गुरु केमके जिग आचार एक माटे एक गुरु, एगावि साव क पण श्रावक कारणके सर्वना देवगुरु धर्म एक माटे श्रावक पण एक चइआणि

विवहाणि– चैत्य देहरासर अथवा जिनप्रतिमा ते विविध अनेक छे; तथापि जि
नेंद्र देव सर्व सरखा माटे चैत्य पण एकज; ए त्रणे एक एक थए थके पण त
द्वय– त्यां एटले ते श्रावकोनी पाशे जं– जे जिणदवं– जिन द्रव्य छे; उपल
क्षणथी ज्ञान द्रव्य साधारण द्रव्य छे तं–ते द्रव्य परुप्परं–परस्पर एटले माहो
मांहे चैत्य ज्ञानादिक कार्य पडेछते न विक्रंति– नथी वेचता एटले नथी आप
ता; ते लोकोनी सुखना लालची गुरु निर्मल उपदेश तेने देता नथी; पण उलटुं
जेथी अहंकार ममकार पणु वधे तेवो उपदेश करे छे. ए भाव छे ॥ १५० ॥
अवतरणः– एम करतां छतां ते गुरु आदिक छे के नथी? ते विषे कहे छेः–
मूलः– ते न गुरू नो सट्टा, न पूइओ तेहिं होइ जिणनाहो ॥ मूढाणं मोह ठिई,
सा नज्जइ समय निउणेहिं॥१५१॥ दोहा.– ते गुरु नहि श्रावक नही, नहि प्रभु
पूजक तेय ॥ मोह थिती मूढोतणी, जाणी श्रुत निपुणेय ॥१५१॥ व्याख्याः–
ते– ते नगुरु–तेगुरु नथी केम के, सुख दाक्षिणताएं करीने जिनोक्त निर्मल उपदेश
नथी देता माटे तथा नो सट्टा–ते श्रावकपण नथी; केम के, चैत्यादि द्रव्य चैत्यादि का
र्य पमाथी ममताने लीधे नथी वेंची आपता माटे ते श्रावकपण नही कहेवाय वली
तेहिं–तेणे जिणनाहो–जिननाथ पण नपूइओ होई–पूज्यो नथी एम छे केमके
जे ममकारादिक क्लिष्टचित्तवाला यद्यपि पूजादिक करे तथापि तेने पूजादिक कर
वावाला न कहिये. माटे शिष्य कहेछे तो तेने शुं कहिये? गुरु कहेछे मूढाणं–मू
र्खोनी मोहठिई–मोहस्थिति कहिये. सा–तेवात समय निउणेहि–सिद्धांतमां जे
निपुण पुरुषछे तेने नज्जइ–जणाय छे पण बीजा जाणता नथी ॥ १५१ ॥
अवतरणः– पूर्व गाथामां कह्युं नथी ते गुरु तेजवात प्रगट करता छता कहे
छेः–मूलः–सो न गुरू जुग पवरो, जस्स वयणंमि वट्टए भेओ ॥ चिय भवण स
ड्ढगाणं, साहारण दव्वमाईणं. ॥ १५२ ॥ दोहाः–चैत्य भुवन वलि श्राद्धजन,
साधारण द्रव्यादि ॥ तास भेद जसु वचनमें, तेगुरु छे जगदादि ॥ १५२ ॥ व्या
ख्याः– जस्स–जेगुरुना वयणंमि–वचने करीने एटले कुटिल उपदेशे करीने तथा
पोतासंबंधी चैत्यादि करावबुं ते तमने प्रधान छे, एम साक्षात् उपदेश दीधाथी
चियभवण–चैत्यभवनोने विषे एटले जिन प्रासादोने विषेतथा सड्ढगाणं–श्रावकोने
विषे वली साहारणदव्व माईणं–साधारण द्रव्यादिकने विषे आदि शब्दथी ज्ञान
द्रव्यने विषे भेओ–भेद वट्टए–वर्त्ते छे; एटले अहंकार म
पोता संबंधी चैत्य तथा श्रावकादिक थापीने माहोमांहे जे जगडा

पाढे ठे ते जुग पवरो जुग प्रधान गुरु–आचार्य न–नथी केम के, प्रथम जे वि शेषण कह्युं ते कुगुरुनुं ठे माटे ते जुगप्रधान गुरु न जाणवो ॥ १५२ ॥

अवतरण –अही कोई वितर्क करे के, जेना वचन थकी चैत्य नवनादिकोनो नेद वर्ते ठे, ते जुग प्रवर गुरु न होय, एम जे कह्यु, ते तो तीर्थंकरादिकवर्त्ते ते कान नेविषे युक्त ठे, पण हमणा तो नेद विना कोई पण मर्यादा नहोय। ए आश का दूर करवाने साम्प्रतहमणा पण सिद्धांत कथित विधिनेविषे जे पुरुष नथी प्रवर्तता तेओना दोष देखाडता ठता कहे ठे – मूल – सपइ पहुवयणेणवि, जाव न उ ह्रसइ विहि विवेयत्तं ॥ ता निविड मोह मिच्छ त गठिया दुठ माहप्प ॥१५३॥ दोहा –प्रगटे न विधि विवेक अव, प्रनु वचने पण जाव ॥ ताव निवड मिथ्या त्वनी, गवितणो अनुनाव ॥ १५३ ॥ व्याख्या –सपइ–सम्प्रति एटले वर्तमान का ळनेविषे पण पहु वयणेणवि–प्रनु नाषित जे वचन आगम ते सांनळ्याथी जा व–ज्यां सुधी विहिविवेयत्त–जिन इव्यादिकनु जिनागम उक्त प्रकारे वधारवु, खर चवु, रक्षण करवु, तथा इव्ये नावे पवित्र थईने आशातना टाळी, अनिगम सा चवी, जिनपूजा करवी, सुगुरु नक्ति करवी, तथा दोष रहित सामायक प्रतिक्रम ण पोषध उपवास करवा, तथा निरतिचार सम्यक्त्व सहित सर्व व्रत पाळवा, इ त्यादिक विधिविवेक पणु जेने न उल्लसइ–नथी उल्लासने पामतो, ता–ते कारण माटे ए निबिममोहमिछत्तगठिया दुठ माहप्प–निबिम एटले अतिदृढ मोह मिथ्यात्वनी गांठनु कोई दुष्ट माहात्म्य ठे, एटले प्रनाव ठे, एम जाणवु केमके ठती समर्थाईये सिद्धांतोक्त विधिनेविषे न प्रवर्त्तवु ते प्रनुना वचननी आशातना ठे ॥ १५३ ॥

अवतरण – ते कारण माटे हवे प्रनुवचननी आशातनानु दुष्टपणु कथन क रतां ठता कहेठे – मूल – वयण मरण नयाइ, दुहाइ तिरकाइ नेअ दु रकाइ ॥ दु रकाण दुह निहाण, पहुवयणा सायणा करण ॥ १५४ ॥ दोहा – बधन मरण नयादि दुख, नहि तीक्ष्ण दुख जाण ॥ जे अविनय प्रनु वचननो, ते दुख दोष निधान ॥ १५४ ॥ व्याख्या – वधन–दोरडादिके करी बांधवु, मरण–आयु अथ वा प्राणनो नाश, नयाइ–इह लोकादिक सात नय इत्यादिक जे दुरकाइ–दु ख ठे ते, तिरकाइ–तीक्ष्ण एटले आकरा दुकाइ–दु ख नेअ–नथीज थोडाकाळ रहेठे पण पहुवयणा सायणाकरण–प्रनुना वचननी आसातनानु जे करवु, ते दु रका ण–जन्ममरणादिक दु खनु दुहनिहाण–दु ख निधान ठे, एना जेवु बीजु कोई समारमां दु ख नथी ए नाव ॥ १५४ ॥

अवतरण.— एवी रीते आशातनाना करनार संबंधी अनंत दुःख कह्यां, हवे वर्त्त मानकालादि दोष थकी यथोक्त विधि करवाने असमर्थ एवो जे पोतानो आत्मा तेने निंदतां उतां कहे ठेः— मूलः— पहुवयण विहिरहस्सं, णाऊणं जाव दीसए अप्पा ॥ ता कह सुसावगत्तं, जं चिन्नं धीर पुरिसेहिं ॥ १५५ ॥ दोहाः—वीर वच न विधि सार लखि, जब निज आतम जोय ॥ तो कहँते गृहि धर्म जे, गृह्यो धीर पुरुषोय ॥ १५५ ॥ व्याख्याः— पहुवयण विहि रहस्सं—प्रभुना वचन सिद्धांत नो जे विधिनो सार तेने नाऊणं—जाणीने जाव—यावत् एटले ज्यांसुधी अमे अप्पा— पोतानो आत्मा दीसए—देखीए ठैए. ता—त्यारे एम विचार थाय ठे के, मारेविषे कह—क्यांथी सुसावगत्तं—सुश्रावकपणुं धीरपुरिसेहिं—कामदेव अरणक श्रावकादिक धीर पुरुषोए जं चिन्नं—जे आचर्युं ते. ॥ १५५ ॥

अवतरणः— कोई वितर्क करेठे के. जो धीर पुरुषोए अंगीकार करेलुं श्रावक पणुं नथी तो शा कारणथी देवपूजादि अनुष्ठानविधिनेविषे पोताना आत्मा ए प्रकारे पर्यासीए ठैए एटले जोडिये ठैए? ए आशंकाए करीने कहेठेः— मूलः— जइवि हु उत्तम सावय, पयडीए चडण करण असमच्छो ॥ तहवि पहुवयण कर णे, मणोरहो मज्झ हिययम्मि ॥ १५६ ॥ दोहाः— यदपि सुश्रावक सेढिए, चढण करण असमर्थ ॥ तदपि मनोरथ मुजहिये. कबहू करूं तदर्थ ॥१५६॥ व्याख्याः— जइवि—जोपण हु—निश्चे, उत्तम सावयपयडीए—पूर्वोक्त उत्तम श्रावकोनी पगथीए एटले श्रेणिए चडण करण असमच्छो—चडण करवाने एटले आरोहण करवाने अ समर्थ एवो हुं छुं तहवि—तथापि एटले तोपण पहुवयण करणे—प्रभुनापित वच न अंगीकार करवानेविषे एटले श्रीवीतराग कथित जे विधिनुं करवुं तेनेविषे म णोरहो—मनोरथ मज्झहिययम्मि—मारा हृदयमां वर्त्तेठे, एटले जोपण उत्तम श्राव कोनी पदवीने आरोहण करवाने हुं असमर्थ छुं तो पण प्रभुवचन अंगीकार क रवानो मनोरथ मारा हृदयमां वर्त्तेठे, अने पोतानी यथाशक्तिप्रमाणे आराधु छुं, तेमाटे सम्यक्त्व प्राप्ति योग्य कोईएक श्रावकना भेदमां हुं निश्चयतो श्रीवीत राग देव जाणे. ॥ १५६ ॥

अवतरण.— हवे वली ते जिनवचन अंगीकार करवाना मनोरथनी वांछा कर ता उतां कहेठे, जे कारण माटे प्रभुना वचन अंगीकार करवानो अमारा मनमां मनोरथ ठेः— मूलः— ता पहु पणमिय चलणे, इक्कंपत्थेमि परम नावेण ॥ तुह व यण रयण गहणे, अइ लोहालुन्न हुज्ज मया ॥ १५७ ॥ दोहाः— तां

प्रज्ञुनमत, चरणे जाचू एक ॥ होय सदा मुज तुम वचन, रतन लोन अतिरेक ॥ १५७ ॥ व्याख्या – ता–ते कारण माटेज पहु–हे प्रनो, श्रीवीतरागदेव, चर णे–तमारा चरण जुगलने पणमिअ–प्रणाम करीने परम नावेण परम उत्कृष्ट नावथी इक्क–एक वस्तु पत्थेमि–हु प्रार्थु छु एटले मागु छुं, ते एक वस्तु तुहवयण रयण गहणे–तमारा वचनरूप दुःख दारिद्र दौर्नाग्यादिक दूर करवाथी रत्ननीप ठेरत्न, तेनु ग्रहण करवानेविषे अइलोहो–अतिलोन एटले अति प्रबलपणुं मज्ञ–अ मारे हुज्ञा–होय सया–सदा ॥ १५७ ॥

अवतरण – कोई वितर्क करे के, एवीरीते शासारु इच्छा करवी पडे? पोतानी मेलेज जिन वचनरुप रत्ननु ग्रहण करवानेविषे लोन थशे ? ए आशंका करीने कहेछे – मूल – इह मिछवास निक्किठ नावउगलिअ गुरुवि वेआण ॥ अम्हाण कह सुहाइ, सनाविज्ञति सुमिणेवि ॥ १५८ ॥ दोहा – मिथ्यावास सुमनित मन, गत विवेक हममांहि ॥ कहाथि सुख सनाविए, स्वपनविषे पण नाहि॥१५८ व्याख्या – इह–ए पाचमां दूषम कालनेविषे मिछवास–मिथ्यात्वनी वासनाए अ त्याए करीने निक्किठ नावउ–निक्कीष्ट एटले अति मलिन नाव परिणाम थयो ते थी गलिअ गुरुविवेआण-- गलायो छे एटले नाशने पाम्योछे तत्व अतत्व सबधी प्रथग नाव एटले न्यारा न्यारा नाव, जे मोटा विवेक विचार जेना एवा जे अ म्हाण– अमे, तेने सुमिणेवि - स्वप्नेविषे पण सुहाई-- जिनवचनरूप रत्न ग्रहण करवु ते सुख हेतु माटे सुख ते कह–शा प्रकारे करीने सनाविज्ञति–सनाविए एटले विचारिए अथवा थापिए? केमके, मिथ्यात्वे करीने वासित छे मति जेनो, अने गयो छे मोटो विवेक जेनो तेने तेवु सुख क्यांथी थाय? ॥ १५८ ॥

अवतरण –शीरीने क्यांथी होय ते रीत कहेछे –मूल –ज जीविअमित्तंपि हु, धरे मि नाम च सावयाणंपि ॥ तं पिपहु महा चुज्ज, इह विसमे दूसमे काले॥१५९॥ दोहा – धरु जो जीवित मात्र पण, नाम श्राद्धनो सार ॥ तेपण अति अचिरज प्रनु, दूसम काल मजार ॥ १५९ ॥ व्याख्या – इहविसमे दूसमेकाले–आ विषम दूसम कालनेविषे जं–जो जीविअ मित्तंपि–देश सयमरूप जीवितमात्रने पण को ईक प्रकारना नंगे करीने हु–प्रकटपणे सावयाणंपि–सम्यक्त्व पूर्वक द्वादश व्रत धारी श्रावकोनो च–वली नाम–नाम मात्रप्रते धरमि–हु धारण करुछु, तं पि–ते पण पहु–हे प्रनु, हेनाथ महा चुज्ज–मोटो आश्चर्य छे, बीजु वधारे शु कहिये?॥

अवतरण–एप्रकारे कालादिकना अनुसारे करीने पोताना सम्पनें कहीन हवे

पोतानुं जन्म सफल करवाने अर्थे सुगुरुने विनती करता उता कहेछे:—मूलः—परिना विऊण एवं, तह सुगुरु करिज्ज अम्ह सामित्तं ॥पहुसामग्गि सुजोगो ; जह सहलं होइ मणुअत्तं॥१६०॥दोहा.—इम विचार करि तिम सुगुरु, हमने करो सनाथ॥सुलन्न होय जिम नरपणुं शिव सामग्री साथ ॥ १६० ॥ व्याख्याः— एवं—दूषमा कालनेविषे जिन नाषित धर्मनुं दुर्लनपणुं उे ए प्रकारे परिनाविऊण—परिनावीने एटले वीचारीने सु गुरु—हे सुगुरु, हे शोनन आचार्य एटले हे सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रादि गुण संपन्न सुगुरु तह—तेम अथवा ते प्रकार अम्हसामित्तं—अमारा संबंधी स्वामीपणाने करिज्ज—करो एटले ते प्रकारे अमारा ऊपर तमे स्वामीपणुं धारण करो. जह—जेम अथवा जे प्रकारे पहुसामग्गिजोगो—प्रजुदर्शनादिकनी सामग्रीनो एटले प्रजुनापित धर्मसामग्रीनो सारो योग थाय, ते थएथके मणुअत्तं—मनुष्यपणुं सहलं—सफल होइ—थाय, केमके, संसारमां चार अंग जीवने पामवा डुर्लन उे, तेमां प्रथम मनुष्य पणुं, बीजुं सिद्धांतनुं सांनलवुं, त्रीजुं सिद्धांतने सांनलीने जिन वचननी श्रद्धा करवी, श्रद्धा थया पठी तप संयमने विषे पराक्रम फोरववो; ए चार अंग डुर्लन उे. तेमां प्रथम मनुष्य पणुं डुर्लन कह्युं, पण ते मनुष्य पणुं सफल क्यारे थाय, ज्यारे शेष त्रण अंगनी प्राप्ति थाय माटे हे सुगुरो अमारा ऊपर तमे स्वामीपणुं करो के जेम प्रजु नाषित धर्म सामग्रीनो रुमो जोग थाय, ते थवाथी मनुष्यपणुं सफल थाय? ॥ १६० ॥

अवतरण.-- हवे समाप्तिने अर्थे ग्रंथकार पोतानुं नाम कथन पूर्वक तथा तेना अध्ययनादिकथी थता फलना कथन पूर्वक अने स्मरणनी उपादेयता प्रते एटले तेनुं जे अंगीकारपणुं तेने कहे उे -- मूल.— एवं नंमारिअ नेमि चंदरइआउ कइविगाहाउ ॥ विहि मग्गरया नवा, पढंतु जाणंतु जंतु सिवं ॥ १६१ ॥ दोहा नेमिचंद नंमारिकृत, गाथा केइक एम ॥ विधि मग मग्न नविक नणो, लखो लहो शिव क्षेम॥ १६१ ॥ षष्टि शतक प्राकृत थकी, दोधक किया सुनास ॥ दोधक शोधक बुद्धिजन, सेवक मोहन तास ॥ १६२ ॥ व्याख्या·—एवं—ए प्रकारे सज्जन नंमारीनो पुत्र अने जिनेश्वर सूरीनो पिता प्रसिद्ध एवो जे नंमारीअ नेमिचंद—एटले नंमारिक गोत्री नेमिचंद श्रावक तेणे रइआउ—रचिउ जे कइवि—केटली गाहाउ—गाथा? एकशो ने एकसठ; ते गाथाउने विहिमग्गरया—श्री वीतराग नाषित विधिमार्ग एटले मोक्षमार्गनेविषे रत एटले तत्पर एवा जे नवा—नव्य जीव ते पढंतु—सूत्र थकी नणो, जाणंतु—अर्थ परिज्ञानेकरी जाणो; सूत्रार्थ बेहु सम्यक् प्र

कारे अन्यासीने सिवं–शिवप्रत्ये एटले निरुपद्रव मोक्षने जाउ–पामो ए ग्रंथ न
ण्याथी तथा ग्रथनो सम्यक् प्रकारे अर्थ जाण्याथी निश्चल सम्यक्त्व थाय छे, निश्च
ल सम्यक्त्वथी क्षायिक ज्ञान चारित्र थाय ते क्षायिक ज्ञान चारित्रेकरी अनुक्रमे वछि
त अर्थनी सिद्धि थाय वली वछित अर्थ छे ते नव्य जीवोने शिव प्राप्तिज जाणवी,
बीजो कोई वछितार्थ नथी तथा शिव शब्द ग्रंथना अते अगीकार कर्यो ते मगल अ
थवा कल्याणने अर्थे जाणवो इति गाथार्थ ॥ १६१ ॥ इति श्रीषष्टी शतक समात

तपोरत्न श्री गुण सुंदर उपाध्यायकृत षष्टी शतकनी टीका ते श्रीशांति
सागरजी महाराजजीनी समीपे श्रीराजनगरमध्ये श्री गुरु बुद्धिविजय महाराज
जीनो उपासक जे यक्ष गोत्री उसवाल मोहनलाल, तेणे सांनली धारी विचारीने ते
नो किंचित् नावार्थ ग्रहण करीने षष्टी शतकनो अक्षरार्थ केवल नाषारूप बालाव
बोध कर्यो; तेमां श्री वीतरागनां वचनथी जे कांई अधिकु उछुं विपरीत लखाणुं
होय, कोई प्रकारनु उत्सूत्र लखाई गयु होय, तथा कोई कानामात्रादि ह्रस्व दीर्घनो
फरक पमयो होय, तस्स मिछामि डुक्कम एटले तेनु जे पाप मने लाग्यु होय, ते
मिथ्या फोकट थाउ वली स्याद्वाद श्री जिनमत निपुण परोपकार स्वनाववाला
पुरुषोए मुज अल्पमति उपर अनुग्रह करीने आ षष्टी शतकनो बालावबोध शोधी
लेवो एज विनती छे ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

इति श्री षष्टीशतक नामक ग्रंथ टो
का तथा बालावबोध सहित समाप्त

॥ श्री वीरपरमात्मायनमः ॥

सकलपंमित चक्रचक्रवर्त्तिपंमित श्रीक्षमाविजयगणि शिष्यमुख्यपंमित परपद मिनीनालतिलक पंमित श्रीजिनविजयगणि गुरुभ्योनमः सिद्धि बुद्धि विधायिने श्रीमत् गौतम स्वामिनेनमः

अथ श्री पंमित उत्तम विजयजीकृत संयमश्रेणीनुंस्तवन अर्थसहित प्रारंभियेछे.

श्रीवर्द्धमानंजिनंनत्वा ॥ वर्द्धमानगुणास्पदं ॥
स्वोपज्ञसंयमश्रेणी ॥ स्तवस्यार्थोवितन्यते ॥ १ ॥

॥ ढाल पहेली प्रथम गोवालातणेनवेजी एदेशी ॥

केवल ज्ञान दिवाकरूजी ॥ सिद्ध बुद्ध सुखदाय ॥ आतम सं पद भोगवेजी ॥ वर्द्धमान जिनराय ॥ गुणोदधि शासन ना यक वीर ॥ मेरू महिधर धीर ॥ गुणो० ॥ शास० ॥१॥ एआंकणी

अर्थ ॥ समस्त केवलज्ञानावरणी कर्मना क्षयथकी उपनुंजे केवलज्ञान तद्रूप सूर्यछे क्षायकभावें सकलगुण निष्पन्नसिद्धछे समस्त वस्तुस्वभावनुं बुद्धके० जाण छे उपकारीपणे सर्वसुखनुं दातारछे स्याद्वादपणे परिणमित अनंतगुण पर्यायरूप आत्मसंपदाने भोगवेछे एह्वो चोवीसमो तीर्थंकर सामान्य केवलीउंमां राजा सरिखो श्रीवर्द्धमानस्वामी गुणोनोसमुद्र गुणरूप रत्ननी उत्पत्तिनुं स्थानक वर्त्तमान शासननुं अधिपति श्रीवीरपरमेश्वरछे वली उपसर्ग परिसह आवेथके अभिगरह्या माटे मेरूनीपरे धीरछे ॥१॥ एटले वंदनात्मक स्तवनात्मक अने वस्तुनिर्देशात्मक ए त्रणप्रकारना नमस्कारछे तेमां स्तवनात्मक इष्टसमुचित नमस्कारकर्यो ॥ १ ॥

अनुक्रमिं संयम फरसतोजी ॥ पाम्यो क्षायक भाव ॥
संयमश्रेणी फूलडेजी ॥ पूजुं पद निष्पाव ॥ गु० ॥ २ ॥

अर्थ ॥ अनुक्रमें उत्तरोत्तर प्रधान संयमस्थानक फरसतोथको यदुक्त दशाश्रुत स्कंधे –'तस्सणंभगवतस्स अणुत्तरेणनाणेण अनुत्तरेणदंसणेण अनुत्तरेणचरित्तेण अनुत्तरेणआलएण अनुत्तरेणविहारेण अनुत्तरेणवीरिएण अनुत्तरेणअज्जवेण अनुत्तरेणमद्दवेण इत्यादिक मोहनीय कर्मनुं क्षयकरी उत्कृष्ट संयमस्थानरूप क्षीण मोह गुणस्थानक पाम्यो एहवो श्री वर्द्धमानस्वामी तेना पापरहित चरणकमल ने संयम श्रेणीरूप भावफूलेंकरीने पूजुंछुं० अर्चुंछु एवदनात्मक नमस्कार कस्यो॥२

वाचक जशविजये - रच्योजी ॥ संखेपे सज्झाय ॥ विस्तरि
जिन गुण गावताजी ॥ जीहा पावन थाय ॥ गु० ॥३॥

अर्थ ॥ प्रथम संयमश्रेणीनु सज्झाय तिक्ष्णबुद्धिवालाने गम्यथाय एवुन्यायवा दिओनेविषे मुकुटमणि समान उपाध्याय श्री जशोविजय गणिये रच्युंछे पण तेनी रचना शक्षेपेकरीछे माटे विस्ताररुचीने अथ विस्तारे संयमस्थानक गर्भित जिनेश्वरना गुण गावता जीभ तथा जन्म पवित्रथाय उत्तमजीवने एवोज मनोर्थ होयछे यदुक्त चिरसंचिय पावपणासणीए भवसयसहस्समहणीए चोवीसजिनवि णि गायकहा वोलंतुमेदीहा एटले मगन्न अभिध्यादिककह्या ॥ ३ ॥

बारकषाय खय उपशमेजी ॥ सरव विरति गुण ठाण ॥
तेना आदिम ठाणमाजी ॥ पर्यवनु परिमाण ॥गु०॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवे आयना बारकषायने क्षयोपशमें एटलेजे दलिक उदयआव्यां तेनुं क्षपकरे अनेजे उदय नथीआव्या तेने उपशमावे अने प्रदेशें उदयआव्याने वेदे एहवी अवस्थायें वर्त्ततायका अविरति देशविरतिप्रमुख बारकषायने अभावे उपजुंजे सर्ववि रतिरूप छठो गुणस्थानक तेहना सर्वजघन्यमांजघन्य स्थानकमां एटले आदिमजे प्र थम स्थानक तेमां निर्विभाग भाग एटले जेना केवलीनी बुद्धियेंपण एकसमना बे अंसनथाय एवाजे चारित्रनापर्याय अथवा अंस तेनुं प्रमाण जे संख्या तेकहेछे॥४॥

सरवाकाश प्रदेशथीजी ॥ अनंत गुणा अविभाग ॥
असतकल्पना भाष्यमाजी ॥ भाखे तु महाभाग॥गु०॥५॥

अर्थ ॥ लोकालोकना आकाशप्रदेश जेटलामें अनंतछे एटले अनंतानी गणना अनंत प्रकारनीछे तेमा लोकालोकना आकाशप्रदेशनी गणनानुं जे अनंतुछे तेन अनंतगुणो कहियें एटला अविभाग छठागुणस्थानकना सर्वथी जघन्यमां जघन्य

स्थानक जे पहेलुं स्थानक तेमांहे एरीतें वृहत्कल्पनाभाष्यमां हे महाभाग्य म हापूज्य तुं कहेछे यडुक्तं तेकत्तियापएसा सव्वागासस्समग्गणा होई, तेतत्तियापएसा अविभागतउ अनंतगुणा. ॥ १ ॥ इति ॥

एरीतें सर्वविरतिगुणस्थानना सर्वथी जघन्यमां जघन्य पहेला संयमस्थानमां एटला निर्विभागहोय ए निर्विभाग सर्वोत्कृष्ट विशुद्ध देशविरति गुणस्थानकना निर्विभागथी समस्त जीव जेटले अनंतेछे तेटले अनंते गुणता जेटला अनंताथा य तेटला जाणवा ग्रंथांतरे एमपण कह्युंछे जे उत्कृष्ट, देशविरति विशुद्धस्थानक ना अविभाग दशहजार असत्कल्पनायें कल्पियें पछी सर्वजीवतो अनंताछे तेनेप ण असत्कल्पनायें एकशत प्रमाणकल्पिये पछीते परस्पर दशहजारने सोगुणाकरि यें तेवारें दशलाखथाय एटला अविभाग सर्वविरतिना प्रथम संयमस्थानकमांहे.॥५॥

भाग अनंते आदिथीजी ॥ बीजे ठाणे वृद्धि ॥ इम

अनंत भागुत्तरेजी ॥ थानकनि होय सिद्धि ॥गु०॥६ ॥

अर्थ ॥ एपहेला संयमस्थानथकी बीजा संयमस्थानकमां अनंतमें भागें वृ द्धिहोय एटले पहेला संयमस्थानकमां जेटला अविभागछे ते जेटलाचउदराजलो कमां जीवछे ते सर्वजीवने सरखेभागें वहेंचीआपता एकजीवनेभागें जेटला संय मना अविभागआवे तेटला अविभागनी पहेला संयमस्थानना अविभागकरतां बीजा संयमस्थानमां वृद्धिथाय एवीरीते बीजा संयमस्थानथी वली त्रीजा संयम स्थानमां पण तेटलाज अविभागनी वृद्धिथाय तेम त्रीजाथी चोथामां यथोत्तर अनंतभाग वृद्धिथाय तेमज आगलपण संयमस्थाननी निष्पत्तिथाय हवे एमवृ द्धि करता करता सर्व केटला संयमस्थानकें एक कंडकथाय तेकहेछे. ॥ ६ ॥

अंगुल भाग असंखमांजी ॥ जे आकाश प्रदेश ॥ तेता

थानक नीपजेजी ॥ कंडक तास निवेश ॥ गु० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ एक अंगुलमात्र आकाशक्षेत्रना असंख्यातमां भागमां जेटला आकाश प्रदेश छे तेटला अनंतभाग वृद्धिना संयम स्थानक नीपजे के० नीपजावियें एटला संयमना स्थानकनो समुदाय तेने आगम परिभाषायें कंडकनी स्थापना कहियें उक्तंच कंडंतिएछजनई अंगुलभागो असंखिज्जो. ॥ ७ ॥

बीजा कंडक ठाणमांजी ॥ आदि असख्यांस जाण ॥
तदनंतरनत भागनाजी ॥ थानक कंम्क माण ॥ गु०॥७॥

अर्थ ॥ हवे पूर्वजे अनतभागवृद्धिना कम्कनु सरूपबताव्यु ते अनतभाग वृद्धिकम्कनी स्थापना ने अनतर बीजो असख्यातभाग वृद्धिना कम्कनी स्थापना थाय ते आवीरीते जे पूर्वे अनतभागवृद्धि कम्कना चर्मस्थानकमा जेटला अवि भागछे तेयकी आ बीजा कम्कना आदिस्थानकमां असख्यातमें भागें वृद्धिजाणवी एटले पहेला कम्कना चरमस्थानकमा जेटला अविभागछे ते असख्याता लो काकाश प्रदेशने वहेची आपता एकप्रदेशने भागे जेटला अविभागआवे तेटला असंख्यातभागनाअसनी बीजाकम्कना प्रथमस्थानकमा वृद्धिथाय तेने अनतर वली अनतभाग वृद्धिना स्थानक कम्क प्रमाणथाय ते केम असख्यातभाग वृद्धिना प्रथमस्थानथी अनतमो भागवधे एवु प्रथम स्थानक तेवु अनतमोभा ग वृद्धिरूप बीजु स्थानक एम यथोत्तर कम्कप्रमाण होय एम आगलपण पाछ ला स्थानथी आगला स्थानमां भागवृद्धि तथा गुणवृद्धि पोतानी बुद्धेजाणवी॥७॥

इम नंत भाग वृद्धिनेजी ॥ कंम्क कम्क मध्य ॥ ठाण
असख्यास वृद्धिनाजी ॥ कम्क माने लद्ध ॥ गु० ॥ ए ॥

अर्थ ॥ एम अनतभाग वृद्धिना कम्क प्रमाणस्थानक अने असंख्यातभाग वृद्धिनु एकस्थानक एरीते अनतभाग वृद्धि कम्क कम्कने विचालें असख्यभागवृद्धि नु एकेक स्थानक करतां असख्यात भाग वृद्धिना स्थानक केटलाथाय ते कहेछे कम्कमानेलद्धके० कम्कप्रमाणे लाधा एटले एक कम्क प्रमाण थयां एटले पद्ध्द्धिमांहे असख्यभाग वृद्धिरूप बीजीवृद्धि पूरीथई ॥ ए ॥

ते आगेनत भागनाजी ॥ थानक कम्क मात ॥ तदनतर
संख्य भागनुजी ॥ थानक एक विख्यात ॥ गु० ॥ १० ॥

अर्थ ॥ ते असख्यभागवृद्धि कम्कना चरम स्थानकने आगेके० आगल अन तर अनंतभाग वृद्धिना स्थानक कम्कमात्रथाय एटले कम्क प्रमाण करियें तेवा रवडी संख्यातभागवृद्धिनु एकस्थानक प्रसिद्धहोय एटले पूर्वेपाभातथयेला कम्क ना चरमस्थानकमां जेटला अविभागछे तेने उत्कृष्ट सख्यातपद साथे भागदीधे एकनेभागें जेटलाआवे तेटलावधे एम आगळपण समुद्दे जाणीलेवु ॥ १० ॥

ते ऊपर द्वय वृद्धिनाजी ॥ जेता ठाण अतीत ॥ ते कीधे
संख्यभागनुंजी ॥ वीज्युं ठाण पवित्त ॥ गु० ॥ ११ ॥

अर्थः—हवेते संख्यातभाग वृद्धिना प्रथम स्थानकने ऊपर द्वयके० बे वृद्धिना स्थानक जेटला अतिक्रम्याछे एटले पूर्वे अनंतभागवृद्धि अने असंख्यातभागवृद्धि एरीते एवेवृद्धिना जेटला स्थानक गयांछे ते सर्वने आ पहेला संख्यातभाग वृद्धि नामा स्थानकने आगलकरियें ते करवापछी संख्यातभागवृद्धिनुं वीजुं स्थानक पवित्र संयम परिणामरूप आवे ॥ ११ ॥

इम वृद्धि द्वय अंतरेजी ॥ कंडक माने हुअ ॥ असंख्यातें वृद्धिनाजी ॥ थानकजिनवर पुठ ॥ गु० ॥ १२ ॥

अर्थ ॥ एजरीते आगलपण ते अनंतभागवृद्धि तथा असंख्यातभागवृद्धि ए द्वयके० बे बे वृद्धिना स्थानकने विचमां एकेक संख्यातभाग वृद्धिनुं स्थानक करता कंडक प्रमाणनीपजे हेईष्ट हे प्राणवल्लभ ते संख्यातभाग वृद्धिना स्थानक हे जिनवीर हे वीतराग तुमे फरस्या. ॥ १२ ॥

वलि पूरव द्वय वृद्धिनाजी ॥ थानक सरव करेह ॥ आगल गुण संख्यातनुंजी ॥ थानक एक धरेह ॥गु०॥ १३ ॥

अर्थ ॥ संख्यातभागवृद्धि कंडकना चरमस्थानकने आगलें पूर्वली बे वृद्धिना जेटला स्थानकगयांछे तेटला सर्वस्थानक करवा एटले करियें तेने आगल संख्यातभागवृद्धिनुं कंडक पुरुंथयुं तेमाटे तेने ठेकाणे संख्यातगुणवृद्धिनुं एकसंयम स्थानकधरे एटले धरियें थापियें एटले पाछल अनंतभागवृद्धिनुं कंडक गयुंछे तेना चरम स्थानकमा जेटला अविभागछे तेने उत्कृष्ट संख्यात गुणाकरियें ते संख्यात गुणा करतां जेटला अविभागथाय तेटला अविभाग प्रथम संख्यातगुणवृद्धिना स्थानकमां वधे एरीते आगलपण समुझवुं जाणवुं. ॥ १३ ॥

इम त्रिक वृद्धिने अंतरेजी ॥ गुण संख्यातना ठाण॥कंडक माने नीपजेजी॥ जाणे तुं वर नाण ॥ गु० ॥ १४ ॥

अर्थ ॥ एम त्रिकवृद्धिने विचालें एटले पूर्वेजे अनंतभागवृद्धि असंख्यातभाग वृद्धि संख्यातभागवृद्धि ए त्रण त्रण वृद्धिना सर्व स्थानकने विचालें एक एक संख्यातगुणनुं स्थानक करियें एम करता संख्यातगुण वृद्धिना स्थानक कंडक

प्रमाण नीपजे एटले षट्वृद्धि माहे चोथी संख्यातगुणवृद्धि पूरीथई संयम स्थानक चारित्र परिणामरूप होवाने लीधे अरूपीछे तेमाटे हे सर्वज्ञ ते सर्वतु जाणोछे

पुनरपि त्रिक वृद्धी तणाजी ॥ पूरी थानक सर्व॥असंख्यात गुण वृद्धिनुंजी ॥ थानक एक अगर्व ॥ गु० ॥ १५ ॥

अर्थ – संख्यातगुण वृद्धिकंडकना चरमास्थानकथी आगल वली त्रणवृद्धिना एटले अनंतभागवृद्धि असंख्यातभागवृद्धि अने संख्यातभागवृद्धि ए त्रणवृद्धिना स्थानक जेटला पूर्वे गयाछे ते सर्व संयमस्थानक पूरीने नीपजावीने ते पछी असंख्यातगुण वृद्धिनु एक संयमस्थानक आवे माटे हे अगर्व पाश्चात एटले पूर्वे थयला अनंतर कंडक ना चरम संयमस्थानकमा जेटला अविभागछे तेने असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाणे गुणाकार करता जेटला अविभागथाय तेटला अविभाग प्रथम असंख्यगुण वृद्धिना स्थानकमा वधे ॥ १५ ॥

चउरंतर चउरंतरेजी ॥ थानक कंडक मेय ॥ असंख्यात गुण वृद्धिनाजी ॥ पंडित वीर्य वरेय ॥ गु० ॥ १६ ॥

अर्थ ॥ तेत्रारपछी वली आगलपण चार चार वृद्धिने विचाले एकेक असंख्यातगुण वृद्धिनु संयम स्थानक नीपजे एम नीपजावता कंडक मात्र थाय ए असंख्यात गुणवृद्धिना संयम स्थानक एटले असंख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानक पछी अनंतभागवृद्धि असंख्यभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि संख्यात गुणवृद्धि एवा चार वृद्धिना स्थानक कर्यापछी असंख्यगुणवृद्धिनु बीजु स्थानक आवे एरीते चार चार वृद्धिने विचाले एकेक असंख्यातगुण वृद्धिनु स्थानक करता कंडकमा थाय एटले षट वृद्धिमांहे असंख्यगुण वृद्धिरूप पाचमी वृद्धि पूरीथइ ए सर्व संयमस्थानकरूप आत्मगुण ते हे वीर हे परमेश्वर तुमें पंडित वीर्यकरीने वर्या पाम्या माटे तुमे वंद्य पूज्य स्तुत्यछो तमारी स्तवना करतां एवां गुण पामियें॥१६

उपर वली चउ वृद्धिनाजी ॥ फरसे थानक सार ॥ तदनंतरनंत गुणनुंजी॥ थानक एक उदार ॥ गु० ॥ १७ ॥

अर्थ – हवेते असंख्यगुणवृद्धि कंडकना चरम स्थानकने उपर वली चार वृद्धिना स्थानक एटले अनंतभागवृद्धि तथा असंख्यभागवृद्धि अने संख्यातभागवृद्धि तथा संख्यातगुणवृद्धि ए चार वृद्धिना सर्व स्थानक फरसे छे सार छे जगत वल्लभ प्रभु तेवार पछी वली आतरारहित अनंतगुणवृद्धिनु एक प्रथम स्थानक

महोटुं आवे एटले पाश्चात्य जे (पूर्वंघयला) अनंतर संयम स्थानकमां जेटला अ विजागछे ते सर्व जीवोनी संख्यारूपजे अनंतोछे ते अनंता साथे अनंतगुणकरतां जेटला अविजागथाय तेटला अविजाग अनंतगुणवृद्धिना प्रथम स्थानकमां वधे.

पंच पंच वुद्धी विचेंजी ॥ ठाण एक इक जोय ॥ इम
अनंत गुण वुद्धिनाजी ॥ कंमक माने होय ॥ गु० ॥ १८ ॥

अर्थः-- अनंतगुणवृद्धिना प्रथम स्थानक पछी अनंतर अनंतजागवृद्धि असंख्य जागवृद्धि संख्यातजागवृद्धि संख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणवृद्धि एवां पांच वृद्धि रूप समस्त संयम स्थानक उपजे तेवारपछी एक अनंतगुणवृद्धिनुं वीजु संयम स्थानक आवे एरीते पांच पांच वृद्धिने विचमां एक एक अनंतगुणवृद्धिनुं स्थानक नीपजे ते ज्ञान दृष्टिये जुठ एम करतां अनंतगुणवृद्धिना संयमस्थानक केटलाथाय ते कहे छे कंमक प्रमाणेहोय एटले अंगुलना असंख्यातमा जागमां जेटला आकाश प्रदेशछे तेनाजेटला अनंतगुण वृद्धिना संयम स्थानक थाय ते कंमक अर्थ ॥ १८ ॥

उपर वली पंच वृद्धिनाजी ॥ फरसे संयम ठाण ॥ प्रव
चन अनुसारें कह्युंजी ॥ पट थानक परिमाण ॥ गु० ॥ १९ ॥

अर्थ.-- हवे अनंतगुणवृद्धिना चरम स्थानकने उपर वली [illegible] द्धिना सर्व संयमस्थानक फरसे पण पांचवृद्धि पूरी कर्यापछी [illegible] नंतगुणवृद्धिनुं स्थानक ते न करवुं केमके पट स्थानक [illegible] स्थानकना परिमाणनी परुपणा ते प्रवचनअनुसारेके० [illegible] सारोद्धारनी टीकाने अनुसारे कही ॥ १९ ॥

असंख्य लोकाकाशनाजी ॥ प्रदेश ने [illegible]
थानक ऊपरेंजी ॥ ऊठे वलि पट ठा[illegible] ॥ २० ॥

अर्थ -- चऊदराज प्रमाण एक लोकाकाशने [illegible] अलोकमां कल्पीयें तेना जेटला आकाश प्रदेशने [illegible] णे एक प्रथमनुं मूल पट स्थानक ने ऊपर [illegible] एटले असंख्यातिवार ऊपरा ऊपर पट [illegible] अन्नं छठाणयं पुनो अन्नं; एव मसंख्या लोगा [illegible] ॥

ए संयम गुण ठाणमांजी ॥ [illegible]
अपर भजना पणेंजी ॥ [illegible] ॥

अर्थ ॥ ए सयमके० चारित्र गुणस्थानकमां छट्ठे गुणठाणाना स्थानकथी मांडीने यथाख्यात चारित्ररूप चरम स्थानकपर्यंत तेमां जे वर्त्तेछे ते मुनि वांदवायोग्यछे पण वेशमात्रने वांदवानु प्रयोजननथी क सोवि अप्पमाणो, अमजमपणु वक्ष्माणस्म ॥ किपवि अनियोम, निस रेइ खज्ञांत ॥१॥ इति माटे अपरक० बीजा जे सयमश्रेणीथी बाह्य ते वदनीक एटले कारणे वांदवायोग्य पण कारणविना वांदवायोग्यनथी ए अर्थ बृह ल्पनाष्यमां जोईलेवु ककच सयम वाण वियाण किडकम्म वाल्लिगणनइ यव ॥१

इहां षटस्थानकना नामकहेछे १ अनंतनागवृद्धि २ असंख्यनागवृद्धि ३ सत्त तनागवृद्धि ४ सख्यातगुणवृद्धि ५ असख्यातगुणवृद्धि ६ अनंतगुणवृद्धि एम नाग तथा गुण वृद्धिकही ते केवी सख्याये छे ते जाणवान आगमनी गाथाकहे छे — सब जिएहिं अनंत, नागच गुण असख लोगेहि ॥ जाणअसख सख, सति क्षेण च जिढेण ॥ १ ॥ एनोअर्थ — एषटवृद्धिरूप षट स्थानकनेविषे जे अनंत नागनु स्थानक तथा अनंतगुणनु स्थानक ए बे स्थानकनी सख्या ते सर्व चऊद राजलोकमां जेटला जीवनी सख्याछे ते सख्याये नागतथा गुणनीवृद्धि करवी अने असख्यनागवृद्धि तथा असख्यगुणवृद्धि ए बे स्थानक ते असख्यात नाकाकाश प्रदेश नी जेटली सख्याछे ते सख्याये नाग तथा गुणनीवृद्धि करवी अन सख्यात नागवृद्धि तथा सख्यातगुणवृद्धि ए बे स्थानक ते उत्कृष्ट सख्यातानी जेटली स ख्याछे तेटली सख्यायें नाग तथा गुणनी वृद्धिकरवी इतिनाव

तथा जे सयमस्थानक अनंतनागवृद्धिने पामे ते पाछना सयमस्थानकना जे टला अविनाग होय तेने समस्त जीवोनी जेटली सख्याछे ते सख्याय नाग आप ता जेटला अविनाग आवे तावत्प्रमाण अनंतनागे अधिक जाणवु अन त स यमस्थानक असख्यातनाग वृद्धिनेपामे ते पाछला सयमस्थानकना निविनाग ना ग जेटलाहोय तेने असख्य लोकाकाश प्रदेशप्रमाण नाग आपता जेटला अविनाग लाने तावत् प्रमाण असख्येयनागे अधिकजाणवु तथा ज सयमस्था नक सख्यातनाग वृद्धिने पामे ते पाछला सयमस्थानकना जेटला अविनागहोय तेने उत्कृष्ट सख्याताये नाग हरता जे अविनाग लाने तेटला सख्यातनाग अ धिक जाणवु वली जे सयम स्थानक सख्यातगुण वृद्धिनेपामे ते पाछला सयम स्थानक ना जे निर्विनागनागछे तेने उत्कृष्ट सख्यातगुणनी रासियेगुणता जे अ नागथाय तावत्प्रमाण सख्यातगुणे अधिक जाणवु तथा जे सयमस्थानक अस

ख्यात गुणवृद्धिने पामे ते पाछला संयमस्थानना जे अविभागछे तेने असं ख्यात लोकाकाशनाजे प्रदेशछे तद्गुणित करियें तावत् प्रमाण असंख्यातगुणो अ धिक जाणवुं तथा जे संयमस्थानक अनंतगुणवृद्धिने पामेछे ते पाछला संयम स्थानकना जेटला अविभागछे तेने समस्तजीवोनी अनंति संख्यायें गुणतां जेटला अविभाग थाय तावत्प्रमाण अनंतगुणो अधिक जाणवुं. इतिज्ञेयं. ॥ २१ ॥

पट थानक संयम तणाजी ॥ कहेतां स्तवतां वीर ॥ क्ष माविजय जिन भक्तिथीजी॥ उत्तम लहे भव तीर ॥ गु० ॥२२॥

अर्थ ॥ ए संयमना पटस्थानक कहेतां थकां तथा संयमश्रेणे गर्भित वीर प रमेश्वरने स्तवतां तथा वली क्षमागुणे करीने मोहनुं जेणे विजय कर्योछे, अणुत्तरा ए खंतिए इतिवचनात् एहवा जिनके० वीतराग जे श्रीवीरस्वामि तेनी भक्तिथी उत्तमजीव होय ते भवके० संसारसमुद्रनो पारपामे सिद्धपरमेश्वरथाय एटले पं मित श्री क्षमाविजयगणि तत्शिष्य पंमितश्री जिनविजयगणि तेमनी भक्तिथी मु नि उत्तमविजयजी संसारनो पारपामे एमपण जाणवुं ॥ २२ ॥

अवतरणः— पूर्वोक्त संयमस्थानक समजवाने सुगमथाय तेमाटे श्री वीरप्रभु नी स्तवनाकरतां यंत्रनो वीजोढालकहेछे इति संबंध ॥

ढाल वीजो सुरतीमहीनानीदेशी.

वस्तु स्वभाव प्रकाशक भाशित लोगालोग ॥ वीर जगत गुरु भोगवे रत्नत्रयीनो भोग ॥ संयमना पट थानिक सूक्ष्म वुद्धि गम्य ॥ स्व पर विवोधन हेतें थापुं यंत्र सुरम्य ॥ १ ॥

अर्थः— सदसदादिक अनंतधर्मात्मक वस्तुस्वभाव तेनुं प्रकाशक तथा केवल ज्ञानरूप आरसीमां जेने लोकालोकनुं स्वरूप भास्योछे एहवो श्रीवीरपरमेश्वर त्र णजगत्नो गुरु भावरत्नत्रयीनो आस्वाद अनुभवेछे सम्यक्ज्ञान यथार्थविवोध स म्यक्दर्शनं तत्वप्रतीति सम्यक्चारित्रं निजस्वरूप रमण स्थिरतारूप इति रत्नत्रयी स्वरूपं संयमनी पटवृद्धिना स्थानक तीक्ष्ण वुद्धियें गम्यछे तेमाटे पोताने तथा परने समजवाने अर्थे असत्कल्पनायें मनोहर यंत्रथापुंछुं तिहां अनंत भागवृद्धि ने स्थानके मींमां अने असंख्यातभागवृद्धि स्थानके एकडा संख्यातभागवृद्धि स्था नके वगडा संख्यातगुणवृद्धि स्थानके त्रगडा असंख्यातगुण वृद्धिस्थानके चोगडा

अनंतगुण वृद्धिस्थानके पांचडा एम असत्कल्पनाये चारमींमाये अनंतनागवृद्धि कम्मक चार एकडे असंख्यनागवृद्धि कम्मक इत्यादिक संज्ञा जाणवी ॥ १ ॥

नाग अनंतह वृद्धिना ठाणठे कम्मक सार ॥ ठे यद्यपि ते अ
सख्य ठवु तस विंडु चार ॥ असरूय नाग वृद्धिनु थानक आ
गल एक ॥ तस ठामे ठवु एको मन धरी अतिहि विवेक ॥ २ ॥

अर्थ ॥ अनंतनागवृद्धिना स्थानक नलां कम्मकमात्र अगुल असंख्यनागगत आकाश प्रदेश प्रमाणठे एरीते जोपण ते अनंतनाग वृद्धिना स्थानक असंख्या ताठे तोपण असत्कल्पनाये तेना चारविंडु स्थापुवु एटले अनंतनागवृद्धिनु कम्मक पुरुथयु तेथी आगल असंख्यातनागवृद्धिनुं स्थानक एक आवे तेने ठेकाणे मनमा अत्यंत विवेक धरीने एकडो थापुवु ते पूर्वोक्त स्थानकथी भिन्न पाडवा निमित्ते थापुवु एम सर्वत्रजाणवु ॥ २ ॥

चउ चउ विंडु अंतर इम होय एकाचार ॥ तदनंतर चउ विंडु
सघला वीस उदार ॥ आगल नाग सख्यातह वृद्धिनो वीठे
जाण ॥ इम चउ विया ठवता मींमा शत परिमाण ॥ ३ ॥
चउ वीआ वीस एका मींमा शत समुदाय ॥ नागनी वृद्धि माहे
थया हवे गुण वृद्धि कहाय ॥ सख्यात गुणनी वृद्धिमा तीठे
आदि उदार ॥ इम सवि मींमा अका विच ठवि तिआ चार ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ वली आगल अनंतनाग वृद्धिना एक कम्मक जेटला स्थानक थाय तेने ठेकाणे चारविंडु थापीयें आगल असंख्यनाग वृद्धिनु एक स्थानकठे तेमाटे वली एकडो थापीये एरीतें चारचार विंडुने आंतरे जेवारें चार एकडाथाय एटले असंख्य नाग वृद्धिनु कम्मक पुरुथयु तेवारपठी आंतरा रहीत ठेडानु अनंत नागवृद्धिनु कम्मक आवे तेने ठेकाणे चारविंडुथापीये एटले सघला सरवाले चार एकडाने वीस मिंमांथया ते पठी आगल संख्यातनाग वृद्धिनु स्थानक एक आवे तेने ठामे वगडानी थापना जाणीये एरीतें चार एकडा गर्भित वीसविंडु अनंतर संख्यातनाग वृद्धिनु एक एक वगडो आणता जेवारें चार वगडाआवे तेवारे संख्यातनागवृद्धिनु कम्मक पुरुथाय तेवारपठी वली ठेडे चार एकडा गर्भित वीस मींमाआवे एम संख्यातनाग वृद्धिपर्यंत सर्व समुदायें मींडा (१००) एकडा (२०) वगडा (४)

एतावता संख्यात भागवृद्धिनुं कंमक एक असंख्यातभागवृद्धिना कंमक पांच अनंतभागवृद्धिना कंमक पचवीस एटला स्थानक असत्कल्पनायें भाग वृद्धिमांथया हवे गुणवृद्धिमांहे जे स्थानकथाय ते कहेछे. हवे आगल संख्यातगुण वृद्धिनुं एक स्थानकआवे तेने ठेकाणे एक त्रगडो थापीयें एटले संख्यातगुण वृद्धिमां प्रथम उत्तमस्थानकनो त्रगडोजाणवो एरीते वली पण पूर्वला चार वगडा वीस एकडा गर्जित शतमिंमा थापीने तेने अनंतर बीजो त्रगडोआवे एरीतें जेवारे चार त्रगडा थाय तेवारें ते चार त्रगडे संख्यातगुण वृद्धिरूप कंमक पुरुंथयुं चोथा त्रगडाने अनंतर वली चार वगडा वीस एकडा अने शत मीडा थापीयें ॥ ३ ॥ ४ ॥

वीस बीआ शत एका पण सय बिंड मान ॥ असंख्यात गुण
वृद्धिनो चोको धुरि मंमाण ॥ इम चउ चोका आणतां तिक वीस
बिक शत जोय ॥ पण सय एकडा मीडा पंचवीससें होय ॥ ५ ॥

अर्थ ॥ इहां संख्यातगुण वृद्धिपर्यंत सर्वमली त्रगडा चार वगडा वीस अने एकडा शो तथा पांचसे मींमा एटले संख्यातगुण वृद्धिनुं कंमक एक अने संख्यात भाग वृद्धिना कंमक पांच असंख्यातभाग वृद्धिना कंमक पचीस अनंतभाग वृद्धिना कंमक एकसो ने पचीस थाय तेवार पछी असंख्यातगुण वृद्धिरूप प्रथम स्थानकनो चोगडो मांमीये फरी चार त्रगडा वीस वगडा एकसो एकडा सहीत पांचसो मींमा गयेथके वली बीजो चोगडो मांमीये ए परीपाटीये जेवारे चार चोगडाथाय एटले असंख्यात गुण वृद्धिनुं कंमक पुरुंथयुं वली चोथा चोगडाने अनंतर चार त्रगमा वीस वगडा एकसो एकडा अने पाचसें मींमा थापीये तो सर्वमली चार चोगडा वीस त्रगमा एकसो वगडा पांचसे एकडा पचीसोमींमा थाय एटले असंख्यात गुणवृद्धिनुं कमक एक संख्यात गुणवृद्धिना कंमक पांच संख्यात भागवृद्धिना कंमक पचीस असंख्यात भागवृद्धिना कंमक एकसोपचीस तथा अनंतभागवृद्धिना कंमक छसोने पचीस थया ॥ ५ ॥

हवे अनंत गुण वृद्धि पदे ठवि पंचक चंग ॥ पुनरपि पूरव रीतें
मींडा अंक सुरंग ॥ तिवार पछी पंचक इम पंचक चउ जव
थाय ॥ आगें पण पंचवीससें मींमां अंक कराय ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ हवे अनंतगुण वृद्धिपदेके० अनंतगुण वृद्धिरूप प्रथम **स्थानकने** ठेकाणे एक पांचमोथापीये पुनरपि पूर्वलीरीतें चार चोगमा वीस **त्रगमा**

मेंन्नागें संज्वलननुं क्रोधखपावे आठमेंन्नागें संज्वलननुमान खपावे अने नवमेंन्नागें संज्वलननी माया खपावे एरीतें नवमें गुणठाणे वीजापायाथी वीसप्रकृति खपावे पठी दशमेगुणठाणे संज्वलननुं लोन्न खपावतो शुक्लध्याननुं प्रथक्त्व वितर्क सविचाररूप प्रथमपाद तद्रूप अनलेकरी सकल मोहनीय न्नस्म शांतकरे पठी क्षीणमोह गुण ठाणे चढे क्षायक चारित्रवंतथाय तिहां एकत्व वितर्क अविचाररूप शुक्लध्याननुं वीजोपाद अनुन्नवी द्विचरम समय निद्राद्रुगखपावी चरमसमये ज्ञानावरणीपांच दर्शनावरणीचार अंतरायपांच एवं चउदप्रकृति ने क्षये अनंत चतुष्टी विन्नूषित सिद्धवधु योग्यथाय इतिश्री सिद्धसेनदिवाकर कृत प्रवचनसारोद्धारनी वृतिमां प टस्थानकना यंत्रनीस्थापनादीठी ते क्षमायें उपलक्षित जे दशविधधर्म तेणेकरी विशेपे जयवंता एवां जिनके० श्रुतकेवली अवधिजिन मनपर्यवजिन जे सुधर्मा स्वामी तेना वयणके० वर्त्तमान आगम तेथी उत्तम साधु साध्वीउने फरसनरूपे तथा उत्तम श्रावक श्राविकाने श्रद्धा मनोरथ रूपें संयमश्रेणी चित्तमांपेठी एटले पंमितश्री क्षमाविजयगणि शिष्यरत्न पंमितश्री जिनविजयगणि ना वचनथी मुनि उत्तमविजयना चित्तमां यंत्रनीस्थापना पेठी एटले स्थिरपणेरही इति ए पण सोचवुं

अवतरणः— प्रथमढाले षटस्थानक परूपणाकीधी वीजाढालें तेनायंत्रनी स्था पनाकरतां स्थूलवुद्धिनेपण सुखेसमजाय तेमकयुं हवे एकांतरादिक मार्गणायें को ईपूठे तेने सुखें कहीसकियें तेरीते वीरप्रन्नुनी स्तवनाकरतां अधस्तन स्थान परू पणानो ढाल कहियेंठे इति संवंध जाणवो ॥

ढाल त्रीजो एकवीसानी देशीनो.

आतम रामीरे, शिव विसरामी नित्यनमु ॥ प्रन्नुजी स्तवतांरे
पाप पोताना निगमु ॥ पटथानिकरे जे अहगण परूपणा॥
सुणो सयणारे वयणा कल्पनी न्नाष्यना ॥ १ ॥ त्रूटकः— आ
दि असंख अंस वृद्धियी कहो ॥ न्नाग अनंत अंस केटलां॥
हेठयानिक एम पूठत ॥ कहेयें कंमक जेतलां ॥ न्नाग संख्या
तह गुण संख्यातें ॥ असंख अनंतह गुण वली ॥ तस प्रथ
मयी कहे अध अनंतर ॥ कंमक माने केवली ॥७॥ इत्यनंतरमार्गणा

अर्थ ॥ शुद्ध निर्मल निकलंक आत्मस्वन्नाव रमणशील निरुपद्रव्यस्थान क्षेत्रयी उर्ध लोकाग्रन्नावयी निरावरणावस्था तेनेविषे विसरामी एवां श्री वीरप्रन्नुने नित्य

उत्तमविजयजीकृत संयमश्रेणी स्तवन

सदा नमस्कारकरुं ए प्रभुने स्तवता अनेकनवोपार्जित पोतानाकर्या सी
परे अनेवरह्यां जे पापकर्म तेने निगमु के० गमावु अनोर्नमस्कार सु
मेतदेव सयम पट स्थानकनेविषे जे अनतर एकातरादिक अल्पगण परूपणा
सम्यक्दृष्टी उत्तमसज्जनो तमे सानलो ए वचन श्रीबृहत्कल्पना नाष्यनाठे ॥
हे उत्तमजीनो तमे कहोके असरव्यात नागवृद्धिना प्रथम सयम स्थानक
अनतनाग वृद्धिना हेठला सयमस्थानक केटलागया एम कोई पूछे तेने उत्तर
अनतनाग वृद्धिना हेठलास्थानक एक कम्मक जेटला गयाठे केमके अनतनागवृ
कम्मकपूरुथयु तेने अनतरेज असरव्यनाग वृद्धिनु प्रथम स्थानक थयुठे तेमाटेज एम
केवु तेमज सरव्यातनाग वृद्धिना प्रथम सयम स्थानकथी असरव्यनाग वृद्धिना हे
ठला सयम स्थानक केटलागया तथा सरव्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानथी स
रव्यातनागवृद्धिना हेठला स्थानक तथा असंरव्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी
सरव्यातगुण वृद्धिना हेठला स्थानक वली अनतगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी
हेठला असरव्यातगुण वृद्धिना स्थानक केटला गया ए रीते काइ पूछे तेवारे सर्व
त्र हेठलना आतरा रहीत मार्गणाये कंम्मक प्रमाणे सयम स्थानक केवलीकहे य
उक्त पचसग्रहे सव्वासि वुड्ढिण कम्मक मेता अनतरा वुड्ढि ॥ इत्यनतरमार्गणा ॥ १ ॥

एकातररे मार्गणा सुणो सवि सतरे ॥ नाग सरयातेरे मूल था
नकथी ततरे ॥ हेठे थानिकरे नाग अनतना नापीये ॥ एकक
म्मकरे कम्मक वर्गते दापीये ॥ ३ ॥ त्रूटक ॥ दापीये गुण सरया
तथी वली ॥ असरव अनत गुणथी तथा ॥ पढम ठाणथी एक
अतर ॥ कम्मक वर्ग कम्मक यथा ॥ इति एकातर मार्गणा ॥ एक
अतर मार्गणा कही ॥ सुणो द्व्यतर मार्गणा ॥ सरयात गुण
थी हेठथानक अनत नागना सुनमना ॥ ४ ॥

अर्थ ॥ हवे एकातर मार्गणा कहेछे ते हे सर्व सतजनो उत्तम पुरुषो तमे सा
नजो के एकांतरमार्गणाते सु जे एकवृद्धि विचमा पडतीमूकीने पूछाकरवी त ए
कातर मार्गणा कहेवाय ते आरीते जे सरव्यातनाग वृद्धिना मूलके० प्रथम
थानकथी हेठल असरव्यातनाग वृद्धिनाजे स्थानकगया तेनी पूछानकरवी अने तन
ल वलीजे अनतनाग वृद्धिना स्थानकगयाछे ते पूछवा एम काईक एकातर पूछे त

वारे एम कहियें जे एक कंमक अने कंमकवर्ग प्रमाण. जेमां हेठल असंख्य
ग वृद्धिना स्थानक कंमकमात्र गयांछे तेमां एकेका असंख्यातभाग वृद्धि स
कने हेठल एकेक अनंतभाग वृद्धिनुं कंमकगयुंछे अने असंख्यातभाग वृद्धि
स्थानक कंमकमात्रने माटे कंमक कंमक साथे गुणाकार करियें एटले कंमक
घाय तद्गुणोवर्गो इतिवचनात् अने अनंख्यभाग वृद्धि उपरे अनंतभाग वृद्धि
एक कंमकथयुंछे तेमाटे एकतो कंमकवर्ग अने तेना उपर वली एक कंमकप्रम
ण एटला अनंतभाग वृद्धिना स्थानक गयाछे एम कहेवुं. ॥ ३ ॥

तेमज वली संख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठे संख्यातभाग वृद्धिना
स्थानकगयां तेमूकीने असंख्यातभाग वृद्धिना स्थानक पूछवा तथा असंख्यातगु
ण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठल संख्यातगुणवृद्धिना स्थानक गयां ते मूकीने
संख्यातभाग वृद्धिना स्थानक पूछवा तेमज वली अनंतगुण वृद्धिना प्रथम स्था
नकथी हेठल असंख्यातगुण वृद्धिनाजे स्थानकगयां ते पछतामूकीने संख्यातगुण
वृद्धिना स्थानक एकांतर मार्गणायें केटला पामीयें एमकोई पूछे तेने एवुं उत्तर
आपिये जे कंमकवर्ग अने उपर एक कंमक जेम पूर्वे कह्याछे तेम कहेवा इति
एकांतर मार्गणा चउक्कं पंचसंग्रहे एगंतराउवुड्ढी ॥ वग्गो कंमस्सकंमंच इति एरीते
एकातर मार्गणाकही हवे द्व्यंतर मार्गणा सांभलो जे बे वृद्धि वचमां मूकीने पूछीयें
ते द्व्यंतर मार्गणा कहियें ते आवीरीतें के संख्यातगुण वृद्धिना प्रथम स्थान कथी
अनंतभाग वृद्धिना स्थानक केटला गयां एमपूछवाथी हे भविमना तेकहियेछे. ॥४॥

कंडक घनरे, कंडक वर्ग इ,गुणो करो ॥ एक कंमकरे तस सं
ख्या मनमा धरो ॥ इग अंतररे असंख्य अनंत गुणथी ल
ह्यां ॥ अथ स्थानकरे पूरव परें जाणो कह्यां ॥ ५ ॥ इति द्विकां
तरमार्गणा त्रूटकः– त्रिकें अंतर कोई पूछे ॥ आदि असंख्य
गुण वृद्धिथी ॥ हेठें भाग अनंत केरां ॥ ठाण कह्यो गुरु वय
णथी ॥ कंडक वर्गनुं वर्ग कीजे ॥ कंडक घन त्रिक उरें ॥
कंडक वर्ग त्रिक एक कंडक ॥ होए ते मनमां धरे ॥ ६ ॥

अर्थ ॥ कंमक घन एक अने कंमक वर्ग बे तथा ते उपर एक कंमक एटला
नक पामीयें ए सर्व भेला करतां केटली संख्याथाय ते मनमां धरोके

ढिम ठाणथी ॥ छेठ थानकरे नाग अनंत ना मानथी ॥ ७ ॥
त्रूटक, परिमाणथी ते अष्ट कंडक ॥ वर्गवर्गा षट घना ॥
चार कंडक वर्ग आगल ॥ एक कंडक सोजना ॥ इति चतुरं
तर मार्गणा, पर्यवसाननी मार्गणा ते ॥ षट थानिक पूरे करे ॥
मूलथी संयम ठाण फरसी ॥ वीर विनू केवल वरे ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ एम ठही अनंतगुण वृद्धिना पहेला स्थानकथी हेठलि बीजी वृद्धिना एटले असंख्यात नागवृद्धिना स्थानक पण पूर्वे जेटलां त्रिकांतर वृद्धिना अनंत र कह्यांछे तेटला जाणवा इति त्रिकांतर मार्गणा

हवे चतुरंतर मार्गणानेविषे अनंतगुण वृद्धिना आदिमके० प्रथम स्थानकथी हेठला स्थानक अनंतनाग वृद्धिना प्रमाणथी केटलाछे ॥ ७ ॥ तेपरिमाणथी आठ कंमकवर्गवर्ग तथा ठ कंमकघन तथा चार कंमकवर्ग तथा उपरें एक कंम क शोजन संयम परिणामरूपछे ए केवीरीते जाणीयें ते समजावेछे.

अनंतगुण वृद्धिना प्रथम स्थानकथी हेठलि असंख्यगुण वृद्धिना स्थानक कं मक प्रमाण गयाछे अने असंख्यगुणना एकेक स्थानकने हेठल अनंतनाग वृद्धि ना स्थानक कंमकवर्गवर्गएक तथा कंमकघनत्रण अने कंमकवर्गत्रण वली कंमक एक प्रमाण पामियें तेमाटे ए सर्वने कंमकगुणा करियें जेथाय ते सरवालो करी राखियें तथा असंख्यातगुण वृद्धिने उपरें कंमकवर्गवर्गएक कंमकघनत्रण कंमक वर्गत्रण कंमकएक पामियेंछे ते पूर्वली रासीमां प्रक्षेपियें तेवारें यथोक्त मान थाय यडुक्तं पंचसंग्रहे, अड कंम वग्गवग्गा, चत्तारि वग्गा ठ घनाकंमं ॥ चउ, अंतर वुढीए, हेठ्ठाण परूवणाए ॥१॥ इति, कंमक संज्ञा चारतेने तद्गुणोवर्ग सोल वर्गः कंमकगुणो घन चोसठ वर्गवर्गा बसो ठपन्न घनःकंमकगुणोपि बसो ठपन्न यथो चित स्थानके संख्याकरजो इति चतुरंतरमार्गणा.

हवे पर्यवशाननी मार्गणा कहेछे पर्यवशान जे ठेहडो तेनी मार्गणा ते षट स्थानक पूरेथये जाणवी ए मूलथीके०धुरथी संयमस्थान फरसीने जगतनुं नायक जे श्रीवीरपरमेश्वर ते केवलज्ञानवर्या ॥ ८ ॥

उपर मध्यथीरे संयम थानिक जे नजे ॥ ते नियमारे छेठ उ
तरी पुनरपी सजे ॥ अंतर्मुहूर्त्तनीरे वुढी हानि ठाणमां॥ होय

मुनिनेरे ज्ञानीदेखे ज्ञानमा ॥९॥ त्रूटक ॥ अप्पबहुअ विचार
करता अनत गुणना थोडला ॥ तेहथी गुणह असंख्य के
रा ॥ कम्क वर्ग कंम्क नला ॥ पश्चानुपूर्वि वृद्धि उत्तर एहन्याये
नावीये ॥ क्षमाविजय जिन चरण उत्तम नक्तिनावे पावीये ॥१०॥

अर्थ ॥ जे उपरना सयमस्थानक तथा वचमांना सयमस्थानक अनुक्रमे फर
से ते नियमा हेठ उतरीने कालांतरे पुनरपीके० वली सजेके० सावधानथाय स
यमश्रेणीपामे यडुक्त अतोमुहुत्त मित्तंपि, फासियं हुज्ज जेहि समत्तं ॥ तेसिअवड्ढ
पुग्गल, परियट्टो चेव ससारो ॥ १ ॥ जो एमठे तो संयम पाम्यानु सुं कहेवु इति
अतरमुहुत्ते कालप्रमाणे अधस्तन सयमस्थान थकी उपरि स्तन सयमस्थानारो
हरूप वृद्धि तथा उपर स्तन स्यानथकी अधस्तन स्यानावरोहरूप हाणी मुनिने
थाय ते हे ज्ञानवान वीरपरमेश्वर तमे देखोछो यडुक्त कल्पनाष्ये गाथाद्वयं ए
यं चरित्त सेढि, पडिवज्जइ हेठ कोइ उवरिंवा ॥ जे हेठा पवज्जिइ, सिज्झइ णिय
मा जहा नरहो ॥ १ मसेरा उवरिवा, नियमा गमणातु हेठिम ठाण ॥ अतो मु
हुत्त वुढी, हाणीवि तहेव नायव्वा ॥ २ ॥ इति ॥ ९ ॥

हवे अल्पबहुत्वनो विचारकरतां अनतगुण वृद्धिना सयमस्थानक सर्वथकी थो
डा जाणवा तेथकी असख्यातगुण वृद्धिना सयमस्थानक कमकवर्ग अने एक कमक
जेटला एटले परमार्थे असख्यातगुणा पश्चानु पुर्वीये वृद्धि आगले आगले एरी
ते नाविये सर्वत्र अनंतर वृद्धिस्यानक असख्यातगुणा इतिनाव क्षमानाविजय
एवा जिनरे० वीरपरमेश्वर तेना चरणकमलनी उत्तमविधि युक्त नक्तिना महिमा
थकी सयमश्रेणी पामियें नवनिस्तार थइयें ससार समुद्रनो पारपामिये ॥ १० ॥

ढाल चोथी रागधन्याश्री कलसरूप

गायो गायोरे नले वीर जगतगुरु गायो ॥ एआकणी
संयमश्रेणी थानक पटनिरूपणा यन्त्र बनायो ॥ अठ
ठाण पन्नण करना ॥ मनुज जनम फल पायोरे ॥ नले० ॥१॥

अर्थ ॥ त्रानननाएक जगतनागुरु एवा श्री महावीरप्रनु तेने नलेनावकरी गा
यो स्तव्या संयमश्रेणीना स्तवननी सप्तहगाया कहेना (कहीन) कनम रचीने प्रथम

ढाले संयमश्रेणीना षटस्थानपरूपणा बीजाढाले यंत्रस्थापना त्रीजाढाले अल्पबहु
ण परूपणा करतां मनुष्य जन्मनुं फल पाम्युं ॥ १ ॥

शुद्ध निरंजन अलख अगोचर ॥ एहिज साध्य सुहायो ॥ ज्ञा
नक्रिया अवलंबी फरसो ॥ अनुभव सिद्धि उपायोरे ॥ भलेंण॥२॥

अर्थ ॥ शुद्धनिरावरण निरंजन रागद्वेष अंजन रहित अलख लिपि अगोचर ते जे स्वरूप चर्म चक्षुयें जणायनही एवो परमात्मा स्वरूपानंद विलासी परभाव उदासी तेहीज अमारो स्वरूप अमने साध्यपणे सुहायो एटले रुच्यो हे आत्मन् हे जीव सम्यक्ज्ञान सम्यक्क्रिया अवलंबीने फरसो पामो जे स्वस्वरूपना विचारमां मनविसरामपामे अने अपूर्व रसस्वादउपजे एवोजे अनुभव ते सिद्धिनुं उपायछे यदुक्तं नाणकिरियाहिंमुक्खो इतिवचनात् ॥ २ ॥

श्रद्धा ज्ञान लह्यांछे तोपण ॥ जोनवि जाय पमायो ॥
वंध्य तरु उपमते पामे ॥ संयमठाणजो नायोरे भलेंण॥ ३ ॥

अर्थ ॥ संयमश्रेणीनुं महीमा कहियेछे जे सम्यक्दर्शन सम्यक्ज्ञान पाम्याछे तोपण जो प्रमादस्थानक नजाय तो वांझीया फलरहीत वृक्षनी उपमापामे केमके जोसंयमस्थानक न आव्योतो राजाश्रेणीक तथा सत्यकी विद्याधरनीपरे जाणवुं.

जम खर चंदन भारनो वाहक ॥ भारनो भागी कहायो ॥ ति
णिपरें ज्ञानी संयम हीनो ॥ सदगतीयें नविजायोरे ॥ भलेंण॥४॥

अर्थ ॥ जेम गर्द्दभ बावनाचंदननो भारवहेतोथको भारनो भजनार कहेवाय पण सुगंधनो भोगी न कहेवाय तेम ज्ञानीपुरुष चारित्रविना ज्ञाननो भोगीथाय पण सद्गतीजे मोक्ष तिहांजायनही यदुक्तं जहाखरो चंदन भारवाही ॥ भारस्स भागी नहुचंदनस्स ॥ एवंपुनाणी चरणेणहीणो नाणस्सभागी नहु सुग्गईए ॥१॥

आश्रव त्यागें संवर परिणति ॥ अविरति सरव उगायो ॥ स्व
स्वरूपमां थिरता तेहिज॥ संयम शुद्ध वहायोरे ॥ भलेंण॥५॥

अर्थ ॥ संयमनुं मूलस्वरूप कहियेछे पंचाश्रवने त्यागे पंचसंवर परणतिरुप मनकरणानियमसुवजीववहो ए बार अव्रतिने अभावें पोताना स्वरुपमां स्थिरता रमण निश्चलानुभव तेहीज वीतरागें आगममां शुद्धसंयम वहायो. ॥ ५ ॥

अनुभव सुरतरु फलने काजे ॥ कीजे आत्म अमायो ॥ सन
मुखभावे जेह प्रवर्त्तन ॥ तेह निवर्त्त निदायोरे ॥ भले०॥॥६॥

अर्थ ॥ अनुभवरूपजे कल्पवृक्ष तेनुंफलजे मोक्ष ते पामवाने अर्थे आत्मा मायारहीत करवो अथवा अनुभवसुखी जीवनमुक्तने मोक्षने सन्मुखभावें प्रभुमार्गानुसारी जे प्रवर्त्तन तेहिज निवर्त्तननु उपायछे यडुक्त निर्जित मदमदनानां वाकाय मनो विकार रहितानां ॥ विनिवृत्त पराशानां मेहैव मोक्षसुविहितानां ॥१॥६॥

ज्ञानक्रिया दुग चक्रे शोभित ॥ सयम रथ सुखदायो ॥ अनुभव
धोरी युत शिव नगरे ॥ जाता विघ्नथायोरे ॥ भले० ॥ ७ ॥

अर्थ ॥ ज्ञान अने क्रियारूप बे चक्रके० पइडा तेणेकरी शाभित एवो सयमरूप रथ ते सुखदाईछे अने अनुभवरूप धोरियें जोडयो तदारूढ आत्मा चिदानदने शिवनगरिये जातां निरावरणथातां विघ्न अतराय कोईनथाय ॥ ७ ॥

रायसिद्धारथ वंश विभूषण ॥ तिसलाराणीजायो ॥ अजअज
रामर सहेजानंदी॥ ध्यान भुवनमा ध्यायोरे ॥ भले० ॥ ८ ॥

अर्थ ॥ उदितोदित राजा सिद्धार्थना वशनो शोभावनारो शीन सम्यक्त्व देश विरति एवी त्रिसलाराणीयें जन्म्यो अपुनरावृत्तियें योनिनिर्गम एटले हवे सिद्धावस्था कहोछे जन्मरहित जरामरण रहीत सहेज अकृत्रम स्वरूपानदी एवो वीर परमात्मा तेने ध्यानरुप भाव घरमा ध्याव्यो चितव्यो ॥ ८ ॥

सवत नद निधि मुनि चंदे ॥ देव दयाकर पायो ॥ प्रथम जिने
सर पारण दिवशे ॥ स्तवना कलश चढायोरे ॥ भले० ॥ ९ ॥

अर्थ ॥ नवनद नवनिधि सातमुनि एकचंद्र अकानावामतोगतीतिवचनात् एटले सवत् १७९९ नावरसमा देवदयानो करनार पाम्यो अथवा तनु सासनपाम्यो जे दिवशे प्रथम जिनेश्वर श्री आदिनाथें वरसीतपनो पारणा इक्षुरस श्रेयासन हाथें कीधो ते दिवश सयमश्रेणे गर्भित श्रीवीरप्रभुनु स्तवनरूप प्रासादनविषे कलशचढाव्यो एटले सपूर्णकीधो ॥ ९ ॥

विजयदेवसूरीस पटोधर ॥ विजयसिंह सवायो॥ सत्यशिष्याधर
कपूरविजयबुध ॥ क्षमाविजय पुण्य पायोरे ॥ भले० ॥ १० ॥

हवे गुरुपरंपरा लखीयेंछे श्रीवीरस्वामिना पांचमां गणधर श्रीसुधर्मस्वामि पहे ला पट्टोधरथया तिहांथी आठपाटलगे निर्ग्रंथबिरुदधारी १ नवमेंपाटे सूरिमंत्र कोटी वार जप्या माटे कोटीबिरुदधारी २ पन्नरमेंपाटे चंद्रसूरि चंद्रवत् घणुसोम्यथया माटे चंद्रगछ कहेवाणा ३ सोलमेंपाटे सांमतभद्राचार्य घणु निर्ममथया वनवासरह्या माटे वनवासी बिरुदथयुं ४ छत्रीसमेंपाटे सर्वदेवसूरिथया वडतलें आचार्यपद आ प्युं अने तेना शिष्यजेथया ते वडसारखानीपरें परिवारे वध्या तेवली घणागुणे व ध्या माटे वडगछाकहेवाणा ५ चुमालीसमेंपाटे आंबिल वर्द्धमान तपकीधामाटे रा णाजीयें तपाबिरुददीधो तिहांथी तपाकहेवाण ६ अनुक्रमे बासठमेंपाटें आदेयना मधारी श्रीविजयदेवसूरि तत्पटप्रभावक सवाइ विजयसिंहसूरि तेनी साची ग्रहणा शिक्षा आसेवना शिष्याधारी अर्थात् पंडित सत्यविजयगणि गछनायकनी आज्ञा मागी क्रिया उद्धारकीधो श्रीआनंदघनसाथें वनवासरह्या अनेक तपकीधा अनुक्र मेंवृद्धावस्थाजाणीने अनिहलपुर पाटणमां रहेतां धर्मोपदेशदेतां तेमना शिष्य पं डित कपूरविजय अने पंडित कुशलविजय थयां तेमां श्रीकपूरविजयगणितो अरि हंतप्रतिमा प्रतिष्टादिक अनेक धर्मकार्यकारी प्रभावक थया देश नगर पुर पाटणे विहार करतां करतां रह्या तेमना शिष्य पंडित वृद्धविजयगणि तथा पंडित क्षमा विजयगणि थया तेमां पंडित क्षमाविजयगणि तो देशनाआपवाना गुणेकरी अ नेक भव्यजीवोने उपकारी पवित्र चरण कमल धारी थया ॥ १० ॥

सूरतमांहे सूरय मंमण॥ श्रीजिन विजय पसायो ॥ विजयद
यासूरिराजे जगपति॥ उत्तमविजय मल्हायोरे ॥ भलेंण॥ ११॥

अर्थ ॥ श्रीसूरतबंदरे सूर्यमंमण पार्श्वनाथनी स्मृति प्रणति महिमायें तथा पंडित श्रीक्षमाविजयगणि शिष्य रत्न संप्रति विद्यमान चिरजीवी परमोपकारी पं डितश्री जिनविजयगणियें उद्यमकरी मने प्रथम अभ्यास कराव्यो ते जेम माता पिता पुत्रने प्रथम पगमांडवा तथा बोलवा शिखवे तेम गुर्वादिके मने उपकारकीधो ए श्री तपागछधिराज भट्टारक श्रीविजयदयासूरिश्वरना राजमां जगत्पति जगत् परमे श्वर श्रीवीरस्वामिने मुनि उत्तमविजयें मल्हायो गायो स्तवनागोचरकीधो ए स्तवन अ मछरी गीतार्थ पुरुषो तमे सोधजो भणावजो भणता भणावतां संयमश्रेणीयें भू षितथइ सहेजानंदपामजो ॥ ११ ॥

इतिश्री संयमश्रेणी गर्भित वीरविभो स्तवनं समाप्तं श्रीरस्तु.

॥ श्री जिनेंद्राय नम ॥

अथ श्री लोकनालद्वात्रिंशिका बालावबोध सहित प्रारभ

प्रथम बालावबोध कर्त्तानुं मगलाचरण –

श्रीमदाप्त प्रणम्यादौ, जगत स्थिति दर्शक ॥
वक्ष्ये लोक विचारस्य, वार्त्तिक समयानु गम् ॥ १ ॥

व्याख्या – जगतनी स्थितिना देखाडनारा एटले जगतनी यथार्थ स्वरूप स्थितिना देखाडनारा श्रीवीतराग भगवानने प्रणाम करीने एटले नमस्कार करीने आ लोकना विचारनुं वार्त्तिक समयानुसारे एटले आगमोक्त प्रकारे हुं कहुं छु॥१॥

जिण दसणं विणाजं, लोअं पूरति जम्म मरणेहिं ॥
भमइ जिअणत भवे, तस्स सरूव किमवि वुच्छ ॥ १ ॥

व्याख्या – 'जिण'–जिन एटले श्रीतीर्थंकरदेव, तत्प्रणीत 'दसण'–दर्शन एटले सम्यक्त्व, दर्शन अथवा तीर्थंकरनु दर्शन ते मनोवचन तथा काय ए त्रिकरण भावे करी जे वंदवु ते छे 'विण'–ते विना 'ज'–जे 'जम्ममरणेहिं'–जन्म तथा मरणे करी 'लोअ'–लोक एटले सामान्यपणे चौदराज लोकने 'पूरंति'–पूरतो थको 'अणत भवे'–अनत भवमते 'जिओ भमइ'–जीव भमे छे, 'तस्सरूव'–ते लोकनु स्वरूप, आकार, लांबी, पहोलाई तथा जाडाई 'किमवि'–कंईक मात्र 'वुच्छ'–कहु छु ॥ १ ॥

अवतरण – अनत प्रदेश अलोकाकाशनेविषे सामान्यपणे अल्पमात्र लोकनो आकार बतावे छे –

वइसाह ठाण ठिय पय, कडिठ्ठ कर युग नरागिइ लोगो ॥
उप्पत्ति नास धुव्व गुण, धम्माइ छ दव्व पडिपुणो ॥ २ ॥

व्याख्या – 'वइसाह'–वैशाख्यो तेना 'ठाण'–विनोदगाना समयनेविषे 'ठिय'–स्थित एटले स्थाप्या छे 'पय'–पद एटले बे चरण जेणे, वळी विशेषतो 'कडिठ्ठ'–कटिस्थ एटले कटीनेविषे जे 'करयुग'–हस्त युगल तेना ज 'नरागिइ' –

व्याख्या – 'पयतलि'–पदतले एटले पहेला जे वैशाख स्थान स्थित मनुष्यने आकारे लोक कह्यो, ते पगना तलियाने ठेकाणे चारेदिशिए सात राज प्रमाण पोलो छे, अने मध्य जाग जे पुरुषाकारनेविषे नाभिनुं ठाम छे, त्यांहां एक राज प्रमाण चारे दिशिए पोलो छे वली हाथनी कोणीना ठामनेविषे पांच राज प्रमाण पोलो छे; अने मस्तकने ठेकाणे एक राज प्रमाण पोलो छे, वली ते लोक हेठनी माघवती सातमी नरक पृथ्वीना तलाथी ऊपर यावत् सिद्ध शिलासुधी जोतां चौद राज प्रमाण आ लोक ऊंचो छे ॥ ४ ॥

अवतरण – हवे पहोलाणनी स्थिति कहेछे –

सगरज्जु मघवइ तला, पएस हाणीय मज्झिपलोए एगा ॥
तो वुड्डि बंजलो पुण, पण हाणीओ सिवे एगा ॥ ५ ॥

व्याख्या –माघवती जे सातमी नरक पृथ्वी, तेना तलाथी चारे दिशिनेविषे ए लोक सात राज प्रमाण पहोलो छे, त्यांथी प्रदेशनी हानी करतां ऊपर तिर्यगलोकनी मध्ये तलनेविषे आवे त्यारे चारे दिशिनेविषे एक राज प्रमाण विस्तार छे त्यांथी वली ऊपर जातां वृद्धि थाय छे, ते पांचमो ब्रह्म नामे देवलोक छे त्यां चारे दिशाए पांच राज प्रमाण पहोलो छे. त्यांथी वली प्रदेश घटतां छे ते ज्यां सिद्ध शिला छे त्यां चारे दिशिए एक राज प्रमाण पहोलो छे तथा हाणी वृद्धि जे छे ते तो प्रदेश मात्र कही छे तो पूर्ण खांडुआ केम मांडिये छीए? त्यां ए विशेष छे – जे वली पासे प्रदेशनी हाणी छे तापण ऊतरतां तथा चढतां वली पासाना बे त्रिखूणा लई, अवनां सवना जोडी खांडुआमां मेलीए त्यारे खांडुआ पूरा थाय एम सर्वत्र जाणवुं हवे विस्तारना विचार लखीए छीए – सातमी नरक पृथ्वी सात राज प्रमाण, छठ्ठी साढा छ राज प्रमाण, पांचमी छ राज प्रमाण, चोथी पांच राज प्रमाण, त्रीजी चार राज प्रमाण, बीजी अढीराज प्रमाण तथा पहेली घम्मा नरक पृथ्वी एक राज प्रमाण पहोली छे चारे दिशिओनेविषे ए विस्तार छे मध्यभागनो विस्तार आगल कहीशुं ए मान लोकनाल बत्रीशीने अनुसारे कह्युं छे यथातथ तोविषे छद्मस्थपणे दोशमां आवछे निश्चयनी वातनो ज्ञानी जाणे ॥ ५ ॥

अ० –हवे नारकना ज मांडवाना उपाय कहेता प्रथम त्रस नाडीना विचार कहछे –

सगरज्जु हेट निच्छिअ, उवरुपणुरू च रज्जु चउअंसं ॥
इग रज्जु वित्थरा यय, चउदस रज्जुअ तसनाडी ॥ ६ ॥

व्याख्याः—सत्तावन रेषा त्रीछी स्थापीयें, वली पांच रेषा ऊनी मांमिए, एम करतां ऊंचपणे चउ खूणा उपन्न खंम थाय; त्रीछी सत्तावन्न रेषा छे. तेमाटे तेना छप्पन खंम थाय छे. ऊनी पांच रेषा छे. तेना त्रीण चार खांमुआ थाय, चार खांमुए एक राज थाय, तथा ए त्रस नाडी पहोलाईए करी एक राज प्रमाण, अने लां व पणे चौदराज प्रमाण जाणवी. ॥ ६ ॥

अवतरणः— तथा लोकनो मध्य नाल ते त्रस नाडी तेमां बेंद्रियादिक त्रस जीव जन्ममरण पामे छे, माटे त्रस नाडी कहेवाय छे. ए त्रस नाडीनी बाहार जे लोकोनो विस्तार छे, त्यां सूक्ष्म एकेंद्रिय निगोद सर्वत्र व्यापी रह्युं छे. ते बाहा रनो विस्तार अधोलोकनेविषे कह्यो हवे ऊर्ध्वलोकनेविषे खांमुआनो विस्तारकहेछेः

उर्ढ्ढं तिरिअं चउरो, डुसु छ हुसु अछ दसय इक्किक्के ॥
बारस दोसुं सोलस, दोसुं वीसाय चउसु पुढो ॥ ७ ॥

व्याख्याः—ऊर्ध्व लोकनी श्रेणीनेविषे प्रथम रत्नप्रभा नरकपृथ्वी थकी ऊपर जे अाठ्यावीश खांमुआनी श्रेणी छे. तेमां लोकना मध्यथी ऊपर पहेली बे श्रे णीनेविषे चार चार खांडुआ त्रस नाडीनाज छे. पण त्रस नाडीथी बहार नथी. त्यार पछी वली तेथी ऊपर बे श्रेणीनेविषे छ छ खांमुआ छे, एटले चार खांमुआ त्रस नाडीना अने एकेको बन्ने पासानो खांमुओ लेखवतां छ खांमुआ थाय. त्यार प छी ऊपर एक श्रेणीनेविषे आठ खांमुआ छे. ते बबे खांमुआ बे पाशे तेनां चार खांमुआ अने त्रस नाडीना चार खांमुआ ए आठ खांमुआ छे. वली तेनी ऊपर एक श्रेणीनेविषे दश खांमुआ छे. तेबन्ने पासे त्रण त्रणछे,अने त्रसनाडीना चार मली दश थाय छे. त्यार पछी बे श्रेणीनेविषे बार बार खांमुआ छे; त्यार पछी बे श्रेणीनेविषे शोल शोल खांमुआ छे, तेमज चार श्रेणीनेविषे वीश वीश खांमु आ छे. ते बधा पृथक् एटले जुजुआ छे. ॥ ७ ॥

अवतरणः—एवी रीते ऊर्ध्व लोकनेविषे प्रदेशनी वृद्धिना खांमुआ कह्या, एटले अठावीश श्रेणीमां चोद श्रेणी थई; हवे हानीना खांमुआ कहे छेः—

पुणरवि सोलस दोसुं, बारस दोसुं च तिसु दस तिसुछ ॥
छडुसु डुसुं चउ खमुअ, सवे चउरुत्तरा तिसया ॥ ८ ॥

व्याख्याः—वली पंदरमी तथा शोलमी ए बे श्रेणीनेविषे शोल शोल खांमुआ

छे सतरमी तथा अढारमी ए बे श्रेणीनेविषे बार बार खांडुआ छे ओगणीश मी, वीशमी तथा एकवीशमी ए त्रण पंक्तिनेविषे दश दश खांडुआ जाणवा. बावीशमी त्रेवीसमी तथा चोवीशमी ए त्रण पंक्तिनेविषे आठ आठ खांडुआ जाणवा. पचीशमी तथा छवीशमी ए बे श्रेणीनेविषे छ छ खांडुआ छे अने सत्यावीशमी तथा अठ्यावीशमी ए बे श्रेणीनेविषे चार चार खांडुआ त्रस मांहेलाज छे ॥ ८॥

अवतरण –एवी रीते ऊर्ध्व लोकनी अठ्यावीश श्रेणीना खांडुआनुं मान कह्युं ए प्रमाणे सर्व ऊर्ध्व लोकना खांडुआ त्रणशेने चार थाय छे वली पण कहेछे–

उवरीय लोअ मज्झा, चउ चउ ठाणेसु सत्त पुढवीसु ॥
चउर दस सोल वीसा, चउवीस छवीस अडवीसा ॥९॥

व्याख्या –चौद राज प्रमाणनो मध्य एटले जे वज्रनो प्रदेशछे, त्यांथी अधोनो पक्ष ऊतरतां सात नरक पृथ्वीनेविषे प्रत्येके प्रत्येके चार चार श्रेणीनेविषे कहे छे ते केम? अधो लोकनी अठ्यावीश श्रेणीमां पहेली नरक पृथ्वीनी चार श्रेणीनेविषे चार खांडुआ छे तेना शोल खांडुआ थाय छे बीजी नरक पृथ्वीनेविषे चार श्रेणीए प्रत्येके प्रत्येके दश दश खांडुआ छे तेने दश गुणा करतां चालीश खांडुआ थाय छे. त्रीजी नरक पृथ्वीए चार श्रेणीमां प्रत्येके प्रत्येके शोल शोल खांडुआ छे तेना चोसठ थायछे, चोथी नरक पृथ्वीए चार श्रेणीमांनी प्रत्येकमां वीश वीश खांडुआ छे तेना एंशी खांडुआ थायछे पांचमी नरक पृथ्वीए चार श्रेणीमां प्रत्येके चोवीश चोवीश खांडुआ छे, तेना छन्नु थायछे छठी नरक पृथ्वीए चार श्रेणीमां प्रत्येके छवीश छवीश खांडुआ छे, तेना एकशोने चार थायछे सातमी नरक पृथ्वीनेविषे चार श्रेणीए प्रत्येकमां अठावीश अठावीश खांडुआ छे तेना एकशोने बार थाय छे एटले शोल, चालीश, चोसठ, एंशी, छन्नु, एकशोने चार तथा एकशोने बार ॥ ९ ॥

इद पण सय चालीस, खड्डुअ सोलहिय अठसय सवे ॥
चउसट्ठि लोगमज्झे, जायण अस्सग हाईदि ॥ १० ॥

व्याख्या – अधोलोकना सर्व एकठा खांडुआ गणीए तो पांचशोने चार थाय अने पूर्व ऊर्ध्व लोकना त्रणशेने चार कह्या तेने साथ मेलवीए तेवारे स र्व खांडुआने [illegible] खांडुआ [illegible] लोकना मध्यनुं ठाम कहे छे [illegible]

नामनी प्रथम नरक पृथ्वीनेविषे असंख्यात योजननी कोडी मेरूना मूलनेविषे गोस्तनाकार रुचकथी हेठल लोकनो मध्यनाग जाणवो. ॥ १० ॥

अवतरण·–हवे चौद राजनेविषे अधो लोक, तिर्यक् लोक तथा ऊर्ध्व लोक मां कोण कोण रहेछे ते कहे छेः–

सग रज्जु जोयण सया, अढार सुण सगरज्जु माण इहं ॥
अह तिरिय उड्ढ लोआ, निरय नर सुराइ नावुल्ला ॥ ११ ॥

व्याख्या·–लोकना मध्यथी आठमा राजनेविषे समभूतलथी नवसें योजन ऊंचो तथा नवसें योजन हेठल ए अढारसें योजन प्रमाण तिर्यग् लोक कहेवाय छे. त्यारे ऊर्ध्व लोकना सात राज छे. ते अढारसें योजन ऊर्ध्व लोकमां गण्याथी हेठला सात राज ते अधो लोक कहेवाय; अढारसें योजन रहित सातराज प्रमाण ऊर्ध्व लोक कहेवाय छे. हवे अधो लोकनेविषे नारकी प्रमुख, तिर्यक् लोकनेविषे मनुष्यादिक, अने ऊर्ध्व लोकनेविषे देवता प्रमुख वसेछे. यद्यपि नवनपत्यादिक देवता अधोलोकमां वसेछे तथापि नारकी घणा छे, माटे तेज अधोलोके कह्याछे.११॥

अह लोय निरय असुरा, वंतर नर तिरिअ जोइस तरुग्गी ॥
दीवु दहि तिरिअ लोए, सुर सिद्धा उड्ढ लोगम्मि ॥ १२ ॥

व्याख्याः– पाछली गाथानेविषे 'निरय नर सुराइ'–ए वाक्यमां आदि शब्द आव्यो छे माटे आदिशब्द निरयादि त्रणे शब्दोनी साथे जोडिये. त्यारे निरयादिक नारकी असुर देवता अधोलोकमां वसेछे. व्यंतर नर मनुष्यादिक तिर्यंच ज्योतिषी, तरु वनस्पतिकाय अग्निकाय ए असंख्याता द्वीप समुद्रूप तिर्यक लोकमां वसेछे. सुरादिक सुर देवता, सिद्ध कहिये मुक्त जीव ते सर्व ऊर्ध्व लोकमां रह्या छे.॥१२॥

इक्किक रज्जु इक्कि,क निरय सग पुढवि असुर पढमंता ॥
तह वंतर तडुवरि नर, गिरिमाइ अ जोइमा गयणे ॥१३॥

व्याख्याः– एकेक राज प्रमाण एकेक नरक पृथ्वी छे. एटले साते नरके सात राज थया. तथा पहेली नरक पृथ्वीनां अंतर एटले नवन पति रहेछे; तथा प्रकारे व्यंतर पण पहेली नरक पृथ्विमां रहेछे. तथा प्रथम पृथ्वीनी ऊपर नर मनुष्य अनेक नगर गिरि एटले मेरु पर्वतादिक पदार्थना समूह छे. चंद्रमा, सूर्य. ग्रह, नक्षत्र तथा तारा ए पांच प्रकारना ज्योतिषी गयणेके० आकाशनेविषे रहेछे.॥१३॥

ठसु खमुगेसु अ डुग, चउसु डुगं ठसु अ कप्प चत्तारी ॥
चउसु चउ सेसेसु अ, गेविज्ज णुत्तराय सिद्धते ॥ १४ ॥

व्याख्या – लोकना मध्यथी ऊपर ठ खांडुआना ऊपरला नागनेविषे सौ ईशान ए नामना बे देवलोक ठे एटले अहीं लोकना मध्यथी दोढ राज ऊप देवलोकने वली त्याथी चार खांडुआ ऊपरना नागनेविषे सनत्कुमार तथा माहे नामना बे देवलोक ठे त्यांथी ठ खाडुआमां अनुक्रमे ब्रह्म, लांतक, शुक्र तथा स आर नामना चार देवलोक ठे त्यारपठी चार खांडुआनेविषे चार देवलोक आनत, प्राणत, आरण, तथा अच्युत नामना ठे बाकीना आठ खांडुआनेविषे नवग्रैवेयक तथा पांच अनुत्तर विमान ठे तेमां प्रथम चार खाडुआनेविषे नवग्रैवेयकठे ने उपरना चार खांडुआनेविषे पांच अनुत्तर विमानठे अतरखांडुआना ठेडानेविषे सिद्ध शिलाठे

अवतरण – एरीरीते ऊर्ध्व लोकनेविषे देवलोकनी स्थिति कही, तेविषे आग मनी साख कहेठे तथा चागमे –

सोहम्मम्मि दिवड्ढा, आढइज्जा य रज्जु माहिंदे ॥
चत्तारी सहसारे, पणच्चुए सत्त लोगते ॥ १५ ॥

व्याख्या – लोकना मध्यथी सौधर्म देवलोक दोढराज ऊचो ठे, लोकना म ध्यथी माहिंद्र देवलोक अढीराज ऊचो ठे, लोकना मध्यथी सहस्रार देवलोक चार राज ऊचो ठे, लोकना मध्यथी अच्युत बारमो देवलोक पांचराज ऊचोठे, अने लोकना मध्यथी लोकांत सात राजऊचो ठे ॥ १५ ॥

सम्मत्त चरण रहिया, सव्व लोग फुसे निरवसेस ॥
नतय चउदस नाए, पचय सुय देस विरईए ॥ १६ ॥

व्याख्या – सम्यक्त्व एटले देवनेविषे देवनी सद्दहणा, गुरुनेविषे गुरुनी सद् हणा, दयामय धर्मनेविषे धर्मनी सद्दहणा, चरण एटले पंचाश्रवथी विरमण पां च इंद्रियना निग्रह, अनतानुबंधिया क्रोध, मान माया तथा लोभना त्याग मनदंड वचन दंड कायदंड, तनी विरति एवा जे सयमना सत्तर भेद, तेणकरी युक्त ने चारित्र तेणेकरी रहित एटले मिथ्यात्व कुगुरु, कुदेव तथा कुधर्मना रा गना अविरति एवा जे समारो जीव तेन सम्यक्त्व चरण रहित कहिये एवा जीव सर्व ग्रासनाक अने सूक्ष्म तथा बादर जीव यानिमा फरना थका निरविश

पणे फरने एटले चौदराजमां तिलमात्र भूमि अण फरसी न मूके; श्रुतज्ञानी जे यति छे ते लोकना मध्यथी उंचे सात राज फरसे छे; कारण के, श्रुत ज्ञानी ने उत्कृष्टी गति सर्वार्थ सिद्धि सुधी छे एवं सिद्धांतमां कह्यु छे. ते सर्वार्थ सिद्धि लोकना मध्यथी कांइ एक ऊणा सात राज छे. ते स्तोकमात्र ऊणा होवा थी. सामान्य पणे पूराज गण्यामां आव्या छे. "छछमछ संजयाणं, उववाउ उ क्कोसउ असवछ" एम कह्युं छे. 'चउदस नागे पंचय, वली देशविरति वारव्रत ध र श्रावक ते चौद राजना चौद नागमांथी, पांच नाग ऊर्ध्व लोकना फरशे, केमके, श्रावकनी उत्कृष्टी गति अच्युत नामना वारमा देवलोकसुधी कही छे ते वारमो देवलोक लोकना मध्यथी पांच राज उचो छे. तेमाटे पांच राज कह्या

अवतरण:— हवे प्रथम सुचिरज्जु, प्रतररज्जु, घनरज्जु, तेउना अनुक्रमे प्रमाण कहेतां प्रथम सातमी नरक पृथ्वीनी आदियी मांमीने सुचिरज्जु कहेछेः—

अडवीसा छव्वीसा, चउवीसा वीस सोल दस चउरो ॥ सुइ
रज्जु सत्त पुढविसु, चउ चउ नइआउ पयर घणा ॥ १७ ॥

अर्थ ॥ सातमी नरक पृथ्वीनेविषे अगवीश सुचिरज्जु छे, छठी नरक पृथ्वीने विषे छवीश सुचिरज्जु, पांचमी नरक पृथ्वीनेविषे चोवीश सुचिरज्जु, चोथी नरक पृथ्वीनेविषे वीश सुचिरज्जु, त्रीजी नरक पृथ्वीनेविषे शोल सुचिरज्जु, वीजी नरक पृथ्वीनेविषे दश सुचिरज्जु तथा पहेली नरक पृथ्वीनेविषे चार सुचीरज्जु, जे चार खंडु आ श्रेणीवंध, अने पहोलाईए एकज खंडुओ होय तेने सुचिरज्जु कहिये. सात मी नरकपृथ्वी चार खंडुआ ऊंची छे; अने अगवीश खंडुआ त्रीछी ओलीए छे; ए माटे अगवीश सुचिराज जाणवा. एवी सर्वत्र नावना करवी हवे ए साते न रकपृथ्वीना सुचिरज्जुनुं मान जे एकठेने अगवीश थायछे ते चार नागे करीए तो प्रतर रज्जुनुं मान मले वली ते प्रतर रज्जुनुं आंक चारे नागे देतां जे फलितांक थाय तेटला घनरज्जु जाणवा. चार चार खांडुआ चारे दिशिए एटले अकेक राजलांवो तथा पहोलो अने पाराज जाडो होय ते प्रतररज्जु कहेवाय छे, तथा चार खांडुआ लाडापणे, लांवपणे तथा पोहोलपणे ते घनरज्जु कहिये. पहेला प्रतर रज्जुनेविषे शोल खांडुआ होय घनरज्जुनेविषे चोशठ खांडुआ होय ते आगल कहेवाशे ॥ १७ ॥

अडवीस सयं छसयरि, अह गर्ह्म चउ जुया इसय सवे ॥
सुइ रज्जु पयर रज्जु, दुतीसि ग्रुण वीस इगवसा ॥ १८ ॥

लोकनालद्वात्रिंशिका

व्याख्या – अधो लोकनेविषे पांचशेंने बार खांडुआ छे, तेना चार भाग करतां प्रत्येक भाग एकशोने अठावीशनो थाय तेटला सुचिरज्जु जाणवा ऊर्ध्व लोकनेविषे त्रणशेने चार खांडुआ छे तेना चार भाग करतां प्रत्येक भाग छोंतेर थाय, तेटला सुचिरज्जु जाणवा ते अधोलोकना एकशोने अठावीश सुचिरज्जु, तथा ऊर्ध्व लोकना छोतेर सुचिरज्जु, ए बन्ने एकठा करिये त्यारे बशेने चार सुचिरज्जु थाय अधोलोकना एकशोने अठावीश सुचिरज्जुने चार भाग दिये त्यारे बत्रीश प्रतररज्जु थाय, ऊर्ध्व लोकना छोतर सुचिरज्जुने चार भाग दिये तो ओगणीश प्रतररज्जु थाय ॥१८॥

अवतरण – हवे घनरज्जुनु मान कहेछे –

घणरज्जु अठ हिठा, पउण पणुढ उड्ढे पउण तेर ॥
घण पयर सूइ रज्जु, खडुअ चउसठि सोल चउ ॥१९॥

व्याख्या –अधोलोकना बत्रीश प्रतररज्जु छे, ते चार भागे देतां आठ थाय, माटे अधोलोकनेविषे आठ घनरज्जु जाणवा ऊर्ध्व लोकनेविषे ओगणीश प्रतररज्जु छे ते चार भागे देतां पोणा पाच घनरज्जु छे ते उभे कहेतां अध तथा ऊर्ध्व लोकना एकठा करिये तो पोणा तेर घनरज्जु थाय हवे घन प्रतर तथा सुचिरज्जुनु मान कहेछे –चोसठ खांडुआनो एक घनरज्जु थाय, शोल खांडुआनो एक प्रतररज्जु थाय, चार खांडुआनो एक सुचिरज्जु थाय ए सामान्य प्रकारे दृष्टांत मात्र चउस्त्र लोकनु परिणाम देखाड्यु, पण लोकनु स्वरूप वृत्ताकार मल्लकने आकारे छे ते वृत्ताकारना खांडुआ यंत्रमां लखाय नहीं, माटे चौरस कह्यो छे ॥ १९ ॥

अवतरण –हवे मन कल्पनाए कृत वृत्ताकार लोकनेविषे घनरज्जु प्रतररज्जु, तथा सुचिरज्जुनु मान कहेछे, तेमां प्रथम खांडुआनी संख्या केहेछे –

सयवग्गु सिगुणे पुण, विसय गुणयाल हवति घण रज्जु ॥
सड्ढ पणहत्तरि सय, सड्ढ तिसठी अठ्ठह कमा ॥ २० ॥

व्याख्या – पोताना वर्गथी खांडुआ गणीए ते आ प्रमाणे – सातमी माघव पृथ्वीनेविषे हेठली श्रेणी ए अठावीश खांडुआछे, तेने अठावीशना आंक गुणीए त्यारे सातशेनें चोराशी खांडुआ एक श्रेणीमां थाय एवी चार श्रेणी छे ते सातशोने चोराशीने चारे गुणतां त्रण हजार एकशोने छत्रीश खांडुआ थाय प्रथम छठी नरक पृथ्वीनेविषे हेठलनी श्रेणीए छवीश खांडुआ छे तेने छवीश

थी गुणतां छशेंने छोतेर थाय. एवी चार श्रेणीउ छे. तेथी छशेंने छोतरने चार
थी गुणतां बे हजार सातशेने चार घनरज्जुनां खांडुआ थाय. पांचमी नरक पृ
थ्वीनेविषे हेठलनी श्रेणीए चोवीश खांडुआ छे. तेने चोवीशथी गुणतां
पांचशेंने छोतेर थाय. एवी चार श्रेणी छे तेथी पांचशेने छोतरने चा
रथी गुणतां बे हजार त्रणशेंने चार घनरज्जुना खांडुआ थाय. चोथी नर
क पृथ्वीनेविषे छेली श्रेणीए वीश खांडुआ छे तेने वीशथी गुणतां चारशें थाय.
एवी चार श्रेणी छे तेथी चारशेंने चारथी गुणतां शोलशें घनरज्जुना खांडुआ
थाय. त्रीजी नरक पृथ्वीनेविषे छेली श्रेणीए शोल खांडुआ छे. तेने शोलथी गुण
तां बशेने छप्पन थाय. एवी चार श्रेणी छे. तेथी बशेने छप्पनने चारे गुणतां ए
क हजारने चोवीश घनरज्जुना खांडुआ थाय. बीजी नरक पृथ्वीनेविषे छेली श्रे
णीए दश खांडुआ छे. तेने दशे गुणतां एकशो थाय. एवी चार श्रेणी छे. तेथी
एकशोने चारे गुणतां चारशो खांडुआ थाय. अने पेली नरकपृथ्वीनेविषे छेली श्रे
णीए त्रस नाडीना चार खांडुआ छे. तेने चारे गुणता शोल थाय. एवी चार श्रे
णी छे तेथी शोलने चारथी गुणतां चोसठ थाय. त्यारे पहेली नरकपृथ्वीनेविषे
घनरज्जुना चोसठ खांडुआ जाणवा. एवी रीते सात नरकपृथ्वीना खांडुआनो व
र्ग करी सर्व अंक एकठा करीए तो अग्यार हजार बशेंने बत्रीश अधोलोकनेविषे
घनरज्जुना खांडुआ थाय. हवे ऊर्ध्वलोकनेविषे घनरज्जुना खांडुआनो विचार क
हेछे —उपर लोकना मस्तकथी आदि लेवी. उपरनी श्रेणीए चार खांडुआ त्रस
नाडीना छे. तेने चारे गुणतां शोल थाय. एवी बे श्रेणीउ होवाथी शोलने बमणा
करतां बत्रीश घनरज्जुना खांडुआ थाय तेथी हेठलनी श्रेणीनेविषे छ खांडुआ छे.
तेने छ गुणा करतां-छत्रीश थाय. एवी बे श्रेणीउ होवाथी छत्रीशने बमणा करतां बो
तेर थाय. पछी आठने आठ गुणा करिये त्यारे चोसठ थाय. एवी त्रण श्रेणीउ हो
वाथी चोसठने त्रण गुणा करतां एकशोने बाणु थाय. त्यार पछी दशने
दश गुणा करिये त्यारे एकशो थाय. एवी त्रण श्रेणीओ होवाथी एकशोने त्र
णथी गुणतां त्रणशें थाय. पछी बारने बार गुणा करिये त्यारे एकशोने चुमाली
श थाय. एवी बे श्रेणीओ होवाथी एकशोने चुमालीशने बमणा करता बशेंने
अठयाशी थाय. पछी शोलने शोलथी गुणतां बशेंने छप्पन थाय. एवी बे श्रेणीओ
होवाथी बशेंने छपनने बमणा करतां पांचशेंने बार थाय. पछी वीशने वीशथी
गुणतां चारशें थाय. एवी चार श्रेणीओ होवाथी चारशेंने चारथी गुणतां शोलशें

थाय वली त्याथी घटतां शोलने शोलथी गुणतां बशेने छपन थाय
श्रेणीओ होवाथी बशेने छपनने बमणा करतांपांचशेने बार थाय त्यांथी
रने बारे गुणतां एकशोने चुमालीश थाय एवी बेश्रेणीओ होवाथी एकशो
लीशने बमणा करतां बशेने अगाशी थाय त्यांथी हेठल दशने दशे गुणत
शो थाय एवी एकज श्रेणी होवाथी एकशोज गणवा त्यांथी हेठन आव
छे गुणतां चोशठ थाय एवी एकज श्रेणी होवाथी चोशठज गणवा त्याथी
छने छथी गुणतां छत्रीश थाय एवी बे श्रेणीउ होवाथी छत्रीशने बमणा करतां
तेर थाय त्यांथी हेठला चारने चारे गुणतां शोल थाय एवी बे श्रेणीउ होवा
शोलने बमणा करता बत्रीश थाय ए सर्व अंक एकठा करतां उर्ध्वलोकनेवि
चार हजारने चोसठ घनरज्जुना खांडुआ थायछे तेने पूर्वोक्त अधोलोकना अग्या
हजार बशो बत्रीस खांडुआनी साथे एकठा गणतां पंदर हजार बशोने छनु घनरज्जुना
खांडुआ थाय एवीरीते पोताना वर्गनी साथे गणतां चोशठ खाडुए एक घनरज्जुथ
य छे माटे पंदर हजार बशोछनुने चोशठ भागे वेचतां बशोने उगणचालीशनो भा
ग आवे त्यारे ए वृत्ताकार लोकनेविषे बशेने उगणचालीश घनरज्जु थाय छे ह
वे अधोलोकना तथा उर्ध्व लोकना घनरज्जुउ भिन्न भिन्न करी कहेछे – 'सड्ड प
ण हत्तरिय' अधोलोकनेविषे एकशोने साडी पचोतेर घनरज्जु थाय छे 'सड्ढ ति
सठ्ठीअ ड्डुडुकमा' ऊर्ध्व लोकनेविषे साडी त्रेसठ घनरज्जु थाय छे अनुक्रमे ए मा
न जाणीलेवो ए बन्ने एकठा करिये त्यारे बशोने उगणचालीश घनरज्जु थाय ॥२०॥

अवतरण – हवे घनरज्जुना खांडुआना प्रतररज्जु कहे छे –

चउ गुणिय पयर रज्जु, सत्त डुरुत्तरय डुसय चउपण्णा ॥
अढ छढ नव छप्पणा, सब्बे चउ गुणिय सुइ रज्जु ॥२१॥

व्याख्या – अधोलोकनेविषे एकशोने साढी पचोतेर घनराज छे तेने चारथ
गुणतां सातशे ने बे अधोलोकनेविषे प्रतरराज थाय ऊर्ध्व लोकनेविषे साडी त्रे
सठ घनराज छे, तेने चारथी गुणता बशने चोपन प्रतर राज थाय एम अधोलोक
था ऊर्ध्वलोकना एकठा करिये त्यारे नवशे ने छप्पन प्रतरराज थाय ए सव
तर राजने चागुणा करतां जे अंक आवे ते सूचीरज्जु मान जाणवु ॥ २१ ॥

अवतरण.— हवे सूचीरज्जुनुं मान गाथाए करी कहेछेः—

अडवीस सयछुत्तर, दस सोला अठतीस चोवीसा ॥
इय संवग्गिय लोए, तिह रज्जु खंमुआ नेया ॥२२॥

व्याख्या.— अधोलोकनेविषे सातशे ने बे प्रतर रज्जु छे. तेनं चोगुणा करतां बे हजार आठशे ने आठसूची रज्जु थाय. ऊर्ध्वलोकनेविषे बशेने चोपन प्रतर रज्जु छे, तेने चोगुणा करतां एक हजारने शोल सूचीरज्जु थाय. तथा अधोलोक अने ऊर्ध्व लोकना एकठा करतां त्रण हजार आठशे अने चोवीश सूची रज्जु थाय. पोताना वर्गे गणित लोकनेविषे त्रिक रज्जु कहिये एम घनरज्जु तथा प्रतररज्जु तथा सुचीरज्जु ए त्रण राजना खांडुआनी संख्या जाणवी. ॥ २२ ॥ हवे वर्गना अंकथी गणतां जे खांडुआनी संख्या आवे ते संग्रह गाथामां कहेछेः—

एगार सहस डुसया, वत्तीसा चउसहस्स चउसठी ॥ अ
ह उर्ढ्ढं सव पन्नर, सहस्स डुन्नि सय छ न्नउआ ॥ २३ ॥

व्याख्याः— अधो लोकनेविषे वर्गने अंकथी गणतां अग्यार हजार बशोने बत्रीश खांडुआ थाय. ऊर्ध्व लोकनी श्रेणी वर्गना अंकथी गणतांचारहजार ने चोसठ खांडुआ थायतेबेहु एकठा करिये त्यारे पंदर हजार बशें ने छपन्न थाय॥२३

अवतरणः— हवे वर्ग करवानो विधि गाथाए करी कहेछेः—

अड छ चउवीस वीसा, सोल दस चऊ अ ढुन्नि चउ छठ॥
दस बार सोल वीसा, सरिसंक गुणाउ चउहि गुणे॥२४॥

व्याख्या.— अहीं वीस शब्द त्रण ठेकाणे जोडवो. ते आमः— अठावीश, छवीश तथा चोवीश एम जाणवु. तथा ए माघवती सातमी पृथ्वीथी आदि लईने जे आठवीशादिक अंक त्रीठी श्रेणीनेविषे आवे ते पोतपोतानेसरखे अंके गुणी ए अनेएकठा करिये. पछी तेने चोगुणा करतां जे अंक आवे ते खांडुआनी संख्या जाणवी ते आवी रीते.— सातमी नरक पृथ्वीने तलेथी अठावीशने अठावीसथी गुणतां सातशेने चोरासीथाय छवीसने छवीशथी गुणतां छशेनेछोतेर थाय; चोवीसने चोवीसथी गुणतां पांचशोने छोतेर थाय वीशने वीशथीगुणतां चारशों थाय; शोलने शोलथी गुणतां बशे ने छपन्न थाय, दशने दशथी गुणतां एकशो थाय; अने चारने

चारथी गुणता शोल थाय , ए साते स्थलना अकोने एकठा करिये त्यारे बे हजार आ ठशो ने आठ थाय, तेने चोगुणा करतां अग्यार हजार बशों ने बत्रीस थाय ए अधो लोकना खाडुआ जाणवा हवे ऊर्ध्व लोकना खाडुआ कहेछे —चार, ठ, आठ, दश, बार, शोल तथा वीश ए अंकोने सरखा अंकथी गुणवा, ते आवी रीते —चारने चार गुण करवाथी शोल थाय ठने ठथी गुणतां ठत्रीस थाय, आठने आठथी गुण तां चोसठ थाय, दशने दशथी गुणता एक शो थाय बारने बारथी गुणतां एक शोने चुमालीस थाय, शोलने शोलथी गुणता बशोने ठपन थाय, वीसने वीस थी गुणतां चारशे थाय, ए सात स्थलोना अंक एकठा करवाथी एक हजारने शोल थाय. तेने चारथी गुणता चार हजार ने चोसठ ऊर्ध्व लोकना खाडुआनी संख्या थाय पठी अधोलोकना तथाऊर्ध्व लोकना खाडुआ एकठा करिये त्यारे पदर हजार बशोने ठनु थाय ॥ २४ ॥

अवतरण — वली प्रकारांतरे वर्ग करवानो विधि गाथाए करी कहेछे —

चउ अडवीसा ठप्प, एपयरसरिसंक गुणिय पिंडमिलिए ॥
सम दीह पिंडवेहा, ठहूमहो खंडुआ नेआ ॥ २५ ॥

व्याख्या — लोकना मस्तकनेविषे ऊपरली त्रीठी श्रेणीए चार खाडुआ ठे सा तमी नरक पृथ्वीनी ठेली श्रेणी अठावीश खाडुआनी ठे एम चारथी आदिलइने ठेली ठपन्नमी श्रेणी अठावीस खाडुआनी ठे एटले पुरुषाकार लोकनेविषे त्रीठी ठपन प्रतरनी श्रेणी ठे आदि तथा अंतनी श्रेणीउंनु ग्रहण करवा थी मध्यनी श्रेणीनु पण ग्रहण थाय ठे, माटे ठपन श्रेणी ठे जे श्रेणीनेविषे त्रीठी श्रेणीना जेटला खाडुआ ठे तेटला अंकथी गुणीए, जेमके, सर्वथी ऊपर नी मस्तक श्रेणीनेविषे चार खाडुआ त्रीठा ठे त्यारे चारने चारथी गुणता शोलथाय एम ठपन श्रेणीउं सरखे आंके गणी एकठी करिए त्यारे पूर्वोक्त पदर हजार ब शोने ठनु खाडुवानी संख्या थाय हवे खाडुआनु परिमाण कहे ठे — लांबपणे, पोलाइए तथा जाडपणे कुनीनी पठे सरखा ठे एटले पोला, लांबा तथा जाडा पा राज प्रमाण ऊर्ध्वलोक तथा अधोलोकना सर्व एवा खाडुआ जाणवा ॥२५॥

अवतरण — हवे वृत्ताकार लोक घन करवानो विधि कहेछे —

दाहिण पास डुखमा, ठहु वामे ठविज्ज विवरीया ॥
नामी सहिय ति रज्जू, पिंडु जाया सत्त दीहुच्चे ॥ २६ ॥

व्याख्याः- ऊर्ध्व लोकनेविषे त्रस नाडीथकी दक्षिण बाजुए एटले जमणी बाजुना बे खंड. ते आमः-ऊर्ध्व लोकनेविषे ज्यां कोणीनी जगो छे, तेमध्यथी जोतां बारमी श्रेणी छे. ते बारमी श्रेणीथी बे खंड करिये एटले उपरला खंडनेविषे शोल श्रेणीओ रहे. एवी रीते दक्षिण बाजूना जे बे खंड छे ते ऊर्ध्व लोकनेविषे त्रस नाडीनी डाबी बाजूनेविषे उलटा करी नाखीए. ते आमः- उपरना खंडनी कूर्परनी जे दिशा, ते मस्तकनी तरफ करिये; अने हेठला खंडनी कूर्परनी जे दिशा ते लोकना मध्य तरफ करिये. एटले उपरलो खंड उपरनी दिशाए तथा हेठलो खंड हेठली दिशाए थापीए. त्रस नाडी सहित डाबी बाजूए त्रीग त्रण राज थायछे ते आमः- त्रस नाडीथी बाहार कूर्परने ठेकाणे जमणी बाजूए आठ खांडु आ त्रीग छे; तेना बे राज अने एक त्रस नाडीनुं राज, एम त्रण राज पोला ईए थायछे; अने लांबपणे तथा ऊंचपणे सात राज होयछे. ॥ २६ ॥

हिठाउ वाम खंडं, दाहिण पासे ठविज्ज विवरीअं ॥
उवरिम ति रज्जु खंडं, वामे ठाणे अहो दिज्जा ॥ २७ ॥

व्याख्याः- अधो लोकनी त्रस नाडीथी जे डाबी बाजुनो आखो खंड छे, ते विपरीत एटले अवलो अथवा ऊंधो हेठली त्रस नाडीनी जमणी बाजुनेविषे थापीए. एटले अधोलोकनेविषे जमणी बाजुए त्रीग चार राज, अने लांबपणे सात राज थया ते आ प्रमाणेः- त्रस नाडीथी जमणी बाजुमां आधोलोकनी हेठ चार खांडुआ छे; तेना त्रण राज; अने त्रस नाडीनुं एक राज, एम चार राज थाय. पछी ऊर्ध्वलोकनो डाबी बाजुनो त्रीगो त्रण राज लांबो सात राज प्रमाण खंड छे. ते अधोलोकनी जे त्रस नाडी छे तेनी डाबी बाजुए दईए, एटले सर्वत्र पूर्व, पश्चिम, दक्षिण तथा उत्तर दिशिओए तथा जाड पणे सातघनरज्जु प्रमाण घन लोक थयो. ॥ २७ ॥

इय संवट्टिय लोउ, वुट्टि कउ सत्त रज्जु माण घणो ॥
मग रज्जु अहिय दिशा, गिएहइ पासाइ पूरिज्जा॥ २८ ॥

व्याख्याः- ए प्रकारे करी इय संवर्तित लोक वृत्ताकारे कीधो पण ते लोक वृत्ताकारे; ते केवी रीतेकीधो-वुड्डिए करी. मन कल्पनाए करी सात राज प्रमाण घन कीधो, तथा सात घनरज्जु घना लांबपणे, पोलपणे तथा ऊंचपणे जे अधिक

खांडुआं थाय ते लईने हेठल जे जगोए ओछु होय ते पासू पूरिये एवीरीते चोर स सात घनरज्जु प्रमाण लोक कर्यो पण चोरस नथी गोलाने आकारे लोक वृत्ताकार छे पण घनलोक वृत्ताकार लखाय नही तेमाटे चोरस कीधो छे ॥२८॥

अवतरण – हवे ए समघन लोकनेविषे घनरज्जु, प्रतररज्जु, सूचीरज्जु अने खांडुआनी संख्या कहे छे –

घण रज्जु तिसय तेया,ल तेर बावत्तरीय पयर सूइ ॥
चउपन्न डसी खंडुअ, सहसि गवीसा नवड पन्ना॥२९॥

व्याख्या – ए वृत्ताकार घनीकृत चोरस लोकनेविषे त्रणशेने तेतालीश घनरज्जु छे एक हजार त्रणशेने बोतर प्रतर रज्जु छे. पांच हजार चारशेने अठ्यासी सूची रज्जु छे खाडुआनी सख्या कहेछे – सातराज प्रमाण घनलोकना खांडुआ एकवीश हजार नवशे ने बावन जाणवा ॥ २९ ॥

अवतरण – हवे घनरज्जु, प्रतररज्जु, सूचिरज्जु अने घनलोकना खांडुआ आणवानी करणी गाथाए करी कहेछे –

सगवग्गो सग चउ तिग, गुणिए उनय अहुठ्ठ खंडु घणा॥
छन्नूसउ सिआलं, चउ गुणिए पयर सुइ असा ॥ ३० ॥

व्याख्या –ए सातघनरज्जु प्रमाण समचोरस जे लोक छे ते सात सात वर्गथी गणिए ते सप्त वर्ग कहिये त्यारे सातने सातथी गुणिये, त्यारे उगण पचास थाय एवी उगणपचाश घनरज्जुनी सात श्रेणीछे ते ओगणपचाशने सातथी गुणतां त्रणशोने तेतालीश घनरज्जुनी सख्या थाय पछी घनरज्जुनो आंक त्रण वार चोगुणो करिये त्यारे अनुक्रमे अधोलोक तथा ऊर्ध्वलोकना प्रतररज्जु, सुचीरज्जु, तथा खाडुआनी सख्या मलेछे , ते आ प्रमाणे – त्रणशो तेताली घनरज्जुने चोगुणा करिये त्यारे एक हजार त्रणशेने बोतेर प्रतररज्जु थायछे ते प्रतररज्जुनो आंक चोगुणो करिये त्यारे पांच हजार चारशे ने अठ्यासी शुचिरज्जु थाय तथा सुचिरज्जुनो चोगुणो आंक करता खांडुआनी सख्या एकवीस हजार नवसेने बावन थाय हवे अधो लोक तथा ऊर्ध्वलोकनी जुदीजुदी घनरज्जु सुचिरज्जु प्रतररज्जु तथा खाडुआनी सख्या कहेछे – अधोलोकनेविषे एक से ने छनुं घनरज्जु छे, अने ऊर्ध्व लोकनेविषे एक शो ने सुडतालीश घनरज्जु छे, एने वली त्रण वार चोगुणा करतां अनुक्रमे प्र

तरज्जु, तथा सुचिरज्जुना अंस एटले खांडुआनो मान अधोलोक तथा ऊर्ध्वलोकनेविषे निन्न निन्न मिली आवेछे. ॥ ३० ॥

अवतरण.– अधो लोक तथा ऊर्ध्व लोकना खांडुआनो निन्न निन्न प्रमाणनो संग्रह करी कहेछेः–

सग चुलसी पण अमसी, इग तीस छतीस तिविस बावन्ना ॥
पण चुअल जुआ वारस, हस्स चनुण वइसय छ हिआ॥३१॥

व्याख्याः– अधोलोकनेविषे एक शो ने छनु घनरज्जु छे ; तेने चोगुणा करिये त्यारे सातशें ने चोराशी अधोलोकनेविषे प्रतररज्जु थाय. अने ऊर्ध्व लोकनेविषे एक शो ने सुडतालीश घनरज्जु छे, तेने चोगुणा करिये त्यारे ऊर्ध्व लोकनेविषे प्रतररज्जु पांच शो ने अठ्याशी थाय. अने अधोलोकनेविषे त्रण हजार एक शो ने छत्रीश सुचिरज्जु थाय ऊर्ध्व लोकनेविषे बे हजार त्रण शे ने बावन सुचिरज्जु छे हवे खांडुआनी संख्या कहेछेः– अधोलोकनेविषे पण बार हजार पांचशोने चुमालीस खांडुआछे ऊर्ध्व लोकनेविषे नवहजार चारसो ने आठ खांडुआ छे. अधोलोक तथा ऊर्ध्वलोकना एकठा खांडुआ करिये तो एकवीश हजार नवशोने बावन पूर्वोक्त संख्या मले. तथा अहीं त्रणशें ने तेतालीश राज कह्यां पण तेना खांडुआ नथी. मात्र बशोने छगण चालीशराजना खांडुआ छे तेथी एकशोने चार घनरज्जु अधिक छे. तेना खांडुआनो गम नथी. पण एक विशेष छे, के ए घनलोक चोरस कर्यो छे, अने लोक वृत्ताकार छे. त्यारे चारे दिशिना खूणा अधिक थाय; तोपण एवडो अंतर पडे नही. पण ए चोरसनुं जे परिमाण कह्यु छे ते अंतरंग वृत्ताकार लोकनुं मान धरीने कह्यु छे. माटे खुणानो नाग अधिक थाय नही. पछी प्रकारांतरनी वात तो ज्ञानी जाणे. पण पूर्वोक्त वर्गना आंक गणतां पंदर हजार बशोने छनु खांडुआ थाय. तेने चोशठ नाग देतां घनराज थाय. अधिक खांडुआ नथी त्यारे त्रणशोने तेतालीश राज केम थाय ते गीतार्थ विचारी लेवुं, असंख्यात योजननो एक राज थायछे. अथवा सहस्र नार लोहनो गोलो कोईएक महर्द्धिक देवतापोतानी शक्तिए करी तेने नीचे नाखी दिये त्यारे ते गोलो छ मास, छ दिवस, छ पहोर ; छ घडी अने छ पल जेटला काले नीचे आवीने पडे. तेटलो एक राज थाय. ए चारे दिशिउनेविषे राजनुं प्रमाण थाय ते जाणवुं. ॥ ३१ ॥

इय पयर लिहिय वग्गिय, संवट्टिय लोग सार मुवलप्र ॥
सुअ धम्म कित्तिअ तह, जय ह जहा न्नमह न इह न्निस ॥३१॥

व्याख्या — ए प्रकारे करी जे उपन प्रतर, ते प्रकारे लिखित वली संवर्गित एटले वर्गीने आंके गणित लोक तेनो सार तत्व ज्ञानविचार यथार्थ पणे लोकस्वरूप सद गुरुथी पामीने ते प्रकारे यत्न एटले उद्यम करवो पूर्वे जे प्रकारे चौद राज लोक नुं प्रमाण कह्यु, ते लोकमा अनत जन्ममरण पामता थका वारवार अत्यर्थपणे मां न्नमो, एवो तीर्थंकर सकल जीव हितकर पारग परमेश्वरनो नव्य जीवने उ पदेश छे. लोकनो सार केवो छे — ते श्रुतधर्म एटले जे सिद्धांत मार्गमां ज्ञानना बले करी ज्ञानवान तीर्थंकरे कहेलु छे ॥ ३१ ॥

श्रीमद्दाप्तोक्त विधिना, लोकनालस्य वार्त्तिक ॥ धिमित्र धनराजस्य, गगाख्य तनुजाकृते ॥ १ ॥ श्रीमत्सहज रत्ने न, व्याख्यात मुदयाब्धिना ॥ असमगन यत्कृत, विशो ध्य धीधनैर्नृश ॥ २ ॥ युग्मम् ॥

इतिश्री लोकनाल द्वात्रिंशिका बालावबोध

समाप्त

श्री कलीकुंम पार्श्वनाथायनमः

अथ

श्री सम्यक्त्व विचार गर्भित श्री महावीरजिनस्तवन.
बालावबोध सहित प्रारंभ.

मंगलाचरण.

प्रणम्य परमानंद, दायकं जिननायकं ॥ वर्द्धमान चिदानंदं, वर्द्धमान जिया धर ॥ १ ॥ श्रीसम्यक्त्वस्तवस्यास्य, वक्ष्स्य लोकभाषया ॥ बालानामवबोधाय बालाबोधं तनोम्यहं ॥ २ ॥

दोहाः– प्रणमी पद जिनवरतणा ॥ जे जगने अनुकूल ॥ जास पसायें में लह्यु ॥ समकित रयण अमूल ॥१॥ ते जिम वीरे उपदिस्युं ॥ परखद मझि अनूप ॥ तिम हुं वर्णवस्युं हवे ॥ समकित सुध्द स्वरूप ॥ २ ॥

अर्थः–श्री देवाधिदेवना चरणकमल नमीने जेना चरणकमल सकल जीवने हितकारीते अनुकूलछे जे श्रीवीरपरमात्माना चरणकमलने प्रसादे में पण अमुलक सम्यक्त्वरत्न पाम्युं ॥ १॥ ते सम्यक्त्व जेम श्रीमहावीरे बार परषदामां प्रकास्युं तेम हुं सम्यक्त्वनुं स्वरूप महारीबुध्दिप्रमाणे वर्णवीश ॥ २ ॥

ढाल पेहेली एकिमीकिहां राखी एदेशी टीका.

एगविध दुविध त्रिविध चउविधवलि ॥ पणविध दशविधजाणो ॥ ए समकित शिवतरूनुं बीजक ॥ संप्रति परें मन आणोरे ॥ प्राणी समकित गुण आराधो ॥ जेम शिवमारग साधोरे ॥ प्राणी० ॥ सम० ॥ १ ॥ ए आंकणी ॥ एगविध तुज आणा रुची दुविहा ॥ द्रव्य भावथी कहियें ॥ निश्चयने व्यवहारे अथवा ॥ समकित दुविध सदहयें रे ॥ प्रा० ॥ २ ॥ सदहणा सूधी तुज आगम ॥ परमारथ नवीजाणे ॥ समकित द्रव्यथकी तस कहियें ॥ भावथी तत्व वखाणेरे ॥ प्रा० ॥ ३ ॥ मिथ्यापुद्गल शुध्दनु वेदन ॥ समकित द्रव्य कहावे ॥ भावथि तत्व रुचिपण तिमहिज ॥ तत्व रुची परभावेरे ॥ प्रा० ॥ ४ ॥ पुद्गलरूपी अरूपी अपुद्गल ॥ ए पण द्विविध तु देखे ॥ क्षायोपशमिक वेदक पुद्गल ॥ शेष अपुद्गल लेखेरे ॥ प्रा० ॥ ५ ॥ निश्चय समकित गुन, आतमनो ॥ ज्ञानादिक परिणाम ॥

अथवा आतम समकित कहिये ॥ गुण गुणी भेद न गमरे ॥ प्रा० ॥ ६ ॥ मि
थ्या दृष्टीतणी संस्तवना ॥ त्यागादिक व्यवहार ॥ वजिय निसर्गोपर अधिगमथी॥
विहुभेदे निरधारे प्रा० ॥ ७ ॥ जिम कोई मारग भूलो पंथी ॥ भमता मारग
आवे ॥ कोइक उपदेशादिक योगे ॥ कोइक थाग न पावेरे ॥ प्रा० ॥ ८ ॥ ज्वर प
ण सहेजे औषध योगे, जाये एक न जाय ॥ मारग ज्वर दृष्टांते समकित ॥ इ
णि परे द्विविधे थायरे ॥ प्रा० ॥ ९ ॥ जाती समरण प्रमुख थकीजे ॥ ताम नि
सर्ग विचारा ॥ गुरुउपदेशादिक थी आव्युं ॥ ते अधिगम चित्तधारोरे ॥ प्र०॥१०॥
कारक रोचक दीपकभेदे ॥ त्रिविधे पण ए भाख्यु ॥ अथवा उपशम क्षायोपशमि
क ॥ क्षायिक भेदे दाख्युरे ॥ प्रा० ॥ ११ ॥ तें जिमभाख्यु ते तिमकीजु ॥ ते का
रक तस खास ॥ तुज धर्मोपरि रुचिथी रोचक ॥ नहि, किरिया, अभ्यासरे ॥ प्रा०
॥ १२ ॥ मिथ्या दृष्टि थको पण पोते ॥ धर्मकथादिक सारे ॥ दीपक पर परने दी
पावे ॥ ते दीपक उपचाररे ॥ प्रा० ॥ १३ ॥ ते समकित जिम फरस्यु जीवे ॥
तिम तुज आगल दाखु ॥ तुज आगम नय न्याय सुधोदधि ॥ परमारथ रस चा
खुंरे ॥ प्राणी समकित सुद्ध अराधो ॥ १४ ॥

अर्थ ॥ एकप्रकारनु बेप्रकारनु त्रणप्रकारनु चारप्रकारनुं पाचप्रकारनु अथवा दशप्रकारनु सम्यक्त्वजाणवु ए सम्यक्त्व मोक्षरूपवृक्षनु बीजभूतजाणवु सम्प्रतिरा जानीपरे मनमांचितववु यदुक्तं — एगविह दुविह तिविह, चउहा पचविह दसवि ह सम्म ॥ मुक्ख तरुबीयभूयं, सपइ रायाव धारिज्जा ॥ १ ॥

एकविधते तादृशी आज्ञारुचिरूप बेप्रकारनु सम्यक्त्वते एकद्रव्य सम्यक्त्व बीजु भा वसम्यक्त्व अथवा निश्चैसम्यक्त्व अने व्यवहारसम्यक्त्व एपण बेप्रकार कहिये॥२॥

तेमाजे तमेवसच्चंनिस्सकंजंजिणेहिं पवेइय इत्यादिकसद्दहणासुधीहोय पण प रमार्थ कोईनजाणे जीवाजीवादि स्वरूपपण नसमजे तेने द्रव्यसम्यक्त्व कहियें भावेण सद्दहतो अयाण माणेवि सम्मत्तमितिवचनात् तथा तमेवसच्चं इत्यादि क सद्दहणासुधीहोय अने नवतत्वादिकना भेदानुभेदपण परमार्थे समजे तेने भा वसम्यक्त्व कहियें जीवाइनवपयथ्थे, जोजाणइ तस्सहोइसम्मत्तमिति वचनात् ॥

अथवा रुपी द्रव्यसम्यक्त्व अने अरूपी भावसम्यक्त्व एप्रकारेंपण बभेदथाय तेज विवरीनेकहेछे मिथ्यात्वना शुद्धपुद्गलनुवेदन एटले मिथ्यात्वना त्रणपुज कर्या छे तेमां जे सुद्ध पुजनुवेदवु तेने द्रव्यसम्यक्त्व कहियें अने भावथी तत्वरुचिहोय तेने भावसम्यक्त्व कहियें ते उपशम क्षायिकादिक जाणवु ॥ ४ ॥

अथवावली बीजेप्रकारे सम्यक्त्वनुं द्विविधपणु देखाडेछे रूपी अने अरूपी ए वे भेदेजे सम्यक्त्वछे ते आवीरीतेजे एक क्षायोपशम अने बीजुंवेदक ए वे सम्यक्त्वरूपी पुद्गलरूपछे माटेएने रूपी कहिये अने शेष जे क्षायक. उपशम अने सास्वादन ए त्रण सम्यक्त्व पुद्गलरूपनथी माटे एने अरूपी कहियें यदुक्तं विचारपंचासिकायां धम्माधम्मा गासा, जीवाकालोय खाइमंचेव ॥ सासायण उवसमियं, अपुग्गलाई तुएयाई ॥ १ ॥ उरालिय वेउव्विय, आहारग तेयस्स झुणी मणो ॥ उस्सासंनिस्सासंकम्मण कम्माणिछायतमो ॥ २ ॥ वग्गणअणंतआयव, मिस्सखंधो अचित्त महखंधो ॥ वेयग खाउवसमं, उज्जोय पुग्गलसुएनणियं ॥ ३ ॥ ए द्विविधपणुपण साक्षात् केवलज्ञाने हे नगवन्तुं देखेछे ॥ ४ ॥

हवे निश्चेसम्यक्त्व अने व्यवहारसम्यक्त्व ए वे देखाडेछे निश्चयथी निश्चेनयें ज्ञानादिमय एटले ज्ञान दर्शन चारित्ररूप आत्मानो शुभपरिणाम तेहिज सम्यक्त्वकहियें अथवा ज्ञान दर्शन चारित्ररूप आत्मानो परिणाम ते आत्मारूपजछे तेमाटे आत्माज सम्यक्त्व कहियें इहां गुणगुणीनो अभेदोपचार लहियें गुणते ज्ञान दर्शन चारित्रादिक अने गुणीते आत्मा ए वे एकेकथी जूदानथी तेमाटे ए वे ने माहोमाहे भेदनथी अभेदरूपजछे यतः आत्मैव ज्ञानदर्शन चारित्राण्यथवा यते. यत्तदात्मकएवेष शरीरमधितिष्टति ॥ ६ ॥

बीजुं व्यवहार सम्यक्त्वते जे मिथ्यादृष्टिसंघाते परिचयप्रमुख टाले अथवा देवगुरुनी नक्तिप्रमुख साचवे व्यवहारथी सम्यक्त्वना दूषणटाले अने सम्यक्त्वना नूषणआदरे इत्यादिक लक्षणेकरी व्यवहारथी सम्यक्त्वधारि कहियें जेमाटे गुणस्थान क्रमारोहमां कह्युंछे. देवेगुरौच संघेच, सद्भक्तिंशासनोन्नतिं ॥ अव्रतोपि करोत्येव, स्थितिस्तूर्ये गुणालये ॥ १ ॥

अथवा निसर्ग अने अधिगम ए वेभेदपण सम्यक्त्वना कहियें ते देखाडेछे. जेम कोइकपुरुष मार्गथीनूलो कोइना उपदेशविना स्वयंमेवमतो पोतानीमेलेज पोते मार्गप्रतेपामें एटले पोतानीमेले मार्गआवे अने कोइकतो नूलोथको परनाउपदेशथी एटले बीजोकोई मार्गदेखाडे तेवारें मार्गआवे अने कोइकतो मूलथी मार्ग पामेज नही एमज नूलोफरे अथवा ज्वरनेदृष्टांते नाववुं जेम कोइनें ताप आवतोहोय ते पण कोइकतो पोतानीमेले परीपाकेजजाय अने कोइक औषधादिकने संयोगें जाय तथा कोइकज्वरतो जायजनही ए दृष्टांते . . . कोइकजीवतो जातिस्मरणादिके पोतानीमेलेजपामे अने कोइकने . . . थी पामे

तथा कोइकपामेजनही इहातो मिथ्यात्वरूपज्वरछे ते कोइकने गुरुउपदेशें अथवा सहेजेमटीजाय अने कोइक अनव्यादिकने मटेजनही अने जल वस्त्र कोइव द्दष्टांत त्रणछे ते पुजत्रयनेविषे नावसे इहा मार्गे तथा ज्वर ए वेद्दष्टांतनो प्रस्तावछे माटे बेज कह्या ॥ ७ ॥ ८ ॥ ए ॥ १० ॥

हवे सम्यक्त्वना त्रण नेद कहेछे तेमा एक कारक बीजु रोचक त्रीजु दीपक अथवा एक क्षायक बीजु उपशमिक त्रीजु क्षायोपशमिक ॥ ११ ॥

हवे एना लक्षण कहेछे हे नगवन् हे वीतराग ते जेम कह्युंछे तेमज करवु एटले ताहरी आज्ञाप्रमाणे चालवु तेने कारक सम्यक्त्व कहिये अने करनार ते पण कारकसम्यक्त्ववत थयो तेनेपण कारक सम्यक्त्व कहिये आधाराधेयानेदोप चारे अने रोचक सम्यक्त्व तेतो ताहरा धर्मउपर ताहरा शासनउपर रुचीमात्रनु करनार एटले धर्मउपर रुचीमात्र होय पण आचरी शकेनही तेमाटे रोचक कहिये॥१२॥

त्रीजु दीपकसम्यक्त्वते पोते मिथ्याद्दष्टी अथवा अनव्य अगारमर्दकादिकनी परे धर्मकथायेकरी अथवा मातृस्थानानुष्ठानातिसयेकरी कोइक प्रकारे जिनोक्त तत्व परने दीपावे वीतरागना वचन परनेप्रकाशे तेथी कोइक सम्यक्त्व पामे दीपकनीपरे पोतानीपासे अधकार अने परने प्रकाशस्थानीय सम्यक्त्व पमाडे तेमाटे दीपक सम्यक्त्व कहिये एनु अपरनाम व्यजक सम्यक्त्वपण कहिये ते मिथ्याद्दष्टीनेपण परिणाम परिणमन ते उपचारथी कारणनेविषे कार्यनाउपचारथी सम्यक्त्व कहिये यडुक्त यथायथा चाचरण जिनोदितं, तथा तथा यत्र सतिप्रवर्त्तते ॥ तदगसम्यक्त्वमिद प्रचक्षते, तथा विशुद्धे खलुकारकजिना ॥ १ ॥ विहितानुष्ठान प्रतिनावविशुद्धे रतीवविमलाया ॥ प्ररोचयतीतिरुत्वा रोचकमिदमाह सम्यक्त्व॥२॥ स्वयमिथ्याद्दष्टि स्तदपिचजनधर्मकथयामुहु सम्यङ्मार्गे नयतिचहित चैववदति ॥ तडुक्त सम्यक्त्व ह्यु पचरितवृत्या जिनमते तथा धर्म्मादीनाप्रकटनतया व्यजकमिति ॥ ३ ॥ पुनरप्युक्त – विहियाणुछाण पुण, कारगमिहरोयगतु सद्दहण ॥ मिछद्दिछीदीवइ, जतत्तोदीवगतंतु ॥ ४ ॥ इति

ते सम्यक्त्व जेम जीवे फरस्यु अनुनव्यु पाम्यु तेम तमारा आगल वीनवुछु ते ताहरा आगमने अनुसारे एटले ताहरा आगमना नयजे नैगमादिकने न्याय शास्त्र समत्यादिक तद्रूपजे सुधोदधि एटले अमृतसमुद्र तेनु परमार्थजे तद्रहस्य तेहिजरसने चाखु अनुनवु एटले तहारा आगमनु परमार्थ लेइने तेने अनुसारे कहीसु ॥ १४ ॥ ए पहेला ढालनु अर्थ पुरो थयु

ढाल बीजो देवतुज सिद्धांत मीठोएदेशी

वीरजिणेसर साहिब सुणजो ॥ निजसेवक अरदासरे ॥ दीन दयाकर ठाकुर आपो ॥ तुह्मचरणे मुज वासरे ॥ वी० ॥ १ ॥ लोकाकाशि रह्यो अविनाशी ॥ भाव अनादि अनंतरे ॥ ए भव चक्र तणा दुःख बहुला ॥ भोगवियां भगवंतरे ॥ वी० ॥ २ ॥ सूक्ष्मनिगोद वस्योहुं स्वामी ॥ अनादि वणस्सइ नामरे ॥ तिहांमे कीध अनंता पुग्गल ॥ परावर्त्तविण स्वामिरे ॥ वी० ॥ ३ ॥ अव्यवहाररासें इम वसिउ ॥ काल अनंतो भोगेरे ॥ कर्मपरिणाम नृपति आदेशे ॥ तादश भव्यता योगेरे ॥ वी० ॥ ४ ॥ तिहांएकण सासोसासमें कीधां ॥ भवसतरे जाजेरारे ॥ ए दुख तुलविण कुणछोमावे ॥ स्वामी मुज भवफेरारे ॥ वी० ॥ ५ ॥ व्यवहाररासी लइ उतकर्षे ॥ काल अनंत अनंतोरे ॥ थुल निगोदने पृथवी पाणी ॥ तेज अनिल त्रस जंतोरे ॥ वी० ॥ ६ ॥ तिहांपण हुं वसिउ तुमपाखें ॥ मिथ्यामतनेजोरेरे ॥ हरिहरदेवकरीमें मान्या ॥ तुं न चढ्यो मनमोरेरे ॥ वी० ॥ ७ ॥ तेण में छेदन भेदन ताडन ॥ भूष तृषा गुरु भाररे ॥ गर्भवासने जन्म जरा दुख ॥ भोगवियांनिरधाररे ॥ वी० ॥ ८ ॥ इम चउगइ भवना दुख फरसी ॥ वारअनंती अनाणीरे ॥ पालादृष्टांते इगपुग्गल ॥ परावर्त्तस्थिति आणीरे ॥ वी० ॥ ९ ॥ भव्यपणादिक ने परिपाके ॥ गिरिसरि उपल न्यायेरे ॥ अध्यवसाय विशेषकरणजे ॥ अनाभोगथी थायरे ॥ वी० ॥ १० ॥ ते त्रिविधे भाख्यु तिहां पहेलुं ॥ यथाप्रवृत्त वली बीजुंरे ॥ करण अपूरव नामे कहीये ॥ अनिवृत्त करण ते त्रीजुंरे ॥ वी० ॥ ॥ ११ ॥ यथाप्रवृत्तकरणे आयुविण ॥ सात करम करी खीणरे ॥ कोमा कोमी सायर इगपलनो ॥ असंख्यभाग तिणे हीणरें ॥ वी० ॥ १२ ॥ इहां कर्क्कस निबिम गुपिलजिम ग्रंथी ॥ भेदन दुक्कर कामरे ॥ कर्मपरिणाम जनित घन जीवनो ॥ रागद्वेप परिणामरे ॥ वी० ॥ १३ ॥ ते ग्रंथी नवीभेदी जीवे ॥ पहेलि इणे संसाररे ॥ वार अनंति अभव्यपण आवे ॥ ग्रंथीठगें निरधाररे ॥ वी० ॥ १४ ॥ भव्य अभव्य रहे तिहां ग्रंथी ॥ संख्य असंख्योकालरे ॥ अरिहंतादिकनी ऋद्धिदेखी ॥ संयमने उजमालरे ॥ वी० ॥ १५ ॥ तिहां लहे श्रुत समायक द्रव्यें ॥ सेप लाभ नही तासरे ॥ तिहांथी ग्रैव्यकेपणजीवे ॥ पण नहि शिवपुर वासरे ॥ वी० ॥ १६ ॥ कोइक भव्य महातम तेहमां ॥ जेहनेभवनो पाररे ॥ निशित कुठार धारें जिम ततपिण ॥ भेदे बल मनोहाररे ॥ वी० ॥ १७ ॥ करण अपूरव परमविशुधे ॥ तिमते ग्रंथी आयरे ॥ भेदीने अंतर मूहूरतमां ॥ अनिवृत्तिकरणे जायरे ॥

वी० ॥ १८ ॥ मिथ्यामोह तणीस्थिति तेहनु ॥ अंतरमुहूरत एकोरे ॥ उदय ह ण उपरें उंजयी ॥ ते समरथ सुविवेकोरे ॥ वी० ॥ १९ ॥ अनिवृत्ति करण विशे पे अंतर ॥ मुहूरतकाल अनूपोरे ॥ अंतरकरण करे तिहां वेयजे ॥ दलिक अनाव सरूपोरे ॥ वी० ॥२०॥ जिमवनदवदग्धे घन उखर ॥ पामी गाम उल्हायरे॥ तिम मिथ्या वेदन वनदव सम ॥ अंतरकरणे थायरे ॥ वी० ॥ २१ ॥ अंतरकरण करे मिथ्यातनी ॥ थितिद्युग कहे जिन न्यानेरे ॥ अंतरकरण थकी थिति हेठी ॥ पहे ली मुहूरत मानेरे ॥ वी० ॥ २२ ॥ तेहथी उपरली थिति बीजी ॥ तिहां प्रथम स्थिति जाणोरे ॥ मिथ्यादलीकनु वेदन तेहथी ॥ मिथ्यादृष्टी वखाणोरे ॥ वी० ॥ २३ ॥ अंतरमुहूरत ते थितिनाशे ॥ नही मिछादल वेदोरे ॥ अंतरकरणनो प्र थम समय तिहा ॥ लहे उपशम निरवेदोरे ॥वी०॥२४॥ परमानंद मगन होइ नटजि म॥जीती कटक अगेपरे॥न्यायवंत हरपेजिम गाढे॥न्याय धनागम पेखरे॥वी०॥२५॥

अर्थ ॥ हवे बीजाढालनी प्रथमगाथातो सुगमछे माटे बीजीगाथायी अर्थ क हेछे – इहा सदैवलोकाकाश प्रतिष्ठित अनादि अपर्यवसित नवचक्राख्य पुरोदर वर्त्ति तेमांहे वर्त्तता एवा पूर्वे सर्वप्राणी अनादिवनस्पतिमा सूक्ष्मनिगोद परपर्याय माहे अनंता पुद्गलपरावर्त्तलगे जीव रह्यो साथे एकश्वासोश्वासमा सतरभव जाजेरा करे जन्ममरणादिक वेदनाना समूहने अनुभवे तथाविध भव्यप्राणी पण अनंतो काल अव्यवहाररासीमारही कर्मपरिणाम राजानी आज्ञायी तथाविध भव्यपणाने नियोगेकरी व्यवहाररासीमांहे प्रवेसकरे

व्यवहाररासीते कोनेकहियें जे बादरनिगोद पृथ्वी पाणी तेज वायु प्रत्येकवन स्पति अने त्रस तेमापण अनंतानंत कालसुधीरहे एप्रमाणे सकलड सपादप वी जभूत जे मिथ्यात्व तेणेकरी एटला काललगे चारगतिनु ससार सबधी छेदन भे दन ताडन भूखातृषादिसहन गुरुभाराक्रमण गर्भवसन जन्म जरा रोग शोकइष्टवियो ग अनिष्टसयोग इर्ष्या विषाद मरणादिक दारुणदुःख प्राये अनंतिवार अनुभवीने पालाने दृष्टाते पालुते धान्यभरवानु भाजनविशेषजाणवु ते जेम कोइकपुरुष ते पालामा थोडुथोडु धान्यनाखे अने गणुवणुकाढे ते धान्य केटलेककाले खूटे तेम कर्मधान्यरूप पालामाहे जीव अनाभोगथी थोडा कर्मबाधे एटले थोडुघाले अने घणाकर्मनिर्जरे एटलेघणुकाढे एरीतें छेहलो एक पुद्गलपरावर्त्त जेणे भवस्थिति थाणीगरीने एवुकोईक चारगति ससारीजीव ते कथमपि महताकष्टे तथा भव्य त्व परिपाकना वशयकी गिरिसरिद्गुपल योजनाक्न्दप पर्वत नदी पथ्थर घोलना स

मान अनाजोग निर्वर्त्तित एवुं यथाप्रवर्त्तिकरण करणंपरिणामोत्रेतिवचनात् एहवुं अध्यवसायविशेषरूप तेणेकरीने एक आयुवर्ज्जीने सर्वज्ञानावरणादिक सातेकर्म ते नी पल्योपमासंख्येयनागे न्यून एककोटीसागरोपमनी स्थितिछे जेहनी एहवांकरे ते सर्वकर्मनी उत्कृष्ट स्थितिकेटलीने के जेमांथी वीजीन्यूनकरे ते गाथायेंकरीकहे छे मोहे कोडाकोडी, सत्तरिवीसंचनामगोयाण ॥ तीसयराणि चउह्णं, तित्तीसयराणि आउस्स ॥ १ ॥ अन्नांतरे जीवने कर्मपरिणामजनित घन रागद्वेषपरिणामरूप कर्कश निविडचिरप्ररूढ गुपिल वल्कग्रंथीनीपरे दुर्नेद अनिन्नपूर्वगांठीहोय.

तडुक्तं घस्सण घोलण जोगा, जीवेणजयाहविक्क कम्मठिई ॥ खविया सव्वासागर, कोडाकोडी पमुत्तूणं ॥ १ ॥ तउवियथोवमित्ते. खविये ऽइंतरमि जीवस्स. हवइहु अनिन्नपुव्वो, गंठीएवं जिणाविंति ॥ २ ॥ गंठित्तिसुडुप्रेउ, करकडघणरूढगूढ गंठिव्व जीवस्स कम्मजणिउ, घणरागदोस परिणामो ॥ ३ ॥

ए गांठ सुधी अनव्यपण यथाप्रवर्त्तिकरणेकरी कर्मखपावी अनंतिवारआवे पणगांठने नेदेनही यडुक्तं प्रवचनसारोद्धारे करणं अहापवत्तं, अपुव्वमनियट्टिमेव नव्वाणं ॥ इयरेसि पढमंचिय, नसुइकरणंति परिणामो ॥ १ ॥

ग्रंथीदेशेंवर्त्ततो नव्य अथवा अनव्य तिहां संख्यात अथवा असंख्यातोकाल रहे तिहांरह्योयको द्रव्यश्रुत निन्न दशपूर्वलगें अनव्यनणे ते तीर्थंकरनी कृद्धि देखी अथवा स्वर्गसुखादिकनो अर्थियको जेवारे दीक्षालिये तेवारे पूर्वनणे तेमाटे ज निन्न दशपूर्वांतश्रुत ते मिथ्याश्रुतपणहोय मिथ्यात्वेंग्रह्यामाटे मिथ्याश्रुत कहेवाय अने जेने चउदपूर्व अथवा संपूर्ण दशपूर्वश्रुतहोय तेने नियमा सम्यक्त्व होय पण कांइकउणा दशपूर्वधरादिकनेविषे सम्यक्त्वनी नजना जाणवी यडुक्तं कल्पनाष्ये चउदस दसय अनिन्ने, नियमा सम्मत्त सेसए नयणा ॥ इति तिहांथी द्रव्यसंयमपाली जैननीक्रियानेबले नवग्रैव्यकेपणजाय पण मिथ्यादृष्टीमाटे संसारनो पारपामेनही यडुक्तं आवश्यकटीकायां अनव्यस्यापि कस्यचित् यथाप्रवृत्तिकरणतो ग्रंथिमासाद्यार्हदादि विनूतिदर्शनतः प्रयोजनांतरतोवा प्रवर्त्तमानस्य श्रुत सामायिक लानोनवति नशेपलानइति

एम यथाप्रवर्ति करणेकरीने ग्रंथीलगे नव्यपणआवे अने अनवपणआवे पण अपूर्वकरणादिकतो नव्यनेजहोय अपूर्वकरणे तो पथिक पिपीलिकयोर्ज्ञातं यथा.

जह इह तिन्निमणूसा, जंतऽविपहं सहावगमणेणं ॥ वेला इक्कमनिया, तुरंति पताय दोचोरा ॥१॥ दहुंमग्ग तडछे, तछेगोमासउ पडिनियत्तो ॥ वीउंगहिउ तइउ,

समइक्कंतो पुरपत्तो ॥ २ ॥ अडवी जवो मणूसा, जीवाकम्मठिइ तहोदीहो, गंठी यजयठाणं ॥ राग दोसाय दो चोरा ॥ ३ ॥ जग्गोठिइ परिवुड्डी, गहिर्ज पुण गंठि र्ड गर्ज तइर्ज ॥ सम्मत्त पुरएव, जोइज्जा तिन्नि करणाइ ॥ ४ ॥ खिइ साजावियग मण, थाणूसरण तर्ज समुप्पयणं ॥ णाणगपुसिरेवा, कट्ठरण वा मुत्रगीण ॥ ५ ॥ खिइगमण पिव पढम थाणु सरणाच करण मपुव्वं ॥ उप्पयणपिवतत्तो, जीवाण करण मनियट्टिं ॥ ५ ॥ णाणुव गंठिदेसो, गंठिय सत्तस्स तत्र वट्ठाण ॥ कपरण पिवतत्तो, पुणोविकम्मठिइविवड्ढी ॥ ७ ॥

एम ए वे दृष्टांते त्रणकरण नाववां एकआयुकर्मवर्जिने बीजा सातकर्मनी कत्कृष्टी स्थिति खपावी बाकी एककोडाकोडी सागरोपमते पल्योपमने असंख्यातमेंनागें न्यून सातेकर्मनी स्थिति प्रत्येके आणी राखी

हवे कोइक महात्मा समासन्न परमनिर्वृत्ति सुख समुल्लसित प्रचुरदुर्निवार वीर्यप्रसर तीक्ष्ण कुगरधारानीपरे अपूर्वकरणरूप आत्मानी परमविशुद्धं यथोक्त स्वरूप ग्रंथीनोजेदकरीने मिथ्यात्वमोहनीय कर्मस्थितिनु अंतरमुहूर्त्त उदयक्षणथी उपरे अतिक्रमिने अनिवृत्तिकरण सञ्ज्ञितविशुद्धि विशेषेकरीने अंतरमुहूर्त्तकाल प्रमाण वेद्यदलिका जावरूप अंतरकरणकरे इहां यथाप्रवृत्तिकरण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण नो अनुक्रम आवीरीतेंजाणवु तेकहेले यथा जागंठी तापढम, गंठीसमइच्छर्ज जवेबीयं ॥ अनियट्टीकरण पुण, सम्मत्त पुरक्कडेजीवे ॥ १ ॥ गंठिस म इयर्वत्ति॥ग्रंथि समतिक्रामत निदानस्येत्यर्थः सम्मत्तपुरक्कडेति सम्यक्त्व पुरस्कृतं येनतस्मिन् आसन्नसम्यक्त्वे एवजीवे अनिवृत्तिकरण जवतीत्यर्थः

एटले जे करणेकरी गिरिसरि जलवेगालोड्यमान पाषाणनीपरें घचना घोलनादि केकरीने एकआयुकर्मवर्जि शेष सातेकर्मनी कांइकउणी एक कोडाकोडी सागरोपमनी स्थितिकरतो ग्रंथीदेशलगेंआवे ते यथाप्रवृत्तिकरणकहियें अने जे अध्यवसाये अप्राप्तपूर्वके घन रागद्वेष परिणतिरूप ग्रंथीने जेदवामांमे ते अपूर्व करण कहियें वली पूर्वप्राप्तयथाजे अध्यवसाय तेने अनिवर्तके एवा अध्यवसायविशेषें ग्रंथीनेदकरीने सम्यक्त्वपामे ते अनिवृत्तिकरण कहियें हवे अंतरकरण करतिवेलायें मिथ्यात्व मोहनीयकर्मनी बे स्थितिकरे एक अंतरकरणथी हेवली प्रथम स्थिति अंतरमुहूर्त्तप्रमाण बीजी तेथी उपरली बाकीरहेली पल्योपमासंख्येयजाग न्यून कोडाकोडी सागरोपमरूप स्थितिजाणवी

तेमा प्रथम स्थितिनेविषे मिथ्यात्वदलिक वेदनथी ए जीवने मिथ्यादृष्टीन क

ह्यिें अंतरमुहूर्त्त वली ते स्थितिगयेथके अंतरकरणनो प्रथम समय तिहांज सम्य क्त्वपामे मिथ्यात्वदलिक वेदनना अनावथीजेम वनमां दवलागोहोय ते जेवारे उख रजूमिपामें तेवारें पोतानीमेलें उल्हाइजाय तेम मिथ्यात्व वेदनरूप वनदव तेपण अंत रकरणरूप उखरजूमिपामिने उल्हाइजाय तेवारे तेने उपशमसम्यक्त्वनो लाज थाय.

उक्तंच ऊसरदेसंदढ्ढि, ल्लियं च विज्ञाइ वणदवोपप्प॥ इयमिछस्साणुदए, उवस मसम्मंलहइजीवो ॥ १ ॥ टीका ॥ ग्रंथिनेदोहि मनोविघातपरिश्रमादिनिर्दुःख साध्योवर्त्तते तदाहि सजीव. कर्मरिपुमध्यगतस्तं ग्रंथिंप्राप्यातीव परिश्राम्यति,प्रजू तकर्मारातिसैन्यांतकत्वेन संजातखेदत्वात् संग्रामशिरसीवबहुर्ज्ञयापाकृतानेक श त्रुनरनरेंद्रनटवत्॥ यडुक्तं सम्यक्त्वस्तवे॥सोतहरणे सुहमो, व वेरिजयजणियपरम आणंदो ॥ सम्मत्तं लहइ जिउं, सामन्नेणं तुह पसाया ॥ १ ॥ टीका ॥ सजीवस्त आनिवृत्तिकरणेकृते अंतरे हेनाथ तवप्रसादात् तवसाह्यात् सामान्यतो नतुक्षावि काद्विविशिष्टतया सम्यक्त्वं उपशमिकाख्यं लनतेजीवः कइवेल्याह रणे सुहमोवे त्ति वैरिजयेन जनितोयः परमानंदस्तंरणे सुनटइव॥तथाहि रणेनटो वैरिजयादानं दमश्नुते तथैव रागद्वेष कर्मस्थित्यादि वैरिजयात्परमानंद कल्पंसम्यक्त्वं लनते जीव. तडुक्तं पावंति खवेऊणं, कम्माइ अहापवत्त करणेणं ॥ उवलनाएण कह मवि, अनिन्न पुव्विं तउगंविं ॥ १ ॥ तगिरिवरंवनेत्तुं अपुव्वकरणुग्गवज्ज धाराए ॥ अंतोमुहुत्तकालं ॥ गंतुंअनियट्टिकरणंमि ॥ २ ॥ पइसमयंसुज्झंतो, खविउंकम्माइ तछ बहुआइं ॥ मिछत्तंमिउइसे खीणेणुइयंमि उवसंते ॥३॥ संसारगिम्हतविउं, त त्तो गोसीसचंदणरसोव्व ॥ अइपरम निवुइ करं, तस्संते लहइसम्मत्तं ॥ ४ ॥ अत एव नव्यानां मिथ्यात्वस्यानादिसांतत्वं ॥ तडुक्तं मिछत्तमनव्वाणं, तमणाइ मणंतयं मुणेयव्वं ॥ नव्वाणंतमणाइ, सपज्जवसियंतु सम्मत्ते॥ए वीजाढालनी सोलमीगाथाथी मांमीने चोवीसमी गाथासुधी नवगाथानो अर्थकह्यो वीजाढालनोअर्थ पूरो थयो.

॥ ढाल त्रीजो सहीरेंममाणी एदेशी. ॥

॥ इणीपरें तुजथी समकित फरस्युं ॥ जेह्यी नवजल तरस्युंरे ॥ धनधन तुम सेवा ॥ एथी मन वछीत फल लेवा ॥ तेकरवा मुज हेवारे ॥ध० ॥ १ ॥ तिहां कोइ देश विरति तसलहसी॥ सर्व विरतिलहे हरिनीरे ॥ ध० ॥ मिछामयण कोदर वा सरिखुं ॥ उपशम ओपधपरखुंरे ॥ ध० ॥ २ ॥ जल वस्त्रादिकनेदृष्टांते ॥ तुज आगम कहेखांतेरे ॥ ध० मिथ्यापुंजकरेत्रणनोधी ॥ उपशमकरोगुणचोधीरे ॥ ध० ॥ ३ ॥ शुद्धने अर्ध विशुद्धत्ते वीजो ॥ अविशुद्ध मततीजोरे ॥ ध० ॥ उपशमथी

पडिउंमनवामे ॥ क्षायोपशमिक पामेरे ॥ ध० ॥ ४ ॥ मिश्र तथा मिथ्यात्वने फर
से ॥ करममतीइम हरसेरे ॥ध० ॥बीजुक्षायोपशमिक कहिये, उपशमपरिपणज
हियेरे ॥ध०॥५॥ मिछापुजकरीत्रिण निरणे ॥ कोई अपूरवकरणेरे ॥ध०॥ शुद्धपुन
तिहांवेदतोज्ञानी, जिनवचनामृतपानीरे ॥ ध० ॥ ६ ॥ उपशमपाम्याविण तुजना
मे ॥ क्षायोपशमिकपामेरे ॥ ध० ॥ यथाप्रवृत्तिकरणत्रयक्रमथी ॥ अतरकरणेतुज
थीरे ॥ ध० ॥ ७ ॥ जेजहेउपशम नवजल तरवा ॥ तसत्रणपुजन करवारे ॥ ध०
आलंबन अलहती ईयल, जिमसगाण नमूकेरे ॥ ध०॥ ८ ॥ मिश्रपुज अणजानी
उपशमे ॥ तिममिथ्याते ढूकेरे ॥ ध० ॥ उपशमसमकितथीतिणिपडिउं ॥ जइ मि
थ्या गुण अडिउंरे ॥ ध० ॥ ए ॥ इम सिद्धांतीनिज मत खोले ॥ कल्पनाप्यपण
बोलेरे ॥ध०॥ ते त्रणपुजनुसक्रमनापु ॥ जिनवयणेमनराखुरे ॥ ध०॥१०॥ मिथ्या
दलिकथीपुज्ज खिची ॥ समकितदृष्टीविचीरे ॥ ध० ॥ सकरमावे समकित मीसे॥
शुभपरिणामे हिंसेरे ॥ ध० ॥ ११ ॥ समकितदृष्टी मीस आकर्षी ॥ समकितमां
हेहर्षीरे ॥ ध० ॥ सकरमावे मिथ्यादृष्टी ॥ मिथ्यामांगुणएष्टीरे ॥ ध० १२ ॥ सम
कित पुंज्ज मिथ्यामांहे ॥ पण मीसे नवि चाहेरे ॥ ध० ॥ मिछाखीण नहीजे जे
हने ॥ ते त्रण पुजछे तेहनेरे ॥ ध० ॥ १३ ॥ मिछाखीण थये दोय पुजी ॥ मी
स खये एक पुजीरे ॥ ध०॥ क्षायक समकित पुज्ज नाशे ॥ जिन आगम इम ना
सेरे ॥ ध० ॥ १४ ॥ सोधित मयण कोद्रवा थाने ॥ समकित पुज्ज मानेरे ॥ ध०॥
तेहने विरुध तैलादिक पाशे ॥ शुद्धपणु तस नासेरे ॥ ध० ॥ १५ ॥ तिमज कु
शास्त्र कुतीर्थिकसगे ॥ तस किरिया मन रगेरे ॥ ध० ॥ मिथ्या, मिश्रित समकित
जाये ॥ ततक्षण मिथ्या थायरे ॥ ध० ॥ १६ ॥ समकितथी पडिकजो पाछु ॥
वली समकितलहे आछुरे ॥ ध० ॥ ते त्रण पुज करे तिहां फेरी ॥ मिछ अपूर
विवेरीरे ॥ ध०॥ १७॥ अनिवृत्तिकरण वर्ते ते रसीउं ॥ समकित पुजे वसीउंरे॥
ध०॥ समकित परेजिहां विरतिनेपावे ॥ आद्यकरण वे आवेरे ॥ ध० ॥ करण अपू
रव कालने आगे ॥ गिरतिलही तिहां जागेरे ॥ ध० ॥ १८ ॥ अतर मुहुरतमां
तस लाघे ॥ निज परिणामे वाधेरे ॥ ध० ॥ उचो नियम नहो तिहां कोई ॥ वृ
द्धि हाणी सम होईरे ॥ ध० ॥ १९ ॥ अनाभोग परिणामनी हाणे ॥ गइ गिरति
नवी जाणेरे ॥ ध० ॥ अरुत करण यको ते प्राणी ॥ फिरी लहे विरति सुहा
णीरे ॥ ध० ॥ २० ॥ आभोग जे विरतिथी खसिया ॥ तिमज मिथ्यागुणे वसिया
रे॥ध०॥अतरमुहूरतमा लहे आवी॥जघन्य यको फिरी पाठीरे ॥ध०॥२१॥उत्कर्ष व

दुकाळें नापी ॥ आद्य करणने सांत्नीरे ॥ ध० ॥ इणीपरे कर्मप्रकृति वृत्तिमांहे ॥ तिहां जोजो उछाहेरे ॥ ध० ॥ २२ ॥ कोइ विराधित समकेत फेरी ॥ ते लहे मिथ्या वेरीरे ॥ ध० ॥ छठीनरक लगें ते जाय ॥ समय मतें कहेवायरे ॥ ध० ॥२३ आउ बंधविना कदाहे ॥ फिरी समकित अवगाहेरे ॥ ध० ॥ वैमानिकविण आउ न बांधे ॥ कर्म मती मत सांधेरे ॥ ध० ॥ २४ ॥ समकित पतित कहे मतवांधे ॥ उत्कृष्टी स्थिती बांधेरे ॥ ध० ॥ निन्न ग्रंथिने आगम न्याने ॥ स्थिति उत्कर्षे न मानेरे ॥ध०॥ २५ ॥ इणीपरें नेद मतांतर जाणे ॥ पण संदेह न आणेरे ॥ ध० निःशंकित तुज वयण आराधे ॥ न्याचे तस गुण वाधेरे ॥ ध० ॥ २६ ॥

अर्थः– हवे त्रीजाढालनो अर्थ कहेछे हवे प्रथम सम्यक्त्व पामतां कोइक जीव सम्यक्त्वनी साथेंज देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुं पामे ॥ उक्तंच शतकवृहच्चूर्णौ ॥ उवसम सम्मद्दिठी, अंतरकरणेठिउ कोइ ॥ देसविरयंपिलनइ, कोइपमत्ताप मत्तनावंपि सासाणोनकिंपिलनेइति. पछी ते ओषधसमान उपशम सम्यक्त्वे करीने कोईक जल वस्त्रने दृष्टांते मिथ्यात्व मोहनीयकर्म सोधीने त्रण प्रकारेकरे ते कहेछे १ शुद्धपुंज २ अर्द्धविशुद्धपुंज ३ अविशुद्धपुंज.

ते त्रण पुजमांथी जेवारे शुद्ध पुंजनो उदय होय तेवारे शुद्धमिथ्यात्व पुजल वेदनथी क्षायोपशम सम्यक्त्व कहियें तेनुं लक्षण कहेछे जेम कोद्रवा धोयाथकां केटलाक मयणारहित थाय अने केटलाक किंगारेक मयणावालारहे अने केटलाक तो मयणासहीतज रहे अथवा पाणीपण केटलुक स्वछ निर्मल थाय अने केटलुक निर्मल तथा मेलुं रहे तथा केटलुकतो मेलुजरहे तेमज वस्त्रपण धोयाथकां कोइक निर्मलज थाय कोइक अर्द्ध मलीन रहे अने कोइकतो आखु मलीनजरहे.

ए पूर्वोक्त दृष्टांते त्रण पुंजपण छे तेमां जेवारे शुद्धपुजनुं उदय होय तेवारे तेना उदयना वशथकी जीवने विशुद्ध अरिहंतना तत्वनी श्रद्धाहोय तेथी ते जीव क्षायोपशमिक सम्यक्त्व पामे अने जेवारे वली अर्द्धविशुद्ध पुंजनो उदय होय तेवारे ते उदयनावशथकी जीवने अर्द्धविशुद्ध अरिहंतनापीतनुं तत्व श्रद्धान होय तेवारे एजीव सम्यक् मिथ्यादृष्टी एटले मिश्रदृष्टीवत कहिये अने जेवारें अशुद्धपुंजनो उदय होय तेवारे जीवने मिथ्यादृष्टीज कहिये तेवारें ते उदयनावशथकी वीतरागना शासनउपरें सर्वथा रुची नज होय.

यथाप्रवृतिकरणादिकरणत्रय अनुक्रमे अंतरकरणे उपशम सम्यक्त्वपामे त्रणपुंज तोजीव सर्वथा नजकरे तेमाटे उपशम सम्यक्त्वथी पमयो अवश्यमि॰ र.

हवे कर्मग्रंथिकनु मतकहेछे कर्मग्रथवाला एममानेछे के अनादि मिथ्यादृष्टीजीव सम्यक्त्वलाभकाले यथाप्रवर्त्यादिक करणत्रय पूर्वक अतरकरणकरे तिहां उपशम सम्यक्त्वपामे तिहात्रणपुज अवश्यकरे तेकारणमाटेज उपशमथी पडयोजीव क्षायोपशमिकसम्यक्त्वपामे अथवा मिश्रपुजेजाय अथवा मिथ्यात्वेजाय एचारगाथानो अर्थछे

हवे पाचमीगाथाथी मामीने नवमीगाथासुधी वली सिद्धांतिकनुमत कहेछे कोईअनादि मिथ्यादृष्टी तथाविधसामग्रीना सद्भावे अपूर्वकरणेकरी त्रणपुजकरे पछी शुद्धपुंजना पुद्गलनेवेदतो जीव उपशम सम्यक्त्व पाम्याविना प्रथमथीज क्षायोपशमिक सम्यक्त्वपामे अने बीजा घणाजीवतो यथाप्रवर्त्यादिक करणत्रय अनुक्रमे अत्तरकरणे उपशम सम्यक्त्वपामे माटे त्रणपुजतो जीव सर्वथानजकरे उपशमथी पडयो अवश्यमिथ्यात्वेज जाय ॥ यदुक्त कल्पभाष्ये ॥ आलवण मलहताजह सट्ठाण न मुंचएइलिया ॥ एव अकयतिपुजो, मिच्छचिय उवसमीएई ॥ १ ॥ जेम गात्रसक्षिसकरेथके इलिकाजे गाम्रते बीजास्थानकरूप आलबनने अणपामति पोतानु स्वस्थाननमूके गात्रसकोची तेजस्थानके रहे तेम उपशम सम्यक्दृष्टी उपशम सम्यक्त्वथीपड्यो त्रणपुजकखानथी माटेमिश्रपुज अने शुद्धपुजलक्षण स्थानातर अणपामतो वलीतेहीज मिथ्यात्वपुजे आवे एसिद्धांतिकनु मत कह्यु॥५॥६॥७॥८॥

हवेपुजत्रयनुसक्रमण कहेछे कल्पभाष्यमा एमकह्युछे के सम्यक्दृष्टीजीव मिथ्यात्वदलिकथकी पुद्गलआकर्षि प्रवर्द्धमान परिणामथको सम्यक्त्वपुजमांहे अथवा मिश्रपुजमाहे सक्रमावे अने मिश्रपुद्गलने सम्यक्दृष्टी सम्यक्त्व पुजमांहे सक्रमावे अने मिथ्यादृष्टी मिथ्यात्वपुंजमा सक्रमावे तथा सम्यक्त्वपुद्गल पण मिथ्यात्वमांहेज सक्रमावे पण मिश्रमांनसक्रमावे यदुक्त मिच्छत्तासकती अविरुद्धा होइ सम्म मीसेसु ॥ मीसाउवादोसु, सम्मामिच्छन उणमीस ॥ १ ॥ जेनो मिथ्यात्वक्षयपाम्युनथी ते सम्यक्दृष्टी नियमा त्रिपुजीजहोय अने मिथ्यात्वक्षीणथयेथके द्विपुजीजहोय अने मिथ्यात्व तथा मिश्रवेक्षीणथयेछते एकपुजीजहोय अन सम्यक्त्वपुज क्षयकरेथके क्षपक एटले त्रणेपुजनोक्षय कखाथका क्षायिक सम्यक्त्ववत होय ॥ यदुक्त कल्पभाष्ये मिच्छत्तेमिश्रखीणे, तीपुजीसम्मदिट्ठिणोनियमा ॥ खीणमित्र मिच्छत्तेडुएगपुजीवखवगोवा ॥ १ ॥ जे सम्यक्त्वपुद्गल ते सोधित मदनकाइवा समानजाणवा तथा जेम सोधेला कोद्रवा विरुधतैलादिके भाव्याथका फरीपाछा मयणालाथाय तेम सम्यक्त्वपुद्गलने विरुधतैलादिक समान कुतीर्थसंसर्ग कुशास्त्रश्रवणादिक मिथ्यात्वेकरी वासीतकखाथका ततक्षण मिथ्यात्विथाय

वलीते सम्यक्त्वथी पडवडियो फरी सम्यक्त्वपामे तेवारे शीरीते पामे तेकहे छे प्रथम पडवडिया केटलाहोय अने ते केइगतिमांजाजे ते कहेछे.

अन्नविय चउछणंते, पंचमए दंसणाउ परिवडिया ॥ सेसाउतिद्धिमाइ, अछम णंतंमि तेवीसं ॥ १ ॥ मतांतरेप्येवं ॥ अन्नविय चउछणंते, पंचमिसमाउ परिवडी तिद्धा ॥ सेसाअछमणंते, पज्ञाणूजवणाइ वावीस ॥ २ ॥ चत्तारिय वाराउ, चउदस पुव्वीकरेइआहारं ॥ संसारंमिवसंतो, एगजवे दुन्नि वाराउ ॥ ३ ॥ तिछयररिद्धिदंस ण, सुहुमपयछावगाहणाहेउं ॥ संसयवुछेयछं, गमणंजिणपायमूलंमि ॥ ४ ॥ स मउजहन्नमंतर, उक्कोसेणंहवंति छम्मासा ॥ आहारसरीराणं, उक्कोसेणं नवसह स्सा॥५॥ जंनरए असुराई, पुढवाइसु सयल विगल तिरिएसु ॥ वंतर जोइविमाणे, सुपत्तेयइमेअसंखिज्जा ॥ ६ ॥ सियसंखसियमसंखा. मणुएसु अणंतया वणेनवरं ॥ परिवडिअगया आहा, रग्गविजप्पंति इह समए ॥ ७ ॥

जेवारेपण सम्यक्त्वथी पड्यो फरीपाछुं सम्यक्त्वपामे तेवारें पण अपूर्वकरणेकरी पुंजत्रणकरीने अनिवृत्तिकरणेकरी सम्यक्त्व पुंजेजाय एटले क्षायोपशम सम्यक्त्व पामे इहां कोई पूछेजे अपूर्वकरण तो पूर्वे केवारेपण एवो परिणाम न आव्योहोय अने प्रथम नवोआवे तेने कहियें करणंपरिणामविशेष इतिवचनात् अने अ पूर्वकरणतो ग्रंथीनेदेआव्योहतो तेहीज वली परिणामे फरी आव्यो तेवारे अपू र्वपणु केमथयुं ? तेने उत्तरकहेछे अपूर्वमिवापूर्वस्तोक वारमेवलाजादितिवृद्धा· अपूर्व नीपरें अपूर्व थोमावारज पाम्या माटे. फरीअपूर्वकहियें जेम कोइक पदार्थ पुत्र ध नरत्नादिक पूर्वेथोकुंपाम्याहोय ते फरीपामे तोपण तेने अपूर्व करीजमाने तेम अ पूर्वकरणरूप परिणामपण जीवने थोमीवारज आव्योछे तेमाटे तेपण अपूर्वज कहियें ए सिद्धांतनुं मतजाणवुं.

हवे सम्यक्त्वपाम्यानीपरे जेवारे कोइजीव देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुपा मे तेवारेपण यथाप्रवृत्तिकरण अने अपूर्वकरण ए वे करणकरे पण अनिवृत्तिकर ण करेनही अपूर्वकरणनो अंतरमुहूर्त्तरूप काल समाप्तिने अनंतर समयेज देश विरति सर्वविरति पडिवज्या, पछी अनंतर अंतरमुहूर्त्तलगे ते जीवने अवश्य प्रव र्द्धमान परिणामहोय पछी अंतरमुहूर्त्त उपरांत नियमनही कोइप्रवर्द्धमान परिणा मियकोजरहे अने कोइ स्वजावस्यजरहे तथा कोइ हीनपरिणामिपणथाय तेवली अनाजोगे कोइक परिणामनी हाणीयकी देशविरति अथवा सर्वविरति थकी पडया ते अकृतकरणा एवतांजनंतेके० यथाप्रवृत्तिकरण अने अपूर्वकरण कस्यावि

नाज वली देशविरति अथवा सर्वविरतिपणुपामे अने जेजीव अनोगेकरी पड्या अने अनोगेकरीनेज मिथ्यात्वेगया ते जघन्यथी अंतरमुहूर्त्त अने उत्कर्षथी घणे काले यथोक्त करणपूर्वकज एटले पूर्वोक्त बन्नेकरणोकरीनेज देशविरति अथवा सर्वविरतिपणु वली फरीथीपामे एवु कर्मप्रकृतिनी वृत्तिमां कह्युछे ए दशमीगाथाथी मांमीने बावीसमी गाथासुधी तेरगाथानु अर्थजेलो कह्यु ॥ २२ ॥

हवे सिद्धांतनुमत अने कर्मग्रंथनुमत जिन्नजिन्नकहेछे तेमां प्रथम सिद्धांतिक नामतेतो विराधित सम्यक्त्वी सम्यक्त्वथी पड्यो फरी सम्यक्त्व पाम्योथकोपण कोइक छठीनरकसुधीजाय अने कर्मग्रंथिकनामतेंतो छते सम्यक्त्वे वेमानिकविना वीजाछेकाणानुं आयुबांधेजनही यडुक्त सम्मत्तमिछलद्धे, विमाणवज्जं न बंधए आउ ॥ अहवन्न समत्त जहो, अहवन बधाउ उपुव्विं ॥ १ ॥ वली कर्मग्रंथिकनेमतेंतो सम्यक्त्वपामीने पड्यो तेजीव उत्कृष्टस्थितिनी कर्मप्रकृतिबांधे तथा सिद्धांतिक मतेतो जिन्नग्रंथीवालाने उत्कृष्टीस्थित्तिनो बंधजनहोय

यदुक्त सैद्धांतिक मतेहि विराधित सम्यक्त्वे गृहीतेनापि सम्यक्त्वेन षष्ठ पृथिवीयावत्कोप्युत्पद्यते अने कार्मग्रंथीकमतेतो वैमानिकेन्योन्यत्रनोत्पद्यते तेनगृहीतेनेत्युक्त प्रवचनसारोद्धारवृत्तौ अवाप्तसम्यक्त्वश्रतत्परित्यागे ॥ कार्मग्रंथिकमतेतो उत्कृष्टस्थिती कर्मप्रकृतीर्बध्नाति सिद्धांतिकाजिप्रायतस्तुजिन्नग्रंथेरुत्कृष्ट स्थितिबंध एवनस्यादित्यादिन्नेद मतांतरे जाणे पण हठताणेनही जे जेम वीतरागनी आज्ञाहोय तेम प्रमाणकरे पण संवेदनआणे तेजीव तादृशी आज्ञानु आराधक जाणवोए त्रेवीसथीमांमी छवीसमीगाथासुधी त्रीजाढालनो अर्थपूरोथयो

॥ ढालचोथो विनयवहोसुखकार अथवा साजिजनइ जोगीरहो एदेशीने ॥

॥ दर्शन मोह विनाशथीजी ॥ जेनिर्मल गुणगण ॥ ते समकित उवे कह्युजी ॥ ते नविपण हित आणरे ॥ जिन जी तुज आणासुरग ॥ मुज नगमे मिथ्यासगरे॥ जि० ॥ १ ॥ ए आकणी ॥ मिथ्या दरसण मोहनीजी ॥ उपशमि उपशमजाण ॥ धुरग्रंथी जेदे कह्युजी ॥ उपशमश्रेणी प्रमाणरे ॥ जि० ॥ २ ॥ नाश उदीरण मिछनोजी ॥ अनुदीरण समठाम ॥ क्षयउपशमथी उपजेजी ॥ क्षयोपशमिका नामरे ॥ जि० ॥३॥ त्रिविधि मोह विनासथीजी ॥ त्रीजुक्षायिकनाम ॥ क्षपकश्रेणी चढतांहुएजी ॥ जेहथी शिवपुर ठामरे ॥ जि० ॥ ४ ॥ विपाक प्रदेशें वेदवुजी ॥ द्विविध उदय विष्कन ॥ उपशमतु तेहने कहेजी ॥ आगममां थिरथनरे ॥ जि० ॥ ५॥ नाश विपाकोदय थकी जी ॥ वेदन तेहनुरे नाम ॥ उपशमि ते नवि सनवेजी॥

क्षायोपशमिक गामरे ॥ जि० ॥ ६ ॥ मिछा पुंजत्र वेदवाजी ॥ शुद्ध अशुद्ध तिहां दोय ॥ विपाक प्रदेशोदय थकीजी ॥ अनुक्रमे समजी जोयरे ॥ जि० ॥ ७ ॥ अण चउ डुग मिछा तणाजी ॥ पुंज खपावीरे होय ॥ शुद्धपुंज खपतां तिहांजी ॥ अंतिम पुद्गल होयरे ॥ जि० ॥ ८ ॥ तस वेदन तेहने कह्युंजी ॥ वेदक चोथुंरे नाम ॥ उपशम वमतां पांचमुंजी ॥ सासादन गुण धामरे ॥ जि० ॥ ९ ॥ अंतरमुहूरत एकनीजी ॥ उपशम स्थिति उवेष ॥ उत्कर्ष षट आवली जी ॥ जघन्य समय होय शेषरे ॥ जि० ॥ १० ॥ अशुद्धपुंज जावा तणीजी॥ इछायें तिहां तास॥अण कसाय उदयें हुयेजी ॥ जेहथी उपशम नाशरे ॥ जि० ॥ ११ ॥ उपशमथी पमतांपकाजी ॥ न गयो मिछारे जाव ॥ तावत सासादन कह्युंजी ॥ उपशम स्वाद सद्भावरे ॥ जि० ॥ १२ ॥ अंतरमुहूरत कालनीजी ॥ उपशम स्थिति गुणखाण ॥ सासादन षट आवलीजी ॥ वेदक समय प्रमाणरे ॥ जि० ॥ १३ ॥ स्थिति सागर तेत्रीसनीजी ॥ साधिक क्षायक जाण ॥ वमणी स्थिति एहथी कहीजी ॥ क्षायोपशमिक गणरे ॥ जि० ॥ १४ ॥ उपशम सासादन कह्युंजी ॥ आजव वेलारे पंच ॥ वेदक एक वेला हुयेजी ॥ तिमहिज क्षायक संचरे ॥जि०॥१५॥ वार असंख उत्कर्षथीजी ॥ क्षायोपशमिक होय ॥ हवे तस गुण गणा कहुंजी ॥ सांजलजो सहु कोयरे ॥ जि० १६॥ उपशम अडगुण गणमांजी, अविरत गुण पदरेख ॥ क्षाइक गुण गणे सवेजी ॥ आदिम त्रणविणशेषरे ॥ जि० ॥ १७ ॥ अविरति गुणगणा थकीजी ॥ जावत सप्तम गण ॥ एक वेदक वीजु इहांजी ॥ क्षायोपशमिक जाणरे ॥ जि० ॥ १८ ॥ सासादन सासादनेजी ॥ नापे अंग उवंग ॥ न्याये शिवसुख ते लहेजी ॥ जशतुज आण अन्नंगरे ॥ जि० ॥ १९ ॥

अर्थः— हवे चोथा ढालनो अर्थकहेले तेमां प्रथम बारगाथालगें उपशमादिक पांच सम्यक्त्वनुं स्वरूपकहेछे दर्शनमोहनीयना विनाशथकी जे आत्माने निर्मल गुणस्थानक उपजे ते निर्मल सम्यक्त्व कहियें ते उपशमादिक पाचप्रकारनुंछे.

हवे उपशमसम्यक्त्व ते कोने कहियें ते उलखावेछे उदीरणामिथ्यात्वनो क्षयथयाथी अने अनुदीरणा मिथ्यात्वनो उपशमथयाथी एटले विपाकप्रदेश वेदनरूप द्विविधे उदयने विष्कंजपणे करीने नीपनुं ते उपशम सम्यक्त्व कहीयें.

उदीर्णस्य मिथ्यात्वस्य क्षयेसत्यनुदीर्णस्य उपशमेविपाकप्रदेशवेदनरूपस्य द्विविधस्याप्युदयस्य विष्कंजणेन निर्वृत्तिं, उपशमिकं तदोपशमिकं सम्यक्त्वं द्वि

धा ग्रंथिनेदसनव उपशमश्रेणि संनवच ग्रंथिनेदसनवप्रसिद्ध उपशमश्रेणिसंनव सम्यक्त्व श्रीजिननद्रगणिप्रणितगाथाभिरेव विनाव्यते.

उपशमसम्यक्त्व वे प्रकारनुंछे एकग्रथीनेदेउपनु बीजुंउपशमश्रेणीथी उपनुं तेमां ग्रंथीनेदनुं सरूपतो बीजाढालमा कह्युंछे अने प्रसिद्धपणछे अने उपशमश्रेणीथी उपनुजे सम्यक्त्व तेनु सरूपतो श्रीजिननद्रगणि कृत गाथायेंज नाविये छे

यडुक्तं उवसामग सेढीए, पड्वउ अप्पमत्तविरउत्ति ॥ पज्जवसाणे सोवा होइ पमत्तोअविरउवा ॥ १ ॥ अन्नेनणति अविरय, देसपमत्तापमत्तविरयाए ॥ अन्नय रो पडिवज्जइ, दसण समयंमि अनियट्टी ॥ २ ॥ सजलणाईण समो ॥ छुत्तो स जो अणोदउजेव ॥ तेपुव्वचिय समिया ॥ नणुसम्मत्ताइ लानमि ॥ ३ ॥ आचार्या आसिखउवसमोत्ति, समो हुणा नणइ कोविसेसोत्ति, नणुखीणमि उइन्ने ॥ सेसोवसमे खउवसमो ॥४॥ सोचेव तणूवसमो ॥ उइए खीणमि सेसए समिए॥सु हुमोदय यामीसे ॥ नतूव समिए विसेसोय ॥ ५ ॥ वेएइ सत कम्म ॥ खउवसम्मे सु नाणुनावसो ॥ उवसत कसाउ पुण, वे एइन सतकम्मपि ॥ ६ ॥ सजोअणा इयाण ॥ नणूदउ सजयस्स पसिसिद्धो ॥ सच्चमिह् सोणुनाव ॥ पडुच्च न पएस कम्मतु ॥७॥ नणियं च सुए जीवो ॥ वेएइ नवाणुनाव कम्मतु ॥ ज पुण पएस कम्म ॥ नियमा वेएइ तं सव्व ॥ ८ ॥ नाणुदिय निज्जरए ॥ नासत मुदेइ ज त कुवसम्म ॥ सव्वपएसकम्म ॥ वेएउ मुच्चए सव्वो ॥ ९ ॥ किहदसणाइ घाउ ॥ न होइ सजोअणाइ वेयय ॥ महाणु नावयाए ॥ जहाणु नावपि विकहवि॥१०॥ निच्च मुइन्नपि जहा ॥ सयल चक नाणिणो तदावरण ॥ नविघाय मइयाए ॥ पएस कम्म तहा तेयं ॥ ११ ॥

हवे क्षायोपशमिकनु सरूप कहेछे उदीरण मिथ्यात्वमोहनीयने विपाकोदयेंक रीने वेदितपणामाटे क्षयकरेथके अने अनुदीरण मिथ्यात्व मोहनीयने उपशमावे थके ए क्षय अने उपशमरूप ते क्षायोपशम सम्यक्त्व कहियें इहा पूर्वपक्षकरीने चर्चक पूछेछे के कहोजी क्षायोपशमिक अने उपशमिक सम्यक्त्वनो शो विशेषप णछे केमके उदीरण मिथ्यात्वनोक्षय अने अनुदीरण मिथ्यात्वनो उपशम ए तो वेहुनेविषे समानछे तेमछेता वेहुना जूदाजूदा नाम केम कहोछे एकनाम केम के हेतानथी एम पूछनारने उत्तर कहेछे सानलो क्षायोपशम सम्यक्त्वनेविषे शुद्धमि थ्यात्वपुजना पुद्गल विपाकोदयें वेदीयें छे अने अशुद्धमिथ्यात्व पुजना पुद्गल प्रदे

शोदय वेदीयेंछे अने उपशमसम्यक्त्वनेविशेतो वली सर्वथा कांइंपण नथीवेदता एटलुं विशेषपणुं उपशम अने क्षायोपशमनुं जाणवुं.

यडुक्तं – आसि खउवसमोसिंसमोहुणा नणइ कोविसेसोसिं; तणु खीणंमि उइन्ने ॥ सेसोवसमे खउवसमो ॥१॥ सोचेवनणूवसमो ॥ उइए खीणंमि सेसएसमिए॥सुहुमोदय यामीसे ॥ नतूव समिए विसेसोयं ॥२॥ वेएइ संतकम्मं खउवसम्मे सु नाणु नावसो ॥ उवसंत कसाउ पुण ॥ वेएइन संतकम्मंपि ॥३॥ इत्याद्युक्त मस्ति.

हवे क्षायक सम्यक्त्वनुं स्वरुपकहेछे सम्यक्त्व मिश्र अने मिथ्यात्वपुंजरुप त्रिविध दर्शनमोहनीयनुं निःशेष क्षयलक्षण क्षायक सम्यक्त्वकहिये ते क्षायकसम्यक्त्व क्षपकश्रेणीपडिवजतानेहोय यडुक्तं॥ खीणे दंसण मोहे, तिविहंमि विजव निआण नूयंमि ॥ तिप्पच्चवायमतुलं, सम्मत्तं खाइयं होइ ॥ १ ॥ ते क्षायकसम्यक्त्व क्षपकश्रेणीने विषे आवीरीतेहोय ते कहेछे.

यडुक्तं॥ पढम कसाये समयं, खवेइ अंतो मुहुत्त मित्तेणं ॥ तत्तुच्चिय मिछत्तं, तउआ मीसं तउसारं ॥ १ ॥ बद्धाउ पडिवन्नो, पढम कसाय रकए जइ मरिज्जा ॥ तो मिछत्तोदयउ, विणज्ज मुज्जो न खीणंमि ॥ २ ॥ तमिम उज्जाइ दिवं, तप्परिणामो असत्तए खीणे ॥ उवरय परिणामो पुण, पछा नाणा मई गइउ ॥ ३ ॥ खीणंमि दंसणतिए, किंहोइ तउत्ति दंसणाईउ ॥ नन्नइ सम्मदिठी, समत्त खए कउ सम्मं ॥ ४ ॥ निद्दलिय मयण कुद्दव, रुवं मिछत्त मेव सम्मत्तं ॥ खीणं न उ जोनावो, सद्दहणा लरकणो तस्स ॥ ५ ॥ सो तस्स विसुद्धयरो, जायइ सम्मत्त पुग्गल रकयउ ॥ दिठिव्व सण्ह सुद्ध, प्प पमल विगमे मणूसस्स ॥ ६ ॥ जह सुद्ध जलाणुगयं, दहुं सुद्धं जलरकए सुतरं ॥ सम्मत्त सुद्ध पुग्गल, परिरकए दंसणं एवं ॥ ७ ॥ तमिअ तइय चउछे, नवमि सिज्झंति खइय सम्मत्ते ॥ सुर निरय जुगलि सुगई, इमंतुजिणकालिय नराणं॥८॥ पडिवत्तीए अविरय, देस पमत्तापमत्तविरयाणं॥ अन्नयरो पडिवज्जइ, सुक्कज्झाणेव गयचित्तो ॥९॥ इति क्षायक सम्यक्त्व स्वरुप.

हवे वेदकसम्यक्त्वनुं स्वरुपकहेछे वेदकसम्यक्त्वते क्षपकश्रेणी पडिवर्जनारने होय चारअनंतानुबंधीया कषाय तथा मिथ्यात्व अने मिश्र ए बे पुंज खपावेयके अने सम्यक्त्वपुज खपावतोहोय एटले सम्यक्त्वपुंजना छेलापुग्गल खपाववाने उजमालथयो ते सम्यक्त्वनापुंजनुं वेदनकाल तेना चरमसमयनेविषे चरमपुग्गलनुं वेदवुं तेनुंनाम वेदक सम्यक्त्व कहिये; जेम सूक्ष्मलोजना खंम वेदनथी सूक्ष्मसपराय कहिये तेम जाणवुं. यडुक्तं सम्मत्त चरम पुग्गल, अणुनवणावेयगंविति इति वचनात्

हवे सास्वादन सम्यक्त्वनु स्वरूपकहेछे पूर्वोक्त परमनिधान जाण समानजे उपशम सम्यक्त्व तेनो अंतरमूहूर्तजे काल ते कालमाथी उत्कृष्टथी शेष छ आवलिका प्रमाण काल रह्यो होय अने जघन्यथी एकसमय अविशेषहोय तेवारें अशुद्धपुंजे जावानी इच्छायें कोइकने महा विशेषिकोहान कल्प अनतानुबंधियानो उदयहोय ते अनतानुबंधीने उदये सम्यक्त्व वमतो गुलवमननीपरे अथवा मालपतननीपरे सम्यक्त्वने आस्वादे यातेथके सास्वादन सम्यक्त्वहोय एटले उपशमसम्यक्त्ववत उपशमथी पडतोथको जिहांसुधी हजी मिथ्यात्वगुणठाणो नथी पाम्यो तिहांलगे सास्वादन सम्यक्त्व कहिये तदुक्त उवसम सम्मत्ताउ, चयउ मिछं अपाय माणस्स॥सासायण सम्मत्त, तयत्तरालं मिछा वलिया ॥१॥ एरीते चोथाढालनी चारगाथासुधी पाच सम्यक्त्वनुं स्वरूपकह्यु हवे वली काइकतेनोजविशेष कहेछे

सम्यक्त्व ते सुं कहिये जे मिथ्यात्व विकारनु अणउपजावनारो एहवो कोइ अतिशुद्ध अध्यवसायविशेष आत्मानु परिणमन तेनेज सम्यक्त्व कहिये तेनाजे द क्षायक वेदक उपशमिक सास्वादन क्षायोपशमिक भेदव्याख्यान गाथायेकहेछे.

खीणे दसण मोहे, तिविहमि विखाइय जवेसम्म ॥वेयग मिह् सवोडय, चरमि लप पुग्गल ग्गास ॥ १ ॥ उवसम सेढि गयस्सउ, होई उवसामियतु सम्मत्त ॥ जोवा अकयतिपुंजो, अ खविय मिछो लहइसम्म ॥२ ॥ उवसम सम्मत्ताउ, चयउमिछ अपाव माणस्स ॥ सासायण सम्मत्त, तय तराल मिछा वलिया ॥ ३ ॥ मिछत्तज मुइन्न, तंखीण अणुइय च उवसतं ॥ मीसीभावपरिणय, वेइज्ज तंखउव सम ॥ ४ ॥ इत्यादि चारगाथाउनो अर्थ कह्यो

हवे ए पांच सम्यक्त्वनी स्थिति कालमानादिक कहेछे तेमा उपशमसम्यक्त्वनो अंतरमुहूर्त स्थितिकालछे सास्वादननु उत्कृष्टो छ आवलिकानु अथवा जघन्यथी एक समयकालछे वेदकनो एक समय क्षायकसम्यक्त्वना साधिक तेत्रीस सागरोपमकाल क्षायोपशम सम्यक्त्वनु साधिक छाशठसागरोपमनु काल जाणवु

एक सास्वादन सम्यक्त्व अने बीजु उपशमसम्यक्त्व ए बे उत्कृष्टा पांचवार आवे तथा वेदक अने क्षायिक ए बे सम्यक्त्व एकवारज आवे अने क्षायोपशम सम्यक्त्व असंख्यातिवार आवे यदुक्तं अंतमुहुत्तो वसमो, छावलि सासाण वेयगो समउ ॥ साहिय तित्ती सायर, खइउ दुगुणो खउवसमो ॥ १ ॥ उक्कोस सासायण उवसमिया हुंति पचवाराउ ॥ वेयग खइगाइक्कसि, असंखवारा खउवसमो २

हवे सम्यक्त्व काइ विशेषना कहेछे सामायक चार प्रकारनुछे सम्यक्त्व सा

मायक श्रुतसामायक देशविरतिसामायक अने सर्वविरतिसामायक तेमां जे सम्य क्त्ताचोजावते सम्यक्त्वसामायक श्रुतसिद्धांतनुं जणवुंते श्रुतसामायिक देशथकी विरमवुं ते देशविरतिसामायक सर्वथकी विरमवुं ते सर्वविरतिसामायक एरीते चार सामायक छे तेमां सम्यक्त्वसामायक श्रुतसामायक देशविरति सामायक ए त्रणने उत्कृष्ट आकर्ष एटले जे प्रथमपणे मूक्यानुं ग्रहण ते एकजवमां सहस्रपृ थक्त्व एटले वेहजारथी मांमीने नवहजारसुधी होय अने सर्वविरतिने शतपृथ क्त्व एटले वशोथी मांमीने नवसोसुधी होय ए उत्कृष्टथी कह्यु, ने जघन्यथी एक ज आकर्ष सर्वने होय ए एकजवआश्रयी कह्यु यडुक्तं तिन्हं सहस पुहुत्तं, सय प्पुहुत्तंच होइविरईए ॥ एगजवे आगरिसा, एवइया हुंति नायवा ॥ १ ॥

हवे नानाजव आश्री आकर्ष कहेछेः—ए उपरना त्रणसामायकने सर्वजवनेविषे उत्कृष्टा असंख्याता सहस्र पृथक्त्व आकर्ष थाय अने सर्व विरति सामायकने सर्व जवमां सहस्र पृथक्त्व आकर्ष होय ए सर्वजव आश्री कह्यु. यडुक्तं तिन्हं सहस मसंखा, सहस पहुत्तंच होइ विरईए॥ नाणजवे आगरिसा, एवइयाहुंति नायवा ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

हवे ए पांचसम्यक्त्वने गुणगणाकहेछे वीजे सास्वादन गुणगणे सास्वादन स म्यक्त्वहोय अने चोथाथीमांमीने अग्यारमां गुणगणालगे आठगुणगणा उप शम सम्यक्त्वीने होय अने चोथाथीमांमी चउदमांलगें इग्यारगुणगणा क्षायक सम्यक्त्वनेहोय अने चोथाथीमांमी सातमांगुणगणालगे चारगुणगणा वेदक अ ने क्षायोपशमसम्यक्त्वनेहोय. यडुक्तं वीयगुणे सासाणो, तुरियाइसु अहिगार चउ चउसु ॥ उवसमग खइग वेयग, खाउवसमा कमाहुंति ॥ १ ॥

हवे चउदगुणगणानोअर्थ लेशमात्र गाथायेंज कहीदेखाडेछे गाहा ॥ जीवाइ पयछेसु, जिणोव इछेसु जा असदहणा ॥ सदहणावि य मिन्ना, विवरीय परूवणा जाय ॥ १ ॥ संसय करणं जंपिअ, जंतेसु अणायरो पयछेसु, त पंचविहं मिछं, त दिछिमिछविछीअ ॥२॥ उवसम अद्धाइ विउ, मिन्न पमत्तो तमेयगं तुमणो ॥ सम्मं, आसायंतो, सासायण सो मुणेयवो ॥ ३ ॥ जह गुम दहीणिवि समा,इ जाव सहि याणि हुंति मीसाणि ॥ ञ्जुंजं तस्सतहोजय, दिछीउमीस दिछीउ ॥ ४ ॥ तिविहेविहु सम्मत्ते, थेवावि नविरइजस्स कम्मवसा ; सो अविरउ त्तिजन्नइ देसे पुण देसविरई उ ॥ ५ ॥ विगहा कसाय निदा, सदाइरउ जवे पमत्तुत्ति ॥ पंच समिउत्ति गुत्तो, अ पमत्त जई मुणेयवो ॥ ६ ॥ अप्पुवं अप्पुवं, जहुत्तरं जोकरेइ विकंमं ॥ रसकंमं म

ग्घाय, सोहोइ अप्पुव्व करणुत्ति ॥ ७ ॥ विनिवट्टति विसुद्धि, सम्मग दठ्ठवि जमि अन्नन्न ॥ तत्तोनियट्टिगाण, विवरीय मर्डवि अनियट्टी ॥ ८ ॥ थूलाण लोह समा ण वेअगो बायरो मुणेयव्वो ॥ सुहुमाण होइसुहुमो, उवसतेहि तु उवसतो॥९॥ खीणमि मोहणिज्जे, खीण कसाउ सजोगि जोगित्ति ॥ होइ पवत्तो अतउ,अपम त्तो होइहु अजोगी ॥ १० ॥ अविरय सासण मिच्छा, परभविया नउण सेस गु णगणा ॥ मिच्छस्स तिन्नि भगा, आवलियं होइ सासाण ॥ ११ ॥ तित्तीसयर च उहं, पुव्वाण कोडि ऊण तेरसम ॥ लहु पचक्खर चरिम, अतमुहू सेसगुण गणा ॥ १२ ॥ ए चोथाढालनो १७–१८–१९–ए त्रण गाथानो अर्थ कह्यो

॥ ढाल पाचमो शातिसुधारस कुडमा तुरमे मुनिवर एदेशी ॥

धन धन शासन ताहरुं ॥ माहरु जिहांमन लीनरे ॥ क्षण पण तसविण न विरहे ॥ जिमजल भर विण मीनरे ॥ धन० ॥ १ ॥ देशविरति दरशणथकी ॥ प लिय, पुहुत्तमा जाणिरे ॥ अनुक्रमे चरणश्रेणीविहु ॥ सख्यसायर गुण खाणिरे ॥ धन० ॥ २ ॥ तेहिज भवेहुए तेहने ॥ जेहनेसत्तगखीणरे ॥ चउतियभव उत्कर्ष थी ॥ पुव्वबद्धाउने पीणरे ॥ धन० ॥ ३ ॥ बद्धायु सुर नरगनु ॥ तेहने तियभव तंतरे ॥ आउ असख्यनर तिरितणु ॥ तसपण चउभवे अंतरे ॥ धन० ॥ ४ ॥ स मकित स्थितिहोए ओगथी ॥ अतरमूहूरत एकरे ॥ साहिय खउवसमासिरी ॥ सायर गसठि छेकरे ॥ धन० ॥ ५ ॥ इग अथवा बहु आतरी ॥ दरसणनो उप योगरे ॥ जघन्य उत्कृष्ट थकी कह्यो ॥ अतरमूहूरत भोगरे ॥ धन० ॥ ६ ॥ दरस णलब्धि श्रुत सुरलता ॥ क्षयोपशमादिक रुपरे ॥ अतरमूहुरत मानती ॥ जघ न्यथी कहेजिनभूपरे ॥ धन० ॥ ७ ॥ गसठ सायर सविमली ॥ नरभव हिय उ तकृष्टरे ॥ तेहथी वर्ध जो नविहिए ॥ समकित रयणने ष्टष्टरे ॥ धन० ॥ ८ ॥ ते निश्चय शिवपदलहे ॥ ए एकजीवने योगरे ॥ जीवनानाश्रित सर्वदा ॥ दरस णनो उपयोगरे ॥ धन० ॥ ९ ॥ अतरमूहुरत एकनु ॥ जघन्य अतरमन आणरे॥ अर्द्ध पुग्गल परावर्त्तनु ॥ तस उत्कृष्ट परिमाणरे ॥ धन० ॥ १० ॥ जीव नानाश्रि त भवि होए ॥ समकित अतर लेशरे ॥ तत्र आवश्यक वृत्तिमा ॥ ए अधिकार विशेषरे ॥ धन० ॥ ११ ॥ दशविध सहज उपदेशथी ॥ उपशम प्रमुख जे प चरे ॥ अहव निसग्ग रुइ भेदथी ॥ दशविध तस परपचरे ॥ धन० ॥ १२ ॥ नि सग्गुवएस आणारुइ ॥ सुत्त बीयरुइ अभिगमरे ॥ अभिगमा भोग किरियारुई ॥ सखेव धम्म रुइ नामरे ॥ धन० ॥ १३ ॥ गुरुउपदेशविण सहेजथी ॥ जिनवय

ए परतीतरे ॥ जेहने तेहने जाणजो ॥ प्रथम निसर्ग रुचि रीतरे ॥ धन०॥१४॥ तेनवि गुरुउपदेशथी ॥ सद्दहे जे जण आपरे ॥ ते उपदेशरुचि नर कह्यो ॥ इम तुज आगम थापरे ॥ धन० ॥ १५ ॥ कारण प्रमुख अजाणतो ॥ मुज जिन आणज एमरे ॥ तउय आणारुचि तुंकहे ॥ माप तूपादिक जेमरे ॥ धन० ॥ १६ ॥ सूत्र जणतो समकितलहे ॥ प्रसन्न प्रसन्न परिणामरे ॥ गोविंद वाचकनीपरे ॥ सु त्तरुई तसनामरे ॥ धन० ॥ १७ ॥ देशरुई खउवसमथी ॥ सव्वरुई विस्तारिरे ॥ उदकमां तेलबिंदुपरे ॥ बीयरुइ जवतारिरे ॥ धन० ॥ १८ ॥ अजिगमरुई सुअना णने ॥ अरथथकी अवगाहेरे ॥ अंगपइन्न प्रमुखजे ॥ शास्त्र सवेनिरवाहेरे ॥ धन०॥ ॥ १९ ॥ द्रव्यना जाव जाण्याजिणे ॥ सर्व प्रमाणे असेसरे ॥ सर्वनयेतिम तसक ह्यु ॥ विछार रुई अकलेशरे ॥ धन० ॥ २० ॥ दंशणनाण चारित्त वली ॥ तिमतिन यो त्तमकामरे ॥ सुमति गुपतिकिरियारुचे ॥ तेकिरिया रुइनामरे ॥ धन० ॥ २१ ॥ आगम कोविद नवीहुए ॥ कुमय कुदिछीवि जुत्तरे ॥ संखेवरुई तेहने कह्युं ॥ जि मचिलातिय पुत्तरे ॥ धन० ॥ २२ ॥ धम्म अधम्म प्रमुख दव्व ॥ चरण सुय ध म्मना जेदरे ॥ जेजिन जाषित सद्दहे ॥ तेधम्मरुई निरवेदरे ॥ धन० ॥ २३ ॥ एदशविध दरशण कह्यु, उत्तराध्ययनमजाररे ॥ अध्ययने ते अडवीतमें ॥ न्याय सागर सुखकाररे ॥ धन० ॥ २४ ॥

अर्थ ॥ हवे पांचमा ढालनो अर्थ कहेछे जेटली कर्मस्थिति छते पूर्वे सम्यक्त्वपणुं पाम्योछे तेमांहेथी पल्योपम पृथक्त्व लक्षण स्थितिनाखंम ख पावेथके श्रावकपणुं देशविरतिपणुंपामे तेवारपछी ते कर्मस्थितिमांथीपण संख्यात सागरोपम कर्मस्थितिखंम खपावेथके चारित्र उदय आवे तेवारपछी पण वली संख्यात सागरोपम स्थितिखंम खपावेथके उपशमश्रेणी पडिवजे वली तेवारपछी पण संख्यातसागरोपम खपावेथके क्षपकश्रेणी थाय. तडक्तं सम्मत्तंमि उलध्दे, प लिय पुहत्तेण सावगो हुज्जा ॥ चरणोव सम खयाणं, सायर संखंतराहुंति॥ १ ॥

हवे कांइक लेशमात्र श्रेणीस्वरुपकहेछे पूर्वनोजाण पूर्वगतश्रुतनो धरनार अ प्रमत्तगुणगुंधणी आद्यनात्रण संघयणमाहेला संघयणनोधणी तेशुक्लध्याननाचारपा याछे तेनांनाम कहेछे पृथक्त्ववितर्कविचार एकत्व वितर्क विचार सूक्ष्मक्रियानिवृत्ति स मुछिन्नक्रियानिवृत्ति तेमाहेला पृथक्त्ववितर्कविचार नामेप्रथमपायो ध्यातोउपशमश्रे णी पडिवजे. यडक्तं पूर्वज्ञः शुध्दिमान् युक्तोह्याद्यैः संहननैस्त्रिभिः ॥संध्यायन्नाद्य शुक्लांशंस्वाश्रेणिं श्रयतिक्रमात् ॥१॥ अन्यनेमतेंतो अविरतादिकपण श्रेणी आरंजकले.

वली तेवारपछी अप्रमत्तातगुणठाणे अनंतानुबंधीनी चोकडी अने त्रणमोहनीय ए सातप्रकृति उपशमावी एकसंज्वलननु लोनवर्जि बाकी मोहनीयकर्मनी जे वीसप्रकृतिरही ते आठमे अपूर्वकरण तथा नवमे अनिवृत्तिबादर गुणठाणे उपशमावे पछी सूक्ष्मसंपरायने विषे लोननु अणुअणुकरीने उपशांतमोहनेविषे तेहिज लोनने उपशमावे तडुक्त अपूर्वादि द्वयेकैक, गुणेषु शमक क्रमात् ॥ करोति विंशतें शांतिं लोनाणुत्वच तत्रम ॥ १ ॥

निहां प्रथम संघयणवालोतो उपशमश्रेणी अपरिसमाप्ते एटले श्रेणीपूरीकया विना मरेतो पंचानुत्तरविमानेजाय अने जो पुष्ट आउपावालोहोय तेवली उपशांतमोहजगे मोहनीय उपशमावे तिहां उपशमसम्यक्त्वहोय अने उपशमनाव चारित्रहोय ए बे उपशमनावना होय ए उपशमिक अवश्यपडे

तडुक्त शांतदृग् वृत्तमोहत्वादत्रौपशमिकाभिधे ॥ स्याता सम्यक्त्वचारित्रे नावभोपशमात्मक ॥ १ ॥ पततिचाय मवश्य ॥ यत्त ॥ वृत्तमोहोदय प्राप्योपशमीच्यवते तत ॥ अथ कृतमलतोय पुनर्मालिन्यमश्नुते ॥ २ ॥ अपिच ॥ सुत्र केवलि आगारग, वज्रमइ चवसतगाविहुपमाया ॥ हिमति नव मणतं, त पणतरमेर पणगइया ॥ ३ ॥

इहां शिष्यपूछेछे स्वामी उपशमिकने तेहिजनवे मोक्षहोय किवानहोय तेवारे गुरुकहेछेके होयपणप्रकृ तेकेमके सातलव अवशेषायुहोय एवो कोइ उपशमिक नगश्रेणी करीने पाछोरळे ते सातमेगुणठाणेआवीने वली क्षपकश्रेणीपडिवजे ते भावनवमां क्षीणमोहीयइ अनगडकेवलीथाय पण एटलोविशेषजे एकवारज उपशमश्रेणी पडिवज्याहोय ते क्षपकश्रेणीपामे अने क्षपकश्रेणीपण पडिवजे पण जे बे वखत उपशमश्रेणी पडिवज्याहोय तेने तेहिजनवे क्षपकश्रेणी नथाय

तडुक्त जीवोहु इक जम्ममि, इक्कमि उवसामगो ॥ खयंपि कुज्जा नोकुज्जा ॥ दो वारे उवसामगो ॥ १ ॥ उवसमसेणि चउक्क, जायइ जीवस्स आनव नूण ॥ ता पुण दो एगनवे खवग स्सेणी पुणो एगा ॥ २ ॥ उक्तच सत्तरिका चूर्णा ॥ जाहा वारे उवसम, सेढिपडिवज्जइ तस्स नियमात्तम्मि नवे, खवगसेढि नत्थिजा इक्कसि उवसमसेढि पडिवज्जइ तस्स खवगसेढि विहुज्जानि

ए कर्मग्रंथिकना अनिप्रायछ अने आगमनो अनिप्रायतो आरीतेछे ज एक नवमांहे एकजश्रेणी पडिवजे यडुक्त कल्पनाष्य॥एग अप्परि वडिए, सम्मत्त स्स मणुअहम्मेसु ॥ अन्नयर सेढिवज्जा, एगनवेणय सवाइ ॥ १ ॥ सवाइ ०

देशविरत्यादिकहोय. अन्यत्राप्युक्तं ॥ मोहोपशमएकस्मिन् नवे द्विःस्यादसंततः ॥ यस्मिन् नवे उपशमः क्षयोमोहस्य तत्रतु ॥ १ ॥

इहां शिष्य पूछेछे कहोस्वामी संयतने अनंतानुबंधियानुं उदय निषेध्योछे तो तेनुउपशम केवीरीते घटमानथाय ए संसयदूरकरो गुरु कहेछे हे माहानुभावतेतो अनुभागकर्म अंगीकारकरीने निषेध्योछे पण प्रदेशकर्मआश्रीने निषेध्योनथी तेमाटे प्रदेश कर्मोदयनुं इहां उपशम जाणवो तेवारे फरी शिष्यबोल्यो जोतमे संयतने प्रदेशकर्मोदयनो उपशमकह्यो तो अनंतानुबंधिआना उदयथी दर्शननोविघात केम नथीथतुं तेवारे गुरुकहेछे एना प्रदेशकर्मना मंद अनुभवपणामाटे तेम कोइकने अनुभागकर्मनो अनुभवपण अत्यंत विघात न करे जेम संपूर्ण मत्यादिक चतुर ज्ञानीने मत्यादि ज्ञानावरणोदय अत्यंत विघात नथी करतुं इत्यादिक दृष्टांते दर्शननो विघात न थाय.

तथाचान्यधायि परमगुरुणाः— जीवेणंभंते सयंकंडं कम्मंवेएइ गोयमा अछेगइयं वेएइ अछेगइयं नोवेएइ सेकेणछेणंपुछा गोयमा डुविहे पन्नत्ते तंजहा पएसकम्मेय अणुभागकम्मेय तिछणंजं पएस कम्मं ते नियमा वेएइ तिछणं जं अणुभागकम्मं त अछेगइयं वेएइ अछेगइयंनोवेएइ इत्यादि. हवे वली विशेषथी कांइक उपशमश्रेणीनुंज स्वरूप ग्रंथांतरथी कहेछे त्यां प्रथमथी अनंतानुबंधीनी उपशमना कहियेछें.

अविरति सम्यक्त्वदृष्टी देशविरती प्रमत्त अप्रमत्त ए माहेलो अन्यतमअन्यतमयोगनेविषे वर्त्ततो तेजोलेश्या पद्मलेश्या शुक्ललेश्या मांहे अन्यतमलेश्या सहीत साकारोपयोगे उपयुक्त सागरोपम कोडाकोडीमांहे स्थितिसत्कर्माकरणकालथी पूर्व पण अंतरमूहूर्त्तकाललगें अवदायमान चित्तसंतति एवो अवतिष्टेतिम अवतिष्टतोथको वली परावर्त्तमान प्रकृतिप्रतें शुभजबांधे पण अशुभनेबांधे वलीजे अशुभ प्रकृतिनुंरस चउठाणुंहोय तेने बे ठाणुकरे अने जे शुभप्रकृतिनुरस बे ठाणुहोय तेने चउठाणुकरे वली स्थितिबंधनेविषे पण पूर्णपूर्णथयेथके अन्यस्थितिबंधप्रते पूर्वपूर्वस्थितिबंधनी अपेक्षायें पल्योपमासंख्येयभाग हीणोकरे.

ए प्रकारें करणकालथीपूर्वे अंतरमूहूर्त्तकाललगे रहीने तेवारपछी अनुक्रमे त्रण करणप्रत्येके अंतरमूहूर्त्तना तेप्रते करे ते आवीरीते जेम यथाप्रवृत्तिकरण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण वली चोथो उपशांतकाल तिहां यथाप्रवृत्तिकरणनेविषे प्रवेशकरतो प्रतिसमये अनंतगुणवृद्धि विशुद्धप्रवेशकरे वली तिहांपण पूर्वोक्त शुद्ध

प्रकृतिबंधादिकजकरे पण वली स्थितिघात रसघात गुणश्रेणी गुणसंक्रमण प्र
तेनकरे केमके ते प्रतिसमय योग्य विशुद्धि नथी

वली नानाजीवनी अपेक्षायें असख्येय लोकाकाशप्रदेशमान अध्यवसाय स्था
नकहोय वली ठगण वडियाहोय वीजु वली प्रथमसमयनी अपेक्षायें वीजासम
यनेविपे अध्यवशायस्थानिक विशेषाधिकहोय तिहांथीपण त्रीजासमयनेविपे वि
शेषाधिकहोय ए प्रकारे जिहांलगे यथाप्रवृत्तिकरणनु चरमसमयथाय तिहांलग
केवु एम अपूर्वकरणनेविपे पण जाणवु एटलामाटेज ए अध्यवशायस्थानक स्था
पतांथका विपम चतुरस्र क्षेत्रप्रते आस्रणेव्यापे तेनी स्थापना

१२०००००००००००१६ इहा कल्पनाये वे पुरुष समकालें करण पडिवज्या
१००००००००००१५ विवक्षिये तिहा एक सर्वजघन्य विशोधि श्रेणी पडि
८०००००००००१४ वज्यो अने वीजो सर्वोत्कृष्टविशोधि श्रेणी पडिव
६००००००००१३ ज्यो तिहा पहेलाजीवने प्रथम समयनेविपे जघन्य
४०००००००११ विशुद्धि सर्वथी अल्प जाणवी तिहांथी वीजासमयने
३००००००९ विपे जघन्यविशोधि अनतगुणी तिहांथी त्रीजा समयने
२०००००७ विपे जघन्यविशोधि अनतगुणी ए प्रकारे त्यांलगे कहेवु जि
१०००००५ हालगे यथाप्रवृत्तिकरणना कालनो सख्यातमोभाग गयोहोय
तेवारपछी सख्येयभाग गयेथके चरमसमयनी जघन्यविशुद्धिना समीपथकी प्रथम
समयनेविपे वीजाजीवनी उत्कृष्टीविशुद्धी अनतगुणी तेवारपछीपण जेमाटे जघ
न्यविशुद्धि स्थानकथी निवर्त्यो तेवारपछी उपरलु जघन्यविशुद्धिस्थानक अनतगु
णो तेवार पछी द्वितीय समयनेविपे उत्कृष्टी विशुद्धी अनतगुणी तेथी ऊपलुज
घन्यविशुद्धि स्थानक अनतगुणु तिहांथी तृतीय समयनेविपे उत्कृष्टविशुद्धि अनत
गुणी ए प्रकारे ऊपरनु वली देखवु एकेकु विशुद्धिस्थानक अनतगुणपणे वे जीव
ने तिहांलगे जाणवु जिहांलगे यथाप्रवृत्तिकरणना चरमसमयनेविपे जघन्यविशु
द्धि स्थानक तेथी शेप उत्कृष्टा जे विशुद्धिस्थानक अनुक्तरह्यांछे ते निरतर अन
तगुणे तिहांलगें जाणवा जिहांलगे चरमसमयनेविपे उत्कृष्ट विशुद्धिस्थानक
ए यथाप्रवृत्तिकरण कह्यु

हवे अपूर्वकरण कहियेछे त्यां अपूर्वकरणनेविपे प्रतिसमयें असख्येय लोकाकाश
प्रदेशप्रमाण अध्यवशाय स्थानकहोय प्रतिसमयवली ठगणवडियाहोय तिहांप्रथम
समयनेविपे जघन्यविशुद्धि सर्वथीथोडी तेवली यथाप्रवृत्तिकरणना चरमसमय उत्क

ष्टविशुद्धि स्थानकथी अनंतगुणी तिहांथी प्रथमसमयनेविषेज जघन्यविशुद्धि अनं तगुणी तिहांथीपण तेहिज प्रथम समयने विषेज उत्कृष्टविशुद्धि अनंतगुणी.

त्यांथी पण बीजासमयनेविषे जघन्यविशुद्धि अनंतगुणी त्यांथीपण तेहिज बी जासमयनेविषे उत्कृष्टविशुद्धि अनंतगुणी त्यांथीपण वली त्रीजासमयनेविषे जघ न्यविशुद्धि अनंतगुणी ए प्रकारे जघन्य अने उत्कृष्टविशुद्धिस्थानक अनंतगुणवृ द्धे त्यांलगेंजाणवा ज्यांलगें अपूर्वकरणना चरमसमयनेविषे जघन्यथी उत्कृष्टविशु द्धि अनंतगुणी. स्थापनाचेयं एअपूर्वकरणनेविषे प्रवेशकरतोजीव स्थितिघात रस
२५०००००००००२६ घात गुणश्रेणी गुणसंक्रम अने अन्यस्थितिबंध प्रते
२३००००००००२४ समकाले आरंभे. त्यांस्थितिघात कहेतांठतां कर्मना अग्रि
२१०००००००२२ मभागथकी उत्कृष्टथी प्रभूतसागरोपम शतपृथक्त्व मात्र अ
१९००००००२० ने जघन्यथी पल्योपमसंख्येयभागमात्र स्थितिखंमनादलिकप्रते
१७०००००१८ खंमे वली हेठलीजे स्थिति खंमासे नही तिहांप्रक्षेपे अंतरमूहुर्त्त कालें उकेरे (खंडे) पूर्वोक्तप्रकारेज वली निक्षेपे ए प्रकारें अपूर्वकरणना कालनेविषे घणास्थितिखंम सहस्रव्यतिक्रमें तेमठतापण अपूर्वकरणना प्रथमसमयने विषे जे स्थिति सत्कर्महतु ते तेनाज चरमसमयनेविषे संख्येयगुणहीनथयुं ए स्थितिघातकह्यु.

हवे रसघात कहेछे अशुभप्रकृतिनाजे अनुभाग सत्कर्म तेना अनंतमभाग प्रते मूकीने शेषअनुभागनुं अंतरमुहूर्त्तकालमां विनासकरे खपावीनाखे त्यांथी वली पण ते पूर्वे मूक्यो जे अनंत भाग तेनो पण अनंत भाग मूकीने शेष अनुभाग प्रते अंतरमुहूर्त काले खपाडे. एरीते अनेक सहस्र अनुभाग खंम ते एकस्थितिखंम नेविषे व्यतिक्रमे उलंघेतेस्थितिखंमनेसहस्रेअपूर्वकरणपरिसमाप्ति थायएरसघातकह्यु

हवे गुणश्रेणी कहेछे अंतरमुहूर्त्तस्थितिनी उपरलीजे स्थितिवर्तेछे तेमांथी द लिकलेइने उदयावलिकानी ऊपरली स्थितिमां प्रतिसमयें असंख्यातगुणपणे निक्षेपे तद्यथा प्रथम समयनेविषे स्तोक बीजासमयनेविषे असंख्यातगुणु त्रीजा समयनेविषे असंख्यातगुणु एप्रकारें त्यांलगेजाणवुं ज्यांलगें अंतरमुहूर्त्तनो छेलो समय आवे ते अं तरमुहूर्त्त अपूर्वकरण अने अनिवृत्तिकरणना कालथकी किंचित्मात्र अधिकजाणवुं ए प्रथमसमयनेविषे लीधांजे दलिक तेनो निक्षेपविधि एप्रकारे छे के द्वितीयादी समयग्रहीत दलिकनो पण निक्षेप कहेतो बीजुं गुणश्रेणी रचनाने अर्थे प्रथम समयनेविषे जे दलिक ग्रहीयें तेथोकुं तेथीपण बीजा समयनेविषे असं ख्यातगुणु तेथीपण त्रीजा समयनेविषे असंख्यातगुणु एप्रकारें त्यांलगें जाणवुं

ज्यांलगे गुणश्रेणी करवानुं चरमसमय आवे त्यांलगे, अपूर्वकरणना समयनेविषे वली अनिवृत्तिकरणना समयनेविषे अनुनवतांने अनुक्रमे क्षयपामतां गुणश्रेणी दलिक निक्षेपथाकते वेहुयेवली ऊपर वधेनही ए गुणस्थान कह्यु

हवे गुणसंक्रम कहेछे अपूर्वकरणना प्रथम समयनेविषे अनंतानुवंधियादिक अशु-भप्रकृतिना जे दलिक परप्रकृतिनेविषे संक्रमावे ते स्तोक तेवार पछी बीजा समयनेविषे परप्रकृतिमां असंख्यातगुणु संक्रमावे त्यांथीपण त्रीजासमयनेविषे असंख्यातगुणु संक्रमावे ए प्रकारे त्यांलगेकहेवु ज्यांलगे छेहेलो समयथावे. तिम अन्यस्थितिनंध कहेता अपूर्वकरणना प्रथमसमयनेविषे अन्यज अपूर्वस्थितिबंध आरंभिये स्थिति बंध अने स्थितिघात ए बे समकाले जे पुराथाय ते अन्यस्थितिबंध जाणवु ए प्रकारे पांच पदार्थ अपूर्वकरणमां होय प्रवर्त्ते ए अपूर्वकरण कह्यु

हवे अनिवृत्तिकरण कहियेछे जेमां प्रवेश करनार सर्व तुल्यकालना धणीनु एक कज अध्यवसायस्थानिक होय ते आवीरीते के अनिवृत्तिकरणना प्रथमसमयने वर्त्तेछे अने जे वर्त्या अनेजे वर्त्तसे तेसर्वेनु एकजरूप अध्यवसायस्थानक होय तेमज बीजा समयनेविषेपण जे वर्त्या वर्त्तेछे अने वर्त्तसे तेपण सर्वेनु एकजरूप अध्यवसाय स्थानकहोय पण एटलोविशेषजे प्रथम समयनावी विशोधिस्थानकनी अपेक्षायें बीजा समयमां अनंतगुणहोय ए प्रकारे त्यांलगे कहेवु ज्यांलगे अनि-वृत्तिकरणनो चरमसमयआवे एटला माटेज ए करणनेविषे पेठा तुल्यकालनाधणी जेप्राणी ते सवधी अध्यवसाय स्थानिकने परस्पर निवृत्ति अने व्यावृत्तिनथी तेमा-टेज एनु अनिवृत्तिकरण एवु नाम कहिये

वली ए करणनेविषे जेटलासमय तेटला अध्यवसाय स्थानकहोय पहेला वे अध्यवसायस्थानकथी आगला अध्यवसायस्थानक अनंतगुणवृद्धहोय ए मुक्ताव-लीने स्थाने स्थापवा इहापणप्रथमसमयथी आरंभीने पूर्वोक्त पांचपदार्थ समकाले प्रवर्त्ते ए करणनाकालना असंख्यातानाग गयेथके एकनागथाकतेथके अनंतानुबं-धियानेहेतु आवलीकामात्रमूकीने अंतरमूहूर्त्तप्रमाण अंतरकरणप्रते अभिनवस्थि-ति बंधाद्धासमान अंतरमूहूर्त्तप्रमाण कालेंकरे

वली अंतरकरण सत्कदलिक उत्कीर्यमाण बंधाद्धानी परप्रकृतिमां प्रक्षेपे प्र-थमस्थितिगतदलिक आवलिकामात्र वेद्यमान परप्रकृतिमाहे स्तुक संक्रमावे अंतर-करणकरेथके द्वितीयसमयनेविषे अनंतानुबंधीयानी उपरली स्थितिनुंदलिक उप-शमाववाने अर्थे आरंभे

ते आवीरीते प्रथमसमयें स्तोक उपशमावे तेथी द्वितीयसमयें असंख्या
वली तृतीयसमये असंख्यातगुण एम ज्यांलगें अंतरमूहुर्त्तनुंकाल त्यांलगें
एटलेकाले सर्व अनंतानुवंधिया उपशम्या उपशमिताते शुंकहियें जेमरेणुनु
एटले समूहते पाणीनाविंदुआना समूहे सिंच्यो घणादिके कूट्यो निस्पंदहोय
म कर्मरेणुनुं समूहपण विशोधिरूप सलिलप्रवाहे सिंचीने अनिवृत्तिकरण
घणथी कूट्योथको संक्रमण उदय उदीरणा निधत्त निकाचना एटला कारणोने अ
ग्यथाय एप्रकारें केटलाक आचार्योना मते अनंतानुवंधीयानी उपशमनाकही.

वली वीजातो एमपणकहेछे के अनंतानुवंधीयानी उपशमनानहोय पण विस
योजना एटले क्षपणाहोय ते आवीरीते इहां श्रेणी अणपडिवज्यापण अविरति
तथा विरति चारेगतीवालालेवा ते आम.—जेम नारकी तथा देवताते अविरतिस
म्यक्दृष्टी अने तिर्यंच तथा मनुष्यतेमां अविरति सम्यक्दृष्टी तथा देशविरतिसम्य
क्दृष्टी अथवा सर्वविरति ते अनंतानुं वंधियानी विसंयोजनाने अर्थे यथा प्रव
र्त्यादिक त्रणकरणकरेते करणीनी वक्तव्यता सर्व पाठलकह्याप्रमाणे जाणवी पण
इहां एटलो विशेषजे अनिवृत्तिकरणमां प्रवेश कर्योथको अंतरकरण करेनही. उ
क्तंच कर्मप्रकृतौ॥चउगइया पज्जत्ता, तिन्निविसंजोयणे विसंजोयं॥तिकरणहितीहि
सहिया, नंतरकरणं उव समोवा ॥ १ ॥ एनी अक्षरगमनिका चारगतीना नारकी
तिर्यंच मनुष्य देवता सर्व पर्याप्तिर्यंअपर्याप्ता एवा अविरति देशविरति अने सर्वविर
तिए त्रणेमां अविरति सम्यक्दृष्टी तो चारेगतीना तथा देशविरति तिर्यंच अथवा
मनुष्य अने सर्वविरति तो मनुष्यज संयोजनना अनंतानुवंधीयाप्रते विसंयोजे
एटले विनाशे ते यथाप्रवृत्तिकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्ति वादरेसहितथको विना
से पण इहां एटलो विशेषजे एक अंतरकरण न कहेवुं अथवा उपशम न कहेवो
एटले उपशम अनंतानुवंधियानो न होय पण कर्मप्रकृति अभिहित स्वरूपे उद्वल
ना संक्रमणे करीने हेतु आवलिकामात्र प्रते मूकीने उपर निरविशेष अनंतानुवं
धियानुं विनाशकरे अने आवलिकामात्रतो स्तिवुकसंक्रमे करीने वेद्यमान प्रकृतिने
संक्रमावे एटले अनंतानुवंधियानी विसंयोजनाकही

हवे दर्शनत्रिकनी उपशमना कहियेछे तेमां मिथ्यात्वनी उपशमना मिथ्याद
ष्टीनेहोय सम्यक्त्वनी तथा मिश्रनी उपशमना वेदक सम्यक्दृष्टिनेजहोय; तेमां
मिथ्यादृष्टीने मिथ्यात्वनी उपशमना प्रथम सम्यक्त्व उपजावतांनेहोय ते आवी
रीते—जे संज्ञीसर्वपर्याप्तिर्यें पर्याप्तो करणकालथीपूर्वेपण अंतरमुहूर्त्तकालसुधि प्र

तिसमयें अनंतगुणवृद्धिविशुद्धीए प्रवर्द्धमान अनभ्यसिद्धिक विशुद्धिनी अपेक्षायें अनंतगुण विशुद्धिसहीत मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान अने विजंगज्ञान एमाहेलो अन्यतम साकारोपयोग तेनो उपयोगी अन्यतम योगनेविषे वर्त्तमान जघन्यपरिणामे तेजोलेश्यानेविषे मध्यमपरिणामे अने पद्मलेश्यानेविषे उत्कृष्टपरिणामे शुक्लेश्यानेविषे वर्त्ततो मिथ्यादृष्टी चारेगतीमाहेलो नारकी तिर्यंच मनुष्य अथवा देवता सागरोपमकोडाकोडीमाहे जेने कर्मस्थितिनी सत्ताठे तेने मिथ्यात्वनी उपशमना प्रथमसम्यक्त्वउपजावता होय इत्यादिक पूर्वोक्त त्यांलगेकहेवु ज्यांलगे यथाप्रवृत्तिकरण अने अपूर्वकरण परिपूर्णहोय त्यांलगे, पण इहां एटलोविशेष जे अपूर्वकरणमा गुणसंक्रम न केवो तोसुकेवो स्थितिघात, रसघात स्थितिबंध गुणश्रेणी एटलावानाज केवा गुणश्रेणीनी रचनापण उदय समयथी आरंभीने जाणवी तेवारपठी अनिवृत्तिकरणनेविषे पण एमजकहेवु अनिवृत्तिकरणकालना सख्यातानाग गयेथके अने एक सख्यातमनाग अवशेषरहेथके अंतरमूहुर्त्तमात्र हेठुमूकीने मिथ्यात्वनु अंतरकरण अंतरमूहुर्त्तमात्र प्रमाण प्रथम स्थितिथी काइक समधिक अथवान्यून अभिनवस्थिति बंधाद्धासमान अंतरमूहुर्त्तकालेंकरे अंतरकरणसत्क वली दलिकप्रतें उकेरीने प्रथमस्थिति अने द्वितीयस्थितिमा प्रक्षेपे प्रथमस्थितिनेविषे प्रवर्त्ततो उदीरणाप्रयोगेकरीने जे प्रथमस्थितिगत दलिकठे तेने समाकर्षिने उदयनेविषे प्रक्षेपे ते उदीरणा अने वलीजे द्वितीयस्थितिना पासाथी उदीरणाप्रयोगेज दलिकाकर्षिने उदयनेविषे प्रक्षेपेए उदीरणापण पूर्वसूरिये विशेषप्रतिपत्तिनेअर्थे आगालइत्युच्यते एवुकह्यिे

उदय उदीरणायेंकरीने प्रथमस्थितिप्रते अनुनवतो त्यांलगेगयो ज्यांलगे आवलिका द्वयविशेषरहेठे तेरहेथके आगलव्यवछेदीये तेवारपठी केवलउदीरणाज प्रवर्त्ते तेपणत्यांलगे ज्यांलगे शेष आवलिकानहोय अने आवलिकाशेषहाय तेवारें उदीरणापण निवर्त्ते तेवारपठी केवल उदयआवलिकामात्र अनुनवे आवलिकामात्रना चरमसमयनेविषे वली द्वितीयस्थितिगत दलिकप्रते अनुनागजेदेकरीने सम्यक्त्व मिश्र मिथ्यात्व ए त्रणप्रकारेकरे

उक्तंच कम्मंपयडिचूर्णौ ॥ चरमसमय मिछदिठ्ठीसेकाले उवसमसम्मदिठ्ठीहोहीइ ताहेबिइयठिइ तिहाणुनागकरेइ तंजहा सम्मत्तसम्मामिछत्तं मिछत्त चेति स्थापना एएए तिवारपठी अनंतरसमयनेविषे मिथ्यात्वनाउदयना अनावथी उपशमिक सम्यक्त्व पामे

उक्तंच कर्म्मप्रकृतौ मिछत्तुदयेखीणे, लहए सम्मत्त मोवसमियंसो ॥ लंभेण ज स्स लप्भइ. आयहिय मलद्ध पुव्वंजं ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्तं जात्यंधस्ययथापुंसश्चक्षु रुन्मेषेशुभोदये ॥ सद्दर्शनं तथैवास्य. सम्यक्त्वेसतिजायते, ॥१॥ आनंदो जायतेऽत्यंतं तात्विकोस्य महात्मन ॥ सद्व्याध्यपगमेयद्वद्व्याधितस्य सदौषधात् ॥ २ ॥ ए प्रथ म सम्यक्त्वनुं लाभ मिथ्यात्वना सर्वोपशमनथकी थाय. उक्तंच सम्मत्तपढमलंभो, सवोवसमाउत्ति ए सम्यक्त्व पडिवजतो कोइकतो देशविरतिसहित पडिवजे अने कोइक सर्वविरति सहित पडिवजे.

उक्तंच पंचसंग्रहे ॥ सम्मत्तेणं समगं. सव्वंदेसंच कोविपडिवज्जे ॥ बृहच्छतक बृह च्चूर्णावप्युक्तं उवसम सम्मदिठ्ठी, अंतरकरणो ठिउं कोइ ॥ देसविरइं पिलहेइ, कोइ पमत्ता पमत्त भावंपि ॥ १ ॥ ससाणो पुणनाकिंपिलहेउत्ति तेमाटे देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त संयतनेविषेपण मिथ्यात्व उपशांतलाभे

हवे वेदकसम्यक्दृष्टीनेविषे त्रण दर्शनमोहनीयनी उपशमना विधिकहियें छे इहां वेदक सम्यक्त्वदृष्टीजीव संयमनेविषे प्रवर्त्ततोथको अंतरमूहुर्त्तमात्रकालें दर्शनत्रिकउपशमावे ते उपशमावताने वली करणत्रिकादिकनी विधि जेम कर्म्म प्र कृतिनीटीकामां कहीछे तेमज जाणवी

एम उपशांतदर्शनमोहनीयत्रिक चारित्रमोहनीयने उपशमाववा वांछतो वली पण यथाप्रवृत्यादिक त्रणकरणेकरी उपशमावे ते करणनुस्वरूप पूर्वनीपरेंजाणवुं पण केवल इहां यथाप्रवृत्तिकरण ते प्रमत्तगुणठाणे जाणवुं तेमज अपूर्वकरण अपूर्वगुणठाणे अने अनिवृत्तिकरण अनिवृत्तिबादरगुणठाणे तथा सूक्ष्मसंपरायगु णठाणे जाणवुं इहां पण स्थितिघातादिक पूर्वनीपरे प्रवर्त्ते पण एटलोविशेष जे इहां सर्व अशुभप्रकृति अबध्यमाननो गुणसंक्रम प्रवर्त्ते एम कहेवुं अपूर्वकरणका लनो संख्यातमोभाग गयेथके निद्राप्रचलाना बंधनो व्यवछेद होय तेवारपछी प्रभूत स्थितिखंड सहस्र गयेथके अपूर्वकरण कालना संख्याताभाग गया होय एक अवशेष रह्योहोय वली इहां अंतराले देवगति देवानुपूर्वी पंचेंद्रियजाति वै क्रियशरीर वैक्रियांगोपांग अहारक शरीर अहारकांगोपांग तेजस कार्मण समचतु रस्त्र वर्णचतुष्क अगुरुलघु उपघात पराघात उच्छास त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक प्रशस्तविहायोगति स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय निर्माण तीर्थंकर असंज्ञी ए त्रीसप्रकृतिनुं बंध व्यवछेद थाय.

तेवार पछी स्थितिखंडम पृथक्त्व गयेथके अपूर्वकरण कालना चरमसमयनेविषे

तिसमयें अनंतगुणवृद्धिविशुद्धीए प्रवर्द्धमान अजव्यसिद्धिक विशुद्धिनी अ
अनंतगुण विशुद्धिसहीत मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान अने विजंगज्ञान एमाहे
न्यतम साकारोपयोग तेनो उपयोगी अन्यतम योगनेविषे वर्त्तमान जघन्यपा
तेजोलेश्यानेविषे मध्यमपरिणामे अने पद्मलेश्यानेविषे उत्कृष्टपरिणामे
श्यानेविषे वर्त्ततो मिथ्यादृष्टी चारेगतीमाहेलो नारकी तिर्यंच मनुष्य अथवा
सागरोपमकोडाकोडीमाहे जेने कर्मस्थितिनी सत्ताछे तेने मिथ्यात्वनी
प्रथमसम्यक्त्वउपजावता होय इत्यादिक पूर्वोक्त त्यांलगेकहेवु ज्यांलगे यथा
करण अने अपूर्वकरण परिपूर्णहोय त्यांलगे, पण इहां एटलोविशेष जे
करणमा गुणसंक्रम न केवो तोसुकेवो स्थितिघात, रसघात स्थितिबंध
श्रेणी एटलावानाज केवा गुणश्रेणीनी रचनापण उदय समयथी आ
जाणवी तेवारपछी अनिवृत्तिकरणनेविषे पण एमजकहेवु अनिवृत्तिकरणक
संख्यातानाग गयेथके अने एक संख्यातमनाग अवशेषरहेथके अंतरमूहूर्त्तम
वृभकीने मिथ्यात्वनु अंतरकरण अंतरमूहूर्त्तमात्र प्रमाण प्रथम स्थितियी
समधिक अथवान्यून अभिनवस्थिति बंधाद्धासमान अंतरमूहूर्त्तकालेंकरे अ
रणसंबंधी वली दलिकप्रतें उकेरीने प्रथमस्थिति अने द्वितीयस्थितिमा प्रक्षेपे
मस्थितिनेविषे प्रवर्त्ततो उदीरणाप्रयोगेकरीने जे प्रथमस्थितिगत दलिकले ते
मार्कर्पीने उदयनेविषे प्रक्षेपे ते उदीरणा अने वलीजे द्वितीयस्थितिना पा
उदीरणाप्रयोगेज दलिकाकर्पीने उदयनेविषे प्रक्षेपेए उदीरणापण पूर्वसूरियें वि
तिपत्तिनेअर्थे आगालइत्युच्यते एवुकहिये

उदय उदीरणायेकरीने प्रथमस्थितिप्रतें अनुजवतो त्यांलगगयो ज्यांलगे
लिकाद्वयविशेषरहेले तेरहेथके आगलव्यवछेदीयें तेवारपछी केवलउदीरणा
वर्त्ते तेपणत्यांलग ज्यांलगे शेष आवलिकानहोय अने आवलिकाशेषहोय
उदीरणापण निवर्त्ते तेवारपछी केवल उदयआवलिकामात्र अनुनवे आवलि
थना चरमसमयनेविषे वली द्वितीयस्थितिगत दलिकप्रतें अनुनागभेदेकरी
म्यक्त्व मिश्र मिथ्यात्व ए त्रणप्रकारेकरे

उक्तंच कर्मप्रकृतिचूर्णौ ॥ चरमसमय मिछदिट्ठीसेकाले उवसमसम्मदिट्ठीह
ताहेबिइयठिइ तिहाणुनागस्सेइ तंजहा सम्मत्तसम्मामिछत्तं मिछत्त चेति स्थ
णए तेवारपछी अनंतरसमयनेविषे मिथ्यात्वनाउदयना अनावथी उपश
मसम्यक्त्व पामे

उक्तंच कर्म्मप्रकृतौ मिच्छत्तुदयेखीणे, जहए सम्मत्त मोवसमियंसो ॥ लंभेण ज स्स लब्भइ. आयहिय मलद्ध पुव्वंजं ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्तं जात्यंधस्ययथापुंसश्चक्षु र्लाभेशुभोदये ॥ सद्दर्शनं तथैवास्य. सम्यक्त्वेसतिजायते, ॥१॥ आनंदो जायतेऽत्यंतं तात्विकोस्य महात्मन ॥ सद्व्याध्यपगमेयद्वद्व्याधितस्य सदौपधात् ॥ २ ॥ ए प्रथ म सम्यक्त्वनुं लाभ मिथ्यात्वना सर्वोपशमनथकी थाय उक्तंच सम्मत्तपढमलंभो, सव्वोवसमाऽति ए सम्यक्त्व पडिवजतो कोऽकतो देशविरतिसहित पडिवजे अने कोऽक सर्वविरति सहित पडिवजे.

उक्तंच पंचसंग्रहे ॥ सम्मत्तेणं समगं, सव्वंदेसंच कोविपडिवज्जे ॥ वृहद्शतक वृह च्चूर्णावप्युक्तं उवसम सम्मदिठी, अंतरकरणो ठिउ कोइ ॥ देसविरइं पिलहेइ, कोइ पमत्ता पमत्त भावंपि ॥ १ ॥ ससाणो पुणनाकिंपिलहेइति तेमाटे देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त संयतनेविषेपण मिथ्यात्व उपशांतलाभे

हवे वेदकसम्यक्दृष्टीनेविषे त्रण दर्शनमोहनीयनी उपशमना विधिकहियें छे इहां वेदक सम्यक्त्वदृष्टीजीव संयमनेविषे प्रवर्त्ततोथको अंतरमुहूर्त्तमात्रकालें दर्शनत्रिकउपशमावे ते उपशमावताने वली करणत्रिकादिकनी विधि जेम कर्म्म प्र कृतिनीटीकामां कहीछे तेमज जाणवी.

एम उपशांतदर्शनमोहनीयत्रिक चारित्रमोहनीयने उपशमाववा वांछतो वली पण यथाप्रवृत्यादिक त्रणकरणेकरी उपशमावे ते करणनुस्वरूप पूर्वनीपरेंजाणवुं पण केवल इहां यथाप्रवृत्तिकरण ते प्रमत्तगुणठाणे जाणवुं तेमज अपूर्वकरण अपूर्वगुणठाणे अने अनिवृत्तिकरण अनिवृत्तिबादरगुणठाणे तथा सूक्ष्मसंपरायगु णठाणे जाणवुं इहां पण स्थितिघातादिक पूर्वनीपरे प्रवर्त्ते पण एटलोविशेष जे इहां सर्व अशुभप्रकृति अबध्यमाननो गुणसंक्रम प्रवर्त्ते एम कहेवुं अपूर्वकरणका लनो संख्यातमोभाग गयेथके निद्राप्रचलाना बंधनो व्यवछेद होय तेवारपछी प्रभूत स्थितिखंम सहस्र गयेथके अपूर्वकरण कालना संख्याताभाग गया होय एक अवशेष रह्योहोय वली इहां अंतराले देवगति देवानुपूर्वी पंचेंद्रियजाति वै क्रियशरीर वैक्रियांगोपांग आहारक शरीर आहारकांगोपांग तेजस कार्मण समचतु रस्र वर्णचतुष्क अगुरुलघु उपघात पराघात उछ्वास त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक प्रशस्तविहायोगति स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय निर्माण तीर्थंकर असंज्ञी ए त्रीसप्रकृतिनुं बंध व्यवछेद थाय.

तेवार पछी स्थितिखंम पृथक्त्व गयेथके अपूर्वकरण कालना चरमसमयनेविषे

तिसमये अनंतगुणवृद्धिविशुद्धीए प्रवर्द्धमान अनव्यसिद्धिक विशुद्धिनी अपे
अनंतगुण विशुद्धिसहीत मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान अने विभंगज्ञान एमांहेल
न्यतम साकारोपयोग तेनो उपयोगी अन्यतम योगनेविषे वर्त्तमान जघन्यपरि
तेजोलेश्यानेविषे मध्यमपरिणामे अने पद्मलेश्यानेविषे उत्कृष्टपरिणामे शु
ल्लेश्यानेविषे वर्त्ततो मिथ्यादृष्टी चारगतीमाहला नारकी तिर्यंच मनुष्य अथवा दे
सागरोपमकोडाकोडीमाहे जेने कर्मस्थितिनी सत्ताछे तेने मिथ्यात्वनो उपश
प्रथमसम्यक्त्वउपजावता होय इत्यादिक पूर्वोक्त स्थानकहेतु त्यारेज यथाप्र
करण अने अपूर्वकरण परिपूर्णहोय त्यारेज पण इहां एटलोविशेष जे य
करणमां गुणसंक्रम न करे तोमुकेवो स्थितिघात रसघात स्थितिबंध
श्रेणी एटलातोनाज करे गुणश्रेणीनी रचनापण उदय समयथी आर
जाणवी तेवारपछी अनिवृत्तिकरणनेविषे पण एमजकहेवु अनिवृत्तिकरणका
संख्यातानाभाग गयेथके अने एक संख्यातमनाभाग अवशेषरहेथके अनंतमुहूर्तमा
वृत्तकीने मिथ्यात्वनु अंतरकरण अंतरमुहूर्तमात्र प्रमाण प्रथम स्थितिथी क
समधिक अपवर्त्तन्यून अभिनवस्थिति बंधाद्धासमान अनंतमुहूर्तमानकर अं
रणसमक चारी दलिकप्रते उकेरीने प्रथमस्थिति अने द्वितीयस्थितिमा प्रक्षेपे
प्रथमस्थितिनेविषे प्रवर्त्ततो उदीरणाप्रयोगेकरीने जे प्रथमस्थितिगत दलिक तेने
मावलिकानेविषे उदयनेविषे प्रक्षेपे ते उदीरणा अने वलीजे द्वितीयस्थितिना पर
उदीरणाप्रयोगेज दलिकाकर्षीने उदयनेविषे प्रक्षेपेते उदीरणापण पूर्वसूरिये द्वि
स्थितिनेविषे आगालइत्युच्यते एमकहिये

उदय उदीरणाएकरीने प्रथमस्थितिप्रते अनुभवतो ज्यारेसमया ज्यारे
लिकाहयशेषरहे तेवारपछी आगालथवाथकोहोय तेवारपछी [illegible]
दय तेवारपछी ज्यारे शेष आवलिकानहोय अने आवलिकाशेषरहे त
उदीरणापण निवर्त्ते तेवारपछी केवल उदयआवलिकामात्र अनंतर [illegible]
थता चरमसमयनेविषे वर्त्ती द्वितीयस्थितिगत दलिकप्रत [illegible]
ध्यात्व मिश्र मिथ्यात्व ए त्रणप्रकारेकरे

उक्तंच कर्मप्रकृतिचूर्णौ॥ चरमसमय मिच्छद्दिट्ठी [illegible]
ताहे [illegible] तिहापुंजीकरेइ तंजहा सम्मत्तसम्मामिच्छत्त मिच्छत्त [illegible]
[illegible] तेवारपछी अनंतरसमयनेविषे मिथ्यात्वनाउदयना अभावथी [illegible]
सम्यक्त्व पामे

उक्तं च कर्मप्रकृतौ. मिच्छत्तुदयेखीणे, लहए सम्मत्त मोवसमियं सो ॥ लंभेण जस्स लब्भइ, आयहिय मलद्ध पुव्वं जं ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्तं जात्यंधस्य यथा पुंसश्चक्षुर्लाभे शुभोदये ॥ सद्दर्शनं तथैवास्य, सम्यक्त्वेसतिजायते. ॥१॥ आनंदो जायतेऽत्यंतं सात्विकोऽस्य महात्मनः ॥ सद्व्याध्यपगमे यद्वद्व्याधितस्य सदौषधात् ॥ २ ॥ ए प्रथम सम्यक्त्वनुं नाम मिथ्यात्वना सर्वोपशमनथकी थाय. उक्तं च सम्मतपकरणे. सम्मत्तोवसमाइनि ए सम्मत्त पडिवज्जतो कोइकतो देसविरतिसहित पडिवज्जे अने कोइक सर्वविरति सहित पडिवज्जे.

उक्तं च पंचसंग्रहे ॥ सम्मत्तेणं समगं सव्वं देसं च कोवि पडिवज्जे ॥ बृहच्छतक बृहच्चूर्णावप्युक्तं उवसम सम्मद्दिट्ठी, अंतरकरणे ठिओ कोइ ॥ देसविरइं पि लहइ, कोइ पमत्ता पमत्त भावंपि ॥ २ ॥ सासायणो पुण नकिंपि लहइत्ति तेमाटे देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त संयतनेविषेपण मिथ्यात्व उपशांत जाणे.

हवे वेदकसम्यक्दृष्टीनेविषे त्रण दर्शनमोहनीयनी उपशमना विधिकहियें छे इहां वेदक सम्यक्त्वदृष्टीजीव संयमनेविषे प्रवर्त्ततोथको अंतरमुहूर्त्तमात्रकालें दर्शनत्रिकउपशमावे ते उपशमावतांने वली करणत्रिकादिकनी विधि जेम कर्मप्रकृतिनीटीकामां कहीछे तेमज जाणवी.

एम उपशांतदर्शनमोहनीयत्रिक चारित्रमोहनीयने उपशमाववा वांछतो वली पण यथाप्रवृत्यादिक त्रणकरणेकरी उपशमावे ते करणनुंस्वरूप पूर्वनीपरेंजाणवुं पण केवल इहां यथाप्रवृत्तिकरण ते अप्रमत्तगुणठाणे जाणवुं तेमज अपूर्वकरण अपूर्वगुणठाणे अने अनिवृत्तिकरण अनिवृत्तिबादरगुणठाणे तथा सूक्ष्मसंपरायगुणठाणे जाणवुं इहां पण स्थितिघातादिक पूर्वनीपरें प्रवर्त्ते पण एटलोविशेष जे इहां सर्व अशुभप्रकृति अबध्यमाननो गुणसंक्रम प्रवर्त्ते एम कहेवुं अपूर्वकरणकालनो संख्यातमोभाग गयेथके निद्राप्रचलाना बंधनो व्यवछेद होय तेवारपछी प्रभूत स्थितिखंडसहस्र गयेथके अपूर्वकरण कालना संख्याताभाग गया होय एक अवशेष रह्योहोय वली इहां अंतराले देवगति देवानुपूर्वी पंचेंद्रियजाति वैक्रियशरीर वैक्रियांगोपांग आहारक शरीर आहारकांगोपांग तैजस कार्मण समचतुरस्र वर्णचतुष्क अगुरुलघु उपघात पराघात उश्वास त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक प्रशस्तविहायोगति स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय निर्माण तीर्थंकर अत्रीसी ए त्रीसप्रकृतिनुं बंध व्यवछेद थाय.

तेवार पछी स्थितिखंड पृथक्त्व गयेथके अपूर्वकरणकालना चरमसमयनेविषे

तिसमयें अनंतगुणवृद्धिविशुद्धीए प्रवर्द्धमान अनन्यसिद्धिक विशुद्धिनी अपेक्षायें अनंतगुण विशुद्धिसहीत मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान अने विभंगज्ञान एमांहेलो अन्यतम साकारोपयोग तेनो उपयोगी अन्यतम योगनेविषे वर्त्तमान जघन्यपरिणामे तेजोलेश्यानेविषे मध्यमपरिणामे अने पद्मलेश्यानेविषे उत्कृष्टपरिणामे शुक्ललेश्यानेविषे वर्त्ततो मिथ्यादृष्टी चारेगतीमांहेलो नारकी तिर्यंच मनुष्य अथवा देवता सागरोपमकोडाकोडीमांहे जेने कर्मस्थितिनी सत्ता छे तेने मिथ्यात्वनी उपशमना प्रथमसम्यक्त्वउपजावता होय इत्यादिक पूर्वोक्त त्यांलगेकहेवु ज्यांलगे यथाप्रवृत्तिकरण अने अपूर्वकरण परिपूर्णहोय त्यांलगे पण इहां एटलोविशेष जे अपूर्वकरणमां गुणसंक्रम न केवो तोसुकेवो स्थितिघात, रसघात स्थितिबंध गुणश्रेणी एटलावानाज केवा गुणश्रेणीनी रचनापण उदय समयथी आरंभीने जाणवी तेवारपछी अनिवृत्तिकरणनेविषे पण एमजकहेवु अनिवृत्तिकरणकालनां सख्यातभाग गयेथके अने एक सख्यातमभाग अवशेषरहेथके अंतरमूहूर्त्तमात्र हेठुमूकीने मिथ्यात्वनु अंतरकरण अंतरमूहूर्त्तमात्र प्रमाण प्रथम स्थितिथी काइक समधिक अथवान्यून अभिनवस्थिति बंधाद्धासमान अंतरमूहूर्त्तकालेंकरे अंतरकरणलक्षण वली दलिकप्रतें उकेरीने प्रथमस्थिति अने द्वितीयस्थितिमां प्रक्षेपे प्रथमस्थितिनेविषे प्रवर्त्ततो उदीरणाप्रयोगेकरीने जे प्रथमस्थितिगत दलिकछे तेने समार्कर्षिने उदयनेविषे प्रक्षेपे ते उदीरणा अने वलीजे द्वितीयस्थितिना पासाथी उदीरणाप्रयोगज दलिकाकर्षिने उदयनेविषे प्रक्षेपेए उदीरणापण पूर्वसूरियें विशेषप्रतिपत्तिनेअर्थे आगालइत्युच्यते एवुकह्यिे

उदय उदीरणायेंकरीने प्रथमस्थितिप्रतें अनुभवतो त्यांलगगयो ज्यांलगे आवलिकाद्वयविशेषरहेछे तेरहेथके आगलव्यवछेदथी तेवारपछी करलउदीरणान प्रवर्त्ते तेपणत्यांलग ज्यांलग शेष आवलिकानहोय अने आवलिकाअपहाय तथापि उदीरणापण निवर्त्ते तेवारपछी केवल उदयआवलिकामात्र अनुभवे आवलिकामांत्रना चरमसमयनेविषे वली द्वितीयस्थितिगत दलिकप्रतें अनुभागभेदेकरीने सम्यक्त्व मिश्र मिथ्यात्व ए त्रणप्रकारेकरे

उक्तंच कम्मपयडिचूर्णो ॥ चरमसमय मिच्छदिट्ठीसेकाले उवसमसम्मदिट्ठीहोहीइ ताहेबिइयठिइ तिहाणुभागकरेइ तंजहा सम्मत्तसम्मामिच्छत्तं मिच्छत्त चति स्थापना एएए तिवारपछी अनंतरसमयनेविषे मिथ्यात्वनाउदयना अभावथी उपशमिक सम्यक्त्व पामे

उक्तंच कर्म्मप्रकृतौ मिच्छत्तुदयेखीणे, लहए सम्मत्त मोवसमियंसो ॥ लंभेण ज स्स लब्भइ. आयहिय मलद्ध पुव्वंजं ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्तं जात्यंधस्ययथापुंनश्चक्षु र्लाभेशुभोदये ॥ सद्दर्शनं तथैवास्य. सम्यक्त्वेमतिजायते, ॥१॥ आनंदो जायतेऽत्यंतं तात्विकोस्य महात्मन. ॥ सद्व्याध्यपगमेयद्वद्व्याधितस्य सदौषधात् ॥ २ ॥ ए प्रथ म सम्यक्त्वनुं लाभ मिथ्यात्वना सर्वोपशमनथकी थाय. उक्तंच सम्मत्तपढमलंभो, सव्वोवसमाऽनि ए सम्यक्त्व पडिवजतो कोऽकतो देशविरतिसहित पडिवजे अने कोऽक सर्वविरति सहित पडिवजे.

उक्तंच पंचसंग्रहे ॥ सम्मत्तेणं समगं, सव्वंदेसंच कोविपडिवज्जे ॥ बृहत्शतक बृह चूर्णावप्युक्तं उवसम सम्मदिठ्ठी, अंतरकरणे ठिउ कोइ ॥ देसविरइं पिलहेइ, कोइ पमत्ता पमत्त भावंपि ॥ १ ॥ ससाणो पुणनकिंपिलहेइति तेमाटे देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त संयतनेविषेपण मिथ्यात्व उपशांतलाभे.

हवे वेदकसम्यक्दृष्टीनेविषे त्रण दर्शनमोहनीयनी उपशमना विधिकहियें छे इहां वेदक सम्यक्त्वदृष्टीजीव संयमनेविषे प्रवर्त्ततोथको अंतरमूहूर्त्तमात्रकाले दर्शनत्रिकउपशमावे ते उपशमावताने वली करणत्रिकादिकनी विधि जेम कर्म्म प्र कृतिनीटीकामां कहीछे तेमज जाणवी

एम उपशांतदर्शनमोहनीयत्रिक चारित्रमोहनीयने उपशमाववा वांछतो वली पण यथाप्रवृत्यादिक त्रणकरणेकरी उपशमावे ते करणनुंस्वरूप पूर्वनीपरेंजाणवुं पण केवल इहां यथाप्रवृत्तिकरण ते प्रमत्तगुणठाणे जाणवुं तेमज अपूर्वकरण अपूर्वगुणठाणे अने अनिवृत्तिकरण अनिवृत्तिबादरगुणठाणे तथा सूक्ष्मसंपरायगु णठाणे जाणवुं इहां पण स्थितिघातादिक पूर्वनीपरे प्रवर्त्ते पण एटलोविशेष जे इहा सर्व अशुभप्रकृति अबध्यमाननो गुणसंक्रम प्रवर्त्ते एम कहेवुं अपूर्वकरणका लनो संख्यातमोभाग गयेथके निद्राप्रचलाना बंधनो व्यवछेद होय तेवारपछी प्रभूत स्थितिखंड सहस्र गयेथके अपूर्वकरण कालना संख्याताभाग गया होय एक अवशेष रह्योहोय वली इहां अंतराले देवगति देवानुपूर्वी पंचेंद्रियजाति वै क्रियशरीर वैक्रियांगोपांग अहारक शरीर अहारकांगोपांग तेजस कार्मण समचतु रस्र वर्णचतुष्क अगुरुलघु उपघात पराघात उश्वास त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक प्रशस्तविहायोगति स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय निर्माण तीर्थंकर असंज्ञी ए त्रीसप्रकृतिनुं बंध व्यवछेद थाय

तेवार पछी स्थितिखंम पृथक्त्व गयेथके अपूर्वकरण कालना चरमसमयनेविषे

हास्य रति भय जुगुप्सानो बंधव्यवछेद थाय हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा नो उदय होय सर्वकर्मना देशोपशमना निधत्त निकाचनाकरणनो व्यवछेदहोय

त्याथी अनतर समयनेविषे अनिवृत्तिकरणमा प्रवेश करे त्यापण स्थितिघाता दिक पूर्वनीपरेकरे तेवारपछी अनिवृत्तिकरणकालना सख्यातानाग गयेथके दर्शन सप्तकविना शेष मोहनीयनी एकवीसप्रकृतिनु अतरकरण करे त्या चार सज्वलन माहेलो अन्यतमवेद्यमान सज्वलननो अने त्रण वेदमाहेलो अन्यतमवेद्यमान वेदनी पहेली स्थिति स्वोदय कालप्रमाण ए बे काडता शेष एकादश कषाय अने आठ नोकषायनी आवलिकामात्र पोताना उदयकाल प्रमाण वली चारस वलना अने त्रण वेदछे तेमा स्त्रीवेद नपुसकवेदनो उदयकाल सर्वस्तोक स्वस्थाने वली मा होमाहेतुल्य तेथी पुरुषवेदनो सख्येयगुणो तेथी सज्वलनना क्रोधनो विशेषाधिक तेथी संज्वलनना माननो विशेषाधिक तेथी सज्वलननी मायानो विशेषाधिक तेथी सज्वलनना लोजनु विशेषाधिक एम इहा अनिवृत्तिकरणनेविषे घणु कहेवु छे ते ग्रथगौरवना जयथी नथी कहेता कवल विशेषार्थे कर्मप्रकृतिनी टीकाजोवी

वली अनरकरण करीने तेवारपछी नपुसक वेदने अतरमुहूर्तमात्रमा उपशमा वे तेवारपछी अतरमुहूर्तमात्रे स्त्रीवेदने उपशमावे तेवारपछी अतरमुहूर्तमात्रे हा स्यादिषट्क उपशमावे ते समयनेविषे पुरुषवेदनो बध उदय उदीरणानो व्यवछेद थाय तेवारपछी समयऊण आवलिकाद्वयें पुरुषवेदने उपशमावे तेवारपछी सम कालें अतरमुहूर्तमात्रे अप्रत्याख्याना वरण प्रत्याख्यानावरण ए बे क्रोधने उपशमावे तेवारपछी तदुपशातेवली ते समयेज स-वलनना क्रोधना उदय उदीरणानो व्य वछेद होय पछी समयऊण आवलिकाद्विके सज्वलननाक्रोधने उपशमावे तेवार पछी अतरमुहूर्तमात्रे अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरणनु मान समकालें उप शमावे ते उपशमेथके वलीते समयेज सज्वलनना मानना बध उदय उदीरणा नो व्यवछेदहोय तेवारपछीवली समयऊण आवलिकाद्विके सज्वलनामानने उ पशमावे तेवारपछी समकालें अतरमूहूर्तमात्रे अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावर ण ए बे मायाने उपशमावे तदुपशातेवली ते समयेज सज्वलननी मायाना बध उदय उदीरणानो व्यवछेदहोय तेवारपछीवली समयऊण आवलिका द्विके स-वलननीमायाने उपशमावे तेवारपछी समकाले अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्याना वरण ए बे लोजने उपशमावे ते समयेज सज्वलनना लोजना बंध उदय उदीरणानो व्यवछेद थाय तेवारपछी सज्वलना लोजने उपशमावता

तेना त्रण नाग करे तेमांथी बे नागने समकाले उपशमावे त्रीजा नागना संख्याताखंम करे तेपण जूदे जूदे कालन्नेदें उपशमावे वली संख्याता खंमना किट्टीएवुं अपरनाम ठे तेना चरमखंमना असंख्याता खंमकरी सूक्ष्मकिट्टी एवुं अपरनामकरे तेवारपठी समय समयनेविषे एकेको खंमकरे ते उपशमावे इहांवली दर्शनसप्तक उपशमेथके निवृत्तिबादर एवुंनामकहियें त्यांथी ऊंचु अनिवृत्तिबादरकहियें ते ज्यांलगें लोननो असंख्येय अंतिम चरमखंमआवे त्यांलगे कहिये. ए अगवीसन्नेदें निन्नमोहनीयनी उपशमनाकही.

हवे गाथानोअर्थ विवरियेठे इहां बन्नेश्रेणीना स्वरुपमां प्रथम उपशमश्रेणीनुं स्वरूपकहेठे उपशमश्रेणीनुं प्रारंनक अप्रमत्तसंयमी ज होय अने बीजातो एमकहे ठेके अविरति देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त ए माहेलो गमेतेहोय अने श्रेणीपरिसमाप्ते पण श्रेणीथी पडे तेवारे वली पाठो अविरति देशविरति प्रमत्त अप्रमत्त ए माहेलो अन्यतम गमेते होय. ते पहेलो समकाले अनंतानुबंधिया क्रोध मान माया लोनने उपशमावे तेवारपठी मिथ्यात्व तथा सम्यक्मिथ्यात्व अने सम्यक्दर्शन ए त्रण समकाले उपशमावे तेवारपठी अनुदीर्ण पण नपुंसकवेद उपशमावे तेमां जो पुरुष प्रारंनक होय तो प्रथम नपुंसकवेद पठी स्त्रीवेद पठी हास्यषट्क उपशमावीने पठी पुरुष वेद उपशमावे.

अने जो स्त्री प्रारंनिका होय तो प्रथम नपुंसकवेद पठी पुरुषवेद पठी हास्यादि षट्क पठी स्त्रीवेद उपशमावे अने जो नपुंसक प्रारंनक होय प्रथम ए अनुदीर्ण पण स्त्रीवेद उपशमावे पठी पुरुषवेद पठी हास्यादि षट्क तेवारपठी नपुंसकवेद उपशमावे पठी बे क्रोध एकांतरीत संज्वलन विलोप क्रोधांतरित सदृशतुल्य उपशमावे.

एटले एनो ए अर्थठे जे अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ए बे क्रोध क्रोधपणे सरखा समकालें उपशमावे तेवारपठी एकलो संज्वलननोक्रोध उपशमावे पठी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ए बेमान समकालें उपशमावे पठी संज्वलननुंमान उपशमावे पठी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ए बे मायाने समकाले उपशमावे पठी संज्वलनीमाया उपशमावे पठी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ए बे लोन समकाले उपशमावे तेवारपठी संज्वलननुं लोन उपशमावे इहां उपशमश्रेणीनी स्थापनाकरवी.

इहां चर्चकपूठेठे के कहोजी संज्वलनादिकने उपशमपटेने पण अनंतानुबंधियाने तो सम्यक्त्व प्रातिघाई त्यांज उपशमाव्याने तो इहांअनंतानुबंधियानुं उ

पशम केम घटमानथाय हे ? गुरु उत्तरकहेछे दर्शनपमिवजता त्यांअनंतानुबंधिया नो क्षयोपशमहतो अने इहांतो उपशमछे तेमाटे विरोधनथी वली शिष्यबोल्यो क्षयोपशम अने उपशममा शोविशेषछे गुरुकहेछे ज्या क्षयोपशमछे त्यातो उदीरणानु क्षय अने अनुदीरणानु विपाकानुभवनी अपेक्षाये उपशमछे अने वली प्रदेशानुभवीतो उदयछेज अने उपशमनेविषेतो प्रदेशानुभवपणनथी यदाहुपीयूषपायोऽि वेएइसंतकम्म, खउवसमिए छनाणुनावसो ॥ उवसंत कसाउ पुण, वेएइ नसंत कम्मंपि ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्त उवसंत कम्मज, नतउ कढेइ नदेइ उदएवी ॥ नय गमयइ परमग्गइ, नचेवउकट्टएततु ॥ १ ॥ एगाथानो लेशमात्रअर्थ कहेछे सर्वोपशमेजे उपसम्यु ते मोहनीयकर्मछे बीजाकर्मने सर्वोपशमनथी सव्वोवसमो मोहस्स चेवेति वचनात् तेनु अपकर्षण पण नथाय

एटले मोहनीयकर्म अपवर्त्तनाकरणेकरीने स्थितिरसेकरी हीनपण कोइ करीशकेनही अपिशब्दने निव्वकमपणामाटे उदयेपण ते दिये एटले ते वेदेपणनही उपलक्षणथी उदयने अविनाभावी उदीरणाने विषेपण नदीये एपणजाणवु

वली बध्यमान सजातीय परप्रकृतिप्रते संक्रमणकरणेकरीने नगमे संक्रमावे पणनही वली तेकर्मउपशमाव्युथकु उत्कर्षपणनही एटले उद्वर्त्तनाकरणेकरीने स्थितिरसेकरी वधारेपणनही निधत्ति निकाचन तो पूर्व अपूर्वकरणकालेज निवृत्तिछे तेमाटे इहा उपशातपणे तेनु निषेध नकरीये इहा शिष्यपूछेछे कहोजी सयतने अनतानुबधियानु उदय निषेध्योछे तो तेनु उपशम केवीरीते घटमानथाय ? तेवारे गुरुकहेछे के तेतो निश्च अनुभागकर्म अगीकारकरीने तेनु उदयनिषेध्योछे पण प्रदेशकर्मआश्रीने अनतानुबधियानु उदय निषेध्योनथी तथा चान्यथापि परमगुरुणा जीवे एनते सयकम्म कम्म नेएइ गोयमा इत्यादिक पाठपूर्व एज स्तवनमां कहीगयाछे

तेमाटे इहा प्रदेशकर्मानुभवना उदयनो उपशमजाणवो तेवारे वली शिष्यबोल्यो जो एमसयतने अनतानुबधियानो उदयहोय तो तेथी दर्शननो विघातकेमनथाय गुरुकहेछे प्रदेशकर्मनु मद अनुभवछे तेथी दर्शननो विघातनथाय तेम काइकने अनुभागकर्मानुभवेपण अत्यत विघात नकरे जेम सपूर्ण मत्यादि चतुर्ज्ञानीने मत्यादि ज्ञानावरणोदय विघातनथी करता तेम जाणवो तेवारपछी सूक्ष्मनां चरम किट्टिनो उपशम थयेथके सज्वलननो लोभ उपशांतथाय यदुक्त अणद स नपुंसि इत्थिय वेअच पुरिस वेयच ॥ दोदोएग तरिए, सरिसे सरिस उवसमइ ॥ १ ॥ ते समयेज ज्ञानावरण पचक दर्शनावरण चतुष्क अतराय पचक यश

कीर्त्ति उच्चैर्गोत्र एटली प्रकृतीनोबंध व्यवछेदथाय तेथी अनंतर [illegible]
उपशांत कपाय गुण होय ते जघन्यथी एकसमयमात्र अने उत्कर्षथी [illegible]
लगे. तेथी ऊर्ध्वं नियमा ए उपशामक अवश्यपडे, तेपडवुं वे प्रकारे [illegible]
क्षये वीजुं कालनेक्षये त्यांभवक्षय मरतानेहोय अने कालक्षय [illegible]
पूर्णथये होय जे कालक्षये पडेतेतो जेम चढयो तेमजपडे [illegible]
रणा व्यवछिन्नछे त्यांत्यांपडतोथको तेपाछा आरंभीये एटलालगे [illegible]
लगेपडे ज्यांलगे प्रमत्तसंयतगुणगणोठे त्यांलगेपडे. वली कोइक [illegible]
ला वे गुणगणेजाय अने कोइक सास्वादन भावपणपामे.

वली जे भवक्षयेपडे ते प्रथमसमयेज सर्व बंधनादिक [illegible]
मकहेछे बंधन संक्रमण उद्वर्तना अपवर्त्तना उदीरणा उपशमना [illegible]

हवे ए बंधनादिक आठेना अर्थ कहेछे कर्म्मपुद्गलनं [illegible]
अग्निलोह पिंडनीपरे अन्योन्य मलवुं ते बंधन कहिये वली [illegible]
प्रदेशने अन्यकर्मरूपपणे स्थापछे तेने अन्यकर्मरूपे [illegible]
कहिये तथा जे स्थिति अने अनुभागनुं वधारवुं ते उद्वर्तना [illegible]
तथा अनुभागनुं घटाडवुं ते अपवर्त्तना कहियें तथा [illegible]
ने उदयावलिकानेविपे प्रवेश न करवुं ते उदीरणा [illegible]
रणा निधत्ति निकाचना करणने अयोग्यपणे [illegible]

स्वरूप त्वेव याप्रकृति बध्नाति जीवस्तदनुभावेन प्रकृत्यंतरस्थं दलिकं वीर्यविशेषे
ण यत्परिणमयति ससंक्रम तत्प्रकृतिसंक्रम सामान्यलक्षणावगम्य मूलप्रकृती
ना मुत्तरप्रकृतीना वास्थितेर्यदुत्कर्षणमपकर्षण वा प्रकृत्यतरस्थितौवा नयन
सस्थितिसंक्रम अनुभागसंक्रमोप्येव मेव यत्कर्म्मद्रव्यमन्य प्रकृति स्वभावेन
परिणामेन परिणम्यते सप्रदेशसंक्रम कर्म्मणि कर्म्मांतरानुप्रवेश संक्रम करणात्
उक्तंच मूलप्रकृत्यभिन्ना संक्रमयति गुणतउत्तरा प्रकृती ॥ नचात्मा मूर्तत्वादध्यव
सायप्रयोगेण १ तथा मतांतर ॥ मोत्तूण आउअंखलु, दंसणमोहचरित्तमोहच ॥
सेसाण पयडीण, उत्तरविहिसंकमोभणिउं ॥ २ ॥

उत्कृष्टथी एक भवनेविषे बेवार उपशमश्रेणी पडिवजे तेने नियमा ते भवने
विषे क्षपकश्रेणी न होय अने जे एकवार उपशमश्रेणी पडिवजे तेने क्षपकश्रेणी
पण होय उक्तंच सप्ततिकाचूर्णौ जोदोवारे उवसम, सेढिपडिवज्जई तसानियमा॥तंमि
भवेखवग,स्से ढीनहिजोइक्कस्सि॥१॥उवसम सेढिपडिवज्जइ, तस्सखवगसेढिहुज्जत्ति॥
ए कर्मग्रंथीनो अभिप्राय कह्यो अने सिद्धांताभिप्रायेतो एकभवमां एकजश्रेणी
पडिवजे उक्तंच कल्पाध्ययने॥ एव अप्पडिवडिए, सम्मत्ते देव मणुअ जम्मसुरा॥
अन्नयर सेढिवज्जं, एगभवेणच सव्वाइ ॥ १ ॥ इहा सव्वाइके० सर्व सम्यक्त्व देश
विरत्यादिक अन्यत्राप्युक्त मोहोपशम एकस्मिन् भवेद्दि स्यादसतत ॥ यस्मि
न् भवेतूपशम क्षयोमोहस्य तत्रनइति उपशमश्रेणि

हवे क्षपकश्रेणीनुं स्वरूपकहेछे इहा क्षपकश्रेणीनु पडिवजणहार मनुष्य आठ
वर्षथी उपरनो अविरत देशविरत प्रमत्त अप्रमत्त ए माहेलो कोइ अन्यतम अत्यं
त विशुद्धपरिणामि उत्तम संघयणवालो पूर्वनोजाण अप्रमत्त शुक्लध्यानोपगतें पण
पडिवजे अने बीजातो धर्मध्यानोपगतेंज पडिवजे एमकहेछे पडिवजवानु अनुक्र
म कहेछे अविरति देशविरति प्रमत्तसयत अप्रमत्तसयत ए माहेलोकोइ अन्यतम
प्रथम अत्तरमुहूर्त्ते अनतानुबधियानी चोकडी समकाले खपावे तेनो अनतमभा
ग मिथ्यात्वमांप्रक्षेपीने तेवारपछी मिथ्यात्व तदशेसघातेज समकाले खपावे जेम
अतिसभृत दावानल निर्भे अर्द्धदग्धे इधणातरपामिने बेठनेबालेछे तेरीते ए क्षपक,
पण तीव्रशुभपरिणाम पणाथी सावशेष अन्यत्र प्रक्षेपीने खपावे एमज वली स
म्यक्त्व मिथ्यात्व, पण खपावे तेवारपछी एजअनुक्रमे सम्यक्त्वनेपण खपावे वली
सम्यक्त्वनो चरमस्थितिखम उत्कीर्णयके ए क्षपककृतकरण एवु कहिये एकृतक
रणाद्धानवेविषे वर्त्ततो कोइक कालपण करीने चारगतिमाहे अन्यतमगतियें उपजे

वली लेश्यानेविषे पण पूर्व शुक्ललेश्यानेविषे हतो अने हमणा अन्यतम ले श्यानेविषेजाय तेमाटे प्रस्थापक मनुष्य अने निष्ठापक चारेगतिनेविषेहोय. उक्तंच पठवयगोय मणुस्सो, निठवगो चउसुविगईसु, इहांजो वद्धायु क्षपकश्रेणीप्रतें आ रंभे तो अनंतानुबंधियाना क्षयथी अनंतरमरण संभवतो व्युपरमेंविरमे तेवारप ठी कदाचित् मिथ्यात्वनाउदयथी वली अनंतानुबंधियाने उपचिणे पाठा आरंभे केमकेअनंतानुबंधिनुं बीजजे मिथ्यात्व ते हजी विनाश पाम्युं नथी माटे. अने जेणे मिथ्यादर्शन क्षयकर्युंछे ते उपचिणेनही अनंतानुबंधिया फरीपाठा प्रारंभेनही एट ले अनंतानु बंधियानु वधकरेनही केमके मिथ्यात्वरूप बीज नथी तेमाटे

वली क्षीणसप्तक तो अप्रतिपतित परिणाम माटे अवश्यदेवतामां उप जे अने प्रतिपतित परिणामतो वली नानापरिणाम संभवे तेमाटे जेवो परिणाम होय तेवी चारेगतिमाहेली अन्यतमगति उपजे. उक्तंच वद्धाऊ पडिवन्नो, पढम क सायरकए जइमरिज्जा ॥ तोमिछत्तोदयउ, विणिज्ज भूउन खीणंमि ॥ १ ॥ तमिमकजाइ दिवं, तप्परिणामोय सत्तए खीणे ॥ उवरय परिणामोपुण, पच्छानाणा मईगइउ ॥ २ ॥ वद्धायुपण जो तिवारेकालनकरे तोपण सप्तकक्षीण थयो थको नियमारहे पणव ली चारित्रमोहनीय खपाववाने यत्न नकरे. उक्तंच वद्धाऊ पडिवन्नो, नियमा खीणं मि सत्तएगाइत्ति. इहां कोइपूछेजे मिथ्यादर्शनादिकनो क्षयथयो तेवारे ए क्षपकने सम्यक्त्व रहीत कहियें किंवा सम्यक्त्वसहीत कहीये त्यारेगुरुबोल्या सम्यक्दृष्टीज कहियें फरी परबोल्यो जे कहोजी सम्यक्दर्शननो परिक्षयथयो तो सम्यक्दृष्टीपणुं क्याथीहोय फरी गुरुकहेछे मयणालाटाली चोखाकर्या एवाजे कोइवा ते समान अपनीत मिथ्यात्वभाव एवा मिथ्यात्वना पुंजज तेहिज सम्यक्दर्शन कहिये तेने प रिक्षयेंवली तत्वश्रद्धान लक्षण परिणाम पण्णयोनथी तेमाटे साहमु श्लक्ष्णाभ्रप टल टलवाथी चक्षुदर्शननीपरे विशुद्धितरहोय.

यदाह भाष्यसुधांभोधिः ॥ खीणंमिदंसणतिए, किंहोइ तउनिदंसणाईए ॥ भन्नइ सम्मदिठी, सम्मत्तखए कउ सम्मं ॥ १ ॥ तिभिलीय मयण कुद्दव, रूवमिछत्तमेव सम्मत्तं ॥ खीण तउजोभावो, सदहणा लरकणोतस्स ॥ २ ॥ यद्विवा ॥ जह सुद्ध जलाणुगयं, ड्रईं सुद्दं जलरकएसुतरं ॥ सम्मत्त सुद्ध पुग्गल, परिरकए दंसणं ए वं ॥ ३ तम्मिय तइय चउछे, भवंमि सिझंति खइय सम्मत्ते ॥ सुरनर जुगली सु गई, इमंतु जिण कालिय नराणं ॥ ४ ॥

ए प्रकारे क्षीणसप्तकीनेविषे सम्यक्त्व पामियें जोवली अबद्धायु क्षपकश्रेणीने

आरने तोमसकक्षीणथये नियमा अनुपरत परिणामज चारित्रमोहनीय खपाकवाने
पत्नप्रते आरने उक्तंच नाप्यरुता॥ इयरो अणुवरउच्चिय, सयलिसमाणेति तिहाजे
सक्तनश्रेणीप्रतेकरे तेवा क्षपकने निजनिज नवनेविषे सुरायु नरकायु तिर्यगायु
ए त्रण आउवाअ्यवनेवाजहोय उक्तंच॥ सुरनरय तिरिय आउ, निरय नवे सव्वजी
वाणमिति एहिज कहेले देवायु नारकायु तिर्यगायु लक्षणजे आयुत्रय ते क्षपक
स[illegible] सम्यक्दर्शन अनउोपने एहवोज अप्रत्याख्यानावरण अने प्रत्याख्यानावर
[illegible] कषायरूप आठप्रकृति ते समकालें खपाववाने अर्थे आरने ए प्रकृति अर्द्धस
पार्यंरज अनतगने नामकर्मनी तेरप्रकृति अने त्रण दर्शनावरणनी मली सोलप्र
कृति खपावे तेना नाम कहेले एकेंद्रियजाति, बेइंद्रियजाति, तेंद्रियजाति, चउरिंद्रि
यजाति स्त्यानर्द्धिकत्रिक ते निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, हियणद्धीए, स्त्यानर्द्धिरूप, आ
उद्योतनाम तिर्यग्द्विक, नरकद्विक, थावरनाम, सूक्ष्मनाम, साधारण नाम, आ
तप नाम, तेवारपछी आठ कषायनु जेटलु अवशेष रह्यु होय ते खपावे ए सर्व
अतर्मुहूर्तमात्रे खपावे ॥ सत्रादेश जाणवो

वली धीता [illegible] प्रथम सोलप्रकृतिज खपाववानेअर्थं आरने केवल
[illegible] आठ[illegible] खपाव पछी सोलप्रकृतिखपावे पछी नपुसकवेद पछी स्त्री
वेद पछी हास्यादिषट्क पछी पुरुषवेदना त्रणखंडकरे तेमांथेखंड समकालेखपावे अने
[illegible] पछी हास्यादिषट्क पछी पुरुषवेदना [illegible] क्रम पुरुषप्रतिपत्ति होयतेवारेजाणवो
स्त्रीजोपरक तो [illegible] प्रथम नपुसकवेदकखपावे पछी पुरुषवेद पछी [illegible]
[illegible] स्त्रीजनिराहोय तो प्रथम नपुसक प्रारंभकहोय तेवार ॥ [illegible]
[illegible] पछी स्त्रीवेदखपावे अने जेवारे नपुसक प्रारंभकहोय पछी हास्यादिषट्क पछी नपु
[illegible] पछी स्त्रीवेदखपावे पछी पुरुषवेद पछी हास्यादिषट्क [illegible] प्रत्या [illegible]
[illegible] प्रथम स्त्रीवेदखपावे पछी [illegible] क्रोध मान माया लोभ [illegible] अनन्तमृदु[illegible]
वेद खपावे तवारपछी [illegible] माया लोभ [illegible] पछी [illegible] [illegible]
[illegible] काले [illegible] खपावे अणी पश्चिमाति [illegible] संख्यातागम
[illegible] असंख्यातानेदत्र त्यां लोभना चरमसमयना [illegible]
[illegible] [illegible] तेने खपावे वली तेना चरमसमय तेना असंख्याता
[illegible] [illegible] तेने खपावे वली तेना चरमसमय
[illegible] [illegible] खपावे
[illegible] दर्शन [illegible] निद्रनिद्रावास कहिये त्यांथी त्रण अनिज
[illegible] [illegible] त्यां नग [illegible] त्यांथी [illegible]। अण
[illegible] [illegible] कहिये ते [illegible] चरमनाननना अणु
[illegible] [illegible] [illegible] कहिये तरनी। म
[illegible] [illegible] [illegible] शारिरिया [illegible]

म्यक्त्वपाम्याना जव सहीत चारजव करे अने जेणे कोइपण गतिनु हजी आउ पुंबांध्यु न होय अने क्षायक सम्यक्त्वपामे तो ते जीव तेजजवे क्षपकश्रेणी पूरी करी ने सिद्ध थाय उक्तंच पचसग्रहादौ तइय चउत्थे तम्मिय, जवमि सिज्झति द सणे खीणे ॥ जंदेव नर असखा,उ चरम देहेसु ते हुंति ॥ १ ॥ ए त्रीजी अने चोथी गाथानो अर्थ छे

एक जीवनी अपेक्षाये अथवा नानाजीवनी अपेक्षायें सम्यक्त्वोपयोग जघन्यथी अने उत्कृष्टथी अतरमुहूर्तेज होय अने क्षायोपशमरूप सम्यक्त्व लब्धितो एक जीवने जघन्य अतरमुहूर्त्त अने उत्कृष्टी ठाशठ सागरोपम मनुष्यजवे अधिक होय ते उपरांत सम्यक्त्वथी पमेनही तो नियमासीजे ए एकजीव आश्रीने कह्यु अने नानाजीवआश्रीतो क्षायोपशम सम्यक्त्व सदासर्वदा होय यडुक्त दोवारे विजया इसु, गयस्सतिन्नच्चुए अहव ताइ ॥ अइरेग नरजविय, नाणा जीवाण सवध्दा ॥ १ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ए ॥ एटली गाथाउनो अर्थ छे

हवे सम्यक्त्वनु अतरते सम्यक्त्वथीपमीने पाछु फरी सम्यक्त्वपामे तो केटले कालें पामे इत्यादिक स्वरूप कहेछे ते अतर जघन्यथी तो अतर मुहूर्त्तछे एटले कोइकजीव सम्यक्त्व गयापछी वली पाछु तदावरणना क्षयोपशमथी अतरमुहूर्त्त मात्रेज सम्यक्त्व पामे अने उत्कृष्टथी आशातना प्रचुरने अर्द्धपुद्गलपरावर्त्तनु अतर पडे उक्तंच तिछयर पवयणसुअ, आयरियं गणहर महड्ढीअ ॥ आसायतो बहुसो, अणत ससारिउंहोइ॥१। इहा काइकन्यून अर्द्धपुद्गल परावर्त्तरूपअनतससारजाणवो

हवे ते पुद्गलपरावर्त्त केतलेकालेहोय तेनु स्वरूप कहेछे अनति अवसर्पिणी उत्सर्पिणीए एक पुद्गलपरावर्त्तहोय तेवा पुद्गल परावर्त्त अनता अतीतथया अ ने अनता अनागतथसे हवे ए पुद्गलपरावर्त्त इव्य क्षेत्र काल जाव जेदे चारप्रकारे थाय तेवली एकेको सूक्ष्म अने बादर एवे प्रकारे करता आठप्रकार थायते कहेछे

तेमा प्रथम इव्यथी सूक्ष्म अने बादर ए बे जेदकहेछे औदारिकपणे वैक्रियपणे तेजसपणे जाषापणे सासोश्वासपणे मनपणे कार्म्मणपणे ए सातपणे सर्वचतुर्द सरज्जु गत परमाणुउप्रते आत्मा फरसे तेवारे इव्यथी बादर पुद्गलपरावर्त्त थाय यडुक्त स्तोत्रादौ औदारिक वैक्रिय ते, जस जाषाप्राणचित्तकर्म्मतया ॥ सर्वाणुपरि णतेर्म्मे, स्थूलोजूत् पुद्गलावर्त्त ॥ १ ॥ अन्यत्राप्युक्त जापोच्छ्वासमनस्तेज , क र्म्मौदारिकवैक्रिया ॥ स्पृष्टायत्पुद्गला मुक्ता, इव्यत सेष बादर ॥ १ ॥

ए औदारिकादिक सात माहेथी एकेक औदारिक शरीरादिकपणे प्रत्येके सर्वचतु

तेम स्थूल परमाणुउने जीवकरमीने अनुक्रमेमूके तेवारे द्रव्यथी सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्तथाय एटले एकआचार्यनामतमांहेता सर्वपरमाणु पुद्गलने औदारिकशरीरपणे परिणमावे पछीवली तेमज सर्वपरमाणुपुद्गल वैक्रियशरीरपणे परिणमावे एमज तेजस शरीरपणे भाषापणे श्वासोश्वासपणे मनपणे कार्म्मणशरीरपणे प्रत्येके अनुक्रमे आत्मापरिणमावे तेवारे द्रव्यथी सूक्ष्मपुद्गल परावर्त्तथाय अने केटलाएक आचार्यने मतनो ए सातमांहेला औदारिक वैक्रिय तेजस ने कार्म्मण ए चारशरीर मांहेलुं गमेते एकशरीरपणे सर्वपुद्गल परमाणुआ प्रते आत्मा अनुक्रमे फरसीने मूके पणइहां व्युत्क्रमे फरस्याते लेखामां गणायनही जे अनुक्रमे फरस्याते ज परमाणुआ लेखामांगणाय तेवारे द्रव्यथी सूक्ष्मपुद्गलपरावर्त्तथाय यदुक्तं तत्त्वतर्कककेनच, समस्त परमाणु परिणतेर्यस्य: संसारे संसरतः सूक्ष्मोमेजिनतदावर्त्तः॥१॥ मतांतरेतु सूक्ष्मस्त्वेकेन कायेन स्पृष्टासर्वेपि पुद्गला येनुक्रमेण मुक्तास्तिगण्यंते व्युत्क्रमेणतु ॥२॥

हवे क्षेत्रथी सूक्ष्म अने बादर ए बे प्रकारनो पुद्गल परावर्त्त कहेछे जेटला लोकाकाशना प्रदेश छे तेटला सर्व आकाशप्रदेशें जीवमरणपामे एटलानवे मरणेकरीने जीव क्रमोत्क्रमे जेम तेमकरीने फरसे एटले जेटला लोकाकाशनाप्रदेशछे तेटला सर्वआकाशप्रदेश जेम तेम मरणेकरी फरसे तेवारे क्षेत्रथी स्थूल पुद्गल परावर्त्तथाय

अने जेवारें एक आकाशप्रदेशनेविषे जीवमरीने तदनंतर बीजा आकाशप्रदेशनेविषे मरे तेवारे ते मरणाश्रित आकाशप्रदेश लेखामांगणाय पण तृतीयादिक आकाशप्रदेशेमरे ते आकाशप्रदेश लेखामांगणायनही जोडना पासेना आकाशप्रदेशेमरे तेहिज आकाशप्रदेश लेखामांगणाय एम अनुक्रमें सर्वलोकाकाशना प्रदेश मरणेकरीने फरसे तेटलेकाले क्षेत्रथी सूक्ष्मपुद्गल परावर्त्तथाय यदुक्तं लोकाकाशप्रदेशाये म्रियमाणेन जंतुना ॥क्रमोत्क्रमेण संस्पृष्टा, स्स्थूलः क्षेत्रतोभवेत्॥॥१॥ मृत्वाक्षेत्रपदेकत्र, म्रियततदनंतरं॥ क्रमेणजीव सर्वत्र, क्षेत्रेसूक्ष्मः सउच्यते २

हवे कालथी सूक्ष्म अने बादर पुद्गलपरावर्त्त कहेछे जेटला उत्सर्प्पिणीनेविषे समयहोय तेटला समय क्रमे अने उत्क्रमे अनुक्रमे अने अननुक्रमे जीव मरणेकरीने व्यापे फरसे तेवारे कालथी स्थूलपुद्गल परावर्त्त थाय.

अने ते उत्सर्प्पिणीने पहेले समयेमरीने वली बीजी उत्सर्प्पिणीनाबीजे समये मरे तेवारे ते समयलेखामांगणाय पण बीजी उत्सर्प्पिणीने त्रीजे अथवा पहेलेसमयें मरे ते लेखामां गणाय नही वलीत्रीजी उत्सर्प्पिणीने त्रीजेसमये तो तेसमये लेखामां गणाय पण पूर्वने बीजे चोथे प्रमुख समयमांमरे

नावे एरीते जेटला एक उत्सर्प्पिणीना समयहोय तेटलासर्व समय अनुक्रमे
करीने फरसे तेवारे तेटले काळें काळथी सूक्ष्मपुद्गल परावर्त्तथाय यदुक्त याव
त्सर्प्पिण्यांस्तु , समयास्तान् स्वमृत्युना ॥ क्रमोत्क्रमेणव्याप्नोति, सस्थूल काल
नवेत् ॥ १ ॥ प्रथमे समये मृत्वोत्सर्प्पिण्यांस्तदनतर ॥ म्रियते यदि सर्वत्र, अ
त्सूक्ष्म सकालत ॥ २ ॥

हवे नानथी सूक्ष्म अने बादर पुद्गलपरावर्त्त कहेछे इहां जगतमां एक समय
विषे जे पृथवीकायादिकनाजीव सूक्ष्म अग्नीकायमा ऊपजेछे ते जीव केटलाक
जेछे असरव्येय लोकाकाशप्रदेश रासीप्रमाण ऊपजेछे एटले अलोकमाहे चऊदरा
जलोकना जेवा असरव्याता लोक कल्पीये ते असरव्याता चऊदराजलोकना जेट
ला आकाशप्रदेशथाय तेटलाजीव एकसमयनेविषे पृथ्वीकायादिकमाथीचवीने सूक्ष्म
अग्नीकायनेविषे ऊपजेछे ते जे पृथिव्यादिकथी अने बादर अग्निकायथी चवीने
एकसमयनेविषे सूक्ष्म अग्निकायपणे ऊपजेछे ते लेवा पण जे सूक्ष्मअग्निकायप
णे पूर्वेऊपनाछे वली तेहिजमरीने सूक्ष्मअग्निकायपणे ऊपजेछे ते लेवानही केम
के ते तो पूर्वेच सूक्ष्मअग्निकायपणे रह्याछे ते केटलाछे एकसमयनेविषे जे सूक्ष्म
अग्निकायनाजीव ऊपजेछे तेथी असरव्यातगुणा पूर्वे ऊपना सूक्ष्मअग्नीकायना जी
वछे तेकेमके एक सूक्ष्मअग्निकायनोजीव ऊपनोथको अतरमूहुर्त्तसुधी जीवेछे अ
ने अतरमूहुर्त्तमा जेटला समयछे ते समयसमयमा प्रत्येके पूर्वोक्त असरव्येयलोका
काशप्रदेशप्रमाण सूक्ष्म अग्निकायपणे जीवो ऊपजेछे तेमाटे एकसमयमा सूक्ष्मअग्नि
कायना जे जीवऊपजेछे तेथी तेजकायनेविषे पूर्वे ऊपजेलाजीव असरव्यातगुणाछे

एटले एकसमयनविषे ऊपना ते तथा अतरमूहूर्त्तमाहे जे पूर्वे ऊपनाछे तेसर्व
जेनाकराय तनाज सरव्याथाय ते सर्वसरव्याथी तेजजीवोनो कायस्थिति एटले तेहि
ज कायनविषे मरीने अवतरवु तेरूप कायस्थिति असरव्यातगुणीछे केमके एकेक
सूक्ष्म अग्निकायनाजीवनी असरव्येय उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणी प्रमाण काय स्थि
ति कहीछे माटे एनीते कायस्थितिथीपण सयमस्थानक अने अनुभागबधस्थान
क प्रत्येक असरव्यातगुणाछे एटले कायस्थितिथी सयमस्थानक असरव्यातगुणा
अने अनुभागबधस्थानकपण असरव्यातगुणाछे अने ए न माहोमाहे ता तुल्यछे
एटले जेटला सयमस्थानक तेटलाज अनुभागबध स्थानकछे अने कायस्थितिनी
अ असरव्याता स्थितिबधछे अने एकेक स्थितिबधनविषे असरव्याता अनुभागबध

सरूप कहने

अनुभागबंध स्थानकते कोनेकहियें जे एक कपायिक अध्यवसायेंकरीने ग्र ह्याजे कर्मपुद्गल तेनुं विवक्षित एकसमय बंध रस समुदाय परिमाण तेने अनुभा गबंध स्थानककहीयें ते अनुभागबंधस्थानक केटलाछे तो के चऊदराजलोक जे वो एकलोकाकाश तेवा असंख्याता लोकाकाश अलोकमां कल्पीये तेना जेटलाप्र देशछे तेना जेटलाछे ते अनुभागबंधस्थानकना निष्पादक एटले नीपजावनार जे कपायोदयरूप अध्यवसाय विशेप ते पण अनुभागबंध स्थानक कहिये तेपण ते टलाजछे जेटलेकाले क्रमोत्क्रमे करीने सर्व अनुभागबंधाध्यवसायनेविपे वर्त्ततोथ को जीव मूउ होय तेवारे तेटलेकाले बादर भाव पुद्गलपरावर्त्तथाय.

कोइकजीव सर्वजघन्य कपायोदयरूप अध्यवसाय स्थानकनेविपे मरणपाम्यो तेवारपछीजो तेहिजजीव अनंताकालपछी पण ते प्रथम स्थानकथकी अनंतरवी जा अध्यवसाय स्थानकनेविपे वर्त्ततोथको मरणहृपामे ते मरणने लेखामांगणियें पण बीजा उत्क्रमभावी अनंतामरण पण लेखामां न आवे एरीते अनुक्रमे सर्व अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थानक जेटलेकाले मरणेकरीने फरसे तेटले कालें सूक्ष्म भाव पुद्गल परावर्त्त कहिये इहां क्षेत्रथकी सूक्ष्म पुद्गलपरावर्त्त मार्गणानेविपे लेवुं ने बीजा पुद्गलपरावर्त्ततो परूपणा मात्रछे.

यडुक्तः— एक समयंमि लोए, सुहुमगणिजिआउ जे उपविसंति ॥ तेहुंति असं खलोग, पएस तुल्ला असंखिज्जा ॥ १ ॥ तत्तो असंख गुणिया, अगणिक्कायाउ ते सि कायठिई ॥ तत्तो संयम अणुभा,ग बंधठाणाण संखाणि ॥ २ ॥ ताणिमंतरेण जया, पुठाणि कमुक्कमेण सव्वाणि ॥ भावंमि बायरोसो, सुहुमो अकमेण बोधव्वो ॥ ३ ॥ अन्यत्राप्युक्तं ॥ भावेथ समये जीवाः पृथ्वीकायपुरस्सराः ॥ सूक्ष्मेषु तेजः कायेषु यावंत. प्रविशंतिहि॥१॥ इहते स्युरसंख्येय लोक प्रदेशतुल्यकाः॥असंख्यातास्त तः पूर्वोत्पन्नाः कायस्थितिस्ततः ॥ ततःस्थानान्यसंख्यानि संयमाध्यवसाययो. ॥ तानिस्पृष्टशेषयदाजीवः किलगच्छन् भवांतरे ॥ ३ ॥ बादरोव्युत्क्रमेणायं ज्ञेयः सूक्ष्मक्र मेणतु ॥ अत्रक्षेत्र परावर्त्तणा विकार.परैर्नतु. ॥ ४ ॥

ए प्रकारे सम्यक्त्वरहित थको एणेजीवे अव्यवहार रासीमांहे एवां पुद्गलपरा वर्त्त अनंताकस्या तेहिजजीव महताकष्टे व्यवहाररासीपाम्यो त्यां व्यवहाररासीमां पण केटलाक कालसुधीरहेछे माटे हवे इहां प्रसंगे कायस्थितिनुं काइक स्वरूपकहेछे.

तिर्यंचनी गति असंज्ञिया एकेंद्री वनस्पति अने नपुंसक एटला मांहे एक आ वलिकाने असंख्यातमेंभागें जेटलासमयहोय तेटला पुद्गलपरावर्त्त उत्कृष्टोरहे एक

नावे एरीते जेटला एक उत्सर्प्पिणीना समयहोय तेटलासर्व समय अनुक्रमे
करीने फरसे तेवारे तेटले काळें काळथी सूक्ष्मपुद्गल परावर्त्तथाय यडुक्त याव
त्सर्प्पिण्यास्तु , समयास्तान् स्वमृत्युना ॥ क्रमोत्क्रमेणव्याप्नोति, सस्थूल काउ
भवेत् ॥ १ ॥ प्रथमे समये मृत्वोत्सर्प्पिण्यांस्तदनतर ॥ म्रियते यदि सर्वत्र, क्र
त्सूक्ष्म सकाळत ॥ २ ॥

हवे भावथी सूक्ष्म अने बादर पुद्गलपरावर्त्त कहेछे इहां जगतमा एक समय
विषे जे पृथवीकायादिकनाजीव सूक्ष्म अग्नीकायमा ऊपजेछे ते जीव केटलाऊप
जेछे असंख्येय लोकाकाशप्रदेश रासीप्रमाण ऊपजेछे एटले अलोकमाहे चउदरा
जलोकना जेवा असंख्याता लोक कल्पीये ते असंख्याता चउदराजलोकना जेट
ला आकाशप्रदेशथाय तेटलाजीव एकसमयनेविषे पृथ्वीकायादिकमाथीचवीने सूक्ष्म
अग्नीकायनेविषे ऊपजेछे ते जे पृथिव्यादिकथी अने बादर अग्निकायथी चवीने
एकसमयनेविषे सूक्ष्म अग्निकायपणे ऊपजेछे ते लेवा पण जे सूक्ष्मअग्निकायप
णे पूर्वेऊपनाछे वळी तेहिजमरीने सूक्ष्मअग्निकायपणे ऊपजेछे ते लेवानही केम
के ते तो पूर्वेंज सूक्ष्मअग्निकायपणे रह्याछे ते केटलाछे एकसमयनेविषे जे सूक्ष्म
अग्निकायनाजीव ऊपजेछे तेथी असंख्यातगुणा पूर्वें ऊपना सूक्ष्मअग्नीकायना जी
वछे तेकेमके एक सूक्ष्मअग्निकायनोजीव ऊपनोथको अंतरमूहुर्त्तसुधी जीवेछे अ
ने अंतरमूहुर्त्तमा जेटला समयछे ते समयसमयमा प्रत्येके पूर्वोक्त असंख्येयलोका
काशप्रदेशप्रमाण सूक्ष्म अग्निकायपणे जीवो ऊपजेछे तेमाटे एकसमयमा सूक्ष्मअग्नि
कायना जे जीवऊपजेछे तेथी एजकायनेविषे पूर्वें ऊपजेलाजीव असंख्यातगुणाछे

एटले एकसमयनेविषे ऊपना ते तथा अंतरमूहूर्त्तमाहे जे पूर्वें ऊपनाछे तेसर्व
भेलाकरीये तेनीजे संख्याथाय ते सर्वसंख्याथी तेजजीवोनी कायस्थिति एटले तेहि
ज कायनेविषे मरीने अवतरवु तेरूप कायस्थिति असंख्यातगुणीछे केमके एकेक
सूक्ष्म अग्निकायनाजीवनी असंख्येय उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणी प्रमाण काय स्थि
ति कहीछे माटे वळीते कायस्थितिथीपण संयमस्थानक अने अनुभागबंधस्थान
क प्रत्येके असंख्यातगुणाछे एटले कायस्थितिथी संयमस्थानक असंख्यातगुणा
अने अनुभागबंधस्थानकपण असंख्यातगुणाछे अने ए बे माहोमांहे तो तुल्यछे
एटले जेटला संयमस्थानक तेटलाज अनुभागबंध स्थानकछे अने कायस्थितिनी
असंख्याता स्थितिबंधछे अने एकेक स्थितिबंधनेविषे असंख्याता अनुभागबंध
स्थानकछे तेनोज स्वरूप कहेछे

अनुजागबंध स्थानकते कोनेकहियें जे एक कषायिक अध्यवसायेंकरीने ग्रहाजे कर्मपुद्गल तेनुं विवक्षित एकसमय बंध रस समुदाय परिमाण तेने अनुभागबंध स्थानककहीयें ते अनुभागबंधस्थानक केटलाछे तो के चउदराजलोक जेवो एकलोकाकाश तेवा असंख्याता लोकाकाश अलोकमां कल्पीये तेना जेटलाप्रदेशछे तेना जेटलाछे ते अनुभागबंधस्थानकना निष्पादक एटले नीपजावनार जे कषायोदयरूप अध्यवसाय विशेष ते पण अनुभागबंध स्थानक कहियें तेपण तेटलाजछे जेटलेकाले क्रमोत्क्रमे करीने सर्व अनुभागबंधाध्यवसायनेविषे वर्त्ततोथको जीव मूर्ड होय तेवारे तेटलेकाले बादर भाव पुद्गलपरावर्त्तथाय.

कोइकजीव सर्वजघन्य कषायोदयरूप अध्यवसाय स्थानकनेविषे मरणपाम्यो तेवारपछीजो तेहिजजीव अनंताकालपछी पण ते प्रथम स्थानकथकी अनंतरबीजा अध्यवसाय स्थानकनेविषे वर्त्ततोथको मरणनेपामे ते मरणने लेखामांगणियें पण बीजा उत्क्रमभावी अनंतामरण पण लेखामां न आवे एरीते अनुक्रमे सर्व अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थानक जेटलेकाले मरणेकरीने फरसे तेटले कालें सूक्ष्म भाव पुद्गल परावर्त्त कहिये इहां ग्रंथकर्त्ता सूक्ष्म पुद्गलपरावर्त्त मार्गणानेविषे लेवुं ने बीजा पुद्गलपरावर्त्ततो परूपणा मात्रछे

यदुक्तं – एक समयंमि लोए. सुहुमगणिजियाउ जे उपविसंति ॥ तेहुंति असंखलोग, पएस तुल्ला असंखिज्जा ॥ १ ॥ तत्तो असंख गुणिया, अगणिकायाउ तेसि कायठिई ॥ तत्तो संयम अणुभाग बंधठाणाए संखाणि ॥ २ ॥ ताणिमंतरेण जया, पुठाणि कमुक्कमेण सव्वाणि ॥ भावंमि बायरोसो, सुहुमो अकमेण बोधो ॥ ३ ॥ अन्यत्राप्युक्तं ॥ भावेष समये जीवा. पृथ्वीकायपुरस्सरा. ॥ गच्छन्तु तेजःकायेषु यावत प्रविशंतिहि॥१॥ इहते सुस्संख्येय लोक प्रदेशतुल्यका ॥असंख्यातास्त पूर्वोत्पन्ना कायस्थितिस्ततः ॥ तत स्थानान्यसंख्यानि संयमाध्यवसायपो ॥ तानिस्पृष्टोयदाजीव स्त्रिजगज्जन्तु भवांतरे ॥ ३ ॥ बादरोऽसौक्रमेणायं ह्येषः सूक्ष्मक्रमेणतु ॥ भवक्षेत्र परावर्त्तना विरार पर्यन्तु ॥ ४ ॥

ए प्रकारे सम्यक्त्वरहित पणो एटलेजीवे अध्यवसाय गर्भीभाव त्यां पुद्गलपरावर्त्त अनंताकर्या तेहिजजीव समकितस्पर्शनाथी अपार्धपुद्गलपरावर्त्तनी पण केटलाक न्यूनतानें माटे हवे इहां सम्यक्त्वने विषे [illegible]

निर्यंचनी गति [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

आवलिकाना पण असंख्यातासमय अने आवलिकाना असंख्याताजागनापण अ संख्याता समय जाणवा कारणके असंख्यातु असंख्याते नेदेछे

हवे व्यवहाररासीमां आव्यापछीपण सूक्ष्मपणे केटलो काजरहे ते कहेछे पृथ्वी अप तेज वाउ अने वनस्पति ए पाच सूक्ष्ममा सामान्यपणे असंख्याता लोकाकाश प्रदेशप्रमाण उत्सर्पिणी अने अवसर्पिणी काजलगे रहे एकसूक्ष्ममा रहे तोपण एटलोज काल अने पांचसूक्ष्ममारहे तोपण एटलोज काजजाणवो

हवेबादरमां सामान्यपणे रहेतो केटलो कालरहे तेकहेछे बादरमां अने बादरवनस्पतिमां अंगुलने असंख्यातमेनागे जेटलाप्रदेशहोय तेटलीउत्सर्पिणी अवसर्पिणीका ललगेरहे अनेबादरनिगोदमा अढीपुजल परावर्त्तरहे अनेपृथ्वीकाय अपकायतेउकाय वाउकाय प्रत्येक वनस्पतिकाय अने निगोदमां सितेर कोमाकोमी सागरोपम लगेरहे

हवे विगलेंडी अने सामान्यपणे पर्यातोबादर एकेंडी एमां केटलोकाजरहे ते कहेछे बेंडी तेंडी चोरेंडीमां संख्यातावरस सहस्त्रसुधीरहे अने सामान्यपणे पर्यातोबादर एकेंडी माटी पाणी वायरो प्रत्येक वनस्पति मांपण संख्यातावरस सहस्र सुधिरहे

हवे बादरपर्याप्ता अग्निकाय अने विगलेंडी तेनो काईक विशेपकहेछे बादर अग्निकायनी नवस्थिति उत्कृष्टीतो त्रणअहोरात्री अने कायस्थिति उत्कृष्टीतो निरतर सर्वनवकाल सकलनायें संख्याता दिवसनी जाणवी अने बेंडीमाहे नव स्थिति बारवर्षनी अने कायस्थिति सर्वनव काल सकलनायें संख्याता वरस होय अने तेंडीमांहे उंगणपचासदिवश नवस्थिति ते एकनवनो उत्कृष्टो आउपानोकाल छे अने कायस्थिति सर्वनवसकलनायें संख्यातादिवशनी छे वली चउरंडीमा उत्कृष्टी छ महीनानी नवस्थिति एकनवआयुरूपछे अने कायस्थिति तो संख्याता महीनानी छे अने त्रस माहेतो बे सहस्रसागरोपम संख्यातेवरसे अधिक कायस्थितिछे

हवे पचेंडीनु सामान्य विशेपपणे कायस्थितिनु स्वरूपकहेछे पचेंडीमाहे पचेंडीपणेजीवरहेतो उत्कृष्ट एकहजार सागरोपम जाजेरुरहे अने देव तथा नारकीमा नवस्थिति अने कायस्थिति तेपण तेंत्रीससागरोपमज जाणवा सन्नीया अने पुरुपवेदमांहे बसे सागरोपमथी मान्दीने नवसे सागरोपम जाजेरानी कायस्थिति छे सन्निया तिर्यंच सन्निया मनुष्यमांहे त्रणत्रण पल्योपम सातपूर्वकोडी सहित कायस्थितिहोय अने स्त्रीवेदमाहे एकशोदशपल्योपम अने पूर्वकोमी पृथक्त्वें अधिक एटली कायस्थितिहोय तथा स्त्रीवेद अने नपुसकवेदमां जघन्यतो एकसमय ते उपशमश्रेणीआश्रीने होय अने शेपवीजायाकताने जघन्यकाल अंतरमूहुर्त्त

अपर्याप्ताने जघन्य अने उत्कृष्टो पण अंतर मुहूर्त्तकाल पर्याप्ता सूक्ष्म अने बादर अनंत कायने जघन्य अने उत्कृष्टो अंतरमूहूर्त्तज काल जाणवो.

यडुक्तं कायस्थिति विचारस्तोत्रे अव्ववहारियमज्जे, नमिऊण अणंत पुग्गल परट्टे ॥ कहवि ववहाररासिं, संपत्तोंनाहतठविय ॥ १ ॥ उक्कोसंततिरियगइ, असंन्नि एगिंदिवण नपुंसेसु ॥ नमिउ आवलि असंखि, नागसमपुग्गल परट्टी ॥ २ ॥ नामन्ने सुहमत्ते, तस्सप्पिणिउ असंखलोगसमा ॥ नमिउ तहपिहुसुहमे, पुढविजलजलण पवणवणे ॥ ३ उहेण बायरत्ते, तह बायरवणस्सई सुताउ पुणो ॥ अंगुलअसंखजागो, दोगरूपरट्टयनिगोए ॥ ४ ॥ बायरपुढविजलजलण, पवणं पत्तेयवणनिगोएसु ॥ सत्तरि कोडाकोडी, अयराणंनाह नमिउहं ॥ ५ ॥ संखिज्जवास सहस्से, बितिचउरिंदीसुउहउअतहा ॥ पज्जत्त बाय रेगिंदिभूजलानिल परित्तेसु ॥६॥ बायरपज्जिगबिति चउ, रिंदिसुसंखदिणवास? उमासा; संखिज्जवास अहिया, नरं सुहोलागरसहस्से ॥ ७ ॥ अयरसहस्संअहियं, पणिंदिसुतितीसअयरसुरनिरए ॥ सन्निसुतहपुरिसेसु, अयरसयपुहुत्तमप्पहियं ॥ ८ ॥ सन्नितिरिनरेसु पुढो, पल्लतिगं सत्त पुव्व कोडिजुअं ॥ दसहिय पलिय सयं, थी सु पुव्वकोडि पुहुत्तजुअं ॥ ९ ॥ [illegible] हि नपुगे समउ, जहन्नो अंतो मुहुत्तसेसेसु ॥ अपज्ज सुक्कोसंपिय,पज्ज [illegible] ल अणंतेवि ॥ १० ॥ ए कायस्थितिकही

हवे प्रसंगागत नवसंबंध परस्परे नवगणनारूप कहेले:-परनवनुं [illegible] उत्कृष्ट अने जघन्य आयुने नेदेकरी चारनांगाथाय तेकेवीरीतेके [illegible] उत्कृष्ट अने परनवनुंपण उत्कृष्ट, ज्यां अवतरे त्यां जघन्य अने [illegible] घन्य, ज्यां अवतरे त्यां उत्कृष्ट अने परनवनुं जघन्य, ज्यां [illegible] अने परनवनुं उत्कृष्ट, ए चारनांगाजीवने नवगणनाये जाणवा.

सन्निउमनुष्य अने संन्निउतिर्यंच ठ नरकमां उत्कृष्टो [illegible] जाय; सन्निउ मनुष्य अने सन्निउ तिर्यंच ते नवनपति [illegible] ठमां देवलोकसुधी आठनव एकांतरित उत्कृष्टोजाय [illegible] वा; तिर्यंच सातमीनरके सातवारजाय अने पुरुष [illegible] घन्यतो त्रणनवथाय, नवग्रैवेयक अने आनंत [illegible] रेदेवलोक लगे सातनवहोय; चारअनुत्तरमां [illegible] होय, अनेसर्वार्थसिद्धि जघन्य अने उत्कृष्ट [illegible] न्य, अने उत्कृष्टपण बे नवजहोय, इहां [illegible]

युगलिया तिर्यंच तथा मनुष्य ते नवनपति व्यंतर ज्योतषी अने बे देवलोकना देवतामां जाय, पण इहा उत्कृष्ट अने जघन्यबेजनवहोय, असन्नि पर्याप्तोतिर्यंच ते प्रथमनरके अने नवनपति तथा व्यंतरमां उत्कृष्ट तथा जघन्य बेजनवहोय

आठवेदेवलोकना देवता अने छ नरकनानारकी ते पर्याप्ता अपर्याप्ता सन्निया तिर्यंच तथा मनुष्यमां उत्कृष्टा आठनवकरे, सातमि नरकना नारकी तिर्यंचमां छ नवकरे अने पूरण आउपे चारनवकरे, नवग्रैवेयकना देवता अने नवमाथी बार मांदेवलोकसुधीना चार देवलोकना देवता पर्याप्ता सन्निया मनुष्यमां छ नवकरे

चार अनुत्तर विमानना देवता मनुष्यमां चारनवकरे अने जघन्यथी बे नवकरे, तथा सर्वार्थसिद्धिना देवताने जघन्य अने उत्कृष्ट बेज नवहोय, नवनपति व्यंतर ज्योतषी अने बे देवलोकना देवताने माटी पाणी प्रत्येक वनस्पतिमां जघन्य अने उत्कृष्ट बे नवहोय असंख्याता आउखावाला युगलिया तिर्यंच अने मनुष्यमांहे सन्नि असन्नि तिर्यंच अने सन्नि मनुष्य मिथ परस्परे बेनवजाणवा.

माटी पाणी वायु अने अग्नि एना जीव वनस्पति पृथ्व्यादिकमांहे मिथ परस्परें असंख्यातो कालरहे. अने पृथ्व्यादिकजीव वनस्पतिमांहे असंख्यातोकालरहे अने वनस्पतिनाजीव वनस्पतिमांहे अनंतोकालरहे, विगलेंद्रीनाजीव पांचपृथ्व्यादिकमांहे संख्यातो कालरहे पांच पृथ्व्यादिकना जीव विगलेंद्रियमां संख्यातो काल रहे, विगलेंद्रीनाजीव विगलेंद्रीमांहे संख्यातो कालरहे, उत्कृष्टआउपे त्रिनागे आव नवजाणवा, जघन्यतो सघले बे नवजाणवा

सन्निया असन्निया तिर्यंच तथा मनुष्यने विगलेंद्रीअने पांच पृथ्व्यादिकमां आवनव थाय, मनुष्य अने तिर्यंचमांहे विगलेंद्रीअने पृथ्व्यादिकना जीव आवनवथावे, ए विद्धांत जाणवा, वली वायु अने अग्नीमां मनुष्यने उत्कृष्ट अने जघन्य तो बेज नव होय, एनि परनव अने ते नवना आयुनो संबंध तेनी बंधस्थिति त्रिहुनागे जघन्य अने उत्कृष्ट अनुक्रमे कही

उक्तंच तत्रैव कायस्थितिविचार स्तोत्रे – परनव तप्रवयाऊ, लहु गुरु चउगइ सन्निनरतिरिए ॥ नग्यतगे उक्कोस, इक्कतर नमइ अठनवे ॥ १ ॥ नवणवणजोइ कप्प.ठ गेविज्ज अठनवाउ दु जहन्ना, सगमत्तमीइतिरिए, पण पुणाउ यतिजहन्ना ॥ २ ॥ गेविज्जाणय चउगे, मग पणणुत्तर चउक्किनिजहन्ना ॥ पज्जा तरोति सयठ दुहाउनरन मनमाइ पुणो ॥ ३ ॥ दुजुगलिय तिरियमणुआ ॥ दुनरा नवणजोइ कप्पदुगे ॥ यपणाउक नवणवणे, इह दुनर असन्नि पजतिरिए ॥ ४ ॥ पज स

न्नि तिरिनरेसुय, सहसारंता सुराय ह्रनिरया ॥ अडनव सत्तम निरया, तिरिये ठ नव चकपुसा ॥ ५ ॥ पज सन्निनरे ठ नवा, गेविज्जाणय चउक्कदेवाय ॥ चउणुत्त रे चउ नवा ॥ डुजहन्न डुहावि सव्वहा ॥६॥ नूजल वणे सु डुनवा, डुहावि नव णवण जोइस डुकप्पा ॥ उमियाउतिरि नरेतह, मिय सन्नियरति सन्निनरा ॥ ७ ॥ नूजल पवग्गि मिहवणा, जुवाइ सुवणेसु अन्नवाई ॥ पूरंति असंख नवि, वेवणीणहु, अणंतनवे. ॥८॥ पण पुढवाइ सुविगला, विगलेसु अ नवाइ विगलि संखनवे ॥ गु रु आउत्ति नंगेपुण, नवठ सव्वठ जहन्ना ॥ ९ ॥ मिहसंन्नियर तिरिनरा, विगलन्नु वाइ सुयनर तिरिसुए ए ॥ अमनवा चउनंगे, डुह पवणग्गिसु नराउ नवा ॥ १० ॥ परतप्नवाउ माणा, इह पउसंवेह कणवंधठिई ॥ कित्तिय विन्नविउमलं, चउनंग [illegible] हनुको सकमा ॥ ११ ॥ ए दशमीगाथानो अर्थछे. नानाजीवनी अपेक्षायें [illegible] नहोय इत्यादिक आवश्यकवृत्तिमां कह्युंछे ए इग्यारमी गाथानो अर्थ छे.

अथवा एहिज सम्यक्त्व अनेकविध कहियें यदाहुः एगविह डुविह [illegible] चउहा पंचविह दसविहं सम्मं ॥ दव्वा इकारगाइ, उवसम नेएहिं [illegible] एगविहं सम्मरुई, निसग्ग हिगमेहिं तं नवे डुविहं ॥ तिविहं तस्स [illegible] कुकार गाईयं ॥ २ ॥ खइयाइ सासणजुअं, चउहा वेयग जुअं [illegible] वरम पुग्गल, वेयणाउ दसविहंएवं ॥ ३ ॥

अथवा उत्तराध्ययनना अगावीसमां अध्ययनमां ए [illegible] सग्गुवेएसरुई, आणरुई सुत्त वीयरुइ मेव ॥ अनिगम [illegible] धम्मरुई ॥ १ ॥ नूअछेणा हिगया, जीवाजीवाय पुण्ण [illegible] संव, रोय परोएइ उनिसग्गो ॥ २ ॥ जोजिणदिठ्ठेनावे, [illegible] एमे अन्न न हत्तिअ, सनिसग्गरुइत्ति नायव्वो ॥ ३ ॥ [illegible] परेण सद्दहई ॥ ठउमत्ते णजिणेण व. उवएस [illegible] मोहो, अन्नाणं जस्स अवगयंहोई ॥ आणाए [illegible] ॥ ५ ॥ जोसुत्तमहिज्जंतो, सुएण उगाहईउ सम्मत्तं ॥ [illegible] यव्वो ॥ ६ ॥ एगेण अणेगाई, पयाइ जो [illegible] वीयरुइत्ति नायव्वो ॥ ७ ॥ मोहोइ अनि [illegible] रस अंगाई ॥ पइन्नगं दिठ्ठिवाउअ ॥ ८ ॥ [illegible] उवलद्धा ॥ सव्वाहि नयविहीहिं. [illegible] तवविणए सव्वसमिइ गुत्तीसु ॥ [illegible]

॥१०॥ अणनिग्गहिय कुदिठी, सखेवरुइत्ति होइनायवो , अविसार उपवयणे, अण तिग्गहियो अ सेसेसु ॥११॥ जो अत्थिकायधम्मो, सुअखलुचरित्त धम्मच, सद्दहइ जिणाभिहिय, सोधम्म रुइत्ति नायवो ॥ १२ ॥ हवे ए गाथानो विपमार्थ लेशमात्र कहेछे नूअठत्ति सद्भूताअमीअर्थाइ सद्भूतार्थेत्वे न सहसमत्याजातिस्मृति प्रति भादिरूपया सद्भूत ए अर्थ जाणवाने प्रथम सप्तभगीनु स्वरूप कहेछे

सिअा अत्थि सिअा नत्थि, अत्थि नत्थि सिअा पुणो ॥ भिअा चेव अवत्तवो, उ ग्गविहिनिसेहउं ॥ १ ॥ सिअा अत्थि अवत्तवो, चेवविहिनिसेवउं ॥ सिअा अ त्थिसिआणत्थि, अवतवो सिअा तहा ॥२॥ सत्तभगी जिणुदिठा, सव्वनावेहुसम्मया

हवे एनो अर्थ कहेछे – सकल पदार्थ पोतपोताना रूपे द्रव्य क्षेत्र काल अने भावेकरी छता छे जेम घट पोताने रूपे द्रव्यथकी माटीनो अथवा सोना रूपा त्रांबा प्रमुखनो छे, क्षेत्रथकी राजनगरनो उपनोछे कालथकी शीतकालनो उपनाछे भावथी स्यामरूपछे एरीतें सर्व द्रव्यपदार्थ द्रव्य क्षेत्र काल भावथी पोतपोताने रुपे छताछे ते स्यादस्तिलक्षण सप्तभगीनो प्रथमभेद जाणवो

अने सकलपदार्थ पररूपे द्रव्य क्षेत्र काल अने भावथी नथी जेम घटते वस्त्र रुपेनथी द्रव्यथी जलरूपेनथी क्षेत्रथी स्तभतीर्थनो उपनोनथी कालथी उलकाल नो उपनोनथी भावथी रक्तरूपेनथी एम सर्वपदार्थ पररूपे द्रव्य क्षेत्र काल अने भावथी नथी, ए स्यात्नास्तिलक्षण सप्तभंगीनो बीजो भेदजाणवो

सकल पदार्थ अनुक्रमे विचारता स्वद्रव्य क्षेत्र काल भावेछताछे, अने परद्रव्य क्षेत्र काल भावे अछताजछे, जेम घट स्वद्रव्य क्षेत्र कालभावे पूर्वोक्तरीते छतोछे अने परद्रव्यादिके अछतोछे एमसर्वपदार्थ भाविये, ते स्यादस्ति स्यान्नास्ति लक्षण सप्तभगीनो त्रीजो भेदजाणवो

तथावली सर्वपदार्थ स्वद्रव्यादिकेछता अने परद्रव्यादिके अछताछे पण ते ए केकाले विधिनिषेध वचने छतो अछतो कही सकीयेनही, केमके एवो कोईशब्द थी जे छता अछता लक्षण बे गुणने बोले, ए युगपद्विधिनिषेधथी अवक्तव्यलक्ष ण सप्तभगीनो चोथोभेद जाणवो

तथा सर्वपदार्थ स्वद्रव्यादिकेछता पण पर्यायथी अछता माटे समकाले विधि निषेध कल्पनायें अवक्तव्यछे जेम सुवर्णमयमेरु द्रव्यरूपे सासतो अने पर्यायरूपे असास्वतो पण एकेकाले सासतो असासतो कही सकिये नही ए स्यादस्त्येव स्यादवक्तव्यमेव सप्तभगीनो पाचमोभेद जाणवो

सर्वपदार्थ परद्रव्यादिकेनथी पण स्वरूपे छतापणाथी एककाले निषेध विधि कल्पनायें अवक्तव्यजछे जेम सेलडी गोल खांड एने परस्परें यद्यपि भिन्नपणुंजछे, अने माधुर्यपणानो अंतरपणछे, अने सेलडीपणे ऐक्यछे, पण भिन्न अभिन्न एकेकही सकीयेनही, ए स्यान्नास्त्येव स्यादवक्तव्यमेव सप्तभंगीनो छठोभेद जाणवो.

सर्वपदार्थ स्वद्रव्यादिकेछताछे अने परद्रव्यादिके अछताछे पण समकाले विधि निषेध कल्पनाये अवक्तव्यजछे, जेम घट स्वद्रव्यादिके पोतानेरूपेछे अने पटादिकनी अपेक्षायेनथी, माटे एक समयेंसद्रूप अने अणकहेवायोग्यपणेछे एम एकपदार्थनेविषे स्यादस्त्येव स्यान्नास्त्येव स्यादवक्तव्यमेव लक्षण सप्तभंगीनो सातमोभेदजाणवो.

एकपदार्थनेविषे ए कल्पना केमघटे? त्यांदृष्टांत.—जेम कोईकने दूधनोनियमछे ते दूधविना दधिप्रमुख सर्वजातनो गोरसलिये, अने जेने दहिनो नियम छे ते दहि विना सकल गोरस लिये. अने जेने गोरसनोनियमछे तेने दुधदहीप्रमुख समस्तगोरसकल्पेनही, तेमजे पूर्वे एकभेद स्यादस्ति स्यान्नास्ति स्यादवक्तव्यमेव लक्षण देखाडया तेने संकलितरूप सातमाभेदनो अंतर जाणवो एमए सप्तभंगी श्रीजिनेंद्रदेवे उपदेशी ते सर्वपदार्थनेविषे सम्मतछे ते सप्तभंग्यादि जेने सम्यक्प्रकारेरुचे, जे जेमकह्यु ते तेम सद्दहे, सद्सम्मत्या जातिस्मरणादिके स्वप्रतिभायेकरीने रुचे ते निसर्ग रुचि सम्यकत्वकहिये ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

धर्मास्तिकायादिक षटद्रव्यना समस्तभाव एकत्व पृथक्त्वादिक अशेष पर्यायरूप ने प्रत्यक्षादिकप्रमाणे जेनो जिहांव्यापार तिहां तेजप्रमाणे प्रतीति प्रसिद्ध जेणे पाम्याछे, अनेवली सर्वनयविधियें नैगमादिकभेदे द्रव्यनासर्वभाव जाण्याछे ते विस्ताररुचि प्रमुखने धर्म धर्मीना अभेद उपचारे विस्ताररुचि सम्यक्त्व कहिये.

हवे कांईक प्रमाण अने नयनी विशेषता कहेछे—त्यांप्रथम प्रमाण एटलेसुं? ते कहेछे—प्रमानुंकरण ते प्रमाणकहियें. जे 'यथार्थानुभव प्रमा' यथार्थज्ञान ते प्रमा कहिये. ते प्रमानुं करण अतिशयितकारण ते प्रमाणकहिये ते जैनमते एकप्रत्यक्ष अने बीजो परोक्ष ए बे प्रमाणछे. अने नास्तिकमति एकप्रत्यक्षप्रमाणजमाने तथा सुगत बोध कणाद अने वैशेषिक प्रत्यक्ष ने अनुमान ए बे प्रमाणमाने पारमार्प सांख्य, प्रत्यक्ष अनुमानने शब्द ए त्रणप्रमाणमाने. अक्षपादनैयायिक प्रत्यक्ष अनुमान उपमान अने शब्द ए चारप्रमाणमाने. प्रभाकर, प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द अर्थापत्ति ए पांच प्रमाणमाने, भट्ट, प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द अर्थापत्ति अने अभाव ए छ प्रमाणमाने यदुक्तं रत्नाकरावतारिकायां चार्वाकोध्यक्षमेकं सु

गतकणनुजी सानुमानसशाब्द, तद्वैतंपाग्मार्पे सहित सुपमयातत्रयं विद्रूपाद॥ अर्थापत्त्या प्रनाकृ द्ववदतिचनिखिलमन्यतेनट्ट एतत्सानावद्वे प्रमाणे जिनपति स मये स्पष्टतो स्पष्टतश्च ॥ १ ॥

वली जैनमते प्रमाणनुं लक्षणकहेले —सम्यग्ज्ञानं प्रमाणतद्विधा प्रत्यक्षेतरत्ने दात् अवधिमन पर्यायादावेक देशप्रत्यक्षो केवलसकलप्रत्यक्षं मतिश्रुतेपरोक्षे वली त्रीजुं प्रमाणनु लक्षणातरकहेले —सकलवस्तुसाधक प्रमाणं प्रमीयते परिछियते व स्तुतत्व जैनज्ञानेतत्प्रमाण तद्विधा सविकल्पेतरत्नेदात् सविकल्प मानस तच्चतुर्वि धं मतिश्रुतावधिमन पर्यायरूपं निर्विकल्प मनोरहितं केवलज्ञानमिति प्रमाण स्यव्युत्पति प्रमाणेन सग्रहीतार्थैकाशोनय श्रुतविकल्पोविज्ञातुरनिप्रायोवानय ना नास्वनावव्यो व्यावृत्तंकस्मिन् स्वनावे वस्तुनयति प्राप्नोतीतिवानय

ते नयना सातत्नेदछे —नैगम सग्रह व्यवहार रुजुसूत्र शब्द समनिरूढ एवंभूत समस्तपदार्थ ते सामान्य विशेषोनय धर्मरूपछे तेमां सामान्यते घटत्वादिक प्रमुख जात्यादिरुपछे, अने विशेषते सुवर्णमयघट मृन्मयघट एमव्यक्त्यादिरूपछे इत्यादि क नैगमनय वस्तुने उनयात्म सामान्यविशेषरुप मानेछे जेमाटे सामान्यते विशेष विनानहोय अने विशेषतं सामान्यविना नहोय

समहनय तो वस्तुने सामान्यरूपज मानेछे केमके सामान्यथकी व्यतिरिक्त कोइ विशेष नथी आकाशनाफूलनीपरे वनस्पतिविना कोई निंब आम्रादिकनथी देखाता अने जे देखायछे ते सर्व वनस्पतिरुपछे, जेम हस्तायतनांवी अंगुली प्रमु ख हस्तादिरुथी दूरनथी हस्तादिरूपजछे

व्यवहारनयतो पदार्थने विशेषात्मकज विशेषरूपज मानेछे, विशेषथकी निन्न कोइ सामान्यनथी खरविषाणनीपरे दृष्टांतदेखाडेछे —कोइकहछेजे वनस्पतिलेवीहो य तेवारें निंबाम्रादिक नामलीधाविना सु लइशकिये? अपितु कांइनज लइशकाय अने नामलीधुं तेवारे तो विशेषजथयो व्रणपिंडपादलेपादिक लोकप्रयोजन त्यां पण विशेषनोज उपयोगछे नामलेइने कहेछे के अमुक औषधकरो तेवारेज ते औषधथाय पण मात्र औषधजकरो एमकेवाथी, औषधकोइ करतोनथी तेणेकरी विशेषथीकांइ सामान्यछेजनथी सर्व विशेषरूपजछे

रुजुसूत्रनयतो अतीत अनागत वस्तु नमाने. केवल वर्त्तमान स्वकीयवस्तु तेन माने, अतीत अनागत अने परकीय वस्तुथ कार्यसिद्धिनथाय, अनतु आकाश कुसुम नेनीपरें जाणीलेवु अने नाम स्थापना द्रव्य ने नाव ए चारनिक्षेपाछे तेमांह

जो नावनिक्षेपोमाने, बीजा त्रणनिक्षेपा नमाने, तेमज आगला आगला नयपण नमाने तेपण एक नावनिक्षेपोज माने.

शब्दनयेनी अनेक पर्यायेकरी एकज अर्थमाने. जेम कुंन कलश घटादिक अनेक शब्द घटव्यक्तिरूप एक अर्थबोलेछे.

समनिरूढनयतो पर्यायनेदथी निन्न निन्न अर्थमानेछे. कुंन कलश घट एनो जुदोजुदो अर्थछे. अने घटपटादिकनीपरें जो पर्यायनेदे पण वस्तुनो नेदनहोय तो कुंन अने घटनोपण पर्यायांतर नहोय.

एवंनूतनयतो एक पर्यायानिधेय वस्तुपण स्वकीय कार्य करतुं होय तो माने जो कार्य अणकरतुं पण वस्तुमानिये तो घटनेविषे पटनो व्यपदेश केम न थाय.

ए सातेनय यथोत्तर विशुद्धछे ते एकेकाना शो शो नेदछे. एम सातनयना सातसो नेद थाय. एवंनूत अने समनिरूढ ए बे नयोनो शब्द नयमां अंतर्नाव थाय त्यारे पांच नयना पांचशे नेद थाय. ते द्रव्यास्तिक तथा पर्यायास्तिक ए बे नयमां सर्व नयेनो अंतरनाव थायछे एटले प्रथमना चारनय द्रव्यास्तिकमां आवे अने पाछला त्रणनय पर्यायास्तिकमां आवे.

यडुक्तं श्री अनुयोगद्वारसूत्रे'—नयसरूपं सेकिंत नयेनये सत्तमूलनया पन्नत्ता णेगमे संगहे ववहारे उज्जुसूए सद्दे समनिरूढे एवंनूते तत्थणेगेहिं माणे, हिं मिणइतिणेगमस्स नीरुत्ती ॥ सेसाणंपि नयाणं लखमिणमो सुणेहवोछं १ संगहिय पिंमियत्थं संगहवयणं समासउविंति; वन्नइ विणिछियत्थं, ववहारो सव्वदवेसु २ पच्चुप्पन्नगणही, उज्जुसूउनय विहिमुणेयव्वो ॥ इछइ विसेसित्तं, पच्चुप्पन्नं नयो सद्दो ॥३॥ वछउ संकमणं, होइ अवछंनये समन्निरूढे ॥ वंजण अछ तडुनयं, एवं नूएविसेसेइ ॥४॥ नायंमि गिण्हियव्वे, अगिण्हियव्वंमि चेव अछंमि ॥ जइव्व मेव मेवइ, इनोउवएसोसोनउ नाम ॥ ५ ॥ सव्वेसिंपि नयाणं, बहुविहवत्तव्व संनि सामित्ता ॥ तं सव्व नय विसुद्धं, जं चरणगुण छिउसाहू ॥६॥ एगं निच्चं निरवय, व मक्किर्यं सव्वगंच सामन्नं ॥ निस्सामन्नत्ताउ, नत्थिविसेसो खपुप्फंच ॥ १ ॥ नेगंनिच्च मणिव्वविं, सावयव सक्कियंच निन्नगयं ॥ तुल्लत्ता तुल्लत्तण, सवि संसंतं समासन्नं ॥२॥२०॥

ज्ञान दर्शन चारित्र तप समित्यादिक क्रियाजे सम्यक्त्वने बले रुचे ते क्रिया रुचि सम्यक्त्व कहिये ए एकवीसमीगाथानो अर्थछे.

अननिगृहीत अनंगीकृत कुदृष्टी सौगतादिक मतरूपछे जेणेवली अविशारदः प्रवचने प्रवचनाननिज्ञोपि एटले प्रवचननेविषे माह्योनथी अने शाक्यादिक प्रवचननेविषे

चिलातीपुत्रनीपरे अनागृही के० आग्रह रहितने ते संक्षेपथी तत्वनावतोयको तेने संक्षेपरुचि सम्यक्त्व कहिये

कुमत ते कोने कहिये क्रियावादी अक्रियावादी अज्ञानवादी विनयवादी प्रमुखनुं जे मत तेने कुमत कहिये परपाखमानि सर्वज्ञप्रणीत पाखमव्यतिरिक्तानि तेषांउंधतस्त्रीणिशतानि त्रिपष्ट्यधिकानि नवतु

यडुक्त आवश्यक वृहद्वृत्तौ –असीइसयकिरियाण अक्किरियाणचहोइ चुलसीइ, अन्नाणिअसत्तहि, वेणइयाणचवत्तीसं ॥१॥ अस्याव्याख्या असीइ सयकिरियाणंति अशीत्युत्तर शतंक्रियावादिनां तत्रनकर्त्तारं विनाक्रियासंनवति तामात्म समवायिनीं वदतिये तच्छीलाश्चते क्रियावादीनालेपुनरात्मायस्तित्व प्रतिपत्तिलक्षणा अमुनोपायेना शीत्यधिक शतसख्याविधेया जीवाजीवाश्रव बंधसवर निर्जरा पुण्य अपुण्य मोक्षाख्या नवपदार्थान् विरचय्य परिपाट्याजीव पदार्थस्याध १ परपरनेदावुपन्यसनीयौतयोरधोनित्य १ अनित्य (२) नेदौतयोरप्यध काले १ श्वरा २ त्म ३ नियति ४ स्वनाव ५ नेदा. पंचन्यसनीया पुनश्चेत्थविकल्पा कर्त्तव्या अस्तिजीव स्वत नित्य कालतइत्येकोविकल्प विकल्पार्थश्चायं विद्यतेखल्वयं आत्मास्वेन रूपेण नित्यश्च कालवादिन उक्ते नैवाभिलापेनद्वितीयोविकल्प ईश्वरकारिणिन तृतीयोविकल्प आत्मवादिन पुरुषएवेद सर्वमित्यादि नियतिवादिन श्चतुर्थोविकल्प स्वनाववादिन एवस्वतइत्यऽत्यजतालब्धा पचविकल्पा परतइत्यऽत्यजताइत्यनेनापि पंचैव लभ्यते नित्यत्वाऽपरित्याग परित्यागेन चैतेदशविकल्पा एव अनित्यत्वेनापि दशैवएते विशति जीवपदार्थेनलब्धा अजीवादिष्वप्यष्टसुएवमेव प्रतिपद विंशतिविकल्पानामतो विंशतिर्नवगुणशतमशीत्युनर क्रियावादिनामिति अक्किरियाणचहोइचुलसीइति अक्रियावादिना नवति चतुरशीतिनेदाइति नह्किस्यचिदवस्थितस्य पदार्थस्य क्रियागमस्ति तद्भावे एवावस्थितेरजावादित्येववादिनो अक्रियावादिनस्तथा चाहुरेके क्षणिका सर्वसंस्कारा अस्थितानांकुत क्रियाभूतियेषां क्रियासैवकारक सैव वोच्यते इत्यादि एतेचात्मादि नास्तित्वप्रतिपत्तिलक्षणा अमुनापायेन चतुरशीतिर्वेत्व्या एतेषा पुण्यापुण्यवार्जित पदार्थ सप्तकान्यस्तथैवजीवस्याध स्वपरविकल्पनेदद्वयोपन्यास असत्वादात्मनो नित्यानित्यत्वनेदौनस्त कालादीनांतुपचाना षष्टीयदृच्छान्यस्यतेपश्चाद्विकल्पाभिलाप नास्तिजीव स्वत इत्येकोविकल्प एवमीश्वरादिनिरपिपदृच्छावसानै संर्वैश्चषड्विकल्पा तथा नास्तिजीव परत कालतइतिषड्वेवविकल्पा एकत्रद्वादशएवमजीवादिष्वपिषट्सुप्रतिपद द्वादशविकल्पा एकत्र सप्तद्वाद

ग गुणाश्चतुरशीतिर्विकल्पा नास्तिकानामिति अन्नाणिअसत्तछि त्ति अज्ञानिकानां स प्तषष्टिर्भेदाऽति तत्र कुत्सितं ज्ञानमज्ञानं तदेषामस्तीत्यज्ञानिका· नन्वेवजघुत्वात्प्र क्रमस्यप्रागवद्बहुव्रीहिणा जवितव्यं ततश्चज्ञानाऽतिस्यात् नैषदोषः ज्ञानांतरमेवाज्ञा नंमिथ्यादर्शनसहचरितत्वात् ततश्चजातिशब्दत्वात् गोरखरवदरण्यमित्यादिवऽट ज्ञानिकत्वमिति अथवाऽज्ञानेनचरंति तत्प्रयोजना वा अज्ञानिकाः असंचित्यकृत बंधवैफल्यादिप्रतिलक्षणा अमुनोपायेन सप्तषष्टिर्ज्ञातव्या तत्रजीवादिनवपदार्थान् पूर्ववध्यवस्थाप्यपर्यंतेचोत्पत्तिमुपन्यस्याथ. सप्तसदादय उपन्यसनीया सत्व१ म सत्वं २ सद् असत्वं ३ अवाच्यत्वं ४ सद्वाच्यत्वं ५ असद्वाच्यत्वं ६ सदसदवाच्य त्वं ७ प्रमितिर्नैकैकस्यजीवादे. सप्तविकल्पाः एतेन नवसप्तकास्त्रिषष्टिः उत्पत्तेश्चत्वा र एव विकल्पास्तेष्वसत्त्वं १ असत्वं २ सदसत्वं ३ अवाच्यत्वं ४ चेतित्रिषष्टि मैध्येक्षिप्ता सप्तषष्टिर्भवति कोजानातिजीव· सन्नित्येकोविकल्प. ज्ञातेनवाकि एवमस दादयोपिवाच्याः उत्पत्तिरपि किंसतोअसत. सदसतो अवाच्यस्येति कोजानात्येतन्नक श्चिदपीत्यभिप्राय. वेणइयाणंच बत्तीसंति वैनयिकानां द्वात्रिंशद्भेदा विनयेनचरंति विनयो वा प्रयोजनमेषामिति वैनयिका एतेच अनवधृतलिंगाचारशास्त्राविनय प्रतिपत्तिलक्षणा अमुनोपायेन द्वात्रिंशदवगंतव्याः सुरनृपति ज्ञातियति स्थविरा धममातृपितॄणां प्रत्येकं कायेन वाचामनसादानेनच देशकालोत्पन्नेन कालेन विनय· कार्यइत्येतेचत्वारोभेदा· सुरादिष्वष्टसुस्थानेषु एकत्र मीलिता द्वात्रिंशदिति सर्वसं ख्यापुनरेतेषां त्रीणिशतानित्रिषष्ट्यधिकानि जवति.

अन्यत्रापिउक्तः—आस्तिकमतमात्माद्या नित्यानित्यात्मकानवपदार्थाः कालनि यतिस्वजावेश्वरात्मकृतिनः स्वपरसंस्थाः १ कालयदृच्छानियतीश्वरस्वजावात्मनश्चतुर शीतिः नास्तिकवादिगणमतं नसंति सप्तस्वपरसंस्था २ अज्ञानिकवादिमतं नवजी वादिन् सदादिसप्तविधान्: जावोत्पत्ति सदसद्द्वैतावाच्यांश्चकोवेत्ति ३ वैनयिमतं विन यश्चेतो वाक्कायदानत. कार्य्यः सुरनृपतियति ज्ञातिस्थविराधममातृपितृषुसदा ४ ए तेषां प्रशंसानकार्य्या पुण्यजाज एतेषु सुधर्मनिर्जन्मेत्यादिलक्षणा एतेषांमिथ्या दृष्टित्वात् ए बावीसमी गाथानोअर्थछे.

अस्तिकायतेसुं कहिये अस्तयः प्रदेशाः संति अस्येत्यस्तिकायः धर्मास्तिकाय अधर्मा स्तिकाय आकाशास्तिकाय जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय ए पांचनेअस्तिकाय कहिये.

धर्मोगत्युपष्टंजादिस्वजावश्रुत धर्म जवा नामादिभेदजिन्नधर्मर्निर्धर्मनु पर्याय ज्येष्टधर्मो वा श्रुतधर्मोतेहनिस्थेनिरहन्ना ए, असंकरार्थ तं सम्यक्त्व मोहनर्नु थी।

जनूतछे सप्रतिराजानेविषेजाणवु यडुक्तं एगविह डुविह तिविहं, चउहा पंचविह दसविह सम्म ॥ मुक्त तरु वीय नूयं, सपडरायावधाग्ज्ञिा ॥ १ ॥ सर्व एणा थानो अर्थ विवखोछे

हवे शिष्यवोल्यो स्वामी एक प्रकारनु सम्यक्त्व सप्रतिराजाने घटेछे अथवा वे प्रकारनुं संनवछे पण त्रण प्रकारनु घटमान नथी केमके पहेलातो उपशम सम्यक्त्वनो सप्रतिराजानेविषे संदेहछे, ते उपदेश प्रथमतो अर्थीजेदे होय अथवा उपशमश्रेणीयेंहोय त्या प्रथमतो तेना लाजनो सदेहछे एटले तेचखते सप्रतिराजायें ग्रथिनेदकरी उपशमसम्यक्त्व पाम्यु होय एवा निश्चयनु संदेहछे अने वीजु उपशमश्रेणीयें उपशम सम्यक्त्व होय ते उपशमश्रेणीतो तेकाले विछेद पामीछे अने क्षायकपण न घटे केमके क्षपकश्रेणीपण विछेदपामिछे तेथी सप्रतिराजानेविषे क्षायोपशम सम्यक्त्वज सनवेछे परिशेषानुमानेकरीने कारकादिनेद थकीपण त्रिविधपणु इहा सनवतोनथी आद्यनेदक्यनो सनवछे पण कारक रोचकनो संनवते पण मिथ्यात्व सछजित दीपकाख्य तृतीयनेदनो असनवछे अने चारप्रकारनु पण सम्यक्त्व सर्वथा नघटे तेतो उपशम क्षयोपशम क्षायिक अने चोथु सास्वादनमांहे नेलियें तेवारे चारनेदथाय ते उपशमसम्यक्त्वथकी पडताथका अनतानुबंधियाने उदयछता मिथ्यात्वप्रतें जावावाछतो एवाजीवने सास्वादन सम्यक्त्वनु धारणहसे तेतो अनतानुबंधियानोउदय तेणे कवलितपणामाटे कलुषपणुछे अने पांचप्रकारनु सम्यक्त्वपण सप्रतिराजानेविषे नघटे केमके वेदकसम्यकत्वना अभावथी एटले वेदकतो क्षायकपामति वेलायें क्षयोपशमनो चरमपुज्ञल ग्रासवेदता ने होय तेतो सप्रतिराजानेविषे सनवियेनही वली क्षायिकसम्यक्त्वनी प्राप्तिनाअभावथी ए दशविध निसर्गरुच्यादिक पण सर्व तिहा सप्रतिराजानेविषे घटतानथी सर्वनेद एकस्थले सनवेनही तेमछता एटला प्रकारना सम्यक्त्वनुधारण सप्रतिराजाना दृष्टांते तमे केमकह्यु एम शिष्यपुछ्युं

हवे गुरु उत्तरकहेछे केसम्यक्त्वतो सप्रति राजानीपरे निश्चलधरवु ते वनी शास्त्रनीते परूप्पमाण परूपितोथको एकादिनेदेहोय इत्येवमेवयान्यं एनो अर्थ एमजकरवो तथाच सर्वनिरवद्यमिति जेम सर्व समजसहोय एगविहे इत्यादिक सम्यक्त्वनेद गाथावृत्तिनो ए सर्व अर्थजाणवो उत्तराध्ययनमापण अठावीसमे अध्ययने दशप्रकारनु सम्यक्त्वकह्युछे निसग्गुवएसरुईत्यादि ए तेत्रीसमी तथा चावीसमी गाथानो अर्थछे

वेदद्वयाद्रीडु १४७४ मितेवर्षे राजाद्रिनगरस्थेन ॥ विबुधोत्तमाब्धि शिशुना न्या यादिजलधिना नाम्ना ॥ १ ॥ सम्यक्त्वस्तवनस्या ऽस्यलोकभाषानिबद्धबंधस्य ॥ स्व परेषाम् स्मृतिहेतो, रकारि बालावबोधोयं ॥ २ ॥ युग्मं ॥ शास्त्रविरुद्धंकिंचि दुपयुक्तं बुद्धिमांद्यतो मयका ॥ तत्संशोध्यं विबुधैरुपकारपरैर्महामतिभिः ॥ ३ ॥

ढालछठी माइ धन्नसुपनतुंदेखी.

जडजलपणपोते सिंधुकावनबोले ॥ तससंगतिजोहुं तेहनेपणतसतोले ॥ तेम हुं गुणहीणो तोपण दास तुमारो ॥ अवगुणउवेखी प्रभुजी पारउतारो ॥ १ ॥ तुं गुणमणि दरिउं उद्धरिउं जगजेणे ॥ मुजकांइनताखो तुज संगतिनही तेणे ॥ अल गो तांहिविलगो तुमुफ दिलथीदेव ॥ अविचलपदआपो ॥ ढीलतणीसीटेव ॥२॥ न हीतो मुजदावे नहीमूकुंकरुंसोर ॥ जालीदिलनीतर घालीकरसुंजोर ॥ जासोकिम दीधा, विणशिवसुखजिनराज ॥ सहेजे जो देशो तो रहेशे तुमलाज ॥ ३ ॥ अविन यमुजखमजो हुंछुं मूढअयाण ॥ करतांनविआवे वीनतडीजिनभाण ॥ बालक जेमबोले कालोगहिलोबोल ॥ ते मातपितामन, लागे, अमृततोल ॥ ४ ॥ इणिपरे प्रभुस्तविउ समकितलेशविचारे ॥ आगमअनुसारे मुजमतिने अनुहारे ॥ संव तरुतुरसमुनि चंद्रसंवत्सरजाणी ॥ १७६६ ॥ भादरवेमासे सीतपंचमीगुणखाणि॥ ॥५॥ श्रीतपगछनायक श्रीविजयरत्नसूरिंद ॥ सुरगुरुजश आगलें करजोडेमतिमंद ॥ तसराजेपंभित उत्तमसागरसीस ॥ कहेन्यायसागर प्रभु पूरोसंघजगीस ॥ ६ ॥

इतिश्री सम्यक्त्व विचार गर्भित श्रीमहा वीरजिन स्तवन बालावबोध सहित संपू र्ण थयो कल्याणमस्तु शुभंभवतु.

॥ श्री तीर्थनायकाय नमः ॥

॥ अथ श्रीषड्द्रव्यस्वरूप प्रारभ्यते ॥



छ द्रव्यमा पहेलुं जीवद्रव्य छे तेमा चेतना पदार्थ छे अहीं चेतना ते उपयोग कहिये तेउपयोग वे प्रकारनो छे —एक साकार ने बीजो निराकार तेमा साकार ते ज्ञान अने निराकार ते दर्शन जाणवुं ए ज्ञान तथा दर्शननो विचार जुदो छे, ते आगल कहेवाशे, त्याथी जाणी लेवो ते जीव वे प्रकारना छे —एक सिद्ध अने बीजा संसारी तेमा जे अष्ट कर्म रहित थया छे ते सिद्ध जाणवा तेना पदर भेद छे ते आप्रमाणे —

(१) तीर्थंकर विद्यमान छतां जे संसारने तरीने मुक्तिने पाम्या छे ते चतुर्विध संघ अथवा प्रवचनवक्ता प्रथम गणधरादिक जाणवा यदुक्तं सिद्धांते — "तिथ भंते तिथं तिथं करे तिथ गोयमा, अरहा ताव नियमा तिथकरे तिथंपुणो वा उवणो समण संघो पढम गणहरेवा" एवी रीते तीर्थसिद्ध जाणवा

(२) जे तीर्थ ऊपनाविना तथा तीर्थनो विछेद थया पछी मुक्तिने पाम्या छे, ते मरुदेवी प्रभृति, श्रीचंद्र प्रभु तथा श्रीसुविधिनाथ स्वामीना मध्य समयने विषे धर्म विछेद थयो हता केटलाएके जातिस्मरणथी दीक्षा लीधी ने सिद्ध थया ते अतीर्थ सिद्ध जाणवा (३) जे अष्ट महाप्रातिहार्य चोत्रीस अतिशय पांत्रीस वाणीगुणे, तीर्थंकर पद भोगवीने सिद्ध थया ते श्रीरुषभ देव भगवान प्रमुख सर्व तीर्थंकर सिद्ध जाणवा (४) जे तीर्थंकर पद पाम्याविना सिद्धावस्थाने पाम्या ते सामान्य केवली अतीर्थंकर सिद्ध जाणवा (५) जातिस्मरणादिके वाय पामी मोक्षे गया ते स्वयंबुद्धि सिद्ध जाणवा (६) जे काई बाह्य प्रत्यय देखीने ते निमित्ते बोधने पामीने मुक्त थया ते प्रत्येकबुद्ध सिद्ध जाणवा

आशंका —त्यारे स्वयंबुद्ध अने प्रत्येकबुद्धमा विशेषता शु छे ?

उत्तर —बोधि, श्रुति, लिंग तथा उपधि ए चार प्रकारना भेद छे स्वयंबुद्ध ते जातिस्मरणे करी अथवा अवधि ज्ञाने करी बाह्य प्रत्यय दीठाविना बोधने पाम्या छे, ते जेम तीर्थंकर तथा अतीर्थंकरमा व्यतिरेकपणु छे ते अधिकार अहीं पण जाणी लेवो तीर्थंकर साक्षात त्रीजे गमे कह्या छे माटे, अने प्रत्येकबुद्ध तो बाह्यकरण वृषभ तथा इंद्रध्वजादिक देखीने बोध पाम्या छे, पण ते नियमे एकाकी

विचरे छे ए प्रथम प्रत्येक बोधिभेद छे. अने स्वयंबुद्धने पूर्वाधीत श्रुत होय तो तेने देवता लिंग आपे, अथवा गुरुनी समीपे जईने लिंग धारण करेछे. लिंग ते साधु वेष रजोहरणादिक जाणवा तथा ते जो एकाकी विचरवाने समर्थ होय तो एकाकी विचरे छे, नही तो गच्छमांज विचरे छे. अने जो पूर्वाधीत श्रुत न होय तो अवश्य गुरुनी पासे जईने वेष ग्रहण करे; अने तेनी साथे विचरे ए नियम छे. अने प्रत्येकबुद्ध तो पूर्वभवाधीत श्रुतज्ञानीज होय छे, ते जघन्यथी अग्यार अंग तथा उत्कृष्टथी कांईक न्यून दश पूर्व भणेलो जाणवो. एने लिंग देवता दिए छे; अथवा लिंगरहित पण होयछे. एम श्रुति तथा लिंग ए बे भेद मली त्रण भेद थया. अने स्वयंबुद्धने पात्रादिक द्वादशविध उपधि होयछे एम कह्यु छे, ने प्रत्येकबुद्धने तो जघन्यथी बे प्रकारनोज उपधि कह्यो छे; तथा उत्कृष्टथी नव प्रकारनो उपधि पण कह्यो छे. ए वस्त्रविना पण उपधिना भेद जाणवा.

(७) जे बुद्ध एटले आचार्यना कहेला उपदेशथी बोधने पामीने दीक्षा लई अनुक्रमे मोक्षने पामे ते बुद्धबोधित सिद्ध जाणवा.

(८) जे स्त्रीनुं लिंग अथवा चिन्ह छतां मुक्तिलक्ष्मिवरया छे ते स्त्रीलिंग सिद्ध. ते लिंग त्रण प्रकारनुं छे:—एक जेने फुंफमदाहनी पठे पुरुषनी अभिलाषा होय; बीजुं शरीर निर्वृत्ति निनव तथा स्तनभागादिक जेने होय; अने त्रीजुं नेपथ्यते तिलक, तबोल, नेत्रांजन, वस्त्र, हार, डोर अने नूपुरादि लक्षण बाह्यकृत शृंगाररूप होय छे. ए त्रण लिंग छे तेमांनुं अत्र शरीरनिर्वृत्ति लक्षण लिंग ग्रहण करवुं. ते छतां चारित्रनी प्राप्ति थईने जे केवलावस्था पामीने मोक्षेजाय ते स्त्रीलिंग सिद्ध कहेवाय छे आशंका:— वेदनी वर्जना शानारु करी छे?

उत्तर.— वेद छता यथाख्यात चारित्र तथा केवल ज्ञाननी प्राप्ति थती नथी. माटे तेनो नवमे गुणठाणे अभाव थाय. तोज उपरनां गुणठाणाप्रत्ये आरोहण थई शकेछे. अने त्यार पछी सर्व घातिक कर्मोनो क्षय करेछे माटे वेद लक्षण लिंग वर्ज्य छे. अने शृंगार लक्षण पण कांई प्रधान नथी. केमके, शोभे शृंगार सजीने सिंहासन उपर बेठेली छतां शुभ ध्याने भावना भावती थकी स्त्री केवल ज्ञान पामेछे. तेम शृंगार रहित थई थकी पूर्वोक्त अवस्थाए करीने पण केवल ज्ञान पामेछे. माटे शृंगार मोक्षनो रोधक नथी. शरीरनो आकार तो विशेषेकरी रोधक होयज नही; केमके, ज्यां सुधी मनुष्य गतिनेविषे मनुष्यनुं आयुष्य होय छे, त्यां सुधीज ए चिन्ह होयछे.

आशंका – (दिगंबरी) स्त्रीने मोक्षनी प्राप्ति थतीज नथी, केमके, मोक्ष थ ते चारित्रने आधीन छे, ते चारित्र स्त्रीने उदय आवे नही केमके, स्त्रीने सर्व पुरुषविना रहेवाई शकातु नथी स्त्रीना अंगोपांग सर्वथा पुरुषने अभिनवकारी छे तेथी ते उघाडा रखाई शकाता नथी, अने ते ढांकवाने अर्थे वस्त्र धारण करवा पडेछे वस्त्र राख्याथी परिग्रह थायछे, अने परिग्रहवाला मनुष्यने मूर्छानो संभव होयछे ज्यांसुधी जेने मूर्छा छे त्यांसुधी तेने संयमनी प्राप्ति थती नथी, माटे स्त्रीने चारित्रनी प्राप्ति न थाय , अने चारित्रविना मोक्षनी प्राप्ति ते केम थाय ? वली संसारमां सर्वोत्कृष्ट पदवीनी प्राप्ति सर्वोत्कृष्ट अध्यवसायथी थायछे, एवात दिगंबर तथा श्वेतांबर बधाने सम्मत छे ते सर्वोत्कृष्ट पद बे प्रकारनु छे – एक सर्वोत्कृष्ट पद दुःखनु स्थानिक छे ने बीजु सर्वोत्कृष्ट पद सुखनु स्थानिक छे ते मां सर्वोत्कृष्ट दुःखनु पद सातमी नरक पृथ्वीनी प्राप्ति छे, अने सर्वोत्कृष्ट सुख ते मोक्ष पदनी प्राप्ति छे तेमां सप्तम नरक पृथ्वीनेविषे स्त्रीनु गमन थई शके नही एम सिद्धांतोमा कह्यु छे, ज्यारे एवु पाप उपार्जित वीर्य स्त्रीने होतु नथी त्या मोक्षपदनु उपार्जन करवा जेवु मनोवीर्य ते स्त्रीने क्याथी होय ! माटे स्त्रीने मो क्षनो संभव नथी वली स्त्रीए पूर्व भवांतरनेविषे माया मोहनीयकर्मनु उपार्जन कर्यु होयछे के जेथी स्त्रीवेद मलेछे, माटे स्त्री मायावीज होयछे ते कारण माटे ते स्वाभावे कुटिलज होयछे एवा न्याये करीने स्त्रीने चारित्रनी प्राप्ति थाय नही वली साधु तो वनवासी होयछे, ज्या घणा मनुष्यादिकनो संघट्ट होय, त्या साधु रहे नही केमके, त्या ज्ञान तथा ध्याननो व्याघात थायछे अने स्त्रीथी तो एकाकी रहेवा तु नथी ज्या वसति होय त्यांज रहेवाई शकायछे केमके, स्त्रीने एकाकी विचरतां ना शीलमा विघ्न पडेछे घणामा रहेता प्रतिबंध नभेछे , अने राग द्वेषमा पडेछे, माटे स्त्रीने चारित्र पण नही ने ते चारित्रना अभावे मोक्ष ते क्याथीज होय !

उत्तर – (श्वेतांबरी) स्त्रीने वस्त्रनो परिग्रह कहेवो नही जेनी उपर मूर्छा यछे ते परिग्रह कहेवायछे, मूर्छाविना परिग्रह कहेवायनही यत ' मुच्छा परि हो वुत्तो " एम श्रीसिद्धांतमा कह्युछे ते कारण माटेज भरतचक्रवर्त्ति षट्खं ना भोक्ता, चोसठ हजार अंतेउरी सहित दर्पण सदनमा बेठो छता तथा सर्व कारेकरी अलंकृत छता केवलज्ञान पाम्यो छे केमके, ते वस्तुथकी मूर्छाथी त हता ते माटे जीवनेमाटो परिग्रह तो ममत्वभाव छे अने जे ममत्व भा ी रहित छे तेने तो धनधान्यादि संपत्ति पण बाध करी शकती नथी जा ए

म न मानिये तो संसारनेविषे सर्व दरिद्री मनुष्योने केवल ज्ञाननी प्राप्ति थईने मोक्षनो प्रसंग आवशे. केमके, तेनी पाशे कोई समये पण एक कोडीमात्रनो परिग्रह होतो नथी. तेम छतां तेवा प्राणीउंतो संसारमां घणा रजडता दीठामां आवे छे, पण तेउंनी पाशे मूर्छारूप मोटो परिग्रह होयछे; माटे तेउंने शुभ दशा प्रगट थती नथी. वली श्रीवीतरागे बे कल्प कह्याछेः—एक जिन कल्पने बीजो स्थविर कल्प. तेमां जिनकल्पनो स्त्रीने संभव नथी, परंतु स्थविर कल्पनो संभव छे.

पूर्वपक्षमां कह्युं छेके, उत्कृष्ट पदनुं बाधक मनोबल छे, ते स्त्रीने होतुं नथी माटे जेम स्त्री सातमे नरकेजती नथी तेम ते मोक्षनेविषे पण न जई शके! ए युक्ति पण समीचीन नथी, एवो पण कांइ नियम नथी. केमके, केटलाएक पुरुषादिकने क्षेत्र खेडवानुं सामर्थ्य होयछे पण शस्त्राभ्यास करवानुं सामर्थ्य नथी होतुं तेथी शुं थयुं! कोईने कोईएक कर्मनी फुरणा न थयाथी शुं बीजां कर्मोनी फुरणानो पण अभाव समजवो के? एम छतां जो हठकरी बेशशो तो बीजी घणी वातोमां विरोध आवशे. जेमके बहुमां बहुपाप उपार्जिने भुजपरिसर्प्पनीचे बीजी नरक पृथ्वी सुधीज जायछे अने पक्षीउं त्रीजी नरकपृथ्वी सुधी जायछे. अने वधारेमां वधारे पुण्य उपार्जिने ऊपर ते बन्ने जातिवाला प्राणीउं सहस्रार देवलोकसुधी जायछे. इहां मनोबल तो बन्नेनुं सरखुं छे. त्यारे अधोगमन थोडुं अने ऊर्ध्व गमन घणुं केम थायछे! माटे एवो नियम न कहेवो. एवी रीते स्त्रीजातिनो पण एवो स्वभाव छे के उत्कृष्ट पाप उपार्जन करे तो छठी नरकपृथ्वी सुधीज जाय; परंतु उत्कृष्ट संवरनी प्राप्ति थयाथी मोक्षनी प्राप्ति तो थायज.

वली पूर्वपक्षमां कह्युं के, स्त्रीने मायामोहनीय कर्मनी अधिकताने लीधे चारित्र उदय आवे नही; ए वात यद्यपि सत्य छे, तथापि स्त्रीने मोहनीयकर्मनो उपशम तथा क्षय होयछे; एनो कोईनाथी अनंगीकार थाय नही. अने सर्वथा स्त्रीने मोहनीयकर्मनो क्षय अथवा उपशम थतोज नथी एवुं तो तमाराथी पण केवाशे नही. केमके, अनंतानुबंधी कषायनो उपशम अथवा क्षय थाय त्यारेज सम्यक्त्वनी प्राप्ति थायछे. अने अप्रत्याख्यानीय कषायनो उपशम अथवा क्षय थाय त्यारेजदेशविरतिपणुं प्राप्त थायछे. एम तो तमे पण अंगीकार करोछो त्यारे स्त्रीमां सर्व विरतिपणुं केम मानता नथी! तथा गोमटसारनी गाथामां स्त्रीने मोक्ष कह्योछेः— “ अमयाला पुंवेया, इत्थीवेयाय हुंति चालीसा; वीसन पुंसग वेया, समए एगेण सिज्झंति. ” एवो पाठ तमारा सिद्धांतोमां पण दीठामां

आवेछे तेमज कर्मग्रथ, तथा गुणस्थान क्रमारोहनो विचार करतां प्रसिद्धपणे स्त्रीने मोक्षनो संभव थायछे जेमके, नवमा अनिवृत्तिकरण गुणस्थानकसुधी त्रणे वेदनो उदय होयछे त्यां छासठ प्रकृतिउं उदयने पामे छे पछी सूक्ष्म सपराय दशमा गुणस्थानकमा पण छासठ प्रकृतिउंनोज उदय होयछे, एमा त्रण वेद तथा सज्वलननो क्रोध मान ने माया ए छ प्रकृतिउं होती नथी एवीरीते उदयाधिकारमां कह्यु छे ए उपरथी जाणवु जोइये के जो सर्वविरति चारित्र स्त्रीने न होय तो नवमा गुणस्थानकसुधी केम पहोची शके, माटे स्त्रीने सर्वविरतिपणु मानवुज जोइए छे ए विषे सारीरीते विचार करी जोजो

वली पूर्व पक्षमां कह्यु के, स्त्रीने एकाकी विचरवानो अधिकार नथी, केम के एकाकी विचरवाथी तेना शीलमा विघ्न पडवानो सभव थाय अने जो पचनी साथे विचरे तो ममत्वभाव थाय ए उक्ति पण विचाररहित छे, केम के एकाकी विचरता पण जो मन शुद्ध होय तो कांई पण शीलनो भग थतो नथी स्त्रीउंने विषे तो एवु धैर्य होयछे के तेने देवो पण मोलायमान करी शकता नथी तेम पचनेविषे विचरता ममत्व पण सभवे नही, केमके जो तेना मनमा वीतरागावस्था होय तो ससारमा जीवने जे सरागपणु बधननो हेतु छे ते जो उपशमने पाम्यो तो पछी तेने वन तथा घर बन्ने सरखा छे ए कांई जीवने बधनना हेतु थता नथी बध ते एक रागादि लक्षण अशुद्ध उपयोग छे इत्यादिक विचार करतां तथा श्रीवीतरागनी आज्ञा जोता तो स्त्रीने मोक्ष थायछे माटे एवा हठनो त्याग करवो उचित छे एवी रीते स्त्री सिद्ध जाणिये

(९) जे पुरुषना लिगवडे सिद्धस्थाने पहोचे छे ते पुरुषलिग सिद्ध ते लिग पण पूर्वनी पठे त्रण प्रकारना छे – वेद, शृगार ने आकार तेमां वेद त्याग करवा योग्य छे केम के, वेद छतां निश्चेकरी मोक्षनी प्राप्ति थायज नही शृगार छता क्वचित् मुक्ति थायछे ने क्वचित् नथी पण थती तथापि शृगार अप्रधानज छे अने आकार छता मोक्ष थाय छे माटे ते पुरुष लिग सिद्ध कहिये

(१०) जे नपुसक लिगे सिद्धत्व पामे छे ते नपुसक सिद्ध; ते लिग पण पूर्वोक्त रीते त्रण प्रकारनां छे –वेद, शृगार ने आकार तेमां वेद अने शृगार बे त्याग करवायोग्य छे अने आकारनेविषे मोक्ष थायछे माटे ते ग्रहण करवा योग्य छे ते आकार पण त्रण प्रकारनो छे – एक इद्रिय छेदी, एटले वृषणादिक भग करेला, बीजा इद्रिय अवयवसहित एटले बाल्यावस्थानेविषे कामादिक कु

चेष्टायें करी इंद्रियनुं मूलथकी वल गमावीने नपुंसक थया होय ते. अने त्रीजा जे जन्मथीज नपुंसक थया होय ते. ए त्रणेने लोको नपुंसक कहेछे. परंतु परमार्थे जोतां पहेला बे ने नपुंसकपणुं नथी. केमके, तेउनेविषे पुरुष वेदनो अभिलाष होयछे; भोगने अर्थे स्त्रीनी इच्छा करे छे; परंतु पुरुषनी इच्छा करता नथी. पण शुं करे के तेउनां अवयव सावचेत होतां नथी. तेथी योनि भोग न थाय. एउ नपुंसक पणाने बीजी कुचेष्टाथी पाम्या छे; माटे पुरुषवेद छे, नपुंसक वेद नथी. नपुंसक वेद तो जे जन्म जात होयछे तेनेज कहिये. ते नपुंसकने पुरुष तथा स्त्री ए बन्नेने भोगववानी अभिलाषा थायछे; माटे तेज वास्तविक नपुंसक कहेवाय. अत्रवृद्ध आचार्य एम कहेछे के, जे स्वभावे जन्मजात नपुंसक होय तेने चारित्र आवे नही, त्यारे तेने मोक्ष पदनी प्राप्ति ते केम थाय! माटे कृत्रिम नपुंसक लेवो. अने नवीन आचार्य एम कहेछे के, जे कृत्रिम होय ते नपुंसक न कहेवाय. जेने नपुंसक वेद उदयागत होय तेनेज नपुंसक कहिये. कृत्रिमने तो पुरुष वेद उदयागत होयछे, तेथी तेने तो पुरुषवेदज कहिये. एवुं विवेचन करी लेवुं. एवा नपुंसकलिंगे जे मोक्ष थया ते नपुंसक सिद्ध कहेवाय छे.

(११) जे रजोहरण तथा मुखवस्त्रिका प्रमुख छतां कैवल्य पद पामे ते स्वलिंग सिद्धकहेवायछे. (१२) जे तापसादिक प्रमुख बीजा चिन्हवान छतां लोकांत स्थित थयाछे ते अन्य लिंग सिद्ध जाणवा. (१३) जे भरत प्रभृति गृहस्थ वेष धारी छतां लोकना मस्तकनेविषे स्थित थएला छे ते गृहि लिंगी सिद्ध जाणिये. (१४) जे एक समयनेविषे एकलोज सर्वोत्कृष्ट सुखना धामने पाम्यो होय ते एकाकी सिद्ध छे. (१५) अने जे एक समयनेविषे अनेक जीवो सिद्धत्व पाम्या होय ते अनेक सिद्ध कहेवाय छे. वली जे सिद्धावस्था पाम्या बच्चे बीजो कोई समय थई गयो न होय किंतु तेज समयछे ते अनंतर सिद्ध कहिये; अने जेने सिद्धावस्था पाम्याने समयथी उपरांत काल थई गयो होय ते परंपर सिद्ध कहिये. इत्यादिक सिद्ध जीवोना भेद छे.

हवे बीजा संसारी जीवोविषे आम समजवुंः—ते संसारी जीव बे प्रकारनाछे—एक स्थावर बीजा त्रस. तेमां स्थावर पांच प्रकारना छेः—पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय वाउकाय ने वनस्पतिकाय. ए पांचेना वली सूक्ष्म अने बादर ए बे बे भेद छे. अने त्रस जीवो चार प्रकारना छेः—बेंद्रिय, तेंद्रिय, चउरिंद्रियने पंचेंद्रिय तेमां पंचेंद्रिय चार प्रकारना छे—देव, मनुष्य, नारक ने तिर्यंच. ए बधा जीवोविषे सविस्तर जीववि

षड्द्रव्यविचार

चारादि प्रकरणोमांथी जाणीलेवु ए जीव अनतछे, तेहां चेतन गुणछे तथा
रकादि पर्याय छे जे गुणवत तथा पर्यायवत होय तेने द्रव्य कहिये गुण प
य द्रव्य मिति वचनात् एवी रीते जीव द्रव्य जाणवु

अजीव द्रव्यविषे विचार

अजीव द्रव्य पांच प्रकारनु छे – धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्ति
काय, पुद्गलास्तिकाय ने काल तेमां जे गतिपर्याय ने नजनारा जीव तथा पुद्गलोने
सहाय्यकारी होय ते धर्मास्तिकाय ज्या ज्यां धर्मद्रव्य छे त्यां त्यां जीव तथा पुद्ग
लोनी गति थायछे जेम के, अलोकनेविषे ए द्रव्य नही होवाथी त्यां तेओनी
गति थती नथी ए विषे दृष्टांत – जेम मत्स्यनी गतिने सहाय्यकारी जल छे
एटले ज्यां ज्या जल होय त्यां त्यां मत्स्यनी गति थई शकेछे, ते मत्स्य ज्यारे ज
लथी बाहार स्थलनेविषे आवे त्यारे तेनी गति थई शकती नथी केमके, त्यां
जल सहायकारी नथी माटे तेम धर्मास्तिकाय, पण जीव तथा पुद्गलोनी गतिने
सहायकारी छे ए धर्म द्रव्य यद्यपि एकज छे तथापि नयना भेदेकरी एना त्रण
प्रकार छे – सग्रह नयेकरी, व्यवहार नयेकरी तथा ऋजुसूत्र नयेकरी तेमां व्य
वहार नये करी धर्मास्तिकाय द्रव्य असख्यात प्रदेशात्मक धर्मास्तिकाय एक छे
तेम व्यवहार नयेकरी पोतानी बुद्धिए करी परिकल्पित ते धर्मास्तिकायना बे
भाग, त्रण भाग, चार भाग इत्यादि घणा देश छे अने ऋजुसूत्र नये करी अस
ख्यात प्रदेशना प्रत्येक प्रदेशने धर्मास्तिकाय कहिये, एटले खध, देश तथा प्रदेश एने
धर्मास्तिकाय कहियें. एनो गति लक्षण गुण छे, अने अगुरुलघु लक्षण पर्याय छे

अधर्मास्तिकाय ते स्थितिना पर्यायने नजनारा जीव अने पुद्गलोने सहाय्यका
जाणवु ज्यां ज्यां अधर्मास्तिकाय होयछे, त्यां त्यां जीव तथा पुद्गलोनी स्थिति
ई शके छे जेम के, अलोकनेविषे ए द्रव्य नही होवाने लीधे जीव तथा पुद्गलो
स्थिति थई शकती नथी एविषे दृष्टांत –स्थितिना पर्यायने सेवन करनारो
पथिक, तेने छाया सहकारी छे एटले आ ससारमां देशाटन करतां मार्गनेवि
कित थई पीडाने पामेलो जे जीव, ते ज्यां वृक्षनी सारी छाया होय छे, ते
विश्राम करीने साताने पामे छे तेम ज्यां अधर्मास्तिकाय द्रव्य छे, त्यां
विश्रामने पामी रह्या छे ए द्रव्य पण पूर्वोक्त रीते नयना भेदे त्रण प्रका
–तेमां समह नयेकरी असख्य प्रदेश स्वरूप एक खध छे, व्यवहार नयना
द्रव्यनो एकज खध छतां तेना बुद्धि परिकल्पित द्विभाग तथा त्रिभाग प्रमुख

घणा भेद थायछे. अने ऋजुसूत्र नये करी एना जेटला प्रदेश छे ते प्रत्येक अधर्मास्तिकाय कहेवायछे. एनो स्थिति लक्षण गुण छे, अने अगुरु लघु लक्षणपर्याय छे.

आकाशास्तिकाय ते जीवादिक पांच द्रव्यनुं भाजन जाणवुं' केम के, ए द्रव्यनेविषे पोतपोताना स्वरूपे सकल द्रव्यो व्यापी रह्यांछे. ते बे प्रकारनुं छे.—एक लोकाकाश ने बीजो अलोकाकाश. तेमां चौद राज उच्चित लोक कहेवायछे ते अनियत प्रमाण पहोलो छे. परंतु घन करिये तो लांबो तथा पहोलो देशोन सप्त रज्जु प्रमाण समान थायछे. अने अलोक अनंतो छे. ने ते गोलकाकार छे. समस्त पदार्थो लोकनेविषे होय छे, माटे अलोक शून्य छे. एना पण पूर्वनीपठे त्रण भेद थायछे.— तेमां संग्रह नयेकरी अनंत प्रदेशात्मक लोकालोक प्रमाण एक खंध छे; व्यवहार नयेकरी बुद्धिपरिकल्पित बे भाग, त्रण भाग तथाचतुर्भागादिक अनेक प्रदेश छे; अने ऋजुसूत्र नयेकरी ते प्रत्येक प्रदेशरूप जाणवुं. एम एना पण खंध, देश तथा प्रदेश ए त्रण भेद थया. एनो अवकाश लक्षण गुण छे, अगुरुलघु पर्याय छे.

काल ते नव जीर्णोपादक जाणवो. ए सकल पुद्गलोनेविषे नवीनता तथा जीर्णता होयछे तेनो सहकारी कारण छे.

आशंका:— नवीनता तथा जीर्णता थवी एतो पुद्गलनो स्वभावज छे, तेमां कालनुं शुं काम छे? पुद्गलो पोतानी मेळेज नवीन पर्यायोने धारण करेछे, तेमज जीर्ण पर्यायोनुं पण भजे छे. केम के, पुद्गल अने जीव ए बन्ने परिणामी द्रव्य छे; एवुं श्री भगवाने कह्युं छे. जे पूर्वावस्थानो विनाश अने उत्तर अवस्थानु उत्पादन तेने परिणाम कहेछे. एटले पर्यायनो उत्पाद तथा विनाश थायछे; परंतु द्रव्यथी उत्पाद तथा विनाश कहेवाय नही. एवी रीते पुद्गलनेविषे परिणामपणुं होवाथी स्वयं उत्पाद तथा विनाशरूप नवीनता तथा जीर्णता पर्यायने पामी रह्या छे. कांई द्रव्यनो सर्वथा नाश तथा उत्पाद थतो नथी त्यारे काल द्रव्यनी अधिक कल्पना ते शासारु करवी जोये?

उत्तर:— यद्यपि नवीनता तथा जीर्णता जे पुद्गलना पर्याय छे ते पुद्गलनेविषेज छे. तथापि त्यां निमित्त कारण काल द्रव्य छे. केमके, नियते करी होय छे. परंतु अनियत पणे क्हां होतुं नथी. जेमके, चंपक, अशोक तथा सहकार प्रमुख वनस्पतिनेविषे कुसुम संपदा, काले थाय छे; मद्दा हिमकण मिश्रित शीतल पवन काले थायछे; मेघवृष्टि, घनगर्जित, तथा विद्युत् झात्काराढ़िक कालेकरी थाय छे; तेमज ऋतुविभाग, बाल कुमार तथा यौवनावस्था, तथा पलित गमादि

क पण काले करी थायछे इत्यादिक व्यवस्थानेविषे काल सहकारी छे काल निमित्त कारण न होय तो सर्व वस्तु व्यवस्था रहित थई जाय जे सत ऋतु आव्या विना आंबा चंपक, अशोक तथा सहकार प्रमुख वनस्पतिनेवि फूल आवे, ऋतुउ आगल पाछल थई जाय, बाल्यावस्थानेविषे जरा थाय, स्थामां बाल्यावस्था थाय, यौवनावस्था प्राप्त थयाविना वानिकाउ गर्भ ध करे, इत्यादिक अव्यवस्था, कालद्रव्य नही मान्याथी थई जाय एटले वधु वि तज थयां करे पण तेम तो कांईज थतु नथी, तेथी काल निमित्त कारणछे केम सर्व पोतपोतानी कालमर्यादाएकरी थायछे माटे पुद्गलतानेविषे नवजीर्णता आपादक काल छे ते काल एक प्रदेशी समय लक्षण छे ते समय पण जे व मान वर्त्तेछे ते लेवो केमके, अतीत समयनो विनाश छे अने अनागत समयन उत्पाद थयो नथी ते वर्त्तमान समय पण अनंतो छे जेटला पुद्गल द्रव्यना पर्याय छे ते प्रत्येकनेविषे एकेक वर्त्तमान समय छे तेमाटे यद्यपि एक छे तथापि अनंतनेविषे लागेलो होवाथी अनंतो कहेवाय छे.

आशंका – (अन्यतीर्थी) एक छतां अनंतनी साथे केम लागेछे?

उत्तर – जेम तमे सत्ताने एक मानता छतां ते अनेक द्रव्यपर्यायनेविषे रहेन मानो छो। तेम ए पण मानी लेवु जेने तमे सत्ता कहोछो तेने अमे वर्त्तमान समय कहिये छैये मात्र नामनो फेर छे

आशंका –समयतो एक छे अने पूर्वापर कोटी विनिर्मुक्त छे त्यारे आवलिकादि व्यवहार केम थशे? तेतो असंख्यात समय मलेछे, त्यारे एक आवलिका थायछे

उत्तर – अही बे नय छे – एक निश्चय ने बीजो व्यवहार निश्चय ते परमा थैनी साथे मलेले अने व्यवहार ते लौकिकविषे होयछे तेमां निश्चय नये करी तो एक समय लक्षणकाल छे, अने व्यवहार नयेकरी आवलिकानी कल्पना छे ते असद्भूत कल्पनाएकरी कहिये छैये – असंख्यात समय मले त्यारे एक आवलि का थायछे, तेवी एक कोडी सडसठ लाख सितोतेर हजार बशेने शोल आवलि का थाय त्यारे एक मुहूर्त्त थाय यथा समयावली मु० ए सर्व व्यवहारे करीने कहेवायछे परंतु परमार्थे जोतां तो सर्व कल्पना छे ए समय लक्षण काल पि सताळीश लाख योजन प्रमाण समय क्षेत्रनेविषे छे पण बाहार नथी ते पर मार्थ जाणीलेजो ज्यां आदित्य गतिछे, त्यांज काल व्यवहार छे ए अधिकार विवाह प्रज्ञप्ति सूत्रनी वृत्तिमां श्रीअभयदेवसूरिए कह्योछे यत "आदित्य ग

ते स्तद्व्यंजकत्वात्. कालनुं व्यंजक आदित्यगमन ते ज्ञापक छे. अने बाहारना द्वीपनेविषे आदित्यनुं गमन नथी; त्यां स्थिर छे. आशंका.— काल तो मात्र मनुष्य क्षेत्रनेविषेज छे, तेथी बाहार नथी एवुं तमारा कहेवा उपरथी थयुं. त्यारे बाहारना द्वीपोनेविषे तथा स्वर्ग नरकनेविषे कालनी केम खबर पडे? उत्तरः— मनुष्य क्षेत्रनी अपेक्षाए करीनेज त्यां कालनो व्यवहार कहेवाय छे. अत्र समय ते द्रव्य जाणवुं: द्रव्य परावर्त्तन लक्षण गुण जाणवो; अने अगुरु लघु पर्याय जाणवो.

एविषे दिगंबरी आम माने छे.— "लोकाकाशनेविषे जेटला आकाश प्रदेश छे, तेनेविषे एकेक कालनो अणु छे. एटले असंख्यात कालना अणु छे. एवुं श्री नेमीचंद्र सिद्धांतिए द्रव्य संग्रहमां कह्यु छे. यतः लोआगास पएसे, इक्केक्क जे ठियाहु इक्किक्का; रयणाणं रासीमिव, कालाणु असंख दव्वाणि. तेवा असंख्यात कालाणुनुं संमेलन थाय त्यारे एक समय कहेवाय छे. समय ते पर्याय छे. ते अणु पण सूर्यमंडलभ्रमिलक्षण निमित्त कारण पामीने एकठामळे छे त्यारे समय नीपजे छे. जेम चक्रभ्रमि निमित्त कारणनी जोगवाई पामीने मृत्पिंडनो घडो नीपजे छे. तेवी रीते एपण जाणी लेवुं"

एने श्वेतांबर दूषण दियेछे.— एम जो मानिये तो छठो अस्तिकाय थशे. केम के, जेने खंध, देश तथा प्रदेश होय तेने अस्तिकाय कहेछे. अहीं समय ते खंध द्विभाग कल्पनारूप देश तथा कालाणु ते प्रदेश ठरेछे. एम मान्याथी विपरीतता थशे. अने अस्तिकाय तो पांचज छे. अने कालने तो श्वेतांबर तथा दिगंबर कोइपण अस्तिकाय कहेता नथी

पुद्गल द्रव्य जे वस्तु पूर्ण तथा गलन धर्मयुक्त होय ते जाणवुं. एटले कोइ एक खंधनेविषे पुद्गल पूराता होयछे, अने कोइएक खंधनेविषे गलन एटले वीखरी जता होयछे. एवुं कालादि कारण पामीने थायछे. एवो पुद्गलोनो स्वभावज होयछे, तेना चार भेद छेः—खंध, देश प्रदेश ने परमाणु तेमां प्रथम खंधना अनंत प्रकार छे — बे प्रदेश एकठा थवाथी द्विप्रदेशी खंध. त्रण प्रदेशो मळ्याथी त्रिप्रदेशी खंध. एम यावत् संख्यात प्रदेशी. असंख्यात प्रदेशी तथा अनंत प्रदेशी खंध जाणी लेवा तेमज देश पण द्विभाग तथा त्रिभाग लक्षण जाणी लेवो.

आशंका —खंधमां घणा परमाणु आवी मळे छे माटे तथा देश व्यवहार गणाय छे, केम के, तेना जेटला देश करिए तेटला थई शके छे. जेम के, साक्षात खंध अधों अर्ध करिये तेने बे देश कहिये; एम त्रण विभाग करवाथी त्रण देश थाय; ने

यावत् चार, पांच, संख्यात, असंख्यात तथा अनंत सुधी थई शकेछे, एवी रीते जे वडो मोटो खंध होय तेना अनुसारे देशनी कल्पना थई शके छे परंतु मात्र बे प्रदेशिउंज खंध होय तेनेविषे देशविभाग केम थई शके ? केम के, तेमा तो मात्र बे परमाणुउंनुज मेलन होय छे तेने ज्यारे बे प्रदेशोनी कल्पना थाय त्यारे खंध परिणामनेविषे देश तथा प्रदेश ए बन्नेनो व्यवहार सिद्ध होवाथी तेमा देश कीयोने प्रदेश कीयो समजवा ?

उत्तर –देश अने प्रदेशमा काई सर्वथा भेद नथी केम के, खंधनेविषे द्विभाग त्रिभागादिक अवयव छे, तेने देश कहेछे ते देश पण बे प्रकारना छे –एक सांश छे, बीजा निरांश छे. एटले जे सांश छे तेने पण देश कहिये ने जे निरांश छे तेने पण देश कहिये तेम निरांशने प्रदेश पण कहे छे. प्रकृष्ट जे देश तेने प्रदेश कहिये, एटले जेमा बीजो कोई अंश मळे नही तेने प्रदेश कहेवो ए माटे बे प्रदेशी आ खंधनेविषे देश पण बे कहिये, ने प्रदेश पण बे कहिये एटले जे बे प्रदेश छे तेनेज बे देश कहिये. बे प्रदेशी खंधनेविषे सांश देश न थाय, किंतु निरंश देश ज थायछे तथा त्रण प्रदेशी खंधनेविषे एक बे प्रदेशीउं खंध ते देश थाय, बीजो एक प्रदेशीया थाय परमाणु अर्द्ध अर्द्ध न थाय केमके, श्रीवीतराग देवे परमाणुने अछेद्य तथा अभेद्य कह्यो छे. माटे त्या जे बे प्रदेशीउं देश कह्यो ते सांश जाणवो, अने जे एक प्रदेशीउं देश ते निरंश जाणवो एम सर्व ठामे खंधनेविषे विचारी लेवु' जेटला खंधना जे अवयवछे ते देश कह्या ने तेज प्रदेश कहिये प्रदेश ते निःप्रदेशीय अवयव जाणवा अने सप्रदेशी अवयवने देश कहेछे ने ज्यां सप्रदेशी अवयवनो संभव नहोय त्या निःप्रदेशीय अवयवने पण देश न कहेछे ते बे प्रदेशीया खंधनेविषे प्रसिद्धपणे जाणवो तथा एक देश प्रदेश लक्षण व्यवहार ते ज्यारे खंधरूपे परिणम्यो होय त्यारे तेने परमाणु पुंज कहिये तथा जे खंधपणे परिणामने पाम्या नथी ने प्रत्येके प्रत्येके एकांकी रह्या छे तेने परमाणु कहिये अही प्रसंगथी काळनी स्थिति मर्यादा लिखिये छैये –एक परमाणु बीजा परमाणुनीसाथे न मळीने खंधभावने न पाम्यो होय किंतु एकाकीज रह्यो होय, तेना जघन्यथी एक समय काळ ने उत्कृष्टथी असंख्यातो काळ जाणवो त्यार पछी वळी खंधरूप परिणामने पामेछे एम एक परमाणु आश्री समजवु पण सर्व परमाणु आश्रीतो अनंतो काळ जाणवो एवु कोइ समये पण जणातो नही, जे समये सर्व परिमाणुओ खंधपणे परिणामने पामेला होय, ज्यारे जाइ

छुं त्यारे लोकनेविषे अनंतानंत परमाणु छूटा ढीगमां आवेछे. अने जे एकाकी खंध रहेछे तेनी स्थिति जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी असंख्यात काळनी होय छे. पुद्गलसंयोगनो स्थिति उत्कृष्टी असंख्यात काळथी अधिक होय नही. ए पण एक काळ आश्री जाणवुं सर्व काळ आश्रीतो सर्व काळनुं अवस्थान जाणवुं. केमके एवो कोई पण काळ होतो नथी के जे काळे सर्व लोक खंधथी शून्य होय. एम विचारी लेवुं. एकाळनी स्थिति कही हवे काळनी मर्यादा आम छेः— परमाणु, एकाकी भावनो त्याग करीने अन्य परमाणु द्व्यणुक त्रिअणुकादि साथे मळीने खंध भावने पाम्या छे, ते पाछा पूर्वना परमाणु भावने पामे एटले एकाकी थाय तेमां जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी असंख्यातो काळ जाणवो.

आशंका.— अनंत प्रदेशीया खंधनेविषे जे संयुक्त परमाणुउ छे ते असंख्यात काळसुधी उत्कृष्टपणे ते खंधनेविषे रहेछे. ते खंधनो ज्यारे भंग थायछे त्यारे ते मांथी लघु खंध निष्पन्न थायछे. तेमां पण ते परमाणुउ असंख्यात काळसुधी रहेछे. एवी रीते एक खंधना अनंत खंध थई शकेछे. ते प्रत्येक खंधमां असंख्यात काळसुधी परमाणुनी स्थिति होवाथी अनुक्रमे अनंत काळनो संभव थायछे; त्यार पछी ते एकाकी पणाने पामेछे. एवी रीते अनंत काळनो अंतर पण संभवेछे. त्यारे असंख्यात काळनोज अंतर केम कहोछो? उत्तरः—अरे भाई, जो एटला काळसुधी पुद्गलनो संयोग रहेतो होय तो एम संभवे पण पुद्गलनो संयोग तो असंख्यात काळसुधीज रहेछे. तदनंतर वियोग थई जायछे.

आशंका — परमाणु खंधनी साथे मळेलछे ते खंधविनाश पामेतो असंख्यात काळ उपरांत विनाश पामेछे एटलेज ए सूत्र चरितार्थ थयो पण ते विवक्षित परमाणुनुं आश्रयिभूत खंधनो वियोग थये ते परमाणुने सुं. ते माटे एमके, परमाणुनो खंधने विषे अथवा अन्यपरमाणुनी साथे संयोग थयोछे तेनो पाछो वियोग पण असंख्याते काळे थायछे. उपरांत रहे नही.

आशंका. एकाकी परमाणु पणे करी केवी रीते वियोग कहोछो?

उत्तरः— सूत्रना प्रमाणे करी कहिये छैए. एटले श्री व्याख्यात प्रज्ञति प्रमुख सूत्रनेविषे कहेलुं छे के परमाणु वळी परमाणु पणे भजे तो पाछो उत्कृष्ट असंख्याते काळे भजे तेमज जे बे परमाणुआ मळीने खंध थयो छतां तेनो विध्वंस थया पछी फरी ते बन्नेनो संयोग जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी अनंत काळे थायछे.

—लोकनेविषे अनंत परमाणुउ छे, अनंत द्व्यणुक खंध छे; एम त्र्यणुक, चतुर

णुक, सख्याताणुक, असख्याताणुक अने अनताणुक, एटली जातिना खध ते सर्व अनत अनत प्रत्येके प्रत्येके छे तेनी साथे प्रत्येके प्रत्येके उत्कृष्ट का स्थितिये जो मिले, तो तेनो वियोग थता पण अनत काल थाय त्यारे पछी फरी ने विस्रसा परिणामे, ते पुद्गल सयोग थाय माटे अनत काल कह्यो छे

हवे वली प्रसगथी क्षेत्रस्थिति लखिये छैये –परमाणु एक आकाशना प्रदेशने रोकेछे पण बीजा प्रदेशने रोकी शके नही, एटले जेवडो आकाश प्रदेश छे तेव मो परमाणु छे, परतु आटली विशेषता छे के, आकाशनो प्रदेश अमूर्तिक छे ने परमाणु मूर्तिक छे, माटे बे प्रदेशमा पण समावेश थाय, त्रण प्रदेशमां पण स मावेश थाय एम यावत् सख्यात तथा असख्यात प्रदेशमां पण तेउनो समावे श थई शकेछे, ते खध पण असख्यात प्रदेशी तथा अनत प्रदेशी जाणवा, बे प्र देशी खध जघन्यथी एक प्रदेशमा समाई सके, अने उत्कृष्टथी बेज प्रदेशने रोके छे, तेमज त्रिप्रदेशी उत्कृष्टथी त्रण प्रदेश रोकेछे, ए प्रमाणे जे खध जेटला प्रदे शनो होय ते तेटलाज आकाशना प्रदेशने उत्कृष्टथी रोकेछे, तथा जघन्यथी सर्व नेविषे एकज प्रदेश कहेवो, तथा अनत प्रदेशी खध उत्कृष्ट पणे असख्यात प्रदेशने रोकी शकेछे पण अनतने रोके नही केम के, लोकाकाशना अनत प्रदेश छेज नही

आशका –एक आकाश प्रदेशमा अनत प्रदेशीआ खधनो समावेश केम थाय

उत्तर –आकाशनेविषे अवगाह गुणछे, तेणेकरी ज्या एक पुद्गल छे त्याज अ नत पुद्गलोनो समावेश थई शकेछे जेम एक प्रदीप प्रभानेविषे अनेक प्रदीप प्रभा नो समावेश थई जायछे, तथा जेम एक पारद कर्षनेविषे सुवर्ण शत कर्ष समाई जायछे एवो पुद्गलनो धर्म छे माटे एक आकाशना प्रदेशमा अनतपरमाणु अन त द्व्यणुक, अनत त्र्यणुक अनत सख्याताणुक अनत असख्याताणुक तथा अ नत अनताणुक खध छे, ते पोतपोताना स्वभावे करी रह्या छे

आशका –समग्र लोकनेविषे एक खधनी अवगहना केम थाय ?

...विचित्र स्वभाव छे, कोई तो लोकनो सख्यातमो भाग ...ा असख्यातमो भाग अवगाहीने रहेछे, अने कोईक छे, ते पण वली असख्य प्रदेशीउ तथा अनत प्रदे ...सख्यात प्रदेशीउ कोई असख्यात प्रदेशने रोकी शके नही ...हु ने, कोईएक अनत प्रदेशीउ खध एक समयमां स ...ाने, ते केवल समुद्घातनी परे जाणी लेवु, ते आ प्रमा

ऐः—कोईएक अचित्त महाखंध विश्रसा परिणामेकरी पहेला समये असंख्याता योजन विस्तार सहित दंम करी बीजा समये कपाट करे; त्रीजा समये थाणु करे; चोथा समये प्रतर पूरण करे; ते करीने समस्त लोकमां व्यापी रहे; पछी पांचमा समये प्रतर संहरे, छठ्ठा समये थानक भाजे; सातमां समये कपाट भाजे; आठमा समये दंम संहरीने खंम खंम थाय; एमां चोथो एक समय कह्यो, ते सकल लोकने विषे व्यापी रहेवाविषे जाणवुं, एनुं वर्णन श्रीविशेषावश्यकमां पण विशेष करेलुंछे.

अशंकाः—(बौद्ध मतानुसारी) एक आकाश प्रदेशनेविषे रहेला एक परमाणुने बीजा छ प्रदेशनी फरसना होय छे. जे समये पूर्व दिशाने फरसे छे तेजस्वरूपे पश्चिम दिशाने फरसतो नथी. तेथी अपर स्वरूपे फरसे छे एवुं जणायछे केमके, जो तेज स्वरूपे फरसे तो षट् दिग्संबंध संभवे नही. अने षट् दिग्संबंध तो लोक प्रसिद्ध छे जेम के, आ पश्चिम दिग्संबंध, आ पूर्व दिग्संबंध. तथा आ उत्तर दिग्संबंध प्रमुख छ ए दिग्संबंध भिन्न भिन्न कहेवा अन्यथा षट् दिग् फरसना केम कहेवाई शकाशे? अने परमाणु तो निरंश छे, माटे एक अंशनेविषे छ संबंध भिन्नभिन्न केम थाय? ए कारण माटे परमाणुने सांश कहेवुं जोये. त्यारेज भिन्नभिन्न स्वरूपे षट् दिशाओनी फरसना घटमान थशे.

उत्तरः—(जैनी) परमाणु तो निरंशज छे. सांश कहेवायज नही. परंतु पुद्गल परमाणुनेविषे अचिंत्य परिणाम शक्ति होवाथी तेणेकरी नैरंतर्यपणे छ दिशानीसाथे रह्योछे. अने छ दिशाओनी फरसना करे छे. पण अंशेकरी फरसना न समजवी. (वली बौद्धने कांईक विशेष पूछेछे.) तमे केम ज्ञानना संताननेविषे एकज क्षणने कारण कार्यभाव संबंध मानोछो? पूर्व ज्ञान जनक जे क्षण ते पण निरंश छे तेम छतां तेमां बे अंशनी कल्पना करोछो, जे अंशे करी कारणसंबंध छे. तेज अंशेकरी कार्यसंबंध नथी; अने जे अंशेकरी कार्यसंबंध छे तेज अंशेकरी कारण संबंध नथी. ए तमारी युक्तिये तमाराज गलामां फासी आवे छे माटे एम मानवु जोये छे के, क्षणतो निरंश छे पण वस्तु व्यावर्त्तनेकरी कार्यकारण भाव संबंधनी कल्पना थई शके छे. एम परमाणुनेविषे पण विचार करीलेजो.

हवे वली प्रसंगथी क्षेत्रवगाहनी स्थिति लखीये छैए—जे आकाश प्रदेशनेविषे जे पुद्गलद्रव्य रह्युं छे ते एक प्रदेशावगाढ, संख्य प्रदेशावगाढ, अथवा असंख्य प्रदेशावगाढ जघन्यथी एक समयसुधी रहे; ने त्यार पछी एक प्रदेशावगाढ ते द्विप्रदेशावगाढ पामछे, अने द्विप्रदेशावगाढ ते त्रिप्रदेशावगाढ थायछे ने उत्कृष्टथी तो अ

संख्यात काळ पछी थाय परंतु अनंत काळसुधी एकावगाढपणे रहे नही, एवो एनो स्वभावज छे हवे अवगाहनुं अंतर लखिये छेए –जे परमाणु ए करीने जे आकाशनो प्रदेश अवगाहित थएलो होय तेज ठेकाणे जघन्यथी एक समय अने उत्कृष्टथी असंख्यात काळसुधी रहेछे त्यार पछी वळी बीजा प्रदेशनी अवगाहना करेछे एम फरतो फरतो फरि तेज आकाश प्रदेशनेविषे उत्कृष्टथी असंख्यात काळे आवीनाय छे केमके, आकाशना असंख्यात प्रदेशज छे

आशंका – मूळ प्रदेशनो त्याग करी बीजा असंख्यात आकाश प्रदेशीय अनंतवार फरसीने पछी पाछो आवीने मूळनो प्रदेश फरसतां अनंतकाळनुं अंतर संभवेछे तेम छतां असंख्यात काळनुज अंतर कहेवानु कारणशु?

उत्तर – पुद्गलनो एवो स्वभावज होयछे के, ते असंख्यात काळसुधी फरीने पाछो तेज आकाश प्रदेशनी अवगाहना करेछे

हवे पुद्गलना गुण कहिये छेए – जेणेकरी वस्तु, अलंकृत एटले शोभायमान दीसमां आवे तेने वर्ण कहेछे तेना पाच प्रकार छे –कृष्ण, नील, श्वेत, पीतने रक्त ए वधा पुद्गलने विषे होयछे अहीं कोईक नैयायिक छगो विचित्र वर्ण पण मानेछे ते पाच वर्णोंना संयोगथी उपजे छे तेने सर्वथा भिन्नज कहेछे, पण ते भिन्न नथी

गंध बे छे – एक सुगंध बीजो दुर्गंध अत्र कोई त्रीजो विचित्र गंध पण मानेछे ते पण संयोगथी उत्पन्न थायछे परंतु भिन्न नथी

रस पांच छे – तिक्त, कटुक, कषाय, आम्ल तथा मधुर कोईक लवणने छगो रस कहेछे परंतु तेनो मधुर रसनेविषे अंतरभाव छे ते आ प्रमाणे – सर्व भोजन तैयार कर्युछतां तेमां यद्यपि बीजा सर्व द्रव्योनु मेळन होय छे तथापि जो एक लवणनु प्रक्षेपण कर्यु न होय तो ते भोजन मधुर लागतु नथी एटला माटे लवणने पण मधुरज कहेवु

स्पर्श आठछे – कर्कश, मृदु, गुरु लघु, उष्ण, शीत, स्निग्ध ने रूक्ष ए आठ फरस पुद्गलनेविषे होयछे एम सर्व मळी वीश गुण पुद्गलना जाणवा तेउमांना पांच गुण एक परमाणुनेविषे मळी आवेछे ते आवी रीते – पांच वर्णोमांनो गमे ते एक वर्ण, पांच रसमांनो गमे ते एक रस, बे गंधमांनो गमे ते एक गंध, अने आठ फरसमांना चार फरस नथी होता, ते आ – कर्कश, मृदु, गुरु ने लघु ए चार स्पर्श सूक्ष्म परमाणुनेविषे न होय अने शीत, उष्ण, स्निग्धने रूक्ष ए चारमां पण विरोधी बे गुण एक प्रदेशनेविषे न होय जेम के, शीतनो विरोधी उष्ण

गुण छे तथा स्निग्धनो विरोधी रुक्ष गुण छे. ते माटे अविरोधि बे गुण होय शीत स्निग्ध अथवा शीत तथा रुक्ष अथवा उष्ण स्निग्ध अथवा उष्ण ने रुक्ष, एम विपरीत पणे पण थई शकेछे. माटे परमाणु एक अंश छे तेमां अविरोधी बे फरस लेवा. एवी रीते पांच गुण एक परमाणुनेविषे जाणवा. बे प्रदेशीआ खंधनेविषे उत्कृष्टथी दश गुण होयछे. केमके, तेमां भिन्न भिन्न बे वर्ण, बे रस, बे गंध तथा चार अविरोधी स्पर्श ते बे बे जूदा जूदा प्रदेशनेविषे होय ए दशगुण बे परमाणुना जाणवा. एम त्रिप्रदेशी खंधनेविषे उत्कृष्टथी बार गुण होयछे, ते आ प्रमाणेः—एक वर्णने एक रस ए बे गुण द्विप्रदेशी खंधना करतां एमां अधिक होय छे. केमके त्रण प्रदेश होवाथी गंध तो प्राये बेज छे, अने फरसतो सूक्ष्म परिणामे चारज होयछे. तथा चार प्रदेशीआ खंधनेविषे उत्कृष्टथी चौदगुण होयछे. तेमां चार वर्ण चार रस ने बाकीनासर्व पूर्वोक्त रीते जाणवा. पंच प्रदेशीआ खंधनेविषे पांच वर्ण, पांच रस, बे गंध, तथा चार फरस ए शोल गुण होयछे. एम संख्यात प्रदेशीओ खंध, असंख्यात प्रदेशीओ खंध तथा अनंत प्रदेशीओ खंध जेटली वारसुधी सूक्ष्म परिणाम पणे परिणाम्यो होय छे त्यांसुधी तेओनेविषे उत्कृष्टथी शोल गुण होयछे. अने जघन्यथी तो पूर्वे जे पांच गुण परमाणुनेविषे कहेला छे तेटलाज अनंत प्रदेशीया खंधनेविषे पण होय छे.

हवे बादर परिणाम कहियेछेए—बादर परिणामनेविषे जघन्य तो सात गुण होय छेः—गुरु, कर्कश, अथवा मृदु. लघु, ए बे स्पर्श अविरोधी लेवा; अने पांच गुण मूलगा लेवा अने उत्कृष्टथी तो वीश गुण होयछे हवे एना पर्याय कहियेछेए'--पर्याय ते एक गुण कृष्ण तेम एक गुण नीलादिक पण जाणवा जेम के, एक परमाणुमां सर्व जघन्य पणे कृष्ण वर्ण होय तो ते एक गुण कालो कहिये. पछी वली तेथी बमणी कालाश ते द्विगुण कृष्ण कहिये एम यावत संख्यात गुणो, कालो असंख्यात गुणो कालो तथा अनंत गुणो कृष्ण वर्ण होयछे; एप्रमाणे सर्व पर्यायो जाणवा. एम नील तथा पीतादिकनेविषे पण एजरीते जाणी लेवुं.

आशंका'--गुण अने पर्यायनेविषे भेद शुं छे? जे गुण कह्या तेने पर्याय कहोछो.

उत्तर.-- गुण तथा पर्यायनेविषे कांइक भेदछे. " सह भाविनो गुणाः क्रमभाविनः पर्याया. " जे सदैव सहवर्त्ती छे एटले वर्ण, गंध, रस तथा स्पर्श, ते गुण जाणवा ए सामान्यपणे मूर्तिमंत द्रव्यथी एक देश भिन्न न होय माटे गुण कहेवायछे, अने जे अनुक्रमे होय ते सदा सहभावी न होय तेने पर्याय क

हिये जेम के, एक गुण कालत्वादिक ते द्विगुण कालत्वादिक अवस्थायकी निवत्त
ठे, तथा द्विगुण कालत्वादिक त्रिगुण कालत्वादिक अवस्थायकी निवर्त्तनने पामे
ठे एम पूर्व पूर्व पर्यायनुं निवर्त्तन एटले नाश अने उत्तर उत्तर पर्यायोनो आवि
र्भाव एटले उत्पत्ति थायठे तेने पर्याय कहिये ए प्रमाणे एक गुण रस तथा द्वि
गुण रसादिक, तेमज एक गुण गध तथा द्विगुण गधादिक, वली एक गुण कर्कश
तथा द्विगुण कर्कशादिक, अने स्पर्शना पर्याय पण जाणी लेवा

हवे पुद्गल सस्थान कहेठे –गोल सस्थान ते मोदकवत्, वर्त्तुल सस्थान ते वल
यवत्, लब सस्थान ते दमवत्, अश सस्थान ते शृघाटकवत्, चतुरस्र सस्थान ते
अयोघनवत्, जाणी लेवा ॥ इति जीवादि षट् द्रव्यस्वरूप ज्ञेय ॥

अथ द्रव्य लक्षण कथ्यते –अनुष्टुप् वृत्तम् प्रणम्य परमात्मान, कर्मक्लेशवि
वर्जितम् ॥ द्रव्याणा लक्षण वक्ष्ये, जैनेंद्रमतदीक्षिद ॥ १ ॥

जे वस्तु कालत्रयनेविषे वर्त्ते ठे तेने सत् कहिये ने तेज द्रव्य जाणवु
ते सत् शब्दनु लक्षण आवु ठे – "उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त हि सत्" जे वस्तु
पर्यायनी अपेक्षाए कथचित उपजे ठे, वली कथचित् जघन्यथी समयांतरे
तथा उत्कृष्टथी असख्याता काल पठी ते वस्तु पर्यायनी अपेक्षाए विनाशने
पामे ठे, अने तेज वस्तु द्रव्यथी क्यारे पण उत्पन्न न थाय, तेम विनाश पण
पामे नही किंतु सदा सर्वदा कायम होय तेने सत् कहेठे तदुक्त श्रीमतिचंद्रे
"ध्रौव्योत्पादव्ययोपेतं, द्रव्य कालत्रये स्थितम्, द्रव्यतस्तत्र सत्व हि जन्मनाशौ
च पर्ययात्" तत्र दृष्टात जेम एक जीव द्रव्यनेविषे नारक पर्यायनो विनाश
होय, अने नर पर्यायनो उत्पाद होय पण जीव द्रव्य तेज ठे तेनो मूलथी उ
त्पाद तथा विनाश होतो नथी सदा सर्वदा शाश्वत ठे तथा पुद्गल द्रव्यनेविषे
मृत्पिण्ड, स्थास, कोश, कुशूल, शिवक, ठत्र, घट तथा कपाल प्रमुख पर्यायोना उत्पा
द तथा विनाश थायठे, ते कालादिकनी जोगवाई पामीने थायठे ते आ प्रमाणे –
प्रथम पुद्गल परमाणु विस्रसा परिणामेकरी मृद्आकारे परिणामने पामेठे, तेनो
कुभकारना योगथी मृत्पिण्ड थायठे, त्यार पठी ज्यारे चक्रनी उपर चडेठे त्यारे
चक्रभ्रमि निमित्त कारणनी योगताथी स्थास परिणामने पामेठे, पठी हस्त प्र
मादिक लक्षण तथा पुरुष व्यापार लक्षण निमित्त कारणनी योगताथी कोश
परिणामने भजेठे, पठी तेज कुशूल तथा शिवक परिणामे थायठे ते ठत्रक ज्यारे
बुध्न, पेट, तथा ग्रीवक परिणामने पामेठे त्यारे घट कहेवाय ठे तथा त

वली घटनोदन मुद्गराद्यभिघात थकी कपाल परिणामने पामे छे, त्यारे कपाल माला कहेवायछे. एटले पूर्व पूर्व पर्यायोनो विनाश थतो जायछे ने उत्तरोत्तर पर्यायोनो उत्पाद थतो जायछे. पण पुद्गल द्रव्य सदा शाश्वतज छे. जो ते सत्ता पुद्गलादिक द्रव्यनी न मानिये तो उत्पाद तथा विनाश निरर्थक थाय. जो वस्तु थी कांई छेज नही तो उत्पत्ति शानी थाय? अने जेनी उत्पत्ति थती नथी तेनो विनाश पण थतो नथी, यथा षड्द्रव्य. जे विनाश थायछे तेज उत्पन्न थाय छे; अने जेनो विनाश न थाय तेनी उत्पत्ति पण न थाय. माटे उत्पाद, विनाश तथा सत्ता ए एकज छे. तथोक्तं श्रीमतिचंद्रैः "उत्पाद. केवलो नास्ति, विनाशोपि न केवलः; किंतु सत्तासमाक्रांतो. नापि सत्ता च तौविना, १ यडुत्पन्नं च तन्नष्टं यन्नष्टं तच्च जन्मयुक्, यच्च वस्तु नचोत्पन्नं, दृष्टं नष्टं कदापिन. २ कालादिपंच सामग्री, प्राप्य द्रव्येषु पर्ययाः; उत्पद्यंते विपद्यंते, जलकल्लोलवत्कले. ३"

आशंकाः--तमे जे पूर्व पूर्व पर्यायनो विनाश मानो छो तेविनाशनुं अपर नाम अभाव छे, माटे ते सर्वथा प्रकारे भावथी भिन्न छे, किंवा अभिन्नछे जो सर्वथा भावथी भिन्न मानिये तो अवस्तु स्वभाव थाय, अवस्तु स्वभावनी सिद्धता थयाथी कोई कार्यनी सिद्धि थशे नही, तथोक्तं श्रीमतिचंद्रैः--तुच्छरूपोहि यो भावः सकथं कार्यसाधकः; अदारिद्रं भवेद्विश्वं, सचेद्यदि फलेग्रहिः १ तथा भावनेज सर्वथा अभाव कहेशो, तो भावनी प्रतीतिनो लोप थशे, अने तेम थयाथी सर्व जगत् शून्य ठरशे. त्यारे तमे अभाव ते शाने कहोछो?

उत्तरः--भावथकी कथंचित् भिन्न अभाव होयछे, जे सर्वथा भिन्न कहे वाय नही. अने सर्वथा अभिन्नपण न कहेवाय ते कथंचित् भिन्न कहिये ते आवी रीतेछे.-समस्त वस्तुउनेविषे बे अंश होयछे--एक सदंश ने बीजो असदंश तेमां पर्यायनी अपेक्षाये अतीत तथा अनागत पर्यायने असदंश कहेछे, ने वर्त्तमान पर्यायने सदंश कहे छे. ए सदंश भावरूप कहेवायछे.अने असदंश अभावरूप कहेवाय छे. अभावनुं लक्षण न्याय शास्त्रमां आवी रीते कह्यु छे--द्रव्यपर्यायोभयात्मभाव इति" एटले जे अभाव ते पण द्रव्य अने पर्यायथी भिन्न नथी. जे भाव स्वभाव तेअभावछे. तेना चारप्रकार छेः--प्रागअभाव, प्रध्वंसाभाव, अत्यंताभाव ने अन्योन्याभाव. तेमां प्रथम प्रागभावनुं लक्षण आ प्रमाणेः--यन्निवृत्तावेवकार्यस्यउत्पत्तिः सोस्यप्रागभावः जे पर्यायनेविषे विनाशेकरीने अवश्य अपरपर्यायनी उत्पत्ति थाय छे ते उत्पद्यमान उत्तर पर्यायथी पूर्वे जे विनाशी पर्याय छे तेने प्रागभाव कहेवो. अत्र

जेम क्षीरना विनाशथी दधिनो उत्पाद थायछे माटे दूधनेविषे दहीनो प्रागभाव क
हेवाय जेनो पूर्वे अभाव होय तेने प्रागभाव कहेछे ज्यांसुधी दधिरूप पर्याय थयु न
थी त्यांसुधी तेनो क्षीरनेविषे प्रागभाव छे. एम मृत्पिंडने घटनो तथा तंतुपुंजने
पटनो पण प्रागभाव संबंध जाणी लेवो हवे प्रध्वंसाभावनु लक्षण आ प्रमाणे –उ
त्पत्तौ कार्यस्यावश्यं विप्रतिपत्ति सोऽस्यप्रध्वंसा भाव जे पर्याय उत्पन्न थयाथी जे प
र्यायोनो अवश्य करी विनाश थायछे, ते विनाशी पूर्व पर्यायथी उत्तर पर्यायनेविषे
प्रध्वंसाभाव कहेछे अत्र दृष्टांत जेम दूधना विनाशथी अवश्ये करी दधिज होय
छे तेथी दहीनेविषे दूधनो प्रध्वंसाभाव कहेवाय तेम मृत्पिंडना विनाशथी अवश्ये
करी घट, तथा तंतुपुंजना विनाशथी अवश्येकरी पटनी उत्पत्ति होयछे, तो ते पटने
तथा पटने प्रध्वंसाभाव कहेछे एटले जे पूर्वपूर्व पर्याय होय तेनेविषे प्रागभाव कहेछे,
ने उत्तर उत्तर पर्याय होय तेनेविषे प्रध्वंसाभाव कहेछे एम वली दधिथी तक्रनो उत्प
द होवाथी दधिने प्रागभाव कहेवाय, अने तक्रने प्रध्वंसाभाव कहेवाय एटले पूर्व
क्षीररूप पर्यायनी अपेक्षाएकरी दधिने प्रध्वंसाभाव कहेछे अने उत्तर तक्ररूप प
र्यायनी अपेक्षाकरी दधिने प्रागभाव कहेछे

आशंका – एक वस्तुनेविषे बे धर्म केम संभवे ?

उत्तर – वस्तु, अनंत धर्मात्मक होयछे जेम के, एक पुरुषनेविषे भ्रात, भर्तृ
पुत्र, पौत्र, तथा दौहित्र प्रमुख घणा धर्मो होयछे एटले पुत्रनी अपेक्षाए पिता
कहेवायछे, भाईनी अपेक्षाए भ्राता कहेवाय छे, स्त्रीनी अपेक्षाए भर्त्ता कहेवाय
छे, मातानी अपेक्षाए पुत्र कहेवाय छे, पुत्रना पुत्रनी अपेक्षाए पौत्र कहेवायछे
अने पुत्रीना पुत्रनी अपेक्षाए करी दौहित्र कहेवायछे, परंतु पुरुष एकज होयछे
तेम अत्र पण जाणवु हवे अन्योऽन्याभावनु लक्षण आप्रमाणे –स्वरूपांतरात्स्वरू
व्यावृत्तिरितरेतराभाव । तत्र दृष्टांत – जेम गाय ने अश्व ए बे पदार्थो छे, ते
मां गायना स्वरूपनी नास्ति अश्वनेविषे छे, ने अश्वना स्वरूपनी नास्ति गाय
नेविषे छे एम अन्योन्य एटले परस्परनेविषे एकेकनो जे अभाव छे ते अन्योऽ
न्याभाव जाणवो एनां चार नाम छे –अन्योऽन्याभाव, इतरेतराभाव, परस्पराभा
व, तथा अन्यापोह भाव हवे अत्यंताभावनु लक्षण आ प्रमाणे – कालत्रयापे
क्षणीयतादात्म्यपरिणामनिवृत्तिरत्यंताभाव एटले वस्तुनेविषे तादात्मिकपणे जे
परिणमनो त्रण कालनेविषे अभाव, तेने अत्यंताभाव कहिये तत्र दृष्टांत –
जेम एक चेतन आत्मतत्व छे ते क्यारे पण अचेतन थयो नथी, थतो नथी

ने थशे पण नही एमज जड धर्मवाळा पुद्गलनेविषे क्यारे पण वस्तुत्वे चेतनपणुं संभवे नही एटले तादात्म्य भाव थाय नही, संयोगी भावे तो ए पुद्गल अनंतिवार चेतन थया छे; थायछे, ने थशे; माटे चेतन वस्तुनेविषे तादात्मिक भावे अचेतनवस्तुनो अत्यंताभावछे. तथा अचेतनवस्तुनेविषे तादात्मिकभावे चेतनवस्तुनोअत्यंताभावछे.

आशंका·—घट तथा पटनेविषे अत्यंताभाव मानवामां शुं हरकत छे? केमके, घट ते पटात्मा नथी ने पट ते घटात्मा नथी.

उत्तर·—ए तारुं कहेवुं यद्यपि सत्य छे. तथापि एवु त्रणे काळनेविषे संभवे नही केमके घटाकारे परिणामने पामेला जे पुद्गल द्रव्य ते कोइ समये पटाकार परिणामने पामेछे, अने पट पुद्गलो घटाकारे परिणमे छे, माटे तेनेविषे अत्यंताभाव कहेवाय नही. किंतु अन्योऽन्याभाव कहिये. एना संग्रहना श्लोक कहेछे·—क्षीरे दध्यादि यन्नास्ति प्रागभाव· सउच्यते; नास्तिता पयसोदध्नि प्रध्वंसाभावलक्षणं. १ गवि योऽश्वाद्यभावश्च· सोन्योन्याभाव उच्यते, शशशृंगादिरूपेणात्यंताभावस्तु भण्यते. २ नचावस्तुत एवस्युर्भेदास्ते नास्य वस्तुनि ॥ इति जैनमतेभावो, भाविनोवस्तुरूपक. ३ एटले श्रीजैनमतनेविषे भाव स्वभाव अभाव कह्यो अने नैयायिक, वैशेषिक तथा मीमांसकादिक दर्शननेविषे अभाव ते भावथी भिन्न पदार्थ माने छे. ते मिथ्यावादि जाणवा. चार्वाक मती तो अभाव पदार्थने मानताज नथी, तेओने पण अनिष्टनी प्राप्ति छे. तथोक्तं अकलंकाचार्यै·—कार्यद्रव्यमनादि स्यात्, प्रागभावस्य निन्हवे ॥ प्रध्वंसस्यच कार्यस्य. प्रोच्यते नित्यतां व्रजेत् ॥ १ ॥ एक रूपं भवेद्विश्व, मन्यापोहव्यतिक्रमे ॥ भवेद्धानिः स्वधर्मस्याऽ त्यंताभावप्रलापने ॥ २ ॥ एनो अर्थ श्री समंतभद्र स्वामीए अष्ट सहस्री टीकामां आवी रीते कह्यो छे —ते माटे अहो चार्वाक, जो तुं प्रागभाव मानजे नही, तो कार्य द्रव्यनी अनादि थशे अने घट पटादिक जे कार्य द्रव्यछे, तेनी आदि तो बाळ गोपाळ सर्वने विदित छे, १ जो प्रध्वंसाभाव नही मानशे; तो कार्य द्रव्यनो विनाश संभवशे नही. सर्व द्रव्य नित्य ठरशे ने कार्य द्रव्यनो विनाश तो सकल लोकमां प्रसिद्ध छे, २ जो अन्यापोह नही मानशे तो समस्त वस्तुउनुं एक रूप ठरशे, अने वस्तु तो सर्व भिन्न भिन्न स्वभावेज देखामां आवे छे. ३ जो अत्यंताभाव नही मानशे तो कोइ स्वधर्म सिद्ध थशे नही, चेतन जे आत्मा ते कोइ समय अचेतन थइ जशे ने जे जडात्मक पुद्गल ते कोइ समय सर्वथा चेतनात्मक थइ जवानो संभव थशे ते एम तो कोइ काळे थायज नही. ४ माटे सर्वत्रैव अभाव मानवो. ते पण वळी अभाव स्वभाव मानवो;

पण जे तुछस्वनाव मानवु ते पण अनिष्ट छे. श्री चिंतामणि शास्त्रनेविषे पूर्व
क्षीए कह्यु छे के, दृष्टस्तावदय घटोनच पतन् दृष्ट स्तथा मुजरो दृष्टा कर्परस
ति परमितो नावोन दृष्टोपर स्वाधीना कलशस्य केवलमिय दृष्टा कपालावली ते
नानाव इति श्रुति क निहिता किंचात्र तत्कारणम् ' अहो नैयायको, प्रथम नूत
लनेविषे जे घट दीठो, ते ऊपर मोगर पात दीठो, त्यार पछी खापरा दीठां, पण
एटलाथी बीजो अनाव कोई दीठो न कहेवाय, तेम छता तु कहिश के, में घटने
विषे अनाव दीठो ते फूटो छे तेनी तो कपालावली दीठी कहेवाय, पण अनाव दीठो
कहेवाय नही माटे अनाव एवी स्तुति ते कई रहेछे। ते मानवातु शु कारण छे
माटे कपालावलीनेज अनाव कहिये के जेथी सकल वात सुधरे॥ इति द्रव्यलक्षण

हवे नय स्वरूप कहेछे तेमां नैगम नय अंशग्राही छे ए वस्तुना अंशने संपू
र्ण वस्तुज मानेछे जेमके, सूक्ष्म निगोदिया जीवमा अक्षरना अनंतमा नाग जे
टलु ज्ञान, छता तेने सिद्ध समान माने छे। अने तेरमा तथा चौदमां गुणस्थानने
विषे वर्त्तता सिद्ध मनुष्योने कर्मनो एक अंश छतां संसारी कहेछे

संग्रह नयवडे सत्तानु ग्रहण थायछे सर्व जीव सरखा छे सत्ता गुण घटे नही.

व्यवहारनये करी जीव अने पुद्गलना नेद कहेवायछे —जेमके, जीवना बे
नेद — सिद्धने संसारी तेमां संसारीना बेनेद — अयोगी ने सयोगी सयोगीना बे
नेद — छद्मस्थने केवली छद्मस्थना बे नेद — क्षीणमोहने उपशांत मोह, उपशांत
मोहना बे नेद — अकषाई अने सकषाई सकषाईना बे नेद — सूक्ष्मसकषाई ने बाद
र सकषाई बादर सकषाईना बे नेद —अनिवृत्ति बादर ने निवृत्ति बादर निवृ
त्ति बादरना बे नेद — श्रेणी प्रतिपन्न ने श्रेणी अप्रतिपन्न श्रेणी अप्रतिपन्नना बे
नेद — अप्रमत्त ने प्रमत्त प्रमत्तना बे नेद —सर्व विरति ने देशविरति. देशविरतिना
बे नेद — विरति ने अविरति अविरतिना बे नेद —सम्यक्त्वीने मिथ्यात्वी मिथ्या
त्वीना बे नेद नव्यने अनव्य नव्यना बे नेद —ग्रंथि नेदीने अग्रंथि अनेदी ग्रंथी
नेदीना बे नेद —परित्त संसारीने अपरित्त संसारी एम पुद्गलना पण बबे नेद थाय
छे ते आ प्रमाणे — अणु ने स्कंध तेमां स्कंधना बे नेद — सूक्ष्म स्कंध ने बादर
स्कंध ए बन्नेना वली बबे नेद छे —सचित्त स्कंध ने अचित्त स्कंध ए बन्नेना पण बब
नेद छे —जीवगृहीत ने अजीवगृहीत एवी रीते अनेक नेदोनु विवेचन करी लखु

जे वर्त्तमान काले वर्त्तमान नावनु ग्रहण थाय ते ऋजुसूत्र नय जाणवु
जेम के, साधुपणे वर्त्ते ते साधु कहेवायछे, अने जे साधु छता पण भ्रष्टपणा व

नंतो होय तेने गृही कहेछे. जे अक्षररूप नाम मुखे कहे ते शब्द नय जाणवो. जे गुणनी उपमाने ग्रहण करे नही, पण गुण सहित अर्थांतरनी ग्रहण थती वस्तुने वस्तु पणे कहेवी ते समभिरूढ नय कहेवायछे. जेम के, केवल ज्ञानादि गुण प्राप्त थयाथी सिद्ध कहेवो, अने जे गुणपर्याय सहित संपूर्ण अवस्था प्राप्त वस्तुने वस्तु कहेवी. जेम सिद्ध स्थानिक प्राप्त जीवने सिद्ध कहेवो ते एवंभूतनय जाणवो एम छएद्रव्यने सातेनय पोताना उपयोगथी लगाडवा.

हवे चार निक्षेपा कहेछे:—वस्तुना नाम मात्रनो अंगीकार ते नामनिक्षेपो. एटले निर्गुण तथा गुणसहित वस्तुनी विचारणा न करवी. अने जेवस्तुने आकार पणे अंगीकार करवी ते स्थापना निक्षेपो; उपयोगविना वस्तुनुं संपूर्ण ग्रहण करवु ते द्रव्यनिक्षेपो अने गुण सहित वस्तु प्रमाण करवी निर्गुण वस्तुनुं ग्रहण करवुं नही ते भाव निक्षेपो इत्यादिक प्रकारे समस्त नय भंग, प्रमाण निक्षेप परक्षेप सहित, शुद्ध चेतन परमानंदमयी, महानंदी, ज्ञान ज्ञायक, सकल कर्मोपाधि रहित लोकालोक वेत्ता, स्वज्ञानादि गुण समूह कर्त्ता, अनंत अविगम अक्षय अव्यय, ध्रुव, महारसी, सर्व दर्शी, गुणवान, मोक्ष कारण, मोह महाज्ञान ज्ञायक, ध्यान ध्याता ध्येय, एक एकत्व ज्ञानगम्य, स्वल्पबुद्धिने अगोचर छे; एवो माहरो परमात्मा मुजने ध्येय, उपादेय, मोक्षनो बीज छे; बीजो जे सर्वपर वस्तुनो संयोगछे, ते माहराथी न्यारो हेय रूप संस्कार छे, संबंधछे, पण माहरो नथी एवीरीते मोक्षार्थी सम्यक्त्वीजीवे ध्याववुं.

हवे मोक्ष प्राप्तिनुं क्रम लखे छे --सकल कर्म क्षय लक्षण मोक्ष छे. ते मोक्षने अर्थे चार अघाती कर्म खपाववां. ते चार अघाती कर्म शाथी खपाववा ? केवल ज्ञानादि चार गुणोथी खपाववां ते केवल ज्ञानादि गुण शाथी उपजेछे ? घन घाती कर्म खपाववाथी उपजे छे. ते घाती कर्म शाथी खपाववां ? यथाख्यात चारित्रथी खपाववां, यथाख्यात चारित्र शाथी थाय ? लोभ मोहनीयना क्षयथी थाय लोभमोहनीय शाथी खपाय ? सूक्ष्मसंपरायचारित्रथी सूक्ष्मसंपराय चारित्रनुं कारण कोण छे? त्रण संज्वलनननो क्षय. त्रण संज्वलना खपाववानुं कारण कोण छे ? अपूर्व करण परिणाम. अपूर्व करण परिणामनुं कारण कोण ? दर्शन मोहनीयनो क्षय, एम दर्शन मोहनीय खपाववानुं कारण सर्व विरति छे सर्व विरतिनुं कारण प्रत्याख्यानीय चार कषायोनुं खपवुं छे, प्रत्याख्यान खपवानुं कारण देश विरति छे; देशविरतिनुं कारण अप्रत्याख्यानीय चार कषायनुं खपवुं छे; अप्रत्याख्यानीय क्षय थवानुं कारण सम्यक्त्व छे; सम्यक्त्वनी कारणोत्पत्ति सात प्रकृतिओना क्षयथी

थायछे, अथवा क्षयोपशमथी थायछे सात प्रकृतिउना क्षयादिकनु कारण अपूर्व क
ण छे, अपूर्व करणनु कारण मुहूर्त्तस्थिति क्षय छे, मुहूर्त्तस्थिति क्षयनुं कारण यथाप्र
वृत्ति करण छे, यथा प्रवृत्ति करणनु कारण सात कर्मस्थिति घात छे, सात कर्म
स्थिति घातनु कारण मद कषायता छे, मद कषायतानु कारण आत्मवीर्य गुण
ना पर्याय गर्भित विशुद्धता नामे पर्याय छे, एवा अनुक्रमे कर्म क्षयथी गुण प्रका
श ने गुण प्रकाशथी कर्म क्षय छे, ते कारण माटे ज्ञाता प्राणीये गुण प्रकाशनो
उद्यम करवो जोइये ते उद्यम श्रुतज्ञानथी थाय छे, हेयोपादेयनी परिक्षाने श्रुत
ज्ञान कहेछे ते श्रुतज्ञानना वे नेद छे – एक शुद्ध श्रुतज्ञान ने वीजु अशुद्ध श्रुत
ज्ञान तेमा शुद्ध श्रुतज्ञानना वे नेद छे –स्वरूप श्रुतज्ञान ने पररूप श्रुतज्ञान वनी
अशुद्ध श्रुतज्ञानना पण वे नेद छे – शुन अने अशुन एवीरीते जीवाऽजीवादि षट्
पदार्थो सदाकाल शाश्वता पोतपोताना गुणपर्यायेकरी वर्त्तछे इति मोक्षप्राप्तिस्वरूप

अथ आत्मप्राप्ति विधि लिख्यते –जे कारण माटे आत्मस्वरूप प्राप्तिविना कदा
काले पण मोक्ष प्राप्ति थती नथी जेम कोई पुरुष नगर नाम स्वरूप जाणतो होय
ता अन्यने पुछीने ते नगर प्रत्ये पहोचे छे तेम आ जीवने मुकावनार सम्यक्
ज्ञान छे उक्तच – “ निरया सावज्जाउ, कसाय होणा महव्वय धरावि, सम्म
दिठी विहीणा, कयावि मुक्त न पावति ” सर्व सावद्यथी विरम्या होय, कषाय
क्रोधादिक रहित होय, पंच महाव्रतरूप वाह्य चारित्रेकरी सहित होय, तो पण
सम्यक्दृष्टि रहित थका कदा काले पण मोक्ष पामे नही गाथा –“ नय नग पमाणे
हि जा अप्पा साय वाय नावेण, जाणइ मोरक सरुव, सम्मदिठीय सो णेउ ”
ते जीव सम्यक्दृष्टि जाणवा के जे, पोतानो आत्मा मोक्षस्वरूप मोक्षमयी परमा
नंदमयो अचल अविनाशी अनत अनादि अवर स्याद्वाद नावे. जाणे माने स
द्दहे अनुनव, त सम्यक्दृष्टि कहिये ते सात नयेकरी जाणे तेना मूल व स
नाव छे – एक द्रव्य स्वनाव ने वीजो पर्याय स्वनाव तेमां द्रव्य स्वनाव काने क
हिये ? जे गुण अन पर्यायना आश्रय होय तेने द्रव्य कहिये ते द्रव्य वे प्रकार
नु छे –एक साधारण ने वीजु असाधारण तेमां अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व प्रमयत्व,
तथा अगुरुलघुत्व ए सामान्य एटले साधारण गुण छे अने वीजा असाधारण गु
ण त धर्मास्तिकायने गति चालन गुण, अधर्मास्तिकायन स्थिति गुण आकाश
स्तिकायने अवगाहगुण, कालमा वर्त्तनाना गुण, पुद्गल द्रव्यनविषे वर्ण गध
रस ने स्पर्श गुण, जीव द्रव्यना चतना लक्षण ज्ञान गुण, दर्शनगुण चारित्रगुण न

वीर्यगुण ए असाधारण गुण. तथा साधारण गुण ते अमूर्त्यादिक पर्यायना बे भेद छे:—एक स्वभाव पर्याय ते अगुरुलघु विकाररूप छे तेना षट्गुणी वृद्धि हाणिमय बार भेद छे. ए बारे पर्याय छए द्रव्यने समान छे. अने बीजो भेद जे विभाव पर्याय ते पुद्गल द्रव्यने तथा जीव द्रव्यनेज छे तथा शुद्ध द्रव्यार्थिक नये करी. आपणो आत्मा सिद्ध समान अष्ट गुणधारी छे. पर्यायनये स्वभावपर्यायेकरी सदासिद्धसमान छे. अने शात पर्याये करी अज्ञान संबंध संसारी छे. नैगम नयेकरी अल्पग्राही छे. जेम आठ प्रदेशे करी सर्व जीव सिद्ध छे. संग्रह नये करी सत्ताग्राही छे सर्व जीव सिद्ध स्वरूप छे. व्यवहार नयेकरी भेद विभंजना कारी जे जीवना बबे भेद छे.—एक सिद्ध बीजो संसारी. संसारिना बे भेद — एक सयोगी बीजो अयोगी सयोगीना बे भेद— एक छद्मस्थ बीजो केवली छद्मस्थना बे भेद — एक क्षपक बीजो उप शामक, इत्यादि. तथा ऋजुसूत्र नयेकरी तेजीव जे परिणामे परिणमतो वर्त्ते, तेसमये तेजीव तेवोज कहिए यथा ममतामयी परवस्तुमानतो चेतन अज्ञानी कहिये. सम तामयी सिद्ध समान. पोतापोतानां आत्माने ध्यावे तेसमये ते सिद्ध कहिये. शब्द नयेकरी नामादि सिद्धने पण सिद्ध कहिये समभिरूढ नयेकरी ते पर्यायने ग्रहे एटले सिद्ध पर्यायवंत सिद्ध कहिये. एवंभूत नयेकरी जे संपूर्ण गुण पर्यायने ग्रहे एटले पोतानी क्रिया करतो अचल ते लीजीये. यथा सिद्ध स्थानिक प्राप्त जीवने सिद्ध कहिये. एम सर्व वस्तुनेविषे सात नय जाणवा. नय ते जे द्रव्य अनेक धर्म वचने करी सात भंग स्यादस्ति, स्वद्रव्य क्षेत्र भावत्वेन यथा स्वद्रव्य चेतन गुण अनंत छे, स्वक्षेत्र ते चरम शरीर त्रिभागन्यून अथवा असंख्यात प्रदेश समान चेतनत्व, स्वकाल ते उत्पाद व्ययस्वरूप, अगुरुलघु पर्यायनो परिणमन, स्वभाव ते ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य, इति एगुणेकरी जीवद्रव्य छतोछे. स्यान्नास्ति परद्रव्य क्षेत्र काल भावत्वेन परद्रव्य अचेतना, परक्षेत्र पांचेद्रव्य पोतपोतानी अवगाहनासमान जडतारूप, परकाल ते पोतानो अगुरुलघु पर्याय, परभाव ते, पोतपोतानो विशेषगुण; एवीरीते पर द्रव्या दि गुण चेतननेविषे नथी ए कारण माटे नास्ति छे. अने स्यादस्ति नास्ति ए बन्ने भाव एक समये छे. स्यादवक्तव्यते आ कारणमाटे छे —कोईपण समये एकांत वच नेकरी कह्यो जाय नही केमके, वचन ते असंख्यात समयात्मक छे अने आत्म द्रव्य एक समयमां अनंत गुण पर्यायमयी छे, अने स्यादस्ति अवक्तव्यं स्यादनेकां तपणे अस्ति, तेनुं अवक्तव्यपणुंछे. एमज स्याद्नास्ति अवक्तव्यं. तथा स्यादस्तिनास्ति युगपत् अवक्तव्यं ते स्याद्वादपणे अस्ति नास्ति समय काल एक समये वचन

अगोचर छे एम अनेक धर्मात्मक आत्मा स्याद्वाद नावेकरी जाणे ते स्याद्वाद ना आठ पक्ष छे -नित्य, अनित्य, एक, अनेक, सत्, असत्, वक्तव्य तथा अवक्तव्य पोताना चेतना गुणेकरी आत्मा नित्य छे, अगुरुलघु पर्यायेकरी आत्मा अनित्य छे, एमद्रव्यथी नित्यानित्यः, ज्ञायक गुणेकरी आत्मा एकछे, असख्यात प्रदेशपणेकरी आत्मा अनेकपणे छे, एम द्रव्यपणे एकानेक छे, स्वद्रव्य पर्यायेकरी आत्मा सत् छतो छे, परद्रव्य पर्यायेकरी आत्मा असत् अछतो छे, एम वस्तु स्वरूपे सत् असत् छे, द्रव्यपणे वक्तव्यछे एक समये एकछो कथन योग्य नथी माटे आत्मा अवक्तव्य छे, एम ए परकीय अपेक्षाए स्याद्वाद होय, अने स्वअपेक्षाएकरी चेतनता नित्यछे, अगुरुलघु पर्याये अनित्यछे चेतना एकछे असख्यात प्रदेश अनेकछे नित्यत्वमां नित्यत्व सत् छे, अनित्यत्व असत् छे अनित्यत्वमां अनित्यत्व सत् छे अने नित्यत्व असत् छे एकत्वमा एकत्व सत् छे अने अनेकत्व असत् छे अनेकत्वमां अनेकत्व सत् छे, ने एकत्व असत् छे नित्यत्व,अनित्यत्व, एकत्व, अनेकत्व, एम भिन्न वचन व्यक्त छे एक समये अव्यक्त छे एम वस्तु स्वरूप एक समये नित्यानित्यछे तेज समये एकछे ने तेज समये अनेक छे एम सत् ने असत् छे तेम व्यक्त ने अव्यक्त छे ए आठ पक्ष एक पक्षमां एक समये रह्या छे एवीरीते स्याद्वादपणे छ द्रव्यने जाणी, अने छ द्रव्यथी चेतन लक्षण जीव द्रव्य पोतानो ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्यमयी अविनाशी छे अनत परमानदमयी एवो पोतानो आत्मा उपादेयकरी ध्यावतो एप्रकारे आत्मानु मोक्ष कारण मोक्षमयी सर्दहे स्याद्वादपणे पोताना आत्माने जाणे मानेतेज सम्यक्त्वी कहेवाय तेविना मिथ्यात्वी कहेवाय

हवे सम्यक्त्वीने आठ गुण उपजेछे ते कहेछे -- प्रथम निःशंक गुण ते जेने शंका, भय तथा शोक होय नही तेने जाणवा, एटले ज्ञाताने आलोकनो भय थाय नही केमके, ते सम्यक्त्वी सुख, दुःखनेतो, पुन्य तथा पापनु फल जाणेछे ते आत्माने पुन्य तथा पापथी भिन्नकरी ध्यावेछे माटे आ लोक तथा परलोकना ज्ञाताने भय नथी तथा ज्ञाताने वेदनानु भय पण व्यापे नही ते वेदना भय कर्म गुण छे अने मारो आत्मा तो ज्ञानमयी छे, वली ज्ञाता, पोताना आत्माने अमर तथा अविनाशी करी ध्यावे छे माटे तेने मरण भय होतो नथी वली ज्ञाता, पोताना आत्माने अक्षय अनत गुणी जाणेछे माटे तेने चोरभय नथी ज्ञाता पोताना आत्माने अज्ञानतारूप दुःखना छोडनार एवा पोतानो शरणभूत माने छे माटे तेने अशरण भय नथी. ज्ञाता पोताना आत्माने सदा परमानदमयी

मानेछे माटे तेने अकस्मात् भय नथी. एवी रीतें ज्ञाता पोताना आत्माने ज्ञानमय जाणीने सदा काल निर्भय रहेछे. सम्यक्त्वीनो बीजो निःकंख गुण. ते कंइ फलनी वांछा नही ते जाणवो. वर्त्तमान सुखमां मग्न थाय नही; दुःखमां विलापात करे नही. अनागत कालना सुखनी इच्छा करे नही; दुःखथी डरे नही; ज्ञाता ज्ञानथकी पोताना आत्माने सिद्ध समान ध्यावतो अवांछक छे. सम्यक्त्वीनो त्रीजो अदुगंछा गुण ते अशुभथी ग्लानथी शुभाशुभ सर्वने ते कर्म गुण जाणेछे. पोतानो आत्मा सदा ज्ञानानंदमयी छे माटे ते क्यारे पण पुद्गलथी दुगंछा करे नही. सम्यक्त्वीनो चोथो अमूढदृष्टि गुण ते पर वस्तु तथा परपरिणतिमां मूंझाय नही. सर्व स्वभाव तथा परभावने भिन्न भिन्न करी जाणे. सम्यक्त्वीनो पांचमो उपगूहन गुण ते पोतानो वीर्य छतां अवगणना करे नही. एटले जेवो एक आत्मस्वरूप शुद्ध द्रव्यार्थिक नयकरी त्रिगुणमयी छे; तेने तेवोज ओलखेछे तेमां रमी रहे तेने ज्ञाता कहियें. सम्यक्त्वीनो छठो थिरीकरण गुण ते पोताना आत्माने पोताना गुणे करी स्थिर करे. वली ते सर्व काल परपरिणतिनी चाहना करे नही. सम्यक्त्वीनो सातमो वात्सल्य गुण ते पोताना साधर्मी मांहेना साधक तथा ज्ञानादिगुणवंत तेहनी वात्सल्यता एटले पोषण करवुं; ते ज्ञानगुण जाणवो; तेज आत्मा एम देखी स्याद्वादरूपे करी; आचरवो. ए वात्सल्य गुण कह्यो. हवे सम्यक्त्वीनो आठमो प्रभावना गुण ते बाह्य पणे तथा अंतरपणे पोताना आत्मानी प्रभावना करवी. ए आठ गुण जाणवा.

हवे सम्यक्त्वी सोहं बीज पोतानो आत्मा ध्यावे तेनो अर्थ लखियेछैएः— अतीत. अनागत ने वर्त्तमान एत्रण काल; आदि मध्य ने अंत एत्रण अवस्था, स्वर्ग मृत्यु पाताल ए त्रण लोक. उत्पादव्यय ने ध्रुव एत्रणपरिणाम तेने एक समयमां जाणेछे. एम छ एद्रव्यना अनंत गुण पर्यायने जाणे. एवो अनंत ज्ञानमयी सोहं; सदा काल चेतन लक्षण सोहं. अनाकार उपयोगमयी दर्शन अनंत वंत सोहं; समस्त परभाव. पर परिणति. परिणमनरूप परित्यागमयी स्वस्वभाव गुणनेविषे थिरतावंत अनंत चारित्रमयी सोहं; अरूपी निर्मल गुणवंत लोकालोक भासमान सोहं. सकल कर्म क्षय कारण अनंत वीर्यमयी सोहं; सर्व काल बाधा पीडा रहित परमानंदमयी सोहं; लोकालोक व्याप स्वअवगाहना संबंध सोहं; षड्गुणवृद्धि हानि परिणामी अगुरुलघुत्व शक्तिमयी सोहं; एक, अनेक, नित्य, अनित्य. सिद्ध, बुद्ध, अजर, अविनाशी, अयोगी, अरोगी. अलेशी, अवेदी, अ

वेदी, अनेदी, सकर्त्ता, अनाहारक, अशरीरी, अनादि, अनंत, अवक्तव्य, अप
र एवो परमात्मा परमानंदमयी शिव शंकर भगवान अवाची अतींद्रिय सो
ध्यान ध्याता ध्येयमयी, ज्ञान, ज्ञाता ज्ञेयमयी, सोहं, एवो हुं परमात्मा परम ज्योति
परम शक्ति पंच परमेष्टी परम पूज्य हुं, ए आत्मा द्रव्यनयेकरी अनंत दर्शनमयी
छे, शुद्ध संग्रह नयेकरी सिद्ध स्वरूपी छे पंचाचारनुं निधान होवाथी आचार्य छे,
स्याद्वादस्वरूपमयी तेणेकरी उपाध्याय छे, मोक्षमार्ग साधक तेणेकरी साधु छे, एवो
परमात्मा ध्येय उपादेयरूप मुजने संसारमां शरण छे एवुं जे आत्मस्वरूपने जा
णवुं तेने ज्ञान कहेछे एवी आत्मस्वरूपनी प्रीतिविषे जे प्रतीति करवी तेने दर्शन
कहेछे एवा आत्मस्वरूपनेविषे रमण करवुं तेने चारित्र कहेछे एम ए त्रण मोक्ष
ना मार्ग छे बीजो सर्व अज्ञानतामयी दोष छे इति आत्म प्राप्तिविधि

हवे ए नयने प्रमाण कहिये किंवा अप्रमाण कहिये? प्रमाण ते यथार्थनुं कहे
वापछे ने अप्रमाण ते अयथार्थनुं कहेवाय छे एम कोई पुछे, तेनो आवो उत्तर
देवा यत – "नाऽप्रमाणं प्रमाणं वा, प्रमाणांशस्तथैव हि, नाऽसमुद्रः समुद्रोवा,
समुद्रांशो यथैव हि" अर्थ। नय छे ते प्रमाणनो अंश छे जे प्रमाण पण नही
ने अप्रमाण पण नही तेने प्रमाणांश कहिये कथंचित् प्रमाणन पण कहेछे ते
माटे जेम समुद्रमांथी जल पुत्तली भरिये तेटला जलने समुद्र न कहेवाय पुन
णी जल जलने समुद्रांश कहिये तेम नयने पण प्रमाणांश कहिये तथा सम
स्त समुद्रने समुद्र कहियेछे, तेने प्रमाण कहिये प्रमाण अने नये करी सम्यगवस्तुनुं
अधिगमछे ए तत्वार्थ सूत्रमां छे इति चार्चिक वस्तु षट्द्रव्य नयादि विचार संपूर्ण

इति श्री प्रकरण रत्नाकर नामाख्य
पुस्तके द्वितीय भाग समाप्त

वेदी, अवेदी, अकर्त्ता, अनाहारक, अशरीरी, अनादि, अनंत, अवक्तव्य, अपर एवो परमात्मा परमानंदमयी शिव शंकर भगवान अवाची अतींद्रिय सोहं ध्यान ध्याता ध्येयमयी, ज्ञान, ज्ञाता ज्ञेयमयी, सोहं, एवो हुं परमात्मा परम ज्योति परम शक्ति पंच परमेष्ठी परम पूज्य हुं। ए आत्मा द्रव्यनयेकरी अनंत दर्शनमयी छे, शुद्ध समस्त नयेकरी सिद्ध स्वरूपी छे. पंचाचारनुं निधान होवाथी आचार्य छे, स्याद्वादस्वरूपमयी तेणेकरी उपाध्याय छे, मोक्षमार्ग साधक तेणेकरी साधु छे, एवो परमात्मा ध्येय उपादेयरूप मुजने संसारमां शरण छे एवुं जे आत्मस्वरूपने जाणवुं तेने ज्ञान कहेछे एवी आत्मस्वरूपनी प्रीतिविषे जे प्रतीति करवी तेने दर्शन कहेछे एवा आत्मस्वरूपनेविषे रमण करवुं तेने चारित्र कहेछे एम ए त्रण मोक्षना मार्ग छे बीजो सर्व आज्ञानतामयी दोष छे इति आत्म प्राप्तिविधि

हवे ए नयने प्रमाण कहिये किंवा अप्रमाण कहिये? प्रमाण ते यथार्थनुं कहेवापणे ने अप्रमाण ते अयथार्थनुं कहेवाय छे एम कोई पुछे, तेनो आवो उत्तर देवो पत – "नाऽप्रमाण प्रमाण वा, प्रमाणांशस्तथैव हि, नाऽसमुद्र समुद्रोवा, समुद्रांशो यथैव हि" अहीं नय छे ते प्रमाणनो अंश छे जे प्रमाण पण नही ने अप्रमाण पण नही तेने प्रमाणांश कहिये कथंचित् प्रमाणन पण कहेछे ते माटे जेम समुद्रमांथी जल पुसली भरिये तेटला जलने समुद्र न कहेवाय पुसली जल जलने समुद्रांश कहिये तेम नयने पण प्रमाणांश कहिये तथा समकित जेनविषे ग्हाछे, तेने प्रमाण कहिये प्रमाण अने नये करी सकलवस्तुनुं अधिगम छे ए तत्वार्थ सूत्रमां छे इति चार्चिक वस्तु षट् द्रव्य नयादि विचार संपूर्ण

इति श्री प्रकरण रत्नाकर नामाख्य
पुस्तके द्वितीय भाग समाप्त

वेदी, अवेदी, सकर्त्ता, अनाहारक, अशरीरी, अनादि, अनंत, अवक्तव्य, अपरस
र एवो परमात्मा परमानंदमयी शिव शंकर भगवान अवाची अतींद्रिय सोहं,
ध्यान ध्याता ध्येयमयी, ज्ञान, ज्ञाता ज्ञेयमयी, सोहं, एवो हुं परमात्मा परम ज्योति
परम शक्ति पंच परमेष्ठी परम पूज्य छुं, ए आत्मा द्रव्यनयेकरी अनंत दर्शनमयी
छे, शुद्ध संग्रह नयेकरी सिद्ध स्वरूपी छे पंचाचारनुं निधान होवाथी आचार्यछे,
स्याद्वादस्वरूपमयी तेणेकरी उपाध्याय छे, मोक्षमार्ग साधक तेणेकरी साधुछे, एवो
परमात्मा ध्येय उपादेयरूप मुजने संसारमां शरण छे एवुं जे आत्मस्वरूपने जा
णवुं तेने ज्ञान कहेछे एवी आत्मस्वरूपनी प्रतीतिविषे जे प्रतीति करवी तेने दर्शन
कहेछे एवा आत्मस्वरूपनेविषे रमण करवुं तेने चारित्र कहेछे एम ए त्रण मोक्ष
ना मार्ग छे बीजो सर्व अज्ञानतामयी दोष छे इति आत्म प्राप्तिविधि

हवे ए नयने प्रमाण कहिये किंवा अप्रमाण कहिये? प्रमाण ते यथार्थनुं कहे
वायछे ने अप्रमाण ते अयथार्थनुं कहेवाय छे एम कोई पुछे, तेनो आवो उत्तर
दीधो छे या पन – "नाऽप्रमाणं प्रमाणं वा, प्रमाणांशस्तथैव हि, नाऽसमुद्र समुद्रोवा,
समुद्रांशो यथैव हि" अहीं नय छे ते प्रमाणनो अंश छे जे प्रमाण पण नही
अने अप्रमाण पण नही तेने प्रमाणांश कहिये कथंचित् प्रमाणने पण कहेछे ते
उपर दृष्टांत कहे छे जेम समुद्रमांथी जल पुसनी भरिये तेटला जलने समुद्र न कहेवाय पुस
नाना जलने समुद्रांश कहिये तेम नयने पण प्रमाणांश कहिये तथा सम
स्त नय जेनविषे रह्याछे, तेने प्रमाण कहिये प्रमाण अने नये करी सर्व वस्तु
ओ जाणी शकाय छे एम समजवुं ए तत्त्वार्थ सूत्रमां छे इति चार्चिक वस्तु षट् द्रव्य नयादि विचार संपूर्ण

इति श्री प्रकरण रत्नाकर नामाख्य
पुस्तके द्वितीय भाग संपूर्ण

वेदी, अवेदी, सकर्त्ता, अनाहारक, अशरीरी, अनादि, अनंत, अवक्तव्य, इ
र एवो परमात्मा परमानंदमयी शिव शंकर भगवान अवाची अतींद्रिय
ध्यान ध्याता ध्येयमयी, ज्ञान, ज्ञाता ज्ञेयमयी, सोहं, एवो हुं परमात्मा परम ज
परम शक्ति पंच परमेष्टी परम पूज्य छुं, ए आत्मा द्रव्यनयेकरी अनंत दर्शनम
छे, शुद्ध संग्रह नयेकरी सिद्ध स्वरूपी छे पंचाचारनु निधान होवाथी आचार्य
स्याद्वादस्वरूपमयी तेणेकरी उपाध्याय छे, मोक्षमार्ग साधक तेणेकरी साधु छे, एव
परमात्मा ध्येय उपादेयरूप मुजने संसारमां शरण छे एवु जे आत्मस्वरूपने जा
एवु तेने ज्ञान कहेछे एवी आत्मस्वरूपनी प्रीतिविषे जे प्रतीति करवी तेने दर्शन
कहेछे एवा आत्मस्वरूपनेविषे रमण करवु तेने चारित्र कहेछे एम ए त्रण मोक्ष
ना मार्ग छे बीजो सर्व अज्ञानतामयी दोष छे इति आत्म प्राप्तिविधि

हवे ए नयने प्रमाण कहिये किंवा अप्रमाण कहिये? प्रमाण ते यथार्थवुं कहे
वायछे ने अप्रमाण ते अयथार्थनु कहेवाय छे एम कोई पुछे, तनो आवो उत्तर
देवो यत – "नाऽप्रमाण प्रमाण वा, प्रमाणांशस्तथैव हि, नाऽसमुद्र समुद्रोवा,
समुद्रांशो यथैव हि " अहीं नय छ ते प्रमाणनो अंश छे जे प्रमाण पण नही
ने अप्रमाण पण नही तेने प्रमाणांश कहिये कथंचित् प्रमाणने पण कहेछे ते
माटे जेम समुद्रमांथी जल पुसली भरिये तेटला जलने समुद्र न कहेवाय पुस
ली भर जलने समुद्रांश कहिये तेम नयने पण प्रमाणांश कहिये तथा सम
स्तांश जेनेविषे ग्रह्याछे, तेने प्रमाण कहिये प्रमाण अने नये करी सकलवस्
अधिगमछे ए तत्वार्थ सूत्रमां छे इति चार्चिक वस्तु षट् द्रव्य नयादि विचार संपूर्ण

इति श्री प्रकरण रत्नाकर नामाख्य
पुस्तके द्वितीय भाग संपूर्णम